विषय-सूची

राम-राम	विवरण	पृष्ठ सं.
1.	गुरु अपने शिष्य को अपनी आत्मा ही बना देता है	1
2.	अपनी प्रत्येक श्वास का सदुपयोग करो	7
3.	मनुष्य का लक्ष्य है परमानन्द की प्राप्ति	16
4.	भगवान् के चरणों में अनुरक्ति का नाम भक्ति है	28
5.	परमात्मा सर्वशक्तिमान् आनन्दस्वरूप	40
6.	सत्संग से खुलता है दुःखों से बचने का मार्ग	50
7.	धर्मनिष्ठ पर ही लोगों को भरोसा	55
8.	भगवान् सब प्राणियों के कर्मों के फल देने वाले हैं	60
9.	सृष्टि के उत्पादक, पालक, संहारक भगवान् हैं	70
10.	शास्त्रीय विधि-निषेध ही धर्म	80
11.	भगवान् की प्रेरणा	91
12.	राजा काल का कारण है	101
13.	परमात्मा की सर्वोत्तम देन का सम्मान करें	111
14.	समस्त विश्व का पालन भगवान् ही करते हैं	115
15.	भगवच्चरणारविन्द की सेवा से ही पुरुषार्थप्राप्ति	126
16.	भगवत्प्राप्ति से ही दुःखों का अन्त	138
17.	चंचल चित्त को परमात्मा में लगा दो	147
18.	सत्कर्म से पुण्य बढ़ेगा और बुरे कर्म से पाप	158
19.	सब सुख परमानन्दस्वरूप परमात्मा के	168
20.	सत्संग ही सच्चा सम्बन्ध	180
21.	जिज्ञासु भक्त के लिये भगवान् गुरु बनते हैं	190
22.	भगवान् किसी निमित्त को लेकर ही सहायता करते हैं	201
23.	भगवान् ही गुरु के रूप में आते हैं	211
24.	धर्म का आदर्श हो तो समाज में सुख-शान्ति	220
25.	अभ्युदय-निःश्रेयस की सिद्धि करे वह धर्म	230
26.	भगवान् का अवतार दुरधिगम आत्मतत्वको बताने के लिये	241
27.	परमात्मा की अभिव्यक्ति नाम-रूप-लीला-धाम के रूप में	251

Scanned with OKEN Scanner

क्रम सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
28.	सुख-दुःख को देने वाला कोई दूसरा नहीं होता	261
29.	कथा सुनने से होता है भगवान् के चरणों में प्रेम	271
30.	अपने आराध्य में अटूट विश्वास और श्रद्धा होनी चाहिए	279
31.	धर्म के सच्चे स्वरूप को समझने की आवश्यकता	289
32.	संसार-सागर को पार करने का प्रमुख साधन है धर्म	306
33.	दुर्लभ मानव देह से दुर्लभ प्राप्ति करें	315
34.	राम नाम महामन्त्र है	321
35.	जीवन का वास्तविक उद्देश्य	324
36.	रामकथा है मानव-कल्याण का स्रोत	331
37.	सनातनधर्म में नारी का सर्वोच्च सम्मान	348
38.	आचरण ऐसा करो जो लोक-परलोक दोनों सुधारे	356
39.	धर्मग्रन्थों में हो रही घालमेल से सावधान	361
40.	लोग संसार-बगीचा देखते हैं पर उसके रचयिता को नहीं	366
41.	जन्मान्तरीय पुण्यपुंजों के उदय से मिलती है 'कथा'	372
42.	वेद ही हमारे लोक-परलोक का मार्ग प्रशस्त करते हैं	386
43.	मन को समता में स्थित कर ही संसार को जीता जा सकता है	400
44.	भक्तों पर अनुग्रह करने परमात्मा अवतार धारण करते हैं	415
45.	सदा रहने वाले आनन्द का नाम ही कृष्ण है	431
46.	गायों की रक्षा-सेवा के लिये गोविन्द आते हैं	443
47.	श्रीकृष्ण भी सही रखते थे अपनी दिनचर्या	460
48.	दैवी सम्पत् छुडाने और आसुरी बांधने वाली है	470
49.	अपना उद्धार स्वयं करें	475
50.	अन्तकाल में जैसी मति वैसी ही गति	481
51.	भगवान् से प्रेम तपस्या का परिणाम है	493
52.	कर्म की गति बड़ी गहन है	500
53.	ब्रह्म में कोई भेद नहीं है	507
54.	ज्ञानाग्नि सब कर्म भस्मसात् कर देती है	529

—*—

Scanned with OKEN Scanner

॥ सुमेरु ॥

अन्धानुकरण छोड़कर विवेकरूपी नेत्र खोलें

जिस प्रकार सुखी जीवन के लिए शारीरिक स्वास्थ्य आवश्यक है उसी प्रकार जीवन की सार्थकता के लिए भी सभी अनर्थों के मूल मोह को दूर करना आवश्यक है। मोह को समस्त मानसिक व्याधियों का मूल माना गया है। मोहाक्रान्त व्यक्ति स्वयं अपना मार्ग नहीं चुन पाते फलतः अन्धानुकरण में पड़ जाते हैं। इस मोह को दूर करने का सर्वोत्तम उपाय विवेक है। मानस में रामकथा का महत्त्व बतलाते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है -

रामकथा कलि पन्नग भरनी। पुनि विवेक पावक कहँ अरनी॥

यहाँ विवेक को पावक अर्थात् अग्नि माना गया है। सत्संग का महत्व बतलाते हुए कहा गया -

बिनु सत्संग विवेक न होई। रामकथा बिनु सुलभ न सोई॥

विवेक का अर्थ होता है दो सम्मिलित वस्तुओं को पृथक् करके देखना। जैसे नीर और क्षीर का विवेक होता है। हंस के सम्बन्ध में प्रसिद्धि है कि यदि जल और दूध को मिलाकर हंस के सामने रख दिया जाय तो हंस दूध पी लेता है और जल छोड़ देता है। इसी प्रकार विवेकी पुरुष संसार में असार का त्याग करके सार ग्रहण कर लेता है। यदि विवेक प्राप्त हो जाय तो मोह का समूल उन्मूलन किया जा सकता है। प्रायः संसार के लोग एक दूसरे का अन्धानुकरण करते देखे जाते हैं किंतु विवेकी अन्धानुकरण छोडकर अपने जीवन को विवेक के द्वारा सार्थक करता है। सांख्यशास्त्र के अनुसार प्रकृति-पुरुष का विवेकाग्रह ही उसके बंधन का कारण माना जाता है। पुरुष निर्विकार होते हुए भी प्रकृति के गुणों के साथ स्वयं को जोडकर बंधन में पड़ता है। आध्यात्मिक दृष्टि से रामायण की व्याख्या करते हुए विद्वान् कहते हैं - आत्मारूपी राम की शान्तिरूपी सीता को मोहरूपी रावण अविद्यारूपी लंका में ले जाकर रख लेता है। शान्ति सीता की सुधि लेने आत्मारूपी राम विचाररूपी हनुमान् को शान्तिरूपी सीता का पता लगाने भेजते हैं। सौ योजन के समुद्र को हनुमान् पार करते हैं। यह सौ योजन का समुद्र देहाभिमान है जब देहाभिमानरूपी समुद्र को पार करने विचाररूपी हनुमान् बढ़ते हैं तब सिंहिका नामकी

Scanned with OKEN Scanner

राक्षसी उनकी गति रोकने आ जाती है। यह सिंहिका ही चिज्जड़ ग्रन्थि है। जिसका वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है -

निशिचरि एक सिंधु महँ रहई। करि माया नभु के खग गहई ।।
गहइ छाँह सक सो न उड़ाई। एहि विधि सदा गगनचर खाई ।।

यह सिंहिका छाया पकड़ती थी। पक्षी छाया को पकड़े जाने पर स्वयं को पकड़ा हुआ जानकर नीचे गिर पड़ते थे और उस राक्षसी का ग्रास बन जाते थे। ठीक इसी तरह जीव भी देह के गुण-दोषों को आत्मा में आरोपित करके स्वयं को ही बंधन में मान लेता है। विचाररूपी हनुमान् ने उसका कपट समझ लिया कि मैं आकाश में हूँ जल से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। अन्तःकरण में जो आत्मा का आभास पडता है उसको चिदाभास कहते हैं। जीव चिदाभास को अपना स्वरूप समझकर अन्तःकरण के चाञ्चल्य को अपना चाञ्चल्य मान लेता है। यहाँ चिदाभास से अपनी असंगता का अनुभव करना ही विवेक है।

वेदान्त-सिद्धान्त के अनुसार इसी को जड़-चेतन की **चिज्जड-ग्रन्थि** कहते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने ज्ञानदीपक प्रसंग में इसी विषय को इन शब्दों में कहा है -

जड़ चेतनहिं ग्रन्थि परि गई। जदपि मृषा छूटत कठिनई ।।

यह ग्रन्थि ही अध्यास है। आत्मा में अनात्मा का स्वरूपाध्यास और अनात्मा में आत्मा का संसर्गाध्यास यही जड़-चेतन की ग्रन्थि है और इससे मुक्त हुए बिना सब साधन निरर्थक हो जाते हैं।

हिरण्यकशिपु ने देवताओं के मान से सौ वर्ष तक तपस्या की और ब्रह्माजी से अमर होने का वरदान मांगते हुए कहा कि आपके द्वारा सृष्ट जीवों से मेरी मृत्यु न हो। दिन-रात, अन्दर-बाहर, धरती-आकाश, अस्त्र-शस्त्रादि से भी मेरी मृत्यु न हो। इन अभूतपूर्व वरदानों को पाकर भी अन्ततः उसकी मृत्यु हुई क्योंकि वह शरीर को आत्मा मानता था। इसके विपरीत प्रह्लाद जी ने अपने गुरु नारद जी से आत्मा और अनात्मा का विवेक सीख लिया था और मरने वाले शरीर से स्वयं को पृथक् समझते थे इसलिए असुरों द्वारा प्रह्लाद जी को मारने के सभी उपाय व्यर्थ हुए। सांसारिक कामनाओं और वासनाओं के लिए जो तप किया जाता है उसे तामसिक तप कहा जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता (१७/६) में कहा है -

Scanned with OKEN Scanner

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् ।।

अर्थात् दम्भ और अहङ्कार से परिपूर्ण ऐहिक और पारलौकिक पदार्थों की तीव्र भोगेच्छा से युक्त अविवेकी जो लोग शरीर में स्थित प्राण और इन्द्रियवर्ग को सुखाते हुए और अन्तःकरण में स्थित मुझको भी क्लेश देते हुए अशास्त्रीय घोर तपस्या करते हैं उन्हें तुम आसुर स्वभाव वाला जानो । तपस्या होनी चाहिए मोक्ष के लिए । परन्तु 'मैं तपस्या कर रहा हूँ 'इस अभिमान को न छोडने से सारा तप व्यर्थ हो जाता है ।

एक दृष्टान्त है - मथुरा से कुछ लोग नाव में बैठकर यमुना द्वारा प्रयाग जाना चाहते थे । नाव में बैठकर वे रात भर चप्पू चलाते रहे । सुबह उन्होंने नगर के भवनादि देखे तो समझा कि कदाचित् प्रयाग आ गया है। किन्तु थोड़ी ही देर में उनकी समझ में आ गया कि वे जिस मथुरा में थे वहीं हैं क्योंकि उन्होंने नाव का लंगर खोले बिना ही रात भर परिश्रम किया था । इसी तरह अहंकार का त्याग किये बिना बंधन से मुक्ति का प्रयास परिश्रम मात्र ही है । यही चिज्जड़ ग्रन्थि है और इसके निर्मोक के लिए विवेक चाहिए ।

यह विवेक जीवन की दिशा को बदल देता है । किसी युवा संन्यासी से किसी गृहस्थ व्यक्ति ने पूछा कि आप संन्यासी क्यों बन गए ? तब युवा संन्यासी ने पलट कर पूछा कि आप गृहस्थ क्यों हो गए ? गृहस्थ ने कहा कि मैंने तो इस बारे में कभी सोचा ही नहीं । तब संन्यासी ने कहा कि बस यही अन्तर है कि आपने सोचा नहीं और मैंने सोच लिया।

विवेकी चिन्तन इसी तरह जीवन को बदल देता है । इसलिए अन्धानुकरण छोड़कर अपने जीवन को विवेकमय बनाकर सार्थक करना चाहिए । गीता के पन्द्रहवें अध्याय में '**संसारवृक्ष को काटने वाला असंग शस्त्र ही विवेक है**' यह बताया गया है। इसलिए सत्पुरुषों का संग करके, भगवच्चर्चा में मन को लगाकर विवेकरूपी नेत्र खोलना चाहिए। गुरुवंदना के प्रसंग में गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं -

तेहि करि विमल विवेक विलोचन । बरनउं रामचरित भवमोचन ।।

क्योंकि बिना विवेक नेत्रों के मनुष्य अन्धा ही है । इस बात को आप इस उदाहरण से समझिये। एक गांव था जो 'मूर्खों का गाँव' कहलाया। क्योंकि वहाँ के लोग कृष्णपक्ष की हर रात्रि में छाये अंधकार के निवारण के लिये टोकरे में अंधकार को भरकर अंधकूप

Scanned with OKEN Scanner

में डाला करते थे और सुबह होने पर सोचते थे कि हमने अंधेरे को दूर कर दिया है। यह अंधेरा ढोने का क्रम पीढ़ियों से चला आ रहा था। संयोगवश उस ग्राम में अच्छे घर की एक विवेक सम्पन्न लड़की आई और उसने यह सब देखा। जब सभी लोग अंधेरे को ढोने में लगे थे तब उसने लकड़ी इकट्ठी की और उनमें आग लगा दी। ज्वाला से प्रकाश होते ही अंधकार दूर हो गया और गाँव के लोगों को समझ में आ गया कि सभी कुछ क्रियासाध्य नहीं है ।

इसलिये हमारा आप सबके लिये सन्देश है कि अन्धानुकरण छोड़िये और शास्त्र-सद्गुरु वाक्यों की सहायता लेकर विवेकवान् बनिये। ।। इति शम् ।।

शुभैषी-

भाद्र शुक्ल तृतीया संवत् २०७८ विक्रमी
९ सितम्बर २०२१
परमहंसी गंगा आश्रम (त्रिपुरालय)

स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती
जगद्गुरु शंङ्कराचार्य
ज्योतिष्पीठ एवं द्वारका शारदापीठ

Scanned with OKEN Scanner

(पूज्यपाद अनन्तश्रीविभूषित उत्तराम्नाय ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं पश्चिमाम्नाय द्वारका शारदापीठाधीश्वर)

जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज

के

(चौवन प्रवचनों का संकलन)

प्रवचन–प्रबोध

संकलन एवं संपादन

साध्वी पूर्णाम्बा

[1]

।। राम राम एक ।।

गुरु अपने शिष्य को अपनी आत्मा ही बना देता है

समुपस्थित विद्वद्वृन्द ! देवियो ! सज्जनो !

हमारे शास्त्रों में गुरु को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है । भगवान् आदि शङ्कराचार्य ने गुरु के सम्बन्ध में कहा कि- इस संसार में गुरु का कोई दृष्टान्त नहीं मिलता। किससे गुरु की उपमा दी जाए?

दृष्टान्तो नैव दृष्टस्त्रिभुवनजठरे सद्गुरोर्ज्ञानदातुः ।

ज्ञान के प्रदाता सद्गुरु का तीनों लोकों में कोई दृष्टान्त नहीं है । गुरु कैसा होता है ? इसकी उपमा किसी से नहीं दी जा सकती । किसी ने कहा कि हमारे पास एक उपमा है पारस मणि की। आप जानते हैं कि पारस एक पत्थर होता है । लोहा यदि उस मणि से छू जाए तो वह लोहा भी सोना हो जाता है । उसने कहा कि हम यह कह सकते हैं कि गुरु पारस है और शिष्य लोहा है। लोहा रूपी शिष्य जब स्वर्ण रूपी गुरु के सम्पर्क में आता है तो वह स्वयं भी स्वर्ण बन जाता है। अब कहा कि दृष्टान्त तो मिल गया । लेकिन नहीं, यह गुरु का दृष्टान्त नहीं बन सकता क्योंकि पारस लोहे को सोना तो बना सकता है परन्तु पारस नहीं बना सकता । गुरु तो अपने शिष्य को अपना आत्मा ही बना देता है। इसलिए उसकी संसार में कोई उपमा नहीं है ।

दृष्टान्तो नैव दृष्टस्त्रिभुवनजठरे सद्गुरोर्ज्ञानदातुः
स्पर्शश्चेत्तत्र कल्प्यः स नयति यदहो स्वर्णतामश्मसारम् ।
न स्पर्शत्त्वं तथापि श्रितचरणयुगे सद्गुरुस्वीय शिष्ये
स्वीयं साम्यं विधत्ते भवति निरुपमस्तेन वाऽऽलौकिकोपि ।।

इसलिए कहा गया है कि गुरु के समान कोई भी वस्तु संसार में नहीं है । गुरु को इतना महत्त्व क्यों दिया गया ? बात यह है कि संसार के सब प्राणी दुःख से सदा के लिए छुटकारा प्राप्त करके परम सुख प्राप्त करना चाहते हैं । प्रत्येक प्राणी की यह भावना रहती है कि हमें कभी दुःख न हो और सदा सुख ही मिले । ऐसा सुख मिले जो सबसे श्रेष्ठ हो । जिससे बढ़कर कोई सुख न हो और जिसका कोई अन्त भी न हो ।

शास्त्रीय भाषा में कह सकते हैं कि समस्त दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति प्रत्येक पुरुष का प्रयोजन है, लक्ष्य है । अब उस प्रयोजन की सिद्धि कैसे हो ? परमानन्द की प्राप्ति कैसे हो सकती है? यदि परमानन्द नाम की कोई वस्तु है और वह किसी देश में या किसी काल में है और वहाँ जाने पर उसकी उपलब्धि होती हो तो हम वहाँ चले जाएँ । पर ऐसा कोई देश नहीं है जहाँ सुख ही सुख हो । ऐसा कोई काल नहीं है जब सुख ही सुख हो और ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो सदा हमें सुख ही देती हो ।

आप देखिए कि हम जिसको सुख का साधन मानकर प्राप्त करते हैं या प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, उसके लिए दुःख भी उठाते हैं, पर वह भी हमें सदा सुख नहीं देती। उदाहरण के लिए समझ लीजिए कि हमारे मन में यह भावना उठी कि आज हम खीर खायेंगे । खीर खाने की इच्छा से हमने उसका साहित्य जोड़ा । दूध लाए, शक्कर लाए, अच्छी कोटि का चावल लाए, मेवा लाए और केसर भी लाए । पत्नी ने खीर बनाया और उसकी सुगन्ध से नाक तर हो गई । थाली सामने आते ही मन प्रसन्न हो गया कि आहा! आज खीर आई है । अब पत्नी परोसती है तो हम बड़े प्रेम से खाते हैं । खाते-खाते जब तृप्ति हो जाती है तो कहते हैं अब बस । वह कहती है एक कटोरी और ले लो और वह आग्रह करके दे भी देती है । वह एक कटोरी भी हमने खा ली । फिर एक कटोरी और ले आती है । वह भी किसी तरह से खा लें तो और ले आती है । ऐसा करते-करते अन्त में इतना गुस्सा आता है कि खीर देखते ही नाराज होने लगते हैं और उससे कहते हैं कि क्या मार ही डालेगी ? क्यों भाई ! यदि खीर सुखरूप होती तो वही दुःखरूप क्यों हो गयी ? इसका मतलब यह है कि कोई भी वस्तु सदा हमें सुख नहीं दे सकती । सुख-देश, काल और वस्तु में सदा रहने वाला नहीं है । ऐसा भी नहीं है कि उसकी प्राप्ति में दुःख न हो या प्राप्ति के बाद में दुःख न हो । कोई भी सुख ऐसा नहीं है जिसके मूल में दुःख कभी न रहा है। अन्त में तो दुःख होता ही है ।

सद्गुरु हमें बताते हैं कि सुख बाहर नहीं है । सुख के लिए किसी देश, किसी काल या किसी वस्तु को प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है । सुख तेरा स्वरूप है । तू स्वयं आनन्दस्वरूप है । अपने को न जानने के कारण तू भटक रहा है । गोस्वामी तुलसीदास जी ने विनय पत्रिका में कहा –

आनंद सिंधु मध्य तव बासा ।
बिनु जाने कस मरसि पियासा ।।

अरे जीव ! तू तो आनन्द के समुद्र में है। इस बात को तू नहीं जानता इसलिए प्यासा मर रहा है । कबीर ने भी कहा –

पानी में मीन पियासी ।
मोहि रहि रहि आवत हाँसी ।।

मछली पानी में रहती है लेकिन उसकी प्यास पानी के भीतर रहने पर भी नहीं बुझती। उसकी प्यास तब बुझती है जब वह ऊपर की ओर उछलती है। आपने देखा होगा कि मछली एकान्त में उलटती है। जब वह उलटती है तभी उसके मुख में पानी जाता है। इसी तरह से जब तक हमारी बुद्धि बहिर्मुख रहती है, इन्द्रियों की तरफ रहती है, विषयों की तरफ रहती है तब तक हम सुख को प्राप्त नहीं कर सकते । जब बुद्धि अन्तर्मुख हो जाती है तो हमको उसकी प्राप्ति होती है। गुरु क्या करते हैं ? वे आपको बाहर से कुछ नहीं देते । आपके भीतर जो पहले से है उसी को जना देते हैं । इसलिए किसी गुरु ने कहा–

मेरा मुझको कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर ।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागे है मोर ।।

हमारे भीतर जो आनन्द का समुद्र लहरा रहा है उसी का ज्ञान सद्‌गुरु कराते हैं।

परमात्मा सबके हृदय में विद्यमान हैं । ऐसा कोई प्राणी नहीं है जिसके हृदय में भगवान् न हो । गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं –

व्यापक एक ब्रह्म अविनाशी ।
सतचेतन घन आनन्द राशी ।।
अस प्रभु हृदय अछत अविकारी ।
फिरहिं जीव जग दीन दुःखारी ।।

इसका अर्थ है कि एक व्यापक, अविनाशी, सत् चित् आनन्दरूप परमात्मा सब प्राणियों के हृदय में विद्यमान है। अब प्रश्न उठता है कि जब हमारे हृदय में आनन्दस्वरूप परमात्मा विद्यमान हैं तो फिर हम दुःखी क्यों है ? इसलिए कि हमको उनकी पहचान नहीं है। पहचान हो जाए तो हमारा दुःख उसी समय दूर हो जाएगा। गुरु क्या करते हैं? बस, उसी की पहचान कराते हैं।

नैनं अविदितो देवो भुनक्ति ।

कहा गया है कि परमात्मा जब तक विदित न हो जाए तब तक रक्षा नहीं करता। विदित हो जाने पर, बोध हो जाने पर ही हमारी रक्षा करता है। गुरु हमको ज्ञान प्रदान करते हैं। बोध देते है कि तू इधर-उधर मत भटक। तेरे हृदय में परमात्मा विद्यमान हैं। एक अविनाशी परमात्मा के हृदय में विद्यमान होने पर भी जीव इसलिए दीन और दुःखी है क्योंकि उसको उसका पता नहीं है। इसलिए बेचारा भटक रहा है।

बताते हैं कि एक कस्तूरी मृग होता है जिसकी नाभि में कस्तूरी होती है। जब वह पकती है तो उसकी सुगन्ध फैलती है। कस्तूरी मृग यह समझकर कि यह सुगन्ध किसी वनस्पति से, किसी वृक्ष से आ रही है, उसकी खोज में भटकता रहता है। जगह-जगह घूमता है लेकिन वह यह नहीं जानता कि मेरी ही नाभि में कस्तूरी है। इसलिए आप देखिये कि जो लोग नकली कस्तूरी बेचते हैं वे यही करते हैं। पहले आपके हाथ में उसका सेण्ट लगा देते हैं और फिर कहते हैं सूँघो। जो हाथ में पहले से लगी है उसी की तो सुगन्ध आएगी। जो वस्तु है उसका ज्ञान होना चाहिए और वह ज्ञान भी सही-सही होना चाहिए। गोस्वामी जी कहते हैं कि वह जो परमात्मा सबके हृदय में है वही नाम के निरूपण और नाम के यत्न से प्रकट हो जाता है। वह व्यापक, अविनाशी सच्चिदानन्द परब्रह्म सबके हृदय में विद्यमान है। जो अप्रकट है वही प्रकट हो जाता है –

नाम निरूपन नाम जतन तें।
सोउ प्रकटत जिमि मोल रतन तें।

दृष्टान्त दिया कि जैसे रत्न से मूल्य प्रकट होता है उसी प्रकार परमात्मा भी प्रकट हो जाते हैं। एक किसान था। वह अपने खेत में फसल की रक्षा के लिए मचान बनाकर, पत्थर मार-मार कर चिड़िया भगाता था। एक दिन उसके पत्थर खत्म हो गए तो वह नदी के किनारे पत्थर इकट्ठा करने गया। नदी के करार में उसे एक हण्डा मिला। उस हण्डे को उसने देखा कि लाल-लाल बढ़िया-बढ़िया पत्थर रखे हैं तो वह उन्हें ही उठा ले आया और अपने खेत में आकर उससे ही चिड़ियों को मार-मार कर भगाने लगा। इतने जोर से पत्थर मारता था कि चिड़िया तो उड़ ही जाती थी पर वे पत्थर भी पास की नदी के गहरे जल में डूब जाते थे। ऐसा करते-करते एक दिन उसके पास के सारे पत्थर डूब गए, केवल एक बचा रहा। इतने में घर से खबर आई कि आज घर में नमक नहीं है। अब उस किसान के पास इतने पैसे थे नहीं कि नमक खरीद ले। फसल भी अभी तैयार नहीं हुई नहीं थी कि उसी को बेच कर नमक खरीद ले। तो उसी एक पत्थर को लेकर नमक खरीदने के लिए वह बाजार गया। जहाँ नमक बिक रहा था वहाँ जा ही रहा था

कि इतने में एक जौहरी की नजर उस पर पड़ी । जौहरी ने पूछा कि कहाँ जा रहे हो ? उसने कहा कि नमक खरीदने जा रहा हूँ । जौहरी ने पूछा पैसे कितने हैं तुम्हारे पास? तो उसने कहा कि पैसे तो नहीं हैं । बस यही पत्थर है । कहा कि अरे ! यह तो कोई कीमती पत्थर लगता है । चलो इसका पता करते हैं । वह जौहरियों के पास गया । किसी ने कहा इस पत्थर की कीमत दस लाख, किसी ने कहा बीस लाख। किसी ने पच्चीस लाख । किसी ने कहा करोड़ । नगर सेठ ने कहा कि यह तो बहुमूल्य रूबी अर्थात् माणिक्य है। किसान के हृदय में जो दरिद्रता की ग्लानि थी कि मैं इतना गरीब हूँ कि मेरे पास नमक खरीदने के लिए भी पैसे नहीं है वह तत्काल दूर हो गई । जब उसने नगर सेठ की बात सुनी । नगर सेठ ने कहा कि इस बहुमूल्य पत्थर की कीमत मेरे पास भी नहीं है, मेरी सारी सम्पत्ति लेकर अगर यह लाल पत्थर दे सको तो दे दो । उसका सारा दुःख 'रूबी' शब्द सुनते ही दूर हो गया । गुरु क्या करते हैं ? जो तुम्हारा अन्तरात्मा है उसी को जना देते हैं ।

नाम निरूपन नाम जतन तें ।
सोउ प्रकटत जिमि मोल रतन तें ।।

गुरु ने जिस भगवान् के नाम का, जिस महावाक्य रूपी नाम का उपदेश जैसे ही दिया तो जो परमात्मा हमारे हृदय में पहले से ही अनभिव्यक्त था वह अभिव्यक्त हो गया। जैसे रत्न के नाम से उसका मूल्य प्रकट हो जाता है उसी तरह से गुरु के वाक्य प्रबोध से अन्तरात्मा का बोध हो जाता है ।

गुरु कौन हो ? अपने शास्त्रों में बतलाया गया है कि जो श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ है, जो वेद-शास्त्रों का ज्ञाता और परमात्मा के स्वरूप का अनुभव करने वाला है वही गुरु है । भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा–

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ।।

अर्जुन ! यदि तुझे ज्ञान प्राप्त करना है तो तू तत्त्वदर्शी ज्ञानी के पास जा । गुरु के दो विशेषण बताए – तत्त्वदर्शी और ज्ञानी । तत्त्वदर्शी का अर्थ है ब्रह्मनिष्ठ और ज्ञानी का अर्थ है श्रोत्रिय । ये दोनों विशेषताएँ जिनमें हो वह गुरु हमारे अज्ञानान्धकार को दूर कर सकता है । परमात्मा का ज्ञान आँख से नहीं हो सकता, कान से नहीं हो सकता, प्रत्यक्ष से नहीं हो सकता, अनुमान से नहीं हो सकता । परमात्मा का ज्ञान श्रुति से हो सकता है, उपनिषदों से हो सकता है और उन उपनिषदों का अर्थ गुरु बतलाते हैं । इसलिए

उपनिषदों में कहा गया है –

यस्य देवे पराभक्तिः यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ।।

जिसकी देवता में परा भक्ति है और जैसी भक्ति देवता में है वैसी ही अपने गुरु में है । वही व्यक्ति उपनिषदों के अर्थ को जान सकता है ।

आज इतना ही कहकर अपना प्रवचन पूर्ण करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[2]

।। राम राम दो ।।

अपनी प्रत्येक श्वास का सदुपयोग करो

समुपस्थित विद्वद्वृन्द ! देवियो ! सज्जनो !

श्रीमद्भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने प्रिय सखा उद्धव को उपदेश देते हुए कहा कि -

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारं ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ।।

इसका अर्थ है कि जो पुरुष इतने सब साधनों के रहते हुए भी स्वयं को संसार सागर से पार नहीं कर लेता वह आत्म हत्यारा है । वे साधन कौन-कौन से हैं ? **नृदेह** सबसे पहला साधन नर देह अर्थात् मनुष्य शरीर है । मनुष्य शरीर के बिना हम परमेश्वर को नहीं जान सकते । मनुष्य शरीर के बिना हम धर्म का अनुष्ठान नहीं कर सकते । मनुष्य शरीर सभी साधनों का मुख्य आधार है । इसलिए इसको **आद्यं** कहा । सबसे पहले मनुष्य शरीर मिलना चाहिए । पशु-पक्षियों के शरीर से हम भगवान् का आराधन नहीं कर सकते । यहाँ तक कि भगवान् का नाम भी हम नहीं ले सकते । आप पूछेंगे कि तोता, मैना आदि भी तो भगवान् का नाम ले लेते हैं । राम-राम, सीताराम-सीताराम रटते हैं तो आपका यह कथन कि केवल मनुष्य ही भगवान् का नाम लेता है यह कहाँ तक ठीक है ? इसका उत्तर यह है कि तोते को इस बात का पता नहीं है कि राम किसका नाम है? वह तो केवल रटता है लेकिन मनुष्य को पता होता है कि वह किसका नाम ले रहा है? मनुष्य जानता है कि राम कोई तत्त्व है। राम भगवान् हैं । उनका यह नाम है । इस बात का ज्ञान केवल मनुष्य शरीर से ही होता है । मनुष्य शरीर से ही आप धर्म का आचरण कर सकते हैं। पशु-पक्षी भी चलते हैं, घूमते हैं, कीड़े-मकोड़े भी चलते हैं लेकिन उनके चलने से न तो धर्म होता है और न ही अधर्म होता है । मनुष्य के चलने मात्र से धर्म हो जाता है यदि वह अपने चरणों से भगवान् के मन्दिर जाता है, तीर्थ यात्रा के लिए जाता है तो उसका चलना ही धर्म हो जाता है । वह यदि भगवान् के मन्दिर की परिक्रमा कर लेता है तो वही धर्म हो जाता है । मानस में लिखा है –

चरण राम तीरथ चलि जाहीं । राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ।।

जिनके पैर राम के तीर्थ में चले जाते हैं वह उनके मन में निवास करने लगता है। तो यहाँ पर चलना ही धर्म हो गया । कभी-कभी चलना ही अधर्म भी हो जाता है। यदि आप किसी बुरे काम के लिए चल रहे हैं तो वह चलना आपका अधर्म हो जाएगा। इससे तत्काल आपका मन अशुद्ध हो जाता है । रामचरितमानस में रावण की चर्चा है –

जाके डर सुर असुर डराहीं । निसि न नींद दिन अन्न न खाहीं ।।

इतना प्रभावशाली-बलशाली असुर रावण था कि उससे सुर-असुर सब डरते थे। कहीं रावण न आ जाए इस आशंका से लोगों को रात को नींद नहीं आती थी । दिन में भी लोग निर्भय होकर भोजन नहीं कर सकते थे। ऐसा रावण भी जब सीता जी के हरण के लिए चला तो वह कुत्ते जैसा चला –

सो दससीस स्वान की नाईं । इत उत चितइ चला भडिहाईं ।।
जिमि कुपंथ पग देत खगेसा । रहइ न तेज बुद्धि बल लेसा ।।

जैसे कोई चोर चलता है इधर-उधर देखता हुआ वैसे ही वह भी चला । देखता है कि मुझे जाते हुए कोई देख तो नहीं रहा ? कुपंथ में यदि कोई पैर रखता है तो उसकी बुद्धि, बल, तेज सब कुछ समाप्त हो जाता ह। इस तरह से चलना पुण्य और चलना ही पाप हो जाता है । हाथ से तो मनुष्य पुण्य और पाप करता ही है । हाथ से अपने गुरुओं की सेवा करता है । हाथ से दान करता है । माता-पिता की सेवा करता है तो यही पुण्य हो गया। हाथ से ही कोई यदि कुकर्म करता है तो वही पाप हो जाता है । यहाँ तक कि देखना ही पुण्य और देखना ही पाप हो जाता है । आप यदि भगवान् के भक्तों को देखते हैं, मन्दिर में भगवान् की मूर्ति को देखते हैं, गंगा का दर्शन करते हैं, नर्मदा का दर्शन करते हैं, सन्त-महात्माओं का दर्शन करते हैं तो दर्शन करना ही पुण्य हो गया और इसी आँख से यदि आप परनारी को बुरी दृष्टि से देखते हैं तो देखना ही पाप हो गया । वाणी से बोलना भी पुण्य और पाप हो जाता है । यदि आप भगवान् के चरित्र का गान करते हैं, भगवान् के नाम का संकीर्तन करते हैं, सत्य बोलते हैं, हितकारी वचन बोलते हैं, मृदु शब्दों में बोलते हैं तो वही धर्म हो जाता है और यदि इसी वाणी से आप कटु शब्द बोलते हैं, गाली देते हैं, दुर्वचन से किसी के हृदय को पीड़ा पहुँचाते हैं तो इसी जिह्वा का हिलना-डुलना अधर्म हो जाता है । मन से भी पाप और पुण्य दोनों हो जाते हैं । यह सब पशु-पक्षी के शरीर से नहीं होता। मानव शरीर से ही होता है । यदि आपको मानव शरीर मिल गया है तो आप इसका सदुपयोग कर सकते हैं । इसीलिए कहा कि - **नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभम् ।**

देवताओं को भी मनुष्य शरीर की प्राप्ति दुर्लभ है। देवता भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि प्रभो ! जब हमारा यह शरीर छूटे, जब हमारे पुण्यों का अन्त हो और पुण्यों के अन्त होने पर फिर से दुबारा जन्म लेना पड़े तो हमें भारत भूमि में मानव शरीर दीजिएगा। क्योंकि यहाँ आने से ही वे अपने आवागमन का चक्र मिटा सकते हैं, संसार के बन्धन से मुक्त हो सकते हैं और ईश्वर की आराधना कर सकते हैं। देवताओं को भी दुर्लभ मानव शरीर सुलभ हो जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने बताया –

नरक स्वर्ग अपवर्ग नसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी।
नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही ।।

मनुष्य शरीर के समान और कोई दूसरा देह नहीं है। चराचर जीव भी इसी शरीर को चाहते हैं। यह नसेनी है। नसेनी बाँस की सीढ़ी को कहते हैं। ऊपर चढ़ना हो तो ऊपर लगा लो और नीचे उतरना हो तो नीचे लगा लो। बराबर जाना हो तो बराबर लगा लो। स्वर्ग जाना हो तो पुण्य कर लो और नरक जाना हो तो पाप कर लो। फिर मनुष्य लोक में आना हो तो पाप-पुण्य दोनों बराबर कर लो।

प्लवं सुकल्पं गुरु कर्णधारम्।

यह संसार दुःख का समुद्र है। इस दुःख के समुद्र में प्राणी डूबता-उतराता है। जैसे समुद्र में बड़ी-बड़ी तरंगें होती हैं। उन तरंगों से टकराकर अच्छे-अच्छे पहलवान भी गिर जाते हैं। ऐसे ही इस संसार समुद्र में भी छः बड़ी-बड़ी तरंगें हैं। एक तरंग है - जरा-मरण माने बुढ़ापा और मृत्यु। आप देखिए कि जो मनुष्य जन्म लेगा और जीवित रहेगा तो उसे एक दिन बुढ़ापा अवश्य आएगा। बुढ़ापा आने पर उसका दुःख भोगना पड़ेगा।

अंगं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुण्डं।
वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदपि न मुञ्चत्याशापिण्डम् ।।

अंग गलित हो गए, बाल सफेद हो गए, मुँह में एक भी दाँत नहीं बचा, सब के सब गिर गए। दो पैर थे पर अब तीन पैर हो गए माने एक लाठी आ गई। अच्छे-अच्छे पहलवान जो जवानी में आकाश की ओर देखकर चलते थे बुढ़ापे ने उनकी आँख नीची कर दी। अब नीची आँख करके चलते हैं।

एक बुढ़िया थी। वह अपनी कमर झुकाए नीचे देखती हुई जा रही थी। कुछ मस्खरों ने व्यंग्य करते हुए उससे पूछा - माताराम ! नीचे क्या ढूँढ़ रही हो ? उसने कहा- अरे मूर्खों ! मेरे यौवन का मोती कहीं गिर गया है उसे ही ढूँढ़ रही हूँ। यह जरा है।

अब मृत्यु के विषय में देखिए। विज्ञान ने आज कितनी उन्नति कर ली है। आज आप अखबारों में पढ़ते होंगे कि वैज्ञानिकों ने गॉड पार्टिकल की खोज कर ली। तुमने तो खूब खोज कर ली लेकिन बुढ़ापा कैसे दूर हो और मृत्यु से कैसे बचें क्या इसकी खोज हुई है ? बुढ़ापा तो एक दिन वैज्ञानिकों का भी आएगा और मौत भी उनको आएगी। संसार में जो कोई भी है उसको जरा-मरण से मुक्ति नहीं मिल सकती। ये शरीर की दो तरंगें हैं।

इसी तरह प्राण की दो तरंगें हैं - क्षुधा और पिपासा। क्षुधा माने भूख। भूख सबको लगती है। राजा को भी और रंक को भी। भूख के कारण लोग क्या नहीं करते? आज एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की गुलामी क्यों कर रहा है ? क्योंकि उसको पेट भरना है। पेट भरने के लिए लोग एक देश से दूसरे देश जाते हैं। पेट भरने के लिए ही भरी बरसात में किसान अपने घर से निकलकर खेत में मेड़ बाँधने के लिए जाता है। नौकर सब काम छोड़कर ऑफिस के समय अपने काम में लग जाता है। व्यापारी सुबह से लेकर शाम तक बैठा रहता है। हमलोगों ने देखा है कि बड़े-बड़े शहरों में जहाँ पर हवा भी नहीं लगती ऐसी जगह पर भी लोग सुबह से शाम तक बैठे रहते हैं कि कोई ग्राहक आ जाए और सामान खरीद ले। ऐसा क्यों ? क्योंकि पेट भरना है। भूख ऐसी चीज है जो सबको लगती है। हम साधु-महात्मा लोग घर छोड़कर जंगल में चले जाते हैं। जब भूख लगती है तो हमको भी भिक्षा के लिए वापस घरों में जाना ही पड़ता है। इसलिए एक महात्मा कहते थे कि हम तेईस घण्टे के बादशाह हैं। एक घण्टा भिक्षा के लिए जाना पड़ता है। पिपासा माने प्यास। यह भी सबको लगती है।

मन की भी दो तरंगें हैं - शोक और मोह। अपने प्रियजनों का वियोग शोक कहलाता है। जिस माता ने हमको पाल-पोसकर बड़ा किया। नौ महीने अपने पेट में रखा और हमको पशु से मनुष्य बनाया। क्या खाएँ ? कैसे खाएँ ? कैसे रहें ? क्या पकड़ें? क्या छोड़ें? कहाँ लघुशंका करें ? कहाँ शौच करें ? ये सभी शिक्षा माँ देती है। यदि बच्चे को कोई रोग हो गया तो रात-रात भर प्यार से जागती है। पिता यदि मारने दौड़े तो कहती है कि मुझे मार लो पर मेरे बच्चे को मत मारो। वही माता जिसके मन में इतना वात्सल्य होता है वह एक दिन मर जाती है। जो बाप पाल-पोसकर बड़ा करता है। पढ़ाता-लिखाता है। अपने जीवन भर की सारी सम्पत्ति अपने बेटे के लिए छोड़ देता है वह एक दिन चला जाता है।

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् ।।

जो जरा-मरण से मुक्ति के लिए मेरा आश्रय लेकर मेरा भजन करते हैं ।

संसार समुद्र से पार होने के लिए जरा-मरण एक उपलक्षण है । जरा-मरण, क्षुधा-पिपासा, शोक-मोह और यहाँ तक कि सारा संसार जो दुःखरूप है इससे पार होने के लिए भगवान् ने हमको एक जहाज दे रखी है। वह क्या है ?यही मानव शरीर । यह एक ऐसा जहाज है जिससे हम चाहें तो परमात्मा के तत्त्व का साक्षात्कार कर सकते हैं। परमात्मा की आराधना-उपासना कर सकते हैं । जो अत्यन्त दुर्लभ था वह हमें सुलभ हो गया है। सबसे बड़ी बात यह है कि **गुरु कर्णधारं** कहा गया है । जैसे जहाज को दिशा-निर्देश करने के लिए उसमें एक कान के आकार का तख्ता लगाया जाता है और एक व्यक्ति उसको पकड़े रहता है । वह जिधर उसको घुमा देता है जहाज उधर ही घूम जाता है । इसी प्रकार गुरु हमारे जीवन के कर्णधार हैं ।

कर्णधार सद्‌गुरु दृढ़ नावा ।

इस संसार में भगवान् की कृपा से गुरु भी मिल जाते हैं । भगवान् ऐसा संयोग बना देते हैं जैसे कि आपको मानव शरीर दे दिया । आपको अन्धा, बहरा, गूँगा नहीं बनाया। आपके सब शरीर, इन्द्रियाँ आदि ठीक हैं । यह सब भगवान् की कृपा ही है। भगवान् की कृपा से सन्त-महात्माओं का दर्शन हो जाता है ।

संत विसुद्ध मिलहिं पुनि तेही । चितवहिं राम कृपा करि जेही ।।

जिसके ऊपर भगवान् कृपा कर देते हैं उसको विशुद्ध सन्त मिल जाते हैं । सन्त को यहाँ विशुद्ध कह दिया। कईयों को तो विशुद्ध सन्त मिल जाते हैं पर कईयों को कालनेमि मिल जाते हैं । सन्त के वेश में ऐसे लोग मिल जाते हैं जो उल्टा उपदेश देते हैं। ऐसे लोगों के चक्कर में पड़ गए तो वे न जाने कहाँ पहुँचा दें । भगवान् के अनुग्रह से हमें सन्त मिल जाते हैं, गुरु मिल जाते हैं ।

प्लवं सुकल्पं गुरु कर्णधारम् । मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ।।

जैसे जहाज को हमें जिस ओर ले जाना हो उसी ओर पवन भी चलता हो तो सरलता से जहाज आगे बढ़ जाता है । उसी प्रकार भगवान् भी उनके मार्ग में चलने वालों की सहायता करते हैं । उनको सद्‌बुद्धि देते हैं । वैसी ही परिस्थिति उत्पन्न कर देते हैं । इतना सब होते हुए भी लोग सोचते हैं कि अभी से क्या करें ? आगे कर लेंगे।

पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ।

बाल्यावस्था में सोचते हैं कि अभी तो खेल-कूद का समय है । अभी धर्म से क्या काम है ? हम क्यों जाएँ सत्संग में ? **बालस्तावत् क्रीडासक्तः** । तरुणावस्था आई तो तरुणी में आसक्त हो गए और जब वृद्धावस्था आ गई तो चिन्ता में मग्न हो गए । **पारे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः** । कोई भी परमात्मा की प्राप्ति में नहीं लगा हुआ है। इसलिए प्रह्लाद जी ने तो यह कहा कि बाल्यावस्था से ही भगवान् का भजन करना चाहिए –

कौमार आचरेत् प्राज्ञः धर्मान् भागवतानिह ।
दुर्लभं मानुषं देहं तदप्यध्रुवमर्थदम् ।।

इसका अर्थ है कि कुमारावस्था में ही बुद्धिमान् पुरुष को भागवत धर्मों का आचरण करना चाहिए यह समझकर कि मनुष्य शरीर दुर्लभ है । दुर्लभ होने के साथ ही साथ यह अध्रुव भी है। कब सूख जाएगा यह कोई नहीं बता सकता ।

नौ द्वारे का पिंजरा तामे पंछी मौन ।
रहे को आचरज है गए अचम्भा कौन ?

यह शरीर नव द्वार का पिंजरा है । इसमें पवन का पंछी प्राण है जिसके निकलने के नौ दरवाजे हैं । इसको निकलने में क्या देर लगती है ? यह इस देह रूपी पिंजड़े में रहता है यही आश्चर्य है । इसके बाहर निकल जाने में क्या आश्चर्य है ? अध्रुव होने के साथ-साथ अर्थदम् कहा गया अर्थात् बहुत बड़े प्रयोजन की सिद्धि इस मानव देह से हो सकती है । आप समझ लीजिए कि चौबीस घण्टे में मनुष्य श्वाँस लेता है । श्वाँस से ही जीवन है । जिस दिन यह बन्द हो जाएगी फिर क्या रह जाएगा शरीर में ? डाक्टर कह देगा कि श्वाँस चली गई ।

जिस दिन तेरी श्वाँसें चली जाएँगी ।
उस दिन तेरी सूरत बदल जाएगी ।।

चौबीस घण्टे में हम जो श्वाँस लेते हैं वह गिनी हुई है । चौबीस घण्टे में हम २१,६०० बार श्वाँस लेते और छोड़ते हैं । एक दिन की २१,६०० तो महीने भर की गिन लीजिए । कम्प्यूटर से जोड़कर निकाल लीजिए। साल भर की निकाल लीजिए । जितनी आपकी आयु है उतनी निकाल लीजिए । जितने दिन आप जीवित रहेंगे तब तक की निकाल लीजिए । उतनी श्वाँस की आपके पास पूँजी है । उसी में से निरन्तर खर्च हो रही है । देखिए जिस कुएँ में छेद है उस कुएँ से जितना भी पानी निकालो भरता जाएगा लेकिन टांका? उसमें से जितना निकाल लोगे उतना कम हो जाएगा । आपके पास कई करोड़

रुपया हो लेकिन बिजनेस न हो, उत्पादन का कोई साधन न हो तो आपको उसी दिन से डर लगेगा कि खर्च हो रहा है । अब बचेगा क्या ? तो आपकी जो श्वाँस जीवन की पूँजी है वह तो निकलती चली जा रही है । कम होती जा रही है होते-होते जब अन्तिम श्वाँस रहेगी तब पता लगेगा कि इसकी कितनी कीमत है ?

एक किसान था । उसके खेत में ज्वार बोई गई थी । भुट्टे लगे थे । चिड़िया आकर खेत को खाने लगी। उसने अपनी फसल को बचाने के लिए खेत में मचान बनाया और उस पर चढ़कर पत्थर इकट्ठा करके मुट्ठी में भर-भरकर फेंकता और चिड़िया भगाता था। उसके सब पत्थर चिड़िया भगाने में खत्म होते जा रहे थे । इसी तरह से हमारी श्वाँस पत्थर है । हम गोफरों में रखकर उसे निरन्तर फेंक रहे हैं । कहते हैं –

बैठत बारह चलत अठारह सोवत में छत्तीस ।
मैथुन मे चौंसठ चले क्यों न भजे जगदीश ।।

श्वांस निकलती जा रही है । निकलते-निकलते जब अन्तिम श्वाँस रह जाएगी तब आपको पता लगेगा । तब सोचेंगे कि अब क्या करें ? अब यह गई तो गई । पहले से ही उसका उपाय कर लेना चाहिए । उन श्वाँसों का सदुपयोग करना चाहिए । इसीलिए किसी कवि ने कहा -

सम्पति सारे जगत् की श्वाँसा सम नहीं होय ।
सो श्वासा रघुवीर बिनु विरथा डारी खोय ।।

सारे जगत् की सम्पत्ति श्वाँस के समान नहीं है । वह श्वाँस आप बिना भगवान् के व्यर्थ ही खो रहे हो।

श्वाँस-श्वाँस पर राम कहु वृथा श्वास जनि खोय ।
ना जाने फिर श्वास का आवन होय न होय ।।

कहते हैं कि जो श्वास आपकी निकली है वह लौटकर आएगी कि नहीं इसका कोई ठिकाना नहीं है । इसीलिए इसका उपयोग कर लेना चाहिए ।

एक कथा हमने सुनी थी सिकन्दर बादशाह की । सिकन्दर बादशाह दिग्विजयी माना जाता था । एक बार जब वह बीमार पड़ा तो लुकमान नाम के एक वैद्य को बुलाया गया । जैसे अपने यहाँ धन्वन्तरि हैं वैसे ही फारसी में लुकमान हो गया । लुकमान ने नाड़ी देखी और कहा कि यह बादशाह एक घण्टे तक रहेगा । एक घण्टे के बाद इसका प्राण छूट जाएगा । यह सुनकर बादशाह ने सोचा कि क्या करें ? तो उसने अपने मन्त्रियों

को बुलाया और कहा कि देखो भाई! अब तक हम आप सब लोगों के कहने पर चलते रहे। हमारे जीवन का एक घण्टा और बढ़ा दो।असमर्थता व्यक्त की सबने। रनिवास से रानियों को बुलाया। उनसे कहा तुम्हारे पीछे हमने इतना समय बिताया। कुछ समय तुम बढ़ा दो। वे रोने लगीं कि हमारे हाथ में यह नहीं है। हम क्या करें ? लुकमान ने कहा कि हम बस इतना कर सकते हैं कि तुम होश में रहोगे। तुम्हें तकलीफ नहीं होगी पर तुम मरोगे तो जरूर। इससे अधिक तुम्हारी आयु नहीं है। उसने सबको बुलाया और कहा कि जब हम मर जाएँ तो जितना भी हमारे खजाने में सोना, चाँदी और रत्न हैं सब सड़क पर बिखेर देना। लोगों को समझ में आ जाए कि इसके साथ कुछ नहीं गया। और जब हमें दफनाने ले जाओ तो मेरे पैर आगे और मेरा सिर पीछे कर देना। इसका मतलब यह है कि सिर आगे करके आया था और अब पैर आगे करके जा रहा हूँ। मेरे हाथ खोल देना जिससे यह पता लगे कि मुट्ठी बाँधे आया था और अब हाथ पसारे जा रहा हूँ। इसलिए अपने जीवन का मूल्य समझते हुए, श्वाँसों का मूल्य समझते हुए जीवन बिताना चाहिए। यही समझदारी की बात है।

दुर्लभो मानुषो देहो देहिनां क्षणभंगुरः।
तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुण्ठप्रियदर्शनम्।।

छोटी अवस्था से ही भगवान् का भजन प्रारम्भ कर देना चाहिए। ऐसा माना जाता है कि चंचलता बच्चों के शरीर में रहती है। बच्चा बहुत ज्यादा चंचल होता है। उसको यदि शान्ति से बिठा दो तो वह एक जगह शान्त नहीं बैठ सकेगा क्योंकि उसकी चंचलता शरीर में है। जवान की चंचलता आँख में होती है। आँखें इधर-उधर घूमती ही रहती हैं। बूढ़े की चंचलता मन में आ जाती है क्योंकि उसका शरीर शिथिल हो गया। इसलिए जीवन के प्रारम्भ से ही सत्संग करना चाहिए और फिर जब से होश आ जाए तभी से संभल जाना चाहिए। कबीर दास जी कहते हैं–

कहे कबीर जान दे भाई जब से चेता तब से सही।।

जब से समझ में आ जाए तब से अच्छे काम में लग जाना चाहिए। मनुष्य को अपने शरीर को सार्थक बनाने के लिए, जन्म-मरण के चक्र से छूटने के लिए परमात्मा की ओर उन्मुख होना चाहिए। जन्म-मरण का चक्र भगवान् की शरण में जाने पर ही छूट सकता है और आज तक इस चक्र से छूटने का इसके अलावा कोई और उपाय नहीं निकाल सका है। इसीलिए भगवान् ने कहा –

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये।

जरा-मरण से मुक्ति के लिए जो मेरा आश्रय लेकर प्रयत्न करता है। जरा-मरण से मुक्ति के लिए भगवान् का आश्रय लेने वाले पुण्यात्मा लोग हैं। ये दैवी सम्पत्ति वाले लोग हैं। सबकी भगवान् में और भगवान् के भक्तों में श्रद्धा नहीं होती है। जिसका अन्तःकरण जैसा होता है वैसी ही उसकी श्रद्धा होती है –

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ।।

अपने अन्तःकरण के अनुरूप ही प्राणी की श्रद्धा होती है – **श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः।**

जो जैसी श्रद्धा वाला है वह वैसा ही है। किसी भी व्यक्ति को समझना हो तो उसके मित्रों को देख लो। कैसे लोगों से उसकी दोस्ती है, कैसे लोगों से उसका प्यार है, इसी से समझ में आ जाएगा कि वह व्यक्ति कैसा है। लोग कहते हैं कि संसार तो क्षणभंगुर है। हमारा विषय-भोग भी नष्ट हो जाता है पर हम तो इसको नित्य समझकर भोग रहे हैं। ऐसी स्थिति में जिसमें दैवी सम्पत्ति के गुण हैं, जिसका अन्तःकरण विशाल है।

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ।।

हे अर्जुन ! जो महात्मा हैं, जो दैवी सम्पत् वाले हैं वे मेरा भजन करते हैं और ऐसे ही लोग सन्त-महात्माओं से भी प्रेम करते हैं –

बरषा बिगत सरद रितु आई। लछिमन देखहु परम सुहाई ।।
फूलें कास सकल महि छाई। जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढाई ।।

वर्षा ऋतु का वर्णन करते हुए भगवान् श्रीराम लक्ष्मण जी से आगे कहते हैं कि देखो मेघों को देखकर मोर नाच रहे हैं। जैसे कोई गृहस्थाश्रमी जिसके मन में वैराग्य है वह साधु-महात्माओं को देखता है तो उसका मन-मयूर नाच उठता है कि महात्मा जी आए हैं, भगवान् की कथा सुनाएँगे, प्रभु का नाम लेंगे और हमसे भी लिवाएँगे। ये हमारे जीवन को धन्य करने आए हैं। ऐसे ही लोगों का कल्याण होता है।

आज इतना ही कहकर अपना प्रवचन पूर्ण करते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

[3]

।। राम राम तीन ।।

मनुष्य का लक्ष्य है परमानन्द की प्राप्ति

समुपस्थित विद्वद्वृन्द ! देवियो ! सज्जनो !

हमारा मनुष्य जीवन एक प्रकार की यात्रा है। जैसे हम अपने घर से कहीं जाने के लिए निकलते हैं। निकलने के पहले हमारा उद्देश्य निश्चित रहता है कि हमें कहाँ जाना है। पागल व्यक्ति को छोड़कर अन्य जो भी बुद्धिमान् मनुष्य हैं वे पहले से ही अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं तभी घर छोड़ते हैं। एक देश को छोड़कर दूसरे देश में जाना यात्रा कहलाता है। इसी प्रकार जीवन में किसी सन् या संवत्सर में प्राणी जन्म लेता है और किसी दूसरे सन् अथवा संवत्सर में उसके जीवन का अन्त हो जाता है। यह भी उसकी एक यात्रा है। जैसे देश से देशान्तर की यात्रा का कोई उद्देश्य होना चाहिए वैसे ही जीवन का भी कोई उद्देश्य होना चाहिए। यह उद्देश्य क्या है ? इसी को दार्शनिक ग्रन्थों में पुरुषार्थ कहा गया है। पुरुष जिसको चाहता है और पुरुष का जो प्रयोजन है उसी का नाम पुरुषार्थ है।

अब यह समझना होगा कि पुरुष का क्या प्रयोजन है ? सबसे पहला प्रयोजन तो यह है कि प्रत्येक व्यक्ति जीवित रहना चाहता है। मरना कोई नहीं चाहता। सब चाहते हैं कि हम जीवित रहें, कभी मरें नहीं। यहाँ तक कि जो गन्दे नालों में लोटने वाले सूअर हैं वे भी मरना नहीं चाहते। घर-घर मार खाने वाले कुत्ते भी नहीं मरना चाहते। मनुष्य की तो बात ही क्या है ? प्रत्येक अवस्था में प्राणी अपने को बचाना चाहता है, मरने से बचता है।

हम दृष्टान्त दिया करते हैं कि एक बुढ़िया थी। वह बहुत गरीब थी। जंगल में जाकर लकड़ी बीनती थी और लकड़ी का बोझ बनाकर शहर में बेचकर अपना जीवन चलाती थी। एक दिन वह जंगल गई। वहाँ उसने लकड़ियाँ इकट्ठी की। बोझ बनाया और उठाने लगी। उस दिन उठाते समय उससे बोझ न संभला और वह गिर पड़ी। उसके मुँह से अचानक निकला 'हाय ! मुझे तो मौत भी नहीं आती।' संयोग की बात कि जैसे ही उसके मुँह से यह निकला ठीक सामने मौत आकर खड़ी हो गई। विकराल रूप धारण

कर । उसने परिचय दिया कि मैं मौत हूँ, कहो ! हमें क्यों बुलाया ? तो बुढ़िया कहती है कि यह बोझ मेरे सिर पर रख दे । इसका मतलब क्या है ? वह मरना नहीं चाहती। कोई भी व्यक्ति मरने से डरता है । एक तो हमारा पुरुषार्थ या प्रयोजन यही है कि हम मरने से बचें ।

दूसरा यह कि कोई भी व्यक्ति अज्ञानी नहीं रहना चाहता । आप दूसरों से यह कहें कि हम आपको नहीं जानते । आपकी महिमा का हमको ज्ञान नहीं है तो यह स्तुति हो जाती है लेकिन यदि यह कहें कि आप कुछ नहीं जानते तो वह गाली हो जाएगी । बेवकूफ शब्द का क्या अर्थ है ? जिसमें वकूफ माने अकल नहीं है । जिसमें ज्ञान नहीं है वह बेवकूफ। कोई व्यक्ति भले ही कितना भी मूर्ख हो वह अपने आपको ज्ञानी ही समझता है । मूर्खता से, अज्ञान से सभी के मन में घृणा है । सभी चाहते हैं कि हमको ज्ञान मिले।

तीसरी बात यह है कि सब लोग चाहते हैं कि हमको सुख मिले । समस्त दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति ही मनुष्य के जीवन का लक्ष्य है । किसी प्रकार का दुःख हमको न हो । दुःख का अभाव पुरुषार्थ नहीं है क्योंकि दुःख का अभाव तो पत्थर को भी है । पत्थर में चोट करें तो उसको कहाँ दुःख होता है? पत्थर कहाँ रोता है ? पर हम पत्थर नहीं बनना चाहते । हम तो चाहते हैं कि दुःख न हो और सुख मिले। सुख भी ऐसा जो थोड़ा न हो। ऐसा सुख न हो जो दुःख से मिला हो या जिसका अन्त हो जाता हो । किसी कवि ने कहा है–

वह सुख सुख ही नहीं, जिसमें दुःख है, डरना है, रोना है।
मिलावट से है जो खाली उसी का नाम सोना है ।

जिस सुख में दुःख मिला हुआ हो वह सुख सुख नहीं है । जो सुख से सदा अमिश्रित हैं । अनन्त, अखण्ड है ऐसा सुख प्रत्येक प्राणी चाहता है ।

चौथी इच्छा यह है कि प्रत्येक प्राणी स्वतन्त्र रहना चाहता है । कोई भी परतन्त्र नहीं रहना चाहता । आप अपने कमरे में भीतर से दरवाजा बन्द करके दिन भर बैठे रहें तो आपको कोई घबराहट नहीं होगी लेकिन अगर कोई आपको बाहर से बन्द कर दे तो पाँच मिनट में ही बेचैनी हो जाएगी क्योंकि आपको लगेगा कि हम परतन्त्र हो गए । परतन्त्रता से सब डरते हैं । सब चाहते हैं कि हम स्वतन्त्र रहें । सब लोग यह चाहते हैं कि किसी प्रकार का बन्धन हमारे ऊपर न रहे । बन्धन से मुक्ति भी मनुष्य के जीवन का लक्ष्य होता है।

पाँचवीं इच्छा यह कि हम जो चाहें वह हो जाए। पिता चाहता है कि पुत्र मेरी आज्ञा का पालन करे और पुत्र चाहता है कि जो भी हम पिता से कहें वे मान लिया करें। पति चाहता है कि हमारी स्त्री पतिव्रता बनकर रहे और पत्नी चाहती है कि पति हमारे इशारे पर नाचे। हमें किसी प्रकार की परतन्त्रता बर्दाश्त नहीं। गुरु चाहते हैं कि शिष्य हमारी आज्ञा का पालन करें और शिष्य चाहते हैं कि जो हम गुरुजी से प्रार्थना करें वे तत्काल ही मान लिया करें। यह आधिपत्य की भावना सबके मन में होती है।

ये पाँच इच्छाएँ हैं। इन्हीं को यदि आप दूसरे शब्दों में समझना चाहें तो जीने की इच्छा का अर्थ है सत् होने की इच्छा, ज्ञान की इच्छा का अर्थ है चित् होने की इच्छा। चित् माने ज्ञान और सुखी होने की इच्छा का नाम है आनन्द। सत् चित् आनन्द तीनों को यदि आप मिला दें तो हो जाता है सच्चिदानन्द। सच्चिदानन्द ही स्वतन्त्र है और वही सबका अधिपति है। इसलिए सब लोग सच्चिदानन्द, सर्वतन्त्रस्वतन्त्र, सर्वाधिष्ठान, परमात्मा के साथ मिलना चाहते हैं। परमात्मा से मिलने के लिए प्रत्येक प्राणी आतुर है।

वैसे भिन्न-भिन्न लोगों ने अपना लक्ष्य बना रखा है पर पर्यवसान वहीं होता है। किसी भी लड़के से पूछा जाए कि क्यों भाई ! क्यों पढ़ रहे हो ? कहेगा हम इंजीनियर बनना चाहते हैं, हम डॉक्टर बनना चाहते हैं, कोई कहता है हम नेता बनना चाहते हैं, कोई कुछ कहेगा और कोई कुछ। लेकिन सबके मन में यही इच्छा है कि ऐसा करने से हम सुखी हो जाएँगे। सुख के लिए ही सब किया जाता है। सुख के लिए ही सब क्रियाएँ होती हैं। अब आप किसी शहर में चौराहे के पास में मकान के ऊपर बैठ जाइए तो आप देखेंगे कि लोग दौड़ रहे हैं। कोई रिक्शे में, कोई तांगे में, कोई गाड़ी से, कोई पैदल। लोग बड़ी तेजी से जाते दिखेंगे। ये सब कहाँ जा रहे हैं ? कुछ लोग अस्पताल जा रहे हैं कि हमको रोग हो गया है। भय है कि कहीं हम मर न जाएँ। मरने से बचने के लिए अस्पताल जा रहे हैं। कुछ लोग स्कूल-कॉलेज जा रहे हैं ज्ञान प्राप्त करने के लिए। कुछ लोग मनोरंजन के लिए सिनेमा जा रहे हैं। कोई अपने मित्र के पास जा रहे हैं और कोई जिनसे अपना प्रेम है उनके पास जा रहे हैं। कुछ लोग बन्धन में पड़े हुए हैं कि उन्हें सजा होने की सम्भावना है। कुछ आजादी के लिए जा रहे हैं। कुछ लोग चुनाव लड़ रहे हैं। क्यों लड़ रहे हैं ? इसलिए कि हम अधिपति हो जाएँ और हमारी चले। तो कुल मिलाकर देखा जाए तो पता चलता है कि ये सब सच्चिदानन्द परमात्मा की प्राप्ति की दौड़ में लगे हुए हैं। न जानने के कारण क्षुद्र विषयों में पड़े हैं। यह जीवन का चरम लक्ष्य है कि हम नर से नारायण बनें और परमात्मा को प्राप्त करें। ये बात तब समझ में आती है जब मनुष्य का हृदय परिष्कृत होता है, स्वच्छ होता है। जब वह सत्संग में जाता है, बैठकर विचार

करता है तो उसके मन में इस बात का उदय होता है कि हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है? अन्यथा वह कुछ सोचता ही नहीं और केवल दूसरों की नकल करता रहता है।

बहुत पहले की बात है एक बार हमसे एक व्यक्ति ने पूछा कि आप साधु क्यों हो गए? हमने कहा कि तुम हमसे क्यों पूछ रहे हो ? पहले तुम बताओ कि तुम गृहस्थ क्यों हो गए ? उसने कहा कि हमने तो सोचा ही नहीं। दूसरों को गृहस्थ होते देखा तो हम भी हो गए । हमने कहा कि तुमने सोचा नहीं और हमने सोच लिया बस यही अन्तर है।

यह जो विचार है यह तब आता है जब मनुष्य अच्छे लोगों के बीच में बैठता है, शास्त्रों की बातें सुनता है और जिसके भीतर दैवी सम्पत् के लक्षण होते हैं वही अच्छे कार्य में लगता है। मनुष्य की जो प्रकृति है वह उसको प्रेरित करती है कि वह किधर जाए । यह एक जन्म की बात नहीं होती, कई जन्म की बात होती है । जिन संस्कारों को लेकर मनुष्य इस संसार में जन्मा है वह उसी प्रकार के कर्म करता है । उसी प्रकार का उसका स्वभाव बन जाता है । इसी का नाम दैवी सम्पत् और आसुरी सम्पत् है । आसुरी सम्पत् के लोग क्या करते हैं ?

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ।।

भगवद्गीता में भगवान् ने कहा कि दम्भ, दर्प, अभिमान, क्रोध, कठोर शब्द और अज्ञान यही आसुरी सम्पत् है । आसुरी सम्पत् वाला व्यक्ति सोचता है – **किं मया लब्धम् मनोरथम् ।**

मैंने यह प्राप्त कर लिया है, मेरे मन की बात आगे हो जाने वाली है । जो हमारी इच्छा है उसको मैं अच्छे-अच्छे काम करके पूरी करूँगा । मैंने अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लिया और जो अभी मेरे शत्रु बचे हैं उनको भी मैं समाप्त कर दूँगा । मैं सबका स्वामी हूँ । मेरी शक्ति बड़ी है । मेरे मित्र बहुत से हैं । कौन मेरे बराबर है? मैं बलवान् हूँ । मैं सुखी हूँ । इस प्रकार सोचने वाला आसुरी सम्पत् वाला व्यक्ति कहलाता है । रावण क्यों राक्षस माना गया ? क्योंकि उसमें आसुरी सम्पत् थी । जब मन्दोदरी रावण को समझाती थी कि राम से बैर मत करो, भगवान् श्रीराम को उनकी जानकी लौटा दो तब वह क्या कहता था ?

क्या रामचन्द्र से मेरी साहिबी कम है ?
नहीं दूँगा जानकी जब तक तन में दम है ।

वह कहता था कि मैं किसी भी अवस्था में राम को जानकी नहीं दूँगा। क्या मेरी ताकत राम से कम है? वह स्वयं को राम से बलवान् समझता है। दुर्योधन आसुरी सम्पत् वाला है। भगवान् श्रीकृष्ण उसको समझाने जाते हैं कि तुमने जो पाण्डवों का स्वत्त्व ले रखा है उसे दे दो। जो यह शर्त थी कि तेरह वर्ष तक पाण्डव वनवास करेंगे तो अब उन लोगों ने वह शर्त भी पूरी कर दी है। अब तुम उन्हें अपना राज्य लौटा दो। दुर्योधन कहता है कि पाण्डव मेरा क्या कर लेंगे ? मेरे पास भीष्म, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा, मेरा भाई दुःशासन है और मुझमें भी बहुत बल है। वह कहता है –

सूच्यग्रेण कुशाग्रेण वेध्यते या च मेदिनी।
तदर्धं नैव दास्यामि विना युद्धेन केशव ।।

हे केशव ! सूई या कुशा के अग्रभाग से जितनी धरती बिंधती है उसकी आधी भी बिना युद्ध के मैं पाण्डवों को नहीं दूँगा। दुर्योधन को इस बात का अभिमान है कि मेरे बराबर कोई बलवान् नहीं है। भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे दुर्योधन ! अधर्म मत करो। जो मनुष्य अधर्म का आचरण करता है उसका पतन निश्चित होता है। अधर्म से बढ़कर और कोई पतन कराने वाला नहीं है। उसने कहा कि आप क्या कर सकते हो? पाण्डव क्या कर सकते हैं ? पाण्डवों के पास मेरी बराबरी का क्या बल है ? लेना हो तो लड़कर ले लें पाण्डव। तब भगवान् श्रीकृष्ण बोलते हैं कि देखो दुर्योधन !

एकाकी पादचारेण नो चेद् द्रक्ष्यामि कौरव।
मन्वादयो धर्मवक्तारः तदासीर्मद्यपायिनः ।।

यदि मैंने तुमको अकेले युद्ध से पैदल भागते हुए नहीं देख लिया तो मैं समझूँगा कि धर्म के प्रवक्ता जो मनु आदि ऋषि हैं इन्होंने मद्यपान करके धर्मशास्त्र को लिखा।

जो मनुष्य अधर्म करता है उसका भयंकर पतन होता है। जब सीताजी की खोज में हनुमान जी लंका जाते हैं तो वे तो उनका पता लगाने के लिए गए थे पर रावण से भी दो बात करने की इच्छा उनके मन में थी। उन्होंने सोचा कि राजा रावण से कैसे मिलें? इतने में विभीषण मिल गए।

युक्ति विभीषण सकल सुनाई। चलेउ संग लै विदा कराई।

विभीषण ने उनको युक्ति बता दी। उन्होंने कहा कि ऐसे तुम मिलने का समय माँगोगे तो नहीं देगा। मुल्जिम बनोगे तो तुरन्त राजा के पास पहुँच जाओगे। कुछ अपराध कर बैठना तब वह अपराधी को दण्ड देने के लिए तुरन्त सामने बुला लेंगे। ऐसा ही हुआ।

सीता जी को अँगूठी दे दी और भगवान् राम का सन्देश सुनाया । सीता जी का सन्देश लिया । जब सब काम पूरा हो गया तब उन्होंने सीता जी से पूछा कि माँ ! हमको भूख लगी है। आपकी आज्ञा हो तो अशोक वाटिका में बड़े सुन्दर-सुन्दर फल लगे हैं, इन्हें खा लें ? माता सीता ने कहा कि बेटा! खा तो लो पर यहाँ राक्षस लगे हैं जो तुम्हें खाने नहीं देंगे । हनुमान जी बोले कि –

तिन्ह कर डर माता मोहि नाहीं । जौ तुम सुख मानहु मन माहीं ।।

अगर आप आज्ञा दें तो हमें उनका कोई डर नहीं है । माता ने कहा कि जाओ तब खा लो । भगवान् के चरणकमल अपने हृदय में रखो और फल खाओ । हनुमान जी ने फल खाते-खाते बहुत से पेड़ों को भी तोड़ दिया। डाली गिरा दी । बन्दरों का तो काम ही यह होता है । ऐसे-ऐसे काम बन्दर कर देते हैं जिनका कोई ठिकाना नहीं होता । हनुमान जी ने अपने वानर स्वभाव का परिचय दे दिया । राक्षस आए, रोकना चाहा, पकड़ने की कोशिश की, मारने की कोशिश की पर पकड़ नहीं पाए ।हनुमान जी ने -

कछु मारेसि कछु मर्देसि कछुक मिलाएसि धूरि ।
तब प्रभु जाइ पुकारे प्रभु मर्कट बलभूरि ।

हनुमान जी ने किसी को मारा, किसी को मसला और कईयों को धूल में मिला दिया। जो कुछ बचे थे वे भागकर पहुँच गए रावण के यहाँ । कहने लगे वानर अत्यन्त बल वाला है ।

नाथ एक आवा कपि भारी । सो अशोक वाटिका उजारी ।।

एक वानर आया है जो बहुत भारी है । उसने अशोक वाटिका को उजाड़ दिया है। रामायणी लोग इसका बड़ा अच्छा अर्थ करते हैं । कहते हैं नाथ एक है । रावण ने कहा कि हम तो हैं एकनाथ । तो बोले कि एक नाथ और आ गया है कपि । सुनकर रावण क्रोधित हो गया और बोला कि नालायक ! एक कपि को नाथ कहता है। बोले कि वह भारी है छोटा नहीं है । रावण बोला कि वह हमसे डरकर भाग जाएगा । तब वे बोले वह वानर अशोक है । उसको किसी का डर नहीं है । रावण बोला अब तक तो भाग गया होगा । वे बोले कि नहीं बा टिका माने वह तो अभी टिका है । 'बा टिका' माने टिका बा। पूछा क्यों टिका है तो वे बोले कि उजारी माने लंका जलाने के लिए टिका है । यह तो विनोद के लिए अर्थ है । वस्तुतः अर्थ यह है कि उन्होंने जाकर रावण को सूचना दी। रावण ने अक्षय कुमार को भेज दिया । अक्षय कुमार को हनुमान जी ने मार डाला ।

फिर इन्द्रजीत मेघनाद को भेजा। मेघनाद के साथ हनुमान जी का बड़ा युद्ध हुआ। रावण ने कहा था कि हम उसको देखना चाहते हैं, पकड़कर लाना। जब मेघनाद ने यह देखा कि किसी भी अवस्था में वह कपि हार नहीं रहा है तो उसने ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया–

ब्रह्म अस्त्र तेहि सांधा कपि मन कीन्ह विचार।
जो न ब्रह्म सर मानउं महिमा मिटइ अपार ।।

उन्होंने ब्रह्मास्त्र से अपने आपको मूर्छित करवा लिया तब नागपाश से बाँधकर मेघनाद हनुमान जी को पकड़कर रावण की सभा में ले गया। वहाँ क्या हालत थी ?

बैठे सुर अरु असुर विनीता। भृकुटि विलोकहि सकल सुभीता ।।

बड़े-बड़े देवता और असुर वहां बैठे थे। रावण की भृकुटि देख रहे थे। कहीं क्रोध से न देख लें, कहीं बण्टाधार न कर दें। इतने भयभीत थे। किसी कवि ने वहाँ का वर्णन किया है कि ब्रह्मा जी वहाँ पर रावण को प्रसन्न करने के लिए वेद पढ़ने आते थे। नारद जी और तुम्बुरु वहाँ गान सुनाते थे, स्तुति करते थे। सीताजी के स्वरूप को देखकर कामातुर हृदय रावण अनमना था तो उसके अनमने स्वरूप को देखकर उसके साथ का एक कर्मचारी ब्रह्मा जी को डाँट रहा है–

ब्रह्मन् अध्ययनस्य नैष समयः तूष्णीं बहिः स्थीयताम्।

हे ब्रह्मा ! वेद पढ़ने का यह समय नहीं है। बाहर जाकर चुप बैठो। वृहस्पति उसके सामने नीतिशास्त्र का व्याख्यान देने आते थे। उनसे कर्मचारी कहता है –

स्वल्पं जल्प बृहस्पते जड़मते नैषा सभा वज्रिणः।

अरे जड़मति वृहस्पति ! यह इन्द्र की सभा नहीं है। थोड़ा कम बोलो।नारद जी से कहता है कि हे नारद! तुम वीणा बजाना बन्द करो –

वीणां संहर नारद ! स्तुतिकथाऽऽलापैरलं तुम्बरो !

हे तुम्बरु ! स्तुति कथा के आलाप को बन्द करो। सबने पूछा कि क्या बात है? तो उसने कहा कि हमारे स्वामी राक्षसराज रावण स्वस्थ नहीं हैं।

सीतारल्लकभल्लभग्नहृदयः स्वस्थो न लंकेश्वरः।

सीता की जो माँग है वह भाला बनकर हमारे राक्षसराज के हृदय में चुभ गई है। इसीलिए वह अस्वस्थ है। बन्द करो सब। यह सब देखकर हनुमान जी ने सोचा कि

यदि अधर्म बलवान् होता तो यही राक्षसराज त्रिलोकी का स्वामी हो जाता । कौन था इसके बराबर ? लेकिन अधर्म ने क्या किया ? जब रावण मारा गया तो मन्दोदरी कहती है –

रहा न कोउ कुल रोवनिहारा ।

हे पतिदेव ! आपके मरने पर अब कुल में आपके लिए कोई रोने वाला नहीं बचा है।

एक लख पूत सवा लख नाती । तेहि रावण घर दिया न बाती ।।

एक लाख पुत्र और सवा लाख नाती । इतना बड़ा परिवार था रावण का । लेकिन कोई दिया बत्ती करने वाला भी नहीं बचा । रावण; जिसके सिर कटकर भगवान् शंकर के ऊपर चढ़ते थे पर पाप का परिणाम यह हुआ कि वे ही सिर जब राम के बाण से कटकर रणभूमि में गिरे तो चील, कौवे और गीध उसके ऊपर पैर रखकर नोंचने लगे । यह होता है अधर्म का परिणाम ।

अधर्मेणैधते तावत् ततो भद्राणि पश्यति। ततः
सपत्नाञ्जयति समूलञ्च विनश्यति ।।

अधर्म से मनुष्य एक बार बढ़ता है और उसको सफलता भी मिल जाती है । वह शत्रुओं पर विजय भी प्राप्त कर लेता है लेकिन अन्त में वह समूल नष्ट हो जाता है । इसीलिए आसुरी सम्पत् विनाश का हेतु है ।दूसरी सम्पत् है जिसको दैवी सम्पत् कहते हैं ।

अभयं सत्त्व संशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं तपश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ।।

अभय, अन्तःकरण की निर्मलता, ज्ञानयोग में मनुष्य की बुद्धि लगना, दान करना, इन्द्रियों और मन का निग्रह करना, यज्ञ करना, अहिंसा, किसी प्राणी को मन, वचन, कर्म से न सताना, सत्य बोलना, क्रोध न करना, दया करना, लोभ न करना, कोमल रहना, मन वचन कर्म से एक रहना ये सब दैवी सम्पत् के लक्षण हैं । जिसमें दैवी सम्पत् के लक्षण होते हैं वही इस बात को सोचता है कि मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है ? वह संसार में नहीं फँसता । वह वास्तविक लक्ष्य की ओर, भगवान् की ओर उन्मुख होता है। इसलिए भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा –

महात्मानस्तु ते पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ।।

हे अर्जुन ! जो महात्मा हैं, जिनमें दैवी सम्पत् है वे मुझे समस्त जगत् का कारण, समस्त भूतों का आदि और अविनाशी समझकर मेरा भजन करते हैं । वे दैवी सम्पत् का आश्रय लेकर मेरा भजन करते हैं और उन भजन करने वालों का एक सा उद्देश्य नहीं होता । कुछ का तो साक्षात् होता है और कुछ का परम्परया होता है । भगवान् का भजन चार प्रकार के लोग करते हैं –

राम भगत जग चारि प्रकारा । सुकृती चारिउ अनघ उदारा ।।

संसार में चार प्रकार के भक्त होते हैं – सुकृती माने पुण्यात्मा होते हैं, निष्पाप होते हैं और उदार हृदय के होते हैं अर्थात् महात्मा होते हैं । महात्मा किसको कहते हैं?

महान् आत्मा अन्तःकरणं यस्य ।

जिसका अन्तःकरण महान् है उसका नाम महात्मा । जो आसुरी सम्पत् के लोग होते हैं वे महातमा । त पूरा कर दो तो हो गया महा तमा जिनमें बहुत ज्यादा तमोगुण है । वे भगवान् का भजन नहीं करेंगे । जो उदार हैं वे भगवान् का भजन करते हैं । मुश्किल यह है कि भगवान् के सामने जो माँगने के लिए जाता है वह तो याचक होगा। उदार कहाँ होता है ? जो आर्त है, जिज्ञासु है, अथार्थी है वही तो भगवान् से कुछ माँगता है । दुःखी दुःखों से छूटने के लिए भगवान् से प्रार्थना करता है । अर्थी यह चाहता है कि भगवान् हमको धन-सम्पत्ति दे दे लेकिन वह इसलिए उदार है कि वह निर्मल बाबा से नहीं माँगता । वह भगवान् से, अपने प्रभु से माँगता है । किसी भी व्यक्ति से वह कुछ नहीं चाहता । दुःख के निवारण के लिए भगवान् की शरण लेता है । आप देखिये कि कितने संसार में लोग रोगी होते हैं । लेकिन रोग से ग्रस्त होने के बाद वह डॉक्टर, वैद्य को पुकारते हैं । कुछ लोग माँ को पुकारते हैं । जो माँ-बाप मर चुके हैं उनको पुकारते हैं लेकिन भगवान् को नहीं पुकारते । उनकी याद नहीं करते । जिसके हृदय में पवित्रता होती है वह भगवान् की शरण लेता है कि भगवान् हमारी रक्षा कीजिए तब भगवान् उनकी रक्षा करते हैं ।

सूरदास जी ने एक ऐसे ही भक्त का उल्लेख किया है । एक पक्षी था । वह पेड़ की डाल पर बैठा था । एक बहेलिया आया । बहेलिए ने पक्षी को देख अपना धनुष संभाला। धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाई और बाण लेकर उस पक्षी की तरफ किया । अब पक्षी ने देखा कि यह व्याध हमको बाण से निशाना बना रहा है । बाण छूटते ही हम मर जाएँगे अतः हम उड़ जाएँ । उड़ेंगे तो बच जाएँगे ऐसा सोचकर ऊपर देखा तो वहाँ एक बाज मँडरा रहा था । उड़ते ही वह झपट्टा मारकर पकड़ लेगा । यहाँ बैठते हैं तो मरते हैं और उड़ते हैं

तो भी मरते हैं । ऐसी स्थिति में वह अकारणकरुणकरुणावरुणालय सर्वेश्वर सर्वशक्तिमान् परमात्मा का स्मरण करता है ।

अबकी राखि लेउ भगवान। हौं अनाथ बैठ्यो द्रुम डरिया पारिधि साधे बाण।।
ताके डर मैं भाजन चाहत ऊपर ढुक्यो सचान ।

हे भगवान् ! अब आप ही मुझे बचा लो । हम अनाथ हैं । वृक्ष की डाल पर बैठे मुझ पक्षी पर बहेलिए ने बाण साध लिया है । उसके भय से मैं भागना चाहता हूँ पर ऊपर बाज मँडरा रहा है । अब तो आप ही बचा सकते हो । मेरी मृत्यु से अब आपके सिवा और कोई मुझे छुटकारा नहीं दिला सकता । जैसे ही वह भगवान् की शरण में जाता है इतने में एक सर्प आकर उस बहेलिए के पैर में काट लेता है । जैसे ही सर्प बहेलिए को काटता है उसका हाथ हिल जाता है और बाण छूटकर ऊपर मँडराते बाज को लग जाता है । सर्प के काटने से बहेलिया मरा और बहेलिए के बाण से वह बाज मरा ।

सूरदास हरि कृपा निराली । जय जय कृपानिधान ।

कठिन से कठिन स्थिति में यदि कोई रक्षा कर सकता है तो वह भगवान् ही कर सकते हैं। वह सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् हैं । इसीलिए जो बुद्धिमान हैं वे भगवान् की शरण में जाते हैं। वे और किसी का भी आश्रय न लेकर केवल भगवान् का आश्रय लेते हैं । इसी कारण भगवान् को दीनदयालु कहते हैं, दुःखी दयालु नहीं कहते। जो दीन हैं उनके ऊपर भगवान् दया करते हैं, दुःखी तो करोड़ों हैं लेकिन दीन कहाँ हैं ?

एक महात्मा थे । उनके सामने एक प्रश्न आया । किसी नगर में एक सेठ रहता था जो बहुत धनवान् था । सन्त-महात्मा, विद्वान् आते थे तो वह उनके पास जाता था और एक प्रश्न करता था । महाराज ! यह बताइए कि जो पापी हैं उनको पतितपावन भगवान् तार देंगे और पुण्यात्मा पुण्य से तर जाएँगे तो नरक कौन जाएगा ? अब बेचारे जो भी महात्मा लोग जाएँ वे सब उसका उत्तर नहीं दे पाते थे तो फेल हो जाते थे । वही नगर में सबसे धनवान् था । सब उसकी सुनते थे । बहुत से लोग होते हैं जिनके पास कुछ प्रश्न होता है । अगर उनके मन का उत्तर दे दो तो कहेंगे कि महात्मा ठीक है और अगर दूसरा उत्तर दे दो तो कहेंगे कि ये कुछ जानता ही नहीं।

एक राजा था । उसके पास एक धूर्त आदमी आया । उसने उसको एक श्लोक सिखा दिया–

शुक्लांबरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।

प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ।।

यह श्लोक सिखा दिया और कहा कि देखो इस श्लोक का अर्थ होता है -दही बड़ा। यही तुम पण्डितों से पूछा करो । अब जो भी पण्डित उसके पास जाते थे उनसे वह पूछता था । सभी कहते थे कि यह तो भगवान् विष्णु हैं । राजा कहता था कि तुम कुछ भी नहीं जानते । सबका अनादर होने लगा तो एक महात्मा जो युक्तिवादी थे वे उस राजा के पास गए और एक नाई के यहाँ ठहरे । नाई बहुत चतुर होता है । उसने महात्मा जी का स्वागत किया और पूछा कि आप यहाँ किस प्रयोजन से आए हैं ? उन्होंने बताया कि हमें राजा के यहाँ जाना है । नाई ने कहा कि महाराज ! राजा के प्रश्न का तो कोई उत्तर दे ही नहीं सकता । महात्मा जी ने कहा कि राजा से कहो कि एक अच्छे महात्मा आए हैं जो उसके प्रश्न का उत्तर बता देंगे । नाई रोज राजा के यहाँ पैर दबाने जाता था। एक दिन पैर दबाते-दबाते उसने राजा से कहा कि हमारे यहाँ एक महात्मा जी आए हैं। आप उनका दर्शन कर लीजिए । राजा ने कहा कि उन्हें ले आना दरबार में ।लेकिन हम जो प्रश्न करते हैं उसका उत्तर कोई नहीं दे सकता। नाई ने पूछ दिया कि आपका प्रश्न क्या है तो राजा ने बता दिया शुक्लांबरधरं वाला श्लोक । नाई ने पूछा कि महाराज ! इसका उत्तर क्या होता है ? राजा ने बता दिया कि इसका उत्तर दहीबड़ा होता है । तुमको बता दिया है पर तुम किसी को बताना मत । अब महात्मा जी ने नाई की बात से यह पकड़ लिया । दूसरे दिन महात्मा जी दरबार में पहुँचे । राजा ने स्वागत किया और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया । पूरा श्लोक पढ़कर प्रश्न किया कि महात्मा जी ! इसका अर्थ कीजिए ।

महात्मा जी ने तुरन्त कहा कि इसका अर्थ है दहीबड़ा । बड़ा का जो वस्त्र है वह शुक्ल दही होता है । उसका नाम वरं बड़ा होता है। धरं माने यदि उसको एक दिन धर दिया जाए तो बासी होकर और स्वादिष्ट हो जाता है। शशिवर्णं माने जैसे चन्द्रमा गोल-गोल होता है वैसे दही बड़ा भी गोल-गोल होता है । चतुर्भुजं माने चतुर लोग उसका भोजन करते हैं । अगर पुरुष का झगड़ा हो गया हो, किसी कारण पुरुष नाराज हो गया हो और स्त्री घर में दहीबड़ा बना दे तो प्रसन्नवदनं ध्यायेत् माने वह पुरुष तत्काल प्रसन्न हो जाता है और सर्वविघ्नोपशान्तये माने सभी विघ्न-झगड़े शान्त हो जाते हैं । महात्मा जी से श्लोक की व्याख्या सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हो गया और बोला कि ये सच्चे महात्मा मिले । इन्होंने ही सही अर्थ बताया । राजा ने महात्मा जी से प्रार्थना की कि आप यहीं पर निवास करिए तब उन्होंने कहा कि हम एक शर्त पर यहाँ रह सकते हैं । तुम हमसे व्याकरण पढ़ो । राजा ने कहा कि पढ़ लेंगे । अब राजा महात्मा जी के यहाँ जाकर व्याकरण पढ़ने लगा । पढ़ते-पढ़ते उन्होंने राजा को पद-पदार्थ का बोध कराया फिर सभी

श्लोकों का अर्थ बताना शुरु कर दिया । अपने से अर्थ लगाना शुरू करा दिया और फिर अन्त में राजा ने स्वयं बताया कि इसका अर्थ तो दहीबड़ा नहीं होता, इसका अर्थ तो भगवान् विष्णु होता है कि शुक्ल वस्त्र जिन्होंने धारण किया है, चन्द्रमा के समान जिनका मुख है, जिनकी चार भुजाएँ हैं, जो प्रसन्नवदन रहते हैं । अपने सभी विघ्नों की शान्ति के लिए भगवान् विष्णु का ध्यान किया जाए । यह इसका अर्थ हुआ पर आपने तो पहले दहीबड़ा बताया था । महात्मा जी बोले कि अगर पहले हम बताते तो क्या तुम सुनते?

ऐसे ही वह सेठ था जो पूछता था कि पुण्यात्मा पुण्य से तर जाएँगे और पापियों को पतितपावन तार देंगे तो नरक कौन जाएगा ? महात्मा जी ने कहा कि हमको चातुर्मास्य करना है यहाँ पर । इसी बीच में तुम्हारे प्रश्न का भी उत्तर दे दिया जाएगा । एक दिन जब सेठ आने लगा तो टोकरी में बहुत से फल साथ लाया और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया । कहने लगा –

पापोऽहं पापकर्माऽहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि माम् पुण्डरीकाक्ष सर्वपापहरो हरिः ।।

मैं पापी हूँ, पापकर्मा हूँ, पापात्मा हूँ, पापसम्भव हूँ सब पापों का हरण करने वाले मेरी रक्षा करिए । ऐसा कहकर जैसे ही सेठ ने महात्मा जी को प्रणाम किया तो महात्मा जी ने अपने चेले से कहा कि इसके सब फल सड़क में फेंक दो । हम पापी का फल नहीं लेना चाहते ।

अब चेलों ने सब फल सड़क पर फेंक दिया । सेठ बड़े कीमती फल लाया था। सेठ ने चेलों से पूछा कि आपने क्यों फेंक दिया ? चेले ने कहा कि गुरुजी पापियों का फल नहीं लेते हैं तब सेठ ने कहा कि गुरुजी जितना समझते हैं उतने पापी हम नहीं हैं कि हमारा फल भी न लिया जाए । शिष्य ने आकर महात्मा जी से बताया कि सेठ ऐसा बोल रहा है तो उन्होंने सेठ को बुलाया और कहा कि आज हम तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देते हैं। पापियों को पतितपावन तार देंगे, पुण्यात्मा अपने पुण्य से तर जाएँगे और नरक में तुम्हारे जैसे अधकचरे जाएँगे जो ऊपर से तो कहते हैं कि हम पापी हैं लेकिन अपने को पापी मानते नहीं हैं । इसी तरह से बहुत से लोग दुःखी हैं लेकिन दीन नहीं होते। जब दीन होकर भगवान् की शरण में जाएँगे तो भगवान् उनकी रक्षा करेंगे । इसीलिए उनका नाम दीनदयालु है ।

बस इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं। थोड़ा सा भगवान् का नाम लें।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

[4]

।। राम राम चार ।।

भगवान् के चरणों में अनुरक्ति का नाम भक्ति है

समुपस्थित देवियो, सज्जनो !

भगवान् के चरणों में अनुरक्ति का नाम भक्ति है । यह भक्ति मनुष्य को सत्संग से मिलती है । गोस्वामी जी ने कहा है –

अस हरि भक्ति सुलभ सुखदाई । बिनु सत्संग न काहुहु पाई ।।

भगवान् की भक्ति सुलभ है, सुखदाई है । सुलभ इस प्रकार है कि इसमें हमें बाहर से कुछ लाना नहीं पड़ता । केवल हमारे हृदय में जो प्रीति है, उस प्रीति को भगवान् के साथ जोड़ लेना है । कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसके हृदय में प्रेम न हो । सभी लोग कहीं न कहीं प्रेम करते हैं। किसी का धन से प्रेम है, किसी का भवन से प्रेम है, किसी का पुत्र से है, किसी का स्त्री से है और किसी का अपनी प्रतिष्ठा से है । कहीं न कहीं हमारा प्रेम रहता है और उसके आस-पास हमारे कर्म होते रहते हैं । यह प्रेम हमारा संसार के प्रति है । उन सबके प्रति प्रेम है जो नश्वर है और इन सबके प्रति प्रेम से अन्ततोगत्त्वा दुःख ही होता है । इसीलिए वहाँ से अपना प्रेम हटाकर ऐसे से प्रेम किया जाए जिससे कि कभी दुःख न हो और दूसरी बात यह है कि प्रेम उससे किया जाए जिससे कभी हमारा प्रेम हटे नहीं । सदा बना रहे । लेकिन हम यह देखते हैं कि जिस वस्तु से आज हमारा प्रेम है कल उससे हट जाता है । हम उसको छोड़ देते हैं ।

एक बार हमारे गुरुजी स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज सोने-चाँदी के सिंहासन पर बैठे थे । उनके सामने दो मशाल जल रही थी । चाँदी की मशाल थी । एक श्रुति और एक स्मृति का प्रतीक थी । इन्हीं दोनों के प्रकाश में गुरु देखते हैं । छत्र लगा हुआ था । एक व्यक्ति ने उनको देखकर कहा – 'महाराज ! हमने बहुत से साधु देखे लेकिन रागी सबको पाया, विरागी किसी को नहीं पाया । उसने उन पर भी आक्षेप किया कि आप भी महात्मा बने बैठे हैं पर आपमें भी राग है । छत्र, चँवर, सिंहासन, मशाल । सब तो राग के लक्षण हैं महाराज! तब हमारे गुरुजी बोले - हमने भी बहुत से गृहस्थ देखे हैं । विरागी सबको पाया पर रागी किसी को नहीं पाया। उस व्यक्ति ने आश्चर्य से पूछा कि महाराज ! हमलोग कहाँ विरागी हैं ? गुरुजी बोले कि यह बताओ

कि जिससे तुम्हारा प्रेम है उससे कभी तुम्हारा प्रेम हटता है कि नहीं ? वह बोला कि महाराज ! कुछ दिनों बाद तो हट जाता है । गुरुजी बोले – बताओ तब तुम विरागी हुए कि नहीं हुए ? रागी तो वह है जो किसी से प्रेम हुआ तो हो ही गया । वहाँ से न हटे। यह तो नहीं होता ।

हम दृष्टान्त देते हैं कि एक के मन में खीर के प्रति प्रेम उमड़ा कि खीर बड़ी अच्छी चीज है । चलो आज हम इसे खाएँगे । उसने अपनी पत्नी से कहा कि आज घर में खीर बननी चाहिए। पत्नी ने कहा - पतिदेव ! दूध लाइए, शक्कर लाइए, बढ़िया सुगन्धित चावल लाइए, मेवा लाइए तो खीर बन जाएगी । केसर भी डल जाए । सब साहित्य पति ने एकत्र कर दिया तो पत्नी ने बड़े प्रेम से खीर बनाई और जब वह भोजन करने बैठा तो खीर की सुगन्ध से उसकी नाक तर हो गई। जब थाली सामने आई बहुत प्रसन्नता से उसने खाना शुरु किया । खाते-खाते पेट भर गया तो पत्नी ने एक कटोरी और लाकर रख दी । बोली और लीजिए तो बोला नहीं, अब बस । पत्नी ने जबरदस्ती डाल दिया। वह भी खा लिया तब एक कटोरी और ले आई । अब वह खाते-खाते इतना परेशान हुआ कि अब वह कटोरी देखते ही नाराज होने लगा । वह एक और कटोरी खीर लेकर आ रही थी तो क्रोध में चिल्लाकर बोला कि अब मार ही डालेगी क्या ?

अब देखिए आप कि यदि खीर से ही प्रेम था श्रीमान् जी ! तो अब द्वेष क्यों हो गया? ऐसे अन्य वस्तुओं से होता है । कुछ दिन किसी से प्रेम होता है और उसके बाद फिर हट जाता है । देखते हो न आजकल लव मैरिज होते हैं । कहते हैं हमारा एक-दूसरे से प्रेम हैं । कहते हैं कि हम बिना एक-दूसरे से मिले प्राण दे देंगे । कई तो जहर भी खा लेते हैं । लेकिन जब उनका विवाह हो जाता है और कुछ दिन दाम्पत्य जीवन बिता लेते हैं तब तलाक की नौबत आ जाती है । कहते हैं कि अब हम साथ नहीं रहेंगे । क्यों भाई? जिसके लिए तुम सबको छोड़ चुके। माँ छोड़ी, बाप छोड़ा, घर छोड़ा, धर्म छोड़ा, जाति छोड़ी । अब उसको क्यों छोड़ रहे हो ? कहते हैं कि हमको सुख नहीं मिल रहा है इससे।

कहने का मतलब यह है कि संसार की हर चीज किसी समय हमको प्रिय लगती है उसके बाद वह अप्रिय हो जाती है । आप देखिए कि अभी आप मित्र को बुलाने के लिए आतुर हैं । बार-बार आप उसको टेलीफोन करते हैं, बुलाते हैं और वह आ जाता है । दोनों का जैसे ही मिलन होता है तब प्रसन्नता होती है । प्रसन्नता के बाद बात होती है कि कहिए आप कुशल हैं ना ? कैसे हैं आप ? बहुत अच्छा । उसके बाद वहाँ से मन हटता है । फिर पूछते हैं कि आजकल मौसम का क्या हाल-चाल है ? जहाँ आप रहते हैं वहाँ

का क्या हाल-चाल है ? अब धीरे-धीरे मन फैलने लगता है । उस आदमी से मन हटकर दूसरी जगह गया। अगर उससे ही प्रेम था तो देखते ही रहते उसको । उससे तुमने दूसरी बात क्यों पूछी ? इसका मतलब यह है कि वह सुख क्षणिक था । वह प्रेम क्षणिक था और इसके बाद वह प्रेम वहाँ से फैला । कहीं गया, फिर कहीं गया, फिर कहीं गया । उसके बाद तो आप चाहेंगे कि अब यह पधारे यहाँ से । अब वह आपकी खोपड़ी में सवार हो जाए और वहीं रहने लगे तो आप सोचने लगेंगे कि कब जाएगा यहाँ से ? अवस्था यह है कि संसार की हर चीज से हमारी अरुचि हो जाती है और उसको हम छोड़ बैठते हैं । हमें ऐसा प्रेमास्पद पकड़ना है जिससे प्रेम करने के बाद उससे हमारा प्रेम न हटे । हम यह देखते हैं कि हमारा प्रेम किससे होता है ? प्रेम उससे होता है जो हमारे सुख का साधन है । जिससे हमको सुख मिलता है उससे हमको प्रेम होता है । लोग कहते हैं कि सुख क्या है ? लोक में एक कहावत है –

पहला सुख नीरोगी काया । दूसरा सुख हो घर में माया ।
तीसरा सुख सुत आज्ञाकारी । चौथा सुख पतिव्रता नारी ।।

यही सुख है । लेकिन यही तो नहीं मिलता । शरीर में रोग आ जाते हैं, पुत्र आज्ञाकारी नहीं होता । स्त्री का भी पता नहीं कि कब तक प्रेम रहेगा ? कोई ठिकाना नहीं । माया भी आई न आई या आकर चली गई । जो सुख के साधन हैं उनमें स्थिरता नहीं है लेकिन जिसके लिए यह सब साधन हैं उससे प्रेम स्थिर है ।वह परम प्रेमास्पद है । सबसे हमारा प्रेम अपने लिए है परन्तु अपने से प्रेम किसी के लिए नहीं है । वह जो अपना आपा है उस आपे से जो प्रेम होता है वह प्रेम हमारा स्थाई रहेगा । इसलिए मीरा ने कृष्ण को चुना । कृष्ण भगवान् हमारी आत्मा हैं, परम प्रेमास्पद हैं इसलिए हम उन्हीं को अपनी आत्मा बनाएँगे । वे कहती हैं –

ऐसे वर को क्या वरूँ जो जन्मे अरु मर जाए ।
अविनाशी वर को वरूँ सदा अमर हो जाए ।।

ऐसे वर को मैं क्यों वरूँ जो जन्म लेता है और मर जाता है । मैं तो अविनाशी को वरूँगी जिससे चूड़ी न फोड़नी पड़े । यह एक संकेत है और यह संकेत इस बात का है कि अपना जो प्रेमास्पद है उससे जब कभी हमारा प्रेम हटेगा, जो हमारे सुख के साधन से कभी दुःख का भी साधन हो जाएगा उससे अपना मन हटाकर उसके साथ जोड़ दें जिससे कभी प्रेम नहीं हटता है। वह है भगवान् । भगवान् से आप प्रेम करेंगे तो वह स्थाई होगा ।

दूसरी बात यह भी है कि हम यदि प्रतिज्ञा कर लें कि जिससे हम प्रेम कर रहे हैं उसको हम नहीं छोड़ेंगे चाहे कुछ हो जाए तो क्या होगा ? यदि तुम नहीं छोड़ोगे तो एक दिन वह ही तुम्हें छोड़ देगा। अब उसका क्या करोगे? बड़ी मुश्किल है। संसार को आप नहीं छोड़ेंगे तो एक दिन संसार तो छोड़ ही देगा आपको। इसका क्या इलाज है ?

एक कहावत है कि एक बार नदी में बाढ़ आई थी। उस बाढ़ में एक रीछ बहा जा रहा था। रीछ के बाल को देखकर एक गुरु ने अपने चेले से कहा कि बेटा ! कम्बल बह रहा है, पकड़ ले। चेला तैरकर गया और कम्बल समझकर रीछ को पकड़ना चाहा। वह रीछ जिन्दा था तो उसने चेले को ही पकड़ लिया। अब दोनों साथ-साथ बहने लगे। गुरु ने कहा कि बेटा ! यदि कम्बल नहीं आ रहा है तो उसे छोड़ दे। तू वापस चला आ। तब चेला बोला कि गुरुजी! यह कम्बल ही मुझको नहीं छोड़ रहा है। हम तो खुद कम्बल को छोड़ना चाहते हैं पर यही हमें नहीं छोड़ रहा है।

कहने का मतलब यह है कि संसार के लोगों को जिनको आपने सुख समझकर पकड़ा था वे ही दुःख देने लगते हैं और वे ही छोड़ देते हैं। वही एक दिन हट जाते हैं। उनका प्रेम आपसे हट जाता है। ऐसी स्थिति में कष्ट होता है। पर हम यह देखते हैं कि भगवान् सबसे प्रेम करते हैं। उनका प्रेम किसी से नहीं हटता। जीव किसी भी अवस्था में हो भगवान् उस पर कृपा करते ही हैं। यह नियम है कि जो भी जीव है, जहाँ भी है उसके प्रति उनका अनुग्रह रहता है और वे उसकी सदा रक्षा करते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि वह उनके सामने रक्षा के लिए हाथ बढ़ा दे कि प्रभु ! हमको बचाओ। भगवान् को भी एक निमित्त चाहिए। कोई आधार चाहिए। आप लोगों ने सुना होगा कि सुदामा नाम का एक ब्राह्मण था जो बहुत निर्धन था। ऐसा निर्धन कि उसका चित्रण किसी कवि ने इस प्रकार किया है जिसको सुनकर आज भी सुनने वालों की आँखों में आँसू आ जाते हैं –

धोती फटी सिलटी दुपटी नहीं जाने को आहि बसे केहि ग्रामा।
द्वार खड्यो द्विज दुर्बल देखि रह्यो चकि सो वसुधा अभिरामा।
पूछत दीन दयालु को धाम बतावत आपनो नाम सुदामा।

और केवल इतना ही नहीं। न तो उसके पैर में जूते हैं और न ही कपड़ा ही सही है। पगड़ी भी फटी है, कपड़ा भी तार-तार फटा है। पेट पीठ में सट गया है। आँखें धँसी हैं, ऐसा गरीब ब्राह्मण आपके यहाँ आया है। भगवान् पहचान जाते हैं कि यह वही सुदामा है जो मेरा बाल सखा है। गुरुकुल में मेरे साथ पढ़ता था। उसका नाम सुनते

ही भगवान् श्रीकृष्ण दौड़ पड़ते हैं और उसे अपने गले लगाकर अपने महल में ले आते हैं और जिस शय्या पर रुक्मिणी के साथ भगवान् बैठते हैं, जिसमें बलदेव जी भी नहीं बैठ सकते हैं उसी पर उस ब्राह्मण को बैठा कर उसके चरण धोते हैं । सोने का थाल आता है । गंगाजल की झारी आती है भरी हुई पर उसकी आवश्यकता नहीं पड़ती –

पानी परात को हाथ छुयो नहीं नैनन के जल से पग धोए ।
हाय महादुःख पायो सखा तुम आए इते न किते दिन खोए ।

उसकी दशा देख बहुत दुःखी हुए भगवान् । उनके मन में यह आया कि इसकी दरिद्रता दूर की जाए । पर कैसे करें ? इसकी गरीबी को दूर करना बहुत आवश्यक है। दया से हृदय परिपूरित है लेकिन उनको बहाना चाहिए । पहले भोजन कराया, विश्राम कराया । विश्राम के बाद जब सुदामा जी बैठे तो उनके पास गए । पुरानी बातें करते रहे। करते-करते पूछा कि गुरुकुल से लौटने के बाद आपने विवाह किया कि नहीं किया ? पूछा कि आपने अपने योग्य पत्नी का परिग्रह किया कि नहीं किया ? सुदामा की आँखें नीची हो गईं । कहा कि हाँ, विवाह किया है। भगवान् बोले कि अच्छा ! जब आप यहाँ पधारे तो हमारी भावज ने जरूर हमारे लिए कोई सौगात भेजी होगी । दीजिए हमें । सुदामा की पत्नी ने चार मुट्ठी चूड़ा चार घर से माँग कर अपनी साड़ी फाड़कर उसकी पोटली बनाकर पतिदेव को दे दी थी कि तुम अपने मित्र के पास जा रहे हो । वे राजा हैं और नियम यह है कि –

रिक्तपाणिर्न गच्छेत राजानं ईश्वरं गुरुम् ।

राजा के पास, ईश्वर के पास और गुरु के पास खाली हाथ नहीं जाना चाहिए। कुछ हाथ में लेकर ही जाना चाहिए । लोग फूल, फल और कुछ दक्षिणा ले ही लेते हैं। भगवान् भी राजा हैं । कुछ था ही नहीं उसके पास लेकर जाने को तो वही चूड़ा सुदामा जी अभी भी अपनी काँख में दबाए हुए थे । निकाल नहीं रहे थे । इस संकोच में कि मैले-कुचेले कपड़े की यह पोटली महाराजाधिराज द्वारकाधीश को कैसे दूँ ? भगवान् उसका छोर देख रहे थे। भगवान् ने याद दिलाई कि मित्र ! जब हमलोग लकड़ी लाने एक बार गुरु की आज्ञा से जंगल गए थे तब गुरुमाता ने कुछ चने तुम्हारे पास रख दिए थे कि भूख लगे तो तुम दोनों मिलकर खा लेना । लकड़ी चुनते-चुनते रात हो गई । बादल आ गए, पानी बरसने लगा । पेड़ के नीचे खड़े-खड़े हमलोगों ने रात बिताई और तुमने खड़े-खड़े सब चने खा लिए । जब हमने पूछा कि मित्र ! क्या खा रहे हो ? तब तुम बोले कि ठण्ड से दाँत कटकटा रहे हैं । मित्र ! जैसे तुमने पहले चोरी करी वह आदत अभी भी नहीं

छूट रही है। जब तुम्हारी पत्नी ने हमारे लिए भेजा है तो हमको देने में संकोच क्यों करते हो ? ऐसा कहकर भगवान् ने खींच ली पोटली। यहाँ भगवान् के पोटली खींचने का अभिप्राय है कि इनको देने के लिए इनसे कुछ लेना चाहिए। नियम यह है परमात्मा का कि जो दूसरे का हड़पता है वह दरिद्र बनता है और जो देता है वह धनी होता है। इसलिए इससे दान करवाओ। दान सत्पात्र को होना चाहिए।

देशे काले च पात्रे च तद् दानं सात्त्विकं स्मृतम्।

देश, काल और पात्र में जो दान दिया जाता है वह दान सात्त्विक होता है। आप समझ लीजिए देश, काल। आप बद्रीनाथ जाएँ और वहाँ जाकर लोगों को ठण्डा शर्बत पिलाएँ तो क्या मतलब होगा इसका ? ठण्ड तो वहाँ वैसे ही है। राजस्थान में गर्मी के दिनों में जाएँ और वहाँ कम्बल का दान करें तो ? वैसे ही गर्मी है वहाँ। जहाँ जैसी आवश्यकता हो, जहाँ जैसा देश हो, जैसा काल हो सब देखकर दान करना चाहिए। ऐसे ही सत्पात्र को दान करना चाहिए। कुपात्र को दान करने से उसका फल नहीं मिलता।

कहते हैं कि समुद्र के किनारे जहाज के दो बेड़े खड़े थे। दोनों बेड़ों के सामने दो माँगने वाले गए। उन दोनों को एक-एक टका मिला। एक ने मछली मारने की काँटी खरीदी और मछली मारना शुरु किया। दूसरे ने उसी टके से रुई खरीदी और फूल-बत्ती बनाना शुरु किया। भगवान् की आरती उतारी। जिसने भगवान् की आरती उतारी थी उसका तो बेड़ा पार हो गया और जिसके पैसे से काँटी ली गई थी उसका बेड़ा गर्क हो गया।

पात्र और कुपात्र में यही अन्तर है। आप सोचिए कि गाय के थन में बछड़ा अपना मुँह लगाता है क्योंकि वह पात्र है। लेकिन यदि गाय के थन में जोंक मुँह लगा दे तो? वह कुपात्र है। बछड़ा दूध पीता है और जोंक खून पीता है। कुपात्र को दान न देकर सत्पात्र को दान देना चाहिए और सत्पात्र में सबसे बड़ा पात्र भगवान् है। भगवान् से बढ़कर कोई पात्र नहीं है। इसलिए अपने पास यदि भगवान् ने लक्ष्मी दी हो तो वह नारायण को समर्पित होनी चाहिए। पति-पत्नी में कभी-कभी मतभेद हो जाता है। यह माना जाता है कि पति-पत्नी का जोड़ा परस्पर प्रेम के लिए है। प्रेम से ही दोनों सुखी रहते हैं। कोई बीच में चुगलखोर घुस जाए और उनके बीच में भेद डाल दे तो ? भेद डालने में देर थोड़े ही लगती है ? दोनों में मनमुटाव हो जाएगा। चुगलखोरी करना पाप है। इसलिए कहते हैं कि पति-पत्नी के बीच से नहीं निकलना चाहिए, गुरु-शिष्य के बीच से नहीं निकलना चाहिए, पिता-पुत्र के बीच से नहीं निकलना चाहिए अर्थात् भेद नहीं

डालना चाहिए । कोई यदि दोनों में भेद डाल दिया हो अथवा किसी कारण से दोनों का मनमुटाव हो गया हो और दोनों को मिला दें तो वह बड़ा पुण्यात्मा होता है । मिलाना पुण्य है । लक्ष्मी भगवान् की पत्नी है उसको भगवान् से मिला देना पुण्य का कार्य है ।

गंगा के सन्दर्भ में भी यही बात हमलोग कहते हैं । पता नहीं लोगों को समझ में आती है कि नहीं आती? नदी समुद्र की पत्नी है । गंगा एक नदी है और समुद्र उसका पति है । वह अपने पति से मिलने जा रही है और तुम उसको बाँधकर बीच में ही रोक रहे हो । बताओ पापी हुए कि नहीं हुए ? मत रोको, उसको जाने दो । बहने दो उसको प्रवाह में ।

भगवान् ने यह सोचा कि सुदामा से दान करा दिया जाए और उसका पात्र मैं ही बन जाऊँ। इसलिए उन्होंने सुदामा के बगल से पोटली खींची । यह कहते हुए कि तुम्हारी पुरानी चोरी की आदत आज तक नहीं गई और पोटली से एक मुट्ठी चूड़ा निकालकर खा लिया । एक लोक की सम्पदा एक मुट्ठी चावल के बदले सुदामा को दे डाली । दूसरी मुट्ठी खाई और दो लोक की सम्पदा दे दी । अब कोषाध्यक्ष लक्ष्मी जी थीं । देने वाली तो वही थीं उन्होंने सोचा कि अब हमलोगों की हालत सुदामा जैसी होने वाली है तो उन्होंने भगवान् का हाथ पकड़ लिया कि महाराज ! कुछ प्रसाद हमारे लिए भी छोड़ो । भगवान् कहने लगे कि अरे ! बहुत मधुर थे ये चावल। सुदामा के चावल लेकर और उसे दो लोक की सम्पदा देकर भी भगवान् को तृप्ति नहीं हुई । इसलिए आज भी जब लोग भोग लगाते हैं तो कहते हैं कि प्रभो ! जैसे आपने शबरी के बेर आरोगे, सुदामा के चावल खाए वैसे ही मेरा यह भोग स्वीकार करिए।

हमारे कहने का अभिप्राय यह है कि भगवान् को देने के लिए एक बहाना बनाना आवश्यक था । इसी प्रकार भगवान् रक्षा के लिए तत्पर हैं । प्राणी के साथ उनका प्रेम है लेकिन वे ढूँढते हैं कि कोई तो आए । भगवान् ने अपने प्रेमियों के चार विभाग कर दिए। उन्होंने कहा कि जो हमसे प्रेम करते हैं वे चार प्रकार के हैं –

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ।।

हे अर्जुन ! सुकृतिनः अर्थात् पुण्यात्मा मेरा भजन करते हैं और पुण्यात्मा कौन हैं?

पुण्य एक जग मँह नहीं दूजा । मन क्रम वचन विप्र पद पूजा ।।

सबसे बड़ा पुण्य यही है कि मन, वचन और कर्म से ब्राह्मणों की पूजा करें ।

ब्राह्मणों की पूजा का अभिप्राय यह है कि सन्त पुरुषों की सेवा में जाएँ, उनके चरणों में बैठें। सन्तों के चरणों में जाने पर उसको पुण्य लाभ हो जाएगा। सत्संग से बड़ा पुण्य होता है। यही भगवान् की कृपा है।

सन्त विशुद्ध मिलहिं पुनि तेहीं। चितवहिं राम कृपा करि जेहीं ।।

जिसके ऊपर भगवान् राम कृपा करके देख लेते हैं विशुद्ध सन्त उसी को मिलते हैं। सन्त के साथ-साथ विशुद्ध शब्द भी लगा दिया क्योंकि सन्त वेशधारी तो बहुत हैं। बहुत से लोग वेश धारण करके आ जाते हैं परन्तु क्या वे सचमुच के सन्त हैं ? इसका क्या पता? पहचान कैसे हो? पहचान लेना सामान्य लोगों के लिए बड़ा कठिन होता है। बात क्या है कि यदि हमारा हृदय विशुद्ध नहीं है तो पहचान भी हममें नहीं रहेगी। जिसके पास खोटा पैसा होता है उसको दान देने के लिए सत्पात्र मिलते ही नहीं हैं क्योंकि सत्पात्र की उसको पहचान ही नहीं होती।

एक राजा था। एक बार वह गुरु खोजने चला कि कोई अच्छा महात्मा मिले तो वह उसको गुरु बना ले। देख-देखकर वह सबको फेल करता गया कि यह ठीक नहीं हैं, यह ठीक नहीं हैं। एक जगह उसने देखा कि किसी गाँव में एक नट नाच रहा था। वह बाँस के ऊपर चढ़कर थेई-थेई कर रहा था। राजा बोला कि यह असली सन्त है। अपनी आत्मा को कैसे तौले हुए है कि न तो इधर गिरता है न उधर गिरता है। उसी को साष्टांग दण्डवत कर लिया। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सन्त के वेश में कालनेमि मिल जाते हैं। एक बार हनुमान जी को कालनेमि मिल गए थे। गोस्वामी जी कहते हैं–

सन्त विशुद्ध मिलहिं पुनि तेहीं। चितवहिं राम कृपा करि जेहीं ।।

जिसके ऊपर भगवान् राम कृपा करके देख लेते हैं विशुद्ध सन्त उसको ही मिलते हैं। विशुद्ध सन्त की यह पहचान है कि वे जीवों को भगवान् से जोड़ते हैं। जो असन्त हैं वे लोगों को अपने से जोड़ते हैं, भगवान् से नहीं जोड़ते। कहते हैं हमारी कृपा है, हम कृपा करेंगे। अरे ! तुम क्या कृपा करोगे ? पहले अपने ऊपर तो कर लो।

एक सज्जन थे। वे बहुत से लोगों को तन्त्र-मन्त्र बतलाते थे। लोग उनके पास अपनी-अपनी समस्या लेकर पहुँचते थे। वे सबकी समस्या का समाधान करते थे। एक बार भीड़ उनके सामने इकट्ठी थी तो वे सबकी समस्या पूछते हुए और सबको उसका उपाय बताते गए। अन्त में सब लोग चले गए तब एक आदमी बचा। उससे पूछा कि आपकी क्या समस्या है ? वह बोला कि अब तो हमारी नहीं, आपकी समस्या है। हम

तो रेड डालने आए हैं कि आपके पास कितना नाजायज पैसा है ? ऐसे ही निर्मल बाबा सब पर कृपा करते गए पर अब उनके ऊपर रेड आने लगी। यह कौन सी कृपा है ? अगर कृपा होती तो ऐसा कभी न होता । अब अपनी गड़बड़ी यह है कि लोग यह कहते हैं कि महाराज ! हमें एक साधु ने ठग लिया । कैसे ठग लिया ? बोले कि उसने कहा कि तुम दस रुपये का नोट लाओ तो हम उसे सौ का बना देंगे । हम सब दस-दस के नोट ले गए और वह गायब हो गया। हमने कहा कि तुम भी तो ठग थे जो दस को सौ बनाने चले थे ।

कहने का अभिप्राय यह है कि जब कोई व्यक्ति सद्भाव से सत्पुरुषों के चरणों में जाएगा तो वे उसको भगवान् के साथ जोड़ देंगे । जब वे भगवान् के साथ जोड़ देंगे तो भगवान् उनकी समस्या का समाधान कर सकते हैं । जीवन में कई समस्याएँ रहती हैं। समस्याओं से भी छुटकारा मिलना आसानी से सम्भव नहीं है । जीवन में बड़े-बड़े कष्ट आते हैं । हमारी कुछ आवश्यकताएँ होती हैं, जिज्ञासाएँ होती हैं तो सब इधर-उधर जाते हैं । दुःख आने पर हम डाक्टरों, वैद्यों के पास जाएँगे । यदि अदालत में कहीं मुकदमा चल गया हो तो वकीलों के पास जाएँगे । कुछ न कुछ उपाय हम करेंगे लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है जब कोई उपाय काम नहीं करता। उस समय हमें भगवान् की ही शरण लेना पड़ता है । जब सब ओर से प्राणी हार जाता है तब भगवान् कहते हैं कि मेरी ओर हाथ बढ़ाओ । मैं तुम्हारा दुःख दूर करूँगा । यही होता है । अभी स्वामी जी बता रहे थे कि माता कुन्ती ने भगवान् श्रीकृष्ण से अनुरोध किया –

विपदस्सन्तु मे शश्वद् तत्र तत्र जगद्गुरो ।
भवतो दर्शनं यत् स्यात् अपुनर्भवदर्शनम् ।।

हे जगद्गुरु ! मुझे सदा विपत्तियाँ मिलती रहें । पूछा कि विपत्ति क्यों चाहती हो? तो बोलीं कि विपत्ति के साथ एक सम्पत्ति जुड़ी हुई है । जब विपत्ति आती है तो उसको दूर करने के लिए आप आ जाते हैं और सारी विपत्तियाँ समाप्त हो जाती हैं । जब आप मिल गए तो इससे बड़ी सम्पत्ति क्या है ?

महाभारत में कथा आती है कि दुर्योधन पाण्डवों से बहुत द्वेष रखता था। उसने जुए में छल करके हरा दिया था और पाण्डवों को तेरह वर्ष का वनवास दे दिया था । सब बेचारे वन में कष्ट पा रहे थे । सब धर्मात्मा थे । उन्होंने सूर्यनारायण की आराधना की तो सूर्यनारायण ने उनको एक बटलोई दे दी । कहा कि इसे आप द्रौपदी को दे दीजिए। इसमें सब प्रकार का भोजन आ जाएगा । द्रौपदी इससे जितना चाहे परोसती जाए पर अन्न

कभी कम नहीं होगा लेकिन द्रौपदी के खाने के बाद फिर नहीं मिलेगा। वन में बड़े-बड़े महात्माओं और ब्राह्मणों की पाण्डव सेवा करते थे। हजारों लोग उनके साथ चलते थे तो यह सब सुन-सुनकर दुर्योधन के मन में ईर्ष्या हो गई कि पाण्डव अभी भी सुखी हैं। इनको हम कैसे दुःख पहुँचाएँ ? एक दुर्वासा नाम के ऋषि थे जो बहुत क्रोधी थे। जरा सी भी गलती हो तो शाप दे दिया करते थे। उसने सोचा कि पाण्डवों को दुर्वासा जी का कोपभाजन बनाया जाए। उनका चातुर्मास्य कराया और इतनी सेवा की कि हर समय खड़ा ही रहता था। ऐसे लोग तपस्या भी कर लेते हैं। आप सोचिए कि हिरण्यकशिपु के समान कौन तपस्या करेगा? रावण ने कैसा तप किया था ? लेकिन इन सबका इरादा खराब था। बुरे इरादे से तपस्या भी गड़बड़ होती है। दुर्योधन ने भक्ति से दुर्वासा मुनि की सेवा नहीं की। सेवा इसलिए की कि हमारी इच्छा को पूरी करने में ऋषि हमारे सहयोगी बन जाएँ। उसकी सेवा से दुर्वासा जी प्रसन्न हो गए और बोले कि वरदान माँग। वह बोला कि बस यही वरदान दें कि आप दस हजार शिष्यों के साथ वन में जहाँ पाण्डव इस समय रह रहे हैं वहाँ उस समय जाइए जब द्रौपदी ने भोजन कर लिया हो। वे भी समझ गए कि यही मन में था इसके। दुर्योधन ने सोचा कि जब द्रौपदी के भोजन कर लेने के बाद दुर्वासा वहाँ जाएँगे तो वे लोग इन लोगों को भोजन नहीं करा पाएँगे। दुर्वासा जी क्रोधित होकर शाप दे देंगे तो सब पाण्डव मर जाएँगे। शाप से भस्म हो जाएँगे। दुर्वासा जी ने कहा कि ठीक है। एवमस्तु। सब ब्राह्मणों के भोजन करने के बाद द्रौपदी ने जब भोजन करके आचमन कर लिया तब दुर्वासा जी दस हजार शिष्यों के साथ पाण्डवों के यहाँ पहुँच गए। युधिष्ठिर ने उन्हें देखकर प्रणाम किया तो उन्होंने कहा कि राजन् ! आज हम सब आपके यहाँ भोजन ग्रहण करेंगे। युधिष्ठिर ने कहा कि ठीक है, सरोवर में स्नान करके आ जाइए। जब वे सब सरोवर में स्नान करने चले गए तब युधिष्ठिर ने द्रौपदी को बुलाया और कहा कि भोजन तैयार रखो, दस हजार ब्राह्मणों को भोजन कराना है। द्रौपदी बोली कि महाराज ! अब तो हम भोजन कर चुके हैं। बटलोई भी मांज ली। अब आज तो कुछ मिल ही नहीं सकता। पाण्डव और द्रौपदी सब बहुत दुःखी हुए कि आज तो हम बच नहीं सकते।

ऐसी अवस्था में उन सबने अकारणकरुणकरुणावरुणालय भगवान् श्रीकृष्ण को ही याद किया। पाण्डव लोग बड़े दुःखी होकर अवसाद में बैठे थे कि इतने में ही घर्र-घर्र, घर्र-घर्र की ध्वनि सुनाई पड़ी। सामने रथ आया। रथ खड़ा हुआ। उसमें से श्रीकृष्णचन्द्र परमानन्दकन्द उतरे। उनका स्वरूप देखकर पाण्डव प्रमुदित हो गए। सब उनसे मिले। सबने उन्हें प्रणाम किया और अन्त में जब द्रौपदी ने उन्हें प्रणाम किया तो

मुस्कुरा कर बोले कि द्रौपदी! हमको भूख लगी है, भोजन लाओ । द्रौपदी बोली कि महाराज! आप क्या कह रहे हैं? मेरी परीक्षा लेने आए हो। आज मेरे पास कुछ नहीं है। बोले कि नहीं ! कुछ न कुछ तो है ही, मैं तो बहुत भूखा हूँ । वह बोली कि मैं तो बटलोई मांज चुकी हूँ । उन्होंने कहा कि बटलोई ही लाओ ।

द्रौपदी ने मंजी हुई बटलोई सामने की तो भगवान् ने देखा कि एक साग का पत्ता उसमें लगा हुआ है । भगवान् ने उसे ही अपने हाथ में लेकर मुँह में डाला । स्वयं तृप्त हो गए और त्रिलोकी को भी तृप्त कर दिया । परिणाम यह हुआ कि दुर्वासा जी के पेट फूल गए, उनके शिष्यों के भी पेट फूल गए । सबको खट्टी डकार आने लगी । सब सोचने लगे कि पाण्डव भोजन कराएँगे तो हम क्या खाएँगे? भागो यहाँ से । नियम यह है कि जब कोई किसी ब्राह्मण को निमन्त्रित करता है तो जब तक वह भोजन नहीं कर लेता तब तक घर वाले भी भोजन नहीं कर सकते और जो निमन्त्रण स्वीकार कर ले वह न खाए या दूसरी जगह खाए तो उसको भी दोष लगता है । दुर्वासा जी वहाँ से भागने लगे तो युधिष्ठिर ने कहा भीमसेन से कि उन्हें पकड़कर लाओ । भीमसेन दौड़कर गए कि महाराज ! कहाँ जा रहे हैं ? आइए । भोजन करिए । बोले कि भैया ! हमें माफ करो, हम नहीं खा सकते। बार-बार मनाने लगे तो अन्त में दुर्वासा ने आकर क्षमायाचना की तब उन्हें छुटकारा मिला । दुःख आया पर दुःख को दूर करने के लिए कौन आया? परब्रह्म परमात्मा आए । आर्ति माने कष्ट आया और कष्ट में हमने भगवान् का स्मरण किया तो भगवान् आ गए । द्रौपदी का चीरहरण हो रहा था । द्रौपदी असहाय हो गई।

सुने री मैंने निर्बल के बल राम ।

पहले द्रौपदी यह समझती थी कि मेरे पति सभा में बैठे हैं, मेरे साथ अभद्रता देखकर दुःशासन को दण्डित करेंगे । दुःशासन बाल पकड़कर द्रौपदी को सभा भवन में घसीटता हुआ ले आया और खड़ा कर दिया । दुर्योधन ने कहा कि इसके कपड़े उतारो, इसे नंगी करो और मेरी जाँघ में बैठा दो । यह अब मेरी दासी हो चुकी है क्योंकि पाण्डव लोग जुए में हमसे हार गए हैं । वह बेचारी देखती है अपने पतियों की ओर तो सब अपनी आँखें नीची करके बैठे हैं। भीमसेन उठकर कुछ बोलता है तो युधिष्ठिर उसको रोक देते हैं । तब वह कहती है –

पाँच पाँच पति बैठे मौन । होवैगी गति कौन ?

भीष्म, द्रोण और कृप आदि भी कुछ नहीं बोलते हैं । कर्ण व्यंग्य बोलता है । ऐसी स्थिति में द्रौपदी अकारणकरुणकरुणावरुणालय भगवान् श्रीकृष्ण को स्मरण करती है।

भगवान् वस्त्ररूप धारण करके द्रौपदी की लज्जा बचाते हैं। इस विपत्ति में भी भगवान् का भक्तों पर अनुग्रह होता है तो उसका सुख सारी विपत्तियों को भुला देता है। इसीलिए माता कुन्ती ने कहा कि हमको सम्पत्ति नहीं चाहिए।

कुन्ती ने भगवान् श्रीकृष्ण से कहा कि अब पाण्डव राजा हो गए। हस्तिनापुर का निष्कंटक राज्य उनको मिल गया। विपत्ति के दिन चले गए तो अब तुम भी हस्तिनापुर छोड़कर द्वारका चले जा रहे हो। विपत्ति के समय तुम यहीं रहते थे इसलिए हमें सम्पत्ति नहीं, विपत्ति चाहिए। आज बस यहीं विराम लेते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[5]

।। राम राम पाँच ।।

परमात्मा सर्वशक्तिमान् आनन्दस्वरूप

समुपस्थित सज्जनो, देवियों !

संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार; तीनों एक अखण्ड सच्चिदानन्दघन परमात्मा से होता है । हमारे वेदों, उपनिषदों में यह बतलाया गया है कि इस जगत् के मूल में एक ऐसी सत्ता है जो अविनाशी है, आनन्दस्वरूप है । इसमें सर्वज्ञता, सर्वशक्तिमत्ता और सर्वान्तर्यामिता है । वह अपनी शक्ति से सारे संसार को उत्पन्न करता है, पालन करता है और फिर अपने में ही समेट लेता है । यहाँ तक बताया गया है कि उस परमात्मा के निःश्वास से वेदों की उत्पत्ति होती है ।

यस्य निःश्वसितं वेदाः ।

आप समझ लीजिए कि भगवान् योगनिद्रा में सोए हैं और श्वासोछ्वास उनका चल रहा है । वे स्वयं निर्विकल्प समाधि में स्थित हैं । ऐसे समय में उनके द्वारा श्वाँस निकलती है । उनके श्वाँस और निःश्वास लेने से सांगोपांग वेदों का आविर्भाव हो जाता है । चारों वेद, वेद के छः अंग- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष् और निरुक्त सब भगवान् के निःश्वास से निकलते हैं। आपने मानस में सुना होगा कि भगवान् ने जब रामावतार धारण किया तो पढ़ने के लिए गुरु के घर गए । गोस्वामी तुलसीदास जी ने सोचा कि लोग सोचेंगे कि राम पहले अज्ञानी थे, गुरु के घर जाकर पढ़कर ज्ञानी हुए तो वे इसका समाधान करते हैं –

जाकी श्वास सहज श्रुति चारी । सो प्रभु पढ़ यह कौतुक भारी ।।

जिसकी श्वाँस ही चारों श्रुतियाँ हैं वे भगवान् पढ़ने गए । उनको तो पढ़ने की आवश्यकता नहीं थी । वे तो एक बार सुनकर ही दुहरा सकते हैं लेकिन लोकसंग्रह के लिए, यह बताने के लिए कि प्रत्येक मनुष्य को गुरु के द्वारा वेद ग्रहण करना चाहिए इसके लिए उन्होंने आचरण करके दिखलाया कि हम भी जब मनुष्य रूप में आते हैं तो गुरु के घर जाते हैं । यह उनका कौतुक था, खेल था । इसी प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण भी सांदीपनि गुरु के यहाँ जाकर वेदों का अध्ययन करके लौट आते हैं । वह भी उनका

एक खेल था, नाटक था । उन परमात्मा को कोई अज्ञान नहीं है। वे सर्वज्ञ हैं, उन्हीं से ज्ञान के निधान वेदों का प्राकट्य होता है । श्वाँस छोड़कर भगवान् वेदों को प्रकट कर देते हैं । श्वाँस लेने छोड़ने में तो कोई श्रम भी नहीं होता । बिना श्रम के ही वेद उनसे प्रादुर्भूत हो जाते हैं । सोए-सोए भगवान् जब आँख खोलकर देख देते हैं तो –

वीक्षितमेतस्य पंच भूतानि स्मितमेतस्य चराचरम् ।

पाँचों महाभूत; पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश ये सब उत्पन्न हो जाते हैं । जब भगवान् मुस्कुराते हैं तो ये पाँचों भूत पंचीकृत होकर अनन्तकोटि ब्रह्माण्डों के रूप में प्रतिफलित हो जाते हैं, पुष्पित, फलित हो जाते हैं । भगवान् की मुस्कुराहट से इतना हो जाता है ।

अभी आप लोगों ने सुना होगा कि वैज्ञानिकों ने किसी तत्त्व की खोज की है जिसको गॉड पार्टिकल का नाम दिया है । पत्रकारों ने कहा कि यह जगत् का मूल है । ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति इसी से हुई है । ईश्वर की खोज हो गई । वैज्ञानिकों ने कर डाला। हमारे पास अनेकों फोन आए कि महाराज! बताइए कि यह कौन सी खोज हुई है ? क्या यह सही है ? क्या सच में ईश्वर की खोज हो गई है ? हमने सोचा कि पता तो लगाएँ कि कौन सी खोज हुई है ? जो वैज्ञानिक इन तत्त्वों की खोज कर रहे हैं उनमें से एक भारत की महिला है । झाँसी की है । उससे हमारी बात हुई तो उसने कहा कि हमने एक ऐसा कण खोजा है जो कण जगत् का मूल हो सकता है ।

वही आनन्दस्वरूप है, सत् चित् आनन्द । वह परमात्मा है और उसी परमात्मा से यह संसार उत्पन्न होता है । वह परमात्मा सर्वशक्तिमान है, सर्वज्ञ है । उस सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान परमात्मा के अधीन ही वह सारा संसार है । जीव उसी परमात्मा का अंश है–

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।

यह जो सनातन जीव है वह मेरा ही अंश है । मानस में भी आता है –

ईश्वर अंश जीव अविनाशी । चेतन अमल सहज सुखराशी ।।

यह जीव ईश्वर का अंश है । अंश में वही बात रहती है जो अंशी में रहती है। अंश और अंशी का कोई भेद नहीं है । अब आप कह सकते हैं कि अग्नि अंशी है और चिंगारी उसका अंश है लेकिन यह जो भेद है अग्नि और चिंगारी का यह कोयले को लेकर है, अग्नि को लेकर नहीं है । अग्नि तो एक ही है । छोटा कोयला हो तो चिंगारी और बड़ा

कोयला हो तो अग्नि । अग्नि वह है जो जलाती है और प्रकाश देती है । जीव भी वही है इसलिए यह माना जाता है कि माता-पिता के रज-वीर्य के मिलने के बाद एक माँस का पिण्ड बना और उस पिण्ड का सम्बन्ध माता के हृदय से जुड़ गया । माता के हृदय का रक्त उस पिण्ड में जाने लगा, उससे वह धीरे-धीरे बढ़ने लगा, बढ़ते-बढ़ते जैसे कलम से अंकुर निकलते हैं उसी तरह उस पिण्ड से हाथ निकले, पाँव निकले, नाक बन गई, आँख बन गए, कान बन गए, सब अंग बन गए । सब बन जाने के बाद इनमें आकर देवता बैठ गए । आँख में सूर्य बैठ गए, कान में दिशाएँ बैठ गईं, त्वक् में वायु बैठ गया, जिह्वा में वरुण बैठ गए, नासिका में अश्विनी कुमार बैठ गए, हाथ में इन्द्र बैठ गए, पैर में विष्णु बैठ गए, उपस्थ में प्रजापति बैठ गए और नैर्ऋत्य मृत्यु गुदा में आकर बैठ गया। वाणी में अग्नि आकर बैठ गया । इस प्रकार सब देवताओं ने आकर इन्द्रियों में अपना डेरा जमा लिया। इसी को गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा –

इन्द्रिय द्वार झरोखा नाना । जहँ तहँ बैठे सुर करि थाना ।।

इन्द्रियों के द्वार में झरोखें हैं उनमें देवताओं ने अपना डेरा जमा लिया । देवताओं के बैठ जाने पर भी यह शरीर निश्चेष्ट रहा । इसमें चेतनता नहीं आई । तब परमात्मा ने सोचा–

अनेन जीवेनात्मना नामरूपे व्याकरवाणि ।

मैं जीवरूपी आत्मा से नाम-रूप का व्याकरण करूँ अर्थात् इसमें चेतना लाऊं । यह जो मस्तक में तालु है इसके द्वारा जब चेतना शरीर में आई तो यह शरीर चैतन्य हो गया, जगमगा गया । उसी प्रकार से जिस प्रकार आप अपने घर में लट्टू और ट्यूब लाइट सजा लेते हैं पर जब उनका पावर हाउस में सम्बन्ध जुड़ता है तो वह जगमगा जाता है । परमात्मा पावर हाउस है । जैसे ही उसके साथ इन्द्रियों का सम्बन्ध हुआ आँख देखने लगी, कान सुनने लगे, जीभ स्वाद लेने लगी, हाथ छूने लगा । सब इन्द्रियाँ अपना-अपना काम करने लगीं। इस प्रकार जीव उस परमात्मा का अंश है और परमात्मा जीव का अंशी है । उसी परमात्मा के द्वारा इस संसार का संचालन हो रहा है । इसको शान्ति तभी मिल सकती है जब यह अपने अंशी से मिले । आप देखिए कि समुद्र से भाप निकली । उस भाप को हवा ने ढकेल कर बादल बना दिया । बादल उसको ढकेलते-ढकेलते हिमालय ले गए । हिमालय की ठण्ड पाकर वह बर्फ बनकर गिर गया। बर्फ बनकर वह वहीं पड़ा रहा पर जैसे ही उसको गर्मी मिली, जिस समुद्र से वह चला था भाप बनकर वह उसी की ओर बहने लगता है । अब उसके रास्ते में पहाड़ आ जाए, पत्थर आ जाए, कोई भी

प्रतिबन्ध आ जाए वह तोड़ता, फोड़ता तब तक चलता रहेगा जब तक वह समुद्र में जाकर नहीं मिल जाएगा। इसी प्रकार जीव तब तक सुख-शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता जब तक वह अपने अंशी ईश्वर से नहीं मिल लेता।

अब उससे कैसे मिलें ? एक तो मार्ग है कि हम उस परमात्मा को जान लें। बोध हो जाए। वे ज्ञान के द्वारा मिल सकते हैं और दूसरा हमने बताया था कि हमारे भीतर एक शक्ति है, एक वस्तु है जिसके द्वारा हम परमात्मा से मिल सकते हैं।

एक बेटा था। एक बार वह तीर्थयात्रा के लिए निकला। उसने अपनी माता से कहा कि मैया ! तीर्थयात्रा के लिए जा रहा हूँ। मेरे पास कुछ पैसे हैं। माँ ने कहा कि बेटा! अगर तेरे पैसे खर्च हो जाएँ तो मैं तुझे एक अँगूठी देती हूँ सोने की। इसको बेचकर टिकट लेकर घर आ जाना। उसने अँगूठी अपनी अंगुली में पहन ली और तीर्थयात्रा करने निकल पड़ा। अनेक स्थानों पर तीर्थयात्रा करता रहा और एक दिन सब पैसे खर्च हो गए। अब गाड़ी में बैठे कैसे ? बैठा तो गाड़ी वाला कान पकड़कर उतारने लगा। तब उसने वह अँगूठी बेची, टिकट ली और बड़े आराम से घर आ गया। ऐसे ही एक अँगूठी भगवान् ने हमलोगों को दे रखी है। वह अँगूठी कौन सी है ? वह है प्यार की अँगूठी। सब प्राणियों के भीतर प्यार है। वह प्यार यदि भगवान् से लग जाए तो हम भगवान् के पास पहुँच सकते हैं। लेकिन मुश्किल तो यह है कि हमारा प्यार बँटा हुआ है। हम अपनी कुछ समस्याओं में उलझे हुए हैं। हम दुःखों से परेशान हैं। नाना प्रकार के दुःखों से हम घिरे हुए हैं। विपत्तियाँ आ रही हैं। हमारी कुछ इच्छाएँ हैं। उनको हम पूरी करना चाहते हैं। कुछ लोग चाहते हैं कि इस जगत् के मूल में क्या है इसको हम जानें। पर कैसे जानें? तर्क-वितर्क से तो जानना बड़ा ही कठिन है क्योंकि तर्क से तत्त्व का निर्णय नहीं हो सकता। कठिनाई से आप किसी बात को सिद्ध भी कर दें तो आपसे बड़ा कोई तार्किक आ जाएगा तो आपकी बात कट जाएगी। हम तत्त्व तक कैसे पहुँचें ? उसके लिए भी हमें कोई ऐसा माध्यम चाहिए जो निश्चित रूप से हमारी रक्षा कर सके। हमारी इच्छा पूरी कर सके। इसलिए उसको अन्त तक आशा रहती है कि अबकी बार हम जीत जाएँगे पर वह हार जाता है। एक जुआ का नशा होता है। बहुत से लोग बर्बाद हो गए इसमें।

हमारे पास एक सज्जन आए। उन्होंने यह बताया कि महाराज ! हम आपके गुरुजी ब्रह्मलीन ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्री ब्रह्मानन्द सरस्वती जी महाराज के पास गए थे। उनसे हमने एक प्रश्न किया कि महाराज ! हम शिष्य बनना चाहते हैं आपके तो उन्होंने कहा कि बन जाओ। हम बोले कि एक बात है कि हम शिष्य तो बनना चाहते हैं

पर हम जुआ खेलते हैं, शराब भी पीते हैं और वेश्यागमन भी करते हैं । आजकल के नकली गुरु तो कहते हैं कि सब करते रहो और हमारे चेले भी बन जाओ पर उन्होंने कहा कि यदि तुम्हें हमारा चेला बनना है तो हम तुम्हें बताते हैं । तुम चेला बन जाओ तो हमने पूछा कि कैसे बनें तो बोले कि जहाँ लोग जुआ खेलते हैं वहाँ पर मत बैठो । जहाँ लोग हारकर बैठे हैं वहाँ पर बैठो तो अपने आप तुमको जुए से वैराग्य हो जाएगा। बोले कि जहाँ शराब पिलाई जाती है वहाँ न बैठकर तुम वहाँ बैठो जहाँ लोग शराब पीकर नाली में लोट रहे हैं और उनके मुँह को कुत्ते चाट रहे हैं । शराबियों की बड़ी विचित्र हालत होती है ।

एक शराबी था । एक बार उसने नये जोड़े जूते खरीदे और बहुत कीमती शराब खरीदने पहुँच गया अड्डे में । भयंकर शराब पी ली और पीकर नाली में लोटने लगा । बेहोश पड़ा रहा। इतने में एक चोर आया और उसने उसके नये जूते निकाल कर अपने पुराने जूते उसको पहना दिए। जब उसको होश आया तो लोगों ने उसका नाम लेकर पुकारा । उसने अपने जूतों की तरफ नजर की और कहा कि हम नहीं हैं । माने हम पुराने जूते वाले नहीं हैं। हम वह हैं जो नये जूते पहने थे । हम कहाँ चले गए ? शराब पीने वालों की ऐसी हालत हो जाती है । तुम वहाँ बैठकर देखो तो तुम्हारी शराब छूट जाएगी। बोले कि वेश्यागमन करते हैं । उन्होंने कहा कि तुम वेश्या के यहाँ रात्रि में मत जाओ, दिन में जाओ । वहाँ जाकर उनकी सूरत देखो तो तुम हमारे चेले बन जाओगे क्योंकि उनका जो सौन्दर्य तुम्हें दिखता है वह मेक-अप का है । वास्तविक नहीं है, वह नकली है । दिन में उनके मुँह में मक्खियाँ भिनकती हैं । वहाँ दिन में जाने से तुम हमारे चेले बन जाओगे और कहोगे कि इनसे पीछा छुड़ाओ।

कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य जब सब ओर से हार जाता है, थक जाता है तो फिर वह भगवान् की शरण में जाता है । जब सब ओर से वह देख लेता है कि कहीं कुछ नहीं है तो उसकी समझ में आ जाता है । द्रौपदी साम्राज्ञी थी, युधिष्ठिर जुए में हार चुके थे सब कुछ। दुर्योधन बोला कि एक चीज आपकी बची है द्रौपदी। उसको आप जुए में लगा दीजिए तो द्रौपदी को भी जुए में युधिष्ठिर हार गए । तब दुर्योधन बोला कि द्रौपदी मेरी दासी हो गई । उसको बुलाओ यहाँ । उसने सोचा कि मेरे पाँचों पति मेरी रक्षा करेंगे । दुःशासन को दण्डित करेंगे, भीमसेन तो अवश्य करेगा ही । भीमसेन उठा भी, कुछ बोला भी पर युधिष्ठिर ने उसे बिठाल दिया। भीष्म की ओर देखा और द्रौपदी ने पूछा कि आप बताइए कि धर्म क्या है ? पहले ही जब ये दास बन चुके थे तो हमें दाँव पर लगाने का इन्हें अधिकार कहाँ था ? जब ये दास नहीं थे तब मैं इनका स्वत्त्व थी पर

जब ये स्वयं को हारकर दूसरों के दास बन गए तो मुझे दाँव में लगाने का इनको अधिकार कहाँ था ? भीष्म बोले कि धर्म की गति बड़ी सूक्ष्म है, मैं इसे नहीं जानता। वे भी चुप हो गए, द्रोणाचार्य भी चुप हो गए। अब द्रौपदी स्वयं ही अपने को बचाने लगी परन्तु कहाँ एक ओर दस हजार हाथियों की भुजाओं वाले बल का स्वामी दुःशासन और कहाँ अबला द्रौपदी? उसको लगा कि अब मैं अपना वस्त्र नहीं बचा पाऊँगी । तब अकारणकरुणकरुणावरुणालय श्रीकृष्ण भगवान् को उसने पुकारा –

गोविन्द ! द्वारकावासिन् ! कृष्ण गोपीजनप्रिय !
कौरवैः परिभूतां मां किं न जानासि केशव ।।

हे गोविन्द ! हे द्वारकावासी ! हे गोपीजनों के प्यारे ! कौरव मुझे सता रहे हैं। क्या तुमको पता नहीं है? ऐसा कहते ही भगवान् की अद्भुत माया हुई कि द्रौपदी का चीर बढ़ने लगा। एक से एक साड़ी निकलने लगी। यहाँ तक कि साड़ियों का पहाड़ निकलने लगा। पता ही नहीं चले कि –

सारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है ।
नारी ही की सारी है कि सारी ही की नारी है ।।

साड़ियों का पहाड़ लग गया । पीताम्बर निकलने लगा । किसी ने कहा कि दुःशासन! तेरा हाथ जल जाएगा। थक कर बैठ गया वह। द्रौपदी का चीर बच गया। यह आर्त द्रौपदी थी। सब ओर से निःसहाय होकर पुकारा। इसी बात को सूरदास जी ने कहा है –

सुने री मैंने निर्बल के बल राम ।
द्रुपद सुता निर्बल भई ताके तजि आए निज धाम ।
दुःशासन की भुजा चकित भई वसन रूप भये श्याम ।

जो निर्बल का बल है वह राम है। जब द्रुपद सुता निर्बल बन गई तो भगवान् स्वयं वस्त्र बन गए । दुःशासन खींचता-खींचता थक गया । भगवान् आपना धाम द्वारका छोड़कर आ गए। उस समय आए जब सब प्रकार के बल से वह निराश हो गई। पति का बल न रहा, सभा के सज्जनों का बल न रहा, अपनी भुजाओं का भी जब बल न रहा, सब ओर से निर्बल हुई। जब किसी ने विपत्ति में साथ नहीं दिया तब भगवान् आए।

ऐसे ही गजेन्द्र को भी अपने बल पर विश्वास था कि मैं अपने बल पर ग्राह से स्वयं को छुड़ा लूँगा लेकिन एक दिन ऐसा आया कि ग्राह ने जोरों से खींचा और इतना खींचा

कि केवल सूँड रह गई । सूँड यदि डूब जाती तो गजेन्द्र मर जाता । तब उसने भगवान् को हरि कहकर पुकारा। कहते हैं कि जब उसने पुकारा तो भगवान् वैकुण्ठ में थे, भोजन कर रहे थे। गजेन्द्र का 'ह' शब्द सुना तो भोजन की थाली छोड़कर दौड़ पड़े। न साथ में गरुड़ को लिया और न ही सुदर्शन चक्र को लिया । सीधे दौड़कर वहाँ आ गए और हाथ से गजेन्द्र की सूँड पकड़कर ग्राह के सहित सरोवर से बाहर निकाल दिया। जब भगवान् ने बाहर निकाल दिया तब सुदर्शन चक्र ने आकर ग्राह का मुँह फाड़ा । उसको फाड़कर जब भगवान् लौटने लगे तो रास्ते में गरुड़ मिले। जब वैकुण्ठ के पास पहुँच गए तो उन्हें 'रि' शब्द सुनाई पड़ा ।

जब लगि गज अपनो बल बरसों नेक सर्यो नहिं काम ।
निर्बल भये बलराम पुकारो आए आधे नाम ।
सुने री मैंने निर्बल के बल राम ।

यह आर्त भक्त की कथा है । आर्त जब सब ओर से निराश हो जाता है तब भगवान् उसको बचाते हैं । आप सोचते होंगे कि भगवान् वैकुण्ठ से इतनी जल्दी बिना गरुड़ के और बिना सुदर्शन चक्र के कैसे आ गए ? उनको आने के लिए सवारी की जरूरत थोड़े ही थी? वे तो वहीं थे । भगवान् तो सर्वव्यापी हैं, सर्वभूतान्तरात्मा हैं । वे वहीं थे और वहीं से प्रकट हो गए । इसलिए आधे नाम से भी कम समय लगा । ऐसे ही जब भगवान् ने द्रौपदी का चीर बढ़ाया तो उस समय तो द्रौपदी की लज्जा बच गई किन्तु उसके मन में थोड़ी सी शंका रह गई कि भगवान् और पहले आ जाते तो अच्छा था । एक दिन जब भगवान् श्रीकृष्ण मिले तो द्रौपदी ने पूछा कि जब दुःशासन मेरा चीर खींच रहा था, मेरी लज्जा जाने वाली थी पर आपने चीर बढ़ाकर मेरी रक्षा की परन्तु आप थोड़ा पहले क्यों नहीं आ गए ? भगवान् ने पूछा कि हे द्रौपदी ! तुमने हमें उस समय क्या कहकर पुकारा था ? द्रौपदी बोली कि हमने कहा था –

गोविन्द द्वारकावासिन् कृष्णगोपीजनप्रिय !
कौरवैः परिभूतां मां किं न जानासि केशव ।

भगवान् बोले कि तुमने द्वारकावासिन् कहा ना ? इसलिए हमें द्वारका जाकर आना पड़ा। मैं तो वहीं था। अगर घट-घटवासी कहती तो मैं और पहले आ जाता । भगवान् तो सर्वत्र है । कहाँ नहीं हैं भगवान् ? अभी आपने सुना कि जब पाण्डवों के यहाँ दुर्वासा मुनि पहुँच गए तो द्रौपदी ने भोजन कर लिया था । उसके भोजन के पश्चात् बटलोई से कुछ निकलने वाला नहीं था । दस हजार शिष्यों के साथ दुर्वासा जी वहाँ पहुँच गए थे।

अब अगर उनको भोजन न करायें तो वे शाप दे देंगे। दुर्योधन यही चाहता था। तब द्रौपदी ने और सभी पाण्डवों ने भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण किया। भगवान् आ गए और द्रौपदी से बोले कि कुछ खिलाओ, हमें भूख लगी है। बोली कि कुछ बचा नहीं है तो वे बोले कि बटलोई लाओ। देखा तो उसमें एक साग का पत्ता चिपका था। भगवान् ने उसी को खा लिया।

तुलसीदलमात्रेण जलस्य चुलुकेन च।
विक्रीणीते स्वमात्मानं भक्तेभ्यो भक्तवत्सलः ।।

तुलसी दल मात्र से, चुल्लू भर पानी से भगवान् अपने आप तक को बेच देते हैं। भगवान् जब साग खाकर स्वयं तृप्त हो गए तो जीवों की तृप्ति में क्या देर लगती है ? सब जीव तो उनके ही अंश हैं। सबके पेट फूल गए। यह बताया भगवान् ने कि हम सब प्राणियों के भीतर हैं। दुर्वासा के पेट के भीतर भी हम ही हैं। यदि हमारा पेट भर गया तो सारी त्रिलोकी का पेट भर जाएगा। सबकी अन्तरात्मा भगवान् हैं। यह सर्वव्यापकता भगवान् की है कि एक साग के पत्ते से वे तृप्त हो जाते हैं।

एक कथा आती है कि एक बार नारद जी एक पारिजात का पुष्प लेकर आए और भगवान् श्रीकृष्ण को वह फूल दे दिया। स्वर्ग में एक ऐसा पुष्प है जो पारिजात कहलाता है जो सदा अम्लान रहता है। भगवान् ने देखा कि बड़ा सुन्दर पुष्प है, इसमें कभी कुम्हलाहट नहीं आती, उसकी सुगन्ध कभी नहीं जाती। उन्होंने वह पुष्प रुक्मिणी जी को दे दिया। नारद जी ने अपनी आँखों से जब देखा कि मेरा दिया हुआ फूल उन्होंने रुक्मिणी जी को प्रेम से दे दिया तो वे सत्यभामा के यहाँ पहुँच गए। चुगली लगाने में तेज तो थे ही। सत्यभामा ने नारद जी का स्वागत किया तो वहाँ बैठ गए और बोलने लगे कि तुम तो कहती थी कि भगवान् श्रीकृष्ण सबसे अधिक प्रेम तुमसे करते हैं। बोली कि हाँ, इसमें हमें कोई सन्देह नहीं है। सर्वाधिक प्रेम उनका हमसे ही है। देवर्षि बोले कि आज हमने देखा कि तुमसे भगवान् को उतना प्रेम नहीं है, जितना रुक्मिणी से है। बोलीं कि इसका क्या प्रमाण है ? बोले कि हम स्वर्ग से पारिजात का पुष्प लाए थे जिसे हमने भगवान् को दिया। उन्होंने वह पुष्प तुमको न देकर रुक्मिणी को दे दिया।

नारदजी सत्यभामा का अभिमान तोडना चाहते थे जो उनको इस बात से हो गया था कि स्यमन्तक मणि के कारण उनको नित्य पर्याप्त सोना मिल जाता है। नारद जी ने कहा कि कुछ पुण्य करो। ऐसा करो श्रीकृष्ण का दान कर दो। सौतियाडाह में सत्यभामा ने श्रीकृष्ण का दान कर दिया। जब नारद जी श्रीकृष्ण को सेवक के रूप में

ले जाने लगे तब उन्हें ध्यान आया कि श्रीकृष्ण का तो हमसे विछोह ही हो जायेगा। उन्होंने उपाय पूछा। नारद जी ने कहा कि इससे अधिक महत्व की वस्तु देकर इन्हें छुडा सकती हो । फिर क्या था । तराजू टांग दिया गया । सोना चांदी ला लाकर रखा जाने लगा । भंडार खाली हो गया पर श्रीकृष्ण का पलडा भारी रहा । सत्यभामा परेशान होकर बोली क्या करूँ ? तो कहा एक तुलसी का पत्ता रख दे । तुलसी का पत्ता रख दिया तो श्रीकृष्ण ऊपर हो गए ।

थोड़े से ही भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं । एक साग के पत्ते से भगवान् प्रसन्न हो गए और स्वयं एक साग का पत्ता खाकर त्रिलोकी को तृप्त कर दिया । यह भगवान् की भक्तवत्सलता है। चाहे कितनी ही घनघोर विपत्ति आई हो भगवान् की शरण में जाओ। कहा कि भगवान् की शरण में रहने वालों पर भी तो विपत्ति आती ही है। भगवान् की शरण में जाने से कहाँ से शक्ति आ गई ? बात यह है कि विपत्ति आने पर भी हम भगवान् का स्मरण कहाँ करते हैं ? इसके लिए भी आस्था की आवश्यकता है । भगवान् के प्रति जिसका समर्पण है वही विपत्ति में भगवान् की याद कर सकता है । सब लोग नहीं कर सकते । कोई माँ को पुकारेगा, कोई बाप को पुकारेगा, कोई डॉक्टर को पुकारेगा, कोई कहेगा पूरे कुटुम्ब को ले आओ । पर इनमें से कोई रक्षा करने वाला नहीं है । ऐसी स्थिति में जो भगवान् का स्मरण करता है, भजन करता है, वही भगवान् को विपत्ति में याद करता है । इसलिए विपत्ति के समय में भगवान् के चरणों में प्रेम होना भक्ति है । इसलिए कहा -

राम भगत जग चारि प्रकारा । सुकृती चारिउ अनघ उदारा ।।

चारों सुकृती है और सबसे बाद में उन्होंने सबसे बड़ी बात कह दी ।

चहूँ चतुर कहँ नाम पियारा ।

चारों जो चतुर हैं उनको नाम से प्यार होता है । जो व्यक्ति भगवान् को जानता है भगवान् से जिसका प्रेम है उसी का भगवान् के नाम से प्यार होगा । भगवान् के भक्त को भगवान् के चरणों में प्रेम के कारण जब भी कोई संकट आता है तो वह भगवान् को पुकारता है । मनोकामना जब मन में होती है तो वह भगवान् के सामने हाथ पसारता है। क्यों किसी के सामने हाथ पसारे ?

हमलोग बताया करते हैं कि अकबर बादशाह एक बार शिकार खेलने गया । शिकार खेलते-खेलते वह अपनी सेना से बिछुड़ गया । दूर कहीं निकल गया । उसको

बहुत जोरों की भूख लगी, प्यास लगी तो व्याकुल होकर एक किसान के खेत में गया। किसान से कहा कि कुछ खिलाओ-पिलाओ तो उसने गन्ने का रस उसको पिलाया। उससे उसके जी में जी आया। वह बहुत प्रसन्न हुआ। बादशाह बोले कि आज से तुम हमारे दोस्त हो गए। हमारा नाम अकबर है, हम दिल्ली में रहते हैं। जब कभी दिल्ली आओ तो हमसे मिलना। उसने कहा ठीक है। फिर एक बार वह किसी रिश्तेदारी में दिल्ली गया तो उसको याद आ गया कि अकबर नाम का वह व्यक्ति दिल्ली में रहता है। उससे भी मिलते चलें। पूछने लगा कि अकबर कहाँ रहता है ? उसे पता लग गया कि वह तो बादशाह है। उसके यहाँ वह पहुँचा तो अकबर पहचान गया। बहुत स्वागत करके उसने उसको अपने महल में ही ठहरा दिया। अकबर रोज नमाज पढ़ता था। हाथ आगे करके माथा झुकाता था। किसान हिन्दू था। उसने पूछा कि बादशाह यह तुम रोज क्या करते हो ? बोले कि हम खुदा की इबादत करते हैं। पूछा कि हाथ क्यों फैलाते हो ? बोला कि यह सब उसी का दिया हुआ है। उसी से हम माँगते हैं। बोला ठीक है। अब वह किसान जाने लगा। बादशाह ने कहा कि जा रहे हो तो हमसे कुछ माँग लो। जागीर माँग लो, धन-दौलत माँग लो। किसान बोला कि जिससे तू माँगता है, हम उसी से माँग लेंगे। तुमसे क्या माँगे ? भगवान् के सामने हाथ पसारना चाहिए, जिस किसी के सामने नहीं। आज इतना ही।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!
धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो।
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[6]

।। राम राम छः ।।

सत्संग से खुलता है दुःखों से बचने का मार्ग

समुपस्थित सज्जनो, देवियो!

श्रीमद्भागवत में भगवान् कपिलदेव ने अपनी माता देवहूति से यह बतलाया कि जीव संसार के बन्धन में बँधा हुआ है। जैसे किसी को फाँसी लगा दी जाए, पाश से किसी को बाँध दिया जाए वैसे ही यह जीव भी बँधा हुआ है। इसलिए बेचारा जन्म-मरण के चक्र में पड़ा हुआ है। जन्म लेता है, बुढ़ापा आता है, अनेकों प्रकार की व्याधियाँ आती हैं। अनेकों चिन्ताओं से घिर जाता है। ऐसे इस संसार सागर में यह जीव बँधा हुआ है। कौन सा बन्धन है ? किसने बाँधा है ? तब भगवान् कपिल बोलते हैं –

प्रसंगमजरं पाशमात्मनः कवयो विदुः ।
स एव साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम् ।

भजन करता हुआ प्राणी भगवान् बद्रीनाथ का दर्शन करने पहुँचता है और वहाँ दर्शन करते ही उसका हृदय आनन्द से परिपूरित हो जाता है। आह्लादित हो जाता है। लगता है कि हम वैकुण्ठ आ गए। परन्तु जैसे ही वह लौटकर धर्मशाला में आता है और मैनेजर से पूछता है कि घर से कोई चिट्ठी तो नहीं आई ? उसे चिट्ठी मिलती है और उसमें लिखा रहता है कि आपकी नतिनी आपकी बहुत याद कर रही है तब यह इच्छा होती है कि पंख होते तो अभी उड़कर पहुँच जाते। यह प्रेम की रस्सी खींच रही है। प्रेम की रस्सी बहुत मजबूत होती है।

बन्धनानि खलु सन्ति बहूनि प्रेमरज्जुकृत बन्धनमन्यत् ।
दारुभेदनिपुणोऽपि षडंघ्रिः निष्क्रियो भवति पंकजमध्ये ।

फूलों के बीच में ऊपर गोल-गोल से अरे बने रहते हैं। उनके ऊपर रस रहता है। भौंरा अपनी सूँड उसमें डालकर उसका रस खींचता है। उसी में मकरन्द रहता है। उसी मकरन्द रस का पान करते-करते कमल में भौंरा इतना आसक्त हो गया कि पूरा दिन बीत गया और शाम तक उसी में फँसा रह गया। जब भगवान् मरीचि माली अस्ताचलगत हो गए तब अन्धकार होने के कारण कमल की पंखुड़ियाँ बन्द हो गईं और भौंरा उसमें

बन्द हो गया। अब भौंरा यदि चाहता तो लकड़ी में भी छेद करके बिल बना लेता है । कमल की पंखुड़ियों को काटने में उसको क्या देर लगेगी? लेकिन आसक्ति के कारण वह वहीं फँसा रह जाता है ।

आसक्ति छोड़ने के लिए सन्तों की शरण में जाना चाहिए । सन्त आपको भगवान् से जोड़ देंगे । संसार से प्रेम करोगे तो संसार के भोगों से आप जुड़ेंगे और सन्तों से प्रेम करोगे तो वे आपको भगवान् से जोड़ देंगे । इसलिए कहा है –**स एव साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम्।**

मोक्ष का खुला दरवाजा हो जाता है । इसीलिए उन्होंने कहा –

सतां प्रसंगान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धारतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ।

सत्पुरुषों की संगति से लोगों को भगवान् के स्वरूप का बोध हो जाता है । मनुष्य के मन में अशान्ति है तो वह देखता है कि हम जिन लोगों से घिरे हैं सब स्वार्थी हैं । सबका कोई न कोई स्वार्थ है । संसार में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो हमारा हितैषी हो। भगवान् श्रीकृष्ण गीता में बतलाते हैं –

सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ।

जो समस्त प्राणियों का सुहृद मुझको समझता है उसको शान्ति मिलती है । यह कैसे पता लगता है कि भगवान् सबके सुहृद हैं । वे बिना किसी स्वार्थ के सबका हित करते हैं । यह उस समय पता लगता है जब कोई व्यक्ति महापुरुषों से भगवच्चरित्रों का वर्णन सुनता है। जब वह सुनता है कि भगवान् कैसे दीनों का हित करते हैं ? कैसे निर्बलों के बल हैं? कैसे भगवान् गरीबों के यहाँ भी जाते हैं ? कैसे भगवान् शबरी के बेर स्वीकार करते हैं? सुदामा के तण्डुल को कितने प्रेम से वे खाते हैं । इन सबकी बराबरी कोई नहीं कर सकता।

कथा है कि एक औरत थी । उसके पति का नाम था ठनठन राय । लोग कहते थे कि यह ठनठन राय की औरत है । चिढ़ाते थे लोग । तो उसे अपने पति से ग्लानि हो गई। सोचने लगी कि अच्छे नाम वाला पति करेंगे। इसको छोड़ दें । घर से वह निकल गई । निकली तो देखा कि कुछ लोग एक शव को लेकर जा रहे हैं । उसने पूछा कि यह कौन है? लोगों ने कहा कि यह अमर सिंह है । उसने कहा कि नाम अमर सिंह और मर गए? लोगों ने कहा कि हाँ मर गए । फिर वह आगे बढ़ी तो देखा कि एक आदमी जंगल

में कण्डा बीन रहा था। उसने पूछा आपका नाम क्या है ? उसने कहा कि मेरा नाम धनपत राय है। बोली कि धनपत राय और कण्डा बीन रहे हो? फिर और आगे बढ़ी तो एक अन्धा दिखाई दिया। उसने पूछा कि तुम्हारा नाम क्या है ? तो वह बोला कि मेरा नाम नयनसुख है। तब वह बोली–

अमर सिंह को मरते देखा। कण्डा बीने धनपत राय।
नयनसुख तो नयन विहीने। भले बने मेरे ठनठन राय।।

लौटकर अपने घर आ गई। अपना सनातन धर्म ऐसा है कि हर जगह भक्त हुए हैं। आप भक्तमाल की कथा सुनिए। हर जाति में भक्त हुए हैं। हर श्रेणी में भक्त हुए हैं। चमार में रैदास हुए हैं, दर्जियों में नामदेव हुए हैं, कुम्हारों में कूबक हुए हैं, नाई में नन्दा हुए हैं। ऐसे आप देखते जाएँ तो जितनी भी भारत में जातियाँ हैं सबके यहाँ कोई न कोई भक्त हुआ है और भगवान् ने उनके ऊपर अनुग्रह किया है। भगवान् के यहाँ कोई भेद-भाव नहीं है। आपका जन्म कहीं भी हो गया हो पर आप भगवान् से अपना सम्बन्ध जोड़ सकते हैं। भगवान् से आप मिल सकते हैं।

अभी गंगा का प्रसंग चला था। गंगा में प्रदूषण नहीं होना चाहिए। लोग कहते हैं कि गंगा में कूड़ा न डालो, फूल न डालो आदि-आदि। एक ने कहा कि गंगा में कुम्भ का मेला नहीं लगना चाहिए क्योंकि कुम्भ में करोड़ों लोग आकर वहाँ स्नान करके गंगा को मलिन करते हैं। हमने कहा कि इसी के लिए तो गंगा है। गंगा ऐसी है कि जिसके कारण पूरे देश के लोग एक हो जाते हैं। लोग कहते हैं कि हिन्दुओं का कोई एक मन्दिर नहीं है, कोई एक देवता नहीं है। हमने कहा कि हिन्दू लोग यद्यपि अलग-अलग मन्दिरों में पूजा करते हैं और भिन्न-भिन्न उनके देवता भी हैं लेकिन कभी-कभी उनका मन्दिर एक हो जाता है। देवता भी एक हो जाता है। जब कुम्भ का मेला लगता है तो इलाहाबाद का जितना भी क्षेत्र है वह सब हिन्दुओं का मन्दिर हो जाता है। सब एक जाति के हो जाते हैं। सब लोग पर्वकाल में एक साथ डुबकी लगाते हैं। गंगा नहीं पूछती कि तेरा कौन वर्ण है, कौन जाति है, तू पापी है या पुण्यात्मा है ? गरीब है कि अमीर है ? जो डुबकी लगाता है उसका कल्याण करती है। जो लोग सबेरे-सबेरे स्नान करने जाते हैं उनके सामने सूर्यनारायण देवता प्रकट होते हैं। सूर्यनारायण को नारायण भी माना जाता है, गणेश भी माना जाता है, शक्ति भी माना जाता है और इन्हें भगवान् शंकर का शिवलिङ्ग भी माना जाता है। वह हमारा देवता हो जाता है। गंगा हमारी एकता का प्रतीक है। अस्तु।

भगवान् के ऊपर भरोसा रखना ही महत्वपूर्ण है। यदि आप भगवान् के भरोसे हैं

तो निश्चिन्त रहिये। जब भगवान् को देना होगा तो छप्पर फाड़कर देगा ।

एक स्त्री थी । पति निर्धन था । यह बात पत्नी को पसन्द नहीं थी । वह अपने पति को गाली देती थी। एक दिन वह पति घूमते हुए जंगल में पहुँचा । जंगल में उसको एक बावली दिखाई पड़ी । उसने देखा कि वहाँ सोने की मुहरों से भरे हुए कई हण्डे रखे हुए हैं । उसने कहा कि अच्छा हुआ कि हमको यह मिल गया । हम इन सबको ले जाएँगे तो हमारी गरीबी दूर हो जाएगी और हमारी स्त्री की इच्छा भी पूरी हो जाएगी। वह अपने घर में आया । रात का समय था । वह अपनी स्त्री से बात कर रहा था । उसी समय चोर उसके घर में चोरी करने आया था । वह कान लगाकर इन दोनों की बातें सुन रहा था । इसीलिए कहते हैं कि –

दिवा परीक्ष्य वक्तव्यम् रात्रौ नैव च नैव च ।

दिन में यदि कुछ बोलना हो तो परीक्षा करके बोलो कि कोई सुन तो नहीं रहा है। कभी-कभी जिसकी आप बुराई कर रहे होते हैं वही सामने रहता है । फिर लज्जा होती है कि अब हम क्या बोलें ? दिन में अच्छी तरह देखकर बोलो और रात में तो बोलो ही मत। न जाने कौन दरवाजे में और दीवाल में कान लगाए सुन रहा हो । वह चोर कान लगाए सुन रहा था कि जब इनकी नाक बजने लगे तब हम चोरी करें । पति अपनी स्त्री से कह रहा था कि देख कोई चिन्ता की बात नहीं है । हमने जंगल में एक बावली देखी है । वहाँ पर मुहरों से भरे हुए बहुत से हण्डे रखे हैं । हम उनको ले आएँगे तो तेरी गरीबी दूर हो जाएगी । चोर ने सुन लिया और सोचा कि यह ले आए इससे पहले क्यों न हम ले लें। चोर चला गया तो उसे बावली भी मिल गई और सारे हण्डे भी मिल गए लेकिन उनमें मुहरें नहीं बिच्छू दिखे। सोचा कि अरे वह तो बहुत बदमाश है । बिच्छू से कटवाने के लिए ऐसा बोल रहा था । अब हम इन बिच्छुओं से उसे कटवाएँगे । ऐसा सोचकर वह हण्डे उठवाकर लाया और उसका छप्पर फाड़ा और सारे हण्डे उडेल दिए। वे मुहरें ही थीं बिच्छू नहीं थे । छप्पर फाड़कर भगवान् ने उसे धन दे दिया । जब देना होता है तब भगवान् ऐसे दे देता है – **आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ !**

आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी सबकी इच्छा भगवान् पूरी करते हैं । सबके सुहृद हैं। इस बात का पता तब लगता है जब मनुष्य सत्संग में बैठता है । इसलिए सब काम छोड़कर थोड़ी देर के लिए सत्संग करना चाहिए । पर दुर्भाग्य कि लोग संसार के काम लगे ही रहते हैं ।

एक व्यक्ति घोड़े पर बैठा था । उसका घोड़ा प्यासा हुआ तो कुँए के पास ले गया।

पुराने जमाने में बैल से रेहट चलती थी। पानी निकल रहा था। घुड़सवार ने कहा कि हमारे घोड़े को पानी पिलाना है। जरा रेहट चला दो। उसने बैल जोड़ा और रेहट चलाई तो चैं चैं करने लगी। अब घोड़ा बिचकने लगा। वह बोला कि बन्द करो तुम्हारा चैं चैं। पानी बन्द हो गया। फिर चलाया तो फिर चैं चैं होने लगा। किसान बोला कि चैं चैं चूँ चूँ तो होता रहेगा। देखो अगर तुम्हें पानी पिलाना हो तो पिला लो। नहीं तो घोड़ा लेकर जाओ। कहने का तात्पर्य यह है कि गृहस्थाश्रम की चैं चैं चूँ चूँ तो लगी ही रहेगी। इनके रहते हुए भी थोड़ा सा समय निकाल कर भगवान् का नाम लेना चाहिए। सत्संग करना चाहिए –

जिन्दगी जब तक रहेगी। फुरसत न होगी काम से।
कुछ समय ऐसा निकालो। प्रेम कर लो श्रीराम से।।

बस इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं। थोड़ा सा भगवन्नाम संकीर्तन कर लें।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!
धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो।प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो।
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[7]

।। राम राम सात ।।

धर्मनिष्ठ पर ही लोगों को भरोसा

धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा । लोके धर्मिष्ठं प्रजाः उपसर्पन्ति ।।

यह वेद वचन है कि समस्त विश्व की प्रतिष्ठा, मर्यादा तथा रक्षा धर्म से होती है। इसलिए जो व्यक्ति धर्मनिष्ठ होता है प्रजा उसका आदर करती है । केवल आदर ही नहीं, अपितु उसका अनुकरण-अनुसरण भी करती है ।

बात यह है कि मानव जीवन में चार पुरुषार्थ हैं । अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष। अर्थ कहते हैं धन को। धन भी एक पुरुषार्थ है, क्योंकि हमें खाने के लिए भोजन चाहिए, रहने के लिए मकान चाहिए, तन ढकने के लिए कपड़ा चाहिए । यह सब अर्थ से मिलता है । इसलिए लोग अर्थ को पुरुषार्थ मानते हैं । दूसरा है काम। लोग चाहते हैं कि जब हम संसार में आए हैं तो खाने, पीने, सोने का आराम हमको मिलना चाहिए । यह काम हुआ । काम का सुख लोग चाहते हैं । फिर है मोक्ष । जब मनुष्य संसार में आता है, संसार के स्वरूप को देखता है कि यहाँ कुछ भी अविनाशी सुख देने वाला नहीं है तो वह यह चाहता है कि हमें अक्षय सुख की प्राप्ति हो। हमें धन से जो सुख मिलता है और काम से जो सुख मिलता है वह क्षणिक है । उस सुख के साथ दुःख भी मिला हुआ है। इसलिए ऐसा सुख चाहिए जिसका कभी अन्त न हो । जो अक्षय होते हुए भी सबसे अधिक हो। ऐसा सुख परमेश्वर की प्राप्ति से ही मिलता है । परमात्मा की प्राप्ति का ही नाम मोक्ष है ।

बीच में जो पुरुषार्थ है धर्म यह इन तीनों में सहायक है । जो व्यक्ति धर्म का अनुसरण करता है उसको इस जीवन में धन भी मिलता है, भोग भी मिलते हैं । आज संसार में जो विषमता है यह विषमता अकारण नहीं है । कोई सुखी है, कोई दुःखी है। भले ही मनुष्य कुछ भी करे लेकिन हम यह देखते हैं कि सब कुछ होने पर भी लोग दुःखी हो जाते है । बहुत धन इकट्ठा करने पर भी लोग सुखी नहीं हो पाते । बहुत भोग करने पर भी लोगों को सुख नहीं मिलता क्योंकि यह सभी सुख क्षणिक है । नित्य नहीं है । पर हमको जो भी मिलता है वह हमारे कर्म के अनुसार मिलता है । पूर्व जन्म में मनुष्य ने यदि धर्म किया है तो इस जीवन में उसको सफलता मिलती है । कई लोग ऐसे हैं जो

सोना उठाते हैं तो मिट्टी हो जाती है और कई ऐसे है कि मिट्टी उठाते हैं तो सोना हो जाता है। क्या कारण है ? कहना होगा कि इस प्राणी ने पहले जन्म में पुण्य किए हैं। इसलिए यहाँ उसको सफलता मिल रही है। जब आपको संसार का सुख मिलता है, धन मिलता है, भोग मिलते हैं, आपको जो उत्तम शरीर मिला है, स्वास्थ्य मिला है, बुद्धि मिली है यह सब भगवान् की कृपा से ही मिला है।

बहुत से लोग कहते हैं कि हम भगवान् का दिया नहीं खाते हैं। हम तो अपनी मेहनत का खाते हैं। हाथ-पैर चलाते हैं या अपने मस्तिष्क से, बुद्धिमत्ता से व्यापार करते हैं तो हमको धन मिलता है और हम उससे सुखी हो रहे हैं। इसमें धर्म का या भगवान् का क्या हाथ है ? लेकिन आज यह समझिए कि अगर आपके हाथ में ताकत न होती, आपके हाथ में लकवा लगा होता, मस्तिष्क आपका विकृत होता तो क्या कमा लेते आप? यह जो स्वस्थ शरीर है इनकी स्वस्थता किसकी दी हुई है ? आपका जो मस्तिष्क काम कर रहा है वह किसका दिया हुआ है ? किसकी कारीगरी है ? कहना होगा कि ईश्वर की है। लेकिन ईश्वर की यदि अकेले हम मान लें तो सबके साथ ईश्वर एक सा क्यों नहीं करता ? कोई सुखी है, कोई दुःखी है, कोई पागल है, कोई बुद्धिमान है, कोई मूर्ख है, यह विषमता क्यों है ? इसका उत्तर अपने यहाँ शास्त्रों ने दिया है –

कर्म प्रधान विस्व रचि राखा।
जो जस करे सो तस फल चाखा ।।

हमलोग यह मानते हैं कि यह संसार, यह शरीर पहली बार नहीं मिला है। इसके पहले भी हम थे। शरीर धारण करने का नाम जन्म होता है। आत्मा की मृत्यु कभी नहीं होती। शरीर की मृत्यु होती है। आत्मा सदा रहता है। किसने देखा आत्मा को जन्म लेते हुए ? किसने देखा आत्मा को मरते हुए ? आप कहेंगे कि हमने अमुक को मरते हुए देखा है। प्रश्न है कि शरीर को मरते देखा कि आत्मा को ? यदि व्यक्ति कहे कि मैंने अपने को जन्म लेते हुए देखा है तो तुम अगर न रहते तो जन्म होना कैसे देखते? पहले आप थे तभी न जन्म देखा। मृत्यु को भी आप देखते हैं। अगर आप हैं तभी तो मृत्यु को देखेंगे, अगर हैं ही नहीं आप तो मृत्यु को कैसे देखेंगे? आत्मा अजर-अमर है। उस आत्मा के द्वारा पहले जन्म में जैसे कर्म किए गए हैं उसके अनुसार इस जन्म में उसका फल मिलता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि इस जीवन में आपको बहुत बड़ा दुःख होने वाला है परन्तु यदि आप धर्म का आचरण करते हैं तो वह शूल का काँटा हो जाता है। धर्म थोड़ा सा बचा लेता है।

एक जमींदार थे । उनके दो लड़के थे । उनके गाँव से थोड़ी दूर पर एक शहर था। दो लड़कों में से एक धर्मात्मा था और दूसरा नटखट था । एक बार वहाँ एक महात्मा आए । बड़ा लड़का महात्मा के सत्संग में कथा सुनने जाने लगा । दूसरा एक नर्तकी का नाच देखने जाने लगा। दोनों अलग-अलग जाने लगे । पिता भी धार्मिक था। वह चाहता था कि दूसरा बेटा भी धर्म के अनुसार चले । लेकिन वह धर्म की हँसी उड़ाता था । भगवान् को भी नहीं मानता था । एक दिन बड़ा भाई लौटकर आ रहा था तो उसके पैर में कील गड़ गई । लोहे की कील पैर में आर-पार घुस गई । चलना बन्द हो गया । लोग टाँगकर उसे घर ले आए । बड़ा उपचार किया जाने लगा। दूसरा भी घर वापस आ रहा था । उसके पैर में ठोकर लगी तो उसने देखा कि एक सोने की ईंट थी । वह उसको लेकर आया । घर आकर उसने देखा कि बड़े भाई के पैर से तो खून निकल रहा है । वैद्य, डाक्टर उपचार में लगे हैं। कहा कि क्या रखा है धर्म में ? बड़े धर्मात्मा बनते हैं। भगवान् ने कहाँ बचाया तुमको ? देखो ! हम तो यह सब नहीं मानते । हमको चोट भी नहीं लगी और सोने की ईंट और मिल गई । धर्म कोई चीज नहीं है । पिता को बड़ा दुःख हुआ कि हाय ! हमारी सन्तान ऐसी अधार्मिक हो रही है । चिन्ता होने लगी । तभी वहाँ एक बहुत बड़े ज्योतिषी आए । उनसे उन्होंने पूछा कि महाराज ! यह कैसे हो गया ? तब ज्योतिषी ने दोनों की जन्मपत्री देखी और देखकर बताया कि जिस दिन तुम्हारे पुत्र को काँटा गड़ा उस दिन इसको शूली पर चढ़ने का योग था । वह मात्र काँटा बनकर रह गया क्योंकि वह सत्संग में जाता था । तुम्हारे दूसरे बेटे को राज्य मिलने वाला था लेकिन इसने पाप किए इसलिए राज्य की जगह केवल सोने की ईंट मिली । इसलिए यदि आपके सामने दुःख आता है तो उस दुःख को हल्का करने के लिए धर्म करना चाहिए । पाप से बचना चाहिए । यहाँ तक लिखा है कि –

त्रिभिर्वर्षैः त्रिभिर्मासैः त्रिभिःपक्षैः त्रिभिर्दिनैः ।
अत्युत्कटैः पुण्यपापैरिहैव फलमश्नुते ।।

अति उत्कट यदि पुण्य-पाप किए जाएँ तो पूर्व जन्म की अपेक्षा इसी जन्म में उसका फल मिल जाता है। तीन साल में, तीन महीने में, तीन पक्ष में और तीन दिन में उसका फल मिल जाता है । इसलिए पाप से बचना चाहिए । धर्म का आचरण करना चाहिए । धर्म क्या वस्तु है?

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिस्तद्धर्मः ।

जिससे हमारा लोक-परलोक में अभ्युदय हो और निःश्रेयस माने मोक्ष हो उसको

धर्म कहते हैं । हमारे साथ मरने के बाद यहाँ से कुछ भी नहीं जाने वाला है ।

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे नारी गृहद्वारि जनाः श्मशाने ।
देहश्चितायां परलोकमार्गे धर्मानुगो गच्छति जीव एकः ।।

धन जितना भी है वह सब यहीं रह जाएगा, बैंक का बैंक में ही रह जाएगा, जमीन में गड़ा है तो जमीन में ही रह जाएगा, तिजोरी में रखा है तो तिजोरी में ही रह जाएगा, लाकर में रखा है तो उसी में रह जाएगा । पशु गोष्ठ में रह जाएँगे । स्त्री घर के दरवाजे तक पहुँचा कर लौट जाएगी । स्वजन बन्धु-बान्धव श्मशान तक जाएँगे। शरीर चिता तक जाएगा । उसके आगे जो यात्रा होगी उसमें आपके साथ केवल आपका धर्म जाएगा ।

इसलिए माना जाता है कि मनुष्य का यदि कोई सच्चा मित्र है तो वह धर्म है। इसलिए धर्म का आचरण करने से अर्थ, काम और यदि निष्काम भाव से किया जाए तो उसमें मोक्ष की भी सिद्धि होती है । धर्म ही मनुष्य के लिए मुख्य है । उसी धर्म के प्रचार के लिए उसकी रक्षा के लिए भगवान् का अवतार होता है । उसके उपदेश के लिए, लोगों को परिनिष्ठित करने के लिए सन्त-महात्मा आते हैं और वे लोग ज्ञान का उपदेश करके लोगों को अच्छे रास्ते में लगाते हैं ।

अभी स्वामी जी ने करपात्री जी महाराज के बारे में बताया । उन्होंने भी बहुत परिश्रम करके सनातन धर्म की रक्षा के लिए कार्य किया । बहुत से ग्रन्थों की रचना की और श्रीविद्या का प्रचार किया । प्रायः जो देवी मन्दिर हैं उनमें बलिदान होता है । उस बलिदान को देखकर लोग देवी भक्ति से दूर होने लगे थे । राजराजेश्वरी देवी के लिए इस प्रकार के उपचारों की कोई आवश्यकता नहीं है । सात्विक उपचारों से ही माता राजराजेश्वरी देवी की पूजा होती है । इसलिए जगदम्बा की शरण में जाने में लोग हिचकते नहीं हैं । इससे लोगों को भी बहुत लाभ हो रहा है।

अभी आप लोगों ने शम्भु लाटा से यह गीत सुना –

लो संभालो प्रभो अपनी काँवड़ लुट गई मैं अभागन यहां पर ।

बड़ा ही करुण और शिक्षाप्रद आख्यान है यह । लोग आज भी भगवान् शंकर की बड़ी आराधना करते हैं । सावन का महीना भगवान् शंकर का महीना माना जाता है । यहाँ मध्य प्रदेश के लोग काँवड़ लेकर मादकपुर जाते हैं । इसी तरह से कई लोग बैन गंगा का जल लेकर गुरुधाम जा रहे हैं और यहाँ अपने परमहंसी गंगा क्षेत्र में कुछ लोग कांवड़ लेकर आ रहे हैं । पिछले श्रावण मास में आए थे । यह परम्परा डालनी चाहिए।

पैर भगवान् ने किसलिए बनाए हैं ?

चरण राम तीरथ चलि जाहीं ।
राम बसहु तिन्हके मन माहीं ।।

इन पैरों का उपयोग यही है कि इनसे चलो । धर्म कार्य के लिए चलो, भगवान् के दर्शन के लिए चलो । अच्छे काम के लिए चलो तो चलना ही पुण्य हो जाएगा । बस इतना ही कहकर अपना प्रवचन पूर्ण करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!
धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो ।प्राणियों में सद्भावना हो ।
विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[8]

।। राम राम आठ ।।

भगवान् सब प्राणियों के कर्मों के फल देने वाले हैं

भगवान् सब प्राणियों के कर्मों के फल देने वाले हैं । मानस में लिखा है –

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा । जो जस करहिं सो तस फल चाखा ।।

भगवान् ने जगत् को कर्म प्रधान रखा है । जो जैसा करता है वैसा उसको फल मिलता है । इसलिए बुद्धिमानों को कहा जाता है कि यदि आपको उत्तम फल चाहिए तो उत्तम कर्म कीजिए। उत्तम कर्मों से ही उत्तम फल की प्राप्ति हो सकती है ।

एक बार हमसे किसी ने प्रश्न किया कि पहले तो इतने अधिक धर्म के अनुष्ठान नहीं होते थे । कहीं-कहीं थोड़े-थोड़े लोग एकत्र होकर कथा-वार्ता भगवद्संकीर्तन किया करते थे । आजकल तो बहुत बड़ी मात्रा में हो रहा है । फिर भी कलियुग का प्रभाव क्यों बढ़ रहा है ? जहाँ हजारों की संख्या में श्रोता एकत्र होते हैं वहीं जूता चुराने वाले कहाँ से आ जाते हैं ? बात क्या है ?

हमने इसके उत्तर में बताया कि चार प्रकार के धार्मिक होते हैं । एक तो वे होते हैं जो यह मानते हैं कि उत्तम फल की प्राप्ति उत्तम कर्मों से ही हो सकती है। सत्फल की प्राप्ति सत्कर्म से ही होती है । आप यह कहें कि असत् कर्म करने वाला भी सत्फल प्राप्त कर लेता है तो यह सिद्धान्त गलत है । वैसे इस पर भी लोग कहते हैं कि महाराज! जो बेईमान है, दुराचार-अनाचार करते हैं वे तो हवाई जहाज में घूम रहे हैं और हमें बैलगाड़ी भी नसीब नहीं है । ईमानदारी में हम बैठे ही हैं । बहुत से लोग ऐसा कहते हैं। कोई व्यक्ति यदि ईमानदार है तो उसकी स्त्री और बच्चे ही कहते हैं कि तुमने हमारे लिए क्या किया? बड़े इमानदार बने हो । तुम्हारे रिटायरमेण्ट के बाद हमको रहने की भी जगह नहीं है। ऐसी कई बातें होती हैं । लेकिन हम यह पूछते हैं कि जो अनाचार-अत्याचार और दुराचार से आगे बढ़े हैं, हवाई जहाज में चढ़ रहे हैं क्या उनको सुख मिल रहा है ? आप चाहे बैलगाड़ी में चलें, चाहे साइकिल में चलें, चाहे मोटर साइकिल में चलें, अपनी गाड़ी से चलें, रेल से चलें, चाहे हवाई जहाज से चलें, सुख-दुःख का सम्बन्ध इनसे नहीं है । सुख-दुःख का सम्बन्ध मन से है । अगर आपका मन स्वस्थ नहीं है तो आप सुखी नहीं हो सकते ।

एक सेठ जी थे । पहले जमाने में लोग पालकी में चला करते थे । सेठ जी पालकी में बैठे थे और कहार उनकी पालकी ढो रहे थे । दो साधु खड़े थे । एक गुरु और दूसरा चेला। चेले ने कहा – गुरु जी ! सेठ जी कितने आराम से हैं, कितने सुख में हैं । ये कहार बेचारे पसीना-पसीना हो रहे हैं । इसकी पालकी ढो रहे हैं । गुरु ने कहा तुमने देखा तो पर क्या इस बात को सोचा कि जैसे-जैसे सेठ जी कचहरी के पास में आते जा रहे है उनको चिन्ता सवार हो रही है कि इन्कम टैक्स घटती है कि बढ़ती है । वे तो इस फिक्र में हैं और कहार पालकी उतारकर नीम की छाँव में टाँग पसार कर सोएँगे । इनको कोई लेन-देन की फिक्र नहीं है । सुखी कौन है ? हवाई जहाज में बैठने वाले भी सुखी नहीं है । वे भी परेशान हैं । कम से कम बैलगाड़ी वाले को तो केवल भोजन की समस्या है। उसको बस इतनी समस्या है कि किसी तरह अपना पेट भर लिया जाए । अन्य कोई झंझट उसके सामने नहीं है । लेकिन वे जो ऐश्वर्यशाली हैं । बड़े-बड़े उनके मित्र हैं और ऊँचे पद में हैं वे हमेशा चिन्तित रहते हैं । राष्ट्रपति बन गए, बनते समय तो उनको बड़ी खुशी होती है कि हम अब महामहिम हो गए । पाँच साल के बाद जब वे महामहिम के पद से उतारे जाते हैं । महल से उन्हें उनके छोटे घर में जब पहुँचाया जाता है तब उनके मन की क्या हालत होती होगी ?

आप देखिये कि मनुष्य अपने सामने अनेकों चिन्ताएँ ले लेता है । अपनी कोई चिन्ता नहीं है तो अपने परिवार की चिन्ता ले लेता है । यह भी नहीं तो परिवार के सम्बन्धियों की चिन्ता ले लेता है । इसी से उसको नींद नहीं आती । जितना जिसका संसार बढ़ता है उतना ही उतना वह दुःखी होता चला जाता है । कहते हैं कि पैसे से आपको रोटी मिल सकती है लेकिन भूख नहीं मिल सकती । पैसे से आपको बिस्तर मिल सकता है लेकिन नींद नहीं मिल सकती । उसके लिए तो चित्त की शान्ति चाहिए । शान्ति तब मिलती है जब मनुष्य दुष्कर्म से, दूसरों के उत्पीडन से, हिंसा से, दुर्भावनाओं से अलग होता है । जब सत्कर्म करता है तब उसको शान्ति मिलती है । शान्ति स्वार्थी को नहीं मिलती । शान्ति उसको मिलती है जो परमार्थ करता है, परोपकार करता है ।

एक बालक था । वह अपनी माता से बोला कि मैया ! संक्रान्ति का मौका आ रहा है। हम नर्मदा नहाने जाएँगे । माँ ने कहा – ठीक है जाओ । उसने चार लड्डू बनाकर एक पोटली बाँध दी और बेटे से कहा जाओ भूख लगे तो खा लेना । बालक नर्मदा के घाट में गया । वहाँ उसने स्नान किया । स्नान करने के बाद क्षुधा लगी । पोटली खोली। इतने में एक भूखा आ गया । उसने कहा – भाई ! हम तीन दिन से भूखे हैं, हमको भी कुछ दे दो। उस बालक ने उन चार लड्डुओं में से दो लड्डू उस भूखे को दे दिए और दो स्वयं

खा लिया। जब घर लौटकर आया तो माता ने पूछा कि बेटा ! मैंने चार लड्डू दिए थे तूने उनका क्या किया ? बालक बोला दो तो खा लिए और दो कूड़े में डाल दिए। माँ ने पूछा कि कूड़े में डाल दिए इसका क्या अर्थ हुआ? बोला कि मैंने जो भूखे को दे दिया समझ लो खा लिया और जो अपने पेट में डाल दिया समझो कूड़े में डाल दिया। मनुष्य सत्कर्म करे और वह भी निष्काम भाव से तो कहना ही क्या ?

हम लोग एक बार अमृतसर गए। जाड़े के दिन थे। बहुत जोरों की सर्दी पड़ रही थी। बहुत से लोग फुटपाथ पर सो जाते थे। जिनके घर नहीं थे, झोपड़ी भी नहीं थी और शरीर पर कपड़े भी नहीं थे वे ठिठुरकर मरने लगे। एक व्यक्ति रात को उठा और अपने गले में कम्बल टाँगे चुपचाप फुटपाथ पर सोने वालों को कम्बल ओढ़ाता चला गया। उनको जगाया नहीं कि हम तुमको कम्बल दे रहे हैं। बस ओढ़ाता चला गया। उन सबकी जान बच गई। वह सबसे कहने नहीं गया और न उसने अखबार में विज्ञापन दिया कि मैंने कम्बल दान किया है लेकिन उसको इस बात से बहुत ही सन्तोष हुआ जब उसने सुना कि जो बहुत से लोग फुटपाथ पर सोए थे उनके प्राण बच गए। ठण्ड से उनका त्राण हो गया।

कहने का अर्थ यह है कि जब मनुष्य सत्कर्म करता है तो जो उसको फल मिलता है वह फल सत्फल कहलाता है। सत्फल सच्ची कमाई का फल। सत्फल की प्राप्ति सत्कर्म से होती है। एक सिद्धान्त है जिसको लेकर आज संसार के लोग चल रहे हैं। आप देखिए सबके पीछे पुलिस नहीं लगी है फिर भी कुछ लोग चोरी नहीं करते हैं। सबके पीछे सीआईडी नहीं लगी है, कुछ लोग अपराध से बचते हैं। वे बचते हैं अपने धर्म के कारण। अपने विश्वास के कारण। मनुष्य को दुराचार से बचाने वाला कोई शासन नहीं है। वह तो केवल डरवाने के लिए होता है।

मनुष्य की रक्षा उसकी अन्तरात्मा करती है। उसका धर्म करता है। सोच लीजिए कि माँ-बाप मर चुके हैं। भाई-बहन एक ही घर में रहते हैं। एक साथ खाते हैं और एक ही बिस्तर पर सोते हैं किन्तु उनके मन में पाप नहीं आता। कौन है, जो उनको पाप से बचा रहा है ? कुत्ते-कुतियों को तो नहीं बचा सकता। जानवरों को नहीं बचा सकता। मनुष्यों को बचाता है क्योंकि मनुष्य के हृदय में धर्म है। धर्म जब तक रहता है तभी तक आप सुखी हैं। आप घर छोड़कर आ गए। कथा सुन रहे हो। स्त्री तुम्हारा सारा धन लेकर क्यों नहीं चली जाती? क्योंकि उसके हृदय में पातिव्रत्य धर्म है। आप बुढ़ापे में अपनी पत्नी को क्यों नहीं छोड़ देते ? क्योंकि आप जानते हैं कि जीवन भर इसने मेरी

सेवा की है । अब इसकी अवस्था को देखते हुए मेरा कर्तव्य है कि मैं इसकी रक्षा करूँ। यह जो मनुष्य के मन में धर्म की भावना है वह भावना उसको बुरे कर्मों से, अपराधों से बचाती है । दुष्कर्म से सत्फल नहीं मिल सकता और यदि कुछ लोग मौज कर रहे हैं तो हम लोग कहा करते हैं कि वे फाँसी के मुजरिम हैं । जिस मुजरिम को फाँसी की सजा हो जाती है उसको तीन बार डाक्टर देखने आता है । बढ़िया से बढ़िया भोजन कराया जाता है । उससे पूछा जाता है कि आपकी क्या इच्छा है । आप क्या खाना चाहते हैं ? अब कोई चोरी की सजा पाने वाला पूछे कि मुझे देखने डाक्टर क्यों नहीं आता ? मुझे जेल की अधपकी रोटी क्यों खानी पड़ रही है ? मेरी इच्छा के अनुसार भोजन क्यों नहीं मिलता? कोई भी कह देगा कि उसकी रोटी थोड़े दिनों की है । बाद में तो वह मर जाएगा और तुम तो सजा काटने के बाद बाहर निकलोगे तो आनन्द करोगे ।

कहने का मतलब यह है कि जिस व्यक्ति को पाप करके सुख का अनुभव हो रहा है वह फाँसी का मुजरिम है । मरने के बाद उसको न जाने कहाँ भगवान् भेज देंगे? किस योनि में जाएगा? किस नरक में जाएगा ? इसका पता नहीं । इसलिए कहते हैं कि–

तप से राज । राज ते नरका ।।

अर्थात् तप से राज्य होता है और राज से नरक होता है । सिद्धान्त यही है कि सत्कर्म से ही सत्फल की प्राप्ति होती है । इस विचार से जो लोग भगवान् की कथा सुनते हैं तो इससे उनको लाभ होगा । श्रवण भी एक पुण्य कार्य है । कई लोग कहते हैं कि प्रवचन होते हैं परन्तु हमें समझ में ही नहीं आता । क्यों नहीं आता ? एक तो बुद्धि मन्द है और दूसरी यह है कि कुछ लोगों को नींद आ जाती है । कथा शुरू हुई और उधर झपकी लेना शुरु किया ।

यह क्या बात है ? कुछ लोगों को लगता है कि हम कहाँ आ गए ? हमारे मित्र हमें यहाँ ले तो आए पर यह कब खत्म होगा और कब भागे यहाँ से । ऐसा सोचते रहते हैं । इसका कारण यह है कि मनुष्य का हृदय शुद्ध नहीं है । हृदय शुद्ध न होने के कारण उसकी समझ में नहीं आता है और उसको कथा अच्छी नहीं लगती है । उसको उसके माधुर्य का पता नहीं लग पाता । इसका उपाय क्या है ? उपाय यह है कि जैसे किसी को जीभ में पित्तदोष हो जाए तो उसको गुड़ भी कड़वा लगता है और मिश्री भी कड़वी लगती है । यदि उसको गुड़ दिया जाए तो थूक देता है और मिश्री भी नहीं लेता है । उसको नीम अच्छी लगने लगती है । नीम मीठी लगती है । जिसको साँप का जहर चढ़ता है उसको लोग नीम की पत्ती खिलाते हैं । उसको पूछो कि कैसी लगी तो कहेगा मीठी

लगी। तब समझो कि जहर चढ़ा है ।

मोह भुजंग डसत जब जाही । विषय निम्ब कटु लगत न ताही ।।

मोहरुपी भुजंग जिसको डस लेता है उसको विषयरूपी नीम कड़वी नहीं लगती। मीठी लगती है और मीठी चीज कड़वी लगती है । कथा कड़वी लगती है । ऐसी स्थिति में क्या करें? वैद्य लोग बतलाते हैं कि यदि जीभ में कड़वाहट आ गई है तो मिश्री खाओ। मिश्री खाते-खाते जीभ का पित्त दोष दूर हो जाएगा और सहज मधुरता का अनुभव हो जाएगा । कथा में यदि आपका मन नहीं लग रहा है या समझ में नहीं आ रहा है तो भी वहाँ बैठो। कान में अच्छे शब्द तो पड़ रहे हैं ।

कहते हैं जो श्रद्धावान् हैं, दोष दृष्टि से रहित हैं वे मुक्त होकर उत्तम लोकों को प्राप्त होते हैं । भगवान् की कथा को सुनने से भी लाभ होता है । यह सत्कर्म है । भगवत्कथा को सुन लो। सुनने से ही पुण्य होता है और उस पुण्य से आपको सत्फल की प्राप्ति होगी। इस भावना से बहुत से लोग भगवान् की कथा में आते हैं । जो उच्च विचार के लोग हैं वे यह चाहते हैं कि हमारे हृदय में भगवान् के प्रति प्रेम का उदय हो ।

प्रेम का उदय कब होगा ? जब मनुष्य भगवान् के चरित्रों का श्रवण करेगा । उनके स्वभाव को, शील को, गुणों को, चरित्र को जब वह जानेगा तब उसको उनके प्रति प्रेम होगा । क्योंकि विषय के सौन्दर्य ज्ञान से प्रेम होता है । जब किसी विषय के सौन्दर्य का ज्ञान हमको हो जाता है तब हमको उससे प्रेम होता है । भगवान् के केवल सौन्दर्य से ही नहीं, उनके शील से, उनके स्वभाव से, उनके चरित्र से जब हम परिचित हो जाते हैं तब उनसे स्वाभाविक रूप से हमें प्रेम हो जाता है । हम भगवान् की कथा इसलिए सुनते हैं कि कथा सुनते-सुनते प्रभु के चरणों में प्रीति हो जाए । क्योंकि मन कोई ऐसी वस्तु नहीं कि उसे पकड़कर कहीं भी लगा दो । किससे प्रेम होना है और किससे नहीं यह मनुष्य के चाहने से नहीं होता है। भगवत्कथा के श्रवण से भगवच्चरणानुराग की उत्पत्ति होती है । इसलिए लोग सादर भगवान् की कथा सुनते हैं । यह तो उत्तम कोटि के हो गए । मध्यम कोटि के लोग वे होते हैं जो सत्फल की प्राप्ति के लिए सकाम भाव से धर्म करते हैं । तीसरे वे होते हैं जिनसे बुरे कर्म हो जाते हैं । कोई खोटा कर्म अपने से हो गया और मन में ग्लानि हुई तो उसे अब कैसे मिटावें ? उस ग्लानि को मिटाने के लिए धर्म करते हैं । चलो भाई भागवत करा लो । बेइमानी से रुपया इकट्ठा किया है उसमें से कुछ पुण्य कर दो । बहुत से लोग अपने मन से ग्लानि मिटाने के लिए धर्म का आचरण करते हैं। कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनको ग्लानि नहीं होती लेकिन अधर्म करने के लिए आवश्यक

है कि लोग उनको धार्मिक समझें इसलिए चाल-चलन बनाने के लिए भी धार्मिक बन जाते हैं ।

अंग्रेजों के जमाने की बात है । मिलेट्री में चोरी होने लगी । रोज रिपोर्ट होती थी कि आज उसकी हो गई, आज इसकी हो गई । कोई बाहर का व्यक्ति तो आता नहीं था। कौन चोर है यह पता ही नहीं लगता था । मिलेट्री के कमाण्डर ने आर्डर दिया कि जो जिस हालत में है उसी हालत में बैरक से बाहर आ जाए । सब लोग बैरक से बाहर आ गए । सबको देखता हुआ वह गया । एक सिपाही खूब त्रिपुण्ड लगाए हाथ में माला लिए खड़ा हो गया और माला फेर रहा था । कमाण्डर ने पूछा क्या कर रहा है ? बोला कि हुजूर ! चाल-चलन बना रहा हूँ। समझ गए सब कि यही चोर है । तलाशी हुई तो सारा चोरी का सामान उसी के यहाँ मिला । बहुत से लोग इसलिए धर्म करते हैं जिससे लोग उनको धार्मिक समझें और वे चुपचाप अधर्म कर सकें । ऐसे लोग बढ़ रहे हैं जो धार्मिकता का स्वांग रच देते हैं । बहुत से लोग दलाल बन जाते हैं और वे ही बड़े-बड़े आयोजन करवाते हैं । ब्लैक मनी को व्हाइट करवाते हैं । बहुत से लोग ऐसे हैं जो बड़ी बुद्धिमत्ता से काम करते हैं ।

एक गाँव में किसी के घर में चोर आया तो घर वाले जाग गए । चिल्लाने लगे कि चोर-चोर । सारे लोग इकट्ठा हो गए । रात का समय था । तब चोर भी कहने लगा चोर-चोर । अब कौन चोर है पता ही नहीं । लोग इधर-उधर दौड़ने लगे कि कहाँ है चोर। चोर ने देखा कि एक आदमी के हाथ में टार्च है तो उसको डर लगा कि कहीं टार्च की रोशनी से हमको देख न ले तो उसने कहा कि लाओ टार्च जरा देखें तो कि कहाँ है चोर? और वह टार्च लेकर भाग गया । ऐसे लोग भी हैं ।

आजकल लोग भ्रष्टाचार का नाम ले रहे हैं । कहते हैं कि हम भ्रष्टाचार दूर करेंगे। दिल्ली में बैठे हैं लेकिन भ्रष्टाचार कहाँ है ? आप यहाँ आकर देखिए । ग्राम पंचायत का चुनाव हो, जनपद का चुनाव हो, एम.एल.ए. और एम.पी. का हो तो लोग शराब पीकर वोट देते हैं । रुपया लेकर वोट देते हैं । रुपया लेकर लोग प्रचार करते हैं । भ्रष्टाचार तो यहाँ हो रहा है । जब तक आप शराब पीकर वोट देते रहेंगे, जब तक आप रुपया लेकर वोट देते रहेंगे, आपको सच्चे प्रतिनिधि कहाँ से मिलेंगे ? आप कानून बनाकर कुछ लोगों को दण्डित करा सकते हैं, जेल भेज सकते हैं लेकिन जेल में भी भ्रष्टाचार है । वहाँ भी जो राशन का सामान जाता है आधे से ज्यादा जेलर खा जाता है । कैदियों को कम ही मिलता है । वह भी बुरा-बुरा मिलता है । भ्रष्टाचार की जड़ भीतर से है । जब

तक लोगों के अन्दर विवेक नहीं आएगा, धर्म की भावना नहीं आएगी तब तक दुराचार भ्रष्टाचार का अन्त नहीं है । यह सीधी सी बात है । आज आवश्यकता है कि हम धर्म की शरण में जाएँ और धर्म की शरण में वही जाएगा जो यह विश्वास करेगा कि हमको देखने वाला कोई है ।

एक महात्मा के पास दो व्यक्ति गए शिष्य बनने कि हमको भी साधु बना लीजिए। महात्मा ने दोनों के हाथ में एक-एक कबूतर पकड़ा दिया और बोले कि जहाँ कोई देख न सके वहाँ इसको मारकर लाओ । जहाँ कोई भी न देखता हो । एक महात्मा की कुटिया के पीछे गया और कबूतर की गर्दन मरोड़ दी । मारकर गुरुजी के सामने रख दिया कि लो महाराज ! जहाँ कोई नहीं देखता है वहाँ हम मारकर ले आए हैं । अब आप हमको चेला बना लीजिए । गुरुजी ने कहा कि दूसरे को भी आ जाने दो । दूसरा व्यक्ति गया कबूतर लेकर तो उसने देखा कि और कोई तो नहीं देख रहा है परन्तु सूर्यनारायण देख रहे हैं । रात को चन्द्रमा देखते हैं । पवन देखता है, गौ देखती है। कोई न कोई तो हमेशा देखता है । किसी एकान्त स्थान में चलना चाहिए । जहाँ जाए उसे कोई न कोई मिल ही जाए । वह अपने घर गया । किवाड़ बन्द किया तो वहाँ उसने देखा कि यह कबूतर है। इसको हमें मारना होगा । पर हम तो देख ही रहे हैं तो उसने आँख मूँद लिया । अब गर्दन मरोड़ने को तैयार हुआ तो उसने कहा कि मेरी अन्तरात्मा तो देख रही है । वह लौटकर आ गया । गुरुजी के सामने कबूतर रखा और कहा कि महाराज! चेला बनाओ चाहे मत बनाओ पर ऐसी कोई जगह नहीं मिली जहाँ कोई न देखता हो । जहाँ कोई नहीं देखता वहाँ हमारी अन्तरात्मा ईश्वर देखता है । उसकी बात सुनकर गुरुजी ने कहा कि चेला तुम ही बनोगे । इस नालायक को हटाओ । फिर अपनी योग शक्ति से गुरुजी ने उस मरे कबूतर को जिला दिया जिसे पहले व्यक्ति ने मारा था।

कहने का अर्थ यह है कि जब तक हम इस बात पर विश्वास नहीं करेंगे कि सब कर्मों को देखने वाला कोई है तब तक हम अधर्म करेंगे । कहते हैं कि अनन्तकोटि ब्रह्माण्डों में से एक ब्रह्माण्ड हमारा है । उसमें नौ द्वीप हैं । उनमें से जम्बूद्वीप । जम्बूद्वीप के सात खण्ड । उनमें से एक भरत खण्ड, भरत खण्ड में भारत वर्ष । भारत वर्ष में अनेकों प्रदेश हैं । उन प्रदेशों में एक प्रदेश है मध्य प्रदेश । उसमें कई जिले हैं । उन जिलों में एक है नरसिंहपुर जिला । उसमें कई गाँव हैं । वहाँ है श्यामनगर, परमहंसी गंगा । वहाँ जो बैठे हैं उनमें कई मनुष्य हैं, कई पशु हैं, कई पक्षी हैं । उनमें भी जो चीटी है सबसे छोटी । उसको जुकाम हुआ है । इस बात को भगवान् जानते हैं । सबके भीतर रहकर, सबको जानने वाला वह परमात्मा सर्वज्ञ है –

सर्वं जानाति इति सर्वज्ञः ।

जुकाम का अनुभव हो रहा है कि नहीं ? बुखार का अनुभव जिसको होता है वह आत्मा है । आत्मा क्षेत्रज्ञ है । सब क्षेत्रों का क्षेत्रज्ञ वही है । परमात्मा को मानने वाला ही धर्म का आचरण करेगा । हमें कोई न कोई देख रहा है । जो चुपचाप अँधेरे में दूसरों से नजर बचाकर अधर्म कर रहे हैं वे सबकी नजर से तो बच सकते हैं पर उसकी नजर से नहीं बच सकते ।

दो आँख वाले को धोखा दिया जा सकता है लेकिन जिसकी हजार आँखें हैं उसको धोखा नहीं दिया जा सकता । वह कौन है ? परमात्मा है –

कर्म प्रधान विस्व रचि राखा ।
जो जस करे सो तस फल चाखा ।।

बन्धु ! जब ऐसी बात है तो फिर हम उसकी शरण में क्यों न जाएँ ? भगवान् दयालु हैं। वे हमारी पीड़ा दूर करते हैं । कर्म के सिद्धान्त का उल्लंघन बिना किए करते हैं । इसलिए आप देखिए भगवान् ने द्रौपदी का चीर बढ़ाया। क्यों बढ़ाया और कैसे बढ़ाया? कथा है कि युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ था । राजा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में शिशुपाल नाम का एक राजा आ गया और वह भगवान् का निन्दक था । पहले जन्म में यही रावण था। उसके पहले हिरण्यकशिपु-हिरण्याक्ष, फिर रावण-कुम्भकर्ण फिर शिशुपाल-दन्तवक्त्र । यह उसका तीसरा जन्म था । वह भगवान् की बैर भाव से पूजा करता था । जन्म के समय ही इसकी चार भुजाएँ थीं । ज्योतिषियों ने यह बताया था कि जिसको देखकर इसकी दो भुजाएँ लुप्त हो जाएँगी उसी के हाथ से यह मारा जाएगा। भगवान् की फुआ का यह लड़का था । वह अपने पिता के यहाँ उस बालक को लेकर आई । वहाँ श्रीकृष्ण थे । उनको देखते ही उसकी चार में से दो भुजाएँ लुप्त हो गईं । फुआ जी बोली कि कृष्ण ! एक वचन दे कि मेरे बेटे को तू नहीं मारेगा । भगवान् बोले कि बुआजी ! यह वचन देता हूँ कि इसके सौ अपराध मैं सहूँगा । सौ से अधिक करेगा तभी मारूँगा ।

शिशुपाल जब बड़ा हुआ तो रोज भगवान् श्रीकृष्ण को सौ गालियाँ देता था । जैसे कोई विष्णु सहस्रनाम का पाठ करे वैसे ही । अब राजसूय यज्ञ में यह प्रश्न आया कि इतने बड़े-बड़े देवर्षि, ब्रह्मर्षि और राजर्षि आए हैं तो इस सभा में अग्रपूजा किसकी की जाए ? तब सहदेव जी बोले कि जब साक्षात् त्रिलोकीनाथ श्रीकृष्ण यहाँ विद्यमान हैं तो अग्रपूजा इन्हीं की की जाएगी । सोने का थाल आया । राजा युधिष्ठिर ने भगवान् के

अरुण चरणकमल थाल में रखे, द्रौपदी जल की झारी लेकर आई और युधिष्ठिर जब उनके चरणों का प्रक्षालन करने लगे तब भगवान् के स्वरूप को न जानने वाले जल उठे। भक्त लोग सब प्रेम से गद्गद हो गए कि हमारे प्रभु का सत्कार हो रहा है । शिशुपाल से यह सहन नहीं हुआ । उसने भगवान् को दुर्वचन कहना शुरू किया और गाली देने लगा। भगवान् गिनते गए । सौ गाली के बाद जैसे ही उसने एक सौ एकवीं गाली दी भगवान् ने अपना सुदर्शन चक्र चला दिया । शिशुपाल की गर्दन से सिर अलग हो गया। शिशुपाल मारा गया । भगवान् ने सुदर्शन चक्र चलाया तो उनकी अँगुली में थोड़ी सी खरोंच आ गई । उससे खून टपकने लगा । शिशुपाल को मारने के बाद जब भगवान् अन्तःपुर में गए तो वहाँ पर उनकी भी पटरानियाँ थीं । उन्होंने देखा कि भगवान् का खून बह रहा है तो लोग चिल्लाने लगीं कि कपड़ा लाओ, कपड़ा बाँधेंगे और सभी कपड़ा ढूँढ़ने लगी । द्रौपदी ने अपनी बहुमूल्य साड़ी फाड़कर भगवान् की अँगुली में बाँध दिया ।

इसी अँगुली में बाँधी साड़ी के टुकड़े के फलस्वरूप उन्होंने चीरहरण के समय उसका चीर बढ़ाया । भगवान् ने चीर बढ़ाकर भी अपने को ऋणी माना । इसलिए माना कि चीर बढ़ाकर तो हमने उसका फल दे दिया लेकिन द्रौपदी ने जो हमको पुकारा था उसका तो ऋण हम नहीं चुका पाए अभी तक ।

महाभारत में कथा आती है कि जब पाण्डवों के बनवास की अवधि समाप्त हुई और युद्ध की तैयारियाँ होने लगी । धृतराष्ट्र ने सुना तो संजय को सन्देश देकर युधिष्ठिर के पास भेजा गया । संजय ने युधिष्ठिर से कहा कि धृतराष्ट्र ने संदेश दिया है कि दुर्योधन हठी है, मानता नहीं है तुम्हीं मान जाओ और युद्ध मत करो। जैसे तुमने तेरह वर्ष वन में बिता दिए वैसे ही जीवन बिता दो । युद्ध का नाम मत लो । युधिष्ठिर बोले कि हमारे तो सर्वस्व भगवान् श्रीकृष्ण हैं । उनसे आप कहिए । संजय गए तो वहाँ अर्जुन बैठे थे । अर्जुन के पास द्रौपदी भी बैठी थी । भगवान् वहाँ पहुँचे तो संजय ने अपना प्रस्ताव रखा । अर्जुन ने भी कहा कि भगवान् हमारे सर्वस्व हैं। भगवान् से जब पूछा गया तो उन्होंने कहा कि –

ऋणमेतद् प्रवृद्धं में हृदयान्नापसर्पति ।

संजय ! मेरे ऊपर द्रौपदी का ऋण चढ़ा हुआ है । मैं उसको भुला नहीं पा रहा हूँ। चीरहरण के समय द्रौपदी ने मुझे गोविन्द कहकर पुकारा था । वह ऋण मेरे ऊपर चढ़ा हुआ है। चीर बढ़ाया उसका तो अँगुली में बँधे कपड़े का ऋण उतर गया लेकिन जो उसने उस समय गोविन्द कहकर पुकारा था, करुण विलाप करके पुकारा था वह अब भी मुझ

पर ऋण है । एक भगवान् ही हैं जो थोड़े में बहुत मानते हैं । आप थोड़ा भी धर्म करें भगवान् उसको बहुत मानते हैं । इसलिए लोग विपत्ति में उनका स्मरण करते हैं । सम्पत्ति के लिए भी उनका स्मरण करते हैं। उनसे सम्बन्ध जोड़ते हैं । अब हम आपको बताएँगे कि उनसे यदि स्वार्थ से भी सम्बन्ध जोड़ा जाए तो लाभ होगा । संसार के लोगों से सम्बन्ध जोड़ने की अपेक्षा भगवान् से सम्बन्ध जोड़ने से क्या लाभ होता है यह आप आगे सुनेंगे । आज यहीं प्रवचन पूर्ण करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!
धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो ।प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[9]

।। राम राम नौ ।।

सृष्टि के उत्पादक, पालक, संहारक भगवान् हैं

समुपस्थित सज्जनो, देवियो !

इस सृष्टि के उत्पादक, पालक, संहारक भगवान् हैं। जड़ वस्तु संसार का उत्पादक नहीं हो सकती क्योंकि हम जब संसार को देखते हैं तो सर्वत्र नियम दिखाई पड़ता है और प्रत्येक वस्तु की उपयोगिता प्रतीत होती है। हमारे शरीर को ही यदि हम लें तो शरीर के प्रत्येक अंग की उपयोगिता है। यह रचना किसी जड़ प्रकृति के द्वारा नहीं हो सकती। किसी चेतन के द्वारा ही हो सकती है और वह चेतन परमात्मा है। उस परमात्मा से ही इस जगत् की उत्पत्ति होती है। संसार की उत्पत्ति परमात्मा क्यों करते हैं ? उनका क्या प्रयोजन है ? उनको अपने लिए तो संसार की आवश्यकता नहीं है।

लोकवत्तु लीलाकैवल्यम् ।

केवल लीला ही उनका उद्देश्य हो सकता है और लीला भी बालकों की होती है। परमात्मा को लीला की क्या आवश्यकता है ? जीव प्रलय काल में निद्रा में पड़े हुए थे, परमार्थ से वंचित थे, उनको परमार्थ दर्शन कराने के लिए परमात्मा ने इस सृष्टि की रचना की। जैसे कोई माता जिसका बच्चा भोजन माँगते-माँगते सो गया हो तो वह उसे जगाकर भोजन देती है। बालक को माता ने कहा कि थोड़ी देर के बाद भोजन दूँगी। रो-रोकर वह बच्चा सो गया हो तो माता को उस बच्चे का कुम्हलाया चेहरा देखकर दया आ जाती है। जैसे ही उस माता के सामने कोई मधुर वस्तु आती है, चाहे पेड़ा, गुलाब जामुन या रसगुल्ला आ जाए वह चाहती है कि मैं इसे बच्चे को खिलाऊँ। उसको अपने लिए खाना जरूरी नहीं है पर वह बच्चे के लिए रखती है। उस बच्चे को उठाती है। बालक पैर पटकता है कि हमें मत उठाओ, हम सो रहे हैं। तब भी माँ उसको उठाती है और उस बच्चे के मुँह में मीठी वस्तु डाल देती है। उस मीठी वस्तु के स्वाद से जब बच्चे की आँखों में चमक आ जाती है तो माँ को सन्तोष होता है।

इसी तरह से यह जीव माया से आवेष्टित होकर पड़ा हुआ है। प्रलय काल में सो रहा है। भगवान् इसको उठाते हैं। उठाकर इसको मानव शरीर दे देते हैं। वैसे चौरासी लाख योनियाँ हैं। यदि उसके कर्म ऐसे हैं कि जिनके कारण उसको छोटी योनि में जाना

हो तो भी वे क्रमशः उन योनियों का भोग कराते हुए अन्त में मानव बनाते हैं–

बुद्धीन्द्रियमनःप्राणाः भूतानामाश्रयः प्रभुः ।
मात्रार्थञ्च भवार्थञ्च आत्मने कल्पनाय च ।।

लिखा है कि बुद्धीन्द्रिय माने ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, प्राण आदि सब परमात्मा ने सृजन किया जिससे कि यह देख सके, सुन सके, संसार में आ सके, व्यवहार कर सके, अपने सुख के साधनों को खोज सके। भगवान् इसको आँख, नाक, कान, जीभ, त्वक् इसलिए देते हैं कि इनके द्वारा यह परमात्मा का साक्षात्कार कर ले। परमात्मा के साक्षात्कार से ही इसके दुःखों की निवृत्ति हो सकती है क्योंकि इसके सामने जो जन्म-मरणरूप दुःख आया है उसी के चक्र में यह पड़ा है। प्रलय काल में भी उसके बीज बने रहते हैं। सर्वथा उससे मुक्त होने के लिए भी आवश्यक है कि वह परमात्मा का साक्षात्कार करे। संसार में जन्मना-मरना आदि के अतिरिक्त अनेकों दुःख जुड़े हुए हैं –

जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ।

जन्म लेने के पहले माता के पेट में नौ महीने रहना पड़ता है। सिर नीचे और पैर ऊपर कर पड़े हैं। माता यदि खट्टा-मीठा या कड़वा खा लेती है तो उसको जलन होती है पर वह कह नहीं सकता कि माँ मत खा। भीतर पड़े हैं। कोई ठिकाना भी नहीं कि बाहर निकल पाएँगे कि नहीं ?

निकल भी गए बड़ी मुश्किल से तो बाल्यावस्था आ जाती है। छोटा सा बालक करवट भी नहीं ले सकता। मच्छर काटते हैं तो हटा भी नहीं सकता। माथे में दर्द होता है तो माँ पैर सहलाती है। पैर में दर्द होता है तो माथा सहलाती है। अपना कष्ट बता नहीं सकता कि हमें कौन सा कष्ट है ? यही बाल्यावस्था है।

फिर उसके बाद जब थोड़ा बड़ा हो जाता है तो कईयों को अनेकों प्रकार के रोग हो जाते हैं। रोगों से ग्रस्त होकर अनेकों कष्ट पाता है। किसी को ज्वर हो गया, किसी को श्वाँस का रोग हो गया। किसी का हाथ गड़बड़ हो गया। इतने रोग हैं कि कोई ठिकाना ही नहीं। माता-पिता इलाज करते-करते थक जाते हैं पर रोगों का अन्त नहीं। उन रोगों का सामना करना पड़ता है। जैसे-जैसे समझ बढ़ती है वैसे-वैसे वह अपना संसार बनाता है। अपना संसार स्वयं रच लेता है।

एक होती है ईश्वर की सृष्टि और एक होती है जीव की सृष्टि। ईश्वर की सृष्टि तो हम लोग देख ही रहे हैं। अब जीव की अपनी एक अलग सृष्टि होती है। हमने अपने

सम्बन्ध बनाकर रखे हैं । हमारी स्त्री, हमारा बेटा, हमारा मित्र, हमारा शत्रु आदि-आदि अनेकों सम्बन्ध हमने बना रखे हैं ।

जीव सृष्टि और ईश्वर सृष्टि में अन्तर क्या है इसके लिए एक दृष्टान्त दिया गया है । दो लोग व्यापार के लिए परदेस गए । व्यापार में एक ने बहुत रुपया कमाया और दूसरे को घाटा लग गया । वह बीमार हो गया और बीमारी के कारण मर गया । जो जीवित था जिसने खूब रुपया कमाया था और जो मर गया था वे दोनों एक ही गाँव के रहने वाले थे । परदेस से कोई व्यक्ति उनके गाँव जा रहा था तो उसने खबर भेजी कि मेरे साथ वाले को घाटा लग गया तो वह बीमार होकर मर गया यह बता देना और हमारे घर में हमारी कुशलता का समाचार दे देना । सूचना देने वाला बदमाश था । उसने वहाँ जाकर उल्टा ही बोल दिया । जिसके घर का व्यक्ति मर गया था उसके घर जाकर कह दिया कि तुम्हारे घर का व्यक्ति बहुत सुखी है और व्यापार में खूब उन्नति कर रहा है। इस समय करोड़पति हो चुका है और कुछ दिनों में लौटने वाला है । सुनते ही उसके घर में बाजे बजने लगे और जिसके यहाँ के व्यक्ति ने रुपया कमाया था, जो जीवित था उसके यहाँ कह दिया कि वह मर गया। वहाँ रोना मच गया । ईश्वर की सृष्टि में वह जीवित है पर इनकी सृष्टि में वह मर गया । इस तरह से लोग अपनी सृष्टि बना लेते हैं।

आप समझिये कि जब तक मनुष्य छोटा रहता है, शादी नहीं होती तब तक उसके दो पाँव रहते हैं । शादी हो जाने के बाद चार पाँव हो जाते हैं । दो उसके और दो उसकी पत्नी के । उसके बाद एक लड़का हो जाए तो छः पाँव हो गए । छः पाँव भौंरे के होते हैं। इसीलिए उसको षड्पद कहते हैं । एक और बालक हो गया तो अष्टपद मकड़ी जैसे हो गए और भी पैदा हो गए तो बिजाई जैसे हो गए । आप लोग जानते ही हैं कि बिजाई किसको कहते हैं ? मनुष्यों की तो यह हालत है । इसे उसने स्वयं बनाया है । अपने ही बनाकर रो रहा है । जैसे कोसा का कीड़ा अपनी लार से घर बनाता है और उसी में घिर जाता है । ऐसे ही यह जीव संसार से घिरा है और परमात्मा को भूल गया। परमात्मा ने संसार में भेजा था कि जाओ संसार को यदि देखने की इच्छा है तो देख लो लेकिन यह जीव यहाँ से जो चला तो इतना अधिक उलझ गया कि उसको अपने स्वरूप का ध्यान ही नहीं रहा । यह पुनः तभी सुखी हो सकता है जब फिर वह परमात्मा की ओर उन्मुख हो जाए । उनको देखे, उनसे सम्बन्ध जोड़े, जो अपना सच्चा मित्र है उनसे सम्बन्ध जोड़े। जीव ने यहाँ संसार बनाया है यह संसार कब तक रहेगा ? जब तक यह शरीर जीवित है । जैसे ही जीवन का अन्त होगा सब यहीं के यहीं रह जाएँगे । न माता है, न पिता है, न भाई हैं, न बन्धु हैं, न स्त्री है, न पुत्र है । सब के सब यहीं छूट जाएँगे। अकेला

वहाँ जाएगा । अकेला जाने के बाद फिर कहीं जन्म लेकर दुनिया बनाएगा । यह तो भगवान् की कृपा है कि वे पहले जन्म की याद वे भुला देते हैं ।

एक व्यक्ति हमको द्वारका में मिला । उसने कहा कि महाराज ! हमको पूर्व जन्म का स्मरण होता है । हमारा जन्म राजकोट में हुआ है और यहाँ द्वारका में हम पहले जन्म में थे । हमको अपने पहले जन्म की याद आती है । हमें यहाँ की भी माँ दिखती है और वहाँ की भी माँ दिखती है । यहाँ की भी स्त्री दिखती है और वहाँ की भी दिखती है । यहाँ के भी बेटे दिखते हैं और वहाँ के भी दिखते हैं । हम परेशान हैं कि किनकी तरफ देखें।

आप कल्पना कीजिए कि यदि किसी को दस जन्म की याद आ जाए तो वह तो विक्षिप्त हो जाएगा । वह अकेला किसका-किसका दुःख देखेगा ? परेशान हो जाएगा । इसलिए भगवान् एक पर्दा डाल देते हैं कि इसे पहले जन्म की याद न आए । लेकिन इसने जो जीव सृष्टि बनाई है यह यहीं रह जाएगी और फिर वह दूसरी सृष्टि बनाएगा । फिर उसको छोड़ेगा । छोड़ते समय उसको बहुत दुःख होगा कि हम इसको छोड़कर जा रहे हैं, अब यहाँ क्या होगा ? ऐसी स्थिति में जो बुद्धिमान लोग हैं वे ऐसे भगवान् से सम्बन्ध जोड़ते हैं कि जिनसे कभी वियोग न हो । वे अन्य सब कुछ छोड़ देंगे ।

मन पछतैहसि अवसर बीते ।
सुत वित नारि तजहु स्वारथ रत नेह करहु इनहीं ते ।
अन्तहुँ तोहें तजेंगे पामर तू न तजे अबहीं ते ।।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं कि अन्त में सब तुझको छोड़ देंगे । पहले से ही तू आसक्ति छोड़ दे । छोड़ने का मतलब ? कौन बँधा है किसके साथ ? अपने साथ जो आसक्ति बना रखी है उसी को छोड़ना है ।

कहते हैं कि एक जाट था । उसकी स्त्री बड़ा ही कलह करने वाली थी । वह सदा यही धमकी देती थी कि हम तुमको छोड़कर चले जाएँगे । जाट सोचता था कि हमारी स्त्री यदि हमको छोड़कर चली जाएगी तो हमारी बड़ी बदनामी हो जाएगी । लोग सोचेंगे कि यह कैसा नालायक है कि इसकी स्त्री इसको छोड़कर चली गई । वह स्त्री को समझाता था कि मान जा । कोई तकलीफ है तो दूर कर दूँगा लेकिन वह थोड़ी देर मानने के बाद फिर यही कहती थी कि हम तुमको छोड़कर चले जाएँगे । एक दिन उसने साफ कह दिया कि अब तू कुछ भी कर मैं तुझको छोड़कर कल चली ही जाऊँगी । अब जाट अपने मकान की छत पर चढ़ा और बोला – ऐ गाँव वालों ! सुनो! मेरी औरत बहुत खराब

है । हमने इसको छोड़ दिया है । उसको तो छोड़कर जाना ही था लेकिन इसने पहले ही छोड़ दिया तो इसकी इज्जत रह गई ।

कहने का अभिप्राय यह है कि जन्म-मरण के साथ गर्भावस्था आई, फिर बाल्यावस्था आई, फिर युवावस्था में मनुष्य ने संसार बना लिया । थोड़े ही दिनों के बाद वृद्धावस्था आ गई। वृद्धावस्था आने पर शरीर में नाना प्रकार के रोग हो गए, शोक हो गए और अन्त में मरने के पहले रोग हो जाता है । रोग की निवृत्ति के लिए डाक्टरों, वैद्यों के पास जाओ तो वे बड़ी कड़वी दवाई पिलाते हैं । कहते हैं यह खाओ और यह मत खाओ और इन्जेक्शन लगाते हैं । खूब बचाने की कोशिश करते हैं । लेकिन एक दिन तो मरना ही पड़ता है । मरने के बाद यदि पाप करके गए हैं तो वहाँ पर यमराज का डण्डा है । ऐसा नहीं है कि आप वहाँ चले गए तो सुरक्षित हो गए । वहाँ एक-एक कर्म को जानने वाला है जिसे चित्रगुप्त कहते हैं । वे जानते हैं कि क्या-क्या करके गए हो। यहाँ की अदालत में यदि किसी केस में आप फँस जाओ तो झूठी गवाही से छूट जाओगे लेकिन वहाँ पर झूठी गवाही नहीं चलेगी । वहाँ तो चित्रगुप्त पूरा दिखा देगा । यह आप भी समझ सकते हो कि दूसरा कोई जाने या न जाने आप स्वयं तो जानते ही हैं कि आपने क्या-क्या किया है ? आपका किया ही वहाँ पढ़ दिया जाएगा । वहाँ फिर नरक का भोग भोगना पड़ेगा। मरने के बाद यही कष्ट है वहाँ ।

जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ।

कुछ लोग ऐसे हैं जो पुण्य करते हैं । मनुष्य शरीर प्राप्त करके अच्छे कार्य करते हैं । दान-पुण्य करते हैं, तप करते हैं तो सत्कर्म करने से उनको सन्तोष होता है और मरने के बाद उसको उत्तम लोक की प्राप्ति होती है । उसको फिर नरक में नहीं जाना पड़ता । जो धर्मात्मा होता है उसको उत्तम लोक की प्राप्ति होती है । उसके लिए विमान आता है। एक दोहा है –

आया है सो जाएगा राजा रंक फकीर ।
कछू विमानन चढ़ चले कछू बँधे जंजीर ।।

जो भी आया है वह एक दिन जाएगा अवश्य । चाहे वह राजा हो, रंक हो या फकीर हो उसे जाना ही पड़ेगा । बुन्देलखण्ड के लोग गाते हैं-

लट्टो लगे चाहे नोनो जू गोनो तो एक दिन होनो जू ।
आए लेवउआ लौटत नइहाँ चाहे तौल दो सोनो जू ।
भीतर गोरी माँग सँवारे बाहर हो रहो रोनो जू । लट्टो लगे चाहे नोनो जू

पहले जमाने में छोटी अवस्था में ही विवाह हो जाता था। गौना बाद में होता था। ससुराल वाले आकर बोलते थे कि हम बहू को ले जाएँगे तो मायके वाले कहते थे कि अभी बच्ची है। कुछ देकर लौटा देते थे। यहाँ इस गीत में लेवउआ यमराज है। जीव शरीर से निकलने की कोशिश में है जैसे बहू अपने ससुराल जाने वाली हो। वह भीतर अपनी माँग सँवार रही है कि मृत्यु के समय वह अच्छी भावना से मरे।

मरने से नहीं डरना चाहिए बल्कि मरना सीखना चाहिए। यह महात्माओं का कहना है। एक दिन तो सबको मरना पड़ेगा ही लेकिन यदि मृत्यु के समय आप भगवान् का स्मरण करते हुए मरेंगे तो आपको उत्तम गति प्राप्त होगी।

अन्तकाले या मतिः सा गतिर्भवेत्।

अन्तकाल में जैसी मति होती है वैसी गति जीव की होती है। आपने श्रीमद्भागवत में सुना होगा कि पुरञ्जन अपनी स्त्री का चिन्तन करते हुए मरा तो दूसरे जन्म में पुरञ्जनी हो गया। वह स्त्री बन गया। राजा भरत हरिण का ध्यान करते-करते मरे तो दूसरे जन्म में वह हरिण योनि में पहुँच गए। गीता में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–

यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

इसका अर्थ है कि जिस-जिस भाव का स्मरण करता हुआ प्राणी अपने शरीर का त्याग करता है वह उसी-उसी को प्राप्त हो जाता है। इसलिए हमारे भारत के लोग मृत्यु से डरते नहीं है बल्कि मृत्यु को संभाल लेते हैं।

कैसे मरना चाहिए यह हमारे भारत के पशु-पक्षी भी बता देते हैं। जब रावण सीता जी को हर कर ले जा रहा था तब सीता जी करुण विलाप कर रही थीं। जटायु भगवान् राम को अपना पुत्र मानता था। सीताजी को विलाप करते हुए देखकर उसने रावण को ललकारा –

सीते पुत्रि करसि जनि चिन्ता।

बेटी सीते ! त्रास मत कर। इस राक्षस का मैं नाश कर दूँगा। चोंच से, पंखों से, पंजों से रावण का शरीर विदीर्ण कर दिया। काला-काला रावण का शरीर लाल हो गया। जैसे कज्जल की पहाडी चोटी से गेरू के पनारे निकलते हैं वैसे ही रावण का शरीर खून-खून हो गया। तुलसीदास जी ने उपमा दी है। अन्त में उस दुष्ट ने खड्ग लेकर जटायु के पंख काट दिए। बिना पंख के जटायु तड़पता रह गया और रावण चला गया।

फिर भी भगवान् श्रीराम को सन्देश देने की उत्कट भावना से मरणान्त कष्ट को सहते हुए भी उसने अपने जीवन को बचाए रखा। जब भगवान् श्रीराम सीता जी को खोजते-खोजते वहाँ पहुँचे तो उन्होंने वहाँ जटायु को देखा कि वह खून से लथपथ है। जटायु ने कहा–

नाथ दसानन यह गति कीन्ही। तेहि खल जनकसुता हरि लीन्ही।।

हे नाथ ! मेरी यह दशा दशानन ने की है और उस दुष्ट ने जनकसुता का हरण कर लिया है। भगवान् श्रीराम अत्यन्त द्रवित हो गए और जटायु को अपनी गोद में ले लिया। कवियों ने तो यहाँ तक कहा है कि जटायु का शरीर धूल-धूसरित हो गया था – **जटायु की धूल जटान सो झारी।**

अपनी जटाओं से उसके शरीर की धूल को झाड़ा। उसे अपनी गोद में ले लिया और कहने लगे कि तात! कुछ दिन जीवन धारण करो। जटायु को भगवान् ने तात कहा। अब आप सोचिए भगवान् श्रीराम ने उन्हें यहाँ तक कहा कि मैं पितृ सुख से वंचित हूँ। मेरे पिता चले गए हैं। मैं उनसे वंचित हो गया हूँ। तुम यदि जीवित रहोगे तो मैं तुम्हारी सेवा करके पितृ सुख का अनुभव कर लूँगा इसलिए कुछ दिन जीवित रहो। जटायु बोला कि महाराज ! अब मैं जीवित नहीं रहना चाहता। कहा कि –

समर मरण अरु सुरसरि तीरा। राम काज क्षण भंग शरीरा।।

मनुष्य की सद्गति के लिए समर में मरण पर्याप्त है। सुरसरि तीरा क्यों कहा? यह स्थान तो दण्डकारण्य है। लेकिन जिन चरणों से सुरसरि निकली है उसके तीर तो हूँ। राम का कार्य करते हुए मर रहा हूँ इसलिए हे नाथ ! अब हमें रोकिये मत। जाने दीजिये।

जटायु ने पितृत्त्व का त्याग कर दिया और मृत्यु को सुधार लिया। ऐसा मौका फिर नहीं आएगा कि भगवान् की गोद में बैठकर मरना हो। दशरथ इनके पिता थे। जिन्होंने इनको जन्म दिया वे इनके बिना तड़प-तड़प कर मर गए। मरते समय राम का दर्शन उन्हें नहीं हुआ। मैं उनका पिता भले ही नहीं हूँ लेकिन आज मृत्यु के समय उनका दर्शन कर रहा हूँ। इसलिए मैं अब अपने जीवन को धारण नहीं करना चाहता। मैं मरना ही चाहता हूँ।

ऐसी ही कथा बालि की है। बालि के सम्बन्ध में भी यही बात आती है कि बालि और सुग्रीव दोनों भाई थे। दोनों परस्पर बड़े प्रेम से रहते थे। एक मायावी महासुर दैत्य

आया और उसने बालि को लड़ने के लिए ललकारा। बालि जब लड़ने के लिए आया तो वह एक गुफा में जाकर छुप गया। बालि ने सुग्रीव से कहा कि एक महीने तक देखना। यदि मैं लौटकर न आऊँ तो समझ लेना कि मैं मर गया। एक मास तक सुग्रीव वहाँ रहा लेकिन बाली गुफा से बाहर नहीं निकला। गुफा के भीतर ही दोनों का मल्ल युद्ध होता रहा। अन्त में रुधिर की धारा बहकर गुफा के बाहर आने लगी तब सुग्रीव को डर लगा और वह वहाँ से भाग गया। उसको चाहिए था कि वह वहीं रहता।

वह केवल वहाँ से भागा ही नहीं, अपितु एक बड़ा पत्थर भी उसने गुफा के बाहर रखकर गुफा का मुख बन्द कर दिया जिससे कि वह दानव गुफा से बाहर न निकल पाए। जबकि भीतर दानव मर चुका था और बालि जीवित था। बड़ी कठिनाई से बालि लौटकर आया। इधर क्या हुआ कि सुग्रीव के आने पर मन्त्रियों ने उसको सिंहासन दे दिया तो अब सुग्रीव राजा बन गए। बालि जब लौटकर आया तो देखा कि अच्छा ! गुफा में हमको बन्द करके अब राजा बने बैठे हो।

दोनों को ही भ्रम था। बालि बलवान् था। सुग्रीव को मारने के लिए बालि दौड़ा। सुग्रीव जहाँ जाए वहीं बालि भी उसे मारने पहुँच जाए। एक ऋष्यमूक नाम का पर्वत था वहाँ एक ऋषि रहते थे। उनके यहाँ आकर एक अजगर ने उपद्रव किया था तो उन्होंने शाप दे दिया था कि यदि यहाँ कोई आएगा तो मारा जाएगा। बालि वहाँ नहीं जाता था परन्तु सुग्रीव वहाँ पर छुपकर रहता था। वहाँ भगवान् श्रीराम से सुग्रीव की भेंट हुई। हनुमान जी ने दोनों की मित्रता करा दी। लम्बी कथा है। विस्तार में हम नहीं जाएँगे। हमको मूल बात बतानी है कि अग्नि को साक्षी मानकर भगवान् के साथ सुग्रीव की मित्रता हो गई –

समानशीलव्यसनेषु सख्यम् ।

जिनका समान शील अर्थात् स्वभाव हो, समान व्यसन हो उनमें मित्रता हो जाती है। जो कष्ट भगवान् श्रीराम को था वही कष्ट सुग्रीव को भी था। दोनों को पत्नी वियोग था तो दोनों की मित्रता हो गई। अब भगवान् ने कहा कि ठीक है। हम बालि को मार देंगे। तुम्हारा कष्ट मिटा देंगे। तुम्हारी स्त्री तुमको मिल जाएगी –

बालि तो बहुत वीर है। उसने कहा कि बाली को वही मार सकेगा जो दुन्दुभी अजगर के अन्दर से जो ताल निकले हैं सात की संख्या में। एक बाण से जो सातों को गिरा देगा वही बाली को मार सकता है। भगवान् ने गिरा दिया। भगवान् ने जब तालवृक्षों को गिरा दिया तब सुग्रीव के मन में वैराग्य हो गया। कहने लगा –

बालि हमारा परम हितैषी है। यदि बालि हमको कष्ट न देता तो आप हमको कैसे मिलते? यह लड़ाई तो स्वप्न के समान है। हम किसी से बैर नहीं करेंगे। भगवान् ने सोचा कि हमसे बालि वध की प्रतिज्ञा करा ली और स्वयं अपने विरक्त हो गया। यह मरघट वैराग्य कहलाता है। मरघट वैराग्य किसे कहते हैं ? लोग जाते हैं मृतक के साथ श्मशान में तो जब तक शव जलता रहता है तब तक कहते हैं कि जीवन का कोई ठिकाना नहीं है। देखो कल तक यह बातचीत कर रहा था। विश्वास ही नहीं होता कि यह मर गया है। लेकिन आज यह चला गया। संसार में बस राम नाम ही सत्य है। अन्य सब कुछ असत्य है। फिर थोड़ी देर बाद शादी व्याह की चर्चा होने लगती है। वहीं संसार के व्यवहार होने लगते हैं। यही मरघट वैराग्य है। मार पड़ती है तो चोर भी थोड़े दिन के लिए विरक्त हो जाते हैं। उसके बाद फिर वहीं जाते हैं। सुग्रीव को भी ऐसे ही मरघट वैराग्य हो गया। भगवान् ने कहा कि देखो ! हमने जो प्रतिज्ञा की है वह झूठी नहीं हो सकती। तुमको तो बालि से अब लड़ना ही पड़ेगा। सुग्रीव ने बालि को ललकारा। बालि ने सोचा कि अरे ! यह सुग्रीव जो हमसे डरकर भागा फिरता था वह हमको ललकार रहा है। अभी इसे देखता हूँ। तारा को गुप्तचरों से पता लग गया था कि सुग्रीव भगवान् श्रीराम से मिल गया है। श्रीराम तो अतुलितबलधाम हैं। उन्हीं के बल पर सुग्रीव ललकार रहा है यह जानकर तारा ने बालि को रोका पर उसने माना नहीं।

बालि अभिमान में चला और सुग्रीव के साथ युद्ध करने लगा। अब बालि ने अपनी खूब चतुरता दिखाई। युद्ध कौशल दिखाया और फिर ऐसा मुक्का बालि ने मारा कि सुग्रीव उसे सह नहीं सका। भागकर आ गया और कहने लगा – **बन्धु न होइ मोर यह काला।**

यह बन्धु नहीं है। यह मेरा काल है। भगवान् बोले कि हम यही सुनना चाहते थे। तुम तो कहते थे कि परम हितैषी है। अब भगवान् ने सुग्रीव के गले में माला डाल दी। उस पर हाथ फेर दिया तो सुग्रीव के शरीर का सारा दर्द दूर हो गया। फिर सुग्रीव ने ताल ठोंका –

तब नाना विधि होई लराई। विटप ओट देखहिं रघुराई।।

दोनों की नाना प्रकार से लड़ाई होने लगी। भगवान् रघुनाथ वृक्ष की ओट से देखने लगे। कुछ लोग कहते हैं कि बालि को यह वरदान था कि जो उसके सामने युद्ध करने के लिए जाता था उसका आधा बल बालि का हो जाता था। इसलिए बालि के सामने वाला निर्बल हो जाता था। लेकिन भगवान् श्रीराम के ऊपर यह बात लागू नहीं हो सकती

क्योंकि आधा तो उसका होगा जिसकी कोई सीमा होगी । वे तो अतुलित बल के स्वामी हैं । जिनका बल अतुलित है । जिनका गुणा भाग नहीं हो सकता ऐसा बल जिनका था उनका बल आधा कैसे हो सकता है ?

दूसरी बात यह थी कि सुग्रीव को अभी अपने बल का घमण्ड था । सोचता था कि हम अपनी कला-कौशल से बालि को हरा देंगे । बालि ने पटक कर बन्धक बना दिया। हाथ पीछे बाँधकर हाथ से मुक्का मारने चला। मुक्का मारते ही सुग्रीव के प्राण चले जाते। भगवान् ने सोचा कि जब तक हम बाहर निकल कर ललकारेंगे तब तक तो सुग्रीव मर ही जाएगा इसलिए वहीं से बाण मार दिया । बालि की छाती में भगवान् का बाण लगा। भगवान् क्रुद्ध हो गए । लाल लाल आँखें किए बालि के सम्मुख गए ।

हृदय प्रीति पर वचन कठोरा । बोला चितइ राम की ओरा ।।

हृदय में भगवान् राम के प्रति प्रीति थी । वह उनके महत्त्व को जानता था पर ऊपर से कठोर वचन बोला। उसके सभी प्रश्नों का समाधान श्रीराम ने किया । और यहां तक भी कहा कि अचल करहु तन राखउँ प्राणा । अर्थात् अपने शरीर को स्थिर करो । हम तुम्हारे प्राणों की रक्षा कर देते हैं । पर बालि ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। उसने कहा कि अन्त में यदि राम का नाम भी जिह्वा पर आ जाये तो कल्याण हो जाता है तो फिर स्वयं श्रीराम जिसके अन्त समय में सामने खडे हों वह जीना क्यों चाहे ? इससे उत्तम अवसर मुझे मरने का नहीं मिल सकता । अतः अब तो आप यूँ ही दर्शन देते रहिये । हम चले ।

ऐसा कर बालि ने अपना अन्त बना लिया । भगवान् में मति लग जाये तो व्यक्ति का कल्याण अवश्य होता है । आज इतना ही । दो चार बार भगवन्नाम संकीर्तन करिये फिर विराम ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो ।प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो

गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो

हर हर महादेव !

—*—

[10]

।। राम राम दस ।।

शास्त्रीय विधि-निषेध ही धर्म

समुपस्थित सज्जनो ! देवियो !

आज संस्कृत दिवस है । भगवान् हयग्रीव का अवतार दिवस भी है । संस्कृत क्या वस्तु है और उसका क्या उपयोग है; इसके सम्बन्ध में आपने अभी सुना । हमारे वेद, वेदांग, स्मृतियाँ, पुराण और रामायण-महाभारत यह सब संस्कृत में है । संस्कृत के ही माध्यम से हम अपनी प्राचीन परम्परा और दर्शन को समझ सकते हैं और परम्परा से जो ज्ञान प्राप्त होता है उसी पर हमारी श्रद्धा और आस्था दृढ़ हो सकती है ।

आज स्थिति यह है कि बहुत से पंथ निकल रहे हैं । कई प्रकार के लोग खड़े हो जाते हैं और कहते हैं कि मैं जो कहता हूँ वह सर्वश्रेष्ठ है और मेरे कथनानुसार आपलोग चलिए । ऐसे बहुत से लोग अपना पंथ निर्माण कर लेते हैं और कुछ लोगों को अपना अनुयायी बनाकर उनको अपने पीछे चलने के लिए प्रेरित करते हैं। वस्तुतः व्यक्ति का अनुसरण अगर हम आप करें तो व्यक्ति में अनेकों दोष होते हैं । वह एक तो भ्रमित भी हो सकता है। प्रमाद भी उसमें हो सकता है । उसकी समझ में कमी हो सकती है और उसके मन में लोगों को मूर्ख बनाने की भी भावना हो सकती है । तो व्यक्ति पर विश्वास नहीं किया जा सकता ।

हमलोग अनादि अपौरुषेय वेद जो किसी व्यक्ति के द्वारा निर्मित नहीं है, जिनको निर्माण करने वाला कोई नहीं है उस पर विश्वास करते हैं । हमलोग यह मानते हैं कि ऋषियों ने वेदों का निर्माण नहीं किया, अपितु वे उन-उन वेद मन्त्रों के द्रष्टा हैं । उनके मन में उस समय उन-उन वेद मन्त्रों का स्फुरण हुआ । इसलिए जो लोग सन्ध्या करते हैं, वेद मन्त्र का पाठ करते हैं वे यह देखते हैं कि एक मन्त्र के अनेक ऋषि होते हैं । यदि एक मन्त्र का अनेक निर्माता होगा तो उनमें तो झगड़ा हो जाएगा कि हमने बनाया कि तुमने बनाया ? लेकिन उनमें विवाद न होकर संवाद है कि जो मन्त्र हमने देखा वही तुमने भी देखा । इस प्रकार एक ही मन्त्र के अनेक ऋषि हो जाते हैं । सृष्टि के आदि में उन ऋषियों के द्वारा जो वेद प्रकट हुआ उसका वेदव्यास जी ने निर्माण नहीं किया, उसका संकलन किया। उनमें से जो पद्य भाग था उसको ऋग्वेद की संज्ञा दे दी । गद्य भाग

का नाम यजुर्वेद रख दिया । जो गाया गया था उसका नाम रखा सामवेद । ऋग् यजुस् साम । उसी में से जो शान्तिक, पौष्टिक मन्त्र प्रसक्त संगृहीत किए गए उसका नाम अथर्ववेद रखा । एक ही वेद के चार भाग महर्षि श्रीकृष्णद्वैपायन व्यास जी ने किए । इसके बाद इस वेद को लोग समझ जाएँ इसके लिए इतिहास की रचना की । वह इतिहास क्या है ? महाभारत । दूसरा इतिहास महर्षि वाल्मीकि ने रामायण के रूप में रचा । ये हमारे इतिहास ग्रन्थ हैं । इतिहास **इति ह आस** माने ऐसा जो कभी हुआ था । वह इतिहास महाभारत बताता है । इतिहास यह बतलाता है कि जितने भी लोग हुए हैं, विद्वान् हुए हैं, त्यागी हुए हैं, महात्मा हुए हैं, उन सबने वेदों और शास्त्रों का अनुसरण किया है । उसी को परम्परा से माना है ।

इति सुश्रुम धीराणाम् ।

जो हमने धीरों से, पूर्वजों से सुना हमलोग उसका अनुसरण करते हैं । अनादि परम्परा से जो चला आ रहा है जिसको हमने धीरों से ऋषिमुनियों से सुना वही इतिहास है। उनके रहस्यों को जानने वालों से सुना वह धर्म है । इसलिए आप देखिए कि भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन को योग का उपदेश करते हैं । कर्मयोग का उपदेश करते हैं । कर्मयोग का उपदेश करते समय अर्जुन के मन में कहीं यह शंका न हो जाए कि श्रीकृष्ण ने यह नया पंथ चलाया है या कोई नया मत चला रहे हैं इसलिए उन्होंने कहा कि –

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययं ।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ।।

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ।
स कालेनेह तपसा योगो नष्टः परंतप ।।

स एवायं महात्याज्य योग प्रोक्तः पुरातनः ।
भक्तोसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ।।

भगवान् बोले कि जो योग मैं तुझे बता रहा हूँ वह उत्तम रहस्य है । यह जो योग है वह उत्तम है, गोपनीय है और धारण करने योग्य है । महाराज ! आपको कैसे मालूम? भगवान् बोले कि सृष्टि के प्रारम्भ में विवस्वान् का जन्म हुआ था । सूर्य का जन्म हुआ था । यह अव्यय है, अविनाशी है अर्थात् ऐसा नहीं है कि यह पहले नष्ट हो गया हो और हमने इसको जन्म दिया हो। वह पहले कल्प में भी था । ऐसा योग मैंने विवस्वान् को बताया और विवस्वान् ने मनु को बताया। मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु को बताया । फिर

इक्ष्वाकु वंश में परम्परा से यह योग चलता रहा। इस योग के अनुसार ही इक्ष्वाकु वंश के राजा प्रजा का पालन करते रहे। प्रजा का पालन करते हुए, धर्मानुष्ठान करते हुए अन्ततोगत्वा परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त हुए। परन्तु यह योग बहुत काल हो जाने के कारण क्षीण हो गया था, नष्टप्राय हो गया था। वही पुरातन योग मैं तुमको बतला रहा हूँ। ऐसे ही आप देखिए कि जो ब्रह्मविद्या थी वह हमारे उपनिषदों का सार है। ब्रह्म तत्त्व का बोध उपनिषदों और वेदों के द्वारा होता है। कहा गया है –

वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः ।

समस्त वेदों के द्वारा मैं ही वेद्य हूँ। वेद में वैसे देखा जाए तो तीन काण्ड हैं। कर्म काण्ड, उपासना काण्ड और ज्ञान काण्ड। कुछ वेद मन्त्र कर्मकाण्ड का प्रतिपादन करते हैं, कुछ उपासना काण्ड का प्रतिपादन करते हैं और कुछ ज्ञान काण्ड का प्रतिपादन करते हैं। जो कर्म और उपासनापरक वेद मन्त्र हैं ये सीधे-सीधे तो ब्रह्म का प्रतिपादन नहीं करते लेकिन परम्परया ब्रह्म ज्ञान में ही इनका पर्यवसान होता है। कर्म काण्ड में कर्म का उपदेश दिया जाता है। जो तुम्हारा वर्णाश्रम और कर्त्तव्य है उन कर्मों का पालन करो। इन्हीं कर्मों का पालन धर्म है। शास्त्रविहित कर्म ही धर्म कहा जाता है और शास्त्र के द्वारा निषिद्ध जो कर्म हैं उनको अधर्म कहा जाता है। जो बात शास्त्रों में कर्तव्य रूप से बतलाई गई है वह तो धर्म है और जिसको नहीं करना चाहिए ऐसा कहा गया है वह अधर्म है। जैसे आपने सुना हमारे पिछले प्रवचनों में कि जब बालि ने कहा कि हमको क्यों मारा तो भगवान् बोले–

अनुजवधू भगिनी सुतनारी। कन्या सम सुनु शठ ये चारी।
इन्हँहि कुदृष्टि विलोकहिं जोई। ताहि वधे कछु पाप न होई।।

यहाँ उन्होंने चार को कुदृष्टि से देखना अधर्म माना है। छोटे भाई की पत्नी, अपनी बहन, अपने बेटे की पत्नी और कन्या चाहे अपनी हो या दूसरे की हो इन सबको कुदृष्टि से नहीं देखना चाहिए। जो छोटी कन्या होती है वह गौरी, दुर्गा का रूप होती है। उसको जो कुदृष्टि से देखता है वह पापी होता है। ऐसा पाप करने वाला व्यक्ति क्षत्रिय के द्वारा वध्य हो जाता है। बालि बोले कि आपने हमको युद्ध में ललकारा होता। ललकार कर आप हमसे लड़ते और फिर हमको मारते। आपने सीधे ही हमको बाण मार दिया। उन्होंने वहाँ कहा कि अपराधी को लड़कर नहीं मारा जाता। अपराधी को तो सजा दी जाती है। जो न्यायाधीश है वह अपराधी से युद्ध थोड़े ही करता है। वह तो कलम से लिख देता है कि इसको फाँसी दे दो। अपराधी से युद्ध नहीं किया जाता, बल्कि दण्ड

दिया जाता है । उसको युद्ध का मौका नहीं दिया जाता । इस समय पूरे भारत के सम्राट् राजा भरत है । भरत का राज्य चल रहा है । उस राजा के हम प्रतिनिधि हैं । कोई हँसी-खेल नहीं है । इसलिए उनकी ओर से हम ऐसे पापियों को दण्डित करने के अधिकारी हैं । इसलिए वहाँ लड़ने की कोई जरूरत नहीं थी । यह भी एक उत्तर है भगवान् का ।

एक सज्जन आये हमारे पास कल या परसों । कहने लगे कि महाराज ! माँस खाने में क्या नुकसान है? माँस खाने से तो शरीर की पुष्टि होती है । अण्डा खाने से पुष्टि होती है । भगवान् ने इसको तमोगुणी क्यों कह दिया ? हमने कहा कि देखो, माँस खाने से पहले किसी जीव को मारना पड़ता है । उसका प्राणवियोगानुकूल व्यापार करके उसकी हत्या करनी पड़ती है तब माँस मिलता है । कहा कि गेहूँ, चना और फल यह सब क्यों खाते हैं आप ? हमने कहा कि गेहूँ का पौधा गेहूँ को पैदा करके खत्म हो जाता है। दुबारा उससे गेहूँ की उत्पत्ति नहीं होती। चने के पेड़ की नहीं होती । ये सब पौधे अपना-अपना फल देकर समाप्त हो जाते हैं । इसलिए उनको मारना नहीं पड़ता । केले का पेड़ भी फल देकर स्वयं समाप्त हो जाता है । इसलिए उसको मारना नहीं पड़ता । इसी तरह आम और अमरूद के फल आदि भी पेड़ काटकर नहीं लिए जाते। वह अपने आप टपक जाता है । फिर उसने हमसे कहा कि गेहूँ के बीज में भी तो जीव रहता है । हमने कहा कि यह तो फिर अतिप्रसक्ति है । गेहूँ को खाने के बाद तुम्हारे शरीर में जो रस-रक्त बनता है उससे भी तो कुछ पैदा होता है । ये कहाँ की बात है ?

कहने का अभिप्राय यह है कि अधिक तर्क करने की अपेक्षा हमलोग यह देखते हैं कि शास्त्र में किसका विधान है और किसका निषेध है । तर्क से यदि कोई बात सिद्ध नहीं होती और शास्त्र में उसका निषेध है तो उसको निषिद्ध मान लिया जाता है । जैसे एक अनुमान है–

नरकपालं शुचिः प्राण्यंगत्वात् शंखशुक्तिकादिवत् ।

मनुष्य की खोपड़ी पवित्र है । यदि मनुष्य की खोपड़ी कट गई है या किसी प्रकार से अधजली रह गई है तो वह पवित्र है । उसको छूने से कोई दोष नहीं है । क्यों ? क्योंकि प्राण्यंगत्वात् प्राणी का अंग होने से । कहा कि प्राणी का अंग है और वह पवित्र है इसका कोई और उदाहरण है ? तो बोले कि शंख प्राणी का अंग है पर पवित्र है । उसको बजाते हैं । ऐसे ही शुक्तिका भी प्राणी का अंग है और उसको भी हम अच्छा मानते हैं । इसी तरह से किसी ने कहा कि मनुष्य का गीला सिर पवित्र है । कहा कि अरे ! यह अनुमान शास्त्र के विरुद्ध है । शास्त्र कहता है कि यदि मनुष्य के गीले सिर का स्पर्श कर ले तो

कपड़ों के सहित सिर से स्नान करना चाहिए। इसलिए इसे निषिद्ध माना जाता है ।

ऐसे ही अपने यहाँ बहुत सी बातें हैं जो निषिद्ध मानी जाती हैं । जैसे नारियों का रजस्वला अवस्था में किसी वस्तु का स्पर्श, भोजन बनाना आदि निषिद्ध माना जाता है। आजकल लोग तर्क-वितर्क करते हैं कि इसको मानने की जरूरत नहीं है। वैसे तो वैज्ञानिक दृष्टि से भी यह देखा गया है कि उस अवस्था में यदि कोई कार्य किया जाए तो उससे हानि ही होती है । लेकिन हमें तो यह देखना है कि शास्त्रों में इसका विधान है या निषेध है । जिस बात को शास्त्रों ने मना कर दिया कि इसे मत करो तो उसको करना पाप है । जिस आदेश का कारण बता दिया जाए वह उस आदेश को कमजोर बनाता है । जिसमें आदेश का कोई कारण न बताया जाए वह सही माना जाता है । इसी बात को तथ्य मान लो –

विधि निषेधमय कलि मल हरनी । कर्म कथा रविनन्दिनि बरनी ।।

साधु समाजरूपी प्रयाग में त्रिवेणी है । एक तो है यमुना । यमुना क्या है ? विधि-निषेध का उपदेश किया जाता है साधु-महात्माओं के द्वारा । आजकल जो बड़े-बड़े पण्डाल लगते हैं शहरों में । चैनलों में आप कई लोगों के प्रवचन सुनते हैं । वहाँ पर कोई विधि-निषेध की चर्चा करता है ? क्या कोई कहता है कि यह करो और यह मत करो। कोई चर्चा ही नहीं होती इसकी। साधु समाज कहाँ है ? पहले तो अधर्म से अपने को बचाओ । अधर्म का त्याग करके धर्म को बचाओ । अधर्म का त्याग करने से आपके मन की आधी शुद्धि हो जाएगी । कामभक्ष्य माने जो मनमाना खाए । सोचते नहीं कि क्या खाना चाहिए और क्या नहीं उसी को कामभक्ष्य कहा गया है । जो सामने आया वही खाना शुरू कर दिया । नहाया है तो भी और नहीं नहाया है तो भी। जैसे बकरे का मुँह चलता रहता है वैसे ही आजकल लोगों का मुँह चलता रहता है । ऐसा मत करो। विधिवत् पहले भगवान् का भोग बनाओ और शुद्ध शरीर से नहा-धोकर भोजन बनाओ । फिर भगवान् को अर्पण करो, तुलसी डालो, फिर कहो–

त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये ।
गृहाण सुमुखो भूत्वा प्रसीद परमेश्वर ।

हे गोविन्द ! यह तुम्हारी वस्तु है जिसे हम तुमको ही समर्पित कर रहे हैं । फिर मन में यह भावना करो कि भगवान् ने स्वीकार कर लिया । अब भगवान् खाते थोड़े ही हैं । तुम चाहो तो तौल कर देख लो । भोग लगाने के बाद एक इंच भी कम नहीं होता, बल्कि स्वाद और बढ़ जाएगा कि भगवान् ने अपनी नजर से देख लिया । एक

कहावत है –

सावन के बरसे और माता के परसे ।

भोजन यदि माता अपनी आँख से देखकर परोस देती है तो वह गुणकारी हो जाता है । इसीलिए अपने यहाँ देखो कि उस गाय का दूध पीते हैं जिसका बछड़ा जीवित रहता है । जिसका बछड़ा मर जाता है उस गाय के दूध में वह गुण नहीं रहता । क्योंकि उस गोमाता में वह वात्सल्य नहीं, वह उमंग नहीं । यह तो गोमाता की बात है । जो सारे जगत् की माता है वह अगर देख दे तुम्हारा भोजन तो वह पवित्र हो जाएगा । उसको खाओ और कामभक्ष्य की तरह खाना बन्द करो ।

पहले अधर्म का त्याग करना चाहिए । हमारे वेद बतलाते हैं कि धर्म करो । धर्म करने में लोगों की प्रवृत्ति नहीं होती । सबेरे उठकर सन्ध्या करो । गुरुमन्त्र लिया है तो सबेरे उठकर कम से कम पाँच माला तो जपो । कहते हैं लोग कि महाराज ! आलस्य आता है । करने का जी नहीं होता । शास्त्रों ने बताया कि तुम यदि ऐसा करोगे तो तुमको यह मिलेगा । कर्म से फल को जोड़ दिया । यदि बेटे को बुखार आ रहा है तो पुराने जमाने में बुखार की दवा गुरुच होती थी । हमने खाया है । गुरुच को कुचल कर उसका रस और सात नीम की डण्डी को पीसकर उसका रस निकाल लो और थोड़ा सा गर्म करके पी लो तो बुखार दूर हो जाता है । वह कड़वी लगती है तो बच्चा कहता है कि हम तो नहीं पियेंगे । माँ कहती है कि –

वत्स ! गुरुचिं पिब । खण्डलड्डुकं ते दास्यामि ।

बेटा ! तू गुरुच पी ले । अगर तू इसे पियेगा तो मैं तुझे खाँड़ का लड्डू खिलाऊँगी। खाँड़ का लड्डू खाने के लोभ से वह कड़वी गुरुच को पी लेता है । बुखार उतर जाता है। यहाँ माता का उद्देश्य खाँड़ का लड्डू खिलाना नहीं है । गुरुच को पिलाकर उसका रोग दूर करना है । शास्त्रों ने भी ऐसे ही प्रलोभन दिया कि तुम ऐसा करोगे तो तुम्हें यह फल प्राप्त होगा । इससे तुम्हारे पशु बढ़ेंगे, तुम्हारे पुत्र हो जाएगा, मरने के बाद स्वर्ग मिल जाएगा। इन कामनाओं से लोग धर्म का आचरण करते हैं । कामनाओं के कारण यदि कोई धर्म करता है तो भी उसको फल मिलता है । ये सब केवल प्रलोभन ही हों ऐसा नहीं है । उसका फल होता है । भगवान् श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं –

कांक्षन्तः कर्मणां सिद्धिः यजन्त इह देवताः ।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा ।।

कर्मों के फल की इच्छा से भी यदि कोई व्यक्ति धर्म करता है, यजन करता है तो

उसको भी फल की प्राप्ति होती है लेकिन जब फल की इच्छा करते-करते उसका हृदय निर्मल होने लगता है तो वह अन्त में उस फल की इच्छा को छोड़ देता है। फिर वह शुद्ध हृदय होने के कारण भगवान् की ओर आकृष्ट होता है। जो मनुष्य पवित्र अन्तःकरण वाला होता है उसी का भगवान् से प्रेम होता है। आप देखिए कि जब पानी मलिन हो जाता है तो चाहे तालाब का हो या नदी का हो तो उसकी तरंगें भी मलिन होती हैं। जिसका अन्तःकरण मलिन होता है, उसके विचार भी मलिन होते हैं, उसकी प्रियता भी मलिन पदार्थों में होती है। अच्छे में नहीं होती। मक्खी गन्दी जगह ही बैठती है। आप कभी यह नहीं देखेंगे कि गुलाब के फूल पर मक्खी बैठी हो। जहाँ सड़ाँध होगी आप वहीं देखेंगे उसे। इसी तरह से जिसका हृदय मलिन होता है उसके गुरु भी वैसे ही होते हैं, उसके मित्र भी वैसे ही होते हैं और उसके इष्ट देवता भी वैसे ही होते हैं –

यजन्ते सात्त्विकान् देवान् यक्ष रक्षांसि राजसाः।
प्रेतान् भूतगणान् चान्ये यजन्ते तामसाः जनाः ।।

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा कि जो सात्त्विक लोग हैं वे देवताओं का यजन करते हैं, रजोगुणी लोग यक्ष-राक्षसों की पूजा करते हैं। कैसे करेंगे ? किसी को यह पता लग गया कि यहाँ गड़ा हुआ धन है, लेकिन जब तक कोई यक्ष इसको सम्भाले हुए है तब तक उसको वह धन नहीं मिल सकता। अब उसको मनाओ। वहाँ यक्षाधिकार है। लोग ब्रह्मराक्षसों की पूजा करते हैं। हरसू ब्रह्म की लोग पूजा कर रहे हैं। इसी प्रकार तमोगुणी लोग भूतों-प्रेतों की पूजा करते हैं। किसी को कोई तकलीफ हुई तो गुरखा बुलाया। उसने कहा कि कछु बाहरी बाधा है। पूछा कि महाराज! क्या करना पड़ेगा तो उसने कहा कि यहाँ तो बकरा चढ़ाना पड़ेगा, मुर्गा चढ़ाना पड़ेगा, सुअर का बच्चा चढ़ाना पड़ेगा, शराब की बोतल चढ़ानी पड़ेगी। अब प्रेतों को राजी करो कि भैया खाओ और जाओ। कई लोग प्रेतों को सिद्ध कर लेते हैं। प्रेत यदि वश में हो जाएँ तो कई चमत्कार वे कर सकते हैं।

एक व्यक्ति हमारे पास आया और बोला कि हमको अपना शिष्य बना लो। हमने उसके बारे में पहले से ही सुन रखा था। यह मेरठ की बात है। वहाँ का बहुत बड़ा सेठ इसका भक्त था। हमारे पास उस समय उतने बड़े सेठ नहीं आते थे। भक्तों की दृष्टि से हम तो उससे छोटे ही थे उस समय। हमने कहा कि तुम हमारे पास क्यों आ रहे हो? तुम्हारे पास सिद्धि है, बड़े-बड़े सेठ तुम्हारे पास आते हैं। तुम चमत्कार से बनारस का पान मँगा लेते हो, वृन्दावन का पेड़ा मँगा लेते हो और भी अनेक चमत्कार दिखाते हो।

तुम्हें क्या जरूरत है हमारा चेला बनने की ? वह बोला कि महाराज ! हमें शान्ति नहीं है । हमने पूछा कि तुम चमत्कार कैसे करते हो तो उसने बताया कि हमको एक प्रेत का मन्त्र मिला है । हमने पहले उस मन्त्र को जपकर उसका पुरश्चरण किया और पुरश्चरण के बाद मनुष्य के कपाल में खीर पकाई और श्मशान की आग से पकाई और मन्त्र पढ़ा। उस खीर का हवन श्मशान की अग्नि में किया तो प्रेत प्रकट हो गया और कहा कि हम आपके वश में हैं । आप जो कहेंगे वह हम करेंगे । हम उसको जो भी कहते हैं वह कर देता है । जो भी हम सामान लाने कहते हैं वह ला देता है पर जो भी वह लाता है उसका दाम भी हमको चुकाना पड़ता है और न चुकाने पर हमको दण्ड भी मिलता है । हम चमत्कार के लिए उस प्रेत की पूजा करने लगे । ऐसे लोगों की दुर्गति होती है ।

जब भरत जी माता कौशल्या के पास गए तो उन्होंने कई सौगन्धें खाईं कि मेरे कहने से राम का वनवास नहीं हुआ है मैय्या । मेरी सम्मति नहीं थी । बहुत सी शपथ खाते हुए उन्होंने यह भी कहा –

जे परि परिहरि हर चरन भजहिं भूतगण घोर ।
तिनकी गति मैं पाऊँ जो जननी मत मोर ।।

कहा कि हरि के चरणों को छोड़कर जो भूतगणों का भजन करते हैं उनकी जो दुर्गति होती है वह दुर्गति हमारी हो यदि भैया राम के वनवास में हमारी सहमति रही हो तो । क्योंकि भूत की पूजा करने से उन्हीं की योनि में जाओगे । कहने का मतलब यह है कि जो तमोगुणी लोग हैं वे भूत-प्रेत की पूजा करते हैं । रजोगुणी यक्ष-राक्षस की पूजा करते हैं और सात्त्विक लोग देवताओं की पूजा करते हैं । इसके बाद जब हृदय और भी शुद्ध हो जाता है तब और किसी में उनका मन नहीं लगता है । इसी प्रकार जो उत्तम व्यक्ति धर्म कार्य करते हुए अपने मन को निर्मल कर लेता है उसको ग्राम्य गोष्ठी में आनन्द नहीं मिलता । जहाँ हँसी-मजाक चल रहा हो, जहाँ गन्दी बातें चल रही हों वहाँ उसका मन नहीं लगता । कहता है कि चलो सत्संग करें । स्वाभाविक रूप से उसको वह गोष्ठी अच्छी नहीं लगती, उसकी मित्रता अच्छी नहीं लगती और जो गुरु संसार में लगाता है वह गुरु भी उनको अच्छा नहीं लगता । संसार में तो व्यक्ति बिना तुम्हारे उपदेश के ही लगे हैं । संसार में लगने के लिए तुम्हारे उपदेश की आवश्यकता क्या है ? संसार तो वैसे ही अच्छा लगता है । अच्छे शब्द, अच्छे स्पर्श सब अच्छे ही लगते हैं । कहने का अभिप्राय यह है कि जब मनुष्य का हृदय धर्माचरण से शुद्ध होता है तो वह भगवान् की आराधना करता है, उपासना करता है । उसको भगवान् अच्छे लगने लगते हैं –

पूतात्मा पुरुषः कृष्णः पादमूलं न मुञ्चति ।
मुक्तसर्वपरिक्लेषः पान्थस्य शयनं यथा ।।

जो पूतात्मा है, पवित्र पुरुष है वह भगवान् के चरणों को नहीं छोड़ता । जैसे कोई पथिक अनेक जगह पर घूम-घूम कर, कभी इस धर्मशाला में सोए, कभी उस धर्मशाला में सोए तो यात्रा कराने वाला चिल्लाता है कि जल्दी उठो भाई ! आज लम्बी दूरी पर चलना है । बेचारा चलते-चलते रोज थक जाता है । थक-थक कर जब वह अपने घर आता है तो घर में टाँग पसारकर सोता है कि अब हमें कहीं नहीं जाना है । अब वह घर में आ गया, कहीं जाना थोड़े ही है । इसी तरह से जब वह भगवान् की शरण में आ गया तो समझों के टाँग पसारकर सो गया ।

फिर भी जो मनुष्य के मन की वासना है वह उसका पीछा नहीं छोड़ती । मन में हमारी कुछ इच्छाएँ हैं, आकांक्षाएँ हैं, वासनाएँ हैं तो हम कहाँ जाएँ ? वह कहता है कि हमको जो कुछ भी चाहिए वह हम भगवान् से ही लेंगे और किसी के सामने हाथ नहीं पसारेंगे –

दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया ।

अगर देने वाला कोई है तो वह भगवान् राम ही हैं । लोग तो खुद ही माँगते हैं इसलिए हम उनसे क्या माँगे ? राम दाता है । वाल्मीकि रामायण में भगवान् राम के सम्बन्ध में बताया है कि जब भगवान् राम के पास कोई धन माँगने जाता था तो वे उससे कहते थे कि –

आपदामेकमागारं किं नु वांछसि रे धनम् ।
इत्युक्त्वा निज सर्वस्वं अर्थिने सम्प्रयच्छति ।।

अरे ! आपत्ति का एकमात्र घर धन है रे । तू इसे क्यों माँगता है ? धन जिसके पास है उसको तो क्लेष ही क्लेष है । धनिकों को बहुत क्लेष है ? पहला क्लेष है **राजतः**। पहला यह कि कहीं हमारे ऊपर इन्कम टैक्स न लग जाए । दूसरा है **चोरतः** । दूसरा चोर से बचाना है कि कहीं हमारा धन चोरी न हो जाए । कहाँ रखें ? बैंक में रखें तो टैक्स लगता है और बाहर रखें तो चोरी हो जाने का डर । यदि किसी सुरक्षित स्थान पर रख भी दें तो भाई-बन्धु न बाँट लें कि इसमें उनका भी हक है तो उनसे भी बचाना चाहता है । फिर कुछ माँगने वाले भी हैं कि हमको कुछ रुपया उधार चाहिए । उधार माँगने वाला फिर दुबारा नहीं आता । उधार दे दो तो वह आदमी भी गया और रुपया भी गया क्योंकि वह इसलिए सामने नहीं आता कि सामने जाएँगे तो माँगेंगे। वैसे भी जब

किसी के पास धन होता है तो किसी दूसरे को देने में बहुत कठिनाई होती है । **अर्थिभ्यः** और **कालतः** । समय बीत जाए और हम मर जाएँ तो यह धन कहाँ जाएगा ? इसीलिए उसको छुपा कर रखते हैं । कई लोग गाड़ देते हैं और कई लोगों का तो बैंक में जमा रहता है । वे कहते हैं कि जरूरत पड़ने पर हम निकाल लेंगे । जब जरूरत आती है तो कहते हैं कि अभी नहीं, बाद में जरूरत आएगी । बीच में ही मर जाते हैं । इस तरह से काल से भी उसको डर रहता है कि कहीं हम मर न जाएँ । बड़ी मुश्किल है ।

एक पण्डित जी थे । उनके कई चेले थे । उनके पास जो धन था उसकी वे गिन्नी बना लेते थे । आजकल लोग नोट रखते हैं, उन्होंने गिन्नी रख ली । कई गिन्नियाँ इकट्ठी हो गईं उनके पास । इसके बाद एक बार उनको बुखार आने लगा । बुखार में बीच-बीच में बेहोशी आने लगी। उन्होंने सोचा कि हम बेहोश हो जाते हैं, ऐसे में कोई हमारी गिन्नी न ले जाए । उन्होंने अपने चेले से कहा कि बेटा ! हलुआ बनाकर लाओ । हलुआ रख लिया और चेले को कहीं बाहर भेज दिया। सारी गिन्नियाँ हलुए से लपेट-लपेट कर खा गए । सोचा कि सुरक्षित हो गईं पेट में । पेट की जठराग्नि वैसे ही कमजोर थी । हलुआ ही नहीं पचता था, गिन्नी कैसे पचे ? अब वे मर गए । मरने के बाद चेले लड़ने लगे । कहने लगे कि मोहरें कहाँ हैं ? लोगों ने कहा कि पहले इनकी लाश को ठिकाने लगाओ फिर खोजी जाएँ मोहरें ? दाह संस्कार किया गया । जब तीसरे दिन उनकी राख उठाने के लिए लोग गए तो एक गुट्टा सोने का मिला । गिन्नियाँ पिघलकर एक हो गईं थीं ।

धन के पीछे कहीं कोई हमारी हत्या न कर दे यह भय बना रहता है । इस प्रकार से धन के पीछे अनेकों अनर्थ होते हैं । भगवान् यह सब समझाते हैं उस माँगने वाले को। बहुत से लोग उपदेश इसलिए करते हैं कि उनको देना न पड़े । बहुत से लोग हलुआ खाते रहते हैं और कोई माँगने आ जाता है तो कहते हैं कि हलुआ खाओगे तो बीमार पड़ जाओगे पर स्वयं खाते रहते हैं । कहते इसलिये हैं कि देना न पड़े ।

एक बार कोलकाता में एक यज्ञ हुआ । उस यज्ञ में एक बहुत बड़े सेठ को वहाँ के लोगों ने बुलाया, स्टेज में बैठाया और खूब स्वागत किया कि सेठ जी मंच से यज्ञ के लिए कुछ दान-दक्षिणा देने की घोषणा करेंगे । बोलेंगे कि हम इस यज्ञ के लिए इतना धन देते हैं । इसी लोभ से उनका स्वागत-सत्कार किया गया था । परन्तु जब उनको बोलने के लिए माइक दिया गया तो वे बोले कि आप लोग जो यज्ञ कर रहे हैं वह बहुत अच्छा काम है लेकिन इस यज्ञ में से कुछ रुपया आपको बाढ़पीढ़ितों के लिए भी देना चाहिए। वहाँ लोगों ने उनको इसलिए बुलाया था कि वह कुछ देगा तो हम ब्राह्मणों की दक्षिणा

पूरी कर देंगे। बिना रुपये के तो दक्षिणा पूरी नहीं हो सकती थी पर उस सेठ को ब्राह्मणों की दक्षिणा की फिक्र नहीं थी। वह स्वयं तो उस यज्ञ में कुछ नहीं दे रहा था बल्कि उस यज्ञ में से ही रुपया निकालकर बाढ़पीड़ितों को देने का उपदेश दे रहा था। परिणाम यह हुआ कि उस सेठ का एक्सीडेण्ट हो गया। तीन साल तक अस्पताल में बेहोश रहा और फिर मर गया। अपने पास से एक रुपया भी खर्च न करके दूसरों को उपदेश देने वाले संसार में बहुत हैं।

हमारा एक आश्रम है झारखण्ड में विश्व कल्याण आश्रम। हमने वहाँ एक सेठ को लगाया कि गरीबों की कुछ सेवा करे। उसने कहा कि यहाँ आपको पपीता लगाना चाहिए, पपीता बेचकर उसके खर्चे से लोगों की सेवा करनी चाहिए। बड़ा भारी उपदेश देने लगा। भाई ! यह तो हम स्वयं ही समझते हैं। तुम्हारे उपदेश की जरूरत ही क्या है ? ऐसे कुछ वाचाल लोग होते हैं जिनके पास धन तो होता है पर वे न तो किसी को दान देते हैं और न खुद ही खाते हैं।

मैं मर जाऊँ तोहे न भजाऊँ।

कहते हैं कि मैं मर जाऊँगा लेकिन तुम्हें नहीं दूँगा। ऐसे लोगों के उपदेश का कोई अर्थ नहीं है। भगवान् श्रीराम जी माँगने वाले से कहते थे कि आपत्ति का एकमात्र कारण धन क्यों माँग रहा है ? ऐसा कहकर वे अपना सर्वस्व उस माँगने वाले को दे देते थे। इतना अधिक दे देते थे कि फिर उसको किसी के दरवाजे पर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। दूसरे लोग उसके दरवाजे माँगने आ जाते थे। यह भगवान् की रीति है। वे दाता हैं। यदि हमें कुछ चाहिए तो भगवान् के पास जाना चाहिए। उनसे थोड़ा माँगेंगे तो वे बहुत दे देंगे।

भगवान् ऐसे हैं कि जिनके पास कोई कमी नहीं है। लक्ष्मी जी स्वयं उनकी पत्नी हैं तो क्या कमी हो सकती है ? इसलिए भक्ति के मार्ग में जो लोग आते हैं, उनकी यदि कोई इच्छा उत्पन्न होती भी है तो वे अपनी उस इच्छा को भगवान् से ही पूरी करवाते हैं, किसी और के पास नहीं जाते।

बस इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

—*—

[11]

।। राम राम ग्यारह ।।

भगवान् की प्रेरणा

समुपस्थित सज्जनो ! देवियो !

भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने भक्तों के चार विभाग किए हैं –

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।

अर्जुन ! जो सुकृती जन हैं वे चार प्रकार के हैं और वे ही मेरा भजन करते हैं। उन्होंने भजन करने वालों का विशेषण बताया सुकृतिनः । जो पुण्यात्मा हैं, पवित्रान्तःकरण हैं ऐसे जन। ये चार प्रकार के हैं –

आर्तो जिज्ञासुः अर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ।

पहला आर्त है । आर्त वह है जो संकट में पड़ा हुआ है । विपत्ति में पड़ा हुआ प्राणी हमारा भजन करता है । बात क्या है कि विपत्ति में कभी-कभी अपने सहायक मिल जाते हैं । कोई सहायता कर देता है तो विपत्ति से छुटकारा हो जाता है लेकिन इसके मूल में भी भगवत्प्रेरणा होती है । भगवत्प्रेरणा से ही कोई सहायता करने आता है । बिना भगवान् की प्रेरणा के कोई रक्षा करने नहीं आता । आप कल्पना कीजिए कि जहाँ कोई अपना न हो, माता-पिता न हों, बन्धु न हों, घर न हों, कहीं ऐसे स्थान पर हों जहाँ हमारा कोई सहायक न हो उस समय कौन हमारी रक्षा करेगा ? उस समय तो वही रक्षा कर सकता है जो सर्वव्यापी है, सर्वभूतान्तरात्मा है । जो करुणावरुणालय है वही हमारी रक्षा उस समय कर सकता है ।

आपने देखा कि द्रौपदी जब आर्त हुई । भरी सभा में जब उसको नग्न करने के लिए उसके वस्त्र को खींचा जाने लगा कोई उस समय उसकी सहायता के लिए आगे आने वाला नहीं था । पति मौन बैठे थे, भीष्म मौन बैठे थे, द्रोणाचार्य मौन बैठे थे और सब दुर्योधन की ही सहायता कर रहे थे । उस समय भगवान् श्रीकृष्ण द्वारका में थे । वे उस सभा में नहीं थे किन्तु उन्होंने द्रौपदी की रक्षा की क्योंकि वे सर्वव्यापक थे, सब जगह थे । वे उस वस्त्र में भी समा गए जिसे खींचा जा रहा था । उस वस्त्र में भगवान् श्रीकृष्ण का समावेश हो गया । स्पष्ट क्या हुआ कि भगवान् श्रीकृष्ण केवल मनुष्य नहीं हैं, वे अनन्त-

अखण्ड ब्रह्म हैं इसलिए वह वस्त्र भी अनन्त हो गया। अनन्त का कौन अन्त पा सकता है ? इस प्रकार द्रौपदी की रक्षा अनन्त परमेश्वर के द्वारा हुई । ऐसे ही मनुष्य के जीवन में कई अवसर आते हैं जब उसके सामने संकट के बादल घिर जाते हैं और कोई अपना सहारा नहीं दीख पड़ता तब अन्त में सर्वव्यापी, सर्वभूतान्तरात्मा भगवान् को ही भक्त पुकारता है । पर इसके लिए आवश्यक है कि वह सुकृती हो, पुण्यात्मा हो अन्यथा भगवान् का स्मरण होता ही नहीं है । संसार का स्मरण होता है । ऐसी स्थिति में भगवान् की आराधना जो करते हैं कहना होगा कि उन्होंने पहले जन्म में पुण्य किए हैं ।

भागवत में गजेन्द्र मोक्ष की कथा आती है । गजेन्द्र को जब ग्राह ने पकड़ा तो सबने उसका साथ छोड़ दिया। जितने उसके कुटुम्बी थे सबने उसे अकेला छोड़ दिया । अपने कुटुम्ब के साथ झुण्ड में था वह । बहुत सी हथिनियाँ थी, छोटे-छोटे बालक हाथी थे । जब ग्राह ने पकड़ा तो सब उसको चारा लाकर डालते रहे । जो भी वे खाते थे सब लाकर डालते रहे । जब देखा कि अब यह उबरने वाला नहीं है तो सब छोड़कर चले गए।

आप देखते हैं कि जब कोई असाध्य रोग से पीड़ित हो जाता है, डाक्टर जवाब दे देता है कि अब घर ले जाओ तब उसकी रक्षा कौन करता है ? वह उस समय कहाँ जाए? ऐसे समय में जो सुकृती हैं, बुद्धिमान् हैं वे प्रारम्भ से ही भगवान् की शरण में जाते हैं। इसलिए आप देखें कि गजेन्द्र ने भगवान् का स्मरण किया । वहाँ लिखा है कि–

यस्मिन् इदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयम् ।
योऽस्मात् परस्माच्च परस्तं प्रपद्ये स्वयंभुवम् ।

यह जो संसार है वह रस्सी में सर्प के समान कल्पित है । जिससे यह उत्पन्न हुआ है, जिसके द्वारा ये विदित होता है, जो इस प्रपञ्च का साक्षी है और सच पूछा जाए तो यह स्वयं है। इसको समझना हो तो स्वप्न का दृष्टान्त देख लीजिए । स्वप्न किसमें है ? जहाँ आप स्वप्न देख रहे हैं वह कोई स्थान नहीं है । कहते हैं कि पुरीतत नाम की गले में एक नाड़ी है । यह अत्यन्त सूक्ष्म है । उस नाड़ी के भीतर जाकर जीव स्वप्न देखता है।

वहाँ न रथ है, न ही रथ के दो घोड़े हैं पर आप बैठे हैं अपने घर में और पूरी दुनिया की यात्रा कर लेते हैं । इतनी बड़ी दुनिया उस पुरीतत नाड़ी में कहाँ है ? इसलिए कहा कि **यस्मिन् इदं** यह संसार भी उस परमेश्वर का एक स्वप्न ही है । देखने वाले वे ही हैं। उन्हीं से यह उत्पन्न हुआ है, उन्हीं के द्वारा यह जाना जाता है और सच पूछा जाए तो स्वप्न को देखने वाला ही स्वप्न है और कोई दूसरा नहीं है । और आगे बढ़े तो स्वप्न और स्वप्न

को देखने वाला इन दोनों से ही अलग है । इन दोनों से ही वह परे है । **योस्मात् परस्मात् च परः ।** कार्य कारण से जो परे है । जो बाह्य और आभ्यन्तर दोनों से ही परे हैं **तं प्रपद्ये स्वयंप्रभं।** उन स्वयम्भू की मैं शरण में हूँ। ऐसा गजेन्द्र ने वर्णन करते हुए उनका स्मरण किया। यही कहा कि मैं उनका ध्यान करता हूँ तो कोई नहीं आया। कहते हैं कि - ब्रह्मा जी ने सोचा कि कहीं हमें तो नहीं पुकार रहा है । विष्णु ने सोचा कि हमें तो नहीं पुकार रहा है । रुद्र ने भी सोचा कि कहीं हमें तो नहीं पुकार रहा है कोई । अखिलब्रह्माण्डनायक सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा परब्रह्म वहीं प्रकट हो गए । यह तो कहने की बात है कि वैकुण्ठ से चले । वैकुण्ठ से चले होते तो आधे नाम के समय तक वे ग्राह से गजेन्द्र को बचाने कैसे पहुँच जाते ? सूरदास जी ने कहा है –

सुने री मैंने निर्बल के बल राम । दुर्बल भये जब राम पुकारो आए आधे नाम ।।

भक्त लोग बताते हैं कि वैकुण्ठ में भगवान् ने गजेन्द्र के मुख से सुना 'ह' और उसे बचाने के लिए वैकुण्ठ से दौड़ पड़े । गरुड़ और सुदर्शन चक्र को छोड़ दिया और वहाँ पहुँचकर सूँड पकड़कर गजेन्द्र को ग्राह के मुख से निकाल दिया । जब भगवान् ने उसको सरोवर से निकाल दिया तब सुदर्शन चक्र आया और उसने ग्राह का मुँह फाड़ा। गजेन्द्र मुक्त हुआ । वह शरीर से भी मुक्त हो गया । गजेन्द्र का मोक्ष करके जब भगवान् वैकुण्ठ की ओर लौट रहे थे तब रास्ते में उन्होंने गरुड़ को देखा । जब वैकुण्ठ के निकट पहुँच गए तब उनको 'रि' शब्द सुनाई पड़ा । हरि शब्द के उच्चारण में जितना विलम्ब होता है उतना विलम्ब भी भगवान् को गजेन्द्र के उद्धार में नहीं लगा । कहना होगा कि जहाँ गजेन्द्र पुकार रहा था भगवान् वहीं थे । वहीं वे प्रकट हो गए और उन्होंने गजेन्द्र की रक्षा की। भगवान् ही ऐसे अवसरों पर आर्तों की रक्षा करते हैं इसीलिए वे आर्त रक्षक कहलाते हैं। अगर कोई समय पर हमारी सहायता करता है तो हम लोग यह मानते हैं कि भगवान् की प्रेरणा से ही वह सहायता करने के लिए आ गया । अन्यथा कहाँ से आता ? जो भी हमको सहायता मिलती है, सुख मिलता है वह भगवत्प्रेरणा से ही मिलता है ।

वृन्दावन में एक महात्मा जी थे उड़िया बाबा । वे गंगा तट पर घूमते थे और गृहस्थों के घर जाकर मधुकरी भिक्षा लेते थे । तीन, पाँच या सात घर से वे रोटी लेकर आते थे और गंगा किनारे बैठकर उसी से अपनी क्षुधा मिटाते थे । संन्यासियों के लिए पाँच प्रकार की भिक्षा बताई गई है –

माधूकरं प्राक्प्रणीतं तथैव च अयाचितम् ।
तात्कालिकं चोपपन्नं भैक्षं पंचविधं स्मृतम् ।।

जिस प्रकार से मधुमक्खी विविध फूलों से मधु ले लेती है उसी प्रकार तीन, पाँच या सात घर से भिक्षा ले लिया और क्षुधा मिटा लिया। हम भी भिक्षा माँग चुके हैं। एक बार हम गंगा किनारे घूम रहे थे। हमारे साथ कमण्डल ही था। किसी ने दाल दे दी, किसी ने रोटी दे दी। कमण्डलु में रखते गए। एक माता दूध लेकर आ गई कि महाराज ! दूध ले लो। हमने कहा कि इसी कमण्डलु में डाल दे। बोली अरे बाबा दूध खराब हो जाएगा। हमने कहा तुमको डालना हो तो डालो नहीं तो लौटा लो। कहने का मतलब यह है कि माधुकरी वृत्ति सबसे श्रेष्ठ मानी जाती है। कहते हैं कि –

भिक्षाहारो निराहारो भिक्षा नैव परिग्रहः। कदन्नं वा सदन्नं वा सोमपानं दिने दिने।

भिक्षाहार निराहार के समान होता है। यह परिग्रह नहीं है। कदन्न हो या सदन्न हो सोमपान के समान भिक्षा का अन्न होता है। सबके लिए भिक्षा का विधान नहीं है। गृहस्थ यदि इसी प्रकार से भिक्षा माँगे तो यह अनुचित होगा। **माधूकरं** मधुकरी का विधान उसके लिए नहीं है। उसको तो घर में भोजन बनाना चाहिए। भोग लगाकर खाना चाहिए। बिना किसी संकल्प के कोई दे जाए। **प्राक्प्रणीतं** कोई पहले आकर निमन्त्रित कर दे कि महाराज् हमारी ओर से भिक्षा है। **अयाचितं** बैठा रहे, कहीं न जाए और कोई बिना माँगे आकर भिक्षा करा दे या **तात्कालिकं** निकला और कोई लेकर ही आ गया कि महाराज ! अब कहाँ जाते हो, यहीं कर लो। इसी तरह **उपपन्न** अर्थात् किसी ने इसी निमित्त बनाया हो।

हम यह बता रहे थे कि वे मधुकरी लेकर ही अपनी क्षुधा की पूर्ति करते थे। भगवान् शङ्कराचार्य जी ने संन्यासियों के लिए कहा है –

क्षुद्व्याधिश्च चिकित्स्यताम् अनुदिनं भिक्षौषधं भुज्यताम्।

हे संन्यासी ! यदि तुमको भूख लगे तो यह भूख क्या है ? यह एक व्याधि है। रोग है और इस रोग की दवा रोज करनी पड़ती है। रोग की औषधि क्या है ? कहा कि **भिक्षौषधं**। भिक्षा ही उसकी औषधि है। इसमें इस बात का विचार नहीं करना चाहिए कि भोजन स्वादिष्ट है या नहीं ? जब जैसा मिल जाए रूखा-सूखा वैसा ही ग्रहण करे।

स्वाद्वन्नं न तु याच्यताम् प्रतिदिनं प्राप्तेन संतुष्यताम्।

अर्थात् स्वादिष्ट अन्न की इच्छा न करे। विधिवशात् जो प्राप्त हो जाए उसी से सन्तुष्ट हो जाए। एक दिन उड़िया बाबा सोचने लगे कि क्यों जाएँ मधुकरी के लिए ? भगवान् की इच्छा हो तो खुद ही आकर दें। ऐसा सोचकर वे जंगल में बैठ गए। उसी

समय वहाँ एक व्यक्ति आ गया। वह गौ चराने वाला था। उसने कहा कि बाबा हम भोजन लाए हैं आपके लिए। आप कर लीजिए। उन्होंने उसका दिया हुआ भोजन किया। फिर देखा कि वह भोजन कराने वाला कहाँ गया तो वहाँ न गौ थी और न ही गौ चराने वाला ही था। समझ में आ गया कि ये भगवान् थे जिन्होंने हमको भोजन लाकर दिया–

गांठी तो बाँधे नहीं माँगत हूं सकुचाहिं।
तिनके पीछे हरि फिरै कहुँ भूखे ना रह जाहिं।।

जो महात्मा गाँठ में बाँधते नहीं हैं और किसी से माँगने में भी संकोच करते हैं उनके पीछे भगवान् घूमते हैं कि मेरा भक्त कहीं भूखा न रह जाए। इसीलिए वे कोई न कोई रूप धारण करके खुद लाकर दे देते हैं। अब उनके मन में आया कि भगवान् को मैं इतना कष्ट क्यों दूँ ? मैं बैठा रहूँ और भगवान् को चरवाहा बनना पड़े, हमारे लिए भोजन लाना पड़े, इससे अच्छा है कि मैं ही हाथ चलाऊँ।

कहने का मतलब यह है कि भक्त को भगवान् की रक्षा करनी हो या कुछ देना हो तो चाहे भगवान् साक्षात् दें या किसी को निमित्त बनाकर दें सब वे ही करते हैं किसी न किसी को निमित्त बनाकर। आप समझिए कि आप कहते हैं कि महाराज ! हम तो अपनी कमाई खाते हैं। ऐसा कुछ नहीं है। **हिल्ले रोजी बहाने मौत।**

भगवान् ही आपको भोजन देते हैं। आप कहते हैं कि हम किसान हैं। खेत में हल चलाते हैं। अनाज पैदा करके खुद खाते हैं। इसमें ईश्वर क्या करता है ? राजस्थान में पानी नहीं बरस रहा है। कर लो किसानी। एक नेता थे। उन्होंने एक बाँध बनावाया। उस बाँध के उद्घाटन के समय वहाँ जाकर कहा कि किसान भाईयों! अब आपको ईश्वर का मुँह नहीं देखना पड़ेगा। हम यहाँ बाँध बना रहे हैं। नदी का पानी यहाँ इकट्ठा हो जाएगा। इसकी नहर से तुम्हारे खेत भर जाएँगे और घर अनाज से भरा-पूरा हो जाएगा। अब आपको पानी के लिए ईश्वर का मुँह देखने की कोई आवश्यकता नहीं है। लोगों ने खूब ताली पीटी लेकिन उस साल पानी ही नहीं बरसा। अब तरकीब खोजो कि तुम्हारा मुँह देखें कि ईश्वर का मुँह देखें ?

हमारे हाथ पैर चल रहे हैं यह भगवान् की कृपा है। दिमाग चल रहा है यह भी उन्हीं की कृपा है। लोग हमारी सहायता कर रहे हैं यह उनकी कृपा है। क्या बात है कि एक व्यक्ति मिट्टी उठाता है तो वही उसके लिए सोना हो जाता है और दूसरा सोना उठाता है तो वही उसके लिए मिट्टी हो जाती है। कहना होगा कि उसके पीछे ईश्वर है। ईश्वर ही सब कुछ है। इसलिए अर्थी ईश्वर की शरण लेते हैं।

अर्थार्थी भक्तों में ध्रुव जी का नाम आता है । ध्रुव जी राजा उत्तानपाद के ज्येष्ठ पुत्र थे। राजा उत्तानपाद की दो पत्नियाँ थीं । एक का नाम था सुनीति और दूसरी का नाम था सुरुचि । यदि हम लोग रूपक की दृष्टि से देखें तो उत्तानपाद जीव है और उसकी दो प्रकार की वृत्तियाँ हैं – एक सुनीति अर्थात् सुन्दर नीति और दूसरी सुन्दर रुचि । लोगों को सुरुचि प्यारी है, सुनीति प्यारी नहीं है । जब हम लोग कहते हैं कि गुटखा मत खाओ तो लोगों को बुरा लगता है । तम्बाकू मत खाओ, शराब मत पीयो कहते हैं तो बुरा लगता है । कहते हैं कि ये काहे का उपदेश दे रहे हैं ? कुछ लोग कहते हैं कि हमारी रोजी रोटी है । कईयों को तो बिना गुटखा खाए शौच भी नहीं होती । पेट में दर्द होता है इसीलिए खाते हैं कई लोग । जो नहीं खाते उनका पेट क्यों नहीं दर्द करता ? जो कहता है कि आप खाइए इससे बहुत आनन्द आएगा तो यही सुरुचि वृत्ति है ।

सुनीति किसी को पसन्द नहीं आती। यदि कोई कहता है कि इस तरह से चलने से आपका कल्याण है तो लोग नहीं सुनते हैं । अगर हम यह कहते हैं कि राग-द्वेष मत करो, लड़ाई-झगड़ा मत करो, हिंसा मत करो, फौजदारी मत करो, परस्त्रीगमन मत करो तो बुरा लगता है । कुछ लोग ऐसे हैं जो इसी में मन लगाते हैं । मित्र आजकल कैसे बनते हैं ? जो हमारे व्यसनों का सहायक होता है वह हमारा मित्र हो जाता है । जो भी मनुष्य नशा करता है उसमें जो सहायता करे वह उसका मित्र है और जो इसमें बाधा डाले वह हमारा दुश्मन है । वास्तव में जो हमारे व्यसनों में हमारी सहायता करता है वह हमारा मित्र नहीं है । वह तो मित्र के रूप में शत्रु है । वह हमारा सर्वनाश करने के लिए मित्र बना हुआ है । यही समझना चाहिए और यह समझना ही नीति है । सुनीति से जीवरूपी उत्तानपाद का प्रेम नहीं था । सुरुचि से प्रेम था ।

सुनीति से ध्रुव उत्पन्न हुआ । जो सदा रहने वाला है वही ध्रुव है । सुरुचि से उत्तम उत्पन्न हुआ। लेकिन वह नाशवान् हो गया । राजा उत्तम को गोद में लेकर वह सुरुचि के साथ सिंहासन में बैठा था। कथाकार यह कहते हैं और भागवत में इसके संकेत हैं। साफ-साफ तो नहीं लिखा है लेकिन निर्वासिता शब्द वहाँ आया है । सुनीति के बाद राजा ने सुरुचि से विवाह किया और सुरुचि के मायके से डोली में बैठाल कर बारात लौटा कर राजा लौट रहा था तो नगर के पास आने पर सुरुचि को पता लग गया कि वहाँ एक दूसरी रानी बैठी है तो उसने राजा से कहा कि हमारी डोली हमारे मायके लौटा दो । जब यहाँ हमारी सौत पहले से बैठी है तो उसके रहते हम यहाँ पर नहीं रहेंगे। तब राजा ने सुनीति को महल से निकाल कर कालविडारग बना दिया । कालविडारग जानते हो? जो गौशाला में रहती है, गोबर उठाकर फेंकती है और दूध दही में यदि कौए आने लगे तो

उसको भगाती है वह कालविडारग है। सुनीति बेचारी गौशाला में रहने लगी। संयोग की बात है कि वहाँ कोई महात्मा आए। सुनीति ने उनका स्वागत किया। उसकी श्रद्धा और स्वागत से प्रसन्न होकर महात्मा जी ने उसको पुत्र का वरदान दे दिया। सुनीति बोली कि महाराज ! आपने तो हमें वरदान दे दिया। मेरी एक बहन महल में बैठी है उसको भी एक पुत्र हो जाना चाहिए। देखिए! यह सुनीति कह रही है। महात्मा जी ने तथास्तु कह दिया। राजा एक दिन घूमता-घामता आया और वहीं सुनीति से मिलकर उसमें गर्भाधान किया जिससे ध्रुव का जन्म हुआ और सुरुचि से उत्तम का जन्म हुआ।

सिंहासन पर सुरुचि के साथ राजा उत्तानपाद बैठा था। उत्तम उनकी गोद में खेल रहा था। बालकों के साथ ध्रुव जी घूमते-घूमते वहाँ पहुँचे जहाँ राजा बैठा था। वे भी जानते थे कि राजा मेरे पिता हैं। उन्होंने भी चाहा कि मैं भी अपने पिता की गोद में बैठ जाऊँ। उन्होंने हाथ बढ़ाया कि पिताजी हमको भी गोद में ले लो। पिता ने भी हाथ बढ़ाया लेकिन सुरुचि ने जो क्रोध से देखा तो राजा ने अपना हाथ पीछे खींच लिया। सुरुचि ने वाग्बाण से ध्रुव को बिद्ध कर दिया। उसने कहा कि अरे बालक ! तू राजा की गोद में राजसिंहासन में बैठना चाहता है? राजपुत्र होते हुए भी तू अन्य स्त्री से उत्पन्न हुआ है। इसलिए तू राजसिंहासन का अधिकारी नहीं है। अगर तुझको उत्तम के जैसे राजसिंहासन पर बैठना हो तो तपस्या करके भगवान् श्रीहरि की आराधना कर और फिर मेरे पेट से जन्म ले। मेरी कोख से जब जन्म लेगा तब तू उत्तम के जैसे राजसिंहासन में बैठने का अधिकारी हो सकेगा। ध्रुव जी उदास होकर अपनी माता के पास आए। मुख म्लान था उनका तो माता सुनीति से पूछा कि बेटा ! आज तुम्हारा मुख कुम्हलाया हुआ है। क्या बात है ? क्या कष्ट है तुझे ? ध्रुव जी कुछ बोल नहीं सके। बस फफक-फफक कर रोने लगे। बालकों ने बताया कि ये राजा की गोद में बैठना चाहते थे तो माता सुरुचि ने ऐसा कह दिया है। यह सुनकर ध्रुव जी का हृदय दुःखी हो गया है। इसी कारण रो रहे हैं। सुनीति को अपार दुःख हुआ और उसको लगा कि मेरे दुःख का अन्त और कोई नहीं कर सकता। वह बालक ध्रुव को सान्त्वना देती हुई बोली कि पुत्र ! तू शान्ति धारण कर। बुरा मत मान। जो तेरी विमाता ने कहा है वह सत्य ही कहा है कि तू श्रीहरि की शरण में जा। उस समय ध्रुव जी पाँच ही वर्ष के थे –

धर्मार्थकाममोक्षाणां य इच्छेत् श्रेयमात्मनः। एकमेव हरेऽस्तत्र कारणं पादसेवनम्॥

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये चार पुरुषार्थ हैं। इनमें से किसी पुरुषार्थ की, कल्याण की यदि कोई इच्छा रखता है तो इधर-उधर मत भटको। भगवान् के चरणों की सेवा को छोड़कर और कोई दूसरा मार्ग नहीं है। कहते हैं कि एक दूसरा मार्ग तो है। आपको

अर्थ की प्राप्ति यदि करनी है तो आप दूसरे भी उपाय कर सकते हैं। जैसे आजकल लोग कर रहे हैं। भ्रष्टाचार से धन कमा रहे हैं । बेईमानी से कमा रहे हें । धोखाधड़ी से कमा रहे हैं । कुछ लोग डाका डाल रहे हैं । कोई चोरी कर रहे हैं । इससे वे धन कमा रहे हैं । कहते हैं कि हम भगवान् के पास क्यों जाएँ ? पर बात यह है कि इस तरह का जो धन है वह स्थायी नहीं रहता । यदि रह भी जाए तो दुःख देता है और चला भी जाता है ।

राम विमुख सम्पति प्रभुताई । जाइ रही पाई बिनु पाई ।।

जो राम से विमुख होता है उसके पास यदि सम्पत्ति आ भी जाए । प्रभुता आ भी जाए तो वह चली जाती है और अगर रह जाए तो वह उसका उपभोग नहीं कर पाता है।

आपके पास सम्पत्ति है, सब कुछ है । छप्पन भोग चला आया आपके सामने लेकिन एक रोटी पचाने की ताकत नहीं है । डाइबिटीज हो गई । डाक्टर ने कह दिया कि मीठा मत खाओ, घी-तेल मत खाओ, उबली हुई सब्जी और रूखी रोटी खाओ । यह सब करने पर भी डाइबिटीज पीछा नहीं छोड़ती। फिर कहते हैं कि टेन्शन मत करो । जब राम से विमुख हो तो टेन्शन नहीं होगा तो और क्या होगा ? जब आप भगवान् का भजन करोगे तब उनके भजन में आपको मस्ती आएगी । दुनिया के चिन्तन में कहाँ मस्ती आने वाली है ? कौन क्या कर रहा है ? किसने क्या अच्छा किया और किसने क्या बुरा किया? इसी के चिन्तन में समय लगाते हैं । यही तो लोग चर्चा का विषय बनाते हैं । किसका जन्म हो गया और कौन मर गया ? यही सब सोचते रहते हैं । यह सब मन में चिन्ता उत्पन्न करता है । यदि भगवान् की कथा आप सुनेंगे, भगवद्चर्चा करेंगे, भगवान् का नाम लेंगे तो यह सब नहीं होगा । कहने का मतलब यह है कि यदि आपको धन चाहिए तो भी भगवान् की शरण में जाना होगा। माता सुनीति ने जो कहा कि धर्म चाहिए तो आप भगवान् की शरण में जाएँ, अर्थ चाहते हैं तो भगवान् की शरण में जाएँ, भोग चाहते हैं तो भगवान् की शरण में जाएँ और यदि मोक्ष चाहते हैं तो भी भगवान् की शरण में जाएँ–

इसलिए बेटे ! जाओ । हरि की शरण में जाओ । तपस्या करो । तुम्हारी विमाता ने जो कहा है वही मार्ग ठीक है । मन में मत्सर मत रखो । तब ध्रुव जी ने मन में संकल्प किया कि जब विमाता ने भी कहा है और माता भी कह रही है तो हम भगवान् की ही शरण में जाएँगे । इतने में क्या हुआ कि नारद जी आ गए । नारद जी ने राजा उत्तानपाद को देखा । उससे पूछा कि उत्तानपाद ! तुम क्यों दुःखी हो ? तुम्हारा मुख क्यों म्लान है?

उसने कहा कि देखिए । मेरा एक बेटा था जिसका नाम ध्रुव था । वह मेरी गोद में बैठना चाहता था । मैं अपनी स्त्री के वश में ऐसा हो गया कि मैंने उसका तिरस्कार कर दिया। अब वह वन में चला गया है । जंगल में जाने पर सिंह, व्याघ्र आदि कोई हिंस्र जन्तु उसको काट लेगा । मैंने उसको उसकी माता के सहित निकाल दिया है ।

यहाँ उसका संकेत मिलता है । तब नारद जी ने कहा कि हम उसको मनाकर लाते हैं । नारद जी गए और ध्रुव से कहा कि तुम कहाँ जा रहे हो ? उसने कहा कि तपस्या करने जा रहे हैं । देवर्षि ने पूछा कि क्यों जा रहे हो तो उसने कहा कि मेरी माता ने मेरा अपमान किया है । बोले कि केवल सिंहासन में बैठने से ही रोका है ना ? चलो। हम राजा से कहकर तुमको और बड़े सिंहासन में बैठा देंगे । तुम्हारा अधिकार तुमको दिलाकर रहेंगे। ऐसा कैसे हो सकता है ? ध्रुव जी ने कहा कि महाराज ! अब तो हम भगवान् से ही लेंगे । राजा से नहीं लेंगे । किसी मनुष्य से हम कुछ नहीं लेंगे । तब नारद जी ने उनको द्वादशाक्षर मन्त्र दिया और मन्त्र जपने का सब विधान बताया ।

एक अर्थार्थी भक्त और हुए हैं उपमन्यु । उपमन्यु नाम के एक ऋषिकुमार थे । ब्राह्मण बालक थे । राजकुमारों के साथ खेलते-खेलते वे एक बार राजभवन में पहुँच गए । राजकुमारों के साथ उनको दूध पीने को मिला । उनके स्वयं के घर में दूध नहीं था तो महल में दूध पीकर वे बड़े प्रसन्न हुए । आकर अपनी माता से कहने लगे कि माँ! हमको दूध दो । हमको दूध बहुत अच्छा लगता है । माँ ने कहा कि बेटा ! ठीक है । घर में गेहूँ के दाने थे । उन्हीं को सिल में पीसकर उसको पानी में मिलाकर दूध जैसा सफेद कर दिया और बेटे से कहा कि बेटा लो दूध पी लो । उपमन्यु ने कहा कि माँ ! यह तो दूध नहीं है, कुछ और ही है । महल का दूध तो बड़ा मधुर था, स्वादिष्ट था। तब माँ बोली कि हमारे पास तो वह है नहीं । तुम भगवान् शंकर की आराधना करो । उपमन्यु भगवान् शंकर की आराधना करने लगा । बहुत घोर तपस्या की । भगवान् शंकर उपमन्यु की परीक्षा लेने के लिए इन्द्र बनकर ऐरावत हाथी में बैठकर आए और उससे कहा कि तुम तपस्या क्यों करते हो ? दूध के लिए ही न? जो तुम्हारी इच्छा है वह मैं तुम्हें देने के लिए तैयार हूँ । तुम जो माँगोगे मैं वह तुम्हें दे दूँगा । शिव की भक्ति की आवश्यकता नहीं है । उपमन्यु ने कहा कि भगवन् आपको हमने नहीं बुलाया है । आप क्यों पधारे ? हमें जो कुछ लेना होगा हम भगवान् शिव से ही लेंगे । बोले कि हमसे ले लो । उपमन्यु बोला कि हम शिव के बनाए कीड़े भी बनने को तैयार हैं लेकिन आपके बनाए इन्द्र भी बनने को हम तैयार नहीं । आपसे हम कुछ नहीं लेंगे । उन्होंने कहा कि हमारी अवज्ञा करता है ? तेरा सिर फोड़ दूँगा । वज्र उठाया तब उपमन्यु ने अपना सिर

झुका दिया। उन्होंने सोचा कि अब वज्र सिर पर पड़ने ही वाला है लेकिन वे क्या देखते हैं कि सामने वृषभ पर बैठे भगवान् शिव आ गए हैं और कह रहे हैं कि माँग वरदान। बोले हमको दूध दो। भगवान् बोले कि हम तुमको दूध का समुद्र दे देते हैं। उसको भगवान् ने दूध का समुद्र दे दिया।

कहने का तात्पर्य यह है कि भगवान् की शरण में जाकर यदि आप थोड़ा भी माँगें तो वे अनन्त दे देते हैं और सबसे बड़ी बात यह है कि जिसके लिए लोग उनकी शरण में जाते हैं वे उस वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा ही समाप्त कर देते हैं। आप देखिए कि विभीषण को लंकेश रावण ने लात मारी तो क्रुद्ध होकर वे भगवान् राम की शरण में गए। मन में वासना आ गई कि रावण राजा बना बैठा है। मैं राम की शरण में जाऊँगा तो वे मुझे राजा बना देंगे। इसी कारण वे भगवान् की शरण में गए। वहाँ जाकर वे क्या बोलते हैं ?

उर कछु प्रथम वासना रही। प्रभु पद प्रीति सहित सो बही ॥

हमारे हृदय में कुछ वासना थी भगवन्! लेकिन आपके चरणों की प्रीति से वह वासना बह गई।

अब आप देखिए। ध्रुव जी भगवान् की शरण में गए। भगवान् ने उनको दर्शन दिया और कहा वरदान माँगो तो उसने कहा कि भगवान्! आपसे बड़ी कोई चीज है ? अब हम कुछ नहीं लेंगे। हमारी इच्छाएँ समाप्त हो गईं। तब भगवान् ने कहा कि यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है फिर भी हम यह चाहते हैं कि लोगों को यह भ्रम न रह जाए कि भगवान् की शरण में ध्रुव गया था तो वह नष्ट हो गया, उसका कुछ नहीं हुआ। इसलिए छत्तीस हजार वर्ष तक तुम अखिल भूमण्डल के सम्राट् रहोगे और केवल इतना ही नहीं, उसके पश्चात् तुमको ध्रुवपद की प्राप्ति हो जाएगी। मेरा धाम जिसकी परिक्रमा सप्तर्षि करते हैं वह तुमको प्राप्त होगा। भगवान् की शरण में जो जिस उद्देश्य से जाता है उस उद्देश्य की सद्गुणी वस्तु उसको मिलती है। अन्त में उसकी उस इच्छा का भी अन्त हो जाता है। इसलिए सुकृती जन मेरा भजन करते हैं।

अब यहीं पर प्रवचन पूर्ण करते हैं। थोड़ा सा भगवान् का नाम लीजिए।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

—*—

[12]

।। राम राम बारह ।।

राजा काल का कारण है

समुपस्थित सज्जनो, देवियो !

आज जन्माष्टमी है । द्वापर युग में जब असुरों का प्रभाव बढ़ गया, लोग धर्म के विरुद्ध आचरण करने लगे और विशेषकर उस समय के जो राजा थे वे सब अधर्म के अनुसार अपना राज्य करने लगे, तब उनकी अधार्मिकता के कारण प्रजा में भी अधार्मिकता बढ़ गई । कहा गया है –

कालो वा कारणं राज्ञः राजा वा कालकारणम् ।
इति ते संशयो माऽभूत् राजा कालस्य कारणम् ।

राजा काल का कारण है या काल राजा का कारण है इसमें संशय नहीं करना चाहिए क्योंकि राजा ही काल का कारण होता है । जब राजा अन्याय करने लग जाता है, धर्म का उल्लंघन कर अपनी मनमानी इच्छाओं को पूर्ण करने की चेष्टा करने लग जाता है तो उसका अनुसरण उसकी प्रजा भी करने लगती है । ऐसी प्रजा, ऐसा राज्य और राजा पृथ्वी के लिए भार बन जाते हैं । पृथ्वी का कहना है कि मेरे ऊपर गिरि, सर, सिन्धु अर्थात् पर्वत, सरोवर और समुद्र सब मुझमें ही हैं –

गिरि सर सिन्धु भार नहिं मोहीं । जस मोहिं गरुअ एक परद्रोही ।।

पृथ्वी कहती है कि पर्वत का मुझे उतना भार नहीं है, सरोवर और समुद्र का भी नहीं है परन्तु जो परद्रोही होता है वह मुझे भारी लगता है । कहते हैं कि ऐसे लोग पामर कहलाते हैं । परद्रोही जो दूसरे से द्रोह करने लगे। परदाररत, परस्त्रीगामी, परधन अपहारी, दूसरों का धन हड़पने लगते हैं और पर-अपवाद माने दूसरों की निन्दा ही जिनका व्यसन बन जाता है वे पामर कहलाते हैं ।

हमलोग राक्षसों के सम्बन्ध में यह धारणा रखते हैं कि उनके खड़े बाल होते हैं, किसी किसी के सींग और दाँत बड़े भयंकर होते हैं, वे काले-काले होते हैं । वे राक्षस कहलाते हैं लेकिन बहुत से लोग ऐसे भी होते हैं जो देखने में बड़े सुन्दर होते हैं, आँख सुन्दर, नाक सुन्दर, दाँत भी सुन्दर, गौर वर्ण सब कुछ अच्छा लेकिन आचरण बुरे ।

मन मलीन तन सुन्दर कैसे । विष रस भरा कनक घट जैसे ।।

ऐसे लोग होते हैं जो दूसरों से बिना कारण द्रोह करते हैं । दूसरों की पत्नी का सतीत्त्व हरण करने में जिनको सुख मिलता है, दूसरों का धन छीन लेते हैं । सिद्धान्त यह है कि चाहे घर में रखा हो, चाहे रास्ते में पड़ा हो जो उसका स्वामी है, जब तक वह स्वयं न दे दे तब तक उस वस्तु का उपयोग नहीं करना चाहिए । बहुत से लोग रास्ते में चीज पड़ी रहती है उठाकर कहते हैं कि हमें तो मिल गई । अरे ! कैसे मिल गई ? वह तो किसी व्यक्ति के प्रमाद से, गलती से गिर गई थी । तुम्हारा कर्त्तव्य यह है कि या तो उसको वहीं पड़ी रहने दो तो वह उसे ढूँढ लेगा या फिर आप उस वस्तु के स्वामी को खोजकर उसके पास पहुँचा दो । यह सिद्धान्त है । आपको कोई वस्तु मिली तो आप देखते हो इधर-उधर कि कोई देख तो नहीं रहा और उठाकर अपने पॉकेट में डाल लिया और कहते हो कि हमें मिल गई । यह चोरी है । मनुष्य की ऐसी चेष्टा चोरी की कोटि में आती है ।

कुछ लोगों को दूसरों की निन्दा करने में ही आनन्द आता है । भले ही वह दुर्गुण उस व्यक्ति में हो या न हो । झूठ में ही आरोपित कर देते हैं और खिल्ली उड़ाते हैं । बात क्या है? आपको क्या पड़ी है कि कौन क्या कर रहा है ? रामचरितमानस में कहा गया है –

सबकी निन्दा जे जन करहीं । ते चमगादड़ होइ अवतरहीं ।।

जो सबकी निन्दा करते हैं वे चमगादड़ बनकर जन्म लेते हैं । चमगादड़ उसे कहते हैं जो जिस मुँह से खाती है उसी मुँह से मलत्याग भी करती है । ऐसे लोग पृथ्वी पर भार हैं । आप समझ लीजिए कि कंस मथुरा का राजा बन गया । इधर शिशुपाल, दन्तवक्त्र, विदूरथ, बाणासुर, जरासन्ध । जरासन्ध सौ राजाओं को कैद करके उनकी नरबलि चढ़ाने वाला था । एक था भौमासुर, जो इतना प्रबल बलवान था कि किसी भी सुन्दरी कन्या का हरण कर लेता था और चाहता था कि वह उसके साथ विवाह कर ले । सोलह हजार राजकन्याओं का हरण उसने कर लिया । आप सोचिए कि उस समय तो हाहाकार मच गया होगा उन लोगों में । किसी की भी कन्या विवाह योग्य होती थी तो भौमासुर आ जाता था और लेकर चला जाता था । निशाचर होने के लिये निशाचर वंश में जन्म हो यह तो एक बात है । दूसरी बात यह है कि आपका आचरण अगर निशाचरों सा हो गया तो आप किसी वंश में रहो निशाचर ही कहे जाओगे ।

जिन्हके अस आचरण भवानी । ते जानहु निशिचर सम प्राणी ।

इसी तरह से जब भी पृथ्वी में अधर्म छा जाता है तो भगवान् अवतार लेते हैं। भगवान् के अवतार का प्रयोजन क्या है ? भगवान् कहते हैं कि मनुष्य का कल्याण चाहे वह व्यक्ति हो या समाज हो धर्म से ही हो सकता है। धर्म का पालन किए बिना कोई भी प्राणी सुखी नहीं हो सकता। समाज तभी सुखी और शान्त रह सकता है जब वह अपने-अपने कर्त्तव्य का, अपने-अपने धर्म का निष्ठापूर्वक पालन करे। धर्मविरुद्ध आचरण करने से समाज में कष्ट बढ़ जाता है इसलिए जब भी कभी समाज में इस प्रकार की अवस्था आती है तो भगवान् धर्म की स्थापना कर देते हैं। धर्म की स्थापना से समाज अपने-अपने कर्त्तव्य और धर्म का पालन करके सुखी हो जाता है। द्वापर युग में एक बार ऐसी अवस्था आ गई और पृथ्वी बहुत कष्ट पाने लगी। हम लोग यह मानते हैं कि प्रत्येक वस्तु का कोई न कोई अधिदेवता होता है। धरती की भी अधिदेवता है जिसको हम लोग धरती माता कहते हैं। पृथ्वी माता, जिसका नाम क्षमा है। हमलोग धरती को पवित्र मानते हैं, उसी पर रहते हैं उसी पर पैर रखते हैं लेकिन जब सबेरे उठते हैं तो पैर रखने के पहले प्रार्थना करते हैं –

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।।

हे धरती माता ! समुद्र ही तेरे वस्त्र हैं, पर्वत तेरे स्तन हैं, तू विष्णु की पत्नी है, हम तेरे ऊपर पैर रख रहे हैं इसलिए हमें क्षमा कर दो। पृथ्वी का एक नाम ही क्षमा है। पृथ्वी पर सब कुछ होता है पर वह पृथ्वी सब कुछ सहती चली जाती है। परन्तु जब अधर्म बढ़ जाता है, पाप बढ़ने लग जाता है तो वह कष्ट पाती है। हम लोग यह मानते हैं कि कोई भी भौतिक पदार्थ तभी तक रहता है जब तक उसका अधिष्ठात्रि देवता उसमें रहता है। पर्वत भी तभी तक पर्वत रहेगा जब तक उसका अधिष्ठात्री देवता उसमें रहेगा। हमारा आपका शरीर कब तक है ? जब तक इसमें जीव है। यदि इसमें से जीव निकल जाए तो इसके पाँच तत्त्व बिखरने लगते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश सब इसमें से अलग होने लगते हैं। पृथ्वी के भी देवता हैं जिसको हमलोग धरणि, धरा और धरती माता कहते हैं। वह दुःखी हो गई और उसने सोचा कि अब क्या करें ?

गौर्भूत्वाश्रुमुखी खिन्ना क्रन्दन्ती करुणं विभोः ।
उपस्थितान्तिके तस्मै व्यसनं स्वमवोचत ।।

धरती ने गौ का रूप धारण कर लिया और आँखों में आँसू भर लिए। वह खिन्ना हो गई और रम्भाने लगी। पहले वह देवताओं के पास गई तो देवता ब्रह्मा और ब्रह्मा जी

विष्णु जी के पास गए। देखते हैं कि एक साँप कुण्डली मारकर बैठा है वह भी सफेद है, काला नहीं है । उसके सौ फन हैं। प्रत्येक फन में एक मणि है । वह मणिधर है । उसके ऊपर श्यामल श्रीअंग वाले भगवान् लेटे हैं –

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं,
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ।

लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं,
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ।।

लक्ष्मी देवी जिनके चरण दबा रही हैं । उनके पास समुद्र पार करके वहाँ जाकर समाहित चित्त होकर, एकाग्र हो करके देवमूर्ति जो पालक हैं, रक्षक हैं उनकी आराधना की कि भगवन् ! अब आप हमारी रक्षा कीजिए। हमको बचाइए । पृथ्वी का दुःख दूर कीजिए । गौ रूप धारण किया था पृथ्वी माता ने । गौ से अधिक दयनीय प्राणी कोई दूसरा नहीं हो सकता ।

कहते हैं कि बादशाह अकबर एक बार कहीं जा रहे थे । उनके पास नरहरि नाम के एक कवि थे । एक बार खेत में वे बैठे थे तो गाय उनकी ओर देखकर रम्भा रही थी। अबकर ने नरहरि से पूछा यह गाय क्या कह रही है ? नरहरि बड़े बुद्धिमान् थे । उन्होंने कविता में उत्तर दिया ।

अरिहुं दन्त तृण धरहि ताहि मारत न सबल कोइ ।
हम संतत तृण चरहिं वचन उच्चरहिं दीन होइ।

अमृत पय नित स्रवहिं बच्छ महि थंबन जावहिं ।
हिन्दुहिं मधुर न देहिं कटुक तुरकहिं न पियावहिं ।

कह कवि नरहरि अकबर सुनौ विनवत गौ जोरे करन ।
अपराध कवन मोहि मारियत मुएहु चाम सेवै चरण ।

शत्रु भी यदि सामने आकर मुँह में तिनका दबा ले और कहे कि मैं तुम्हारी गाय हूँ तो लोग उसको नहीं मारते हैं । हम तो एक बार नहीं, रात-दिन तिनका ही चरते रहते हैं। किसी का कोई अपराध नहीं करते फिर भी हमें निर्दयता से काट दिया जाता है । अस्तु।

परमात्मा सर्वव्यापक है । जिस प्रकार काठ में अग्नि रहती है, दिखती नहीं पर

मन्थन करने से वह प्रकट हो जाती है उसी प्रकार परमात्मा भी प्रकट हो जाते हैं। मन्थन क्या है ? प्रेम। जहाँ प्रेम देखते हैं वहाँ वे अपने आप को प्रकट कर लेते हैं। प्रकट इसलिए कर लेते हैं कि जीव की जो संसार में आसक्ति है और जिस कारण यह भटक रहा है इसकी आसक्ति समाप्त हो जाए। भगवान् का जिसने दर्शन कर लिया, जो उनका ध्यान कर लेता है उसी के मन से संसार की वासनाएँ दूर हो जाती हैं –

प्रभु व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रकट होहिं मैं जाना।

सब लोगों ने भगवान् से प्रार्थना किया। यहाँ द्वापर युग की कथा है।

गिरं समाधौ गगने समीरितां निशम्य वेधास्त्रिदशानुवाच ह।
गां पौरुषीं मे शृणुतामराः पुनर्विधीयतामाशु तथैव मा चिरम्।

आकाशवाणी हुई। भगवान् ने आकाशवाणी में जो कुछ कहा उसको ब्रह्मा जी ने सुना। आजकल की जो आकाशवाणी है दिल्ली से चलने वाली उसको तो कोई भी बटन दबाए तो सुन लेता है लेकिन भगवान् की जो आकाशवाणी है उसे वही सुनता है जिसका हृदय पवित्र होता है। जब कोई मनुष्य पाप करने चलता है तो भगवान् उसके हृदय में बैठे हुए हैं। वे कहते हैं कि मत कर। एक बार उसके हृदय को धक्का लगता है पर फिर भी वह जबरदस्ती उस कार्य को करता है। करते-करते उसका जब अभ्यास हो जाता है तो मोटी नाक जैसी हो जाती है। मोटी नाक से दुर्गन्ध का पता नहीं चलता। जिनका हृदय काम, क्रोध, लोभ से अशुद्ध हो चुका है वे लोग भगवान् की वाणी नहीं सुन पाते। अन्यथा जब भी कोई पाप कर्म करने चलता है एक बार भगवान् उसको जरूर रोकते हैं। भगवान् की वाणी, अन्तर्यामी की वाणी सुनने के लिए मन शुद्ध होना चाहिए।

देवकी कंस की चचेरी बहन लगती थी। विवाह के योग्य जब हुई तो वसुदेव जी के साथ उसके विवाह का निश्चय हुआ। वसुदेव जी बारात लेकर आए और विधिवत वसुदेव जी के साथ उनकी भाँवर पड़ी। जब विदा होने लगी तो कंस अपना सोने का रथ लेकर आ गया। उसका अपनी बहन देवकी से स्नेह था। घोड़ों की रस्सी अपने हाथ में पकड़े हुए वह स्वयं रथ को चलाता हुआ आया और बोला कि आपलोग हमारे रथ में बैठिए। आपके घर तक हम आपको रथ में बिठाकर पहुँचाएँगे। इतना अधिक आदर कर रहा था वह देवकी वसुदेव का। देवताओं को लगा कि जब इतना प्रेम है तो यह दुष्ट तो मारा ही नहीं जाएगा। इसका तो वसुदेव देवकी से इतना प्रेम है। इनके घर में भगवान् अवतार लेंगे तो यह मरेगा कैसे ? तभी आकाशवाणी हुई –

अस्यास्त्वामष्टमो गर्भो हन्ता यां वहसेऽबुध !

अरे मूर्ख ! जिसको तू ले जा रहा है इसका आठवाँ गर्भ तेरा मारने वाला होगा। यह आकाशवाणी ने कह दिया । इस आकाशवाणी का सुनना था कि कंस तलवार निकालकर देवकी का वध करने के लिये उद्यत हो गया । वसुदेव जी समझाने लगे कि स्त्री को मारने में कौन सी वीरता है ? वह स्त्री भी कौन सी ? अपनी बहन और वह भी छोटी । वह भी विवाह के पर्व में । ऐसा नहीं करना चाहिए आपको ।

कंस ने कहा महाराज ! यह हमारी बहन नहीं है, यह तो हमारी मौत है । हम इसको मारेंगे । वसुदेव जी बोले कि हे वीर! जिसने भी जन्म लिया है उसके जन्म के साथ-साथ उसकी मृत्यु भी जन्म ले लेती है । आप यह समझिए कि लोग जन्मदिवस मनाते हैं, सोचते हैं कि हमारे इतने वर्ष हो गए पर वे यह नहीं समझते कि इतनी हमारी आयु में से इतने वर्ष कम हो गए । माता-पिता कहते हैं कि हमारा बेटा बढ़ गया पर वास्तविकता यह है कि इतना वह घट गया । जन्म लेते ही मनुष्य की मृत्यु भी साथ में जन्म ले लेती है। जन्म दिवस इसलिए मनाना चाहिए कि इतने दिन हमारे जन्म के हो गए । अभी तक हमने क्या किया ? जो किया है उसकी आत्मसमीक्षा कर लें और जो नहीं किया है उसको करने का प्रयत्न कर लें । जो अपना कर्त्तव्य है उसको पूरा करें ।

कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य के जन्म के साथ ही मृत्यु का भी जन्म हो जाता है चाहे आज हो चाहे सौ वर्षों बाद हो । मृत्यु तो ध्रुव है, निश्चित है । लोग कहते हैं कि महाराज! यदि हम मर गए तो ? कुछ दिन तो जी लेने दो । अरे ! मर जाने के बाद भी तुम्हें शरीर मिल जाएगा । जैसे स्वप्न में जब आप सो जाते हैं तो दूसरा शरीर मिल जाता है । इसी तरह से मरने के बाद भी दूसरा जन्म मिल जाता है । इसलिए शरीर की चिन्ता मत करो । अच्छे कर्म करो जिससे कि अच्छा शरीर मिले । ऐसे पाप मत करो जिससे कि खराब योनियों में जाना पड़े, कूकर-शूकर बनना पड़े । आत्मा अजर-अमर है, इसका नाश नहीं होता । शरीर का जन्म-मरण तो स्वाभाविक रूप से होता ही है । इस तरह से कंस को वसुदेव जी ने ज्ञान दिया पर उसकी कहाँ समझ में आया?

पानी में पाषाण, भीजत है भेदत नहीं ।
ऐसे ही नर का ज्ञान, जानत है मानत नहीं ।।

चाहे सौ वर्षों तक पानी में पत्थर डाले रहो पर जब आप उस पत्थर को फोड़ोगे तो सूखा ही निकलेगा । ऐसे ही मनुष्य को कुछ भी उपदेश करो वह सब जानता है पर मानता कहाँ है ? ऐसे ही दूसरों को समझाने के लिए सब ज्ञानी हो जाते हैं लेकिन अपने आचरण करने के लिए किसी को ज्ञान नहीं है । मनुष्य सबको ज्ञान देता है । जब कंस नहीं माना

और मारने के लिए उद्यत ही हो गया तो वसुदेव जी ने सोचा कि किसी तरह से मृत्यु को अभी टालो। उन्होंने कंस से पूछा कि बताइए आपको देवकी से भय है या उनके पुत्रों से? बोला कि उसके बेटों से भय है। बोले कि हम वचन देते हैं कि इसके बेटे हम आपको दे देंगे। जन्म लेते ही आप मार डालना उनको। कहते हैं –

दामिनि दमकि रह न घन माहीं।
खल की प्रीति यथा थिर नाहीं।।

बिजली जैसे चमक कर नष्ट हो जाती है वैसे ही खल की प्रीति, माने दुष्टों का प्रेम भी थोड़ी ही देर रहता है। उनके स्वार्थ में बाधा पड़ी तो वे एकदम अपना प्रेम छोड़कर मारने को उतारू हो जाते हैं। अब वसुदेव जी घर में आए, देवकी का गर्भाधान हुआ, पहला पुत्र हुआ जिसका नाम कीर्तिमान था। आप देखिए कि वसुदेव जी कितने धर्मात्मा थे, वचन के पक्के थे। उन्होंने कहा कि हम तो वचन पूरा करेंगे। देवकी के पेट से बच्चे के निकलते ही उन्होंने कीर्तिमान को अपने हाथों में लिया और पहुँच गए कंस के पास कि यह लो देवकी का पहला पुत्र। कंस ने कहा - आहा ! यह हमारा भांजा है। इसे ले जाओ। हमें तो आठवें से भय है। वसुदेव जी को लगा कि चलो पीछा छूटा। अभी थोड़ी ही दूर गए थे कि इतने में नारद जी वीणा बजाते, हरि गुण गाते वहाँ आ गए। उनको तो देवकार्य करना था। कंस बैठा था, उसके मन में क्षणिक करुणा आई। दुष्ट तो वह था ही। नारद जी ने पूछा कि कंस ! क्या सोच रहे हो ? कंस बोला कि महाराज ! संसार में सज्जन भी हैं। पूछा कौन सज्जन तो बोला यही श्री वसुदेव जी। वसुदेव अपने वचन का पक्का है। पहला पुत्र जब होता है तो लोग कितने उत्साहित होते हैं ? बाजा बजाते हैं, हर्षित होते हैं, नाचते-गाते हैं पर वह मौत के सामने ले आया। नारद जी बोले कि आपने क्या किया? कंस बोला कि हमने तो कहा कि हमें तो आठवें से भय है, यह तो पहला था इसलिए छोड़ दिया उसको। नारद जी के हाथ में अष्टदल कमल था। उन्होंने उसे कंस को दिखाकर पूछा कि इनमें से आठवाँ कौन सा है ? पीछे से गिनोगे कि आगे से गिनोगे ? वीणा बजाते, नारायण-नारायण करते अब वे वहाँ से चलते बने। कंस ने तुरन्त वसुदेव जी को बुलाया और उनके हाथ से उस पुत्र को लेकर पत्थर पर पटक कर मार डाला। ऐसे ही उसने देवकी के छः पुत्र मार डाले। अब सातवें पुत्र का मौका आया–

सप्तमो वैष्णवं धाम यमनन्तं प्रचक्षते।
गर्भो बभूव देवक्या हर्षशोकविवर्धनः।।

जैसे कोई महापुरुष महाराज आते हैं तो उनका सिंहासन पहले ही आ जाता है।

परब्रह्म परमात्मा का अवतार होने वाला है श्रीमद्भागवत में । नारायण का आसन है शेषनाग । शेषनाग आ गए, बैठ गए । बात यह है कि रामावतार में शेषनाग के अवतार लक्ष्मण जी थे और भगवान् नारायण के अवतार श्रीरामचन्द्र जी थे । कभी-कभी भगवान् राम के कार्य से लक्ष्मण जी को असन्तोष होता था, गुस्सा भी आता था लेकिन वे छोटे होने की मर्यादा के कारण कह नहीं सकते थे । इसलिए भगवान् ने कहा कि इस बार तुम ही बड़े भाई बन जाओ । वे पहले देवकी के गर्भ में आए तो देवकी के हर्ष और शोक दोनों को बढ़ाने वाले हो गए । हर्ष इस बात का कि सातवाँ आया है तो अब आठवाँ भी आने वाला है । आठवाँ आया तो कंस मारा जाएगा और मेरा दुःख दूर होगा।

जब कंस ने यह पूछा कि देवकी का आठवाँ पुत्र कैसे उत्पन्न होगा तब नारद जी ने उसको यह भी बता दिया था कि ये सभी भगवान् के अवतार का निमित्त बन रहे हैं। यह सुनकर कंस ने वसुदेव-देवकी को कैद कर लिया । दोनों को हथकड़ी बेड़ी डालकर कारागार में अवरुद्ध कर दिया । उग्रसेन ने इस पर ऐतराज किया तो उनका भी मुकुट उतार कर अपने माथे पर रख लिया और उन्हें भी कारागार में बन्द कर दिया । स्वयं राजसिंहासन पर बैठ गया । इसके बाद क्रमशः देवकी के छः पुत्रों को उसने मार डाला। देवकी-वसुदेव कंस के कारागार में ही अवरुद्ध थे, कष्ट में थे और यह सोच रहे थे कि जैसे ही आठवाँ पुत्र आएगा यह दुष्ट मारा जाएगा और हमारा बन्धन छूटेगा । शोक इस बात का हुआ कि जैसे छः मारे गए वैसे ही यह भी मारा जाएगा ।

भगवानपि विश्वात्मा भक्तानामभयंकरः ।

भगवान् जो विश्वात्मा हैं, भक्तों को अभय प्रदान करने वाले हैं उन्होंने अपनी योगमाया को बुलाया और कहा– **गच्छ देवि व्रजं भद्रे गोपगोभिरलंकृतम् ।**

हे देवी ! तुम व्रज में चली जाओ जहाँ गोप-गोपी रहते हैं वहाँ वसुदेव की एक पत्नी रोहिणी छिपकर रह रही है । तुम देवकी के सातवें गर्भ को उसके पेट से निकाल कर रोहिणी के पेट में डाल दो और स्वयं नन्द की पत्नी यशोदा से अवतार धारण करो। योगमाया ने ऐसा ही किया । ऐसी माया फैलायी कि लोग कहने लगे कि कंस ऐसा दुष्ट है कि जिसने अपनी बहन को ऐसा धमकाया कि उसका सातवाँ गर्भ ही गिर गया । इस तरह से देवकी का सातवाँ गर्भ सुरक्षित हुआ ।

और तब भक्तों को अभय देने वाले भगवान् पहले वसुदेव जी के मन में आए । जब मन में भगवान् आए तो वसुदेव जी का तेज बढ़ गया । वे सूर्य के समाज तेजस्वी हो गए। इसके पश्चात् वसुदेव जी ने दीक्षा क्रम से देवकी के मन में भगवान् को प्रविष्ट कराया ।

शास्त्रों में चार प्रकार की दीक्षा बताई गई है। मन्त्र दीक्षा जो गुरु शिष्य को देते हैं। स्पर्श दीक्षा जब गुरु शिष्य के सिर में अपना कर-कमल रख देते हैं। तीसरी नेत्र से करुणामयी दृष्टि से वे देख देते हैं और चौथी शिष्य कहीं भी हो अपने मन से ही उसका कल्याण कर देते हैं।

सा देवकी जगन्निवासनिवासभूता नितरां न रेजे।
भोजेन्द्रगेहेऽग्निशिखेव रुद्धा सरस्वती ज्ञानखले यथा सती।

वह देवकी जगन्निवास भगवान् का निवास बन गई। जगत् जिसमें निवास करे ऐसे भगवान् ने जिसके उदर में निवास किया इतनी सौभाग्यशालिनी देवकी उसी प्रकार शोभा को प्राप्त नहीं हुई जिस प्रकार कोई सभी शास्त्रों का विद्वान् हो पर किसी को शिक्षा न देता हो वैसे ही वह भोजेन्द्र कंस के गेह में अग्नि की शिखा के समान अवरुद्ध थी। कोई उसे नहीं देख पाया।

पर कंस एक बार आया। देखा कि देवकी-वसुदेव जिस अँधेरी कोठरी में बैठे थे वह जगमगा रहा है। उसने सोचा कि इसके पेट में मेरा मारने वाला हरि आ गया। पहले ऐसा नहीं था, पर अब क्या करूँ ? अभी अगर मारूँगा तो पेट में तो आ ही गया है। कहीं पेट फाड़कर निकल गया तो ? जैसे खम्भा फाड़कर नरसिंह भगवान् निकल गए वैसे ही देवकी का पेट फाड़कर निकला और अभी हमें मार डाला तो हमें कलंक और लगेगा कि यह अपनी बहन को ही मारने चला था इसलिए मारा गया। अपयश के कारण नरक और मिल जाएगा। इसका जन्म ही हो जाने दो। पहरेदारों से कहा कि चाहे दिन हो चाहे रात हो जब भी इसका जन्म हो हमको तुरन्त सूचित करो। अब वह बुरे-बुरे स्वप्न देखने लगा। मरण निकट आ गया था इसलिए उसको दुःस्वप्न दिखने लगे। भागवत में वर्णन आता है कि कौन-कौन से स्वप्न दिखने लगे। इधर ब्रह्मा, शंकर और सब देवता, नारदादि मुनि भगवान् की गर्भस्तुति करते हैं। गर्भस्तुति के पश्चात् भगवान् का आविर्भाव होता है –

निषीथे तम उद्भूते जायमाने जनार्दने।
देवक्यां देवरूपिण्यां विष्णुस्सर्वगुहाशयः ।।
आविरासीद् यथा प्राच्यां दिशीन्दुरिव पुष्कलः।

कहते हैं कि आधी रात का समय था, भगवान् के जन्म का जब समय आया तो जैसे पूर्व दिशा से पूर्ण चन्द्रमा का उदय होता है वैसे ही देवकी के सामने वे चतुर्भुज रूप से प्रकट हो गए। जैसे गर्भ से बालक निकलता है वैसे भगवान् नहीं निकले, वे प्रकट हो

गए । आप सोचिए कि शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किए हुए, माथे में किरीट, कानों में कुण्डल, भुजाओं में अंगद, हाथों में कंकण, कटि में मेखला, पीताम्बर पहने हुए जैसे भगवान् प्रकट हुए वैसे कोई बालक जन्म लेता है क्या ? वे तो प्रकट हुए – **भए प्रकट कृपाला ।**

कौशल्या जी के सामने भी भगवान् श्रीराम प्रकट हुए हैं । उनका जन्म नहीं हुआ। जब भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र नन्द जी के घर पहुँचे तो योगमाया ने वहाँ भी सबको सुला रखा था । योगमाया ने भी यशोदा जी से अवतार धारण कर लिया था । वे भी यदि साधारण बालिका के समान जन्म लेतीं तो यशोदा जी सो ही नहीं सकती थीं । उनको तो पता ही नहीं चला और वे प्रकट हो गईं । उन्हें निद्रा में इस बात का भी भान न रहा कि मैंने बालक को जन्म दिया है या बालिका को ? इस तरह से वसुदेव जी ने योगमाया जी को यशोदा जी के पार्श्व में लिटाया और कन्या को लेकर जैसे आए थे वैसे ही लौटकर चले गए । वहाँ जाकर देवकी की गोद में बैठा दिया। कन्या भी तब तक चुप रही । आप देखिए कि भाई-बहन में कितना प्रेम है । भाई को मौत से बचाने के लिए बहन ने अपने आपको मौत के मुँह में डाल दिया । भारत में ऐसा भाई बहन का प्यार होता है । वहाँ पहुँचने के बाद कन्या ने जैसे ही रुदन प्रारम्भ किया पहरेदारों की नींद तब खुली । किवाड़ तो अपने आप बन्द हो गए थे । वे दौड़े और कंस के पास पहुँचे । महाराज ! देवकी का प्रसव हो गया । पूछा कि बालक है कि बालिका तो पहरेदार ने कहा कि आवाज तो बालिका जैसी लग रही है । अब आज इतना ही ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो ।
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[13]

।। राम राम तेरह ।।

परमात्मा की सर्वोत्तम देन का सम्मान करें

समुपस्थित सज्जनो ! देवियों !

श्रीमद्भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने प्रिय सखा उद्धव से कहा -

सृष्ट्वा पुराणि विविधान्यजमात्मशक्त्या वृक्षान् सरीसृपमृगान्खगदंशमत्स्यान् ।
तैस्तैरतुष्टहृदयं पुरुषं विधाय ब्रह्मावलोकधिषणं मुदमाप देवः ।

इसका अर्थ है कि विश्व के स्रष्टा भगवान् ने अनेकों प्रकार के शरीरों की रचना की। यह शरीर क्या है? एक प्रकार से पुर है, नगर है । इनका जो स्वामी है वही पुरुष कहलाता है । भगवान् ने वृक्ष बनाए जो खड़े ही रहते हैं वे स्थावर कहलाये । उसके पश्चात् सरकने वाले साँप बनाए, दौड़ने वाले पशु बनाए, उड़ने वाले पक्षी बनाए और जल में तैरने वाली मछलियों को बनाया । एक से एक शरीर बनाया पर उनको सन्तोष नहीं हुआ । अन्त में उन्होंने मनुष्य बनाया और देखा कि मनुष्य के भीतर ऐसी बुद्धि है जिस बुद्धि से परमात्मा का दर्शन हो सकता है । परमात्मा का साक्षात्कार हो सकता है । इसका नाम है **ब्रह्मावलोकधिषणं ।** ब्रह्म के आलोक अर्थात् साक्षात्कार की बुद्धि । जब यह ब्रह्मा जी ने देखा तो उनको आनन्द का अनुभव हुआ । उनके मुख से निकला **सुकृतम्** । मैंने बड़ा अच्छा किया । अब जब भगवान् ने अन्त में हमको बनाया और हमारे भीतर ऐसी बुद्धि दी जिससे कि हम परमेश्वर को पहचान सकें, परमेश्वर का भजन कर सकें तो हमारा यह कर्त्तव्य होता है कि हम उस बुद्धि को सार्थक बनावें, उसको निरर्थक न छोड़ें। जैसे आप सोचिए कि आपने सुन्दर फूलों की माला गूंथकर हमें पहनाई, हमने उस माला को उतारकर हाथ-पैर से मसलकर गन्दी जगह यदि डाल दिया तो आप यह सोचेंगे कि गुरुजी ने हमारी श्रद्धा का सम्मान नहीं किया । समझा नहीं, जब भगवान् ने हमको ऐसी बुद्धि दी और हम उस बुद्धि का वैसा उपयोग नहीं करते, भगवान् को पहचानने के लिए कभी सत्संग में नहीं बैठते, केवल खाने-पीने में लगे रहते हैं –

कभी न आयो सत्संगति में कभी न हरि गुण गायो ।
पच पच मर्‍यो बैल की नाईं भोर भए उठि खायो ।।
तूने हीरा सो जनम गवायो भजन बिन बावरे ।

कभी सत्संग में नहीं बैठे, कभी हरि चर्चा नहीं की। केवल खाने-पीने की बात में लगे हुए हैं। अन्ना हजारे कहते हैं भ्रष्टाचार मिटाओ, रामदेव कहते हैं काला धन लाओ। सब धन की ही बात करते हैं लेकिन हमारे देश में जो रोज गौ माताएँ कट रही हैं उसकी कोई चर्चा नहीं करता। रामसेतु को तोड़ने की तैयारी हो रही है उसके बारे में कोई नहीं बोलता, गंगा को उत्तराखण्ड में ही जगह-जगह से बाँधा जा रहा है। किनारे के शहरों का गन्दा पानी उसमें डाला जा रहा है। ऐसे-ऐसे कारखाने गंगा किनारे बना दिए गए हैं जिनका दूषित जल गंगा के जल को जहरीला बना रहा है। यहाँ तक कि गंगा में स्नान करने वाले को केन्सर तक हो रहा है पर इसके सम्बन्ध में कोई नहीं बोल रहा है। सब के सब चैनलों को अपने कब्जे में लिए हुए हैं। इसी में लोगों को भरमा रहे हैं। गंगा की शुद्धि की बात करते। महात्मा के रूप में बने हुए लोग हैं पर रामजन्मभूमि की चर्चा नहीं करते। जो करते हैं वे भी केवल सत्ता के लिए करते हैं। हमें राज्य मिल जाए इसके लिए करते हैं। जन्मभूमि में शास्त्रोक्त रीति से भगवान् का मन्दिर बने और उसमें विधि-विधान से सनातन धर्म के अनुसार पूजा हो, माता कौशल्या की गोद में भगवान् श्रीराघवेन्द्र के बाल रूप का दर्शन हो।

व्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुण विगत विनोद।
सोइ अज भक्त प्रेमवश कौशल्या की गोद॥

जो व्यापक, निरंजन, निर्गुण, विगतविनोद ब्रह्म है वह भक्तों के प्रेम के परवश होकर बालक बन जाता है। वह ब्रह्म ही कौशल्या अम्बा की गोद में बैठकर उनका स्तनपान करता है। आपने परसों सुना कि जन्माष्टमी के दिन भगवान् ने अवतार धारण किया तो सबसे पहले चतुर्भुज रूप में उन्होंने दर्शन दिया। हाथ में शंख, चक्र, गदा, पद्म लिए पीताम्बर पहने, कानों में कुण्डल, मस्तक पर स्वर्णजटित मुकुट, हाथों में बाजूबन्द, कंकण पहने भगवान् देवकी को दर्शन देते हैं। जब वे स्तुति करती हैं तो उन्हें स्मरण कराते हैं कि तुम पहले जन्म में कौन थे। कहते हैं कि स्वायम्भुव मन्वन्तर में तुम्हारा नाम पृष्णि था, तुम्हारे पति का नाम सुतपा था। तपस्या कर तुम लोगों ने यह वरदान माँगा कि हम तुम्हारे पुत्र बनें इसलिए हमने तुम्हारे पुत्र के रूप में पृष्णिगर्भ के रूप में अवतार लिया था। इसके पश्चात् दूसरे जन्म में तुम कश्यप और अदिति बने तो मैं तुम्हारे यहाँ वामन के रूप में अवतरित हुआ। तीसरे जन्म में तुम ही देवकी और वसुदेव बने हो तो आज मैंने तुम्हारे यहाँ जन्म लिया है। तुम पुत्र भाव से या ब्रह्म भाव से मेरा भजन करोगे तो भवसागर से पार हो जाओगे। माता देवकी बोलीं कि भगवन्! यदि आप अपना चतुर्भुज रूप बनाए रखोगे तो फिर कौन मानेगा कि आप हमारे पुत्र हैं। तब भगवान् ने अपना छोटा सा रूप

बनाया और ऐसी-ऐसी लीलाएँ की कि जिनके दर्शन-श्रवण से मनुष्य का हृदय अत्यन्त पवित्र हो जाता है। वह ब्रह्म साक्षात्कार का अधिकारी हो जाता है। भगवान् सगुण साकार स्वरूप धारण करके अर्जुन के माध्यम से आश्वासन देते हैं –

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।।

जो अनन्य भाव से मेरा चिन्तन करते हुए मेरी उपासना करते हैं, जो मुझसे नित्य संलग्न हो जाते हैं, किसी न किसी नाते से मेरे साथ जुड़ जाते हैं उनका योग और क्षेम मैं देखता हूँ। प्रेम के लिए नाता जरूरी है, अपनापन जरूरी है। इसीलिए हमलोग भगवान् से कोई न कोई नाता जोड़ लेते हैं। कुछ लोग भगवान् को अपनी माता मानते हैं, कुछ पिता मानते हैं, कुछ बन्धु मानते हैं, कुछ सुहृद मानते हैं। भगवान् को सुहृद मानने वाला निश्चिन्त हो जाता है। भगवान् श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं – **सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ।**

वह सब प्राणियों का सुहृद है। जो बिना प्रत्युपकार की अपेक्षा किए हमारे हित की चिन्ता करता है उसको सुहृद कहते हैं। वह हमसे बदले में कुछ नहीं चाहता पर हमारा उपकार करता है। संसार में ऐसे बहुत ही कम लोग मिलते हैं। माता-पिता हमारे सुहृद हैं, बेटा कुछ भी करे, माने या न माने लेकिन माता उसका हित चाहती है – **कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ।**

पुत्र भले ही कुपुत्र हो जाए पर माता कभी भी कुमाता नहीं होती। ऐसे सुहृद बहुत कम हैं। माता के मन में भी कभी-कभी यह भावना आ जाती है कि बड़ा होकर पुत्र मेरा पालन करेगा, मेरी रक्षा करेगा, मेरा सहारा बनेगा लेकिन भगवान् को क्या आवश्यकता है आपकी ? भगवान् को क्या चाहिए ? उन्हें आपसे कुछ नहीं चाहिए फिर भी वे आपका कल्याण चाहते हैं। वे कहते हैं कि अनन्य भाव से यदि आप मेरा चिन्तन करते हैं तो मैं आपका योग-क्षेम स्वयं वहन करूँगा। अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति का नाम योग है और प्राप्त वस्तु की रक्षा का नाम क्षेम है। भगवान् कहते हैं कि निश्चिन्त हो जाओ। बस मेरा चिन्तन करके बैठ जाओ तो मैं तुम्हारा योग-क्षेम स्वयं वहन करूँगा।

गोस्वामी तुलसीदास जी की कुटिया में बहुत सा सामान रखा रहता था। एक रात को चोर वहाँ आ गए और उन्होंने सोचा कि उनका सामान चुरा लें। उन्होंने देखा कि दो राजकुमार हाथ में धनुष-बाण लिए पहरा दे रहे हैं। वे रात के चारों पहरों में आए लेकिन हर समय दोनों राजकुमार पहरा देते हुए ही मिले। सबेरा हुआ तो चोर तुलसीदास जी

के पास आए और पूछा कि महाराज ! दो राजकुमारों को आपने कब से पहरेदार बना रखा है ? पूछा उन्होंने कि क्या बात है ? तो वे बोले कि हम लोग चोर हैं। कल रात हम चोरी करने आए थे पर आपकी कुटिया के आस-पास रात भर दो राजकुमार धनुष-बाण लिए पहरा दे रहे थे । तुलसीदास जी ने उनको नमस्कार किया कि भैया ! तुमलोग भाग्यशाली हो कि तुम्हें उनके दर्शन हो गए । बोले कि अब ये सामान तुम ले जाओ। हमारे सामान के कारण भगवान् को हमारी पहरेदारी करनी पड़ी । जब वे योग-क्षेम वहन करने के लिए तैयार ही हैं तो हमको सब मिल ही जाएगा । कोई चिन्ता की बात नहीं है। इसलिए भक्त कहता है –

का चिन्ता मम जीवने यदि हरिर्विश्वम्भरो गीयते,
नो चेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्यं कथं निःसरेत् ।

इत्यालोच्य मुहुर्मुहुर्यदुपते लक्ष्मीपते केवलं,
त्वत्पादाम्बुजचिन्तनेन सततं कालो मया नीयते ।

यदि भगवान् का नाम विश्वम्भर है तो मुझे अपने जीवन की क्या चिन्ता है ? यदि वे विश्वम्भर न होते तो बालक के जन्म लेने के पहले माता के स्तन में दूध कहां से आ जाता ? बालक अभी पैदा भी नहीं हुआ पर उससे पहले उन्होंने उसके भोजन का प्रबन्ध कर दिया । ऐसा देखकर हे यादवपते ! श्रीपते ! आपका नामस्मरण करते हुए मैं अपना जीवन बिता रहा हूँ । यह भावना हमारे हृदय में होनी चाहिए । परमेश्वर का साक्षात्कार करना ही औदार्य है, न करना ही कृपणता है । इसके सम्बन्ध में आप फिर सुनेंगे । अभी आपको एक अच्छा कार्यक्रम देखना है इसलिए हम अपना प्रवचन यहीं समाप्त करते हैं। थोड़ा सा भगवान् का नाम लीजिए ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो ।
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[14]

।। राम राम चौदह ।।

समस्त विश्व का पालन भगवान् ही करते हैं

समुपस्थित सज्जनो ! देवियो !

आपके सामने प्रसंग चला था कि समस्त विश्व का पालन भगवान् ही करते हैं। वे अपनी पालिनी शक्ति से सब जगत् का कल्याण कर रहे हैं । हमने बताया था कि किसी भक्त ने कहा –

का चिन्ता मम जीवने यदि हरिर्विश्वम्भरो गीयते,
नो चेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्यं कथं निःसरेत् ।

इत्यालोच्य मुहुर्मुहुर्यदुपते लक्ष्मीपते केवलं,
त्वत्पादाम्बुजचिन्तनेन सततं कालो मया नीयते ।

इसका अर्थ है कि जब भगवान् का नाम विश्वम्भर है तो हमें अपने भरण-पोषण की क्या चिन्ता ? यदि वे विश्वम्भर न होते तो बालक के जन्म के पहले माता के स्तनों में दूध कहां से आ जाता ? कहना होगा कि जन्म देने के पहले ही भगवान् ने प्राणी के भोजन का प्रबन्ध कर दिया है । इसीलिए भक्त लोग सोचते हैं कि जब भगवान् ने चोंच दी है तो चुगने को भी वे ही देंगे । जब थोड़ी कठिनाई प्रतीत हुई तो एक भक्त ने भगवान् से कहा – **विश्वम्भर ! मां भर**

हे विश्वम्भर ! आप मेरा भरण कीजिए । यदि आप मेरा भरण नहीं करते हैं तो अपना विश्वम्भर नाम छोड़ दीजिए । यदि नाम भी नहीं छोड़ते और मेरा भरण भी नहीं करते तो मुझे विश्व से ही अलग कर दीजिए । जब मैं विश्व में ही नहीं आऊँगा तो आपको मेरे भरण की चिन्ता ही नहीं होगी । भक्त कह रहा है कि मुझे जन्म-मरण से मुक्त कर दो । जब शरीर ही नहीं होगा तो भूख कहाँ से होगी ? जीव के ऊपर भगवान् की कृपा सदा बरस रही है ।

एक बार लक्ष्मी जी ने भगवान् विष्णु से पूछा कि महाराज ! आप जगत् का पालन करने वाले हैं । हम आपसे एक बात पूछेंगे । दोपहर हो गई तो उन्होंने पूछा कि भगवन्! आपने सब प्राणियों के भोजन का प्रबन्ध कर दिया ? भगवान् ने कहा कि हाँ, कर दिया।

पूछा कि प्राणी मात्र का कर दिया तो बोले कि हाँ, मैंने प्राणिमात्र के भोजन का प्रबन्ध कर दिया है। लक्ष्मी जी ने भगवान् की परीक्षा लेने के लिए डिब्बी में एक कीड़े को बन्द कर रखा था। डिब्बी को बक्से में रख दिया था। जब भगवान् बोले तो लक्ष्मी जी ने बक्से में से वह डिब्बी निकाली तो वह कीड़ा चावल खा रहा था। बात क्या थी कि जब लक्ष्मी जी उस कीड़े को डिब्बे में बन्द करने लगीं तो उनके माथे में किसी ने चावल लगा दिया था। वही चावल उस डिब्बी में टपक गया था। बिना देखे उन्होंने बन्द कर दिया था। कहने का अभिप्राय यह है कि सबको किसी न किसी बहाने से भगवान् खिलाते हैं। इसलिए लोक में कहावत है – **हिल्ले रोजी बहाने मौत।**

रोजी भगवान् सबको देते हैं लेकिन हिल्ले से। किसी को खेती में लगा देते हैं, किसी को व्यापार में लगा देते हैं, किसी को नौकरी में लगा देते है, किसी न किसी काम में लोगों को लगा देते हैं। किसी न किसी बहाने सबकी रोजी चलती है परन्तु यह सब संयोग कौन बनाता है ? आपके हाथ-पाँव किसने सुरक्षित बनाए हैं ? मस्तिष्क किसने बनाया ? सब कुछ भगवान् का दिया हुआ है आपके पास। कोई ऐसा नहीं है जो अपने पुरुषार्थ से खाता हो। लेकिन भगवान् एक निमित्त बना देते हैं। कर्म को या उपासना को निमित्त बना देते हैं। इस निमित्त के अनुसार वे उसके अभीष्ट को देते हैं।

अब कुछ लोग एक दूसरा सवाल उठाते हैं कि देते तो हैं पर सबको एक सा क्यों नहीं दे रहे हैं ? किसी को दाल दलिया दे रहे हैं और किसी को हलुआ पूड़ी दे रहे हैं। सबको एक सा भोजन मिलना चाहिए। संसार में विषमता क्यों है ? बात यह है कि भगवान् ने यह नियम बनाया है कि हम जो भी फल देंगे वह कर्मानुसार देंगे। कर्म के अनुसार ही मनुष्य को भगवान् फल देते हैं और जीव जहाँ भी जाता है उसके कर्म उसको वहाँ पहुँचा देते हैं। कहते हैं कि जैसे हजारों बछड़ों के बीच में से खोजकर गाय अपने ही बछड़े को पहचान कर दूध पिलाती है इसी तरह से कर्म भी मनुष्य को पहचान लेता है कि कौन कहाँ है ? स्वर्ग में रहे, नर्क में रहे या पाताल में रहे उसके कर्म उसको फल देने के लिए वहाँ पहुँच जाते हैं। बहुत से लोग कहते हैं कि हम पितरों का तर्पण करते हैं, ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं, गौदान करते हैं। पितर तो स्वर्ग में हैं पर पानी यहाँ उलीच रहे हैं। कुछ लोगों ने यह देखकर मजाक उड़ाया।

एक व्यक्ति किसी ब्राह्मण को तर्पण करते हुए देखकर उसकी नकल करने लगा। लोगों ने पूछा कि तुम तो पितरों को मानते नहीं हो। श्राद्ध, तर्पण नहीं मानते हो तो फिर पानी क्यों उलीच रहे हो ? बोले कि हम अपने खेत में पानी पहुँचा रहे हैं। लोगों ने कहा कि खेत में पानी कैसे पहुँचेगा जब तुम यहाँ पानी उलीच रहे हो। वह बोला कि तब तुम्हारे

पितरों के पास कैसे पानी पहुँच जाएगा ? पूछने वाले ने उसको गाली दी तो वह आग-बबूला हो गया । उसने कहा कि जो गाली दिया वह उसके पास पहुँच गया क्या ? उसको निरुत्तर होना पड़ा ।

हम यदि मन्त्रपूर्वक समय पर पितरों के लिए तर्पण करते हैं तो उस तर्पण के पानी को पितर नहीं पीते, बल्कि उसको देखकर तृप्त हो जाते हैं । उनको तृप्ति मिलती है । हम हवन करते हैं, आहुति देते हैं अग्नि में तो सब देवताओं को कैसे मिलता है ? इन्द्राय स्वाहा, वरुणाय स्वाहा, कुबेराय स्वाहा । इन्द्र कहाँ बैठे हैं ? वरुण कहाँ बैठे हैं ? कुबेर कहाँ बैठे हैं ? हवन यहाँ हो रहा है । देखते-देखते हमारा शाकल्य जल गया । वस्तुतः जिस देवता के उद्देश्य से आहुति डाली जाती है पहले उस देवता का आह्वान किया जाता है । आवाहित देवता के लिए जो आहुति डाली जाती है उससे उनकी तृप्ति हो जाती है। प्रसन्नता हो जाती है । प्रसन्नता ही उनका भोजन है । भौतिक पदार्थ उनका भोजन नहीं है । कुछ लोग कहते हैं कि हमारे पितर मरकर न जाने किस योनि में गए होंगे? गाय बने होंगे कि घोड़ा बने होंगे या कि और किसी योनि में गए होंगे ? हमारा दिया हुआ पिण्ड कहाँ जाएगा ? जो उसका चारा है वही बनकर उनको वहाँ-वहाँ मिल जाएगा। आप जब कहीं मनीआर्डर करते हैं तो जिन नोटों को देकर आप मनीआर्डर करते हैं वही नोट उसे थोड़े ही मिलते हैं ? उसकी वैल्यू का नोट उसको मिल जाएगा। जो उसका भोजन है वह उसको मिल जाएगा ।

हम भगवान् को छप्पन भोग लगाते हैं तो क्या भगवान् छप्पन भोग खाते हैं? हाँ, खाते हैं लेकिन वे खाकर उसे अपने पेट में हजम करते हों ऐसी बात नहीं है । वे यह देखकर ही तृप्त हो जाते हैं कि मेरे भक्त ने यह सब अर्पण किया है। इसी तरह से हम किसी गुरु को माल्यार्पण करते हैं, पूजा करते हैं तो वे उसको देखकर प्रसन्न होते हैं । प्रसन्नता ही तृप्ति है । यदि प्रसन्नता न हो तो खूब खिला दो तृप्ति ही नहीं होगी । आप सब कुछ बना दो और पूछो कि कैसा था तो कहेंगे कि हाँ, सब कुछ तो ठीक था पर सब्जी में नमक कुछ कम हो गया था । ऐसे भी लोग होते हैं कि आप उनकी जितनी भी सेवा करें वे कुछ न कुछ आपकी त्रुटि निकाल ही देंगे । इसका मतलब यह है कि उनके पूर्वजों ने उनका पिण्डदान नहीं किया है । वे अतृप्त ही रहेंगे । उनको कुछ भी कर दो तृप्ति नहीं मिलेगी ।

भगवान् सबका सब कुछ करते हैं पर कर्मानुसार करते हैं । ऐसा नहीं करेंगे तो भगवान् में वैषम्य नैर्घृण्य आ जाएगा । वैषम्य कहते हैं विषमता को । सबके साथ एक सा व्यवहार होना चाहिए । भगवान् सबके माता-पिता हैं । सबके साथ एक सा व्यवहार

क्यों नहीं करते ? विषम क्यों करते हैं ? और नैर्घृण्य यह है कि किसी को अच्छा दे दिया और किसी को उससे वंचित कर दिया। उसके प्रति निर्दयी हो गए। यह वैषम्य और नैर्घृण्य दोष भगवान् में न आए इसलिए भगवान् भी कुछ बहाना बना लेते हैं। इसीलिए भगवान् दीनदयालु कहलाते हैं, दुःखी दयालु नहीं कहलाते। दुःखी तो संसार में अनेकों हैं पर सबके लिए तो भगवान् नहीं आते। जो दीन हो जाता है उसकी रक्षा करते हैं। वहाँ पर भगवान् के सामने दीन होना आवश्यक होता है। भगवान् से सम्बन्ध आवश्यक होता है। आपने सुना होगा कि सुदामा जी को भगवान् ने बहुत बड़ा ऐश्वर्य दे दिया लेकिन दो मुट्ठी चावल को निमित्त बना लिया। कुछ लेकर दिया। इसी तरह से भगवान् जिसको भी कुछ देते हैं किसी न किसी को निमित्त बना लेते हैं। द्रौपदी का चीर बढ़ाया तो चीर को निमित्त बना लिया। ध्रुव को राज्य दिया तो तपस्या को निमित्त बना लिया। बिना तपस्या क्यों नहीं दे दिया ? जो भगवान् के द्वारा, भजन के द्वारा प्राप्त करते हैं उनमें और जो स्वाभाविक रूप से प्राप्त करते हैं उनमें अन्तर हो जाता है। दूसरे लोग तो इसी में फँस जाते हैं कि हम अपने पुरुषार्थ से खा रहे हैं। हमारे माता-पिता बचपन से हमें भोजन करा रहे हैं। युवावस्था में हम अपने परिश्रम से भोजन करते हैं। किसी के यहाँ नौकरी करते हैं तो हम यह समझते हैं कि मालिक हमारा पोषण कर रहा है। इसी में भूले रह जाते हैं। पर जो भगवान् की शरण ले लेता है उसके प्रति भगवान् के मन में भक्ति उत्पन्न हो जाती है। भगवान् के चरणों में, भगवान् के साथ सम्बन्ध जुड़ जाता है। सम्बन्ध जुड़ जाने के पश्चात् उसकी इच्छाएँ केवल पूरी ही नहीं होती बल्कि समाप्त हो जाती हैं। मन में कोई इच्छा ही नहीं रहती।

भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों में गोपियाँ गईं तो ऐसा कहा जाता है कि उनके मन में उस प्रकार का प्रेम था जैसा सामान्य नारियों के मन में होता है। वैसे तो सिद्धान्त यह है- **प्रेमैव गोपरामाणां काम इत्यवगत्पदाम्।**

पर गोपियों के हृदय में काम नहीं था। क्यों नहीं था ? क्योंकि उनके हृदय में पहले से ही श्याम था। जहाँ श्याम आ जाए वहाँ काम कैसे आ सकता है ? धोखे से आ गया। यह माना जाता है कि जब ब्रह्मा जी को मोह हुआ और वे ग्वाल-बालों को उठाकर ले गए, भगवान् श्रीकृष्ण ही ग्वाल बाल बने तो उसी साल सारे गोपों की लड़कियों का विवाह हुआ। भगवान् जो गोपाल बने थे वे उनके हृदय में बैठ गए। जिनके हृदय में श्याम बैठ जाएगा वहाँ काम कहाँ से आएगा ? उनके हृदय में भगवान् के प्रति जो प्रेम हुआ वह काम नहीं था, वह प्रेम था। लेकिन क्रिया तो वही थी, चेष्टाएँ तो वैसी ही थीं जो भगवान् के साथ जुड़ जाने के कारण कामनाओं का नाश करने वाली होती हैं। इसीलिए भगवान्

कहते हैं –

मह्या कामः कामाय कल्पते । प्रायो बीजाय नेश्यते ।

भगवान् के प्रति जो हमारा प्रेम होता है वह बन्धक नहीं होता । संसार में फँसाने वाला नहीं होता वह तो मोक्ष का साधन हो जाता है । यदि अन्न को भूँज दिया जाए या उबाल दिया जाए तो वह अंकुरित नहीं होता । इसी तरह से हम यदि भगवान् से अपनी इच्छाओं को जोड़ लें तो चाहे वह इच्छा काम हो, चाहे लोभ हो, अर्थ की भावना हो, यदि भगवान् के साथ जोड़ते हैं तो वह हमारे हृदय की अर्थ की इच्छा समाप्त हो जाती है । अब आप देखिए ध्रुव की बात है । ध्रुव जी भगवान् के पास गए । वैसे तो देखने में लगता है कि वे राज्य के लोभ से गए । राज्य के लोभ से तो जरूर गए पर उसके साथ-साथ उनकी यह भी भावना थी कि विमाता ने यह कहा था कि यदि तू राजा की गोद में बैठना चाहता है, सिंहासन में बैठना चाहता है तो तू तपस्या से भगवान् की आराधना करके मेरी कोख से जन्म ले । तभी तू राजसिंहासन में बैठने का अधिकारी होगा । यही बात ध्रुव जी के हृदय में चुभ गई और माता सुनीति ने भी इसकी पुष्टि कर दी । उसने कहा कि बेटा ! तुम्हारी विमाता ने भले ही क्रोध या ईर्ष्या से कहा हो, लेकिन यह बिल्कुल सत्य है –

धर्मार्थकाममोक्षाणां य इच्छेच्छ्रेय आत्मनः।
एकमेव हरेस्तत्र कारणं पादसेवनम् ।।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इनमें से यदि आप कोई भी श्रेय चाहते हैं तो एकमात्र उसका साधन भगवान् के चरण-कमलों की सेवा है । इसलिए तुम विमत्सर होकर सेवा ही करो। ध्रुव जी चले गए सेवा करने । कहते हैं कि जब वे तपस्या करने लगे तो भगवान् ने परीक्षा ली । माता सुनीति माया बनकर आ गई । ध्रुव के सामने रोने लगी कि बेटा! आँख खोल। तेरे पिता ने मुझको घर से निकाल दिया है । मैं कहाँ जाऊँ ? तपस्या छोड़, मेरा पालन कर। ध्रुव जी का मन एक बार विचलित हुआ लेकिन उन्होंने कहा कि ऐसा हो नहीं सकता। निश्चित ही यह माया है । अनेकों प्रकार से माया द्वारा विचलित करने का प्रयास किया गया पर वे निरन्तर तपस्या में ही लगे रहे। परिणामस्वरूप भगवान् का दर्शन हुआ। वर्णन आता है कि ध्रुव जी भगवान् का मन से ध्यान करते-करते इतने तन्मय हो गए कि भगवान् उनके हृदय में आ गए । उनका दर्शन कर वे परम आनन्द का अनुभव करने लगे। इतने में ही भगवान् गरुड़ में बैठकर साक्षात् उनके सामने आ गए। ध्रुव जी आँख बन्द किए हुए थे और भगवान् के आने पर भी उन्हें देख नहीं रहे थे तो भगवान् ने उनके मन

में स्थित मानसी मूर्ति को खींच लिया। जैसे ही उस मूर्ति को खींचा तो व्याकुल होकर ध्रुव जी ने अपने नेत्र खोले और साक्षात् भगवान् सामने दिखाई पड़े। ध्रुव जी बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने भगवान् की स्तुति करना चाहा पर वे कर नहीं पाए क्योंकि पाँच वर्ष की उनकी अवस्था थी । तब भगवान् ने उनके कपोल में अपना कम्बु, अपना शंख स्पर्श कराया तो समस्त विद्याओं में पारंगत होकर वे स्तुति करने लगे । इसके बाद भगवान् ने कहा कि ध्रुव ! वरदान माँग । ध्रुव जी ने कहा कि जब आप मिल गए तो आपसे अब हम क्या माँगे ? आपसे बढ़कर ऐसी कौन सी वस्तु है जिसे हम माँगे ? इसलिए अब हमको कुछ नहीं चाहिए । यह फल हुआ । ध्रुव जी की इच्छा समाप्त हो गई । राज की इच्छा समाप्त हो गई । भगवान् ने कहा कि तुम छत्तीस हजार वर्ष तक अखिल भू-मण्डल के सम्राट् बनोगे क्योंकि यदि तुम नहीं बनोगे तो लोग कहेंगे कि जो भगवान् की शरण में जाता है उसे कोई लाभ नहीं होता । इसलिए यह दिखलाने के लिए तुमको हम राज्य दे रहे हैं । तुम राज्य करो लेकिन राज्य के बीच में रहते हुए भी कमलपत्र के समान रहो। संसार में रहकर भी मेरा स्मरण करते रहो । अन्ततोगत्त्वा ध्रुव को भगवान् ने अटल पद प्रदान कर दिया । इस प्रकार से यदि मनुष्य के मन में भगवान् के प्रति किसी कारण से कोई इच्छा उत्पन्न हो जाए तो अन्ततोगत्वा उसका मोक्ष हो जाता है ।

एक बार की बात है । नारद जी ने भगवान् से कहा कि भगवन् ! संसार में बहुत से लोग दुःखी हैं । उनका दुःख दूर करने के लिए आप चलिए । यहाँ कहाँ बैठे हैं ? भगवान् ने कहा कि ठीक है चलो । भगवान् एक नगर में पहुँचे और जाकर एक महात्मा का वेश धारण कर लिया। नारद जी उनके प्रचारक बन गए । घूम-घूम कर प्रचार करने लगे कि बहुत सिद्ध महात्मा आए हैं । जो कुछ माँगता है उसे दान में दे देते हैं, वरदान दे देते हैं । सुनकर वहाँ भीड़ लग गई ।

संसार के लोग तो यह देखते हैं कि जो हम चाहते हैं वह इस महात्मा से मिलता है कि नहीं मिलता । कई लोग पूछते हैं कि तुम स्वामी जी के पास जाते हो न ? स्वामी जी के पास कोई कला है कि नहीं ? अगर हो तो हम भी चलें । मतलब यह है कि उनका कुछ स्वार्थ सिद्ध होना चाहिए । इसलिए आप देखो कि निर्मल बाबा के यहाँ कितनी भीड़ लगी । अरबों रुपया इकट्ठा कर लिया । रसगुल्ला खिलाकर, समोसा खिलाकर उसने लोगों को भरमा दिया । क्यों ? क्योंकि कोई न कोई समस्या से हर आदमी जूझ रहा है । वह सोचता है कि समस्या का हल यदि सस्ते में हो जाए तो हमको कुछ करना न पड़े । महात्मा जी तपस्या करके बैठे हैं, वे अपनी तपस्या का फल हमको दे देंगे । सच में यदि महात्मा चाहें तो तपस्या का फल दे भी देते हैं किसी-किसी पर दया करके ।

एक और दूसरी कथा सुनाते हैं । नारद जी एक बार घूमते-घूमते एक गृहस्थ के घर गए। उस गृहस्थ ने उनका बहुत स्वागत-सत्कार किया तो वे बहुत प्रसन्न हो गए और पूछा कि क्या चाहते हो ? कहा महाराज ! हमें कोई पुत्र नहीं है । आप बताइए कि हमारा कोई पुत्र होगा कि नहीं होगा ? नारद जी बोले कि हम तो पुत्र दे नहीं सकते । भगवान् से पूछकर बताते हैं । नारद जी ने जब भगवान् से पूछा तो उन्होंने कहा कि अरे ! नारद! क्या बात करते हो ? उसको तो सात जन्म तक कोई पुत्र नहीं होगा । नारद जी ने आकर उसको बता दिया । यह सब बताकर नारद जी तो चले गए पर एक दिन उस गृहस्थ के घर एक महात्मा आ गए । महात्मा भूखे थे तो उस गृहस्थ ने उन्हें सात रोटी खिलाई । महात्मा ने खाने के बाद पानी पिया और सात पुत्र का वरदान दे दिया । अब उसको पुत्र होना शुरु हो गया । कुछ दिनों में सातों पुत्र घर में इधर-उधर घूमने लगे । नारद जी फिर आए और देखा कि उसके घर में बच्चे ही बच्चे हैं तो उन्होंने उस गृहस्थ से पूछा कि बच्चे कहाँ से ले आए तुम अपने घर में ? गृहस्थ ने कहा कि तुम नारद जी हो या झूठों के सरदार हो ? तुम तो कहते थे कि सात जन्म में भी मेरे घर में पुत्र नहीं होगे पर मेरे तो इसी जन्म में हो गए । नारद जी को बड़ा गुस्सा आया और भगवान् के पास जाकर बोले कि यदि आपको उसे पुत्र देना ही था तो हमसे क्यों मना कराया ? भगवान् बोले कि उसके भाग्य में तो यही था पर जब उसने उस भूखे महात्मा को भोजन दिया तो उस महात्मा ने हृदय से आशीर्वाद दे दिया जिसके कारण उसका प्रारब्ध बदल गया ।

कभी-कभी महात्मा लोग अपने आशीर्वाद से लोगों के प्रारब्ध को भी पलट देते हैं लेकिन वे यदि यही करने लगे तो भगवान् का कार्य कौन करेगा ? इसीलिए महात्मा लोग कहते हैं कि उनकी शरण में जाओ । यह भी बात है कि आपने भजन किया है, तपस्या की है तो वरदान देने पर तो वह पूँजी तो खर्च होगी ही । एक दिन तो खर्च हो ही जाएगी। पर जिसके पास कोई पूँजी नहीं है, ढपोरशंख है, उसको वरदान देने में क्या लगता है?

एक आदमी के पास एक शंखी थी जो प्रतिदिन सौ मुद्राएँ देती थी । सोने की मुद्राएँ रोज पूजा के बाद वह दे देती थी । उस शंखी में एक व्यक्ति की आँख लग गई । उसके पास एक बहुत बड़ा शंख था, ढपोरशंख। उसने कहा कि अरे ! क्या तुम छोटी सी शंखी रखे हो ? यह बड़ा वाला रखो । उसने सोचा कि हमारे पास की शंखी तो छोटी है, यह बड़ा शंख ही ठीक है । शंखी उसको दे दी और वह ढपोरशंख लेकर चला गया। अब इसने ढपोरशंख की पूजा की । ढपोरशंख ने कहा कि माँग वरदान ! उसने कहा - सौ रुपया दो तो ढपोरशंख बोला दो सौ लो । कहा कि ठीक है, दो सौ दे दो तो कहा चार सौ लो । चार सौ दो कहा तो बोला आठ सौ लो। अब वह सुनते-सुनते थक गया। केवल

वह कहता था पर देता कुछ नहीं था । बोला कि तुम बस कहते ही हो, देते नहीं हो । यह सुनकर ढपोरशंख बोला –

या ददाति शतं मुद्रा गता सा पद्मशंखिनी ।
अहं ढपोरशंखोस्मि वदाम्येव ददामि न ।।

जो सौ मुद्रा देती थी वह शंखिनी तो चली गई । हम तो ढपोरशंख हैं, कहते हैं बस, देते नहीं हैं । ऐसे लोग आ जाते हैं जो हर एक के माथे में भभूत लगा देते हैं । विश्वामित्र जी के पास बहुत शक्ति थी । वे कई लोगों को भस्म कर चुके थे । चारों दिशाओं में उन्होंने घोर तपस्या की तब चारों दिशाओं से तपस्या भंग करने लोग आए तो उन्होंने सबको शाप दे दिया । इतने प्रभावशाली विश्वामित्र जी थे परन्तु जब मारीच और सुबाहु उनके यज्ञ में लाखों राक्षसों को लेकर बाधा डालने आने लगे तो उन्होंने सोचा कि हम किसको-किसको शाप देंगे ? राक्षस हजारों हैं और ऐसे तो हमारी तपस्या का बल ही समाप्त हो जाएगा । उनके मन में चिन्ता हुई –

गाधितनय मन चिन्ता व्यापी । बिनु हरि मरहिं न निशिचर पापी ।

उनके मन में चिन्ता व्याप्त हो गई कि इन निशाचरों का नाश तो हमारे हरि ही कर सकते हैं । तब वे राम-लक्ष्मण को लेने के लिए आए । नहीं तो वे अकेले स्वयं ही निपट लेते । लेकिन यह काम जीव का नहीं है और दूसरी बात यह कि महात्मा लोग लड़ाई नहीं कर सकते । शाप दे सकते हैं लेकिन तलवार लेकर थोड़े ही लड़ सकते हैं। यह काम भगवान् का है जो धनुष-बाण लेकर मारेंगे ।

जिस व्यक्ति ने कोई तपस्या नहीं की है वह यदि कुछ देता हुआ दिखाई पड़ता है तो यह काकतालीय न्याय है । ताड़ का एक बहुत बड़ा वृक्ष था । उसके ऊपर कौआ बैठा और अचानक वह पेड़ गिर पड़ा । लोगों ने सोचा कि कौए के वजन से पेड़ गिर गया पर वास्तविकता तो यह है कि वह पेड़ तो गिरने ही वाला था । संयोग से उसी समय कौआ बैठ गया । ऐसे ही आपकी नौकरी लगने ही वाली थी उसी समय किसी ने कह दिया कि आप इण्टरव्यू में पास हो जाओगे और आप पास भी हो गए तो आपने मान लिया कि उसके कहने से हो गया। थोड़ा विचार करिए कि सबका क्यों नहीं हो गया ? जिन-जिनका हुआ वे सब तो कहने आएँगे नहीं। जिनका हो गया वे कहेंगे कि इनके कहने से हमारा काम हो गया परन्तु यह नियम नहीं है । यह तो भगवान् के द्वारा ही होता है।

हम यह बता रहे थे कि कर्म का फल भगवान् ही दे सकते हैं, दूसरा कोई नहीं दे

सकता। उनमें अपरिमित शक्ति है । उनकी शक्ति का कोई पारावार नहीं है । इसीलिए जो सच्चे महात्मा हैं वे इंगित करते हैं कि भगवान् की ओर जाओ । कभी-कभी उनके द्वारा यह चमत्कार हो जाता है ।

ंतो वही हम बता रहे थे कि एक बार नारद जी भगवान् को एक नगर में ले गए। भगवान् एक वृक्ष के नीचे आँख मूँद कर आसन लगाकर बैठ गए । नारद जी ने प्रचार शुरु कर दिया कि बहुत बड़े महात्मा आए हैं। जो इच्छा हो वह दे सकते हैं । अब वहाँ भीड़ लग गई । भयंकर भीड़ इकट्ठी हो गई लेकिन महात्मा जी आँख खोलकर ही न देखें । सामने एक सेठ रहता था जो बहुत ही कंजूस था । न तो किसी महात्मा के पास जाता था और न किसी को कुछ दान करता था । उसकी स्त्री ने कहा कि एक महात्मा जी आए हैं । हमें कोई बच्चे नहीं हैं । चलो इनसे प्रार्थना कर लो । शायद काम बन जाए । वह गया तो महात्मा जी की ऑख खुल गई । पूछा कि क्या चाहता है ? बोला कि पुत्र चाहता हूँ तो भगवान् बोले जा पुत्र हो जाएगा । तथास्तु । पुत्र दे दिया । अब वहाँ से आगे चले तो जंगल में एक महात्मा रहते थे । घोर तपस्या करते थे और किसी से कुछ नहीं लेते थे। उसके यहाँ एक गाय थी । उस गाय का दूध पीकर ही तपस्या करते थे । गाय ही उसका एकमात्र सहारा थी । दोनों गुरु-चेले पहुँचे । दोनों का स्वागत किया । रात को वहाँ रुके और सबेरे किसी बात को लेकर झगड़ पड़े । जब किसी से झगड़ा करना हो तो कोई न कोई बहाना मिल ही जाता है । झगड़ा करने वाले आँख नहीं मिलाते । एक इधर देखेगा तो दूसरा उधर देखेगा । आँख से आँख मिला लें तो कुछ प्रेम हो जाए । झगड़ा करने वाले किसी न किसी बहाने से झगड़ा करते हैं ।

हम दृष्टान्त दिया करते हैं कि एक पतिव्रता नारी थी । उसका पति बड़ा क्रूर था। वह प्रतिदिन नियम से अपनी पत्नी को किसी न किसी बहाने से मारता था । वह बेचारी रोज पिट जाती थी । एक बार उसने सोचा कि हम ऐसा काम करें कि हमें पिटना न पड़े। एक दिन पति सबेरे उठा और पत्नी से पूछा कि नहाने के लिए पानी तैयार है ? पानी गरम है कि ठण्डा ? वह बोली आप किस पानी से नहाओगे ? बोला कि गरम पानी तो बोली कि लीजिए गरम पानी तैयार है । अब सबेरे मारने का मौका नहीं मिला । अब दोपहर में पति आया और पूछा कि भोजन तैयार है ? पत्नी पहले से ही सब तैयार करके बैठी थी । पूछा कि कच्चा बनाया कि पक्का ? यदि वह कहती पक्का तो कहता कि कच्चा क्यों नहीं बनाया और मारने लगता । कच्चा बनाती तो कहता पक्का क्यों नहीं और मारने लगता । बोली कि आप क्या खाओगे ? पति बोला कि आज हम पक्का खाएँगे तो पत्नी ने भोजन सामने लाकर रख दिया । उसने दोनों ही तैयार रखा था। दिन बीत गया । शाम

हुई। गर्मी के दिन थे। पति घूम-घामकर आया और पूछा कि बिस्तर लग गया? कहाँ लगाया ? भीतर कि बाहर ? यदि वह कहती भीतर तो कहता गर्मी में भीतर लगाया? यदि बाहर लगाती तो कहता कि हम भीतर सोएँगे। पत्नी ने दोनों जगह पहले से ही बिस्तर लगाकर तैयार रखा था। पूछा कि तुम कहाँ सोना चाहते हो तो पति बोला कि हम बाहर सोना चाहते हैं। उसने कहा कि हमने बाहर ही लगाया है। अब वह बाहर सो गया। पत्नी ने सोचा कि अब इसे नींद आ जाए तो हम समझें कि आज का दिन शान्ति से बीता। वह पति के पैर दबाने लगी। अब पति को नींद ही न आए। सोचने लगा कि आज तो मौका ही नहीं मिला मारने का। आँख खोलकर देखा तो आकाश गंगा दिखी। गुस्से से बोला यह क्या है ? आकाश में जो धारा सी दिखाई पड़ रही है वह क्या है? बेचारी अधिक जानती नहीं थी तो बोली कि यह देवताओं की सड़क है। बोला कि सड़क के नीचे तूने बिस्तर लगा दिया। एकाध चक्का यदि गिर गया तो क्या होगा ? यहाँ बिस्तर क्यों लगाया ? ऐसा कहकर पीटने लगा। बेचारी अब पिट ही गई।

ऐसे लोग होते हैं। लड़ाई करना होता है तो कुछ न कुछ बहाना बना ही लेते हैं। महात्मा जी ने भी चेले से लड़ाई करके कहा कि अब तुम्हारी गाय दूध नहीं देगी। अब नारद जी को बड़ा गुस्सा आया कि उस कंजूस को तो पुत्र दे दिया और इस महात्मा का दूध इन्होंने खत्म कर दिया। हम किसलिए लाए थे इनको ? अब जंगल से आगे बढ़े तो नारद जी ने पूछा कि आप किधर जाओगे ? उन्होंने कहा कि तुम क्यों पूछते हो ? तो बोले कि जिधर आप जाओगे उधर हम नहीं जाएँगे। बोले कि हमसे आपके द्वारा किया गया अन्याय नहीं देखा जा रहा है। उसको आपने पुत्र दे दिया और इसका आहार ही छीन लिया। नारद जी से भगवान् बोले कि देखो नारद! तुम समझते नहीं हो। पुत्र हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है। कईयों के होते हैं, इसका भी हो जाएगा। लेकिन इसका विश्वास हो जाएगा कि महात्मा लोग पुत्र दे सकते हैं तो यह महात्माओं के पास आने लगेगा, सत्संग करेगा। उनके पास बैठेगा तो बुद्धि शुद्ध हो जाएगी। फिर एक दिन इच्छा ही समाप्त हो जाएगी। नारद जी बोले कि ठीक है लेकिन महात्मा पर अन्याय क्यों किया आपने ? भगवान् बोले कि बात यह है कि जब हम गीता में कह चुके हैं कि –

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योग क्षेमं वहाम्यहम् ।।

अनन्य अर्थात् **न अन्यः आश्रयो यस्य स अनन्यः** जिसका कोई दूसरा आश्रय न हो वह अनन्य है। अनन्य होकर जैसे बछड़ा अपनी माता की बाट जोहता है, जैसे नवजात पक्षी अपनी माता की बाट जोहता है वैसे ही जो अनन्य भाव से भगवान् की बाट

जोहता है उसके योग और क्षेम का वहन मैं करता हूँ। अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति मैं कराता हूँ और प्राप्त की रक्षा मैं करता हूँ। तुलसीदास जी का दृष्टान्त हमने दे ही दिया है। भगवान् बोले कि जब हमने यह वचन दे ही दिया है तो यह गाय के पीछे क्यों पड़ा है? गाय की सेवा करे लेकिन गाय का दूध मिलेगा तब हम तपस्या करेंगे यह कोई बात नहीं। इसके भोजन की व्यवस्था करने के लिए हम तैयार हैं। भगवान् की इन सब बातों को सुनकर अब नारद जी का सन्देह दूर हुआ।

कहने का अभिप्राय यह है कि भगवान् के पास किसी इच्छा को लेकर यदि व्यक्ति जाए तो उसकी इच्छा पूरी होते-होते वह भगवान् के साथ जुड़ जाता है। भगवान् के साथ जुड़ जाने के कारण अन्त में वह परमार्थ की ओर आकृष्ट होकर मोक्ष मार्ग का पथिक बन जाता है। बस इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!
धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो।
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[15]

।। राम राम पन्द्रह ।।

भगवच्चरणारविन्द की सेवा से ही पुरुषार्थप्राप्ति

समुपस्थित सज्जनो, देवियो !

ध्रुव जी भगवान् के परम भक्त थे। जब उनकी विमाता सुरुचि ने उनका तिरस्कार किया और यह कहा कि उत्तम के समान राजसिंहासन पर यदि तुम बैठना चाहते हो तो जाकर तपस्या करो और मेरी कोख से जन्म लो। तभी तुम्हें राजा उत्तानपाद के पुत्र के रूप में राजसिंहासन पर बैठने का अवसर मिल सकता है। इस बात से उनका हृदय विदीर्ण हुआ और वे अपनी माता के पास जाकर रोए। माता ने बड़े तत्त्व की बात समझाई

धर्मार्थकाममोक्षाणां य इच्छेच्छ्रेय आत्मनः ।
एकमेव हरेस्तत्र कारणं पादसेवनम् ।।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चार पुरुषार्थ हैं। **आत्मनः श्रेयः इच्छेत्** अर्थात् जो अपनी आत्मा का कल्याण चाहता है वह **एकमेव हरेस्तत्र कारणं पादसेवनम्** माने एकमात्र भगवान् के चरण-कमलों की सेवा से ही प्राप्त हो सकता है। यही बात ध्रुव जी ने पकड़ लिया और यही बात सबके लिए लागू होती है। जो व्यक्ति विपत्ति से मुक्त होना चाहता है वह भगवान् का आश्रय लेता है, भगवान् से प्रार्थना करता है। जो किसी कामना को पूर्ण करना चाहता है वह भगवान् का आश्रय लेकर अपनी कामना पूर्ण कर सकता है। तीसरी बात जो अपना कल्याण चाहता है, श्रेय चाहता है वह भी भगवान् की शरण ले सकता है।

संसार में दो चीजें हैं – एक प्रेय और दूसरा श्रेय। प्रेय उसको कहते हैं जो हमको प्रिय तो लगता है लेकिन बाद में अप्रिय हो जाता है। प्रिय तो लगता है लेकिन हमारे लिए कल्याणकारी नहीं होता। संसार के जो भोग हैं वे प्रेय हैं। इन प्रेयों से मनुष्य को जन्म-मरण से छुटकारा नहीं मिल सकता। ये बन्धन में डालने वाले हैं। यह संसार हेतुफलात्मक है। जब आप किसी विषय से प्रेम करेंगे तो आपके हृदय में राग होगा। **सुखानुशयी रागः** जिससे हमको सुख मिलता है उससे हमारा राग हो जाता है और **दुःखानुशयी द्वेषः** जिससे हमको दुःख मिलता है उससे हमारा द्वेष होता है। आप देख लीजिए कि कोई अपना सम्बन्धी, स्वजन यदि आपको सुख देता है तो उससे आपका राग हो जाता है।

यदि वही दुःख देने वाला हो जाए तो उससे आपका द्वेष हो जाता है ।

उदाहरण के लिए समझ लीजिए कि आपके बेटे ने जन्म लिया । आपने उसको पढ़ाया-लिखाया, योग्य बनाया और व्यवसाय में लगा दिया, अच्छी नौकरी दिला दी । लड़का कमाने लगा तो आपने उसका विवाह कर दिया । बाजे-गाजे से बारात लेकर आप पहुँचे । बहू को लेकर आप घर आए । सासू बड़ी प्रसन्न हुई । नव वधू के आने पर उसने हर्ष मनाया । जब उसने प्रणाम किया तो आशीर्वाद दिया । देवताओं के दर्शन कराया। बड़े-बूढ़ों से आशीर्वाद दिलाया और बोली कि बहुरानी अब तुम्हें कुछ करने की आवश्यकता नहीं है । तुम तो आराम से बैठी रहो । घर का काम हम संभाल ही रहे हैं । बहुरानी ने सोचा कि बड़ी अच्छी सासू मिली है । प्रसन्न हो गई । कुछ दिन बाद सासू जी थक गईं । कहने लगी कि बहू ! इस घर को मैंने बहुत दिनों तक संभाला, अब तू संभाल । उसने संभालना शुरू किया । संभालते-संभालते उससे कुछ गलती होने लगी तो सासू टोकने लगी । पहले कुछ दिन तक तो बहू चुप रही पर उसके बाद उसने भी जवाब देना शुरू कर दिया । उसका भी मुँह खुला तो सासू झल्लाई और अपने पति से माने बहू के ससुर से बोली कि यह बहू नहीं है, यह तो मिर्चा है । ऐसे शब्द बोलती है कि हमारा दिल जल जाता है । ससुर समझाते हैं कि देखो अभी पराए घर की लड़की है, धीरे-धीरे सीख जाएगी। लेकिन बार-बार जब झगड़ा होने लगता है, वाद-विवाद बढ़ जाता है तो उसकी शिकायत सुनते-सुनते ससुर अपने बेटे से कहता है कि बेटा ! अपनी बहू को संभाल । यह तुम्हारी माँ को तंग करती है । कटु शब्द बोलती है । बेटे ने अपनी पत्नी को डाँटा, फटकारा । बहू ने भी अपनी बात अपने पति से कही । पति प्रभावित हो गया । पिता ने फिर अपने बेटे से कहा कि बेटा अपनी बहू को संभाल तो बेटा बोला कि पिताजी ! आप भी मेरी माता को संभालो। अब सोचिए कि अन्त में क्या होता है ? उसी बेटे और बहू को बाप कहता है कि तू बहू को लेकर कहीं चला जा। हमारा तुम्हारा अब नहीं बनेगा । क्या इसी के लिए बहू लाए थे ? इसी के लिए बेटे को पाला था? पाला तो इसलिए था कि बेटा हमको सुख देगा । जब तक सुख देते रहते हैं तब तक प्रेम रहता है और जब दुःख देने लग जाते हैं तो जिनसे प्रेम होता है उन्हीं से द्वेष हो जाता है ।

ऐसे ही पदार्थों की बात है । कोई भी वस्तु कभी हमको अच्छी लगती है फिर उससे अरुचि हो जाती है। ऐसी स्थिति में राग-द्वेष मनुष्य के हृदय में आ जाता है । जिससे राग होता है उसको प्राप्त करने के लिए कर्म करता है और जिससे द्वेष होता है उससे बचने के लिए भी कर्म करता है । जब मनुष्य कर्म करने लगता है तो कर्म के फलस्वरूप जन्म लेने लगता है । क्योंकि सुख-दुःख का अनुभव बिना शरीर के नहीं हो सकता । शरीर

से ही सुख-दुःख की अनुभूति होती है। शरीर ही भोगायतन है । इसमें बैठकर ही हमलोग सुख-दुःख का अनुभव कर सकते हैं, अन्यथा नहीं कर सकते । एक बार एक मुस्लिम सज्जन हमारे पास आए । हमारा गीता का प्रवचन चल रहा था। हम बता रहे थे कि गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप ।।

हे अर्जुन ! मेरे तेरे अनेकों जन्म हो गए हैं । मैं उन्हें जानता हूँ पर तू उन सबको नहीं जानता । इस बात को सुनकर वे हमसे एकान्त में मिले और बोले कि आपलोग पुनर्जन्म मानते हैं पर हमलोग तो पुनर्जन्म नहीं मानते। हमलोग तो यह मानते हैं कि खुदा ने संसार बनाया । संसार बन गया और एक दिन कयामत आएगी । जो जीव संसार में जन्मे हैं वे मरेंगे तो उन्हें कब्र में गाड़ दिया जाएगा । वे कब्र में कयामत तक पड़े रहेंगे। उनका जन्म नहीं होगा । कयामत के बाद जितने भी कब्र में पड़े हुए हैं उनकी रूहें निकलेंगी और वे रूहें खुदा के सामने पेश की जाएँगी । जिसने अच्छा काम किया है और जिसका ईमान मुसल्लम रहा है उसको जन्नत मिलेगी और जिसने धर्म का उल्लंघन किया है उसको दोजख की आग में हमेशा-हमेशा के लिए झोंक दिया जाएगा । यही हमारा धर्म कहता है । उसने एक तर्क और दिया कि ईसाई और मुसलमान सबसे ज्यादा हैं । वे सब पुनर्जन्म नहीं मानते और आप थोड़े से हिन्दू मानते हो । इसीलिए पुनर्जन्म की थ्योरी कहाँ तक सही है ?

हमने कहा कि यह तो कोई प्रमाण नहीं है । एक तरफ हजार अन्धे हों और एक तरफ एक आँख वाला काना हो तो रूप के सम्बन्ध में किसका प्रमाण माना जाएगा ? अन्धे का कि काने का ? जिसकी आँख है उसका माना जाएगा । हम भले ही थोड़े हों पर हमारा सिद्धान्त वैज्ञानिक है । वे पूछने लगे कि कैसे वैज्ञानिक हैं ? हमने उनसे पूछा कि आप यह बताओ कि जो खुदा का प्यारा होगा, पैगम्बर मुहम्मद साहब जिसकी सिफारिश करेंगे, उसी को जन्नत मिलेगी। जन्नत में शराब की नहरें हैं । वहाँ पर अंगूर की लताएँ हैं, वहाँ पर अप्सराएँ हैं, हूरे हैं। सब मिलेंगी । हमने कहा कि जो लोग जन्नत जाएँगे वे अंगूर कैसे खाएँगे ? क्या बिना मुख के ही खाएँगे ? शराब की नहरें क्या वे बिना मुख के पिएँगे ? कैसे पिएँगे ? स्त्रियों का उपभोग कैसे करेंगे ? यहाँ का शरीर तो कब्र में ही गल गया । हमने कहा कि आपको मानना पड़ेगा कि वहाँ जन्नत का सुख भोगने के लिए एक दूसरा शरीर मिलता है । इसी तरह से दोजख की आग में जो झोंका जाएगा

वह हमेशा-हमेशा के लिए झोंका जाएगा । हमारे आपके शरीर को यदि आग में झोंक दिया जाए तो वह दो क्षण में जल जाएगा । अगले क्षण में तो वह रहेगा ही नहीं। उसको ऐसा शरीर मिलेगा जो जीवित तो रहेगा पर जलने का अनुभव करता रहेगा । उसको नारकीय शरीर मिलेगा बन्धु । इस प्रकार पुनर्जन्म तो तुमने भी मान लिया । तब वे बोले कि हाँ, आपकी यह बात तो ठीक है ।

कहने का मतलब यह है कि शरीर के बिना भोग नहीं हो सकता । जब मनुष्य कर्म करेगा तो कर्म के फलस्वरूप उसको जन्म मिलेगा । जन्म मिलेगा तो मृत्यु होगी क्योंकि **जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः** जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु निश्चित रूप से होती है । जन्म और मृत्यु के बीच में तीन प्रकार के ताप होते हैं । दैहिक ताप, दैविक ताप और भौतिक ताप । शरीर में अनेकों प्रकार के रोग हो जाते हैं । कई साध्य होते हैं और कई असाध्य होते हैं । बड़ा कष्ट देते हैं । मन में चिन्ताएँ होती हैं । जो भी शरीरधारी है उसको कोई न कोई चिन्ता रहती है। बहुत से लोग हमारे पास आते हैं । हमसे अपनी चिन्ता बताते हैं । कोई ऐसा नहीं है जिसको चिन्ता न हो । राष्ट्रपति को भी चिन्ता रहती है कि अगले टर्म में हम होंगे कि नहीं होंगे । प्रधानमन्त्री को रहती है, मिनिस्टर को रहती है, एम. एल. ए. को रहती है । सबको चिन्ता रहती है । व्यापारी को रहती है कि कल हम क्या खाएँगे ।

चिन्ता सांपिनि काहि न खाया । को जग जाहि न व्यापी माया ।

आधिस्तु मानसी व्यथा । कभी-कभी तो बिना कारण के मनुष्य परेशान रहता है। सब कुछ है लेकिन परेशान है। कोई बात मन में याद आ गई और वही घूम रही है । नींद खराब हो रही है । आधि-व्याधि दैहिक ताप है और ग्रह, भूत, पिशाच आदि की बाधा दैविक ताप है । आप देखिए यही दैविक ताप है । यहाँ तो पानी गिर रहा है और दूसरी तरफ नहीं गिर रहा है । बेचारे झुलस रहे हैं । यह दैव ही तो है जो उल्टा-पुल्टा कर रहा है – **राम नाम की माया । कहीं धूप कहीं छाया ।** यही चल रहा है । यह दैविक ताप है । भौतिक ताप यह है कि आप कितनी ही सावधानी से रहें, कुछ लोग आपके दुश्मन बन जाएँगे । बिना बात के ही बन जाएँगे । न बोलो तो दुश्मन और बोला तो भी दुश्मन । किसी ने कहा है –

मृगमीनसज्जनानां तृणजलसन्तोषविहितवृत्तीनां ।
लुब्धकधीमरपिशुनाः निष्कारणवैरिणो भवन्ति ।।

मृग तिनका खाता है । वह किसी जीव का मांस नहीं खाता पर उसके पीछे बहेलिया

लग जाता है । मछली पानी पीकर रहती है पर उसके पीछे धीमर लग जाते हैं और सज्जन सन्तोष से अपना जीवन बिताना चाहते हैं लेकिन उनके पीछे चुगलखोर लग जाते हैं । यह तुम समझ लो कि आदमियों में ही चुगलखोर नहीं होते, औरतों में भी चुगली करने वाली रहती हैं । अकेले में ही जाती हैं बहू को भड़काने । हम कैकेयी का दृष्टान्त देते हैं । बीच में ही आग लगाकर चली गईं । ऐसे ही मनुष्य होते हैं जिनको इधर-उधर की लगाने में आनन्द आता है । चुगलखोरी कर देते हैं । कभी-कभी तो ऐसा होता है कि कुछ लोग मान बैठते हैं कि हमारे बारे में ऐसा ही कहा होगा । बहुत कम लोग हैं जो मुकाबला करें। बहुत कम लोग हैं जो पता लगाते हैं कि सच में यह बात उसने कही है कि नहीं कही है। यही तीन अकारण बैरी बन जाते हैं । यह भौतिक ताप कहलाता है । भौतिक ताप यह भी है कि आप पैदल चले जा रहे हैं, गाड़ी से जा रहे हैं और टक्कर लग गई, एक्सीडेण्ट हो गया, हाथ-पाँव टूट गए। यह भौतिक ताप है । कईयों की आँख फूट जाती है, पैर टूट जाते हैं । कभी ऐसी तकलीफ हो जाती है कि बहुत दिनों तक ठीक नहीं होती। कुत्ते ने काट लिया, साँप ने काट लिया । बड़ी मुश्किल है । भौतिक ताप जो जन्म के साथ ही लगे हैं आपके पीछे । दैहिक ताप, भौतिक ताप और दैविक ताप; ये तीनों लगे हुए हैं। जन्म के पहले माता के पेट में रहना पड़ता है । मरने के पहले रोग का सामना करना पड़ता है । हार्ट अटैक में तो ज्यादा तकलीफ नहीं होती है लेकिन पहले हो जाती है । पहले से ही डॉक्टर कहते हैं कि ब्लड प्रेशर ठीक रखो, नहीं तो हार्ट अटैक हो जाएगा । शुगर ठीक रखो, परहेज करो । सीधे-सीधे मरना भी मुश्किल होता है । इन सारे दुःखों को दूर करने के लिए मनुष्य यह चाहता है कि जन्म-मरण का जंजाल छूटे । भगवान् की प्राप्ति हो जाए ।

भगवान् की प्राप्ति कैसे होगी? सीधी बात यह है कि भगवान् के तत्त्व को जब आप जान लेंगे तो आपको भगवान् की प्राप्ति हो जाएगी । भगवान् की प्राप्ति का अर्थ यह नहीं है कि भगवान् कहीं दूसरी जगह रहते हैं और आप जब वहाँ जाएँगे तो उनकी प्राप्ति होगी। ऐसा नहीं है । जैसे आप दिल्ली में किसी से मिलना चाहें तो आपको ट्रेन में बैठकर जाना पड़ेगा । आपको यात्रा करनी पड़ेगी । कभी-कभी आप सोचते हैं कि हमारी फसल आ जाए, सोयाबीन पक जाए । आज बोया है तो आज थोड़े ही पक जाएगी ? काल की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी । पकने दो। आज शादी हुई और चाहें कि आज ही बेटा हो जाए तो कैसे होगा ? बेटा तो कुछ दिनों के बाद ही होगा । देश-काल के सापेक्ष्य किसी वस्तु की प्राप्ति होती है लेकिन परमात्मा को प्राप्त करने के लिए देश-काल की अपेक्षा नहीं है। प्रह्लाद जी ने असुर बालकों को पाठशाला में उपदेश देते हुए कहा कि मनुष्य को

बाल्यावस्था से ही भगवान् का भजन करना चाहिए –

कौमार आचरेत् प्राज्ञो धर्मान् भागवतानिह ।
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम् ।।

प्रह्लाद जी ने अपने असुर सहपाठियों को बताया कि मनुष्य को छोटी अवस्था से ही भागवत धर्मों का पालन करना चाहिए क्योंकि यह मनुष्य देह दुर्लभ है और अध्रुव है। आप यह सोचकर बैठे रहें कि अभी तो बाल्यावस्था है । बड़े होकर भजन करेंगे । क्या पता कि बुढ़ापा आए या न आए । पहले ही मर जाएँ । क्या ठिकाना ? अध्रुव है यह । कभी भी हम मर सकते हैं लेकिन यदि हम जीवन का सदुपयोग करें तो बहुत बड़े प्रयोजन की सिद्धि हो सकती है । प्रह्लाद जी से असुर बालकों ने कहा कि प्रह्लाद जी । पहले हमको संसार के भोगों को भोग लेने दो। संसार का सुख भोग लें । इसके बाद आपकी बात सुन लेंगे । भजन कर लेंगे । उन्होंने कहा कि जो संसार के भोग हैं यह तो पशु-पक्षियों को भी मिल जाते हैं । जहाँ भी देहधारी होता है वह भी भोजन कर लेता है, वह भी सन्तान पैदा कर लेता है ।

सुखमैन्द्रियकं दैत्याः देह योगेन देहिनां ।
सर्वत्र लभ्यते यत्नात् यथा दुःखमयत्नतः ।।

इन्द्रिय और विषय के संयोग से जो सुख मिलता है, वह देहधारियों को मिलता है चाहे वह पशु-पक्षी ही क्यों न हो। बिना यत्न के मिल जाता है । दुःख के लिए कौन यत्न करता है? हमको दुःख प्राप्त हो इसके लिए कोई मनुष्य प्रयत्न नहीं करता । कोई साधन नहीं करता लेकिन जैसे वह अपने आप आ जाता है वैसे ही सुख भी अपने आप आ जाएगा । उसके लिए प्रयास की आवश्यकता नहीं है । उन्होंने यह कहा कि भगवान् को प्राप्त करना बहुत बड़े प्रयास से होगा।

न हि अच्युतं प्रीणयतो बह्वायासोऽसुरात्मजा ।
आत्मत्वात् सर्वभूतानां सिद्धत्वादिह सर्वतः ।।

प्रह्लाद जी ने कहा कि भगवान् से प्रेम करने के लिए बहुत बड़े प्रयास की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे सबकी आत्मा है । **आत्मत्त्वात् सर्वभूतानां** अपनी आत्मा से सबको प्रेम है। वह हमारी अन्तरात्मा है और **सिद्धत्वादिह सर्वतः** उनको पाने के लिए कहीं जाना नहीं है । वे यहीं हैं और अभी हैं । उनको उत्पन्न भी नहीं करना है । वे तो इसी समय हैं । इसलिए देश-काल की वहाँ अपेक्षा नहीं है । आवश्यकता है उनके बोध की, ज्ञान

की। ज्ञान हो जाए तो भगवान् की प्राप्ति हो जाएगी । भगवद् तत्त्व विज्ञान और भगवद् प्राप्ति दोनों एक ही हैं । उस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए भगवान् का ही आश्रय लेना पड़ेगा क्योंकि भगवान् को जानना भगवान् की कृपा के बिना सम्भव नहीं होता ।

सबसे पहली बात तो यह है कि हमारे मन में भगवान् को जानने की इच्छा उत्पन्न हो । जिज्ञासा क्या है? **ज्ञातुम् इच्छा जिज्ञासा ।** परमात्मा को जानने की इच्छा आपके मन में हो। परमात्मा को जानने की इच्छा कब होगी? जब सांसारिक विषयों को जानने की इच्छा समाप्त हो जाएगी । जब तक संसार को जानना चाहोगे तब परमात्मा को जानने की इच्छा क्यों होगी ? आवश्यक है कि हम परमात्मा को इस रूप में समझें कि जो हम सुख, शान्ति चाहते हैं वह परमात्मा के प्राप्त होने पर ही प्राप्त हो सकती है । यह तब पता लगेगा जब मनुष्य सत्संग में बैठेगा। सत्संग से उसको ज्ञान होगा और ज्ञान होने पर भगवान् से उसका प्रेम होगा । इसलिए भगवद्भक्ति का मुख्य साधन सत्संग बताया । गोस्वामी तुलसीदास जी बोले –

अस हरि भक्ति सुलभ सुखदाई । सो बिनु संग न काहू पाई ।।

कहते हैं जो भक्ति सुलभ और सुखदाई है वह बिना सत्संग के किसी को नहीं मिलतीं।

अस विचारि जो कर सत्संगा । राम भगति तेहि सुलभ विहंगा ।।

ऐसा विचार करके जो सत्संग करता है उसको भगवान् की भक्ति सुलभ हो जाती है । सत्संग मनुष्य का कल्याण करता है । आप चाहें जैसे भी हों अच्छे लोगों के पास बैठना शुरू कीजिए वो आपको अच्छे मार्ग में लगा देंगे । सत्पुरुषों का स्वभाव होता है कि वे मनुष्य को श्रेय मार्ग में लगा देते हैं ।

एक व्यक्ति था जो कभी नहाता ही नहीं था । स्नान से उसको दुश्मनी थी । पानी नहीं छूता था । कई दिनों से ऐसे ही था । एक बार पर्व आया तो लोगों ने कहा कि गंगा किनारे त्रिवेणी में मेला लगा है । बोला कि पचास साल हो गए । हमने आज तक स्नान नहीं किया तो उसके साथी बोले कि चलो मेला ही देख लो । कहा कि ठीक है मेला देख लेंगे । उसको मेला दिखाने के लिए लोग ले गए । साथियों ने उसको इधर-उधर मेले में घुमाया और कहा कि इतनी दूर आए हो तो गंगा का दर्शन तो कर लो, भले ही मत नहाना । बोला कि ठीक है दर्शन कर लेंगे । गंगा किनारे जाकर बोला कि बस हो गया ना ? अब चलें । साथी बोले कि ऐसा है कि कुछ पानी अपने ऊपर छिड़क लो । छिड़क

लेने से भी स्नान का पुण्य हो जाएगा। मुश्किल से गंगा किनारे तक गया और छिड़कने लगा। वहाँ पानी कुछ मटमैला था तो लोगों ने कहा कि आगे बढ़ो, साफ पानी में जाओ। थोड़ा और आगे बढ़ो, थोड़ा और बढ़ो ऐसा कहते-कहते लोगों ने उसे पानी में ढकेल दिया। लोगों ने उसे जो ढकेला तो डुबकी लग गई। तब बोला –

हर हर गंगा गोदावरी। कुछ सिद्धा कुछ जोरावरी।

अच्छे लोगों के संग से, उनकी दोस्ती से आप अच्छी जगह ही जाएँगे। किसी तरह से भी आप सत्संग में जाएँ, वहाँ बैठकर कुछ सुन लें तो कुछ न कुछ तो आपके कान में पड़ ही जाएगा जो आपके काम में आएगा।

एक राज्य था। उस राज्य में एक चोर रहता था। चोरी करना, डाका डालना यही उसका काम था। उस काम में वह बड़ा चतुर था कि चोरी करे और पकड़ा न जाये। उसके चार लड़के थे। उसने चारों को चोरी करने की विद्या दी और कहा कि बेटों ! अब दक्षिणा दो। हमने तुम सबको चोरी की कला सिखाई है।

यह चोरी भी एक कला है। कहते हैं भगवान् श्रीकृष्ण भी चौर्य कला के पण्डित थे। कैसे चोरी करना चाहिए इसको वे जानते थे। एक दिन हमलोग सुन रहे थे कि एक गोपी सबेरे उठकर दही बिलो रही थीं। मक्खन निकाल-निकाल कर मटके में रख रही थीं। भोर में उठने के कारण उसने दीपक जला रखा था। उजाले में दही मन्थन कर रही थी। इतने में भगवान् श्रीकृष्ण गए और दीपक में फूँक लगाई। दीपक बुझ गया तो मक्खन उठाकर खा लिया। कहने का मतलब यह है कि भगवान् की जो लीलाएँ हैं वे कला की बात हैं। कैसे चोरी करते थे ? इसका वर्णन आप भागवत में सुनते हैं। ऐसे ही हमारे यहाँ एक चोरी के आचार्य हो गए हैं। उनका नाम था कफल्ल। कहते हैं –

तिस्रो भार्या कफल्लस्य दाहिनी मोहिनी सती।
तासां स्मरण मात्रेण चोरो गच्छति निष्फलः ।।

कफल्ल नाम के व्यक्ति चोरी की कला के महान् पण्डित थे। उनकी तीन स्त्रियाँ थीं। दाहिनी, मोहिनी और सती। कहते हैं कि उन स्त्रियों का स्मरण कर लो तो चोर निष्फल होकर जाता है। घर में आ भी जाए तो उसको कुछ नहीं मिलता।

एक जगह हम यह कथा सुना रहे थे। वहाँ एक कुतर्की बैठा था। उसने हमारे खड़ाऊ गायब कर दिए। अब हमारा प्रवचन समाप्त हुआ तो खड़ाऊ ढूँढें तो मिले ही न। जिस आश्रम में थे वहीं चोरी हुई थी। अब किसी तरह अपने कक्ष में पहुँचे। खड़ाऊ

की खोज हुई पर पता ही न चले। दूसरे दिन वह आया और बोला कि महाराज! आपका मन्त्र झूठा है। हमने पूछा कैसे झूठा ? तो बोला कि हमने आपकी खड़ाऊ चुराई और आपको पता ही नहीं चला। हम तो उसको जला देना चाहते थे पर सोचा कि आपको बता दें कि आपके मन्त्र में कोई शक्ति नहीं है। हमने कहा कि यदि मन्त्र में शक्ति न होती तो तुम आज आकर हमें स्वयं कैसे बताते ?

कहने का मतलब यह है कि चोरी भी एक कला है। डाकुओं के सरदार ने अपने बच्चों से गुरुदक्षिणा माँगी कि आपलोग कभी भी सत्संग में नहीं जाएँगे। किसी कारण यदि कहीं सत्संग होता हो और वहाँ से गुजरना पड़े तो कान बन्द कर लेंगे जिससे कि सत्संग का एक भी शब्द कान के भीतर न जाए। चारों ने पिता के सामने प्रतिज्ञा कर ली। राज्य में चोरियाँ होने लगी। यहाँ तक कि चोरियाँ होते-होते अब राजा की भी चोरी होने लगी। रोज राजा गुप्तचर विभागों से पता लगाए कि राज्य में कौन चोरी करता है पर उसका पता ही नहीं चलता था। एक दिन राजा की पशुशाला से ऊँट की चोरी हो गई। अब उसने कहा कि जो ऊँट का पता लगा दे उसको हम आधा राज्य दे देंगे। राज्य की एक वैश्या ने यह बीड़ा उठा लिया कि मैं पता लगा लूँगी। राजा ने कहा कि ठीक है। अब वह वैश्या बहुत दीन-हीन बन गई। भिखारिन बनकर घर-घर जाकर पूछने लगी कि क्या आपके यहाँ ऊँट का माँस है ? कहती थी कि हमारे पति बीमार हैं और वैद्य ने कहा है कि ऊँट का माँस उनका पथ्य है। यदि आपके यहाँ हो तो दे दीजिए, मेरा पति बच जाएगा। पूछते-पूछते चोरों के घर पहुँच गई। चोर तो थे नहीं, उनकी पत्नियाँ थीं। उनके घर में ऊँट को काटकर उसका माँस बना हुआ था। वहाँ से उसको ऊँट का माँस मिल गया। अब उसने उस घर में निशान लगा दिया और वहाँ से चली गई। आधी रात को उसने काली माई का रूप बनाया, नकली जीभ लगा ली, नकली भुजाएँ बना लीं और काठ का सिंह बना लिया। उसमें बैठकर आ गई और बड़े जोरों से अट्टहास किया। डाकू निकलकर बाहर आया। देखा कि काली जी आई हैं तो उसने प्रणाम किया। काली जी डाँटने लगी कि इतनी चोरी करता है और आज तक मेरी पूजा नहीं की तूने। मैं तुझे नष्ट कर दूँगी। हाथ जोड़कर कहने लगा कि माताजी ! आपकी जो आज्ञा होगी हम सब करेंगे। इतने में चोर का छोटा बेटा घर आ गया। उसकी स्थिति यह थी कि एक बार जब वह चोरी करके भाग रहा था तो भागते-भागते जब पुलिस के सिपाही उसके पीछे लगे तब वह एक गली में घुस गया। उस गली में एक मन्दिर था। मन्दिर में एक पण्डित जी कथा सुना रहे थे। उस कथा में वे कह रहे थे कि देवताओं की छाया नहीं पड़ती और उनकी पलक नहीं झपकती। उसने देखा कि सत्संग हो रहा है तो उसने अपने कान बन्द

कर लिए। उसी समय उसके पैर में काँटा लग गया । कान खोलकर काँटा निकालने लगा था तो इतनी बात सत्संग की उसको सुनाई पड़ी कि देवताओं की छाया नहीं पड़ती और उनकी पलक नहीं झपकती। उसने देख लिया कि काली माई की पलक झपक रही है और छाया भी पड़ रही है । उसने तलवार उठाई और कहा कि देखता हूँ कि कौन सी काली माई है तू । जैसे ही वह तलवार लेकर दौड़ा वह भाग गई । वह नकली तो थी ही । नकली आदमी ठहर ही नहीं सकता ।

एक बार बनारस में रामलीला हो रही थी । रामलीला में अंगद-रावण का संवाद आया। बहुत भीड़ होती है उसमें । जैसे हमलोग आज यहाँ इकट्ठे हैं वैसे ही लोग वहाँ पर इकट्ठे होते हैं। उस बार रामलीला का रावण बीमार पड़ गया । लोगों ने सोचा कि लीला नहीं होगी तो जनता निराश होकर चली जाएगी । इसलिए एक मोटा कल्लू नाम के हलवाई को रावण बनाकर बैठा दिया । उसके ऊपर दस सिर और बाँध दिए । उसका डायलॉग लोग पीछे से कहने लगे । अंगद सधा-सधाया था । बात करते-करते अंगद ने उठाया घूसा और रावण की तरफ लपका तो कल्लू हलवाई बोला कि **हम रावण नाही हईं, हम कल्लू हलवाई हईं ।** अब सारी पोल खुल गई ।

ऐसे ही जब चोर के छोटा बेटा नकली काली माई पर झपटा तो उसकी जीभ कहीं गई, हाथ कहीं गया, सिंह कहीं गया । उन सबने उसका झोंटा पकड़ा और भगा दिया। सबने विचार कर कहा कि अब भागो यहाँ से। फिर सब चोर वहाँ से भाग निकले और दूसरे राज्य में जाकर रहने लगे । पिता ने पूछा कि बेटा ! तुमने पहचाना कैसे कि काली माई नकली है ? उसने कहा कि पिताजी ! आपने तो सत्संग में जाने से मना किया था पर इस तरह से एक दिन बिना चाहे सत्संग हो गया जिसके कारण आज हमलोग बच गए । अब तो सत्संग ही करना चाहिए। वह सत्संग करने लगा, बुद्धि शुद्ध हो गई और अच्छे रास्ते में लग गया ।

अस विचारि जो कर सत्संगा । राम भगति तेहि सुलभ विहंगा ।।

जो लोग सत्संग करते हैं वे स्वयं तो अच्छे काम करते ही हैं । साथ ही साथ अपने मित्रों को भी अच्छे काम में लगाते हैं । एक बात आपको बता दें कि हमलोग यह चाहते हैं कि गंगा की धारा अविरल बहे, उसका प्रदूषण दूर हो, उसमें कारखानों का दूषित जल न डाला जाए, उस पर बाँध न बाँधे जाएँ; इसके लिए हमलोग आन्दोलन कर रहे हैं । इसी तरह से भगवान् का बनाया हुआ जो बाँध समुद्र में है, सेतुबन्ध रामेश्वरम् का वह न टूटे, गौहत्या बन्द हो जाए । यह सब हमलोग चाहते हैं । हम यह भी चाहते हैं कि

भ्रष्टाचार का नाश हो। सबसे बड़ी बात यह है कि भ्रष्टाचार ऊपर से नहीं, बल्कि नीचे से है। आपलोग जो शराब पीकर, रुपया लेकर वोट देते हैं वहीं से भ्रष्टाचार शुरु होता है। जब तक आप यह बन्द नहीं करेंगे सरकार को कितना ही कोसें वह दूर नहीं होगा। दूसरी एक चीज और है कि आज हमलोग गंगा, यमुना और नर्मदा को क्यों शुद्ध रखना चाहते हैं ? इसलिए कि हमें पीने का शुद्ध पानी मिले। अन्न के बिना हम रह सकते हैं पर पानी के बिना हम नहीं रह सकते। भगवान् की कृपा से हमें जो पवित्र नदियाँ प्राप्त हैं उनको हम स्वयं ही दूषित कर रहे हैं। दूसरी बात यह है कि हम अपना भोजन भी बिगाड़ रहे हैं। बिगाड़ ऐसे रहे हैं कि हर चीज में मिलावट है। दूध में मिलावट, अन्न में मिलावट, घी में मिलावट, चावल में मिलावट, शक्कर में मिलावट, मिर्च मसाले तक में मिलावट है। मिर्च-मसाले में घोड़े की लीद मिला रहे हैं। जब तक यह सब बन्द नहीं होगा तुम रोगरहित कैसे बनोगे ? कोई बताता है क्या यह सब बात ? इसके लिए लोगों को शिक्षा मिलनी चाहिए कि लोग अपना जल शुद्ध रखें, जल का दुरुपयोग न करें। इसी तरह से अन्न को भी न बिगाड़ें। गाय को पालें और उसके गोबर से ही अनाज और सब्जी पैदा करें। उसमें स्वाद आता है। इसके लिए हमलोग केवल सरकार को ही दोषी नहीं बना रहे हैं। हमलोगों की भी नासमझी है। यदि हमलोग इस पर ध्यान दें तो सरकार को भी अपनी बात माननी पड़ेगी। कुछ लोग इसको अपना राजनीतिक मुद्दा बनाना चाहते हैं कि इसके द्वारा हम सत्ता में आ जाएँ, चाहे दुनिया जहन्नुम में चली जाए। हम चाहते हैं कि दुरंगी छोड़ दो, एक रंग हो जाओ।

दुरंगी छोड़ दे इक रंग हो जा। सरासर मोम हो जा संग हो जा।

बहुत से लोग नारा तो लगा देते हैं लेकिन काम नहीं करते। गोहत्या बन्द हो का नारा लगाएँगे लेकिन सत्ता में आएँगे तो इसके लिए काम करेंगे नहीं। रामजन्मभूमि में मन्दिर बनना चाहिए कहकर वोट ले लेंगे लेकिन मन्दिर बनाएँगे नहीं। इसलिए हमलोग यह चाहते हैं कि जनता के साथ धोखाधड़ी न हो। सही ढंग से उनकी इच्छाओं की पूर्ति होनी चाहिए।

एक बात और हम कह रहे थे कि गंगा अविरल हो, निर्मल हो इसके लिए हमलोग आन्दोलन कर रहे थे। इसके लिए हमलोग जन्तर-मन्तर गए थे धरना देने। बहुत से लोग बनारस में अनशन कर रहे थे। जल छोड़कर बैठे थे। उनमें दो महिलाएँ थीं। शारदाम्बा और पूर्णाम्बा। वे मरणासन्न हो गई थीं। जब हम बनारस में गए तो केन्द्रीय मन्त्री श्रीप्रकाश जायसवाल ने आश्वासन दिया, तीन महीने का समय हमसे माँगा। हमने

उनका विश्वास करके उनलोगों का अनशन तुड़वा दिया । यदि तीन महीने के बाद भी कुछ नहीं हुआ तो हमलोगों को फिर वहीं चलना पड़ेगा । इसके लिए तैयार रहिए ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[16]

।। राम राम सोलह ।।

भगवत्प्राप्ति से ही दुःखों का अन्त

समुपस्थित सज्जनो, देवियो !

यह प्रसंग आया था कि भगवत्प्राप्ति से ही मनुष्य के दुःखों का नाश और परमानन्द की प्राप्ति हो सकती है। अब प्रश्न आता है कि भगवान् की प्राप्ति कैसे हो ? स्वाभाविक है कि भगवत्प्राप्ति के लिए भगवान् के चरणों में पहले प्रीति होनी चाहिए। हम उनके चरणों के जब अनुरागी हो जाते हैं तो उनके सम्बन्ध में यह जिज्ञासा होती है कि हमारे प्रभु क्या हैं, कौन हैं ?

सर्वप्रथम अनुराग के लिए आवश्यक है कि अन्योन्मुखता का त्याग हो। मन बहुत चंचल है। चंचलता में एकाग्रता आए। निश्चल बने। इसको एकाग्र करने के लिए क्या उपाय है ? श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण जब अर्जुन को योग का उपदेश दे रहे थे तब कहा –

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ।।

भगवान् ने जो साम्य योग का उपदेश दिया इसकी स्थिति, इसमें स्थिरता मन की चंचलता के कारण नहीं हो सकता।

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ।।

हे भगवन् ! हमारा मन बहुत चंचल है। जैसे वायु को रोकना कठिन होता है वैसे ही मन को रोकना भी कठिन होता है। आप देखिए कि जैसे आप श्वाँस लेते हैं। एकाएक श्वाँस को यदि रोक भी दें तो कठिनाई होती है। यदि आप नाक से श्वाँस रोक लेंगे तो कान से हवा निकल जाएगी। कहीं न कहीं से बाहर हो ही जाएगी। ऐसी स्थिति में यह मन कहीं टिकता ही नहीं है। प्रायः यही शिकायत सब भक्तों की होती है कि महाराज! हम तो भजन करने बैठते हैं पर मन यहाँ-वहाँ भटकता है। कभी कहीं जाता है तो कभी कहीं जाता है। भजन कैसे हो? मन को हम कैसे स्थिर करें ? समस्या आ जाती है।

मन बहुत चंचल है । क्षण भर में कहीं का कहीं चला जाता है । वायु को भी चलने के लिए समय लगता है पर मन को तो समय ही नहीं लगता । ऐसी स्थिति में इस मन के चंचल रहते हुए मैं आपके इस योग का साधन, इसका अभ्यास कैसे करूँ । प्रत्येक भक्त के मन में यह शंका रहती है कि हम कैसे भजन करें ? बैठते ही मन में संसार भर की बातें आ जाती हैं कि क्या करें ? कुछ लोगों ने कहा कि क्या सुमिरन कर रहे हो। कबीर ने कहा –

कर में तो माला फिरे जीभ फिरे मुख माहिं ।
मनवां तो चहुँ दिसि फिरे यह तो सुमिरन नाहिं ।।

हाथ में माला फिर रही है, मुँह में जीभ फिर रही है लेकिन मन चारों तरफ फिर रहा है। क्या सुमिरन है ? उन्होंने कहा कि भाई ऐसा करो –

करका तो फेरत रहा गया न मन का फेर ।
कर का मनका डार के मन का मनका फेर ।।

बहुत से लोगों की यही शंका है । कहते हैं कि हम भजन नहीं करेंगे क्योंकि मन तो चंचल है । एकाग्र होता ही नहीं है । एकाग्र हो तब तो भजन करें और जब तक भजन नहीं करेंगे तब तक एकाग्र नहीं होगा । दोनों चीजें एक साथ है । क्या करें ?

एक प्रसिद्ध कहानी है लैला और मजनूं की । कहते हैं कि लैला राजकुमारी थी । मजनू उसका प्रेमी था। वह लैला को प्राप्त करने के लिए तड़पता था । लैला राजकुमारी होने के कारण अत्यन्त दुर्लभ थी । उसके लिए मजनू पागल हो गया । पागल होकर यहाँ वहाँ घूमने लगा । खाना-पीना और पहनना छोड़ दिया । मजनू के पिता ने लैला के पिता से कहा कि तुम अपनी कन्या का विवाह हमारे बेटे से कर दो । किसी न किसी से तो विवाह करना ही है । लैला के पिता ने कहा कि हम विवाह तो करना चाहते हैं लेकिन तुम्हारा लड़का तो पागल है । पागलपन छोड़ दे तो हम विवाह कर दें । उसने कहा कि विवाह कर दोगे तो पागलपन छूट जाएगा । पागलपन छूटे तो लैला मिले और लैला मिले तो पागलपन छूटे । ऐसी ही बात है कि मन एकाग्र हो तो भजन करें और भजन करें तो मन एकाग्र हो ।

बात यह है कि हमें यह देखना है कि मन कहाँ जाता है ? मन किन विषयों में जाता है इसको हमें देखना है । एक तो जहाँ हमारा राग होता है वहाँ जाता है और जहाँ हमारा द्वेष होता है वहाँ मन जाता है । कल्पना कीजिए कि आप यहाँ से दिल्ली जा रहे हैं ।

श्रीधाम एक्सप्रेस में बैठ गए। कई स्टेशन आएँगे लेकिन किसी स्टेशन की आपको याद नहीं रहेगी पर जहाँ आपका कोई प्रेमी होगा उसकी याद आ जाएगी कि इस स्टेशन में वह रहता है या जहाँ आपका कोई दुश्मन रहता होगा, जहाँ आप कभी पिटे-कुटे होंगे उसकी याद आ जाएगी कि वह स्टेशन आ रहा है। मन राग और द्वेष के पीछे चलता है। आप कहीं चले जाओ जब तक मन में राग है चाहे आप कपड़ा रंग लो, साधु बन कर बैठ जाओ कुछ नहीं होगा – **मन न रंगायो रंगायो जोगी कपड़ा।**

बहुत से लोग कपड़ा रंग लेते हैं पर मन नहीं रंगते। ऐसी हालत में अब करें क्या? आप देखिए कि नदी को बाँधने के लिए क्या किया जाता है ? जब नदी बाँधते हैं तो पहले नहर खोद लेते हैं। नहर खोद लेने के बाद बरगी में बाँध बँधा। यदि नहर न होती तो नर्मदा का पानी बाँध फोड़ देता। पानी को एक तरफ से बाँधो तो वह दूसरी तरफ से जाएगा। जिन विषयों से आपका राग और द्वेष है वह राग-द्वेष उदासीनता में परिणत होगा। उदासीनता द्वेष को नहीं कहते। द्वेष से राग का अन्त नहीं होगा। उदासीनता से दूर होगा। बहुत से यह सोचते हैं कि हमको राग न हो, हमें अमुक की याद न आए, जरूर याद आ जाती है। भादो में शुक्ल पक्ष की चतुर्थी तिथि में चन्द्रमा का दर्शन जब कोई कर लेता है तो उसको कलंक लगता है ऐसी किंवदन्ती है। भगवान् ने भी चौथ का चन्दा देख लिया था। इसीलिए उनको मणि की चोरी लग गई थी। लोग सोचते हैं कि चौथ का चन्दा न दिख जाए। सोचते रहते हैं कि दिख रहा है कि नहीं ? सोचते-सोचते देख ही लेते हैं। ऐसे ही होता है। सोचते हैं कि हमारा मन वहाँ न जाए, न जाए पर वह तो जाएगा ही। मन कोई ऐसी चीज थोड़े ही है कि पकड़कर रख लो। विचार ही तो मन है। जब आप उल्टा विचार करेंगे तो चीज सामने आ ही जाएगी। इसलिए यह आवश्यक होता है कि उनकी ओर से हमारे मन में उदासीनता आ जाए। दोष दर्शन हो जाए।

एक लड़के ने अपने पिता से पैसे माँगे। बोला कि पिताजी ! हमको पैसे दीजिए। हम खोमचा जाकर चाट खाएँगे। पिता ने एक तमाचा जड़ दिया और कहा कि नहीं मिलेगा पैसा। बेटा उस समय चुप तो हो जाएगा पर जो चाट से उसका प्रेम है वह नहीं खत्म होगा। उसके हाथ में जैसे ही पैसा आएगा वह वहीं जाएगा और खाएगा। उस बेटे को यदि सच में चाट से हटाना है तो पिता क्या करेगा ? उसके हाथ में पैसा रख देगा और कहेगा कि चलो हम भी खाएँगे। ले जाता है खोमचे के सामने और कहता है कि देखो यहाँ गोलगप्पा है, दही बड़ा है, चाट रखे हैं लेकिन यहाँ पर मक्खी बैठी है। इस खोमचे वाले की नाक बह रही है। सड़क की धूल इसमें पड़ रही है। न जाने कितना पुराना दही

इसके पास है । तेल भी जाने कौन सा है। यह सब खाओगे तो बीमार पड़ जाओगे। चलो हम दूसरे खोमचे वाले के यहाँ चलें । दूसरे के यहाँ जाता है तो वहाँ भी यही बात । तीसरे के यहाँ भी वही बात । अब पिता कहता है कि सबके यहाँ गन्दगी है चलो हम अपने घर में ही बनवा लेंगे । ऐसा जब कहते हैं और यदि उसकी समझ में आ जाए तो फिर वह कहीं नहीं जाएगा ।

भगवान् शंकराचार्य जी ने मन को समझाया है –

चेतः चंचलतां विहाय पुरतः सन्धाय कोटिद्वयं ।
तच्चैकत्र विधेहि देहि विषयान् अन्यत्र च स्थापतिम् ।

अरे चित्त ! मेरी बात सुन । चंचलता को छोड़कर मन की तराजू लेकर तौल । एक तरफ तो मन के समस्त विषयों को रख ले । शब्द रख ले, स्पर्श रख ले, रूप रख ले, रस रख ले, गन्ध रख ले और दूसरी तरफ **श्रीपतिं** अर्थात् भगवान् श्रीपति को रख दे। अब तू देख । तू रूप का प्रेमी है न ? रूप कहाँ तक रहेगा ? सोचिए कि किसी स्त्री का रूप आपको प्यारा है । यदि उसको चेचक हो जाए और उसकी एक आँख फूट जाए तो क्या तब भी आपको उससे प्रेम रहेगा? तब तो प्रेम हट जाएगा । इसी तरह से स्पर्श, रस, रूप, गन्ध आदि हैं । सब की सब चीजें परिवर्तनशील हैं । यह सभी कभी सुख देती हैं तो कभी दुःख देती हैं । यह जरूरी नहीं है कि एक वस्तु सदा सुख दे ।

एक कथा है कि एक बार बीरबल ने अकबर से कहा कि भटा बड़ा अच्छा है । इसका स्वाद बहुत अच्छा है । बीरबल ने कहा कि जी हुजूर ! इसीलिए तो भगवान् ने उसके ऊपर मुकुट लगाया है ।

हरी हरी डण्डी श्याम जटा । सब सागों में सरदार भटा ।।

अकबर ने दूसरे दिन अधिक भटा खा लिया जिससे उसके शरीर में वायु बढ़ गई। बीरबल से कहा कि भटा से तो वायु बढ़ जाती है । बीरबल ने कहा हुजूर ! इसीलिए तो इसका नाम बेगुन है । इसमें कोई गुण ही नहीं है । बिना गुण का बेगुन जिसके सिर पर काँटें का मुकुट है । अकबर ने कहा कि कल तो तुम बहुत तारीफ कर रहे थे । बीरबल ने कहा कि हम भटा के नौकर थोड़े ही हैं । हम तो हुजूर के नौकर हैं ।

कहने का मतलब यह है कि जिसको आप अत्यन्त स्वादिष्ट मानते हैं वही आपके लिए विकारी हो जाता है । ऐसे संसार की सभी चीजें हैं जो सदा सुख नहीं देती । इधर भगवान् को देखो तो उनका जो श्रीविग्रह है वे कितने सुन्दर हैं । भगवान् के रूप को देखो

ऐसा सुन्दर स्वरूप है कि त्रिलोकी मोहित हो जाती है । त्रिलोकी की तो बात दूर स्वयं भगवान् भी अपने स्वरूप को देखकर मोहित हो जाते हैं –

रत्नस्थले जानुचरः कुमारः संक्रान्तमात्मीय मुखारविन्दं ।
आदातुकामस्तदलाभखेदात् निरीक्ष्य धात्री वदनं रुरोद ।।

कहते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण नन्द के मणिमय आँगन में घुटनों के बल चल रहे हैं। नीचे मुँह हो जाता है तो जो नीचे फर्श है वह मणि का है । उसमें अपना मुखारविन्द उन्होंने देखा । उस मुखारविन्द को पकड़ने की इच्छा से हाथ बढ़ाया तो वह हाथ फर्श में ही रह गया, मुँह तक नहीं गया । कहते हैं कि मैया ! यह कितना सुन्दर बालक है पर हमारे हाथ में नहीं आता । रो पड़े । इतने सुन्दर भगवान् । रामचरितमानस में लिखा है –

रूप राशि नृप अजिर बिहारी । नाचहिं निज प्रतिबिम्ब निहारी ।।

रूप की राशि भगवान् श्रीराम दशरथ के आँगन में अपने प्रतिबिम्ब को देखकर नाच उठते हैं । भगवान् श्रीकृष्ण की एक मणिस्तम्भ लीला है । यह लीला ऐसी है कि एक बार माता यशोदा ने मणि के खम्भे में रस्सी बाँधकर दही बिलोया । दधिमन्थन कर मक्खन निकालकर दूसरे बर्तन में रखा और किसी काम से थोड़ी देर के लिए बाहर गईं । इतने में ही श्यामसुन्दर आ गए । माखन उठाने के लिए मटकी की ओर हाथ जैसे ही बढ़ाया तो उन्हें अपना ही प्रतिबिम्ब खम्भे में दिखाई पड़ा । उन्होंने सोचा कि यह कोई बालक है जिसे मैया ने मेरी चोरी पकड़ने के लिए छिपाकर रखा है । कहने लगे कि मित्र ! मैया से मत कहना । एक लोंदी माखन की तुझको भी दे दूँगा। अब प्रतिबिम्ब तो कुछ बोला नहीं तो फिर बोले कि आधी कमोरी तू ले लेना और आधी मैं ले लूँगा । आओ मित्रता कर लें । फिर भी न बोला । अच्छा पूरी तू ही ले लेना लेकिन मैं तुझसे मिलना चाहता हूँ, मित्रता करना चाहता हूँ । ऐसी बात अपने प्रतिबिम्ब से भगवान् श्रीकृष्ण कर रहे थे कि इतने में मैया यशोदा आ गई । पहले तो दबे पाँव खड़ी होकर देखती रही कि किससे बात कर रहा है । फिर सामने आ गई । समझ में नहीं आया तो पूछ बैठी अरे कन्हैया! तू किससे बात कर रहा है ? बोले कि मैया जिस बालक को तूने खम्भे में छिपा रखा है यह अपने रूप पर इतना गर्वीला है कि मुझसे बात तक नहीं करता । मैं बात करना चाहता हूँ तो मुँह तो बनाता है किन्तु बोलता नहीं है । माता यशोदा ने भगवान् को गोद में उठा लिया और उनका सिर सूँघने लगी । बोली कि मेरे लाल ! यह तू ही है । तेरा ही प्रतिबिम्ब इस मणि के खम्भे में दिखाई पड़ता है । भगवान् श्रीकृष्ण ने विस्मय विस्तारित नेत्रों से मैया की ओर देखकर पूछा कि क्या मैं इतना सुन्दर हूँ ? यह सुनकर

माता यशोदा प्रसन्न हो गईं। एक दिन माता यशोदा भगवान् श्रीकृष्ण को अपनी गोद में लेकर घूम रही थी। पहले उन्होंने उन्हें उबटन लगाया, स्नान कराया, पीली झुमरी पहनाई, माथे में डिठौने का टीका लगाया, आँख में काजल लगाया, बाल सँवार दिए और उनका मुखचन्द्र निहारने लगी। माता के शरीर में कभी रोमांच होता था तो कभी प्रेम के आँसू आते थे। कभी मुस्कुरा देती थी तो भगवान् श्रीकृष्ण ने पूछा कि तुझे ऐसा क्या मिल गया है कि तू कभी मुस्कुराती है, कभी रोंगटे खड़े होते हैं, कभी प्रेम के आँसू निकलते हैं। क्या मिल गया है मैया तुझको ? तब माता यशोदा कहती हैं –

मो सम नहिं पुण्य पुंज बालक हैं तेरे .....

अरे बेटे ! तूने मेरे समान पुण्य नहीं किए हैं। तेरे जैसे पुत्र को प्राप्त करके जो सुख माता को मिलता है, वह सुख तुझको नहीं मिल सकता। ऐसा अद्‌भुत स्वरूप भगवान् धारण करते हैं। वही भगवान् जब वंशी बजाते हैं तो सारे विश्व को मोहित कर लेते हैं–

वृन्दावन वंशी बजी मोहे तीनों लोक।

गोपियाँ घर-द्वार छोड़ बैठती हैं। वंशी की ध्वनि सबको आकृष्ट कर लेती है। भगवान् के चरणों में तुलसी है। कथा आती है कि चार भाई हैं। सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार। ये ब्रह्मा के मानस पुत्र हैं। सदा इनकी पाँच वर्ष की अवस्था रहती है। परम ज्ञानी हैं। ब्रह्मदर्शन करते रहते हैं।

क्षणमात्रं न तिष्ठन्ति वृत्तिं ब्रह्ममयीं विना।

क्षण मात्र के लिए भी ब्रह्ममयी वृत्ति से अलग नहीं होते वे। सदा ब्रह्मानुसन्धान करते रहते हैं। मन में भावना जगी कि भगवान् के वैकुण्ठ धाम में जाकर दर्शन करें। भगवान् की सात ड्योढ़ी है। छः ड्योढ़ी में किसी ने नहीं पूछा। सातवीं ड्योढ़ी में जय-विजय बैठे थे। भगवान् अन्तःपुर में थे और जय-विजय पहरेदार थे। बालकों के जाने में क्या पर्दा था लेकिन उन्होंने जाने नहीं दिया। लाल-लाल आँखें करके उन चारों को जाने से रोक दिया। उन सबके मन में भगवान् से मिलने की उत्कट कामना थी। कामना की पूर्ति में जब बाधा पड़ती है तो स्वाभाविक रूप से क्रोध आता है। क्रोध को कामानुज कहते हैं। उन्होंने जय-विजय से कहा कि तुम भगवान् के द्वार में बैठे हो। हमारा मन निर्विकार है। हम पाँच वर्ष के बच्चे हैं। तुम अपने जैसा सबको समझते हो। तुम यहाँ रहने के योग्य नहीं हो। शाप दे दिया कि जाओ असुर योनियों में। इनकी ध्वनि जब भीतर बैठे भगवान् के कान में पड़ी तो वे उठकर बाहर आ गए। भगवान् स्वयं आकर

सनत्कुमारों से क्षमायाचना करते हैं –

भृत्यापराधे सर्वत्र स्वामिनो दण्डमिष्यते ।

सेवक के अपराध से स्वामी को दण्ड दिया जाता है । आप मुझे दण्ड दीजिए –

न ब्राह्मणानां मे दयितं रूपमेतत्चतुर्विधम् ।

मेरा यह चतुर्भुज रूप भी ब्राह्मणों से अधिक प्रिय नहीं है । यदि मेरी ये भुजाएँ आपके अननुकूल हो जाएँ तो मैं इन्हें भी उठाकर फेंक दूँगा । आप मुझे क्षमा कीजिए । इधर क्या होता है कि भगवान् वनमाली हैं । उनके गले में वनमाला है । गले से लेकर चरणों तक जो लम्बी माला होती है उसका नाम वनमाला है –

तुलसी कुन्द मन्दार पारिजात सरोरुहैः ।
पंचभिः रचिता माला वनमालेति कथ्यते ।।
आपादलम्बिनी माला वनमालेति गद्यते ।

तुलसी, कुन्द, मन्दार, पारिजात और सरोरुह; इन पाँचों फूलों से बनी माला जो गले से लेकर पैर तक लम्बी हो उसका नाम वनमाला होता है । इसीलिए भगवान् को वनमाली भी कहते हैं । जैसे माला में एक गुच्छा होता है । तुलसी का गुच्छा माला के अन्त में है । वह तुलसी भगवान् के चरणों को छूती है । भगवान् के चरण कमल हैं । कमल में मकरन्द होती है, सुगन्ध होता है। आपने खिले हुए कमल को देखा होगा । उसके बीच में जो गोल-गोल होता है उसको कल्लिका कहते हैं । कुछ पंखुड़ियाँ होती हैं । उन दोनों के बीच में कुछ मंजरियाँ होती हैं । इन्हीं में सुगन्ध होती है । भगवान् के चरण कमलों में जो मकरन्द है उसके सौगन्ध्य और तुलसी से मिश्रित भगवान् के चरणों से निकली पवन जब सनत्कुमारों की नासिका से उनके भीतर गई तो उनके हृदय में भी संक्षोभ उत्पन्न हो गया । भगवान् के प्रति उनको प्रेम हो गया । वे चारों जो निर्गुण थे अब सगुण में आ गए । भगवान् का ऐसा अद्भुत स्वरूप है जिसको देखकर बड़े-बड़े ज्ञानी भी मोहित हो जाते हैं । आप देखिए कि जनकपुर में भगवान् श्रीराम जी लक्ष्मण जी मुनि विश्वामित्र जी के साथ धनुष यज्ञ देखने गए । नगर के बाहर एक बाग में ठहर गए।

मुनि आगमन सुन्यो जब राजा । मिलन गयहु जहं विप्र समाजा ।।

राजा ने सुना विश्वामित्र जी आए हैं तो उनके स्वागत के लिए वे उस बाग में आ गए।

विश्वामित्र महामुनि आए । समाचार मिथिलापति पाए ।।

जब विश्वामित्र जी को पता लगा कि राजा आए हैं तो उन्होंने राम-लक्ष्मण को कहा कि जाओ बगीचा देखकर आ जाओ। उनको भेज दिया। इधर जनक जी ने आकर विश्वामित्र जी को प्रणाम किया। विश्वामित्र जी ने उनसे कुशल प्रश्न किया। इस तरह से कुशल प्रश्न हो ही रहा था।

तेहि अवसर आए दोउ भाई। गए रहे देखन फुलवाई।।

दोनों भाई वहाँ आ गए। कहाँ गए थे पूछा तो बोले कि फुलवारी देखने गए थे। विश्वामित्र जी चाहते थे कि भगवान् की उपेक्षा नहीं होनी चाहिए। राजा जनक मेरी ओर अभिमुख होंगे तो इनकी उपेक्षा हो जाएगी इसलिए उनको पहले ही अलग कर दिया था। जैसे ही भगवान् वहाँ लक्ष्मण जी के साथ पधारे तब –

उठे सकल जब रघुपति आए। विश्वामित्र निकट बैठाए।।

सब लोग उठकर खड़े हो गए और विश्वामित्र जी ने दाहिनी तरफ राम को और बाँयी तरफ लक्ष्मण को बैठा लिया। जनक जी तो विदेह हैं, ज्ञानी हैं, ब्रह्मनिष्ठ हैं पर जब उन्होंने देखा तो राम की ओर से उनकी दृष्टि ही न हटे। उन्हें जिज्ञासा हो गई –

कहउ नाथ सुन्दर दोउ बालक। मुनि कुल तिलक कि नृप कुल पालक।।

पूछने लगे कि महाराज ! ये दोनों बालक कौन हैं ? ये मुनिकुलतिलक हैं कि नृपकुलपालक हैं ? उनको कहना चाहिए था कि नृपकुलतिलक हैं कि मुनिकुलपालक हैं पर संभ्रम में उल्टा बोल पड़े। वे जानना चाहते थे कि ये क्षत्रिय कुल के हैं कि ब्राह्मण कुल के हैं। कहा कि ठीक है ये कुछ भी हों। आपको क्या लेना-देना ? बोले–

इनहिं विलोकत अति अनुरागा।

इनको देखने से अत्यन्त अनुराग उत्पन्न हो रहा है। मुनि बोले कि तुम ब्रह्म सुख में लीन रहो। कहाँ इनके चक्कर में पड़े हो ?

बरबस ब्रह्म सुखहिं मन त्यागा।

जनक जी बोले कि मेरा मन ब्रह्म सुख को छोड़कर बरबस इनको देख रहा है। मैं सोचता हूँ कि कहीं ये ब्रह्म ही न हों। मुझे सन्देह हो रहा है कि ब्रह्म ही तो कहीं दो रूप धारण करके नहीं आ गया ?

जब इस प्रकार जनक जी ने मुनि विश्वामित्र जी से पूछा तो उन्होंने कहा –

ये प्रिय सबहिं जहाँ लगि प्राणी।

जनक जी ! केवल आपको ही नहीं, संसार के जितने भी प्राणी हैं ये उन सबको प्रिय हैं । संसार में ऐसा कोई नहीं जिसको राम प्यारे न हों । वाल्मीकि रामायण में लिखा है –

लोके नहि स विद्येत यो न राममनुव्रतः ।

लोक में ऐसा कोई नहीं है जो राम का भक्त न हो । कुछ लोगों ने कहा कि कैसी बात करते हो ? रावण तो उनका विरोधी था, कुम्भकर्ण भी विरोधी था और मेघनाद भी । ये सभी राम के भक्त थोड़े ही थे । उत्तर दिया कि ठीक है ये सब राम के विरोधी थे पर क्या अपनी आत्मा के भी विरोधी थे ? अपनी आत्मा का तो विरोधी कोई हो ही नहीं सकता । राम तो सबकी आत्मा है । इनका विरोध कौन कर सकता है ?

यह प्रिय सबहीं जहाँ लगि प्राणी । मन मुस्काहीं राम सुनि वाणी ।

जैसे ही विश्वामित्र जी ने यह कहा भगवान् मुस्कुरा उठे । भगवान् की मुस्कुराहट में माया रहती है ।

हासो जनोन्मादकरी च माया ।

मनुष्यों के मन में उन्माद कर देने वाली माया ही भगवान् का हास है । भगवान् जैसे ही मुस्कुराए उनकी आँखों में पर्दा आ गया । स्वजनमनमोहिनी माया आ गई । वे बोल उठे–

रघुकुलमणि दशरथ के जाये । मम हित लागि नरेश पठाये ।।

उनका परिचय दे दिया । यह है भगवान् का सौन्दर्य और माधुर्य । हम भगवान् शङ्कराचार्य जी का वह श्लोक सुना रहे थे जिसमें वे कहते हैं कि एक तरफ तू भगवान् के सौन्दर्य, माधुर्य, सौगन्ध्य, सौरस्य को रख और दूसरी तरफ संसार के विषयों को रख । देख तेरी विश्रान्ति किसमें है ? इस तरह से जब हम संसार से विरस हो जाएँगे तो यहाँ भी तो हमें कुछ ऐसा चाहिए जिससे हम अनुराग करें । जब भगवान् हमारे सामने आ जाएँगे तो उनसे अनुराग होगा । इसलिए कहते हैं कि **भक्तिः ज्ञानाय कल्पते** अर्थात् भक्ति ज्ञान का साधन है। बस इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

हर हर महादेव !

—*—

[17]

।। राम राम सत्रह ।।

चंचल चित्त को परमात्मा में लगा दो

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

कल हम प्रवचन में आपको बता रहे थे कि भगवान् आदि शंकराचार्य ने प्रबोध सुधाकर नाम के अपने एक ग्रन्थ में चित्त को सम्बोधित करके कहा –

चेतश्चंचलतां विहाय पुरतः सन्धाय कोटिद्वयं तत्रैकत्र निधेहि सर्वविषयानन्यत्र च श्रीपतिम् ।

विश्रान्तिर्हितमप्यहो क्व नु तयोर्मध्ये तदालोच्यतां युक्त्या वानुभवेन यत्र परमानन्दश्च तत्सेव्यताम् ।।

इसमें उन्होंने चित्त को सम्बोधित करके कहा कि रे चित्त ! चंचलता को छोड़कर विचार कर। अपने मन को तराजू बनाकर तौल । एक ओर समस्त विषयों को रख और दूसरी ओर श्रीपति भगवान् श्रीमन्नारायण को रख, राम को रख, शिव को रख, जगदम्बा को रख और यह देख कि तू क्या चाहता है ? मन की भावना क्या है ? चित्त की इच्छा क्या है ? वह चाहता है विश्राम और सुख । हमें विश्राम चाहिए और साथ-साथ सुख चाहिए । कहाँ विश्राम है ? सुख तो चाहिए लेकिन हम अगर संसार के भोगों की ओर देखें तो वहाँ तो विश्राम नहीं है क्योंकि जिन विषयों से हमारा राग होता है, जिनको अपने सुख का साधन समझते हैं वे सब सहज में नहीं मिलते । उसके लिए परिश्रम करना पड़ता है । फिर उसके पश्चात् उनको भोग लेने से भी विश्रान्ति नहीं होती। उल्टे और जलन होती है । गोस्वामी तुलसीदास जी ने राम कथा का महत्त्व बतलाते हुए कहा –

मन करि विषय अनल बन जरहीं । होई सुखी जो एहि सर परही ।।

मन हाथी है । हाथी विषयरूपी अनल वन में, दावानल में झुलस रहा है । जैसे जंगल में जब दावानल लग जाता है । बाँस की रगड़ से आग पैदा हो जाती है और पूरे जंगल में आग लग जाती है । बीच में पड़ा हुआ हाथी कहाँ जाए ? जिधर जाता है उधर ही आग । विषयरूपी अनल में मनरूपी हाथी जल रहा है । विषय क्या है ? शब्द, स्पर्श,

रूप, रस और गन्ध। इन विषयों की प्राप्ति के लिए जब वह वहाँ जाता है तो उनको प्राप्त करने के पश्चात् उसको तृप्ति तो होती नहीं, बल्कि तृष्णा और बढ़ जाती है। व्याकुलता बढ़ जाती है। बार-बार उसको प्राप्त करना चाहता है। प्राप्त न होने के कारण वह व्याकुल हो उठता है। दूसरी बात यह है कि विषयों के सुख के बाद निश्चित रूप से दुःख आता है। जैसे दिन के बाद निश्चित रूप से रात आती है वैसे ही सुख की समाप्ति के बाद दुःख जरूर आएगा। ज्यादा सुख जब आता है तो वह दुःख का ही संकेत करता है। आपने देखा होगा कि जब छोटे-छोटे बच्चे बहुत ज्यादा हँसने लगते हैं, खिलखिलाकर हँसते हैं तब माता-पिता समझ जाते हैं कि अब रोएगा क्योंकि हँसना सुख का द्योतक है और सुख के बाद दुःख तो आना ही है। भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में बताया –

ये हि संस्पर्शजा भोगाः दुःख योनय एव ते।
आद्यन्तवन्त कौन्तेय न तेषु रमते बुधः।।

जो संस्पर्शज भोग हैं, इन्द्रियों और विषयों के सम्पर्क से जो मिलने वाले भोग हैं वे दुःख के ही कारण हैं। आदि-अन्त वाले हैं। आदि और अन्त का अर्थ यह है कि उनको प्राप्त करने के लिए पहले परिश्रम करो और परिश्रम करके प्राप्त करने के बाद थोड़े समय के अनन्तर फिर चले जाते हैं। ऐसी स्थिति में ये दुःख की योनि हैं, दुःख के कारण हैं। जैसे किसी को खाज हो जाती है तो पहले खुजाता है तो बड़ा सुख मिलता है लेकिन जब उसके बाद नख से घाव हो जाता है चमड़े में तो उतनी ही जलन होती है। इन संसार के सुखों की यही अवस्था है। सुख भी क्षणिक है और विश्राम भी क्षणिक है। सबसे बड़ी बात यह है कि विषयों में हमारा जो आकर्षण है वह उनके सौष्ठव को लेकर है। उनकी सुन्दरता को लेकर है। वह सौन्दर्य भी संसार का स्थिर नहीं है। वह भी चला जाता है।

किसी ने हमको बताया था कि विलायत में एक स्त्री थी। उसको देखकर एक नवयुवक मुग्ध हो गया और उससे प्रेम करने लगा। आजकल यह बहुत चल रहा है। इसी में लव मैरिज हो जाता है। आजकल के बेटे-बेटियों को पढ़ा-लिखाकर होशियार करो, पैसा खर्च करो, प्यार दो, सब कुछ करो फिर भी बाद में वो गायब हो जाती हैं। पिता जब खोजते हैं तो कहती हैं कि डैडी खोज मत करो। हमने अपना साथी ढूँढ लिया है। जब ये लोग अपना साथी ढूँढ लेते हैं तो ऐसे पागल हो जाते हैं कि कोई कुछ समझाए जँचता ही नहीं है।

कल हमारे पास एक लड़का आया एक लड़की की फोटो लेकर। कहने लगा कि

महाराज! मैं इससे प्रेम करता हूँ, शादी करना चाहता हूँ । यह लड़की मेरी जाति की भी नहीं है लेकिन फिर भी मैं इससे विवाह करना चाहता हूँ । हमने पूछा कि तुम्हारे पास जन्मकुण्डली है ? उसने कहा कि है । हमने कहा कि हमारे यहाँ तो ज्योतिष्पीठ पण्डित हैं हाई कोर्ट । तुम उन्हें कुण्डली दिखाओ । इन्होंने देखा और कहा कि खलाष्टक योग है । एक-दूसरे की जान को खतरा है । हमने कहा कि ये तो ऐसा बता रहे हैं । लड़का बोला कि आप खतरा मिटा दो और हमारी शादी करा दो । मतलब यह है कि ऐसा कुछ पागलपन सवार हो जाता है, जवानी का जोश आ जाता है चाहे लड़का हो या लड़की हो किसी की नहीं सुनते । साल दो साल में ही सारा नशा उतर जाता है । फिर एक-दूसरे की सूरत नहीं देखना चाहते हैं । कहते हैं कि हम अलग होना चाहते हैं । हमें बचाओ।

संसार के भोग थोड़े दिन के लिए आकर्षक हैं । हम बता रहे थे कि विलायत की लड़की से एक नवयुवक का प्रेम हो गया । वह पत्र लिखने लगा पर वह उसके पत्र का उत्तर नहीं देती थी । एक दिन वह उस लड़की के आँगन में जाकर बैठ गया । बोला कि जब तक तुम हमसे विवाह करने का वादा नहीं करोगी मैं तुम्हारे घर में बैठा रहूँगा और बिना खाए पिए प्राण दे दूँगा । उसने लड़के से पूछा कि आपको मेरा क्या अच्छा लगता है ? उसने कहा कि तुम्हारे कपोल माने गाल अच्छे लगते हैं । गाल में उसने लगाया था पाउडर तो वह पोछकर आ गई । देखा तो गाल में झुर्रियाँ पड़ी थी । बोला तुम्हारे दाँत अच्छे लगते हैं तो दाँत उसके नकली थे । उसने निकाल कर दिखा दिया । फिर कहा कि बाल अच्छे लगते हैं तो उसने बाल भी निकाल दिया । वह भी नकली थे । उसने जब लड़की का विकराल रूप देखा तो बिना कुछ सुने भाग गया वहाँ से । कहाँ का प्रेम ? सब दुनिया का प्रेम है । कहाँ का सौन्दर्य, कहाँ का माधुर्य ? अपनी-अपनी दृष्टि है सौन्दर्य और माधुर्य की । आपके यहाँ जिसकी नाक ऊँची हो वह अच्छी मानी जाती है लेकिन चीन में जिसकी चपटी है वह अच्छी मानी जाती है ।

रामायणी लोग कथा सुनाते हैं कि भगवान् रामचन्द्र जी लंका विजय के पश्चात् जब सीताजी और वानरों के सहित अयोध्या की ओर प्रस्थान करने लगे तो कुछ किष्किन्धावासी वानरों ने कहा कि महाराज ! आपका दर्शन तो हमारे परिवार के लोगों ने किया है लेकिन जानकी जी का दर्शन नहीं किया क्योंकि उस समय वे लंका में थी। अब वे आ गई हैं तो उनका भी दर्शन करा दीजिए । पुष्पक विमान उतारा गया तो वानरी, भल्लूकी सब आ गईं सीताजी को देखने । सब देखने लगी कि कैसा सुन्दर मुखारविन्द है, कैसा सुन्दर चरणारविन्द है । एक बोली मुँह बिचकाते हुए कि सब कुछ है लेकिन पूँछ तो नहीं है । उनके यहाँ पूँछ सुन्दरता की निशानी है।

अपनी-अपनी परिभाषा है सुन्दरता की। जिसका मन जहाँ लग जाता है वहाँ यह दिखाई ही नहीं पड़ता कि वह कुरूप है या सुन्दर है। दूसरे लोग कुछ भी कहते रहें पर उसको तो नहीं दिखता कि ये कुरूप है। संसार के भोग आपातरमणीय कहलाते हैं। जब तक इनमें मनुष्य गिर न जाए, जब तक मक्खी शहद में फँस न जाए तब तक ही माधुर्य है। जो बैठी वैसे ही माधुर्य खत्म। हमलोग कहा करते हैं कि संसार के भोग थोड़े समय के लिए ही है। दिल्ली में लड्डू बिकते हैं –

दिल्ली के लड्डू पैसे के दो दो। जो खाए वो पछताए और जो न खाए वो पछताए।

एक ने सोचा कि सस्ते लड्डू हैं। खा ही लूँ। एक पैसा दिया तो दो मिल गए। भीतर चापर भरी थी। ऊपर केवल चाशनी से चिपका दिया था। जैसे ही उसने मुँह में डाला तो लड्डू फूटा और चापर चिपक गई। तालू में। न बाहर आए न भीतर जाए। संसार के भोगों की यह हालत है। जिसको नहीं मिला है वह पछताता है और जिसको मिला है वह भी पछता रहा है।

संसार के भोगों की यही अवस्था है। भोगों की छोड़ो। यह देखो कि कोई तुमसे प्रेम करता है क्या? आप तो संसार से प्रेम कर रहे हैं लेकिन क्या इस संसार में आपसे भी प्रेम करने वाला कोई है? जब तक आप लोगों के काम के रहेंगे तब तक आपसे लोग प्रेम करेंगे पर जब यह देख लेंगे कि यह आपके काम का नहीं रह गया तो सबका ध्यान आपसे हट जाएगा। यहाँ तक कि आप देखिए कि यदि आपके पास पैसा है, पद है तो सब लोग घेरे रहेंगे। बड़े-बड़े लोग मित्र बनेंगे। यदि कहीं घाटा लग जाए, पद छूट जाए तो कौन पूछता है? सब लोग छोड़ देंगे। यहाँ तक कि बिना स्वार्थ के आपकी ओर आँख उठाकर देखने को भी तैयार नहीं हैं लोग। भगवान् शङ्कराचार्य जी ने वृद्धावस्था का वर्णन किया है –

यावद् वित्तोपार्जन शक्तः तावन्निज परिवारो रक्तः।
पश्चाज्जर्जर भूते देहे वार्तां पृच्छति कोऽपि न गेहे ।।

जब तक व्यक्ति धन कमाकर घर लाता है तब तक परिवार के लोग प्यार करते हैं और जब शरीर जर्जर हो जाता है तो घर में कोई सीधी बात नहीं करता। आप जब किसी पद पर हैं, पैसे कमाकर घर आते हैं तो घर वाली चाय बनाकर तैयार रहती है कि लो चाय पी लो। बच्चे आते हैं, घेर लेते हैं पर जब वृद्धावस्था आ जाती है, शरीर पंगु हो जाता है और आप किसी से पानी भी माँगते हैं तो उत्तर मिलता है कि क्या हाथ-पैर टूट गए हैं? स्वयं क्यों नहीं ले लेते? ऐसा नहीं है कि बुढ़ापा नाम की कोई योनि है अलग

से। एक दिन सबको आएगी। यदि जिन्दा रहे तो एक न एक दिन आपको भी वृद्धावस्था आ ही जाएगी।

देखत ही आई विरुधाई। जो तैं सपनेहुँ नाहिं बुलाई।।

जिसको तूने स्वप्न में भी नहीं बुलाया देखते ही देखते ऐसी वृद्धावस्था आ जाती है। कहते हैं कि युवावस्था जाकर नहीं आती और बुढ़ापा आकर नहीं जाता। युवावस्था लौटकर नहीं आएगी चाहे जितने ही रसायन खाओ, कितने ही सिर में खिजाब पोतो पर बाल काले नहीं होंगे। ऊपर-ऊपर के काले हो जाएँगे जड़ सफेद ही दिखेगी। देखिए कि विज्ञान ने कितनी तरक्की की है कि लोग चन्द्रमा में चले गए, मंगल में चले गए। विज्ञान इतनी तरक्की कर रहा है लेकिन अब तक बुढ़ापा दूर नहीं कर पाया। मृत्यु से लोगों को नहीं बचा पाया। जरा और मरण से मुक्ति दिलाने की ताकत अभी किसी में नहीं है। वृद्धावस्था जब आ जाती है तो फिर बड़ी कठिनाई होती है।

कहते हैं कि एक बाबू थे। अच्छी नौकरी पा गए थे। शहर में एक बंगला था जिसमें अपनी पत्नी के साथ रहते थे। एक बार गाँव से एक रिश्तेदार उनके यहाँ पहुँच गया। उन्होंने उस रिश्तेदार को बहुत प्रेम से अपने यहाँ रखा। सोने के लिए कमरा दे दिया, भोजन देने लगे। उसको वहाँ सब सुख मिला तो वहीं रह गया। जाने का नाम ही न ले। उन्होंने सोचा कि कुछ दिन रहकर चले जाएँगे लेकिन जाता ही नहीं था और कह सकते नहीं थे कि चले जाओ। एक दिन पति-पत्नी ने एक नाटक रचा और एक दिन भोजन के समय पति-पत्नी दोनों लड़ पड़े। पति बोला कि इतने दिन हो गए तुम्हें आज तक भोजन बनाने का सहूर नहीं आया। कभी नमक कम कभी ज्यादा। कभी मिर्च कम कभी ज्यादा। पत्नी बोली तुम्हें तो हमारा भोजन कभी अच्छा ही नहीं लगेगा। हम जाते हैं अपने मायके। बोला चली जा तो हम भी चले जाएँगे होटल में। दोनों में झगड़ा हुआ और दोनों ने अपना बक्सा उठाया। एक ने मायके का रस्ता पकड़ा, एक ने होटल का रस्ता पकड़ा। इनकी लड़ाई तो नकली थी। उस मेहमान को भगाने की युक्ति थी। कुछ देर में घूम-घाम कर लौट आए। एक-दूसरे को देखकर मुस्कुराए कि क्या बढ़िया युक्ति रची। पति बोला हम होटल में थोड़े ही जा रहे थे, पत्नी बोली कि हम मायके थोड़े ही जा रहे थे। सुनकर मेहमान बोला कि हम भी थोड़े ही गए हैं। वह भी लौटकर आ गया। वह जानता था कि दोनों लौटकर आएँगे। यह मेहमान कौन है ? यह बुढ़ापा है। बुढ़ापा आता है पर जाता नहीं है।

एक बुढ़िया कमर झुकाए जा रही थी। कमर झुक गई थी बेचारी की। कभी उसका

भी जमाना था लेकिन आज यह हालत हो गई । लड़कों ने मुस्कुरा कर पूछा कि क्या ढूँढ रही हो। उसने कहा कि मूर्खों ! मेरी जवानी का मोती गिर गया है । उसको खोज रही हूँ । लेकिन वह मोती मिलता कहाँ है ? कहने का मतलब यह है कि संसार के लोग तुमको छोड़ेंगे । एक दिन जब तुम काम के नहीं रहोगे तब वे छोड़ ही देंगे । कहते हैं कि अन्त में ये सब छोड़ देंगे इसलिए बुद्धिमानी कर और तू अभी से इन्हें छोड़ दे –

सुत वित नारि जानि स्वारथ रत न करु नेह इनहीं ते
अन्तहुँ तोहि तजेंगे पामर तू न तजे अबहीं ते ।
मन पछितैहसि अवसर बीते ।

कहने का मतलब यह है कि न तो विषय आपको सुख देने वाले हैं और न जिनसे विषय मिलता है वे ही सुख देने वाले हैं । जिनसे आप प्रेम कर रहे हैं वे भी आपको प्रेम देने वाले नहीं हैं । आपने पिछले प्रवचन में सुना कि भगवान् का सौन्दर्य इतना अद्‌भुत है कि संसार के लोग तो मोहित हो ही जाते हैं पर भगवान् स्वयं भी मोहित हो जाते हैं। भगवान् श्रीराम की सुन्दरता के सन्दर्भ में आता है कि जब शूर्पणखा की नाक काट ली गई तब वह खर, दूषण और त्रिशरा के पास गई और उनसे बताया कि राम-लक्ष्मण ने हमारा अपमान किया है । वह चौदह करोड़ राक्षसों की सेना लेकर भगवान् राम से लड़ने आ गए । भगवान् श्रीराम ने लक्ष्मण जी से कहा कि हम इनसे निपट लेंगे । तुम सीता जी को लेकर पहाड़ की कन्दरा में छिप जाओ –

लै जानकिहि जाहु गिरिकन्दर । आवा निशिचर कटक भयंकर ।

अकेले राम जी खड़े थे धनुष-बाण लिए । खर ने देखा तो कहने लगा अपने मन्त्री से कि मन्त्री ! हमने संसार के बहुत से लोग देखे पर इतनी सुन्दरता कहीं नहीं देखी ।

हम भरि जन्म सुनहु सब भाई । देखी नहीं असि सुन्दर ताई ।
जद्यपि भगिनी कीन्ह कुरुपा । वध लायक नहिं पुरुष अनूपा ।।

यह पुरुष इतना सुन्दर है कि यह मारने लायक नहीं लगता । इससे कह दो कि सीता को छोड़कर हमारे पास से चला जाए । हम इसे नहीं मारेंगे । मतलब यह है कि जो विरोधी है, शत्रु है वे भी मोहित हो गए । गुण की विशेषता तो इसी में है कि दुश्मन भी उसकी प्रशंसा करे । खर भी उनकी प्रशंसा कर रहा है । इतना ही नहीं, मानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने यह भी बताया है कि जब सेतु बन गया और सेतु के द्वारा वानर-भालुओं की सेना उस पार जाने लगी तो भगवान् सेतु के मध्य में खड़े हो गए और

सेना इतनी अपार थी कि सेतु में समा ही नहीं रही थी । कहते हैं कि भगवान् श्रीराम जब खड़े हुए तो उनको देखने के लिए मछलियाँ, कच्छप, मगरमच्छ भी ऊपर आ गए–

देखन कहुं प्रभु करुणाकन्दा । प्रकट भये बहु जलचरवृन्दा ।।

एकटक देखते रहे । उनकी आँखें उन पर से हटती ही नहीं थी । कहते हैं कि सेतुबन्ध की जो भीड़ थी कुछ तो सेतु से जाते थे और कुछ जलचरों के ऊपर से जाते थे । इतना सौन्दर्य भगवान् का । ऐसे सुन्दर । ऐसा है भगवान् का सौन्दर्य, माधुर्य, सौरस्य, सौगन्ध्य । सौगन्ध्य की चर्चा हमने अपने पिछले प्रवचन में की थी । भगवान् की वाणी यदि कोई सुन ले तो अत्यन्त मधुर होती है ।

सबसे बड़ी बात यह है कि भगवान् का स्वभाव गुण कहीं संसार में मिल नहीं सकता। कोई भी हममें दुर्गुण देखकर हमें छोड़ देगा लेकिन भगवान् हमें नहीं छोड़ेंगे । वे सदा हमसे प्रेम करेंगे । आप देखिए उनकी करुणा। अभी स्वामी जी आपको बता रहे थे । बड़ा अच्छा प्रसंग था कि जब अश्वत्थामा के माथे की मणि अर्जुन ने निकाल दी और अपमानित करके उसको निकाल दिया तो वह ब्राह्मण था, ब्राह्मण का अपमान बहुत बुरा होता है ।

ब्राह्मण को क्रोध आ गया कि हम पाण्डवों को निर्वंश कर देंगे । द्रौपदी के पाण्डवों से हुए पाँच पुत्र तो उसने पहले ही मार डाले थे । उसके पोते हुए थे । अब उसने देखा कि उत्तरा के गर्भ में बालक है । उसने छः बाण निकाले। पाँच पाण्डवों की ओर लक्ष्य करके छोड़ दिया और छठवाँ उत्तरा के गर्भ की ओर लक्ष्य करके छोड़ा । भगवान् हस्तिनापुर की ओर प्रस्थित हो गए । रथ उनका चलने ही वाला था कि भय से विह्वला उत्तरा आई और कहने लगी कि **त्राहि त्राहि महायोने !** हे महायोने ! आप मुझे बचाओ। आप कृपा करके मेरी ओर देखो । एक बहुत बड़ा तपा हुआ लोहा मेरे पेट की ओर आ रहा है –

कामं दहतु मां नाथ मा मे गर्भो निपात्यताम् ।

भले ही यह मुझे मार डाले पर मेरे गर्भ को न मारे । भगवान् उत्तरा के पेट में चले गए। अभी स्वामी जी जो कह रहे थे वह बड़ा अच्छा लगा हमको । बोले कि भगवान् माता देवकी के पेट में नहीं गए । हमने आपको एक दिन बताया भी था । भगवान् का गर्भाधान प्राकृतिक गर्भाधान नहीं है । भगवान् वसुदेव जी के मन से देवकी के मन में दीक्षाक्रम से जाते हैं । पहले वसुदेव के मन में भगवान् आए और फिर वसुदेव जी के मन से देवकी

के गर्भ में आए –

ततो जगन्मंगलमच्युतांशं समाहितं शूरसुतेन देवी ।
दधार सर्वात्मकमात्मभूतं काष्ठा यथानन्दकरं मनस्तः ।

कहते हैं उन्होंने वसुदेव जी के मन से अपने मन में श्रीकृष्ण को धारण किया । केवल मन में रहे और मन से ही सामने प्रकट हो गए । पेट केवल फूल गया । पेट में कुछ था नहीं और न ही वे पेट से बाहर निकले ।

भये प्रकट कृपाला ।

सामने प्रकट हो जाते हैं । अपनी माता के पेट में नहीं गए लेकिन अपने भक्त की रक्षा के लिए उत्तरा के गर्भ में चले गए । कैसे गए, क्या हुआ ? यह विवेचन तो वेदान्त का है लेकिन एक बात समझने की है । वह यह कि भगवान् जहाँ जैसा अवसर होता है वैसा रूप धारण कर सकते हैं । छोटे भी बन जाते हैं और बड़े भी बन जाते हैं । जीव भी जब शरीर से निकलता है तो इसको आधिभौतिक देह मिल जाता है अंगुष्ठ प्रमाण का । जैसे अपना यह शरीर है वैसे ही अंगूठे जैसा एक शरीर उसका बन जाता है । उसको आधिभौतिक देह कहते हैं । उसी गर्दन में यमराज फाँस लगाता है । अंगूठे में सब कुछ है । आजकल कहते हैं कि हाथ में ही सब प्वाइण्ट है । आँख का प्वाइण्ट, नाक का प्वाइण्ट, जहाँ तकलीफ हो उस प्वाइण्ट को दबा देते हैं । अंगुष्ठ के समान उस समय उसको शरीर मिल जाता है । उसका गला फँसाते हैं तो उसको लगता है कि हमारा इतना ही बड़ा शरीर है । उसको यही दिखता है । हाथी हमसे क्यों डरता है ? क्योंकि हम उसको बड़े दिखाई पड़ते हैं । ऐसा चश्मा है उसकी आँख में कि आदमी उसको बहुत विशाल दिखता है । अगर वह सबको छोटा देखेगा तो आफत कर देगा । भगवान् उत्तरा के उदर में जाकर केवल थोड़ी देर के लिए नहीं रहे अपितु जब तक उस बालक का जन्म नहीं हो गया तब तक हाथ में सुदर्शन चक्र लिए बैठे रहे । क्या सुन्दर रूप परीक्षित ने देखा इसका वर्णन भागवत में किया गया है ।

भगवान् का दर्शन ऐसा है कि जिसको देखकर आँख थके ही न । आँख देखती ही चली जाए । मन वहाँ से हटे ही न । ऐसा भगवान् का अद्‌भुत सौन्दर्य । सबसे बड़ी बात यह निकली कि इनमें सुन्दरता भी है और सुन्दरता के साथ-साथ करुणा भी है, प्यार भी है । संसार में कोई व्यक्ति सुन्दर भी हो लेकिन करुणा न हो तो किस काम का ? कैकेयी बड़ी सुन्दरी थी लेकिन कर्कशा निकल गई –

मन मलीन तनु सुन्दर कैसे । विष रस भरा कनक घट जैसे ।

मन मलिन हो और शरीर सुन्दर हो तो किस काम की वह सुन्दरता ? इसीलिए हमलोग तो यह मानते हैं कि चाहे शरीर सुन्दर न हो पर हृदय सुन्दर हो । हृदय में उदारता हो, प्यार हो। इसीलिए भगवान् गोरे नहीं, काले हैं । आप गोरे काले को मत देखो। उनके हृदय की करुणा देखो कि कितने दयालु हैं । इतने दयालु कि पूतना जहर पिलाने के लिए आई तो उसको भी उन्होंने माता की गति दे दी । उद्धव जी कहते हैं भागवत में –

अहो बकीयं स्तनकालकूटं जिघांसया पाययदप्यसाध्वी ।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं कं वा दयालुं शरणं व्रजेम ।

अहो ! कितने आश्चर्य की बात है कि बकासुर की बहन बकी पूतना थी । बक माने बगुला। जो बगुला होता है वह दम्भ का द्योतक है । बाहर से कुछ और भीतर से कुछ। **वेशभाषाक्रियाचातुर्यादिभिः स्वमाहात्म्यप्रकटनं दम्भः ।** वेश, भाषा और क्रिया की चतुरता से अपना महत्त्व दूसरे के सामने प्रकट करने का नाम दम्भ है । बढ़ियाँ कपड़ा पहन लिया, महात्मा ही बन गए । वेश बना लिया । कालनेमि ने वेश बना लिया था । नकली लोग अच्छा वेश बना लेते हैं । असली को भी मात दे देते हैं क्योंकि उनको तो आर्टिफिशियल माने नकली काम करना है । भाषा लच्छेदार बोल रहे हैं, क्रिया की चतुरता आदि से अपना महत्त्व प्रकट करना ही दम्भ है । बगुला बहुत धीरे-धीरे चलता है । एक बार भगवान् श्रीरामचन्द्र जी ने पम्पा सरोवर में एक बगुले को देखा कि धीरे-धीरे चल रहा है । लक्ष्मण से बोले –

पश्य लक्ष्मण पम्पायां बकः परमधार्मिकः ।
मन्दं मन्दं पदं धत्ते जीवानां वधशंकया ।।

हे लक्ष्मण देखो । यह बगुला कितना धार्मिक है । इसके पैरों से दबकर कोई जीव न मर जाए इसलिए धीरे-धीरे पैर रख रहा है । कैसा परम धार्मिक है । अहिंसक है । राम के ऐसे वचन सुनकर पम्पा सरोवर से एक मछली ऊपर आई और बोली –

बकः किं वर्ण्यते राम येनाहं निष्कुलीकृता ।
सहवासी विजानीयात् चरितं सहवासिनाम् ।।

हे राम ! इस बगुले की क्या कथा सुना रहे हो । यह हमारे पूरे खान्दान को ही खा गया है । जो सहवासी हैं वही सहवासी के चरित्र को जानता है । बक की बहन बकी

भी वैसी ही है। माता नहीं है लेकिन माता का रूप बनाया है । सुन्दर नहीं, विकराल है लेकिन सुन्दरी बनकर आ गई । इतना सुन्दर रूप बनाया कि शुकदेव जी बोलते हैं कि उसने बढ़िया जूड़ा बाँधा, नाक में नथनी डाल ली, सुन्दर वस्त्र पहन लिया, सुन्दर रूप बना लिया और हाथ में कमल ले लिया । गोपों ने देखा कि नन्द के घर में नारायण ने जन्म लिया है तो उनके दर्शन के लिए कमल लेकर कमला स्वयं आ गई है । ऐसे ही लोग तो ठगते हैं । इतना प्यार दिखाया उसने कि लोगों को सन्देह हो गया कि यशोदा कृष्ण की माता है कि यह पूतना ही माता है। बड़ा प्यार दिखाकर धीरे-धीरे उठा लिया। पहले से ही वह अपने स्तनों में जहर लगाकर आई थी तो उसने झट से भगवान् के मुँह में डाल दिया कि पिए और तुरन्त मर जाए । सोचने लगी कि कंस से जाकर कहूँगी कि मैंने तुम्हारा काम कर दिया । तुम्हारे शत्रु को मार डाला। भगवान् ने अपने हाथ से स्तनों को पकड़ लिया और चूसा । दूध तो था ही नहीं, जहर ही था । माता के स्तनों में जब प्यार होता है तब दूध निकलता है । यहाँ तो क्रूरता थी । भगवान् ने जब अपने मुँह से खींचा तो उसके प्राण ही खींचने लगे –

प्राणैः समं रोषसमन्वितोऽपिबत् ।

प्राणों के सहित पी लिया । प्राणों के सहित क्यों पिया इसका उत्तर है –

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।

भगवान् कहते हैं कि जो जिस भाव से मेरा भजन करते हैं मैं भी उसका उसी भाव से भजन करता हूँ । भगवान् ने सोचा कि मेरे प्राणों को लेने के लिए मुझे स्तन पिला रही है तो मैं भी प्राण लेने के लिए पिऊँगा । **रोष समन्वितोऽपिबत् ।** रोष क्रोध को कहते हैं। क्रोध तमोगुण है और तमोगुण भगवान् शंकर जी की उपाधि है । अतः मानो यह कहा कि जहर-जहर तुम पी लो, दूध-दूध हम पी लेंगे । भगवान् ने जब उसके प्राण खींचे तो उसके मर्म में पीड़ा होने लगी । कहने लगी **मुंच मुंच मुंच** माने छोड़ छोड़ छोड़ । भगवान् ने कहा कि पूतना । हम पकड़ने में भले ही देर करें लेकिन जिसको अपना लेते हैं उसको नहीं छोड़ते । वह छटपटाने लगी । कहते हैं कि भगवान् ने उसको मारा नहीं । बालकों के नख बहुत पतले होते हैं । भगवान् ने जब उसका स्तन पीने के लिए पकड़ा तो उनमें नख गड़ गए । इससे उसके स्तन में खून आ गया और पहले से ही जहर लपेटी थी तो समझो कि जैसे इंजेक्शन लग गया । अपने ही जहर से वह मर गई । भगवान् ने थोड़े ही मारा । पापी अपने पाप से स्वयं ही मर जाते हैं –

हिंस्रः स्वपापेन विहिंसितःखलः साधुः समत्वेन भयाद् विमुच्यते ।

एक दोहा है –

राम न मारे काहू को पापी नहीं है राम ।
आप ही से मर जाएँगे करके खोटे काम ।

राम किसी को मारते नहीं हैं । भगवान् पापी नहीं हैं । खोटे काम कर करके लोग अपने आप मर जाते हैं । जब मर गई पूतना तो सवाल यह है कि पूतना को कौन सी गति दी जाए? अब यहाँ भगवान् की उदारता देखिए अगर आपको कोई मारने आए तो आप उसको सजा दिलाएँगे । आप जज ही हैं और अगर आपको कोई मारे तो आप उसको तुरन्त दण्ड देंगे । लेकिन कहते हैं कि भाई अब तो हमने इसका स्तन पी लिया इसलिए यह अब माँ हो गई । इसलिए जो गति माँ को देनी चाहिए वही हम पूतना को भी देंगे।

अहो बकीयं स्तनकालकूटं जिघांसया पाययदप्यसाध्वी ।

यद्यपि पूतना असाध्वी थी लेकिन माता को जो गति मिलनी चाहिए वह गति उसको मिल गई । उनके समान ऐसा कौन दयालु है जिसकी शरण में हम जाएँ । भगवान् के स्वभाव में भी विशेषता है । सौन्दर्य तो है ही । हमारी माता त्रिपुरसुन्दरी जगदम्बा सबसे सुन्दरी है लेकिन उनमें करुणा भी है –

माँ की करुणा असम्भव को सम्भव करे ।
नेत्र कमलों ने लाखों के संकट हरे ।

उसके हृदय में अपार करुणा है । केवल अपने नेत्रों से देखकर ही लोगों के दुःखों को दूर करने की क्षमता रखती है । जिनके हृदय में ऐसी करुणा हो और वह अकारण हो, बिना स्वार्थ के हो ऐसे परमात्मा में अपना मन लगाओ । हे चित्त ! उन्हीं में तुम अपने मन को लगाओ । इस संसार के विरस विषयों से अपने मन को हटाओ। कहा कि तुम देख लो तराजू से तौल कर कि विश्राम और सुख किसमें है ? युक्ति से देखकर, समझकर कि दोनों में से जिसमें तुम्हें विश्राम और सुख मिले फिर तुम वह करो । इस तरह से मनुष्य को भगवान् की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा उन्होंने दी ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो । प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो । गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो ।

हर हर महादेव !

[18]

।। राम राम अट्ठारह ।।

सत्कर्म से पुण्य बढ़ेगा और बुरे कर्म से पाप

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने महात्माओं के स्वभाव का वर्णन किया है ।

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ।।

महात्मा शब्द की व्युत्पत्ति है – **महान् आत्मा अन्तःकरणं यस्य स महात्मा ।** जिसका अन्तःकरण महान् है वह महात्मा है ।

अयं निजः परो वेति गणना लघु चेतसाम् ।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।।

जो उदार चरित हैं उनके लिए तो सारी पृथ्वी उनका कुटुम्ब है ।

सबके प्रिय सबके हितकारी । दुःख सुख सरिस प्रशंसा कारी ।।

महात्मा लोग सबके प्रिय होते हैं, सबके हितकारी होते हैं । दुःख-सुख में समान रहते हैं। निन्दा-स्तुति में भी समान रहते हैं । भगवान् कहते हैं कि ऐसे लोग मेरा भजन करते हैं। **भजन्त्यनन्यमनसः** अर्थात् अनन्य मन होकर मेरा भजन करते हैं । आगे बोले कि **ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ।** यहाँ यह बात समझने की है कि समस्त प्राणियों के कारण, सबके पिता, सबकी माता, भूतादि और यह भी समझ लीजिए कि जो आदि में भी है और अन्त में भी है वह मध्य में भी होता है । जो सृष्टि के प्रारम्भ में भी थे और सृष्टि का जब अन्त हो जाएगा तब भी रहेंगे । अभी जो सृष्टि दिख रही है इसमें भी हैं । अव्यय हैं भगवान् । अभी स्वामी अमृतानन्द जी बता रहे थे कि भगवान् अमोघलील हैं । उनकी लीला अव्यर्थ है, सार्थक है, उनके संकल्प व्यर्थ नहीं जाते । वे सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान हैं और वे ही जगत् की उत्पत्ति, पालन करते हैं और जब इच्छा होती है तब अपने में समेट लेते हैं। जैसे मकड़ी अपने मुँह से जाला निकालती है, ताना-बाना बुनती है उसमें घूमती है, खेलती है और जब इच्छा होती है अपने मुँह में समेट लेती है । ऐसे ही भगवान् सबको खा जाते हैं । **अत्ता चराचरग्रहणात्** । अत्ता तो जीव होता है । ईश्वर कैसे ? जीव छोटा

अत्ता है और ईश्वर बड़ा अत्ता है ।

कथा आती है कि महाराज युधिष्ठिर के मन में महाभारत युद्ध के पश्चात् इस बात को लेकर पश्चाताप हुआ कि हमने अपने स्वजनों को मारा । स्वजनवध का बहुत भारी दोष हमको लग गया। इसका हमको प्रायश्चित्त करना चाहिए । यह नियम है कि यदि अपने से कोई गड़बड़ काम या पाप हो जाए तो उसका परिमार्जन इसी जीवन में कर लेना चाहिए । प्रायश्चित्त कर लेने से पाप का क्षय हो जाता है । यदि आपने अपने जीवन काल में प्रायश्चित्त नहीं किया तो वह बना रहेगा । कुछ लोग यह समझते हैं कि पुण्य करने से पाप का नाश हो जाएगा पर ऐसा नहीं है । पुण्य करने से पुण्य बनेगा, बुरे कर्म करने से पाप बनेगा । दोनों गाय के सींग जैसे चढ़ेंगे । पाप भी रहेगा और पुण्य भी । इसीलिए यदि आपको पाप का नाश करना है तो यदि आपसे मनसा, वाचा, कर्मणा कुछ अनुचित हो गया है तो जीवन काल में ही उसका प्रायश्चित्त कर लीजिए । मरने के बाद फिर अवसर नहीं मिलेगा । कहते हैं जब पापी प्राणी नरक में जाता है और रोता है तब यमदूत कहते हैं –

प्रथमहि काहे न कीन ओसासू । अब कत रोवत बड़े बड़े आंसू ।

जब तू मनुष्य था तब तूने क्यों इसका उपाय नहीं किया ? अब यह तो भोग भूमि है । कर्म भूमि तो मनुष्य शरीर था । अब रोने से क्या होता है ? जो धार्मिक लोग होते हैं वे लोग यह विचार करते हैं कि हमसे कोई अनुचित कार्य न हो जाए । डरते रहो कि ये जिन्दगी बेकार न हो जाए । सपने में भी जीव का अपकार न हो जाए । विचार करते हैं । यदि उनको लगता है कि हमसे कुछ अनुचित हो गया तो उसका समय रहते प्रायश्चित्त कर लेते हैं ।

राजा युधिष्ठिर ने सोचा कि स्वजन वध का प्रायश्चित्त कर लेना चाहिए । क्या करें? उस समय राजाओं के लिए अश्वमेध यज्ञ सबसे बड़ा प्रायश्चित्त माना जाता था । आजकल का अश्वमेध नकली है । अब जो कराते हैं वह नकली है । इनके पास तो तांबे का घोड़ा भी नहीं है। यज्ञ क्या कराएँगे ? अश्वमेध यज्ञ में यजमान अपनी पत्नी के साथ एक वर्ष तक असिधारा व्रत लेता है । पति और पत्नी एक शय्या में बीच में नंगी तलवार लेकर सोते हैं । यही असिधारा व्रत है । घोड़ा निकलता है और उसके पीछे सेना चलती है । पूरे भूमण्डल में घोड़ा घूमता है। उसमें लिखा रहता है कि या तो हमारी अधीनता स्वीकार करके हमें कर दो या फिर युद्ध करो । जब सारे विश्व से घोड़ा घूमकर आ जाता है तब अश्वमेध यज्ञ पूरा होता है ।

कलियुग में इस यज्ञ को रोक दिया गया है क्योंकि न कोई ऐसा राजा है जिसका अखिल भूमण्डल में साम्राज्य हो और न ऐसी किसी में शक्ति ही है कि घोड़ा छोड़ दे तो कोई पकड़े नहीं। इसलिए यह उस समय की बात है । उस समय युधिष्ठिर की भी इतनी ताकत नहीं थी कि वे घोड़ा छोड़कर वापस बुला लेते । उनकी शक्ति तो भगवान् श्रीकृष्ण थे । इसलिए उन्होंने अपने भाई भीमसेन को द्वारका भेजा कि जाओ भगवान् श्रीकृष्ण को बुलाकर लाओ । वे आएँगे तो यज्ञ होगा। भीमसेन द्वारका गए भगवान् को बुलाने के लिए। वहाँ पहुँचे तो उस समय का वर्णन आता है कि अश्वमेध पर्व में माता यशोदा भी ब्रज से वहाँ चली गई थी । विविध प्रकार के व्यंजन भगवान् को परोस रही थी । भगवान् आरोग रहे थे । इतने में क्या हुआ कि भीमसेन वहाँ पहुँच गए । उन्होंने खबर भेजी कि हस्तिनापुर से भीमसेन आपसे मिलने आए हैं । भगवान् मुस्कुराए और बोले कि कह दो कि भोजन कर रहे हैं, भोजन के बाद मिलेंगे । भीम ने ज्यों ही भोजन का नाम सुना तो पेट की आग प्रज्ज्वलित हो गई और पहरेदारों को धक्का देते हुए चौके में पहुँच गए कि जब भोजन ही हो जाएगा तो क्या रह जाएगा ? भगवान् बोले कि हम जानते थे कि तुम रुक नहीं पाओगे । दोनों मामा फूफा के भाई थे । परस्पर में बड़ा प्रेम था । भीमसेन भी भगवान् श्रीकृष्ण से प्रेम करते थे और भगवान् भी करते थे । हुआ यह कि दोनों भाईयों ने मिलकर भोजन किया। इसके बाद थोड़ा विश्राम दोनों ने किया । फिर भगवान् ने पूछा कि आप कैसे पधारे ? बोले कि हस्तिनापुर के स्वामी महाराज युधिष्ठिर अश्वमेध यज्ञ करना चाहते हैं । उस यज्ञ के द्वारा आपकी पूजा करना चाहते हैं पर बिना आपकी सहायता के यज्ञ नहीं हो पाएगा । भगवान् बोले कि क्यों करना चाहते हैं ? उन्होंने कहा कि स्वजनों को मारने से, गुरुओं को मारने से, अपने पूर्वजों को, पितामह को मारने से, अपने रिश्तेदारों को मारने से उनको पाप लग गया है । वे पाप से डर गए हैं । इसीलिए प्रायश्चित्त करना चाहते हैं । भगवान् बोले कि क्या बात करते हो ? तुम मूर्ख हो । अरे जब हमने गीता में सब कुछ कह दिया है तो फिर यह सब बातें क्यों ? भीमसेन ने पूछा कि भगवन् आपने हमको मूर्ख क्यों कहा ? मूर्ख कहने का अभिप्राय क्या है ? बोले मूर्खता के दो लक्षण है तुममें । एक लक्षण तो यह है कि तुम खाते बहुत हो । जिसकी खुराक ज्यादा होती है उसकी अकल भी मोटी होती है । एक तरफ चारों पाण्डव, कुन्ती, द्रौपदी और एक तरफ अकेला भीम । दूसरे तुम कुयोनिगामी हो । तुम हो तो मनुष्य पर तुमने विवाह किया है हिडिम्बा से जो कि राक्षसी है । भीमसेन ने कहा कि भगवन् यदि यही लक्षण मूर्खता के हैं तो यह लक्षण तो श्रीमान के भी हैं । भगवान् बोले कैसे ? बोले कि हम तो भोजन करते हैं पर आप तो –

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रियतात्मनः ।।

हम तो महाराज फल खात्ते हैं, भोजन करते हैं पर आप तो पत्ता भी खा लेते हो, फूल भी खा लेते हो। जो आपको प्रेम से समर्पित कर दे आप वह खा लेते हो । भगवान् बोले कि फल-फूल ही तो खाते हैं और अधिक क्या खाते हैं ? भीमसेन बोले कि हम तो खाते हैं यह लोक जानता है पर आप जो खाते हो इसको शास्त्र जानता है । वेद जानता है –

यस्य ब्रह्म क्षत्रं च उभे भवत ओदनम् । मृत्युश्च उपसेचनम् ।

ब्राह्मण और क्षत्रिय से उपलक्षित चराचर प्रपंच जिनका भात है । उस भात को मौत की दाल से लपेटकर आप खा जाते हो महाराज ! **अत्ता चराचरग्रहणात्** आपके समान खाने वाला कौन होगा ? अच्छा ठीक है । हम कुयोनिगामी तो नहीं है । बोले कि जरा अपनी ओर भी देखो। हमारी तो राक्षसी है आपकी तो जाम्बवान की लड़की भल्लूकी है। अगर मूर्ख हैं तो हम और आप दोनों मूर्ख हैं। इसलिए केवल हमारे ऊपर दोष मत लगाइए।

यत्रोभयोः समो दोषः परिहारश्च तादृशः ।
नैको पर्यनुनोक्तव्यस्तादृशार्थविचारणे ।

दोनों के दोष समान हों और परिहार भी समान हों तो उसके लिए एक तो दोषी नहीं बनाया जा सकता। भगवान् बोले फिर भी तुम मूर्ख हो । बात यह है कि जब हमने भगवद्गीता में पहले से ही अर्जुन को कह रखा है –

यत्करोषि यदश्नासि यत्करोषि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ।

जो तू करता है, जो तू खाता है, जो हवन करता है, जो दान करता है वह सब मुझको अर्पित कर दे । क्या होगा इससे ?

शुभाशुभ फलैरेवं मोक्षसे कर्मबन्धनैः ।
सन्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैस्यसि ।।

कहते हैं कर्म का बन्धन यह है कि यदि आपने शास्त्रविहित कर्म किए हैं, यदि आपने धर्म किया है तो शुभ फल मिलेगा और यदि आपने अधर्म किया है तो अशुभ फल

मिलेगा । कर्म कभी निष्फल नहीं जाता ।

इसलिए तू अपने कर्म मुझको समर्पित कर दे । आपलोगों ने जो पाप किया है वह आप मुझको समर्पित कर दो । पाप से मुक्त हो जाओ । भीमसेन ने कहा कि भगवन् ! मेरे को आप मूर्ख मत समझिए । जो वस्तु आपको समर्पित होती है वह अनन्त गुना होकर समर्पण करने वाले की तरफ लौटती है । यदि हम पाप का समर्पण करेंगे तो अनन्त गुणित होकर पाप वापस लौटकर आएगा । इसलिए हम तो पुण्य करेंगे, धर्म करेंगे और वह आपके चरणों में समर्पित करेंगे । कहने का मतलब यह है कि मनुष्य पाप और पुण्य इन दो कर्मों के बन्धन से कैसे मुक्त हो इसके सम्बन्ध में सोचना पड़ेगा । इसके लिए भगवान् के तत्त्व को जानना आवश्यक है । भगवान् के तत्त्व को जानने के लिए पहले गुरु की आवश्यकता पड़ेगी । **ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ।** भगवान् को जानोगे तब न उनका भजन करोगे?

जाने बिनु न होइ परतीती । बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती ।।
प्रीति बिना नहीं भक्ति दृढ़ाई । जिमि खगेश जल की चिकनाई ।।

आप पानी में गोता लगाएँ तो शरीर चिकना हो जाएगा लेकिन हवा लगते ही सूख जाएगा। ऐसे ही बिना प्रीति के भक्ति दृढ़ नहीं हो सकती । पहले आवश्यक है कि भगवान् के स्वरूप का बोध हो । भगवान् का ज्ञान हो। अभी स्वामी जी ने एक प्रश्न उठाया था कि भगवान् तो अभोक्ता हैं –

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषष्वजातेः।
तयोरन्यं पिप्पलं स्वाद्वत्ति अनश्नन् अन्यो अभिचाकशीति ।

बात क्या है कि भगवान् मायाविशिष्ट होकर संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार करते हैं । जहाँ यह माया रहती है वह तो अगम्य है । सामान्य रूप से **इदं** से उसका बोध नहीं किया जा सकता । उसका बोध तो आत्मरूप से ही होता है । जब आत्मरूप से ही बोध हो जाता है तो फिर वह डर मिट जाता है कि यदि सब भगवान् के द्वारा लीन हो जाएगा तो हमारा शरीर भी लीन हो जाएगा, हम भी लीन हो जाएँगे। अरे ! तुम लीन नहीं हो जाओगे। जिसमें सब लीन होने वाला है वह तुम ही हो । तुमसे वह भिन्न नहीं है । सारा संसार यदि लीन होगा तो तुममें ही होगा । तुम्हारा किसी में लय नहीं होगा। यह समझने की बात है । भगवान् के स्वरूप को जानने के लिए वही लोग भगवान् का भजन करते हैं इसलिए जिज्ञासुओं को भी भगवान् ने भक्त कोटि में ही माना है ।

हम यह बता रहे थे कि भगवान् शंकराचार्य जी ने कहा अरे चित्त ! चंचलता को छोड़कर मन को तराजू से तौलकर देख । एक तरफ सारे विषयों को रख और दूसरी ओर भगवान् को रख। किसमें तेरा विश्राम है । किसमें तेरा हित है ? अगर तुझे यह लगे कि इधर संसार के भोगों में सुख है तो इसमें अपने मन को ले जा और यदि इधर लगे तो इधर ले जा । हम बता रहे थे कि भगवान् को और संसार को यदि हम सौन्दर्य माधुर्य की दृष्टि से देखें और तराजू से तौलें तो संसार के किसी प्राणी में वह सौन्दर्य नहीं है जो भगवान् के स्वरूप में है । इसीलिए भगवान् श्रीराघवेन्द्र जब वन जाते हैं तो ग्रामवासी कहते हैं कि अरे विधाता ने इनके भाग्य में वनगमन क्यों लिख दिया ?

एक कहहिं ये विधि न बनाए ।

कोई कहता है कि ब्रह्मा ने इनको नहीं बनाया । यह स्वयं ही प्रकट हो गए हैं । इनको देखकर ब्रह्मा इनके जैसा दूसरा बनाने लगे पर जब नहीं बना, बिगड़ गया तो इनको ही वन भेज दिया ।

तेहि ईर्ष्या वन आनि पठाए ।

कहने का अभिप्राय यह है कि इतना सौन्दर्य संसार में और कहीं है ही नहीं जितना भगवान् के स्वरूप में है । संसार में न तो उतना सौन्दर्य है और न ही माधुर्य ही है । हम यह कह रहे थे कि यदि सौन्दर्य हमको संसार में कहीं मिल भी जाए तो वह स्वभाव कहाँ मिलेगा जैसा भगवान् का स्वभाव है –

उमा राम स्वभाव जेहि जाना । ताहि भजन तजि भाव न आना ।

भगवान् के स्वभाव को जो जान लेता है वह उन्हीं का हो जाता है । भगवान् के भीतर करुणा है । भगवान् के मन में अपने आश्रितों के प्रति अनुराग है । जो उनका आश्रय ले लेता है वे उसका न तो दोष देखते हैं और न उसका कभी त्याग करते हैं । जिसको अपना लेते हैं उसको अपना ही लेते हैं । यदि उसमें कुछ दोष आते हैं तो उन दोषों को वे स्वयं नष्ट कर देते हैं । भगवान् को भक्तवत्सल कहते हैं । वत्सल का अर्थ है –

वत्सं लाति इति वत्सलः ।

गाय का नाम है वत्सला । जब उसके पेट से बछड़ा निकलता है तो झिल्लियों से लिपटा रहता है । जमीन में गिरता है और गन्दगी भी लगी रहती है उसके शरीर में । उसकी माँ गाय उस समय यह नहीं कहती कि तू नहाकर साबुन लगाकर आ, तब तुझसे प्यार करूँगी। वह तो चाट-चाटकर अपने बछड़े को साफ कर लेती है । वह यह नहीं

देखती है कि कैसा मलिन है ।

अभी आपलोग भागवत की कथा सुन रहे हैं । भगवान् धूल-धूसरित रहते हैं । भगवान् श्रीकृष्ण को माता ने उबटन लगाकर नहलाया है । बाल में कंघी कर दी है । आँखों में काजल लगाया है । पीली रेशमी झमुरी पहनाई है । उनके कमर में झुनझुनी बँधी है । पैर में पैजनिया है । भगवान् बड़े चंचल हैं । कोई राहगीर सड़क से निकलता है तो वे उसके पीछे लग जाते हैं। टुन टुन टुन की आवाज सुनकर जब व्यक्ति पीछे मुड़कर देखता है तो वे खड़े हो जाते हैं । धूल से लिपटे हुए माता की गोद में आकर बैठ जाते हैं । माता आँचल से उनका मुँह पोछकर अपना दूध पिलाती है । यह जो वात्सल्य है यह भगवान् में है । चाहे वह पुरुष रूप में हो चाहे वह माता रूप में हो । हम जगदम्बा त्रिपुरसुन्दरी माता के बारे में बता रहे थे । उनके सम्बन्ध में सौन्दर्य लहरी ग्रन्थ में भगवान् शङ्कराचार्य जी ने लिखा है –

भवानि त्वं दासे मयि वितर दृष्टिस्सकरुणामिति स्तोतुं वाञ्छन्कथयति भवानि त्वमिति यः ।
तदेव त्वं तस्मै दिशसि निज सायुज्यपदवीं मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुमुटनीराजितपदाम्।।

किसी भक्त ने भगवती के मन्दिर में जाकर हाथ जोड़कर कहा कि हे भवानी ! आप मेरी ओर करुणामयी दृष्टि से देख दो । तुम्हारे जो विशाल नेत्र हैं अधखिले नीलकमल के समान कान्ति वाले हैं, परम सुन्दर उन नेत्रों से अमृत निकल रहा है उससे एक बार मुझे स्नान करा दो । मैं इतने से ही धन्य हो जाऊँगा । आपसे और कुछ माँगने की आवश्यकता मुझे नहीं है । पूर्णिमा का चन्द्रमा जब छिटकता है तो महल में भी उसकी किरणें पड़ती हैं और वन में भी पड़ती है ।

वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ।

वन में कोई जान नहीं पाता पर महल में किरणों से सब चमक जाता है । तुम्हारे देखने से ही मैं चमक जाऊँगा । वे कहते हैं कि **भवानि त्वं दासे** माँ ! मुझ दास में आप अपनी करुणामयी दृष्टि डालो । उस दृष्टि से एक बार आप मुझे स्नान करा दो और पूरा नहीं कह पाया था केवल **भवानि त्वं** ही कह पाया था तभी उसके प्राण पखेरू उड़ गए । भगवती के दिव्य, मणिमय, मणिद्वीप धाम में वह पहुँच गया और भगवती के चरणकमलों का उसको सायुज्य मिल गया । भगवती के चरण कमलों में जाकर वह विलीन हो गया । भगवती अपने ब्रह्म सिंहासन पर बैठी हैं । ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और ईश्वर सिंहासन के चार पाए हैं । सदाशिव फलक हैं । उनके ऊपर जगदम्बा विराजमान हैं । एक चरण सिंहासन

पर है और एक चरण मणि के पीढ़े पर रखा है । इन्द्र, चन्द्र, वरुण, यम, कुबेर बड़े-बड़े देवाधिदेव आते हैं, अपने मुकुट झुकाते हैं । बार-बार उस पादपीठ में अपना मस्तक झुकाकर उठाते हैं । मानो उन चरणकमल की अपने मुकुट मणि से आरती उतार रहे हों। यह आरती उनकी हो जाती है जो उन चरणों में बैठे हैं । केवल **भवानि त्वं** कहने मात्र से उसकी इतनी महिमा बढ़ गई । यह भगवती का सौन्दर्य है । इसके साथ-साथ जो स्वभाव है, जो करुणा है वह और कहीं नहीं मिलेगा। संसार में यह आपको नहीं मिलेगा। जो स्वाभाविक रूप से लोककल्याण करते ही रहते हैं । ऐसे भगवान् श्रीराम हैं, भगवान् श्रीकृष्ण हैं, भगवान् सदाशिव भोलेनाथ हैं । सदा प्राणी का कल्याण करते रहते हैं । भगवान् में सौन्दर्य भी है और साथ ही साथ सद्गुण भी है । कहते हैं इसीलिए तो शुकदेव जी महाराज एकान्त में जंगल में बैठकर ब्रह्म का ध्यान कर रहे थे । उनको ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो गया था । व्यास जी ने अपने दो विद्यार्थियों को भागवत के दो श्लोक पढ़ाए । वे लकड़ी लेने के लिए जंगल गए तो एक विद्यार्थी ने गाया –

बर्हापीडं नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारं बिभ्रद्वासः कनककपिशं वैजयन्तीं च मालाम् ।
रन्ध्रान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दैः वृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद् गीतकीर्तिः ।।

जिन्होंने अपने मस्तक पर मयूरपिच्छ का मुकुट धारण कर रखा है, जो श्रेष्ठ नट के समान हैं । विद्वान् कहते हैं कि नट अभाव में भाव दिखाता है । नाटक में नट आता है और कहता है कि इस समय शीतल मन्द पवन चल रही है । हाथ हिलाता है । अपने भाव से जो वस्तु नहीं है उसको भी दिखाता है । नट में विप्रयोगात्मक श्रृंगार है और वर **प्रत्यग्र भोक्ता** है । वर जो वधू को प्राप्त करता है वह संयोगात्मक श्रृंगार है। भगवान् में यह दोनों ही हैं । वे प्यास भी है और पानी भी है । दोनों जिसमें हैं वह नटवरवपुः। कानों में कर्णिकार के फूल लटक रहे हैं । यह भी सुनते हैं कि कर्णिकार में एकवचन है । कभी एक कान में कनेर का गुच्छा डालते हैं और कभी दूसरे कान में डालते हैं । **बिभ्रद्वासः कनककपिशं** सोने के समान पीत वर्ण का पीला वस्त्र पहने हैं । जैसे बिजली चमकती हो वैसा चमचमाता पीताम्बर है उनका । जिनके श्यामल श्रीअंग में मानो जैसे कालमेघ में बिजली चमकती है ऐसे ही श्रीकृष्ण भगवान् के काले-काले अंग में पीताम्बर चमक रहा है । **वैजयन्तीं च मालां ।** गले में वनमाला धारण किए हैं और वेणु के रन्ध्रों को अपनी अधर सुधा से प्लावित कर रहे हैं । ऐसे भगवान् ने **स्वपदरमणं** माने अपने पद से रमण करते हुए **वृन्दारण्यं प्राविशत्** वृन्दावन में प्रवेश किया ।

वह मूर्ति शुकदेव जी के हृदय में आ गई । क्यों आ गई ? अगर कोई सामान्य सौन्दर्य होता तो उस ब्रह्मज्ञानी शुकदेव जी के मन को आकृष्ट नहीं कर सकता था लेकिन भगवान् की दिव्य मूर्ति ने उन्हें आकृष्ट किया। वे सोचने लगे कि इतना सुन्दर स्वरूप वाला, जिसका इतना वैभव है वे हम अकिंचन से कैसे मिलेंगे ? हम तो जंगल में रहने वाले हैं जिनके पास एक कौपीन भी नहीं है । कृष्ण के पास जाएँ भी तो वे हमें कैसे अपनाएँगे ? हमारे पास उन्हें कुछ देने को भी तो नहीं है । क्या लेकर जाएँ ? उन शिष्यों ने कहा कि तुम लेने की बात कर रहे हो? दूसरा श्लोक सुनाते हैं –

अहो बकीयं स्तनकालकूटं जिघांसया पाययदप्यसाध्वी ।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं कं वा दयालुं शरणं व्रजेम ।

यह बकी पूतना भगवान् के पास क्या लेकर गई थी ? कुछ लोगों ने कहा कि दूध पिलाने गई थी । तो कहा कि दूध नहीं, स्तन में जहर लपेटकर गई थी । जिन्होंने उसका स्तन पीकर उसको अपनी माता मान लिया और उसको माता की गति दे दी । ऐसे करुणामय हैं भगवान् । ब्रह्मा जी पूछते हैं कि भगवन् इन ब्रजवासियों को आप क्या दोगे ? आपके पास इनको देने के लिए क्या है ? भगवान् बोले हम इनको मोक्ष दे देंगे। ब्रह्मा जी बोले कि मोक्ष तो आपने पूतना को भी दे दिया । जिन्होंने अपना घर, अपना धाम सब कुछ आपके चरणों में न्यौछावर कर रखा है उसको वही दोगे जो आपने पूतना को दिया ? जो पूतना को वही यशोदा को ? सब धान बाईस पसेरी। भगवान् बोले कि इस अकेली पूतना को हमने मोक्ष दिया है पर इन गोकुलवासियों के पूरे कुटुम्ब को मोक्ष दे देंगे । आप कहते हो कि कुटुम्ब को मोक्ष दे देंगे पर इस पूतना के कुल में भी कौन बचा ? इसका भाई बकासुर भी मुक्त हो गया । अघासुर भी मुक्त हो गया । कंस को भी आपने तार दिया । कहना होगा कि भक्त के आप ऋणी रहेंगे । आपको भक्त का कर्जदार ही रहना पड़ेगा।

भगवान् अपने को कर्जदार मानते हैं यह उनकी विशेषता है । हनुमान जी जब संजीवनी बूटी लेकर आए तो भगवान् श्रीराम ने कहा कि हे वानर ! कपे ! तुमने हमारा जो उपकार किया है उसे मैं भूल नहीं सकता । तुम्हारे उपकार अगणित हैं । यदि एक-एक उपकार के बदले हम प्राण देना चाहें तो कितनी बार प्राण देना पड़ेगा यह निश्चित नहीं हो सकेगा । फिर भी उपकार बचे रहेंगे । इसीलिए हम यह चाहते हैं कि तुम्हारे किए गए उपकारों के हम अधमर्ण्य ऋणी ही बने रहे । इसीलिए भी हम ऋणी बनना चाहते हैं कि हम पर विपत्ति आई है इसीलिए हमको उपकार की जरूरत पड़ी लेकिन तुम

पर न कभी विपत्ति आए और न हमको उपकार करने की आवश्यकता ही पड़े । ऐसा कहकर उन्होंने हनुमान जी को अपने हृदय से लगा लिया ।

यह भगवान् का स्वभाव है । भगवान् श्रीकृष्ण का स्वभाव, जगदम्बा का स्वभाव । सौन्दर्य तो है ही । इसके अतिरिक्त एक बात और है । अभी विस्तार में नहीं जाएँगे । संक्षेप में बता देते हैं । वह यह कि विषयों के सौन्दर्य-माधुर्य से हम आकृष्ट होते हैं तो बराबर उनमें फँसते चले जाते हैं और यहाँ यदि भगवान् के सौन्दर्य-माधुर्य में हम आकृष्ट हो जाते हैं तो और कहीं हमारा मन जाता ही नहीं है । वहाँ जाकर हमारी सारी भोग की इच्छाएँ समाप्त हो जाती हैं । संसार का प्रेम काम कहलाता है और भगवान् के प्रति प्रेम होता है । काम में और प्रेम में अन्तर है । **स्वसुखसुखित्त्वं काम** । अपने सुख में सुखी होना काम और **तत्सुखसुखित्व प्रेम** अर्थात् अपने प्रियतम भगवान् के सुख में सुखी होना प्रेम है । आप देखेंगे भगवान् की लीला और भक्तों के चरित्र में तो आपको लगेगा कि दोनों में कितना अन्तर है । आज यहीं पर विराम करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[19]

।। राम राम उन्नीस ।।

सब सुख परमानन्दस्वरूप परमात्मा के

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

आपके सामने पिछले प्रवचन में यह प्रसंग चला था कि सांसारिक विषयों और भगवान् इन दोनों में से मन को किसमें विश्रान्ति मिलती है। किसमें सुख है ? सुख तो विषयों में भी मिलता है लेकिन वहाँ विश्रान्ति नहीं है। सांसारिक सुख क्षणिक होता है। थोड़ी देर रहकर समाप्त हो जाता है। उसके पश्चात् फिर विषयों की इच्छा होती है। सच पूछा जाए तो विषयों से जो सुख मिलता है वह विषयों का नहीं अपितु परमानन्दस्वरूप परमात्मा का ही है। होता क्या है कि जब हमारे मन में किसी विषय को प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न होती है चाहे वह शब्द, स्पर्श, रूप, रस की हो या गन्ध की हो। किसी भी विषय की प्राप्ति की इच्छा यदि उत्पन्न हुई तो वह इच्छा जब प्रबल हो जाती है तो दूसरी इच्छाओं को दबा देती है। यदि आपको किसी से मिलना है और उससे मिलने का आनन्द लेना है तो मिलन की इच्छा जब उत्पन्न हुई तो और सारी इच्छाएँ समाप्त हो जाएँगी। वह इच्छा आपके हृदय में काँटे जैसी चुभने लगेगी। जब तक वह पूरी न हो जाए तब तक चुभती ही रहेगी। बढ़ती ही जाएगी। जिससे मिलना चाहते हैं वह जब आपको मिल जाएगा, आपके सामने आ जाएगा तो आपके मिलने की इच्छा पूरी होने के कारण वह समाप्त हो जाएगी। दूसरी इच्छाएँ दबी हुई हैं। पहली इच्छा पूर्ण होने पर चित्त में प्रसन्नता हुई। प्रसन्नता सत्त्वगुण का लक्षण है। आपके मन में उस अनुकूल विषय को प्राप्त करने से प्रसन्नता हो गई। इच्छा कोई रही नहीं तो मन कैसा हो गया ? निस्तरंग और निर्मल हो गया। निस्तरंग, निर्मल मन में परमानन्दस्वरूप परमात्मा का प्रतिबिम्ब पड़ जाता है। उसको देखकर हम भ्रम से यह समझते हैं कि इसके मिलने का सुख है। यदि उसके मिलने का सुख रहता तो दो चार दस दिन यदि हमारे साथ रह जाए तो फिर वैसा ही सुख क्यों नहीं होता ? क्योंकि उसके पहले मिलन से अन्तःकरण की जो अवस्था बनी थी वह अवस्था अब बनती नहीं। अन्तःकरण की उस अवस्था से भी सुख नहीं मिला। उस अवस्था में आनन्दस्वरूप परमात्मा का आभास हो रहा है। प्रतिबिम्ब पड़ा। यह उसका सुख है जिसको हमने उस व्यक्ति के मिलन से मिलने वाला मान लिया कि इसके मिलने से यह सुख मिला। फिर मन में कोई दूसरी, तीसरी, चौथी इच्छा होगी। क्योंकि

यदि स्थायी सुख हो जाता तो फिर दूसरी इच्छा न होती। स्थायित्त्व के न रहने के कारण मन को विश्राम नहीं मिलता। बार-बार फिर भटकता है कि यह मिल जाए, यह मिल जाए।

हमलोग दृष्टान्त दिया करते हैं कि एक किसान था। वह अपने खेत में हल जोत रहा था। जोतते-जोतते थक गया। दोपहर का समय हो गया। शरीर पसीने से लथपथ हो गया। उसने सोचा कि इस सरोवर में नहाये। सरोवर में नहाकर अपने शरीर की गर्मी समाप्त करे। वह पास के निर्मल सरोवर में स्नान करने गया। बड़ा स्वच्छ जल था। पैसा भी डालो तो नीचे दिखाई पड़े ऐसा स्वच्छ जल। उस किसान ने झाँककर देखा तो उसको उस सरोवर के भीतर एक चमकती हुई मणि दिखाई पड़ी। उसने सोचा कि आहा! यह मणि इस जल के भीतर है। कपड़े उतारे, अपनी लंगोटी कसी और जल में गोता लगाया। मणि को पाने के लिए हाथ बढ़ाया पर हाथ में मणि नहीं आई। कई बार गोता लगाया। नदी के तल तक हाथ पहुँचा दिया। कंकड़ बटोर लिए लेकिन उसमें मणि नहीं दिखी। ऐसा करते-करते वह बहुत थक गया। बाहर निकलकर हॉफने लगा। शरीर में कँपकँपी आ गई थी। इतने में एक महात्मा वहाँ आए। उसको काँपता देखकर पूछा कि क्या बात है ? नहा लिया है तो जाओ, अब क्यों खड़े हो ? बोला कि महाराज! इस पानी के भीतर एक मणि है जो बहुत बहुमूल्य लगती है पर हमारे हाथ में नहीं आ रही है। उन्होंने पूछा कि कहाँ दिख रही है ? उसने दिखा दिया। उन्होंने कहा कि ठीक है। इस पेड़ पर चढ़ो। जिस पेड़ की डाल सरोवर की तरफ बढ़ी थी उस पेड़ पर वह चढ़ा और उस डाल के सहारे सरोवर की ओर बढ़ा। उसकी झुरमुट में एक चील का घोंसला था जिसमें वह मणि रखी थी। उसका प्रतिबिम्ब जल में पड़ रहा था। वह उसको नीचे खोज रहा था जबकि वह ऊपर थी। ऊपर उसको मणि मिल गई।

यह सुख भी मणि की तरह है। सुख अपनी आत्मा में है। अपने भीतर है लेकिन अन्तःकरण में जब प्रतिबिम्ब पड़ता है तब हम इसको वहाँ से लेकर विषयों तक खोजते हैं। खोजते-खोजते जीवन बीत जाता है। कभी भी वस्तु से आनन्द प्राप्त नहीं होता। हमेशा मनरूपी हाथी प्यासा ही रहता है। क्यों मन शान्त नहीं होता? क्योंकि सुख नहीं मिला। जैसे प्यासा हाथी शुद्ध सरोवरों में, ताल-तलैयों में अपनी सूँड डालता है। ताल-तलैयों में पानी थोड़ा है, कीचड़ ज्यादा है। पानी के साथ-साथ कीचड़ भी खींचने लगता है। सूँड में जब कीचड़ आता है तो वह वहाँ से भागता है। दूसरी तलैया में जाता है, तीसरी में जाता है पर उसको शान्ति तब मिल सकती है जब अगाध निर्मल सरोवर मिल जाए, उसमें स्नान करे आनन्द से और खूब पानी पिए। इसी तरह से जब मनुष्य भगवान्

के चरणों में पहुँच जाता है तो उसको शान्ति मिल जाती है । इसीलिए कबीर ने कहा –

मन मस्त हुआ तब क्यों बोले ।
हीरा पाइ गाँठ गठियायो । बार बार वाको क्यों खोले । मन ......
हंस नहाये मानसरोवर, ये ताल-तलैया क्या डोले । मन.......
सुरथ कलारी फिर भई मतवारी । मदवा पी गई आण तोले । मन ....
हल्की थी तब चढी तराजू, पूरी भई तब क्या तोले । मन ......

जब मन को परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है तब उसको शान्ति मिलती है । विषयों में शान्ति नहीं मिलती। विचार करने पर पता लग जाता है । इसके लिए परिश्रम भी करना पड़ता है । एक विषय मिला, फिर दूसरे के लिए परिश्रम करो, फिर तीसरे के लिए करो, फिर चौथे के लिए और वह भी थोड़ी देर के लिए पर यहाँ अपना मन लगाया तो भगवान् के स्वरूप में नवनवायमानता है । वह प्रत्येक क्षण नवीन रहते हैं । ऐसा नहीं है कि किसी ने भगवान् को देख दिया और देखने के बाद उसका मन ऊब जाए । वह नहीं ऊबता ।

कहते हैं कि लक्ष्मी जी बड़ी चंचला है । चला-चपला है । कभी एक के पास नहीं रहती। एक बार कलकत्ते में हम एक मुहल्ले से निकल रहे थे गाड़ी से तो बड़ी-बड़ी बिल्डिंग वहाँ आस-पास थी । लोगों ने कहा कि महाराज यह हर दिन हर हफ्ते बिक जाती है । आज इसकी है, कल उसकी, परसों उसकी । क्योंकि यह बिल्डिंग सटोरियों की है। सट्टा खेलते हैं । क्षणमात्र में हार जाते हैं, जीत जाते हैं । आज इसकी हो गई, कल उसकी हो गई । ऐसी स्थिति में संसार के जो विषय हैं इसी तरह से क्षणभंगुर हैं । लक्ष्मी चला-चंचला है । आज है, कल नहीं है । लक्ष्मी को चंचला माना गया है । कब संसार में मनुष्य गरीब हो जाए और कब धनी हो जाए पता ही नहीं चलता । किसी कवि का कथन है –

समायाति यदा लक्ष्मीः नारिकेलफलाम्बुवत् ।
प्रतियाति यदा लक्ष्मी गजभुक्तकपित्थवत् ।।

कहते हैं जब लक्ष्मी आती है तो जैसे नारियल के फल में पानी आ जाता है । कब आ गया कोई देख नहीं पाता । देखते ही देखते मनुष्य लखपति से करोड़पति, करोड़पति से अरबपति हो जाता है । लक्ष्मी जब आती है तो ऐसे आती है । जब जाती है तो **गजभुक्तकपित्थवत्** माने हाथी अगर कैथ का फल खा ले तो वह फल उसके पेट से ज्यों का त्यों निकल जाता है लेकिन उसमें गूदा नहीं रहता । लक्ष्मी कब चली गई और कब यह रईस खोखला हो गया पता ही नहीं चलता । ऐसी लक्ष्मी के लिए किसी कवि ने कह दिया –

पुरुष पुरातन की वधू क्यों न चंचला होय ।

भगवान् विष्णु को पुरातन पुरुष कह दिया । कहा कि बूढ़े की औरत कैसे चंचला नहीं होगी ? पुरातन पुरुष की यह पत्नी है इसलिए एक जगह नहीं रहती । लक्ष्मी जी ने अपने भक्तों से पूछा कि कौन मेरा भक्त नहीं है ? सब लक्ष्मी जी के भक्त हैं ।

एक बार लक्ष्मी जी और नारायण जी में शर्त लग गई । लक्ष्मी जी कहने लगी कि हमारे भक्त अधिक हैं । नारायण कहने लगे कि हमारे अधिक हैं । दोनों ने कहा कि चलो मर्त्यलोक में चलकर देख लें । भगवान् नारायण एक दण्डी संन्यासी के रूप में एक गाँव में पहुँचे । उस गाँव में एक ब्राह्मण रहता था । उस ब्राह्मण के घर में नारायण गए तो उसने अपना बड़ा भाग्य माना। अच्छे से ठहराया । कहा कि आइए महाराज ! आप नारायणस्वरूप हैं, बैठिए । महात्मा जी बैठे ही थे कि इतने में लक्ष्मी जी रानी बनकर पालकी में आईं । गाँव के बाहर एक कुँआ था । वहाँ उनकी पालकी उतरी । उन्होंने कहारों से कहा कि प्यास लगी है । पानी निकालो । कहारों ने सोने की बाल्टी और रेशम की डोरी निकाली । बाल्टी से कुँए का पानी निकाला गया । रत्नजटित सोने के कटोरे में लक्ष्मी जी को पानी दिया गया । पानी पिया और कटोरा फेंक दिया । दो चार बार पानी पिया और फेंक दिया । एक प्याले से एक बार ही पानी पिया और बोली अब चलो यहाँ से । गाँव के लोग देखने आ गए थे कि कहाँ से यह रानी साहिबा आईं हैं ? बड़ी सुन्दरी, बड़े सुन्दर आभूषण, सुन्दर साड़ी पहने पालकी में बैठकर आई हैं । लोग आस-पास खड़े थे । पालकी उठने लगी तो लोगों ने कहा कि आपके प्याले छूट गए । लक्ष्मी जी बोलीं कि हमने एक बार जिसमें पानी पी लिया उसको छोड़ देते हैं । गाँव के लोगों में यह लालच आ गया कि यदि यह रानी हमारे गाँव में रुक जाए तो दो चार दस प्याला हमलोगों को मिल ही जाएगा । सब हाथ जोड़कर खड़े हो गए कि आप यहीं कुछ दिन रुक जाइए । शाम का समय हो गया है । लक्ष्मी जी बोलीं कि तुम्हारे गाँव में हमारे रुकने लायक जगह कहाँ है ? लोगों ने कहा कि आप गाँव में घूम लीजिए । जो जगह आपको अच्छी लगे वहीं पर आप रुक जाइएगा । लोगों ने सोचा कि चाहे जिसके भी नाम से हो पर लाटरी तो निकले । जाने किसके भाग्य से वह रानी इसी गाँव में रह जाए। गाँव भर घुमाकर दिखाया । जहाँ पर दण्डी स्वामी बैठे थे उन्होंने वही घर पसन्द किया । कहा यह घर हमारे लायक है । ब्राह्मण ने स्वागत किया । दण्डी संन्यासी भी आ गए और लक्ष्मी जी भी आ गईं । अब लक्ष्मी जी खड़ी हुईं और संन्यासी की तरफ देखकर कहा कि हम इसके साथ नहीं रहेंगे । इसको हटाओ तो हम रहेंगे । ब्राह्मण बोला हाथ जोड़कर

कि देवी जी ! आप भीतर रहेंगी और यह बाहर रहेंगे। आपका क्या नुकसान होगा ? लक्ष्मी जी बोली कि नहीं, इसको बाहर निकालिए। हम इनको देखना नहीं चाहते हैं। ब्राह्मण सोचने लगा कि क्या करूँ ? धर्मसंकट में पड़ गया। उसके लड़के कहने लगे कि पिताजी! संन्यासी को विदा करो। अपने यहाँ यदि लक्ष्मी जी आ गईं तो ऐसे कई संन्यासी हमलोग बुला लेंगे। जहाँ पैसा होता है वहाँ सन्त-महात्मा अपने आप बुला लिए जाते हैं। इसलिए इनको हटाओ। ब्राह्मण बोला कि घर में आए सन्त को कैसे हटाएँ ? इतने में लड़कों ने उनका दण्ड-कमण्डलु उठाया और कहा कि चलो यहाँ से। भगवान् वहाँ से जब निकलकर चलने लगे तो लक्ष्मी जी भी उनके पीछे-पीछे चल पड़ीं। कहने लगी कि रे मूर्खों ! ये जहाँ रहते हैं वहीं मैं रहती हूँ। इनको छोड़कर मैं नहीं रहती। मैं तो तुम्हारी परीक्षा ले रही थी कि तुम कितने मूर्ख हो।

सब लोग **सुरासुर मानवाः** सुर, असुर, मनुष्य सब लक्ष्मी चाहते हैं, धन चाहते हैं। **यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः।** जिसके पास धन है वही कुलीन माना जाता है कि बड़े कुलीन हैं यह। वही गुणज्ञ हैं, सब कुछ है। पैसा चला जाए तो कुलीन भी हो तो कोई न कोई कलंक लगा देगा। यह है लक्ष्मी का महत्त्व।

उन्होंने अपने भक्तों से कहा कि मैं श्रीमन्नारायण के चरणकमलों का दर्शन करके अभी आई हूँ। भगवान् के पादपद्मों में गए। वहाँ जब पहुँची तो स्त्रियों का स्वभाव है कि वह सौत को पसन्द नहीं करती। कहते हैं कि आटे की भी सौत हो तो भी वह जलन पैदा करती है। भगवान् के गले में वनमाला है।

तुलसी कुन्द मन्दार पारिजात सरोरुहैः।
पंचभिः रचिता माला वनमालेति उच्यते ।।

तुलसी, कुन्द, मन्दार, पारिजात, कमल से वनमाला बनती है। तुलसी का गुच्छा नीचे रहता है जो सुमेरु की तरह भगवान् के चरणों में लटकता रहता है। तुलसी लक्ष्मी जी की सौत है। भगवान् के वाम वक्षस्थल में लक्ष्मी जी बैठी हैं। वाम वक्षस्थल में भगवान् ने उनको सुरक्षित स्थान दे रखा है। भगवान् श्रीमन्नारायण के वाम वक्षस्थल में जो सुवर्णवर्णा रोमराजि है वह श्रीवत्सलक्ष्म है। वहाँ लक्ष्मी जी का स्थान है लेकिन वह चरणों में रम जाती हैं और नित्य निरन्तर अभी हमने देखा। अभी हम जो देख रहे हैं ऐसा पहले कभी नहीं देखा। नवनवायमान भगवान् के चरणों को देखते-देखते सदा के लिए वहीं रम गईं। फिर कहीं नहीं गईं। **अपीत्यदर्शनम्।** भगवान् **अपीत्यदर्शन** हैं माने जिनका दर्शन करके प्राणी ऊबता नहीं है। सदा भगवान् नवनवायमान रहते हैं।

विषय बासे पड़ जाते हैं लेकिन भगवान् बासे नहीं पड़ते । इसीलिए वहाँ मन को विश्राम मिल जाता है । सबसे बड़ी बात यह है कि विषयों के सुख को लेने के लिए अपने में भोक्तृत्त्व का अभिमान होता है । मैं इसको भोगूँगा । मैं इसका भोक्ता हूँ । यह भावना रहती है और भगवान् के प्रति जब आपके मन में भक्ति होगी तब अपने भोक्तृत्त्व की भावना समाप्त हो जाएगी । विषयों के प्रति जो अनुराग है उसको काम कहते हैं और उस काम के प्रति जो हमारे मन में प्रेम है उसके प्रति जो राग है उसका कारण है स्वसुखसुखित्त्व। अपने सुख में सहायक होने के कारण हम विषयों से प्रेम करते हैं । जहाँ भगवान् से प्रेम होता है वहाँ हम भगवान् के सुख में सुखी होते हैं । अपने सुख में सुखी नहीं होते । इसीलिए आप देखिए भगवान् का जो भजन करते हैं उनमें कई भाव होते हैं । पहला दास्य भाव । भगवान् स्वामी हैं, हम उनके सेवक हैं । वे हमारे मालिक हैं, हम उनके नौकर हैं । आपने जब भगवान् को सब कुछ समझ लिया और आप उनके गुलाम हो गए, नौकर हो गए तो धनी होने का अभिमान चला गया । आपके हृदय में जो यह अभिमान था कि हम पैसे वाले हैं, हम सम्पत्ति वाले हैं, हमारा इतना ऐश्वर्य है । आप अब यह सोचने लगे कि यह सब उनका है । वे मालिक और मैं उनका मुनीम हूँ । जो उनकी आज्ञा होती है वह मैं करता हूँ । अब उनके सुख में सुखी होना है । इस प्रकार के चिन्तन से अभिमान चला गया और जिसमें मालिक का भला हो वह कार्य व्यक्ति करने लगता है । मुनीम दुकान में बैठा है । बहीखाता देख रहा है, लेन-देन कर रहा है । किसके लिए ? अपने मालिक के लिए । वह अपने लिए नहीं कर रहा है । अपने लिए अगर करने लगा तो वह मुनीम कहाँ रहा ? इसीलिए जो भक्त है वह अपने को भगवान् का दास मानता है । भगवान् की प्रियता के लिए माने जिसमें वे प्रसन्न हों वह काम करता है । यह दास्य भक्ति है । इसमें सेवा होती है । दास्य भक्ति वाले हनुमान जी हैं । हनुमान जी अपने लिए कुछ नहीं सोचते । सब कुछ भगवान् के लिए ही करते हैं ।

कहते हैं कि जब भगवान् का विवाह हुआ तब वे सीता जी को लेकर अयोध्या आए। हनुमान जी सदा सेवा में रहते थे । राम जी जब अन्तःपुर में जाने लगे तो सीता जी ने कहा कि हनुमान तुम बाहर रहो । बोले हम तो उनके साथ ही सदा सेवा में रहते हैं । हम बाहर क्यों रहे? बोले कि आप भीतर क्यों जा रही हैं ? बोली कि हमने उनके लिए माथे में सिन्दूर लगाया है । देखते नहीं हो ? हनुमान जी बोले कि तुमने तो माथे में लगाया है, हम पूरे शरीर में लगा लेते हैं । ऐसा कहकर तुरन्त सिन्दूर पोत लिया । इसीलिए हनुमान जी के सारे शरीर में सिन्दूर लगा है । ऐसे भक्त हैं वे ।

सो अनन्य जाकी असि मति न टरै हनुमन्त ।

मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवन्त ।।

वह अनन्य भक्त है जो चराचर संसार को भगवान् का ही स्वरूप मानकर अपने को सेवक समझता है, सबकी सेवा को भगवान् की सेवा मानता है यह दास्य भक्ति है ।

दूसरी है वात्सल्य भक्ति । वात्सल्य भक्ति में भगवान् के ऐश्वर्य को भक्त भूल जाता है और अपने को भी भूल जाता है । प्रेम में निमग्न हो जाता है । माता यशोदा में वात्सल्य भक्ति है । भगवान् श्रीकृष्ण को वे अपना बेटा मानती हैं । मनुष्य जो किसी को बेटा मानता है उसको अपने स्वार्थ के लिए पालता-पोसता है कि बुढ़ापे में यह हमारी सहायता करेगा, सेवा करेगा । आजकल तो बुढ़ापे में सेवा करने वाले पुत्र विरले ही होते हैं । जैसे ही विवाह हुआ, घर में बहू आई और एक दो बच्चे हुए तो माता पिता से बैर हो जाता है। कहने लगते हैं कि हमारा और आपका परिवार अलग है । आजकल बहुत से लोग इसी तरह के कलियुग में हो गए हैं –

सुत मानहिं मातु पिता तब लों अबलानन दीख नहीं जब लों ।

ससुरारि पियारि भई जब ते रिपु रूप कुटुम्ब भये तब ते ।

मनुष्य प्रायः यह समझकर बेटों का पालन करता है कि आगे चलकर यह हमारी सेवा करेगा । लेकिन जहाँ वात्सल्य होता है वहाँ यह भावना नहीं रहती । हमलोगों ने देखा है कि ऐसे भी बेटों की सेवा माता-पिता करते हैं जो पंगु हैं, विकलांग हैं, बहरे हैं, गूँगे हैं । जिनकी बुद्धि का विकास नहीं हुआ है उनकी भी सेवा करते हैं । वात्सल्य में अपने पुत्र को सुख पहुँचाना, उसका हित करना उद्देश्य होता है । कुछ भक्त लोग भगवान् को अपना बेटा मान लेते हैं और बेटा मानकर उनका लालन-पालन करते हैं । यशोदा जी भगवान् श्रीकृष्ण को अपना पुत्र मानती हैं । अगर कभी पता लग जाए कि यह भगवान् हैं तो भगवान् ही उन्हें भुला देते हैं ।

एक बार ऐसा ही हुआ था । भगवान् श्रीकृष्ण ने खेलते-खेलते मिट्टी उठाकर खा ली। क्यों खा ली ? भक्त लोग इसमें कई भाव देखते हैं । इसलिए खाई क्योंकि यह मिट्टी नहीं, ब्रज रज है । ब्रज रज हमारे भक्तों के चरणों की रज है और भगवान् अपने भक्तों के भक्त हैं। श्रीमद्भागवत में लिखा है –

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शिनं। अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूरयेत्यंघ्रिरेणुभिः।

भगवान् कहते हैं कि हे उद्धव ! जो निरपेक्ष हैं, शान्त हैं, निर्वैर हैं, समदर्शी हैं ऐसे

मुनियों के पीछे-पीछे मैं चलता हूँ। इसलिए चलता हूँ कि उनके चरणों की रज उड़कर मेरे मस्तक पर पड़ जाए। मैं पवित्र हो जाऊँ। यह भगवान् सोचते हैं। भगवान् भी अपने भक्तों के भक्त हैं। दूसरी बात यह है कि भगवान् के उदर में अनेकों ब्रह्माण्ड हैं। उन ब्रह्माण्डों के भक्त भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि जिस ब्रज भूमि में आप भ्रमण कर रहे हैं वहाँ हमारा पहुँचना तो कठिन है। इसलिए कम से कम हमें वहाँ की रज तो दे दो। इसलिए भगवान् ने मिट्टी खाई। तीसरी बात यह है कि भगवान् ने सोचा कि जो हमारे चरणों की रज से बड़े-बड़े मुनि प्रेम करते हैं –

विहाय पीयूष रसं मुनीश्वरा ममांघ्रि राजीव रसं पिबन्ति किम्।
इति स्वपादाम्बुजपानकौतुकी स गोपबालः श्रियमातनोतु वः॥

बड़े-बड़े मुनीश्वर अमृत रस को भी छोड़कर मेरे चरण-कमलों का रस क्यों पीते हैं? मेरे चरण-कमलों में भ्रमर क्यों रहते हैं ? मुनियों के मन को ही भ्रमर कहा है।

पद राजीव बरनि नहिं जाई। मुनि मन मधुप वसत जिन माहीं।

मुनियों के मनरूपी मधुप सदा भगवान् के चरणरूपी कमलों में निवास करते हैं। वहीं का मकरन्द पान करते हैं। भगवान् ने सोचा कि मेरे इस चरण-कमल की रज में कुछ स्वाद जरूर होगा। इसीलिए भगवान् सोचते हैं कि मैं भी जरा इसे चख कर देख लूँ। इसीलिए -

करारविन्देन पदारविन्दं मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम्।
वटस्य पत्रस्य पुटे शयानं बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि॥

भगवान् बालमुकुन्द हैं। दाहिने पैर के अँगूठे को अपने दाहिने हाथ से पकड़कर मुँह में ले जाते हैं और चूसते हैं। मानो अपने चरण-कमलों की रज का स्वाद ले रहे हों। उसका साक्षात् स्वयं भी पान करके देखते हैं और एक बात यह भी है कि पृथ्वी का भार उतारना है तो केवल सत्त्वगुण से काम नहीं चलेगा, रजोगुण भी लेना पड़ेगा। इसलिए व्रज रज ले लिया।

भगवान् ने मिट्टी खाई तो उनके मिट्टी खाने का संवाद ग्वाल बालों ने जाकर माता यशोदा को बता दिया। यशोदा तेरे लाडले लाला ने आज माटी खाई है। सुनते ही माता यशोदा ने उठाई छड़ी और भगवान् के पास आईं और उनके दोनों हाथ एक हाथ से पकड़ा। एक हाथ से छड़ी उठाई और पूछा कि तूने माटी क्यों खाई ?

कस्मात् मृदं भक्षितवान्।

क्यों रे चटोरे ! तूने एकान्त में मिट्टी क्यों खाई ? तेरे मिट्टी खाने से लोग समझेंगे कि यशोदा इतनी कृपण है कि अपने बेटे को पेट भर नहीं खिलाती । यह तो मिट्टी खाकर पेट भर रहा है । दूसरे मन में भय है कि मिट्टी में न जाने कौन से कृमि कीट रहते हैं। बेटा बीमार न हो जाए । इसकी आदत छुड़ानी चाहिए । छड़ी दिखाकर पूछती है कि क्यों मिट्टी खाई ? भगवान् उत्तर देते हैं कि –

नाहं भक्षितवानम्ब सर्वे मिथ्याभिशंसिनः ।

हमने मिट्टी नहीं खाई । सब मिथ्या बोल रहे हैं । माता की छड़ी के डर से भगवान् कहते हैं कि मैंने मिट्टी नहीं खाई और बोले **सर्वे मिथ्याभिशंसिनः** माने बालक कह रहे हैं पर यह सब हमारे विरोधी हैं । सदा हमको तुमसे दण्डित कराने की सोचते रहते हैं इसलिए झूठी चुगली लगाते है । माता बोली **वदन्ति तावकाः** माने जो तेरे सदा साथ रहते हैं वे कह रहे हैं । बोले कि मैया ! आजकल हमारी इनसे भी कुट्टी हो गई है । इसलिए भी झगड़ा कर रहे हैं । कहा कि **अग्रजो**। कहा कि अच्छा सब झूठ बोल रहे हैं पर तेरा दाऊ दादा तो झूठ नहीं बोलेगा। यह भी कह रहा है तो भगवान् बोलते हैं कि मैं तेरा बेटा थोड़े ही हूँ । तेरा बेटा तो दाऊ दादा है । मुझको तो बाजार से खरीद कर लाई हो । इसलिए आप मुझ पर विश्वास नहीं करती हो । संस्कृत के विद्वानों ने सोचा कि भगवान् कैसे झूठे हो सकते हैं ? इसलिए इसका अर्थ लगाया कि –

नाहं किंचित बाह्यं भक्षितवान् अपितु सर्वं मदन्तःस्थमेव ।

भगवान् कह रहे हैं कि मैंने किसी बाहर की चीज को नहीं खाया अपितु सब कुछ तो हमारे भीतर ही है। खाना क्या होता है ? जो बाहर हो उसको भीतर ले जाना ही खाना है पर सब कुछ तो मेरे भीतर ही है इसलिए मैं बाहर से क्या खाऊँ ? सब बाह्य दृष्टि से देखते हैं और मेरे माहात्म्य को बिना समझे सब बोल रहे हैं । **सर्वे अमिथ्याभिशंसिनः।** अब यहाँ हमलोग कहते हैं कि यहाँ सीधी-सीधी बात यह है कि अब हमको भगवान् को बचाना नहीं है । यह बताना है कि भगवान् इतने बड़े ऐश्वर्यशाली होते हुए भी माता की छड़ी से डरते हैं । जिनके भय से भय को भी भय लगता है, जिनके भय से पवन चलता है, जिनके भय से सूर्य तपता है, वह परमात्मा भी अपनी माता की छड़ी से डर जाता है । यह भक्ति का परिणाम है । मैया की छड़ी से भगवान् डरकर झूठ बोल गए कि मैया मैंने मिट्टी नहीं खाई ।

यदि इनकी बात सच्ची है तो मेरा मुँह देख ले । कहीं तो लगी होगी मिट्टी । जीभ में, दाँत में । भगवान् ने सोचा था कि जब हम मुँह दिखाने को तैयार होंगे तो माता

विश्वास कर लेगी। लेकिन मैया तो कहती है –

यदि ऐसा है तो मुँह खोल । अब भगवान् ने सोचा कि मुँह को बन्द ही रखो । मुँह खोला और छड़ी पीठ में लगी । उन्होंने जोरों से अपना मुख बन्द कर लिया कि किसी हालत में नहीं खोलना है । लेकिन भक्त लोग कहते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण का मुख कमल के समान और माता यशोदा का कोप सूर्य की किरणों के समान हैं । **मातृकोपरविरश्मि** से कृष्ण का **मुखकमल** विकसित हो गया । माता के कोपरूपी सूर्य की रश्मि से भगवान् श्रीकृष्ण का मुखकमल अपने आप खिल उठा । मुख खुल गया । उनकी हिम्मत नहीं हुई कि मुख बन्द रखे । जैसे ही मुँह खोला –

सा तत्र ददृशे विश्वं जगत् स्थास्नु च खं दिशः ।
साद्रिद्वीपाब्धिभूगोलं सवाय्वग्नीन्दुतारकम् ।।

यशोदा जी भगवान् के मुँह में देखती हैं तो वहाँ उनको स्थावर, जंगम, आकाश, दिशाएँ, ज्योतिष, चक्र, समुद्र, पर्वत सब कुछ भगवान् के मुँह में दिखाई पड़ता है । यहाँ तक कि व्रज भी दिखाई पड़ रहा है । कृष्ण भी दिख रहे हैं । वह स्वयं को भी लाठी लेकर खड़ी देख रही हैं । अरे ! मन में सोचने लगी कि यह स्वप्न है कि देव माया है। यह मेरी बुद्धि का मोह है या फिर मेरे बेटे का औत्पातिक योग, ऐश्वर्य है । निश्चय ही यह भगवान् है । मैं भूल से इनको अपना बेटा मान बैठी हूँ । हाथ जोड़कर खड़ी हो गई कि मैं आपकी शरण में हूँ । मैं नन्द की पत्नी यशोदा हूँ । गौवें और व्रज मेरे हैं । मैं शरीर हूँ । माया से मैं यह सोच रही थी । आप उन माया के स्वामी हैं । आप मेरी गति हैं । मैं आपकी शरण में हूँ । भगवान् ने सोचा कि मैया को तत्त्व का ज्ञान हो गया । उन्होंने अपनी वैष्णवी माया का विस्तार कर दिया । माता यशोदा भूल गई भगवान् के ऐश्वर्य को । विस्मरण हो गया और सोचने लगी कि आज मैंने अपने कन्हैया के मुँह में क्या अलाय-बलाय देख ली । किसी ने जादू-टोना तो नहीं किया । झड़वाओ इसको । अब वहाँ झाड़ने वाली आ गई । दूसरे उपचार होने लगे । कहने का मतलब यह है कि वात्सल्य भक्ति में भी हितैषिता है, भगवान् की सेवा है । माता यशोदा भगवान् श्रीकृष्ण को दूध पिलाती है । पिलाते-पिलाते जब उनको भान होता है कि चूल्हे पर रखा दूध उबल कर गिर रहा है तो भगवान् को छोड़कर दूध की तरफ दौड़ती हैं । भगवान् के मिलन से बढ़कर भगवान् की सेवा है । सेवा का महत्त्व अधिक है । अपने सुख की भावना भक्त में नहीं होती । यही वात्सल्य हो गया ।

एक सख्य भाव होता है । इसमें भक्त मानता है कि भगवान् हमारे सखा हैं । जो

गोप बाल ग्वाल हैं वे भगवान् के साथ खेलते-कूदते हैं । वे भी भगवान् को सुखी बनाने के लिए ही हैं कि किसी तरह वे प्रसन्न रहें । यही उनके मन में भावना रहती है ।

कुछ लोग भगवान् को अपना स्वामी मानते हैं । पति भाव से भगवान् की भक्ति करते हैं । इनमें गोपियाँ और कुछ अन्य भक्त भी हैं । राधा सब नहीं बनना चाहते । राधा की दृष्टि से श्याम को देखना चाहते हैं । यहाँ प्रेम है । यहाँ भोग की या अपने सुख की भावना नहीं है। **स्वसुखसुखित्त्व** नहीं है बल्कि **तत्सुखसुखित्त्व** है। वस्तुतः भगवान् के सौन्दर्य को उनके माधुर्य को समझना हो तो श्रीराधारानी किशोरी जी के नेत्रों से ही देखा जा सकता है । भगवती राजराजेश्वरी माता त्रिपुरसुन्दरी का जो सौन्दर्य है वह परमशिव के नेत्रों से ही देखा जा सकता है। सामान्य नेत्रों से उसका ज्ञान नहीं हो सकता । कहते हैं –

मधुक्षीरद्राक्षा मधुमधुरिमधुरीणाः फणितयः ।

भगवान् शङ्कराचार्य सौन्दर्य लहरी में कहते हैं कि समस्त निगमों के द्वारा जिनका गुण नहीं गाया जा सकता, वह आपका स्वरूप है । इसे हम कैसे वर्णन करें ? आपके सौन्दर्य का वर्णन कैसे करें ? यह वाणी का विषय ही नहीं है । जैसे मधु भी मधुर है, दूध भी मधुर है, द्राक्षा भी मधुर है । तीनों में मधुरता है पर यदि पूछा जाए कि मधु की मधुरता में और दूध की मधुरता में क्या फर्क है ? द्राक्षा की मधुरता और मधु की मधुरता में क्या अन्तर है तो केवल जिह्वा ही उसका अनुभव कर सकती है । इसका वर्णन वाणी का विषय नहीं है । इसलिए कहा गया कि गूँगे के गुड़ हैं भगवान् । भगवती राजराजेश्वरी के सम्बन्ध में उन्होंने कहा –

तथा ते सान्दर्यं परमशिवदृङ्मात्रविषयः ।

जिस प्रकार परमशिव से तादात्म्यापन्न होकर ही त्रिपुरसुन्दरी के सौन्दर्य का अवलोकन किया जाता सकता है उसी प्रकार से राधा जी के नेत्रों से ही श्यामसुन्दर को देखा जा सकता है। राधा क्या है ? राधा प्रेम है । मूर्तिमती प्रेम है । उस मूर्तिमती प्रेम को अपने हृदय में धारण करके ही श्यामसुन्दर को देखा जा सकता है। इस तरह से श्यामसुन्दर के उपासक जिस भाव से भी उनकी उपासना करें उनमें सबमें अपने सुख की भावना न होकर भगवान् के सुख की भावना है। उनके सुख में सुखी । भोक्तृत्त्व की भावना जहाँ समाप्त हुई और जहाँ अपना मन लगा वहीं भटकना बन्द हो गया । अब यहीं पर जिज्ञासा का उदय हो जाता है कि आखिर भगवान् हैं कौन? कोई कहता है स्वामी हैं, कोई कहता है बेटे हैं, कोई कहता है सखा है, कोई कहता है प्रियतम हैं ।

भिन्न-भिन्न भाव हैं यह लेकिन जिनमें भाव है वे क्या ? इस भाव को जानने के लिए कुछ लोग भगवान् की शरण लेते हैं। उनके पास जाते हैं । यहाँ प्रसंग आता है कि भगवान् श्रीराम चित्रकूट में गए । अत्रि मुनि से उन्होंने कहा कि महाराज ! हम चाहते हैं कि किसी एकान्त स्थान में हम अपनी कुटी बनाकर चौदह वर्ष का वनवास बितावें । इसीलिए हम चाहते हैं कि कोई ऐसा एकान्त निरापद स्थान आप बता दें जिससे किसी भी मुनि और तपस्वी को हमारे रहने से विक्षेप न हो ।

मुनि तापस जिनते दुख लहहीं । ते नरेश बिनु पावक दहहीं ।

मुनि और तपस्वी जिनसे दुःख प्राप्त करें वे राजा बिना अग्नि के ही जल जाते हैं। पूछा कि बताइए हम कहाँ रहें ? उन्होंने कहा कि महाराज ! आप कहते हैं कि मैं कहाँ रहूँ पर हम आपसे पूछते हैं कि आप कहाँ नहीं हैं ? आप जहाँ नहीं हैं वहाँ मुझे बताइए। हम बता देंगे कि आप वहाँ रहिए । ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ आप न हों । उन्होंने बताया –

जग पेखन तुम देख निहारे । विधि हर शम्भु नचावनिहारे ।।
केउ न जानहिं मरम तुम्हारा । और तुमहिं को जाननिहारा ।।

आप सामान्य नहीं हैं, केवल राजकुमार नहीं हैं जो चौदह वर्ष का वनवास बिताने आए हैं । आपको मैं जानता हूँ । कहते हैं कि जगत् एक नाटक है और आप उस नाटक को देखने वाले हैं । नाटक में सूत्रधार होते हैं । कुछ लोग नाचने वाले होते हैं और कुछ नचाने वाले होते हैं । जगत् के जितने जीव हैं यह सब नाचने वाले हैं और ब्रह्मा, विष्णु, महेश नचाने वाले हैं लेकिन आप नाचने वाले और नचाने वाले दोनों को देखने वाले हैं। जब नचाने वाले आपका मर्म नहीं जानते तो नाचने वाले क्या जानेंगे ?

तुम्हरी कृपा तुमहिं रघुनन्दन । जानहिं भगति भक्त उर चन्दन ।।
सोइ जानहि जेहि देहु जनाई । जानत तुमहिं तुमहिं होइ जाई ।।

हे रघुनन्दन ! आपकी कृपा से ही जिनका हृदय चन्दन के समान सुशीतल है, ऐसे भक्त ही आपको जान सकते हैं । वे भी अपने पुरुषार्थ से नहीं जान सकते । जिसको आप जनाना चाहते हैं वही आपको जानता है और जो आपको जान लेता है वह आपसे अभिन्न हो जाता है । फिर अलग से उसकी सत्ता नहीं रह जाती । बस आज यहीं प्रवचन पूर्ण करते हैं । आगे इसी विषय को और बताएँगे ।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

[20]

।। राम राम बीस ।।

सत्संग ही सच्चा सम्बन्ध

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

कल आपने सुना था कि भगवान् के प्रति विभिन्न भावों के द्वारा लोग उनके साथ सम्बन्ध जोड़कर भजन करते हैं । कुछ लोग भगवान् को अपना स्वामी मानते हैं । स्वयं को सेवक मानते हैं –

कुछ लोग भगवान् को अपनी माता मानते हैं । अपना पिता मानते हैं । भगवान् हमारी माँ हैं । माँ मानने में स्वार्थ यह है कि माँ में दो विशेषताएँ होती हैं । एक तो यह कि वे अपने पुत्र के दोष नहीं देखती और दूसरे यदि किसी से उसका झगड़ा हो जाए तो वह अपने ही बेटे का पक्ष लेती है कि मेरा बेटा ऐसा कभी नहीं कर सकता। सामान्य जो हमारी माँ हैं जिसने इस शरीर को जन्म दिया है, उसकी जब यह अवस्था है तो जो सबकी माता है जिसने सारे संसार को जन्म दिया है उसमें कितना अधिक वात्सल्य होगा? वे भी अपने भक्तों के दोष नहीं देखती । जो उनकी शरण में आता है बिना दोष देखे उसको अपनी शरण में ले लेती हैं । जैसे गौ अपने बछड़े को चाट-चाटकर उसके मल को दूर कर देती है वैसे ही भगवान् भी अपने भक्तों के दोषों को दूर कर देते हैं । भगवती अपने भक्तों का दोष देखकर उन्हें छोड़ती नहीं हैं । संसार के लोग दोष देखेंगे तो छोड़ देंगे चाहे वह कोई हो पर भगवती ऐसी नहीं हैं। इसीलिए पति अपनी पत्नी से दोष छिपाता है । यदि उससे कोई गलती हो जाए तो पत्नी से छिपा लेता है । पत्नी भी पति से छिपा लेती है । भाई अपने सगे भाई से छिपा लेता है। अरे दूर की बात जाने दो । मित्र अपने मित्र से ही छिपा लेता है । मित्र भी अपने मित्र को सब बातें नहीं बताता । कुछ पर्दा रखता है । यदि सब कुछ बता दे तो वह उसे छोड़ देगा । दोष देखकर भी किसी व्यक्ति को संग्रह करने की शक्ति, सामर्थ्य और क्षमता किसी में नहीं है । इसीलिए सब लोग कुछ न कुछ अपने आपको बचाकर रखते हैं पर भगवती के सामने, भगवान् के सामने तो हम खुले हुए हैं । वहाँ तो कुछ छिपाया नहीं जा सकता । भगवान् के यहाँ हम जाएँगे तो वहाँ झूठी गवाही नहीं चलेगी । वहाँ आप यह नहीं कह सकते कि जो हमारे ऊपर आरोप है वह मिथ्या है । हमको यहाँ क्यों लाया गया है ? यह आप नहीं पूछ सकते । क्योंकि चित्रगुप्त

को सब पता है । चित्रगुप्त क्या है ? आप जो कुछ कर रहे हैं वह दूसरा जाने या न जाने आप तो अपने को जानते हो । गुप्त चित्र बने हुए हैं आपके हृदय में । जब आप भगवान् के सामने जाओगे तो वे उसी को पढ़ लेंगे कि क्या-क्या कर्म करके तुम आए हो । लेकिन अगर कोई भगवान् का भक्त हो जाए तो वे जानकर भी उन दोषों के कारण उसका त्याग नहीं करते। वही स्थिति भगवान् के अन्य रूपों की भी है । भगवान् श्रीराम के सम्बन्ध में किसी ने कहा है –

साहिब होत सरोष सेवक को अपराधि सुनि ।
अपने देखे दोष सपनेहु राम न उर धरे ।

कहते हैं कि स्वामी अपने सेवक के अपराध को सुनकर क्रुद्ध हो जाता है । इसने ऐसा कर दिया ? लेकिन भगवान् अपने देखे हुए दोषों को भी अपने हृदय में धारण नहीं करते। एक और वचन है तुलसीदास जी का –

प्रभु तर कपि डार पर सब किए आप समान ।
तुलसी कहू न राम से साहिब शील निधान ।।

भगवान् जब वन में थे तब भगवान् तो पेड़ के नीचे बैठते थे पर वानर उसी पेड़ की डाल पर पूँछ लटकाकर बैठते थे । भगवान् के ऊपर पूँछ लटकी रहती थी । कोई और स्वामी होता तो पूँछ पकड़कर गिरा देता लेकिन भगवान् ने यह नहीं किया । उनको अपने ही समान समझा। कैसे ? जब भगवान् लंका पर विजय प्राप्त करने के अनन्तर अयोध्या लौटने लगे तो वानर-भालुओं ने कहा कि भगवन् हम भी आपके साथ चलेंगे । हम भी आपकी अयोध्या देखना चाहते हैं । भगवान् ले गए साथ सबको । उनका राजतिलक हुआ। जब सभा होने लगी तो उन्होंने कहा कि हमको सभा भी देखनी है । आप सिंहासन में बैठेंगे और माता जानकी जी आपके वाम अंग में सिंहासन पर विराजमान होंगी । हम वह दर्शन चाहते हैं । भगवान् ने कहा कि वह दर्शन तुमको नहीं मिल सकता । सबने पूछा कि क्यों नहीं मिल सकता ? बोले कि वहाँ हमारे गुरुदेव वशिष्ठ जी भी बैठते हैं । भगवान् के सिंहासन से बड़ा सिंहासन वशिष्ठ जी का है । गुरु सबसे बड़े होते हैं । वे हमारी दाहिनी तरफ बैठेंगे । तुम लोगों को बुद्धि नहीं है कि गुरुओं के सामने कैसे बैठा जाता है और कैसे प्रणाम किया जाता है । कहा कि आप बताइए कि कैसे प्रणाम किया जाता है,हम करेंगे । भगवान् ने कहा कि देखो ! पास में तो जाना नहीं लेकिन अपने दोनों हाथों को जोड़कर अपना माथा नवा कर प्रणाम कर लेना । सबने कहा कि हम करेंगे । वानर-भालू सभा में गए और उनके हाथ तो हैं नहीं । आगे के दो पैर हैं उन्हीं को हाथ

बनाकर मिलाकर खड़े हो गए । माथा झुका लिया । वशिष्ठ जी ने भगवान् राम की ओर देखा कि यह क्या तमाशा है । भगवान् यह नहीं कहते कि ये हमारे सेवक हैं । संसार में तो यह बड़ा मुश्किल है । लोग जब बड़े हो जाते हैं तो अपने लोगों को भुला देते हैं।

एक बालक था किसी किसान का । उस किसान ने उसको बहुत कठिनाई से खेत जोतकर अनाज पैदा कर, बेच बाचकर पढ़ाया लिखाया और एम ए तक पढ़ा दिया । इसके बाद उसको अच्छी नौकरी मिल गई । कहीं का साहब हो गया । फिर लव मैरिज कर लिया और एक पढ़ी-लिखी लड़की को अपनी पत्नी बना लिया । एक बंगला रहने को मिल गया तो दोनों आनन्द से रहने लगे । उनकी सोसाइटी दूसरी हो गई । पैसे वालों की जाति ही अलग हो जाती है । सगा भाई भी उनका सगा नहीं होता । जो समान रूप से धनवान हैं वे ही उनके सगे हैं। उसमें जाति-पाँति नहीं देखी जाती । अपने समाज में वह बैठता-उठता था । एक दिन उसका पिता उसको खोजते-खोजते बंगले पर पहुँच गया। बालक को बड़ा गुस्सा आया बोला कि आप यहाँ कुर्सी में बैठिए । हमारे कुछ दोस्त हमसे मिलने आ रहे हैं । वे आए उन्होंने देखा कि फटी सी पगड़ी बाँधे और देहाती कुर्ता पहने एक आदमी बैठा है तो मित्रों ने पूछा कि ये कौन हैं ? बेटा बोला कि हमारे फादर का सर्वेण्ट है । उसको यह कहने में लज्जा आ गई कि हमारे पिता हैं । सोचते कि ऐसे पिता का बेटा । वह अपने आपको अभिजात्य सिद्ध करना चाहता था । मित्र लौटकर जाने लगे तो उन्होंने उन सबको बुलाया और पूछा कि तुम्हारे मित्र ने हमारा क्या परिचय दिया? बोले कि उसने कहा कि आप उसके पिता के सर्वेण्ट हैं । उस पिता ने कहा कि हम उसके पिता के नहीं, माता के सर्वेण्ट हैं । ऐसे बेटे भी होते हैं ।

ऐसी ही एक कथा है एक माँ की । किसी एक बाबू की माँ थी । बेचारी देहाती थी। देहाती महिलाएँ अभी भी काँछ लगाकर धोती पहनती हैं । आजकल भी दिखती हैं ऐसी महिलाएँ। आजकल की धोती वे कम पहनती हैं । उनकी पुराने जमाने की आदत है । पुराने ढंग का कपड़ा पहन कर वह अपने बेटे के पास पहुँच गई । उनकी मेम साहब आधुनिक थी । पूछा कि तुम कौन हो ? उसने बता दिया कि हम इसकी माँ हैं । अपने पति से कहने लगी कि ऐसी तुम्हारी माँ हैं। बेटे को अपनी माँ पर गुस्सा आ गया कि तू यहाँ क्यों आई । हमारी बेइज्जती हो रही है समाज में । माँ ने कहा बेटा ऐसा मत कह। मेरी तेरे प्रति ममता है । तुझको मैंने नौ महीने पेट में रखकर पाला है । ऐसा क्यों कहता है ? बेटा बोला । तेरी तंग कोठरी में नौ महीने रहा तो नौ महीने का नौ सौ किराया ले और चली जा । ऐसे बेटे भी हैं । आप सोचो । बड़े होने पर लोग अपने पुराने मित्रों को भी छोड़ देते हैं ।

किसी ने हमको बताया था कि जब गरीब आदमी रईस हो जाता है तो तीन चीज बदलता है। एक तो अपना मकान बदलता है, दोस्त बदलता है और अपना रहन-सहन भी बदल देता है। कहने का मतलब यह है कि भगवान् एक वनवासी थे। ऐसे वनवासी जिनकी नारी का अपहरण हो गया था। उस समय वानर भालुओं ने इनको देखा था। आज ये अयोध्या के राज्यासन में बैठे हैं। उस राजसिंहासन पर अखिल भूमण्डल में जिनका साम्राज्य है –

सप्तद्वीप सागर मेखला। एक भूप रघुवर कोशला।

इतने बड़े हो गए थे कि वानरों को तो छोड़ देना चाहिए था। पर जब वशिष्ठ जी ने पूछा कि ये सब कौन हैं तो उन्होंने कहा –

ये सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भये समर सागर के बेरे ।।
मम हित लागि जनम इन हारे। भरतहुँ ते मोहि अधिक पियारे ।।

हे मुनिराज गुरुदेव ! ये मेरे सखा हैं। मेरे मित्र हैं। यह भी नही कहा कि मेरे सेवक हैं। राम-रावण का बहुत बड़ा युद्ध हुआ। कहते हैं कि जितने कौरव और पाण्डवों के युद्ध में इकट्ठा हुए थे उतने तो राम-रावण के युद्ध में केवल बाजा बजाने वाले थे। इतना बड़ा समर सागर था वह। सागर में पार कराने वाला बेड़ा होता है। ये वानर-भालू मेरे समर सागर के बेड़े हो गए थे –

मम हित लागि जनम इन हारे।

मेरे लिए इन्होंने अपना जीवन समर्पण कर दिया। प्राण तक छोड़ने के लिए तैयार हो गए इसलिए कहा-

भरतहि ते मोहि अधिक पियारे।

भरत जी भगवान् को सबसे अधिक प्यारे थे। मनुष्य को अपना भाई सबसे प्यारा होता है। उससे प्यारा और कौन होगा ? भरत जैसा भाई। उससे प्यारा अगर कोई है तो उसका अपना आत्मा है। आत्मा सर्वाधिक प्रिय होता है। ये सब मेरी आत्मा ही हैं।

प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किए आप समान।
तुलसी कहू न राम से साहिब शील निधान ।।

शील निधान कहा। शील के आगे यदि सु लगा दिया जाए तो सुशील हो जाता है और उसको भाव में ले लिया जाए तो सौशील्य हो जाता है। भगवान् के अचिन्त्य

अनन्त गुणगणों में एक सौशील्य भी है । सौशील्य का मतलब यह है कि आश्रित का दोष देखकर उसका त्याग न करना । यही बात रही कि –

जेहि अघ बधेहु व्याध इव बाली । सोइ सुकण्ठ पुनि कीन्हिं कुचाली ।
सोइ करतूति विभीषण केरी । सपनेहु सो न राम हिय हेरी ।।

परस्त्री का हरण करने के कारण ही बाली को भगवान् ने व्याध के समान मारा था। परस्त्री हरण करने के कारण ही रावण को भी मारा था लेकिन सुग्रीव ने तारा को अपनी स्त्री बना लिया और विभीषण ने मन्दोदरी को बना लिया । भगवान् ने दोनों का त्याग नहीं किया । भगवान् अपने आश्रितों का त्याग नहीं करते । माँ भी अपने बेटे का त्याग नहीं करती ।

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ।

एक कुपुत्र था । माता ने बड़े लाड़-प्यार से उसे पाल-पोसकर बड़ा किया । बड़ी आशा थी कि बेटा बुढ़ापे में सुख देगा लेकिन वह कुसंग में पड़ गया । कुसंग से मनुष्य को बचना चाहिए। आप सब कुछ अपने बेटे को पढ़ाएँ लेकिन यह भी ध्यान रखें कि वह किनके बीच में बैठता है । उसके यार दोस्त कौन है । मनुष्य अनुकरणशील प्राणी है । उसका निर्माण उसके आस-पास के लोग करते हैं –

यादृशैः सन्निविशते यादृशांश्चोपसेवते ।
यादृगिच्छेच्च भवितुं तादृग्भवति पूरुषः ।।

कहते हैं कि व्यक्ति जिन लोगों के साथ रहता है, जिन लोगों की सेवा करता है और जैसा होना चाहता है वह वैसा ही हो जाता है । इसीलिए हमलोग यह देखते हैं कि व्यक्ति के मित्र कौन हैं । किसी व्यक्ति को यदि परखना हो तो उसके दोस्तों को परखो । यदि उसके दोस्त गलत हैं तो वह कभी सही नहीं हो सकता । वह उसको बिगाड़ ही देंगे ।

एक व्यक्ति हमसे दीक्षा लेने आया । वह सिगरेट पीता था । हमने उससे कहा कि सब प्रकार के नशों का त्याग करो । जब भक्ति का नशा हो तब आओ । सिगरेट छोड़ दो । उसने कहा कि छोड़ दिया । हम चले गए । कुछ समय बाद हम लौटकर आए तो लोगों ने कहा कि उसने फिर सिगरेट पीना शुरू कर दिया । हमारे पास आया तो हमने पूछा कि तुमने तो सिगरेट का त्याग कर दिया था । फिर से क्यों पीने लगे ? उसने कहा कि क्या बतावें ? हमारे यार-दोस्त हमारे साथ पीते थे । हमने उनसे कहा कि हमने तो छोड़ दिया हम नहीं पियेंगे। उन मित्रों ने कहा कि हमलोगों ने तो नहीं छोड़ा है इसलिए

हम लोगों को पिलाओ। हम पिलाने लगे उन लोगों को। उसका धुआँ हमको लगने लगा। उन लोगों ने कहा कि तुम्हारे बिना पिए मजा नहीं आ रहा है। एक दिन तो उन्होंने अपने मुँह का धुआँ हमारी नाक में फूँक दिया। इस तरह हम भी फिर से पीने लगे। ऐसे ही शराब की लत, गाँजा की लत लग जाती है लोगों को। तरह-तरह की नशीली चीजें निकली हैं। हमको तो नाम भी मालूम नहीं कि कौन-कौन सी चीजें हैं पर सुनते हैं कि बहुत सी नशा करने वाली चीजें बिकती हैं आजकल। जहाँ लड़के पढ़ते हैं वहीं खोमचे में बिकती है। साथ के लड़के ही नशा करना सिखाते हैं। यह देखना है कि हमारा बेटा किसको अपना दोस्त बनाता है। यह भी देखना है कि हमारी लड़की किनके साथ अधिक बैठती है। कैसी लड़कियों के साथ बैठती है। केवल लड़के ही नहीं, लड़कियों में भी कई कमाल करने वाली होती हैं।

मेरा नाम राम दास। घर खोजूँ आस पास।

ऐसे लोग अपना तो नाश कर ही चुके हैं पर आस-पास जो लोग मिलते हैं उनका भी नाश कर देते हैं। कहने का मतलब यह है कि मनुष्य को चाहिए कि वह अपना संग ठीक रखे। साथी जब सही होगा तो अपने व्यक्तित्त्व का विकास भी सही होगा। भगवान् अपने भक्तों को शुद्ध कर लेते हैं। जब भगवान् का भक्त हो जाएगा तो भक्तों के साथ ही बैठेगा और जगह बैठने में उसको आनन्द नहीं आएगा। वहाँ बैठेगा तो सब प्रकार के विषय छोड़कर एक ही व्यसन हो जाएगा।

तो हम यह बता रहे थे कि किसी माता का एक बालक था। बालक माँ का बड़ा दुलारा था लेकिन कुसंग में पड़ गया था। कुसंग में किसी और की तो बात क्या है –

संग ते यति कुसंग ते राजा। ज्ञान ते मान पान ते लाजा।

गोस्वामी जी ने कहा है कि व्यक्ति यति माने संन्यासी भी हो गया हो लेकिन यदि खोटा संग हो तो वह भी बिगड़ जाता है। न्यायकारी, बुद्धिमान राजा हो लेकिन मन्त्री यदि गड़बड़ हो तो राजा बिगड़ जाता है। अगर ज्ञान हो जाए तो मान चला जाता है और शराब पी लो तो लज्जा चली जाती है। कहते हैं कि –

आरूढ़योगोपि निपातते हि संगेन योगी ....।

व्यक्ति यदि योगारूढ़ हो जाए तो भी पतित हो जाता है तो अल्प योगी की तो बात ही क्या है ? माता ने उस बालक को अच्छी शिक्षा दी थी। कुसंग में पड़कर वह वैश्यागामी हो गया। वैश्या के यहाँ जाने लगा। जब माता को पता लगा कि हमारा बेटा

बिगड़ रहा है तो उसने अपने बेटे को प्रेम से समझाया कि ऐसी स्त्रियों के पास मत जाया करो । ये स्वार्थी होती हैं । जब तक तुम इनको पैसा देते रहोगे तभी तक ये तुमसे प्रेम करेंगी । जब पैसा देना छोड़ दोगे तो प्रेम नहीं करेंगी । जब तक तुम्हारे शरीर में सौन्दर्य है तब तक प्रेम करेंगी । जब सौन्दर्य नष्ट हो जाएगा, बुढ़ापा आ जाएगा तो तुम्हारी तरफ देखेंगी ही नहीं । पर वह बेटा उसके प्रेम में इतना आसक्त हो गया था कि उसने सुना ही नहीं । आसक्ति का यह लक्षण है कि किसी के बारे में यदि सावधान करो तो उससे ही जाकर बोल देता है कि वे तो ऐसा कह रहे थे । इसलिए सोच-समझकर बोलना पड़ता है कि कहीं इसको समझाते-समझाते कुछ लोग दुश्मन न हो जाए कि हमारा बिगाड़ रहे हैं। बहुत से लोग फँस जाते हैं । उनको समझाना बहुत कठिन होता है और गुरु तो किसी तरह कड़ा मन करके बोल देगा पर जो साधारण गुरु होंगे, जो शिष्य की दक्षिणा के प्यासे हैं वे तो प्रिय बोलेंगे ।

सचिव वैद्य गुरु तीन जो प्रिय बोलहि भय आस ।
राज धर्म तन तीन कर होहि वेगहीं नाश ।।

मित्र यदि सच्चे हों तो हित की बात बोलते हैं । मन्त्री अपने स्वामी के सामने नीति की बात न कहकर प्रिय बोले, जो वह चाहता है वह बोले तो यह उचित नहीं है । आजकल के जो मन्त्री हैं वे पहले ही पता लगा लेते हैं कि हमारे नेता क्या चाहते हैं ? उनके सामने जाकर वे वही बोलेंगे । सच नहीं बोलेंगे तो राजा का नाश हो जाएगा। इसी तरह से जो रोगी माँगे वही पथ्य यदि वैद्यराज खाने को कह दे तो रोगी मर जाएगा । जो चेला कहे वही यदि गुरु कहे कि यही ठीक है तो उसका कल्याण थोड़े ही होगा ? कहे कि वैश्या के यहाँ जाओ लेकिन नजर बचाकर जाया करो, किसी को पता न लगने पाये । तुम्हारे पता न लगाने से कुछ थोड़े ही होता है । ईश्वर को तो सब पता है । तुम दो आँख वाले को धोखा दे सकते हो लेकिन जिसकी हजार आँखें हैं उसको धोखा देना कठिन है ।

एक मुसलमान था । वह रोजा रखता था । मुसलमान लोग दिन भर उपवास करते हैं, पानी भी नहीं पीते और रात को खाते हैं । वह भी रोजा करता था लेकिन वह कहता था कि मैं ऐसा काम करता हूँ कि खुदा भी पकड़ नहीं सकता । बात क्या थी कि वह पानी में डूबकर पानी पी लेता था । एक दिन वह ऐसे ही रोजा के समय में पानी में डूबकर पानी पी रहा था तो एक कँटीली मछली मुँह में चली गई । गले में अटक गई । अकपका कर उठा और चिल्लाने लगा कि खुदा ने पकड़ लिया । सब आ गए, पूछा और देखा तो मछली अटकी पड़ी है । लोगों ने कहा कि तुम पानी पीते हो तभी तो मछली गई । नहीं तो कैसे

जाती ? खुदा ने क्या सबने उसकी चोरी पकड़ ली। जो आदमी ईश्वर से छिपाएगा उसकी बात सारे लोग जान जाएँगे।

वह वैश्या को सब बातें बताने लगा। वैश्या को उसकी माँ के ऊपर क्रोध आने लगा। उसने कहा कि अगर तेरा मुझसे सच्चा प्रेम है तो अपनी माँ का कलेजा निकाल कर ले आ। बेटा उसके प्रेम में इतना अन्धा हो गया था कि हाथ में छुरा ले गया और माता की छाती में भोंक दिया। माता का कलेजा निकालकर एक कपड़े की झोली में रखकर लटकाया। खून चू रहा था। वह वैश्या के प्रेम में पागल लम्बी-लम्बी डग बढ़ाता हुआ वैश्या के घर जा रहा था। रास्ते में उसके पैर में चोट लगी। अन्धा तो था ही आँख रहते हुए भी। पैर में चोट लगी तो मुँह के बल गिरा। बड़ी मुश्किल से उठा तो उसकी झोली में माँ का जो कलेजा था वह बोल उठा कि लाला ! चोट तो नहीं लग गई ? यह है माता का हृदय।

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।

पुत्र भले ही कुपुत्र हो जाए पर माता कभी कुमाता नहीं होगी। एक देव्यपराधक्षमापन स्तोत्र है भगवती का। उसमें बताया है कि माँ हमने आपकी पूजा नहीं की, कुछ नहीं किया, तब भी हमारे प्रति आपका इतना प्रेम है। इसीलिए कुछ भक्त लोग भगवान् श्रीकृष्ण को भी अपनी माता कहते हैं। भगवान् शङ्कराचार्य जी ने भगवान् श्रीकृष्ण को अपनी माँ कहा –

मायाहस्तेऽर्पयित्वा भरणकृतिकृते मोहमूलोद्भवं मां
मातः कृष्णाभिधाने चिरसमयमुदासीनभावं गतासि।
कारुण्यैकाधिवासे सकृदपि वदनं नेक्षसे त्वं मदीयं
तत्सर्वज्ञे न कर्तुं प्रभवति भवति किं नु मूलस्य शान्तिं।

बड़ा ही सुन्दर, भावपूर्ण और दार्शनिक श्लोक है। भगवान् शङ्कराचार्य ने कहा मेरी कृष्ण नाम की माँ! कृष्ण आपका नाम है। आप मेरी माँ हो। यह माना जाता है कि ललिता महात्रिपुरसुन्दरी देवी ही कभी-कभी पुरुष रूप धारण करके कृष्ण हो जाती हैं–

कदाचिल्ललिता देवी पुंरूपा कृष्णविग्रहा।

मेरी कृष्ण नाम की माँ आप हैं। शङ्कराचार्य जी पहचान गए कि माता ललिता ही कृष्ण बनी है। लोग कहते हैं कि काली कृष्ण बन गई हैं और शंकर जी राधा बन गए। गौरी शंकर बन गए हैं। श्रीकृष्ण काले हैं और राधा गोरी है। मेरी कृष्ण नाम की माँ!

मैं मोहरूपी अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्मा तेरा अभागा बेटा हूँ । मोह माने अज्ञान । अज्ञान से ही तो जीव परमात्मा से अलग हुआ है । ज्योतिषियों का ऐसा कथन है कि जो बालक अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्म लेता है उसको देखने से माता-पिता का अनिष्ट होता है । कदाचित् इसीलिए तुमने मुझे भरण-पोषण के लिए मायारूपी धाय के हाथ में सौंप दिया । यह धाय इतनी दुष्टा निकली कि मुझे चौरासी लाख नगरों में घुमाया । मैया ! मैं तो परेशान हूँ, थक गया हूँ । क्या आप मेरा एक बार भी मुँह नहीं देखोगी ? यदि तुम यह समझती हो कि मेरा मुँह देखने से अनिष्ट होता है तो मूल की शान्ति कर लो। मोह माने अज्ञान । यह अज्ञान ही मूल नक्षत्र है । इसकी शान्ति कर लो और मुझे अपने हृदय से लगा लो । यह है भगवती माँ का रूप ।

कुछ लोग भगवान् को पिता समझ लेते हैं । पिता के साथ बाजार में बेटा जा रहा है । पिता कहता है कि मेरा हाथ पकड़ लो । कोई चिन्ता की बात नहीं है । अगर बहुत ज्यादा भीड़ होती है तो पिता पकड़ लेता है । इसी तरह से भगवान् भी भक्तवत्सल हैं। अपने भक्त को अपनाकर अनर्थ से बचाते हैं । जो भक्त अनर्थ की ओर जाता है उसको वे बचा लेते हैं । भगवान् का विधान ऐसा होता है कि भक्त मरते-मरते भी बच जाता है । कुछ लोग भगवान् को बन्धु मानते हैं और कुछ उन्हें अपना पुत्र ही मान लेते हैं जैसे यशोदा जी ने माना । देवकी जी ने माना । कौशल्या जी ने माना । ग्वाल-बालों ने सखा माना । सबमें भगवान् के प्रति अटूट प्रेम है । अपना स्वार्थ नहीं है । इधर भगवान् की अद्भुत कृपा है । अब इन भावों की पुष्टि कैसे हो ? इनमें अद्भुत आनन्द है । जब कभी माँ अपने बेटे की बाल लीला देखती है तो उसको आनन्द का अनुभव होता है । जब वह प्राकृत है तभी इतना आनन्द आता है तो जब भगवान् ही बेटा बनकर आ जाए तो कितना आनन्द होगा ? यह जो आनन्द है यह एक रस है । **रसो वै सः** श्रुति कहती है कि रस ही परमात्मा का रूप है । कहते हैं विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से रस की निष्पत्ति होती है । नवरस साहित्यिक लोगों ने बताया है । उन नव रसों में रस की उत्पत्ति विभाव, अनुभाव और संचारी से होती है लेकिन उन्होंने भक्ति को रस नहीं माना है । उसको शान्त रस के अन्तर्गत मान लिया है पर मधुसूदन सरस्वती जी और स्वामी करपात्री जी ने भक्ति को एक स्वतन्त्र रस माना है । वह भक्ति का रस कब मिलता है? जब व्यक्ति भगवान् के भक्तों से भगवान् की कथा सुनता है । भगवद्भक्तों से जब भगवान् की कथा का श्रवण करोगे तो आपके हृदय में भक्ति रस का संचार होगा । इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा –

प्रथम भगति संतन कर संगा । दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ।।

प्रथम भक्ति संतों का संग है। कहा कि हम सत्संग करते हैं। बहुत से लोग सत्संग करा रहे हैं। चैनल में आ जाते हैं। घरों में भी आ जाते हैं। लेकिन जो व्यक्ति जहाँ से बोलता है सुनने वाले के भीतर वह चीज वहीं तक पहुँचती है। ये लोग गले से बोलते हैं। इसलिए गले के नीचे इनकी बात नहीं उतरेगी। जो भगवान् के भक्त हैं, जो हृदय से बोलेंगे उनकी बात आपके हृदय तक पहुँचेगी। इसलिए सत्संग करें, कथा सुनें। एक वैश्या भी गीत गोविन्द का पद सुना सकती है। बहुत बढ़िया ढंग से राग-रागिनियों के साथ सुना सकती है पर उससे हृदय में भक्ति का उदय नहीं होगा। भक्ति का उदय उससे होगा जब किसी भक्त से आप कथा सुनेंगे। भक्त प्रेम से परिपूरित होकर कथा सुनाएगा।

कहते हैं कि एक बार चैतन्य महाप्रभु दक्षिण भारत में भ्रमण कर रहे थे और एक व्यक्ति गीता की पुस्तक लेकर रो रहा था। उन्होंने पूछा कि तुम पढ़े-लिखे हो क्या ? उसने कहा कि महाराज ! मैं लेक्चरर हूँ। उन्होंने पूछा कि तुम्हारी आँखों में आँसू क्यों आ रहे हैं ? बोला इसलिए रो रहा हूँ कि यह मेरे प्रभु की पुस्तक है। मेरे प्रिय प्रभु श्रीकृष्ण के द्वारा यह गाई गई है। उन्होंने कहा कि तुमने गीता पढ़ी है पर तुम इस पर बहुत बड़ा व्याख्यान करना नहीं जानते हो लेकिन तुम्हारे हृदय में कितना प्रेम है।

मम गुण गावत पुलक शरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा।

तुलसीदास जी ने श्रवण को पहली भक्ति न मानकर सत्संग को पहली भक्ति माना है।

बस आज यहीं पर प्रवचन को विराम देते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम
प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[21]

।। राम राम इक्कीस ।।

जिज्ञासु भक्त के लिये भगवान् गुरु बनते हैं

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

पिछले गुरुवार में यह प्रसंग चला था कि भगवान् आदि शङ्कराचार्य जी ने भगवान् श्रीकृष्ण को माता के रूप में सम्बोधित किया ।

मायाहस्तेऽर्पयित्वा भरणकृतिकृते मोहमूलोद्भवं मां
मातः कृष्णाभिधाने चिरसमयमुदासीनभावं गतासि ।
कारुण्यैकाधिवासे सकृदपि वदनं नेक्षसे त्वं मदीयं
तत्सर्वज्ञे न कर्तुं प्रभवति भवति किं नु मूलस्य शान्तिम् ।

कहा कि मेरी कृष्ण नाम की माँ ! मैं तुम्हारा बेटा हूँ । किन्तु मेरा जन्म ऐसे मुहूर्त में हुआ है जिसके कारण माता-पिता का अनिष्ट माना जाता है । यह कहा जाता है कि जिस बालक का जन्म अभुक्त मूल नक्षत्र में होता है उसके दर्शन से माता-पिता का अनिष्ट होता है । इसीलिए ऐसे बालक को माता-पिता नहीं देखते । उसको कहीं और भेज देते हैं । यही कहा जाता है कि गोस्वामी तुलसीदास जी का अभुक्त मूल नक्षत्र में जन्म हुआ था । उनकी माता उनको जन्म देते ही मर गईं और मरते-मरते माता ने ही उन्हें किसी और के हाथ में सौंप दिया था । भगवान् शङ्कराचार्य बोले कि मेरी कृष्ण नाम की माँ ! मैं भी बुरे नक्षत्र में जन्मा हूँ । बुरा नक्षत्र कौन है ?

मोहमूलोद्भवं माम् ।

मोहरूपी मूल में मेरा जन्म हुआ है । इसका अर्थ यह हुआ कि वास्तव में जीव और ब्रह्म में कोई भेद नहीं है लेकिन अज्ञान के कारण दोनों एक दूसरे से अलग हो गए । मोह के कारण, अज्ञान के कारण यह जीव ईश्वर से विलग हो गया है । अज्ञान क्या है ? अपने आपको भूल जाना । मनुष्य खुद को भूल गया । कैसे भूल गया ? जैसे तोता और बन्दर भूलकर बँध जाते हैं। कैसे बँध गया ? जैसे तोता और बन्दर बँध जाते हैं मोह के कारण । मोह क्या है ? कुछ लोग बँधे रहते हैं भोगों की लालसा में कि हमको आगे सुख मिलेगा । सुख अभी नहीं है । आगे चलकर मिल जाएगा । इसलिए संसार में बँधे

रहते हैं । आप देखिए बालक पहले जब जन्म लेता है, बड़ा होता है तो उसका विवाह होता है । विवाह के कुछ दिनों के पश्चात् माता-पिता यह सोचने लगते हैं कि जब बेटा जन्म ले लेगा तब हम सुखी हो जाएँगे । अभी सुखी नहीं है । साल दो साल बिना बेटे के यदि बीत गए तो हमलोगों के यहाँ आने लगते हैं । कहते हैं महाराज ! आशीर्वाद दे दो कोई सन्तान हो जाए । बिना सन्तान के हम सुखी नहीं है । अब सन्तान हो गई । सोचते हैं कि जब यह बड़ा हो जाएगा तब हम सुखी होंगे । थोड़ा बड़ा हो जाए । फिर सोचता है कि पढ़-लिख जाए तो सुखी हो जाएँगे । पढ़ लिख गया तो कहीं अच्छी नौकरी लग जाए। व्यवसाय से लग जाए तो हम सुखी होंगे । व्यवसाय हो गया तब सोचता है कि अब इसका विवाह हो जाए तो सुखी हो जाएँगे । विवाह हो गया तो सोचते हैं कि इसके बच्चे तो जाए तो सुखी होंगे । फिर उसके बच्चे बड़े होंगे तब सुखी होंगे । फिर उसके बाद पोता पैदा हो जाए तो सुखी होंगे । पोते की बहू देख लेंगे तो सुखी होंगे। सुख आगे-आगे बढ़ता जाता है । वर्तमान में सुख का पता नहीं लगता । इसी आशा में बँधा हुआ कि आगे मिलेगा। कुछ लोग ऐसे हैं कि जो मिल गया है उसी में बँध जाते हैं । उसकी आसक्ति उनसे छोड़ी नहीं जाती । थोड़ा बहुत जो मिल गया है सुख का लेश ! बस सोचते हैं कि यह भी हमारे हाथ से न निकल जाए । बड़ी मुश्किल है ।

एक महात्मा बता रहे थे कि उनके यहाँ एक व्यक्ति सत्संग में आया । बड़ा समझदार और पढ़ा-लिखा था पर उसके सिर पर बाल नहीं थे । घाव के निशान थे । कई जगह चोट के निशान लगे थे । महात्मा जी ने पूछ लिया कि भाई ! तुम्हारे माथे में चोट के निशान कैसे हैं तो वह व्यक्ति रोने लगा । कुछ नहीं बताया । उसके मित्रों ने बताया कि यह घर के बहुत सुखी हैं, पैसे वाले हैं, चार बेटे हैं, चार बहुएँ हैं । बहुएँ पढ़ी-लिखी हैं । कोई-कोई तेज स्वभाव की हैं । यदि यह कुछ बोल देते हैं तो बहुएँ बेलन से इनकी ठोकाई करती हैं । इनकी खोपड़ी में बेलन मारती हैं। ये उसी के घाव हैं । महात्मा जी को दया आ गई । उन्होंने कहा कि भाई ! ऐसा है कि हमारे सब जगह आश्रम हैं । वृन्दावन, हरिद्वार, ऋषिकेश, काशी में है चलो वहाँ । आराम से रखेंगे। बेलन का डर नहीं रहेगा । कहने लगा कि हाँ महाराज ! अब तो हम आप ही के साथ चलेंगे। महात्मा जी जब वहाँ से जाने लगे तो पूछा कि क्यों भाई ! तुम्हारी टिकट करवा लें । वह नीची आँख करके रह गया । महात्मा जी ने पूछा कि क्या बात है ? बोला कि महाराज ! एक काशी नरेश थे । उनकी कोई सन्तान नहीं थी । उन्होंने बड़े अनुष्ठान कराए लेकिन कोई नहीं हुआ तो दूसरे का लड़का लेना पड़ा । महात्मा जी ने पूछा कि ठीक है पर इससे क्या मतलब है तुम्हारा? उसने कहा कि महाराज ! मैं सोचता हूँ यदि मेरा कोई न होता तो

मारता कौन ? इसलिए पिट कुट के भी यहाँ बना रहना चाहता हूँ । ये अपने ही तो हैं।

एक माता हमारे पास आई और कहने लगी कि महाराज ! बेटा और बहू बहुत सताते हैं। हमने कहा कि तुम्हारे ही तो हैं । बड़े प्रेम से पैदा किया है अब भोगो । कहने का मतलब यह है कि लोग थोड़े बहुत सुख के लोभ में पड़े रहते हैं । कहते हैं कि कोई एक राहगीर चला जा रहा था । रास्ते में जंगल पड़ा । जंगल में डाकू मिल गए। डाकुओं ने उसको लूट लिया तो वह जान बचाकर भागा । रास्ता छोड़कर जंगल में भटक गया। भटकते-भटकते जानवरों से बचते हुए आगे बढ़ा तो रात हो गई । एक सूखे कुँए में वह फिसल गया । हाथ में एक लता की जड़ आ गई । उस जड़ को पकड़कर वह लटक गया। सबेरा हुआ । सूर्योदय में उसने देखा कि हम सूखे कुँए में लटक रहे हैं । कुँए के नीचे बहुत भयंकर विषैला साँप है जो फन उठाए हमारे गिरने की राह देख रहा है । ऊपर जिस डाल को हम पकड़े हैं उसी डाल को दो चूहें काट रहे हैं । एक चूहा सफेद है और एक काला है पर उसने यह देखा कि ऊपर एक मधु का छत्ता था । उसमें से मधु टपक रही थी । उसने अपनी जीभ आगे बढ़ाई तो टप से एक बूँद आकर उसके मुँह में गिरी। उसने सोचा कि एक दो बूँद और ले लूँ फिर बचने का उपाय सोचूँ । फिर एक बूँद टप से गिरी। इतने में वह बेल कट गई, जड़ कट गई और वह कुँए में गिरकर मर गया ।

कहने का मतलब यह है कि मौत के कुँए में जीव पड़ा है । गुरु और शास्त्र सूर्य हैं। वे दिखाते हैं कि तुम कहाँ हो लेकिन संसार के क्षणिक सुख के मधुबिन्दु के लोभ से वहीं पड़ा है उसको छोड़ता नहीं है । इसके कारण इसको आत्मविचार का, सत्संग का मौका नहीं मिलता । प्राप्ति-परिहार में ही लगा रहता है । यह मिल जाए और यह न मिले। जिससे हमको सुख मिलता है वह तो हमको मिले और जिससे दुःख मिले वह हमसे दूर हो जाए। प्राप्ति-परिहार के ही चक्कर में सब लोग लगे हैं । इसके कारण परमात्मा की भक्ति का, परमात्मा के स्वरूप के अनुसन्धान का, विचार का मौका नहीं मिलता । इसीलिए यह बेचारा पड़ा हुआ है । गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानस में बताया–

ईश्वर अंश जीव अविनाशी । चेतन अमल सहज सुख राशी ।

जीव क्या है ? ईश्वर का अंश है, अविनाशी है । अविनाशी का अर्थ सत् है । जो तीनों काल में एकरस रहे वही अविनाशी कहलाता है । तीनों काल में एकरस रहने वाले को ही सत् कहते हैं । भगवान् भी सत् हैं । भगवान् सच्चिदानन्द हैं । सत् चित् आनन्द। इन तीन शब्दों को मिला लो तो सच्चिदानन्द हो जाता है । भगवान् भी सत् हैं और जीव

भी सत् है। भगवान् भी चित् हैं और यह जीव भी चेतन है । भगवान् आनन्द हैं तो जीव भी सहज सुख की राशी है ।

सहज में ही सुख की राशी है यह कैसे पता लगा ? एक तो सुख आपको मिलता है संसार के भोगों से। अच्छा देखने से, अच्छा सुनने से, अच्छा खाने से, अच्छा सूँघने से और अच्छा छूने से । उसके लिए आपको अच्छी चीज की तलाश करनी पड़ती है । इन्द्रियों को ठीक रखना पड़ता है । मन को भी ठीक रखना पड़ता है तब उसका सुख मिलेगा लेकिन अगर आप चैन की नींद में सो रहे हों, गाढ़ निद्रा में आप चले जाएँ तो आपको आनन्द का अनुभव होता है । वह आनन्द किसी विषय का नहीं है । वह सहज सुख है । यह जीव भी सहज सुख की राशी है ।

ईश्वर अंश जीव अविनाशी । चेतन अमल सहज सुख राशी ।

ऐसा है तो दोनों में फरक क्या है ? अन्तर क्या है ?

सो मायावश भयहुँ गोसाईं । बँधेहु कीर मरकट की नाईं ।

यह जो जीव है यह माया के वश में हो गया है । तोते को पकड़ने के लिए बहेलिए बाँस की पोंगरी को रस्सी में पोकर जंगल जाते हैं । खूँटी से उस रस्सी को बाँध देते हैं। खूँटी बाँध दी बीच में रस्सी बँध गई और नीचे कुछ खाने की चीज जिसको तोते पसन्द करते हैं उसको बिखरा दिया । उसको खाने के लिए तोता बाँस की पोंगरी में बैठ जाता है । जैसे ही वह बैठता है वह पोंगरी उलट जाती है । अपने पंजे से वह पोंगरी को पकड़ लेता है और लटक जाता है । खाने की चीज दो अंगुल दूर रहती है । उसकी चोंच वहाँ तक नहीं पहुँचती और वह चंगुल छोड़ता नहीं । अब पड़े हैं । अपनी चोंच से, अपने पंजे से पोंगरी को पकड़कर लटक गया है पर समझता है कि पोंगरी ने हमें पकड़ लिया है । लटके पड़े हैं । बहेलिया आता है । लटके हुए तोतों को पकड़-पकड़कर अपनी झोली में भरकर ले जाता है । बाजार में बेच देता है । किसी महात्मा को उस तोते पर दया आ गई । उन्होंने कहा कि इन तोतों को बचाना चाहिए। जंगल में इकट्ठे हुए तोतों के बीच वे गए और प्रवचन दिया कि देखो भाई तोते! तुमने पोंगरी को पकड़ा है । पोंगरी ने तुमको नहीं पकड़ा है । तुम छोड़ दो और उड़ जाओ । उन सब तोतों ने रट लिया । देखो भाई तोते ! तुमने पोंगरी को पकड़ा है । पोंगरी ने तुमको नहीं पकड़ा है । तुम छोड़ दो और उड़ जाओ। महात्मा जी ने सोचा कि अब कोई तोता बँधेगा नहीं । सबको हमने जागृत कर दिया । किन्तु जब उन्होंने फिर जंगल में जाकर देखा कि फिर वे लटके हुए हैं पोंगरी में और वही रट रहे हैं लटके हुए कि देखो भाई तोते ! तुमने पोंगरी को पकड़ा है । पोंगरी

ने तुमको नहीं पकड़ा है । तुम छोड़ दो और उड़ जाओ । यह होता है । लोग सत्संग में जाकर भी सत्संग की बात दूसरों को सुनाते हैं, रट लेते हैं लेकिन छोड़ते नहीं है । उसी में फँसे रहते हैं । फँसे क्यो रहते हैं ? अलब्ध विषय के कारण । इनको विषय प्राप्त नहीं हुआ है । सुख की प्राप्ति की आशा में लटके हुए हैं । सूरदास जी ने कहा –

अपुनपो आपन ही बिसर्यो ।

सूरदास नलिनी को सुबटा कहू कोने पकऱ्यो । अपुनपो आपन ही बिसर्यो ।

तोता तो यूँ बँध जाता है । बन्दर कैसे बँधता है ? बन्दर को पकड़ने के लिए सुराही लगाते हैं । छोटे मुँह के घड़े में लड्डू भर दिए जाते हैं । उनको खेत में गाड़ दिया जाता है जिससे खीचने पर घड़ा बाहर न निकल सके। बन्दर जाता है और झाँककर देखता है कि इसके भीतर क्या है और झट से अपना हाथ डाल देता है । हाथ डालकर उसको अपनी मुट्ठी में पकड़ लेता है । मृट्ठी बाँधकर जब बाहर खींचता है तो मुट्ठी हो जाती है मोटी । सुराही का मुँह है सँकरा तो हाथ बाहर निकलता नहीं है । बार-बार झटका देता है पर हाथ नहीं निकलता । अगर वह मुट्ठी से लड्डू छोड़ दे तो हाथ निकल आए लेकिन वह समझता है कि हमें घड़े ने पकड़ लिया और वो बाँधा जाता है । यह लब्ध विषय है जो थोड़ा बहुत है उसी में बँधता जाता है । जैसे शहद की बूँद मिल गई व्यक्ति को तो उसकी वजह से फँसा था । यही मोह है ।

सो माया बस भयहु गोसाई । बँधेउ कीर मरकट की नाई ।

माया क्या है ? माया शब्द को उलटो तो यामा हो जाएगा । जो विचार करने से न मिले उसी का नाम माया है । लोगों से जब हमलोग पूछते हैं क्यों भाई ! कुछ भजन सत्संग करते हो? लोग कहते हैं कि हम तो माया में पड़े हैं । हमसे क्या होगा ? माया में तुम पड़े हो कि माया ने तुमको पकड़ा है ? खुद ही तो पड़े हो । कहते हो कि माया ने हमको पकड़ा है जैसे तोता । यह जो माया है यह हमको चौरासी लाख योनियों में भ्रमाती है । कर्म करते हैं तो जन्म लेते हैं और जन्म लेते हैं तो फिर कर्म करते हैं । कर्म करते है तो फिर जन्म होता है । फिर जन्म लेकर कर्म करते है । चक्र चलता रहता है। जन्म कर्म के चक्र में जीव पड़ा हुआ है । क्यों पड़ा हुआ है ? कर्म क्यों करता है ? कामना से करता है । कुछ चाहिए । अपनी चाह को पूरी करने के लिए कर्म करता है और कभी-कभी शुभ की जगह अशुभ कर्म भी कर लेता है । कामना जब बढ़ जाती है तो मनुष्य फिर उचित-अनुचित नहीं देखता । फिर वह यह देखता है कि कैसे हमारी इच्छा पूरी हो। चाहे जिस ढंग से हो । आपके मन में यदि लोभ उत्पन्न हो जाए तो आप यह नहीं देखेंगे

कि आपको धन कैसे मिले ? चाहे भाई को धोखा देने से मिले। मित्र को धोखा देने से मिले। चोरी करने से मिले। रिश्वत लेने से मिले। जिस प्रकार से भी आपको धन मिले वह आप करेंगे। ऐसे आपके मन में कामना उत्पन्न हो जाए तो जहाँ मनुष्य की इच्छाएँ बढ़ जाती हैं वह उन इच्छाओं के बढ़ जाने से सीमा का उल्लंघन करने लग जाता है। इसीलिए भगवान् ने कहा –

त्रिभिदं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामं क्रोधः तथा लोभः तस्माद् एतद् त्रयं त्यजेत्।

यह तीन नरक के द्वार हैं। कौन-कौन से ? काम, क्रोध और लोभ। नकर के द्वार कैसे हैं ? काम मनुष्य के मन में है पर वह नरक का द्वार तब बनता है जब वह शास्त्र की सीमा का उल्लंघन करता है। आप अपनी पत्नी में सन्तान पैदा करें तो वह धर्म से अविरुद्ध काम है पर अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए परस्त्रीगमन करने लगें तो वह धर्म के विरुद्ध हो जाता है। यह नरक का द्वार बन जाता है। ऐसे ही क्रोध भी। माता-पिता भी क्रोध करते हैं। बेटे को अच्छे रास्ते में लगाने के लिए धमकाते हैं। गुरु भी क्रोध करते हैं, नाराज होते हैं लेकिन दूसरों के अपकार के लिए नहीं। दूसरों के कल्याण के लिए आप क्रोध करें तो वह क्रोध नरक का द्वार नहीं है। जब किसी को नुकसान पहुँचाने के लिए किसी की हिंसा के लिए आप क्रोध करें तो वह क्रोध आपके नरक का द्वार बन जाएगा। लोभ का हम बता ही चुके हैं। भगवान् ने तो यह कह दिया कि –

धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ !

हे अर्जुन ! जो धर्म से अविरुद्ध काम है वह मेरा स्वरूप है। इसी प्रकार धर्म से अविरुद्ध धन है वह भी भगवान् का स्वरूप है। यदि आप न्यायोपार्जित रीति से धन का संग्रह करते हैं तो वह आपके नरक का द्वार नहीं है। हमारे शास्त्रों में तो यह लिखा है कि अनासक्ति होनी चाहिए। आपके पास चाहे अरबों रुपया हो। अगर आपकी उसमें आसक्ति नहीं है तो आपके लिए वह बन्धनकारक नहीं है। आपके पास थोड़ा भी हो और उसमें आपकी आसक्ति हो तो वह आपके लिए बन्धनकारक है। इसीलिए महात्मा लोग कहते हैं नाव पानी में तैरती है कितना ही गहरा पानी हो नाव उसमें तैरती रहेगी बशर्ते नाव में पानी न हो। नाव में पानी आया तो नाव डूब गई। तुम संसार में रहो लेकिन संसार तुम्हारे भीतर न रहे। इसीलिए हमारे सनातन धर्म में राजा जनक जैसे लोग राज करते हुए भी विदेह कहलाए। भगवान् श्रीराम भी गृहस्थाश्रम में रहते हुए हमारे आदर्श बन गए। आवश्यक नहीं है कि आप सब कुछ छोड़ दें। सब कुछ त्याग करने के बाद भी

यदि आपके मन में त्याग का अभिमान है तो वह त्याग का अभिमान आपके बन्धन का कारक है। इसीलिए अभिमान का ही त्याग करना चाहिए। नाव में पानी न आने पाए पानी में नाव तैरती रहे। कमल पत्र के समान संसार में निर्लिप्त रहना चाहिए। जैसे कमल के पत्ते में पानी की बूँद झिलमिल-झिलमिल रहती है लेकिन वह उसमें भिदती नहीं है उसी तरह संसार में रहते हुए भी संसार में जिसकी आसक्ति नहीं है वह संसार में रहते हुए भी असंसारी है। सबसे पहला त्याग यह है कि हम एक सीमा का निर्धारण कर लें। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध संसार के विषय हैं। इन्द्रियों के द्वारा इनका उपभोग करें। भोजन करें। बिना भोजन के तो आप जिन्दा नहीं रह सकते। भोजन करें लेकिन वह भोजन आपकी न्याय की कमाई का होना चाहिए। आपकी न्यायोपार्जित सम्पत्ति से आप खाइए। दूसरों का लूटकर मत खाइए। भोजन कीजिए लेकिन यह देखिए कि जो हम भोजन कर रहे हैं वह भोजन माँस, मछली, सुरा या और कोई अमेध्य वस्तु से तो नहीं बना है। अगर वह अपवित्र वस्तु से बना है तो वह भोजन त्याज्य है। शास्त्रों ने कहा कि ऐसा भोजन मत खाओ। लहसुन प्याज में दुर्गन्ध होती है, इसे मत खाओ। माँस मत खाओ क्योंकि बिना जीव की हिंसा के माँस नहीं मिलता। माँस खाने वाले आठ आदमियों के समान पाप के भागी होते हैं। बेचने वाला, खरीदने वाला, मारने वाला, बनाने वाला, परोसने वाला, खाने वाला, प्रशंसा करने वाला सब नरक के भागी हैं। इसीलिए माँसाहार का त्याग कर देना चाहिए। पहले अपने आपको, अपनी इन्द्रियों को थोड़ा सा संयत कीजिए। अधर्म के रास्ते से हटकर धर्म के रास्ते पर आइए। धर्म के रास्ते पर आकर वे जो विषय हैं उनके प्रति भी अपनी आसक्ति को हटा लीजिए। तब वे बन्धनकारक नहीं रहेंगे। लेकिन यह माया ऐसी है कि बड़े-बड़े समझदार भी इसके चक्कर में पड़ जाते हैं। कहते हैं कि माया ने न जाने कितने लोगों को बन्धन में डाल रखा है। उससे लोग मोहित हो जाते हैं। वस्तु को देखकर नासमझी के कारण उसको अपना लक्ष्य बना लेते हैं।

सो मायावश भयेहु गोसाईं। बंधेउ कीर मर्कट की नाईं।

माया के हाथ में जब यह जीव पड़ जाता है तब चौरासी लाख योनियों में भटकता है। भटककर विषयों के लालच में सुख की इच्छा से कर्म करता है। कर्मों का फल भोगने के लिए जन्म लेता है। कदाचिद् भगवती की शरण में यह आ जाए, माँ की शरण में आ जाए और यह कहे कि माँ! अब मैं बहुत भटक लिया। कृपा करके मुझे करुणामयी दृष्टि से देख दो। सौन्दर्य लहरी में भगवान् शङ्कराचार्य कहते हैं –

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे ।

अनेनायं धन्यो भवति न च ते हानिरियता वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः।।

माँ ! आपके जो विशाल नेत्र कमल हैं । भगवती के नेत्रों को कमल के समान बताया। कहा जाता है कि कान तक भगवती के नेत्र फैले हुए हैं । उन नेत्रों से आप देख देंगी तो मैं आपकी उस करुणा दृष्टि से स्नान कर लूँगा और उसी से मैं धन्य हो जाउँगा। केवल आपकी दृष्टि मात्र से मैं धन्य हो जाऊँगा । आपकी कोई क्षति होगी नहीं । आप तो देखती ही हैं । चन्द्रमा की ज्योत्स्ना वन में भी पड़ती है और मकान में भी, महल में भी पड़ती है । महल में पड़ने पर महल जगमगा जाता है और वन में कोई देखता नहीं है । लेकिन दृष्टि ज्योत्स्ना उसकी समान होती है । आप सबको देखती हैं । बात क्या है ? लोग पूछते हैं कि भगवन् ! हमारे ऊपर भगवती की कृपा कब होगी ? यह बताइए। हम कहते हैं कि कृपा तो हो रही है । तुम अपना पात्र तो सीधा करो । औंधा पात्र रहेगा तो कितनी ही वर्षा हो जाए एक बूँद पानी नहीं जाएगा पात्र में । आपका हृदयरूपी प्याला जब सीधा होगा, भगवती की ओर आप देखेंगे और यह कहेंगे कि मुझे करुणामयी दृष्टि से देख दो तो भगवती आपको देखेंगी । देख तो रही ही हैं पहले से वे ।

यमैवेष वृणुते तेन लभ्यः ।

उपनिषद् कहते हैं –

पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयम्भूस्तस्माद् पराङ्पश्यति नान्तरात्मन् ।

ब्रह्मा ने इन्द्रियों को बहिर्विषयावगाहिनी बना दिया । यह बाहर देखती हैं । **नान्तरात्मानं** भीतर अन्तरात्मा को नहीं देखती । आप देखें कि आप गाड़ी में बैठते हैं, मोटर में बैठते हैं तो सामने जो लाइट रहती है वह सड़क दिखाती है लेकिन गाड़ी में कौन बैठा है यह कैसे पता लगेगा? वह लाइट भीतर नहीं है । वह बाहर जा रही है । आँख बाहर देख रही है । कान बाहर का सुन रहे हैं । नाक बाहर का सूँघ रही है । भीतर कौन बैठा है ? जब यह मुँदे, इनको जब लौटाया जाएगा तब न देखेगी । कहते हैं ब्रह्मा जी ने इन इन्द्रियों को जो बहिर्मुख बना दिया तो मानो इनकी हत्या कर दी । इसके कारण वे आत्मा का दर्शन करने से वंचित हो गईं । बाहरी विषयों को ही देखती रह गईं । कोई एक धीर समझदार पुरुष इनको मोड़कर अपनी आत्मा की ओर देखता है ।

विषयों से बुद्धि और इन्द्रियों को जो रोक देता है वह धीर है । वह धीर जब इनको रोक देता है तो भगवान् की ओर देखता है । भटकते-भटकते यह जीव परेशान होकर भगवान् की ओर जब देखता है तो भगवान् के कृपामृत की वृष्टि होती है । जैसे कोई स्वयंवरा कन्या हो वह जिसको वरण करती है उसको प्राप्त कर लेती है उसी प्रकार जो परमात्मा का वरण कर लेता है वह परमात्मा को प्राप्त कर लेता है । माता का वरण करने वाला माता को प्राप्त हो जाता है। इधर से अपना मन हटाकर माँ के चरणों की ओर लग जाए । उन चरणों का ध्यान करे । कहते हैं –

रक्तोत्पलाऽऽरक्ततलप्रभाभ्यां ध्वजोर्ध्वरेखाकुलिशांकिताभ्याम् ।
अशेषवृन्दारकवन्दिताभ्यां नमो भवानी पदपंकजाभ्याम् ।।

लाल कमल के समान जिनके चरणतल की प्रभा है, जिनके चरणों में ध्वजा, ऊर्ध्व रेखा, वज्र अंकित हैं। बड़े-बड़े देवाधिदेव जिन चरणों के सामने अपने मस्तक झुकाते हैं, उन भगवती के चरणारविन्दों का स्मरण करो तो सारी विपत्तियाँ दूर हो जाएँगी । भगवान् शङ्कराचार्य से लोगों ने पूछा कि **आपदि किं करणीयम् ?** उन्होंने कहा - **स्मरणीयम् चरणयुगलमम्बायाः ।** अम्बा के चरणयुगलों का स्मरण करो । उनके चरणों का स्मरण करने से आपत्ति नष्ट हो जाती है । भगवान् शङ्कराचार्य ने कहा कि माँ ! अब मेरी ओर देखो । मैं बहुत थक चुका हूँ । माया रूपी धाय ने मुझे बहुत भटकाया है । मैं जहाँ पर ऊसर भूमि थी उस मृगजल को जल समझकर तुम्हें छोड़कर दौड़ पड़ा था । जहाँ सुख नहीं है वहाँ मैं सुख बुद्धि से दौड़ा था । अब मैं आपकी शरण में आया हूँ । मुझे आप देख दो । अगर आप यह सोचती हो कि मेरा मुख देखने से आपका अनिष्ट होगा तो आप उस मूल को तो जानती ही हो । वह मोहरूपी मूल है । मूल की भी तो शान्ति होती है। मूल भी तो कड़ाए जाते हैं । कुछ दिनों के बाद मूल कड़ जाते हैं । मोहरूपी मूल को निकाल दो और अपनी पवित्र गोद में हमें ले लो । इसीलिए मोह मूल का नाश कर दो।

ऐसे ही कुछ लोग भगवान् को अपना पिता कहते हैं । भक्त कहता है कि आप मेरे पिता है । कैसे पिता हैं? उदासीन हैं, स्तब्ध हैं, निर्गुण हैं, संगरहित हैं । भगवान् ब्रह्म का स्वरूप हैं । हमलोग ब्रह्म की सन्ताने हैं । ब्रह्म उदासीन है, स्तब्ध है, असंग है, संगरहित है । जिसको ऐसा पिता मिले जो अपने बेटों की तरफ से उदासीन हो, स्तब्ध माने कुछ करता धरता न हो, बैठा ही रहता हो, जिसमें कोई गुण न हो, बेटों के प्रति ममता न हो ऐसे पिता का पुत्र कहाँ जाए ? आप मेरे ऐसे ही पिता हो । या तो आप मुझे अपनी गोद में लीजिए, मुझे अपना प्यार दीजिए नहीं तो जिस जठर से, जिस पेट से

आपने मुझे निकाला है उसी में विलीन कर लो । अर्थात् या तो अपनी भक्ति और ज्ञान प्रदान करके मेरे दुःखों का निवारण कर दो या मुझे अपने में विलीन कर लो । आप मेरे सच्चे पिता हैं। भगवान् को अपनी माता समझ लें, पिता समझ लें । हमलोगों ने यह देखा है कि भगवान् माता के रूप में होते हैं। शास्त्रों की दृष्टि से देखा है कि वे ही नवदुर्गा और दशमहाविद्या के रूप में परिणत हो जाती हैं । एक ही माता नवदुर्गा बन जाती हैं ।

प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी,
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ।

पंचमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च,
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ।

नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः ।

आप दश महाविद्या बन जाती हैं

काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी ।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ।

बगला सिद्धविद्या च मातंगी कमलात्मिका ।
एताः दशमहाविद्याः सिद्धविद्याः प्रकीर्तिताः।।

और देखिए कि नित्या भगवती बन जाती हैं । आप चौसठ करोड़ योगिनियाँ बन जाती हैं । चौसठ करोड़ योगिनियों के एक-एक अधिष्ठात्री देवता बन जाते हैं । अनेक रूप धारण करके जगदम्बा प्राणी की रक्षा करती है । कहीं चले जाओ सब जगह माता हैं । कोई भी आपका रक्षक हो, माता हो, पिता हो, बन्धु हो, पति हो, पुत्र हो, जब आप उसके सामने रहेंगे वह आपको देखेगा तभी आपकी रक्षा कर सकता है । वह भी यदि बहुत भयंकर आपत्ति आ जाए तो वह भी बेचारा कुछ नहीं कर सकता लेकिन जगदम्बा सब जगह है । जहाँ कोई नहीं है वहाँ भी वही है । कल्पना कीजिए कि आप घोर जंगल में हैं । वहाँ आपके सामने सिंह आ गया । अब वहाँ कौन बचाने वाला है ? वहाँ तो भगवती ही बचा सकती हैं । जो लोग जगदम्बा की आराधना करते हैं जब वे उनसे सम्बन्ध जोड़ लेते हैं तभी उनका अधिकार पुकारने का बनता है । जिसका सम्बन्ध ही नहीं है वे क्यों पुकारेंगे ? आपको विश्वास ही नहीं होगा । जब मनुष्य भगवान् की, जगदम्बा की आराधना करता है तब उसको पुकारता है और जब उनकी आराधना करता है तभी उसके मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि भगवान् क्या हैं और हम कौन हैं?

हमारा उनका सम्बन्ध क्या है ? यह जिज्ञासा भी भगवान् की भक्ति से ही पूरी होती है। भगवान् गुरु के रूप में आते हैं । अर्जुन भगवान् के सम्मुख मूर्ख, मोहग्रस्त बनकर गया, शिष्य बना तो भगवान् ने गीता का उपदेश दिया और यह बताया कि ज्ञान के समान कोई वस्तु पवित्र नहीं है । ज्ञान तुमको तत्त्वदर्शी ज्ञानी से ही मिलेगा ।

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ।

आपको यदि ज्ञान प्राप्त करना हो तो तत्त्वदर्शी ज्ञानी के पास जाओ । कहते हैं कि वह आपको ज्ञान का उपदेश देंगे । हमलोग तो यह मानते हैं कि भगवान् ही तत्त्वदर्शी गुरु के रूप में मिलकर शिष्य के अज्ञानान्धकार को दूर करते हैं । इसीलिए जो जिज्ञासु है गुरु की शरण में जाकर तत्त्वजिज्ञासा करता है । जिज्ञासु भी भगवान् के चार भक्तों में से एक है ।

आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ।

अब इसका विवरण आप आगे सुनेंगे । आज यहीं पर विराम करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम
प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?

जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[22]

।। राम राम बाइस ।।

भगवान् किसी निमित्त को लेकर ही सहायता करते हैं

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

भगवान् कितने अकारणकरुणकरुणावरुणालय हैं इस विषय पर आप सुन रहे थे। चाहे वे माता के रूप में हों, पिता के रूप में हों या सखा के रूप में हों । हम यह पाते हैं कि उनमें अपार करुणा है । एक दार्शनिक कवि ने अपने ग्रन्थ के मंगलाचरण में उनका स्मरण इस रूप में किया है –

नूतनजलधररुचये गोपवधूटीदुकूलचौराय ।
तस्मै कृष्णाय नमः संसारमहीरुहस्य बीजाय ।।

यहाँ उन्होंने बताया कि हम उन कृष्ण को नमस्कार करते हैं जो नूतन जलधररुचि वाले हैं, जिनके श्रीअंग की कान्ति नवीन मेघ के समान है । वर्षाकालीन नवीन मेघ । हमलोग आजकल देखते हैं कि काले-काले मेघ आते हैं वे कितने सुहावने होते हैं, कितने कोमल होते हैं और अमृत जैसी वर्षा करते हैं । ऐसे ही भगवान् का श्रीअंग है, श्यामल श्रीअंग है जो अत्यन्त सुकोमल है, साथ ही साथ मनुष्य की इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए सदा तत्पर रहने वाला है । इसी को एक दूसरे दार्शनिक कवि ने भी कहा । वे कहते हैं –

नमो नव घनश्याम कामकामितदेहिने ।
कमलाकामसोदाम कणकामुकगेहिने ।।

नमः माने हम उनको नमस्कार करते है । अपना अस्तित्त्व ही उनको समर्पित करते हैं । वे कैसे हैं ? **कामकामितदेहिने** इतना सुन्दर उनका स्वरूप है कि संसार में सौन्दर्य की सीमा में काम को माना जाता है । काम सबसे सुन्दर माना जाता है । किन्तु जिनकी शोभा, जिनकी कान्ति करोड़ों कामों को लज्जित करने वाली है वे हैं भगवान् । काम भी चाहता है कि इनके जैसे श्रीअंग की शोभा हमें प्राप्त हो जाए । **कामकामितदेहिने ।** ऐसा

सुन्दर स्वरूप जिनका है । जो काम के द्वारा भी कामित हैं । यह तो हुई सुन्दरता की बात । सुन्दरता को देखकर मनुष्य आकृष्ट तो होता है पर साथ ही साथ उसकी दुर्लभता को देखकर थोड़ा मन में निराशा होती है कि जो इतने सुन्दर हैं, इतने वैभवशाली हैं, वे हमें कैसे मिलेंगे ? तो कहा कि उनमें अपार करुणा है । नवघनश्याम हैं वे । जैसे नव घन वर्षा करता है, वह जल की वर्षा करता है । यहाँ नवघनश्याम श्रीकृष्ण हैं। ये करुणारूपी अमृत की वर्षा करते हैं । कारुण्यामृतवर्षा है । करुणा की वर्षा करता है । दीन-हीन, असहाय, शरणागत जो भी आता है सबके ऊपर वे करुणा करते हैं । इसलिए **नवघनश्याम कामकामितदेहिने** कहा । फिर उनके स्वभाव की बात आती है । **कमलाकान्तसौदाम कणकामुकगेहिने ।** इसके भीतर बड़े ही सुन्दर भाव भरे हुए हैं । सुदामा नाम के एक ब्राह्मण थे जिनकी आप श्रीमद्भागवत में कथा सुनते हैं । वे बड़े ज्ञानी और निःस्पृह थे । सदा भगवच्चिन्तन में रहा करते थे किन्तु गृहस्थ थे । गृहस्थ यदि निष्क्रिय हो जाए तो गृहस्थी नहीं चलती । आवश्यक है कि जब आप गृहस्थ हुए हैं तो कर्म आपको करना पड़ेगा । जीविकोपार्जन करना आपका कर्त्तव्य बन जाता है । इसीलिए किसी कवि ने कहा है –

सौ बलाए छोड़ के नाम धरोहर धर ।
या तो इसको छोड़ कर झक मरा और कर ।

घर में तो सौ बलाएँ आएँगी ही । अनेकों प्रकार के कर्त्तव्य सामने आएँगे । उनका पालन आपको करना पड़ेगा । बहुत से लोग कहते हैं कि हम कर्म क्यों करें ? भगवान् तो हमारे रक्षक हैं । वे सब कुछ करेंगे । लेकिन आपका भी तो कुछ कर्त्तव्य है ।

एक किसान बैलगाड़ी में बैठकर जा रहा था । घाटी आ गई । चढ़ाव में बैल आगे नहीं बढ़ रहा था । वह खड़ा हो गया । वह हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे भगवन् ! हमारी गाड़ी को घाटी के पार कर दो । बार-बार यही कह रहा था । एक महात्मा मिले। उन्होंने पूछा कि क्यों बीच में खड़े हो ? बोला कि बैल खड़े हो गए हैं। हम भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि बैल चल जाएं और हमारी गाड़ी घाटी के पार पहुँच जाये । उन्होंने कहा कि भाई ! चिटकारी भी तो मार। ऐसे ही क्यों खड़ा है ? चिटकारी मारेगा तभी तो बैल आगे बढ़ेंगे ।

इसीलिए भगवान् ने यह कहा कि जो जिस वर्ण का है, जिस आश्रम का है, उसको उसके कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए । अर्जुन भी तो यही कह रहा था कि हम युद्ध नहीं करेंगे । संन्यास ले लेंगे । भिक्षा माँगकर जीवन निर्वाह करेंगे । स्वजनों का वध क्यों

करें ? भगवान् ने कहा ऐसा नहीं हो सकता । जो जिस वर्ण का है उसको उस कर्त्तव्य का पालन करना ही चाहिए। तुम क्षत्रिय हो । तुम्हारा कर्त्तव्य है प्रजापालन और साथ ही अपने और दूसरे के स्वत्त्वों की रक्षा करना । उसके लिए तुमको खड़े होना पड़ेगा ।

तस्माद्युद्धाय युज्यस्व

यद्यपि करते सब भगवान् ही हैं फिर भी वे कहते हैं –

निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् ।

तुम निमित्त मात्र बनो । यह जो कौरव की ओर खड़े हैं और तुम्हारी ओर भी जो दुष्ट राजा खड़े हैं, यह अपने अधर्म के कारण पहले ही मर चुके हैं । मैंने इन सबको अपने संकल्प में मार डाला है । तुझे केवल निमित्त बनना है ।

भगवान् भी किसी निमित्त को लेकर ही सहायता करते हैं । बिना निमित्त के नहीं करते। कुछ करो । इसीलिए यह उपनिषद् का वचन है –

द्वाविमौ विनिवेष्टव्यौ गले बध्वा दृढां शिलाम् ।
निरारम्भो गृहस्थश्च कार्यवांश्चैव भिक्षुकः ।।

दो व्यक्तियों के गले में पत्थर बाँधकर पानी में डुबो देना चाहिए । जो गृहस्थाश्रम में रहकर कुछ न करे, अकर्मण्य हो जाए । बहुत से लोग बीच में ही संन्यास ले लेते हैं। विवाह किया, एक दो सन्तान उत्पन्न किया और स्त्री को छोड़कर भाग निकले कि हम संन्यासी हो जाएँगे। लोग कहते हैं कि तुमको संन्यासी ही रहना था तो विवाह क्यों किया? कहते हैं कि माँ-बाप ने जबरदस्ती कर दिया । उस समय चुप क्यों रह गए तुम? ऐसे लोग जो वैरागी नहीं हैं वे कर्त्तव्य से भागने वाले लोग हैं । कर्त्तव्य से मत भागो । कार्य के क्लेश के डर से कर्म मत छोड़ो । जब तुमको वैराग्य हो जाए, फल से वैराग्य हो जाए तब छोड़ो । जब तक आपके मन में सांसारिक भोगों की या पारलौकिक भोगों की इच्छा विद्यमान है तब तक आपको कर्म करते ही रहना चाहिए।

किसी पति ने अपनी स्त्री से कहा कि हम अब संन्यास ले लेंगे । अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने । बाल-बच्चे तुम संभालो । पत्नी बड़ी समझदार थी । उसने कहा –

जो घर छोड़े घर मिले तो घर छोड़ो कंत ।
घर छोड़े घर-घर फिरो तो न जाइए अंत ।।

कहती है कि हे कंत ! यदि तुमको इस घर को छोड़ने पर भगवान् का घर मिलता

हो तब तो तुम इस घर को और हमें छोड़ दो। मेरी चिन्ता छोड़ दो पर यदि घर छोड़ने के बाद घर-घर फिरना हो तो यह घर ही क्या बुरा है ? यदि तुम्हें दस बजते-बजते गरम फुल्का खाना है तो बाहर जाकर मत माँगो। यहीं ले लो। आवश्यक होता है कि गृहस्थाश्रम में कुछ न कुछ कर्म करे। दरिद्रता बड़ा दुःख देती है। कहते हैं –

जल संकोच विकल भई मीना।
अबुध कुटुम्बी जिमि धन हीना।।

जब वर्षा ऋतु समाप्त हो जाती है। ताल तलैयों का पानी कम हो जाता है तो मछली बेचारी व्याकुल हो जाती है कि थोड़े से पानी में कैसे रहेंगे ? ऐसे ही कुटुम्बी धनहीन होकर दुःखी रहता है। वर्षा आ गई, हवा के झोंके से, आँधी से कपड़े उलट हो गए, पानी गिर रहा है। कभी खाट इधर कर रहे हैं, कभी उधर कर रहे हैं। घर में कुछ खाने-पीने को है नहीं। अतिथि आ गए उसी समय। संकोच हो जाता है कि अपने खाने का ठिकाना नहीं है तो इनको कैसे खिलाएँ? ऐसी स्थिति में दारिद्र्य बड़ा दुःख देने वाला है। इसको दूर करने के लिए कुछ न कुछ प्रयत्न करना चाहिए। सुदामा जी घर बैठे हैं, कहीं जा नहीं रहे हैं तो उनकी पत्नी ने कहा कि पतिदेव! बहुत डरते-डरते कहा। पतिव्रता थी वह। बोली कि ब्रह्मन् ! मैंने सुना है कि श्रीकृष्ण आपके बाल सखा हैं। इस समय वे द्वारकाधीश हो गए हैं। द्वारकापुरी के स्वामी बन गए हैं। उनके पास धन की कोई कमी नहीं है। आप उनके पास चले जाओ महाराज !

तमुपैहि महाभाग साधूनां च परायणम्।
दास्यति द्रविणं भूरि सीदते ते कुटुम्बिने।

आपको देखकर वे बहुत धन दे देंगे। हमारी गरीबी मिट जाएगी। सुदामा जी विरक्त थे। उन्होंने कहा कि देखो ! भगवान् के पास कामना लेकर नहीं जाना चाहिए। उनके पास तो निष्काम होकर जाना चाहिए। पत्नी ने कहा कि आप माँगना मत। वे तो अन्तर्यामी हैं। केवल आप चले भर जाओ। सुदामा जी ने सोचा कि जाना पड़ेगा। बड़ी कठिनाई है। क्या करें ? पत्नी का आग्रह है। बोले एक बात है देखो।

रिक्तपाणिर्नपश्येत राजानं ईश्वरं गुरुम्।

राजा के पास, भगवान् के पास और गुरु के पास खाली हाथ नहीं जाना चाहिए। कुछ लेकर जाना चाहिए। हम क्या लेकर जाएँ ? घर में आज कुछ है ही नहीं। बच्चों को खिलाने तक को कुछ नहीं है। तुम कहती हो कि कृष्ण के पास चले जाओ। वे तो

राजा हैं । उनके पास खाली हाथ नहीं जा सकते । खाली हाथ जाएँगे तो खाली हाथ लौटेंगे ।

इसका मतलब यह है कि आप महात्मा के पास जाते हो तो महात्मा के बगीचे को ही नोच-नाच कर चले गए । उन्हीं की पत्तियाँ तोड़ डालीं और उन्हीं को चढ़ा दिया, ऐसा नहीं करना चाहिए । पहले से तैयारी करके जाना चाहिए । यह नियम है । उनकी पत्नी ने कहा कि ठीक है । मैं आपके लिए कुछ प्रबन्ध कर देती हूँ । वह पड़ोसियों के यहाँ गई और चार मुट्ठी चूड़ा पृथु तन्दुल माँगकर लेकर आई । जब हरी धान होती है तो उसको भूँजकर कूट देने से जो लाई सी निकलती है वह चूड़ा कहलाता है । वह पृथु तन्दुल चार मुट्ठी उनको दे दिया । उन चार मुट्ठी चावलों को, चूड़ों को अब बाँधें किसमें ? अपनी मैली-कुचैली साड़ी का टुकड़ा फाड़ा और उसी में उसको बाँध दिया। कहा कि जाइए और अपने मित्र वासुदेव को भेंट कर दीजिए । सुदामा जी गए । आज का पोरबन्दर ही सुदामापुरी है । वहाँ से द्वारका ज्यादा दूर नहीं है । पैदल-पैदल वहाँ पहुँच गए । वहाँ जाकर उन्होंने द्वारपालों को देखा कि वे खड़े हैं । इन्द्र, चन्द्र, वरुण, कुबेर, यम, बड़े-बड़े देवता, राजा-महाराजा दरवाजे पर खड़े हैं भगवान् वासुदेव से भेंट करने के लिए। पहरेदारों से आज्ञा माँग रहे हैं और वे कहते हैं कि अभी समय नहीं है । अभी भगवान् नहीं मिलेंगे आप चुपचाप खड़े रहिए । उन्हीं लोगों की भीड़ में यह गरीब ब्राह्मण पहुँचता है और द्वारपालों से कहता है कि द्वारपाल ! मेरा भी सन्देश भगवान् वासुदेव को सुना दो । मैं उनका मित्र सुदामा हूँ । सुनते ही कहा - मित्र! अपनी शकल देख । तू और द्वारकाधीश का मित्र ? जिसके शरीर की धोती भी फटी है, पगड़ी भी फटी है, पैर में जूती नहीं है । पेट पीठ में सट रहा है । हड्डी-हड्डी दिख रही है । खड़े हैं कि मित्र हैं । काहे के मित्र ? कैसे हो सकता है ? पहले तो ऐसा कहा फिर द्वारपालों ने विचार किया । वे भगवान् के स्वभाव से परिचित होते हैं । उन्होंने कहा कि हो सकता है मित्र हों । **अकिंचनजनप्रियः ।** अकिंचन जन ही भगवान् को प्यारे होते हैं । जिनके पास कुछ नहीं है उनके सर्वस्व भगवान् होते हैं । भगवान् ने पूछा कि पहले कौन है ? उन्होंने कहा सुदामा है, ले आएँ? तो कहा कि तुम लाने की बात करते हो ? भगवान् झटपट दौड़ पड़े और सुदामा को अपने गले लगाया। हाथ पकड़कर सबके सामने से सुदामा को महल में ले गए। जिस पलंग पर रुक्मिणी जी बैठती थीं उस पर उनको बैठाल दिया । उनके चरण धोने के लिए थाल और जल से भरा लोटा रुक्मिणी से मँगाया । अब देखिए ! जिस लक्ष्मी का अवतार रुक्मिणी के कोप के कारण यह ब्राह्मण दरिद्र बना था । अगर इनकी कृपा हो जाती तो यह गरीब क्यों होता ? किन्तु जब भगवान् की शरण में आया तो लक्ष्मी भी उस ब्राह्मण की सेवा

में लग गई । सोने की थाल में सुदामा के पैर पड़े और भगवान् ने सुदामा के चरण पानी से नहीं, अपनी आँखों के आँसुओं से धोए–

पानी परात को हाथ छुयो नहीं नैनन के जल सों पग धोए ।
हाय महादुःख पायो सखा तुम आए इते न किते दिन खोए ।

तो भगवान् ने सुदामा जी की सेवा की । इतना स्वागत किया । उत्तम भोजन कराया। सुदामा जी सोचने लगे कि किसी और महात्मा को सोचकर कृष्ण हमारी सेवा कर रहे हैं । इनको शायद पता नहीं है कि हम वही सुदामा हैं । नहीं तो इतना स्वागत नहीं करते ? हमें कोई महात्मा समझ रहे हैं कृष्ण । ऐसा वे सोचने लगे । विश्राम करने के लिए शय्या दी । थोड़ी देर विश्राम किया । फिर भगवान् पहुँच गए । उसी शय्या में बैठ गए हाथ पकड़ लिया । बोले मित्र ! याद है कि हम तुम दोनों एक साथ गुरुकुल में पढ़े थे । तब पता चला कि अरे ! ये तो पहचानते हैं। बोले कि हमारा बहुत भाग्य है जो हम आपके साथ रहे और पढ़े । बताइए कि आप तो बड़े विरक्त थे । गुरुकुल से निकलने के पश्चात् समावर्तन संस्कार करने के अनन्तर आपने विवाह किया कि नहीं किया ?

भगवान् बोले कि आप विरक्त थे । हो सकता है न पड़े हों इसमें । कभी-कभी लोग लोकसंग्रह के लिए यह करते भी हैं । शायद संसार को शिक्षा देने के लिए आपने गृहस्थी स्वीकार की हो । आँखें नीची कर लिए। अच्छा अच्छा । विवाह हो चुका है । वे तो अन्तर्यामी थे । सब जानते थे पर फिर भी पूछा कि बताइए जब आप यहाँ आ रहे थे तब हमारी भाभी ने कुछ भेंट दिए कि नहीं दिए ? सुदामा जी ने अपनी काँख और दबा ली कि इनके सामने मैली-कुचैली कपड़े की पोटली कैसे खोलूँ । उसका छोर भगवान् की नजर में आ गया । उन्होंने छोर पकड़कर खींचा और कहने लगे कि मित्र ! तुम्हारी चोरी की पुरानी आदत अभी भी नहीं गई । बात यह थी कि गुरुकुल में जब भगवान् श्रीकृष्ण जी पढ़ते थे उस समय अमीर-गरीब सब एक साथ पढ़ते थे । फीस किसी की नहीं लगती थी । सब लोग समान रूप से रहते थे । जाते समय जिसकी जितनी शक्ति होती थी उतनी गुरुदक्षिणा वह दे देता था । गुरु की सेवा सबको करनी पड़ती थी । गुरु की पत्नी ने एक दिन कहा कि बेटा ! जंगल से लकड़ी ले आओ । सुदामा और कृष्ण दोनों जाने लगे। सुदामा के पास पोटली में गुरुमाता ने चने रख दिए कि भूख लगे तो तुम दोनों बाँटकर खा लेना । लकड़ी बीनते-बीनते देर हो गई । मेघ आ गए, वर्षा होने लगी और सूर्यास्त हो गया। उस समय एक पेड़ के नीचे दोनों खड़े-खड़े रात बिता रहे थे । सुदामा ने चने निकाल कर खाना शुरु किया। दाँत कुटकुट हुए । अँधेरा था । भगवान् ने पूछा कि मित्र!

क्या खा रहे हो ? कुछ हमको भी दे दो । सुदामा बोले जाड़े से दाँत कटकटा रहे हैं । कहा ठीक है । जो दूसरों के स्वत्त्व का अपहरण करता है, उसको दरिद्रता का दुःख भोगना पड़ता है । इसलिए किसी का हक नहीं मारना चाहिए । बहुत से लोग अपने भाई का हक मार लेते हैं । जो जिसका है उसको वह दे देना चाहिए । उनको इतना दारिद्र्य भोगना पड़ा और फिर बात यह है कि भाग्य की भी बात होती है । जब आपके भाग्य में है ही नहीं तो मिलेगा कहाँ से ?

करम कमण्डल कर गहे जहँ चाहे तहँ जाए ।
बापी कूप तड़ाग जल भूमि न अधिक समाय ।।

कर्म का कमण्डलु हाथ में लेकर कहीं चले जाओ । बावरी में कमण्डलु बोरो तब भी उतना ही आएगा, कुँए से भी उतना ही आएगा, सरोवर से भी उतना ही आएगा जितना तुम्हारे कमण्डलु में जगह है । तुम्हारी खोपड़ी में जो लिखा है वही तो मिलेगा । कहीं चले जाओ । कर्म के कमण्डलु के कारण भी लोग दुःख भोगते हैं । कर्म जो है कोई बाहर की चीज नहीं है । अपने ही पहले जन्म के या इस जन्म के किए हुए कर्म प्रारब्ध बन जाते हैं। जिन कर्मों को भोगने के लिए ईश्वर का संकल्प जुड़ जाता है और जिस कर्म का भोग प्रारम्भ हो गया उसको प्रारब्ध कहते हैं । ऐसी स्थिति में जिस प्रकार के प्रारब्ध को लेकर जो प्राणी आता है वह उतने ही दिन संसार में रहता है । उतने ही सुख-दुःख का भोग करता है । कुछ स्थायी नहीं, भगवान् ने सोचा कि कर्म का नियम बदलना भी ठीक नहीं –

कर्म प्रधान विश्व करि राखा । जो जस करहिं सो तस फल चाखा ।।

सारे विश्व को भगवान् ने कर्मप्रधान बनाकर रखा है । जैसी करनी वैसी भरनी । इन्होंने ऐसा कर्म नहीं किया था कि इनको धन मिले इसलिए भगवान् ने सोचा कि इसका प्रारब्ध बदलो। प्रारब्ध बदलने के लिए इससे दान कराओ । इसीलिए भगवान् ने सुदामा की पत्नी के दिए हुए चूड़े को खाना चाहा –

कमला कामसोदाम कणकामुकगेहिने ।

कमला माने धन की इच्छा के लिए जो सुदामा की स्त्री ने चूड़ा दिए थे उनके भगवान् कामुक बन गए । **कणकामुकगेहिने** उन कणों की इच्छा वाले बन गए । दूसरा यह है **कमलाकामसौदामकणकामुकगेहिने।** भगवान् कमला के भी अभीष्ट हैं । कमला को भगवान् नहीं चाहते, लेकिन कमला ने उनको वरण कर लिया है।

यह कथा आती है समुद्र मन्थन की कि जब समुद्र मन्थन हुआ तो उसमें से चौदह रत्न निकले । उन चौदह रत्नों में लक्ष्मी का प्रादुर्भाव हुआ –

ततः प्रादुर्भूत्साक्षात् श्रीरमा भगवत्परा ।

जब चौदह रत्नों में से लक्ष्मी का प्रादुर्भाव हुआ तो सबने उसकी इच्छा की । लक्ष्मी के लिए कौन हाथ नहीं पसारेगा ? सबने चाहा कि हमको यह मिल जाए । यह हमारी पत्नी बन जाए। भगवान् ने कहा कि बैठ जाओ लाइन से और लक्ष्मी के हाथ में जयमाला दे दी । जिसके गले में डाल दे यह उसकी हो जाएगी । स्वयंवरा लक्ष्मी चलीं । वहाँ बड़े-बड़े महान् लोग मिले । सब दूसरों के अधीन थे । कोई तपस्वी थे तो क्रोधी भी थे । सबमें कोई न कोई दोष उन्हें दिखाई पड़ा। लक्ष्मी ने कहा यह ठीक नहीं, यह ठीक नहीं । सबको रिजेक्ट करती गईं । अब जो भगवान् श्रीमन्नारायण विष्णु थे वे कमला को नहीं चाहते थे कि यह उन्हें मिले लेकिन कमला ने, लक्ष्मी ने जबरदस्ती उनके गले में जयमाला डाल दी । इस प्रकार वह उनकी हो गईं । बताओ जिनके घर में जिनकी घरवाली ही कमला है उनके पास धन की क्या जरूरत ? किसी वस्तु की क्या आवश्यकता है ? इसीलिए भक्त कहता है कि महाराज ! हम क्या आपको दें ? कौन सी वस्तु है जो आपको दें ।

रत्नाकर तव गृहं गृहिणी च पद्मा किं देयमस्ति भवते जगदीश्वराय ।
गोपालवामनयनाधृतमानसाय दत्तं मया निजमनस्तदिदं गृहाण ।।

प्रभो ! एक भक्त ने भगवान् की पूजा की । उनको पाद्य, अर्घ्य, आचमन सब उपचार चढ़ाए । अब दक्षिणा का मौका आया तो बिना दक्षिणा के तो पूजा पूरी नहीं होती । सोचने लगा भक्त कि इनको हम दक्षिणा में क्या चढ़ाएँ । मन में आया कि रत्न चढ़ा दें । हीरा, मोती, पन्ना तो कहने लगा कि भगवन् जिस घर में आप रहते हैं वह तो रत्नाकर हैं । आपको रत्नों की क्या कमी है । यदि हम आपको सोना चाँदी चढ़ाएँ तो **गृहिणी च पद्मा।** जो समस्त ऐश्वर्यों की अधिष्ठात्री लक्ष्मी है वह आपकी घरवाली है । आपको धन की क्या कमी है ? हम आपको क्या दें ? कहा और फिर **जगदीश्वराय** जगत् के ईश्वर तो आप ही हो । जितनी भी चीजें हैं सब जगत् के भीतर हैं । आप ही तो सबके ईश्वर हो। आपकी वस्तु आपको ही दें । यह धृष्टता नहीं होगी? हाँ, एक चीज है जो आपको दे सकते हैं । वह है **गोपालवामनयनाधृतमानसाय** आपके पास एक चीज की कमी है । आपके पास मन था पर उस मन को गोपांगनाओं ने चुरा लिया है ।

किसी गोपी के अंचल को कृष्ण ने पकड़ा, खींचा तो उसने उनको डाँटा –

मुञ्चाञ्चलं चञ्चल पश्य लोकं बालोसि न लोकयसे कलङ्कम् ।

अरे चंचल ! मेरे अंचल को छोड़ । जरा संसार की तरफ तो देख । कोई कुछ कहने लग जाएगा । तू नासमझ है, कोई कलंक लगा देगा । श्रीकृष्ण ने उसका अंचल छोड़ दिया और दूर खड़े हो गए । तब उसने कहा–

भावं न जानासि विलासिनीनां गोपाल गोपालनपण्डितोसि ।

अरे कृष्ण ! तू विलासिनियों के भाव को समझता नहीं है । यहाँ ना का मतलब भी हाँ होता है । तू निरा गोपाल है । गौओं को पालना जानता है । रस-रहस्य का पण्डित नहीं है । ऐसा कहकर गोपियों ने तुम्हारे मन को चुरा लिया है । अब तुम बिना मन के हो गए हो । तो मैं अपना मन ही आपको दक्षिणा में देता हूँ ।

दत्तं मया निजमनस्तदिदं गृहाण ।

रुक्मिणी लक्ष्मी जी का ही अवतार हैं । लक्ष्मी उनकी पत्नी हैं । जिनकी लक्ष्मी पत्नी हों उनको किसी वस्तु की इच्छा क्यों होगी ?

कमला के द्वारा जो कामित स्वामी श्रीकृष्ण हैं वे सुदामा के कण के कामुक बन रहे हैं । सुदामा जो कण लाया है चार मुट्ठी तन्दुल उसके कामुक बन जाते हैं । क्यों ? क्योंकि उसको खाकर सुदामा का प्रारब्ध पलटना है । क्योंकि दान से मनुष्य को धन मिलता है। दान सत्पात्र को दिया जाता है । सत्पात्र में सबसे बड़ा पात्र भगवान् होते हैं । भगवान् ने मन में सोचा कि इसका दान मैं ही जब स्वीकार कर लूँगा तो वह कई गुना हो जाएगा। इसीलिए **कमलाकामसौदामकणकामुकगेहिने ।** गेही बताया । गेही बताने का अभिप्राय यह है कि जो गेही होता है गृहस्थाश्रमी उसका कर्त्तव्य होता है कि जो घर में आए उसका सत्कार करे । अतिथि सत्कार गृहस्थाश्रमी का कर्त्तव्य है । जैसे सभी पशु-पक्षी और मनुष्य वृक्ष की छाया में विश्राम लेते हैं उसी प्रकार ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, संन्यासी, अतिथि-अभ्यागत सब गृहस्थाश्रमी के यहाँ जाते हैं। उसका कर्त्तव्य होता है अतिथि सत्कार करना । कहते हैं –

तृणानि भूमिरुदकं वाक्चतुर्थी च सूनृता ।
एतान्यपि गृहस्थस्य नोच्छिद्यन्ते कदाचन ।

अपने घर में कोई आ जाए तो बैठाने के लिए कोई गलीचा, कम्बल न हो तो पुआल ही बिछा दो । चटाई बिछा दो । वह भी न हो तो जमीन बता दो कि यहीं बैठ जाओ । एक लोटा पानी दे दो ।

अपने यहाँ नियम है कि जब अपने यहाँ कोई अतिथि आता है तो सबसे पहले एक लोटा पानी उसके सामने रख दिया जाता है। इसीलिए रखते हैं कि अतिथि अग्नि है। हमारे पुण्य को जलाने वाला है। अग्नि की शान्ति जल से होती है। इसीलिए जल दिया जाता है। इसीलिए लोग कहते हैं कि भाई ! हम उसके घर गए तो उसने एक लोटा पानी को भी नहीं पूछा। गृहस्थाश्रमी का कर्त्तव्य होता है। पानी भी न हो तो क्या करें ? कहा कि कोमल वाणी बोले। प्यार से बोल दे। यह तो गृहस्थाश्रम में हो ही सकता है। भगवान् श्रीकृष्ण गेही हैं। गृहस्थाश्रमी हैं और सुदामा उनका अतिथि है। इसलिए उसके कणों को लेकर उसको दो मुट्ठी के बदले दो लोक की सम्पदा दे देते हैं –

नमो नवघनश्याम कामकामितदेहिने। कमला कामसौदामकणकामुकगेहिने।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[23]

।। राम राम तेइस ।।

भगवान् ही गुरु के रूप में आते हैं

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

भगवान् निर्गुण, निराकार, निर्विकार, अचिन्त्य, अव्यपदेश, एकात्मप्रत्ययसार होते हुए भी अवतार धारण करते हैं । उनके अवतार का उद्देश्य क्या है ? सीधा-सीधा जैसा कि श्रीमद्भगवद्गीता में बताया –

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ।।

इसका अर्थ है साधुओं की रक्षा के लिए । साधु कौन ? भगवान् शङ्कराचार्य जी ने साधु की परिभाषा बताई–

साधुनां सन्मार्गस्थानाम्

जो सन्मार्ग में चलने वाले हैं वे साधु हैं । और दूसरा है -

साध्नोति परकार्यमिति साधुः ।

जो दूसरो का काम सिद्ध करते हों उनको साधु कहते हैं । जिनके द्वारा कभी किसी का अहित नहीं होता। **साधु ते होइ न कारज हानी ।** साधु से कभी कार्य की हानि नहीं होती । वे साधक ही होते हैं बाधक नहीं ।

परित्राणाय साधूनां इसीलिए जो साधु हैं वे किसी को शाप नहीं देते । किसी का अनिष्ट नहीं चाहते। मन, वचन, कर्म से सबका कल्याण चाहते हैं ।

सबके प्रिय सबके हितकारी । दुःख सुख सरिस प्रशंसा गारी ।।

सबके प्रिय होते हैं । सबके हितकारी होते हैं । सुख दुःख में समान रहते हैं । निन्दा स्तुति में समान रहते हैं, ऐसे साधुओं के ऊपर जब कोई संकट दुर्जनों के द्वारा लाया जाता है तो भगवान् कहते हैं मैं अवतार ले लेता हूँ । **परित्राणाय साधूनां । विनाशाय च दुष्कृतां ।**

जो दुष्कृति हैं, माने साधु का उल्टा। जो दूसरो का अनिष्ट करने वाले हैं उनके लिए कहा है। दूसरो का अनिष्ट करने में ही जिनको सुख मिलता है वे लोग दुष्कृति हैं। उनका विनाश करने के लिए धर्म की स्थापना के उद्देश्य से युग युग में मेरा अवतार होता है। **सम्भवामि युगे युगे।** पहले तो भगवान् ज्ञानावतार लेते हैं। सन्त महात्माओं के रूप में संसार में आते हैं और वे लोगों को सन्मार्ग की शिक्षा देते हैं। बुरे मार्ग से हटाते हैं। उसके लाभ और हानि का ज्ञान कराते हैं। अधर्म के मार्ग पर चलने पर कितना मनुष्य का अनिष्ट होता है, परिणाम कितना भयानक होता है यह सन्त-महात्मा बतलाते हैं। वे बतलाते हैं कि जो धर्म के मार्ग पर चलता है उसका लोक और परलोक दोनों बनता है। समझाते हैं कि ऐसे लोगों के शास्ता गुरु होते हैं –

गुरुरात्मवतां शास्ता। जो आत्मवान् हैं, जो अपने ऊपर नियन्त्रण कर सकते हैं अथवा करने की इच्छा रखते हैं उनके शास्ता माने शासक गुरु होते हैं। गुरु से उनको भय होता है। वे इस बात से भयभीत होते हैं कि कहीं वे रुष्ट न हो जाएँ। कहते हैं–

हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।

अगर भगवान् नाराज हो जाएँ तो गुरु बचा लेते हैं, पर यदि गुरु रुष्ट हो जाए तो फिर कोई बचाने वाला नहीं होता। इसीलिए गुरु की बात मानना चाहिए। अब गुरु कौन हो ? किसको हम गुरु मान लें ?

गलियन गलियन गुरु फिरें दीक्षा हमरी लेव।
स्वरग पड़ो चाहे नरक पड़ो हमें रुपैया देव।

ऐसे गुरु तो गली-गली घूम रहे हैं। उनका उद्देश्य कुछ नहीं है। वे कहते हैं कि हम चेता रहे हैं। चेताने का एक मतलब होता है चेतावनी देना। उनके चेताने का मतलब यह है कि हम इकट्ठा कर रहे हैं। ऐसे गुरुओं से काम नहीं बनेगा। जो हमारे अज्ञान के अन्धकार को दूर कर सकें वही गुरु है। गुरु के रूप में जब भगवान् आते हैं तो संसार को सन्मार्ग दिखला देते हैं। कहते हैं इसीलिए भगवान् शाङ्कर स्वयं शङ्कराचार्य के रूप में आये। भगवान् शङ्कराचार्य ने दण्ड धारण किया। हाथ में दण्ड लिया, दाहिने हाथ में दण्ड और बाएँ में कमण्डलु। दण्ड क्यों लिया ? बहुत से लोग दण्ड का अर्थ नहीं समझते हैं। एक ने पूछा दण्डी महात्मा से। वह कुछ जानता नहीं था। पूछा कि यह दण्ड आप क्यों रखते हो ? कहा कि तुम्हारे जैसे दुष्टों को ठीक करने के लिए। पर ऐसा नहीं है। दण्ड का अर्थ है – दण्डन्यास। हमने यह प्रतिज्ञा कर रखी है कि हम सबको अभयदान देंगे। हमसे किसी को भय न हो। इस बात का द्योतक यह दण्ड है। भगवान्

शङ्कराचार्य ने कभी किसी को दण्डित नहीं किया । सर्वत्र घूम-घूमकर धर्म का उपदेश दिया। अब ऐसे लोगों की रक्षा के लिए भगवान् आ जाते हैं ।

शङ्कर दिग्विजय में एक कथा आती है कि एक कापालिक था । कापालिक नाम का सम्प्रदाय पहले भारत में था जो भैरव जी की सुरा से उपासना करता था । नरबलि देता था । बड़े भयानक थे ये लोग । भगवान् शङ्कराचार्य जी ने इस मार्ग का खण्डन कर दिया। क्रकच नाम का एक कापालिक था वह शास्त्रार्थ करने शङ्कराचार्य जी के पास आया । वह शास्त्रार्थ में जब पराजित हो गया तो उसने अपने मन्त्र का बल दिखाया । मन्त्र का बल दिखाकर एक मनुष्य की खोपड़ी में शराब भर लाया और भैरव जी का आह्वान किया । भैरव जी प्रकट हो गए । उन्होंने पूछा कि क्यों बुलाया ? तो क्रकच बोला कि इस संन्यासी को खा जा । भैरव जी बोले कि यह तो मेरा ही रूप है । इसका द्रोह तूने क्यों किया ? जैसे कोई ककड़ी चबा जाए वैसे ही भैरव जी ने उसी क्रकच को चबा लिया । ऐसा होता है । भगवान् स्वयं भक्त की रक्षा के लिए आ जाते हैं ।

परित्राणाय साधूनां । विनाशाय च दुष्कृतां ।

इसी तरह से एक और व्यक्ति था कापालिक । उसने यह संकल्प लिया था कि हम भैरव जी को या तो राजा का सिर चढ़ाएँगे या योगी का सिर चढ़ाएँगे । राजा के पास जाकर उसका सिर काटना सामान्य बात नहीं है । जा ही नहीं सकते वहाँ तक । उसने भगवान् आदि शङ्कराचार्य को पकड़ा और एकान्त में मिला । ऐसे लोग एकान्त में ही मिलते हैं कि महाराज ! आप तो परोपकारी हैं । आपको अपने शरीर की जरूरत तो हैं नहीं । हम चाहते हैं कि हमारा संकल्प आपके द्वारा पूरा हो जाए । हम योगी की नरबलि चढ़ाने का संकल्प कर चुके हैं । महाराज ! आप यह संकल्प पूरा करा दीजिए । भगवान् आदि शङ्कराचार्य बोले कि हमारे चेले हमको मरने नहीं देंगे । जब हम एकान्त में ब्रह्म का ध्यान करते हों, निर्विकल्प समाधि में बैठ जाएँ उस समय आकर हमारा सिर काट लेना । बलि चढ़ा देना । उसने कहा ठीक है । भगवान् शङ्कराचार्य बैठ गए ध्यान में ।

एक सज्जन थे । वे कहते थे कि मैं शङ्कराचार्य से भी अधिक ज्ञानवान् हूँ । क्योंकि मैंने शङ्कराचार्य के सिद्धान्त को पढ़ा है और उनके परवर्ती जो दूसरे आचार्य हैं उनके सिद्धान्त को भी पढ़ा है । मेरा ज्ञान उनसे अधिक है । हमसे लोगों ने पूछा कि महाराज! ये क्या बात है ? अगर आपके सामने कोई कापालिक आकर कह दे कि हम तुम्हारा सिर काटेंगे तो क्या तुम्हारी समाधि लगेगी, तुम्हें नींद आएगी ? उन्होंने तो समाधि लगा ली और अपने शरीर को छोड़ने के लिए तैयार हो गए । पर हुआ क्या कि उनके एक शिष्य

थे सनन्दन नाम के। सनन्दन ने भी उसी समय ध्यान लगाना प्रारम्भ किया। ध्यान में सबसे पहले गुरु का ध्यान किया जाता है –

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदं।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।

ध्यान का मूल गुरु की मूर्ति है, पूजा का मूल गुरु के चरणारविन्द हैं, मन्त्र का मूल गुरु के वचन हैं और मोक्ष का मूल गुरु की कृपा है। वे गुरु का ध्यान करने लगे तो उनके मन में गुरुदेव समाधिस्थ रूप में दिखाई पड़े और कापालिक को खड्ग लेकर उनको मारने के लिए उद्यत देखा। उनको आवेश आ गया। वे नरसिंह भगवान् के उपासक थे।

लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम्।

उन्होंने नरसिंह भगवान् का स्मरण करके कहा कि मेरे हाथ में आप कोई अवलम्बन दीजिए। वे नरसिंह रूप बन गए। उस कापालिक को पकड़कर उसकी छाती फाड़ दिया। भगवान् की रक्षा कर दी। कहने का मतलब यह है कि कभी-कभी भगवान् अवतार लेते हैं। यद्यपि भगवान् सर्वशक्तिमान हैं, सर्वज्ञ हैं, सत्संकल्प हैं, उनका संकल्प व्यर्थ नहीं जाता। इसीलिए यह प्रश्न आता है कि भगवान् कंस को मारने के लिए क्यों कृष्ण बनते हैं? रावण को मारने के लिए रामावतार क्यों धारण करते हैं? मर्त्यावतार क्यों धारण करते हैं? केवल संकल्प करने से सब नष्ट हो जाएँगे। भगवान् केवल संकल्प कर लें तो पूरी त्रिलोकी नष्ट हो जाए।

ऐसे ही एक प्रश्न एक बार अकबर ने बीरबल से कर दिया। उसने पूछा कि तुम हिन्दुओं का खुदा अवतार क्यों ले लेता है? किसी पैगम्बर को भेज दे, किसी जिन्नात को भेज दे तो भी काम बन सकता है। उनको क्या जरूरत है खुद आने की? बीरबल उस समय तो चुप रहे। एक दिन यमुना में सैर करने के लिए बादशाह नाव से निकले। बीरबल ने कुछ लोगों को लगा दिया। बीरबल बादशाह के साथ थे। कुछ लोग उनके प्रिय पुत्र सलीम के मोम के पुतले को लेकर दूसरी नाव से उन्हीं की तरफ आ रहे थे। बादशाह अकबर को यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि हमारा बेटा सलीम हमारे पास आ रहा है। बड़ी उत्सुकता से वे देखने लगे। इतने में मोम के पुतले को लोगों ने यमुना में फेंक दिया। अकबर ने आव देखा न ताव। तुरन्त यमुना जी में कूद पड़े। कूद कर उन्होंने उस पुतले को पकड़ लिया। किसी तरह खींच-खाँचकर उन्हें नाव में बैठाया गया। जब साँस ठीक हो गई तब बीरबल ने पूछा कि हुजूर! आप हमको हुकुम दे देते। हम

कूद जाते । आप खुद क्यों कूद गए ? अकबर ने कहा कि मुझसे रहा ही नहीं गया कि मेरा बेटा मेरे सामने डूब जाता यह मुझसे सहा ही नहीं गया । बीरबल ने कहा कि इसी तरह से हमारे भगवान् जब भक्त के ऊपर कष्ट देखते हैं तो खुद कूद पड़ते हैं । वे खुद आ जाते हैं । लेकिन सिद्धान्त यह नहीं है –

मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणं रक्षोबधायैव न केवलं विभो

भगवान् का जो अवतार है, मनुष्यावतार, वह मनुष्यों को शिक्षा देने के लिए है । राक्षसों के वध के लिए नहीं है । भगवान् राम ने रामावतार लिया । धर्म पहले शास्त्रों में था, वेदों में था । लोग उसको सुनते थे परन्तु भगवान् ने आचरण करके दिखा दिया कि कैसे धर्म का पालन किया जाता है ? आप देखिए भगवान् राम का चरित्र कितना अद्‌भुत है । उनको राजा दशरथ ने कह दिया कि कल तेरा राज्याभिषेक करूँगा । वशिष्ठ ने कह दिया कि आज व्रत करो । माता कौशल्या हवन करवा रही हैं ब्राह्मणों से और दूर-दूर से लोग राम का राजतिलक देखने के लिए अयोध्या की गली-गली में छाए हुए हैं । घर-घर वन्दन-पताका, मंगलकलश जँच रहे हैं कि कल राम का राज्याभिषेक होगा और राम को बुलाकर कह दिया जाता है कि तू वन चला जा ।

अब सोचिए । आज के नेता को यदि टिकट नहीं मिलता तो वह पार्टी बदल लेता है । कहता है कि तुम नहीं दोगे तो हम दूसरी पार्टी में चले जाते हैं । लेकिन भगवान् राम ने पार्टी नहीं बदली । दशरथ जी ने स्वयं कहा कि मैं कैकेयी के वश में होकर बोल पड़ा । मैंने वचन दे दिया । तेरी शपथ खा ली । मेरे साथ धोखा हुआ । अब तू अपना राज्याभिषेक करा ले । मेरी बात मत मान । भगवान् राम बोले कि पिताजी ! मैं आपका ऐसा बेटा नहीं हूँ जो आपको मिथ्याभाषी सिद्ध होने दूँ । आप सोचिए जो राजमहल में रहता था, जिसके लिए छप्पन भोग बनते थे, सीता जी परोसती थीं, जिनको सोने के लिए नरम शय्या थी, सिरहाना था, पंखे थे, दास-दासी थे । कल क्या खाएगा कहाँ रहेगा कोई ठिकाना नहीं । राजा दशरथ ने कोई प्रबन्ध करके थोड़े ही कहा कि चले जाओ। यह भी नहीं कि हाथ में तलवार लेकर चले जाओ । किसी भी राज्य में कब्जा कर लो।

तापस वेश विशेष उदासी । चौदह वरिष राम वनवासी ।

तपस्वी का वेश धारण करके उदासीन भाव से चौदह वर्ष के लिए राम वनवासी हों, यह वरदान माँगा है। उस वरदान को राम ने पूरा किया । स्थिति क्या हुई ? राजा दशरथ चक्रवर्ती सम्राट् कहलाते थे लेकिन उनके राज्य में जगह-जगह से विद्रोह होने लगा था । दक्षिण दिशा में राक्षसों ने अपना आधिपत्य जमा लिया था । यहाँ तक कि

पूर्व में मारीच, सुबाहु तक आ गए थे जो विश्वामित्र जी का यज्ञ विध्वंस कर रहे थे। यह स्थिति उनके राज्य की थी। राज्य विदीर्ण हो गया था। छिन्न-भिन्न हो रहा था और जब भगवान् राम निकले तो उनके स्वयं के शासन की सीमा वहाँ तक थी जहाँ तक कि निशाचर रहते थे। उसके आगे दण्डकारण्य था। राम ने उस राज्य का त्याग किया। धर्म का पालन किया और जब धर्म का पालन करके चौदह वर्ष का वनवास भोग कर लौटे तो मानस में लिखा है –

सप्तद्वीप सागर मेखला। एक भूप रघुवर कोशला।

सात द्वीप, सागर, मेखला उसके एकमात्र राजा भगवान् श्रीराम हो गए। धर्म की बात यह है। अभी आपको बताया सुरेश जी ने कि स्वतन्त्रता आन्दोलन में हमने भाग लिया। अंग्रेजी राज कितना कठिन था। कितना कठोर था। आज की पीढ़ी को उसका पता ही नहीं है। वे कितने दमनकारी थे। कोई भी व्यक्ति यदि कोई हट्टा-कट्टा दिखता था तो वह उनकी आँखों में खटकने लगता था। यह हालत थी। कोई खाली टोपी लगा नहीं सकता था। 'भारत माता की जय' नहीं बोल सकता था कोई। भारत में रुई भी नहीं बनती थी। जापान से आती थी। मनचेस्टर से बनकर कपड़े आते थे। यहॉ कपड़े के मिल नहीं थे। इस तरह भयंकर राज्य में हम लोग खड़े हुए। 'भारत माता की जय' कहकर। 'वन्दे मातरम्' बोलकर। जेल में हमको ठूँस दिया गया।

बनारस में एक चौकाघाट जेल है। उसके ११ नं बैरक में हमने नौ महीना बिताया। उसके बाद भारत जब आजाद हुआ तो हम बनारस पहुँचे शङ्कराचार्य होकर। हमारे साथ जो जेल में थे सियाराम मैत्रेय उन्होंने हमारा नाम सुना स्वरूपानन्द तो सोचने लगे कि वही तो नहीं है। हमको देखने आये, परखने के लिए कि ये वही है कि दूसरा है। हमने कहा कि कहिए मैत्रेय जी ! पहचान लिया ? तो उन्होंने भी पहचान लिया। भारत की स्वतन्त्रता के बाद वे जेल के डी आई जी बन गए थे। उसी जेल में जहाँ हम नौ महीने कैदी के रूप में रहे वहाँ हमारा सिंहासन लगा। उन्होंने लगवा दिया।

अपने सिद्धान्त पर अटल रहने पर मनुष्य को थोड़े दिन कष्ट उठाना पड़ सकता है लेकिन बाद में उसका कल्याण होता है। यह बात भगवान् श्रीराम ने अपने आचरण से सिद्ध कर दिया। भगवान् श्रीकृष्ण ने भी यह सिद्ध कर दिया –

यतो धर्मस्ततो जयः।

जहाँ धर्म होता है वहीं विजय होती है। एक उद्देश्य तो भगवान् का यह है

मर्त्यावतार से मर्त्यशिक्षण। लेकिन एक सबसे बड़ी बात है कि श्रीमद्भागवत में कहा कि-

**दुरवगमात्मतत्त्वनिगमाय तवात्ततनोश्चरितमहामृताब्धिपरिवर्तपरिश्रमणाः।
न परिलषन्ति केचिदपवर्गमपीश्वर ते चरणसरोजहंसकुलसंगविसृष्टगुहाः।।**

आपने जो श्रीविग्रह धारण किया है वह आत्म तत्त्व के निगम के लिए किया है। जो आत्म तत्त्व अत्यन्त दुर्गम है उसको प्राप्त कराने के लिए उसका अवगम कराने के लिए आपका यह श्रीविग्रह है।

थोड़े में हम समझाएँगे। देर बहुत हो गई है। आप अपने ऊँचे मकान से खड़े होकर देखें तो पूरा नगर दिखाई पड़ेगा और दूरबीन से देखें तो दिन में आपको तारे भी दिखाई पड़ जाएँगे। आपमें इतनी ताकत है लेकिन अगर आँख में काजल है तो आँख उस काजल को नहीं देख सकती। आँख के काजल को आँख नहीं देख सकती क्योंकि आँख के बहुत नजदीक है। दूर की चीज आँख देख सकती है लेकिन निकट की नहीं देख सकती। आँख का काजल आँख से नहीं दिखता तो आँख से आँख कैसे दिखेंगे ? आँख से जब आँख नहीं दिख सकती तो आँख से भी भीतर मन है। मन को कैसे देखेंगे ? मन के भीतर बुद्धि है उसको कैसे देखेंगे ? बुद्धि के भीतर आत्मा है उसको कैसे देखेंगे ? समस्या है। इसका उत्तर यह है कि अगर आँख से आँख को देखना है अथवा आँख से आँख के काजल को देखना है तो सामने दर्पण रख लो। शीशा सामने रख लो उस शीशे में तुम्हारा प्रतिबिम्ब पड़ जाएगा। आँख का भी पड़ जाएगा और काजल का भी पड़ जाएगा। इसी तरह से अगर कोई शीशा हो तो वह आत्मदर्शन में काम नहीं आएगा। यह तो आपके मुख देखने के काम आ सकता है। जो साकार वस्तु है उसको देखने में काम आ सकता है। जो निर्गुण निराकार है, निर्विकार है, जो सर्वद्रष्टा है वह दृश्य कैसे बनेगा? उसके लिए भी कोई दर्पण चाहिए। वह दर्पण क्या है ? निर्मल मन।

निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।

इसीलिए कहा कि –

काई विषय मुकुर मन लागी।

जिसके मनरूपी मुकुर में काई लगी है

तरे नैनन लग गई काई। तू दरश कहाँ से पाई।

तुम्हारे नैन आँख हैं। काई लगी है उसमें। काई क्या है ? विषयाकार वृत्ति जब हो जाएगी तो मन से विषय दिखेगा। आत्मा नहीं दिखेगा। बुद्धि यदाकार हो जाती है तदाकार परिणत होकर उस विषय को देखती है। ऐसी स्थिति में मन का निर्मल होना विषयाकारता का त्याग कर देना तब सम्भव होगा जब भगवान् का अवतार होगा। भगवान् लीला करेंगे चरित्र करेंगे। उस चरित्ररूपी महासमुद्र में जब वह परिवर्त करेगा जैसे कोई व्यक्ति घाम से पीड़ित हुआ हो उसको शीतल सरोवर में डुबकी लगाने का मौका लग जाए तो उसका श्रम दूर हो जाता है इसी तरह से हमारा मन जो है वह भगवान् के चरित्रों के श्रवण से शान्ति प्राप्त करता है।

मन करि विषय अनल वन जरई। होई सुखी जो यहि सर परई।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं मन हाथी है। यह विषयरूपी दावानल में झुलस रहा है। जो भगवान् के चरित्रामृतरूपी सरोवर में स्नान करता है उसको शान्ति मिलती है। ऐसा सुख भगवच्चरित्रों के श्रवण से, चिन्तन से प्राणी को मिलता है। मनुष्य को चरणसरोरुहहंस कहा। हंस जो होता है वह सरोज के ऊपर बैठता है। यह कवि प्रसिद्धि है कि मानसरोवर में कमल खिले रहते हैं। उन कमलों के ऊपर हंस बैठकर मुक्ता चुगते हैं। ये जो महात्मा हैं भगवान् के चरणकमलों में विराजमान रहते हैं। उन चरणों में भ्रमर बनकर रहते हैं –

पद राजीव वरनि नहिं जाई। मुनि मन मधुप बसहिं तेहि मांही।

ऐसे महात्माओं के कुल में सन्त-महात्माओं के बीच में बैठकर सत्संग करते हुए भगवान् के चरित्रामृत, लीलामृत का जो अवगाहन करते हैं, वे सांसारिक भोगों की तो बात क्या है ? मोक्ष की इच्छा तक का त्याग करते हैं। जब सारी इच्छाओं का त्याग हो जाता है तो वही तो मोक्ष है। जब मोक्ष हो गया तो इच्छा कहाँ से होगी ? बन्धन क्या है ? मनुष्य की जो कामनाएँ हैं वही बन्धन है। कामनाओं का त्याग किया तो समझो बन्धनमुक्त हो गया। मुक्त हो गया तो मुक्ति की इच्छा क्या करेगा ? यह सब सिद्धान्त की बातें हैं। आप आगे सुनेंगे।

अब बात यह है कि अधिक मास है यह। इसको पुरुषोत्तम मास भी कहते हैं। इसमें सब लोग अपने-अपने घर से निकले। सबने तीर्थाटन किया। जगह-जगह गए। परमहंसी गंगा में भी आए। यहाँ भी आपलोगों ने दर्शन किया, सत्संग किया। आज अमावस्या है। अब हम यह चाहेंगे कि जो प्यार, जो आस्था आपने दिखाई है जब कभी हमलोग गंगा के लिए आपको दिल्ली बुलाएँ तो वहाँ आ जाइए। रामसेतु टूटता हो,

उसको बचाने के लिए अगर हमलोग बुलाएँ तो कृपा करके वहाँ पधारिए। वहाँ यदि इतनी भीड़ बढ़ जाए तो सबकी आँखें खुल जाएँगी। जितने भी ढोंगी लोग हैं सबकी आँखें खुल जाएँगी। हम यह चाहेंगे कि आप लोगों की इसी तरह की आस्था कुम्भ मेले में हमको दिखाई पड़े। अभी माघ मेला आ रहा है। फिर कुम्भ आ रहा है। बारह साल के बाद एक कुम्भ लगता है। करोड़ों लोग आते हैं। लेकिन जिस गंगा में हम स्नान करने जा रहे हैं उसकी क्या दुर्दशा है। इसको दूर करने के लिए हमको कुछ करना पड़ेगा। नहीं तो न जाने कितने लोगों की बीमारी बढ़ेगी। उसके सम्बन्ध में भी ध्यान देना है।

हमलोग अपने लिए कुछ नहीं कर रहे हैं। न हमको कोई पद चाहिए। न प्रधानमन्त्री बनना है, न राष्ट्रपति बनना है। जो कुछ हमको बनना था हम बन ही चुके हैं। और कोई नई बात नहीं होनी है। हम चाहते हैं कि अपना जो सनातन धर्म है उसकी बात उठाई जाए। जो हमारा सनातन धर्म है जिसमें कि हमारी आस्था है, विश्वास है, गंगा है, हमारी गौ है, हमारा रामसेतु है, हमारे तीर्थ हैं, हमारे आश्रम हैं, हमारे मन्दिर हैं, हमारी व्यवस्थाएँ हैं, हमारे सिद्धान्त हैं। जिनको हम सदाचार कहते हैं वह सदाचार स्थापित रहे। धर्म की व्याख्या सही हो। यह सब हमलोगों को देखना है।

इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं। थोड़ा सा भगवान् का नाम लें।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[24]

।। राम राम चौबीस ।।

धर्म का आदर्श हो तो समाज में सुख-शान्ति

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो !

हमलोग यह मानते हैं कि जहाँ धर्म होता है वही सब प्रकार का कल्याण प्राणी को देखने को मिलता है।

यतोधर्मस्ततो जयः । यह सिद्धान्त है कि जहाँ धर्म है वहीं विजय होती है । इसके पहले के प्रवचन में यह बात चली थी कि भगवान् श्रीराम ने राज्य के लोभ से धर्म का त्याग नहीं किया । धर्म का आचरण करने में उन्होंने जरा भी संकोच नहीं किया । परिणाम यह हुआ कि वे निखिल विश्व के चक्रवर्ती सम्राट् हो गए और यही नहीं, उनका जो राज्य था वह राज्य सत्ता के लिए आज भी आदर्श बन गया है ।

दैहिक दैविक भौतिक तापा । राम राज काहुहि नहीं व्यापा ।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती । रहहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती ।

वहाँ एक दोहा गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है –

दण्ड जतिन कर भेद जहँ नर्तक नृत्य समाज ।
जीतिय मनहिं सुनिय अस राम चन्द्र के राज ।

राम के राज्य में दण्ड नहीं था । हाँ, दण्ड यदि था तो संन्यासियों के हाथ में था। जो सारे विश्व को अभयदान करते हैं । भेद परस्पर नहीं था नर्तक नृत्य समाज में था। जीतने के लिए शत्रु नहीं थे । जीतने के लिए यदि कोई था तो वह मन था ।

बात क्या है ? राम के राज्य में इतनी सुन्दर व्यवस्था कैसे बनी ? इसलिए बनी क्योंकि उन्होंने स्वयं धर्म का पालन किया । एक बात और आती है कि भगवान् के वनवासी होने के पश्चात् भरत जी जब ननिहाल से लौटकर आए । राजा दशरथ का और्ध्वदैहिक संस्कार हो गया तो उनसे कहा गया कि आप अयोध्या का राजसिंहासन अलंकृत कीजिए । क्योंकि आपके पिता की यही आज्ञा है । इसी में सबका हित है । भरत जी ने कहा कि इन सबमें मेरा तो हित नहीं है और आपका भी नहीं है –

मोहि राज हठ देइहहु जबहीं । रसा रसातल जाइअ तबहीं ।

यदि आप लोग मुझे हठपूर्वक राज दे देंगे तो यह पृथ्वी रसातल को चली जाएगी क्योंकि शासक को धर्मशील होना चाहिए । मैं यदि राम के वनवास के पश्चात् राजसिंहासन पर बैठूँगा तो प्रजा के मन में यह भावना आएगी कि धन-दौलत बड़ी चीज है । धन दौलत के लिए, ऐश्वर्य के लिए अपने भाई को भी वनवास दिलाया जा सकता है । **रसा रसातल जाइअ** का अर्थ है कि लोगों का नैतिक पतन हो जाएगा । मैं अपना हित मेरे राजसिंहासन पर बैठने में नहीं देख रहा हूँ । भरत ने भी त्याग किया । परिणाम यह हुआ कि लोगों का मन अधर्म से हट गया। पुलिस की या फौज की कोई आवश्यकता नहीं पड़ी । आज भी आप देखिए अपने समाज में जो सुव्यवस्था है वह पुलिस के दमन के भय से नहीं है । धर्म के कारण है । परिवार में जो परस्पर प्रेम है, पति-पत्नी में जो प्रेम है, पिता-पुत्र में जो प्रेम है अब तो भले ही सुप्रीम कोर्ट में है कि पति-पत्नी चले जाएँ, पिता-पुत्र चले जाएँ लेकिन उस स्थिति में जिसमें हमारा भारत आज भी है कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। स्वाभाविक रूप से लोग अपने धर्म को समझते हैं और उसका पालन करते हैं । वही धर्म समाज को धारण किए हुए है । धर्म ही है । आप देखिए यहाँ पर जो लोग एकत्र हुए हैं वे एक प्रदेश के नहीं हैं । एक भाषा बोलने वाले भी नहीं है और एक जाति के भी नहीं है । सब भिन्न-भिन्न जाति के, भिन्न-भिन्न प्रदेशों के हैं लेकिन धर्म ने सबको एक कर दिया है । सबलोग बैठे हैं। अभी आप देखेंगे कि इलाहाबाद में कुम्भ मेला आएगा । करोड़ों लोग स्नान करने आएँगे। वे सब एक जाति के नहीं होंगे, । सभी अलग-अलग जाति के होंगे । सब प्रदेशों के होंगे और सब सबेरे गंगा में डुबकी लगाकर अपने को कृतकृत्य मानेंगे । गंगा यह नहीं पूछेगी कि तू किस जाति का है, किस प्रदेश से आया है ? जो उसमें गोता लगाएगा वह उसको पवित्र कर देगी ।

धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा ।

धर्म समस्त विश्व की प्रतिष्ठा है । उस धर्म के द्वारा हमें क्या मिलता है ? हमें चित्त की शुद्धि मिलती है। धर्म में ही हमलोग भगवान् की आराधना करते हैं, उपासना करते हैं, आज के दिन महिलाएँ तीजा का व्रत करती हैं । वे निर्जल व्रत करती हैं । बहुत से लोग एकादशी का व्रत करते हैं । नवरात्र में हमलोग व्रत करते हैं । फलाहार करते हैं। क्या बात है ? यह इसलिए करते हैं कि – **देवो भूत्वा देवान् यजेत्** यह सिद्धान्त है कि देव होकर देवताओं की आराधना करे । अब मनुष्य देव कैसे होगा? जब आपका आहार शुद्ध होगा ।

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः ।

आहार यदि शुद्ध न हुआ तो आप देवता की आराधना करके सफल नहीं हो पाएँगे। इसलिए भोजन के पहले उपासना की जाती है । प्रातःकाल उठकर पहले ईश्वर की आराधना सन्ध्या वन्दन किया जाता है । भोजन की भी शुद्धता का ध्यान रखा जाता है । यह हमलोग मानते हैं कि यदि शुद्ध आहार न रहा तो उसका प्रभाव मन पर पड़ता है । महाभारत के युद्ध के पश्चात् शर-शय्या में पड़े भीष्म के पास पाण्डव गए । भीष्म ने उनको बड़ा सुन्दर उपदेश दिया । राजा युधिष्ठिर को राज धर्म का, वर्ण धर्म का, आश्रम धर्म का, यति धर्म का बड़ा सुन्दर उपदेश दिया। यदि आप महाभारत पढ़ें तो पता लगेगा । जिस समय महाभारत का वह प्रसंग हम देखते हैं कि भीष्म युधिष्ठर को उपदेश देते हैं तो द्रौपदी मुस्कुराती है । द्रौपदी को मुस्कुराते हुए देखकर भीष्म ने पूछा बेटी तू क्यों मुस्कुरा रही है ? द्रौपदी ने कहा कि पितामह ! आप इतना अच्छा धर्म का ज्ञान देते हैं । यह धर्म उस समय कहाँ चला गया था जब भरी सभा में दुःशासन मुझे निर्वस्त्र करना चाहता था । आपने उस समय क्यों नहीं रोका ? यह धर्म का ज्ञान क्या आपको उस समय नहीं था ? भीष्म ने कहा बेटी ! उस समय मैंने दुर्योधन का कुधान्य खाया था। उसके कुधान्य खाने से मेरी बुद्धि मलिन हो गई थी । इतने दिन के उपवास के पश्चात् मेरा मन अब शुद्ध है ।

एक महात्मा के बारे में हम सुनते हैं कि एक बड़े अच्छे महात्मा थे । त्यागी, तपस्वी और ज्ञानी थे । एक राजा उनका भक्त था । राजमहल में उनका निर्बाध प्रवेश था । वे उनको अच्छा मार्ग बताते थे । एक दिन उनके मन में क्या बुद्धि आई कि रानी का एक बहुमूल्य हार टंगा हुआ था खूटी में । उसको उन्होंने चुरा लिया और उसे अपने कमण्डलु में रखकर वहाँ से चल दिए। महल में हार की खोज मची । कौन ले गया, कौन ले गया? जिसकी चोरी होती है वह हरेक पर शंका करता है कि कहीं इसी ने तो नहीं चुराया । बड़ी मुश्किल होती है । सब पर शंका हो जाना बड़ी खराब बात होती है ।

एक सज्जन हमारे पास आए । वे कहने लगे कि महाराज ! आपके जो अनुयायी हैं सबमें गुटबन्दी है । सब अलग-अलग हैं और आपके खिलाफ सब षड्यन्त्र कर रहे हैं। हमने कहा कि भाई ! हमको तो ऐसा कुछ नहीं दिखता है । तुम्हारी बात मान लें तो हमारा जीना हराम हो जाए। हम हरेक पर शंका करने लगेंगे । जब हरेक पर शंका करेंगे तो जिन्दा कैसे रहेंगे ? यह होता है। चोरी हो जाने पर मनुष्य सबके ऊपर शंका करता है।

बहुत से लोग बेचारे दण्डित होने लगे । बहुत से सन्देह के पात्र बन गए । वह

महात्मा जो हार लेकर गया था वह भिक्षाटन करता रहा। लिखा है –

भिक्षाहारो निराहारो भिक्षा नैव परिग्रहः ।
सदन्नं वा कदन्नं वा सोमपानं दिने दिने ।।

भिक्षाहार निराहार है। भिक्षा परिग्रह नहीं है। सदन्न खाओ चाहे कदन्न खाओ जो तुम्हारी झोली में आ जाए भगवान् को भोग लगाकर खाओ तो सोमपान के बराबर पुण्य होता है। महात्मा जी की बुद्धि शुद्ध हो गई। अब उनको ग्लानि होने लगी कि हार लेकर हम क्या करेंगे? हमने इसको क्यों चुराया ? वह वापस राजा के यहाँ आया। राजा के यहाँ चोरी हुई थी। कहने लगा महात्मा कि आप मुझे दण्ड दीजिए, मैं चोर हूँ। उन दिनों चोर के हाथ कट जाते थे। वह हाथ कटवाने के लिए पहुँच गया। राजा ने कहा महाराज! आप क्या बात कर रहे हैं ? हमारे मन में कोई पाप होगा जिस पाप के कारण आप हमारे पास आकर कह रहे हैं कि मैं चोर हूँ। हमारे मन में सन्देह का कोई मूल बीज होगा। उन्होंने कहा कि नहीं, मैं सचमुच चोर हूँ। कमण्डलु से उन्होंने हार निकालकर दिखा दिया कि देखो मैं ही यहाँ से चोरी करके ले गया था। राजा को आश्चर्य हुआ। उसने पता लगाया कि इतने अच्छे महात्मा की ऐसी बुद्धि कैसे हो गई ? पता लगा कि कुछ डाकू लोग लूट का सामान ले जा रहे थे। सिपाही लूट का माल लेकर महल में आए। वही दाल, चावल, सब्जी हमारी रसोई में पहुँच गई। वह लूट का, चोरी का अन्न खाने से महात्मा जी की भी बुद्धि खराब हो गई। इसीलिए जैसा खाए अन्न वैसा बने मन।

अन्नमशितं त्रेधाभिधीयते ।

यह लिखा है कि जो अन्न हम खाते हैं वह तीन प्रकार का हो जाता है। उसका स्थूल भाग मल बनकर निकल जाता है। मध्यम भाग रक्त-रस क्रम से सात धातुओं के रूप में परिणत होता है और सूक्ष्म भाग मन बन जाता है। इसी तरह से हम जो जल पीते हैं जल के भी तीन भाग हो जाते हैं। उसका सूक्ष्म भाग प्राण बनता है। हमारे शरीर में बल आता है। इसीलिए मनुष्य अन्न खाए बिना रह जाता है लेकिन जल के बिना नहीं रह सकता। जो हम तेज का, अग्नि का अंश खाते हैं उससे हमारी वाणी में शक्ति आती है। **तेजोमयी वाक्** कहा गया है। हमारे भोजन में पृथ्वी, जल, तेज तीनों रहते हैं। तीनों से मन, प्राण और वाणी आती है। उसकी शुद्धि पर आज भारत के लोग ध्यान नहीं दे रहे हैं। अन्न का उत्पादन गलत हो रहा है। अन्न का उपार्जन गलत हो रहा है। लोग अपने गाढ़े पसीने की कमाई पहले खाते थे। अब किसी को किसी का लेने में हिचक नहीं होती।

एक व्यक्ति गीता पाठ करता था । उससे पूछा गया कि आप गीता पाठ करते हैं। गीता में क्या है ? उसने कहा गीता में आया है कि समत्त्व होना चाहिए । समता होनी चाहिए । तुमने गीता का अध्ययन किया तो उसको अपने जीवन में उतारा ? कहने लगा कि आधा हो गया बस आधा बाकी है । आधा यह है कि हम दूसरे की चीज अपनी समझ लेते हैं पर अभी अपनी दूसरे की है यह समझना बाकी है । यह गड़बड़ी हो रही है ।

हमारा आहार जो मुँह से जाता है वह अशुद्ध नहीं होना चाहिए । आज यह देखिए हम भोजन की तरफ ध्यान नहीं दे रहे हैं कि हम क्या खाते हैं ? कैसे खाते हैं? भोजन बनाने का भी प्रभाव पड़ता है । किस तरह से बनाया जाए ? शुद्धता से बने, भगवान् को भोग लगे फिर प्रसाद रूप में ग्रहण किया जाए । यह अवस्था हो रही है कि अब गाँव-गाँव में सुरापान का प्रचार हो रहा है । शराब पी रहे हैं लोग । गाँव-गाँव में शराब बन रही है और पुलिस वाले पिला रहे हैं । उस थाने में अपनी ड्यूटी लगाते हैं जहाँ शराब अधिक होती है । क्योंकि ये लोग उनकी कच्ची शराब बिकवाने में मदद करते हैं, पकड़ते नहीं हैं । उनसे वसूली करते हैं । समाज में इस बात का भान नहीं है और हालत यह हो रही है कि हम अपने बच्चों को पढ़ने के लिए भेजते हैं तो जहाँ स्कूल है उसके सामने खोमचे वाले नशीली चीजें बेचते हैं । वे वहाँ से नशा सीखकर आते हैं । बुद्धि वहाँ भ्रष्ट हो रही है । यह सब देखना है । इसकी तरफ हमलोग ध्यान नहीं दे रहे हैं । भोजन जो हम करते हैं उसमें मिलावट है । ऐसी कोई चीज नहीं है जिसमें मिलावट न हो । सब मिला हुआ है, गड़बड़ किया हुआ है । मिर्च-मसाले में मिलावट है । काली मिर्च की जगह तरबूज के बीज मिला दिए जाते हैं । घोड़े की लीद मिला दी जाती है । चावल में कंकड़ मिला दिए जाते हैं । न जाने कितनों की आँतें कट गईं, कितनों के दाँत टूट गए । यह हालत हो रही है । किसी कथित योगी ने कहा था कि लौकी का जूस पियो सबेरे-सबेरे तो तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक होगा । पिया तो एक तो मरते-मरते बचा क्योंकि लौकी जो बढ़ती है वह इंजेक्शन से बढ़ रही है । वही खा रहे हो । पहले आहार तो ठीक कराओ, योग सिखाने बैठे हो । लोगों का आहार जब तक ठीक नहीं होगा योग का कोई अर्थ नहीं हो सकता । सबसे पहले हित, मित, पथ्य, हितकारी माने पर्याप्त और पथ्य भोजन जब व्यक्ति करेगा तब वह योग का अधिकारी होगा ।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।

दूसरी बात यह है कि हमारे भारत में ऋषि-मुनि ज्ञान का दान करते हैं । ज्ञान बेचते नहीं हैं । फीस नहीं लेते । अब आप यह देखिए यहाँ आपलोग आए हैं । किसी से नहीं

कहा गया कि एक थाली का इतना रुपया लिया जाएगा। महात्मा लोग यह काम नहीं करते। व्यवसाय नहीं करते। महात्मा लोग यदि दान भी करते हैं तो अपना कहाँ से करेंगे ?

जिसका चुन्न। उसका पुण्य। अवधूत बाबा का। पाप न पुण्य।

किसी ने लाकर दे दिया तो किसी को दे दिया। यह होना चाहिए। महात्मा लोग कभी किसी वस्तु का विक्रय नहीं करते। ज्ञान का दान करते हैं। प्राचीन काल से ही हमारे भारत का यही नियम रहा है कि ज्ञान का दान होना चाहिए।

आहार एक व्यापक चीज है। जो हम मुँह से खाते हैं केवल वही आहार नहीं है। वह जो हम अपने कान से सुनते हैं वह भी आहार है। आप देखो कि कान में जो शब्द पड़ गया वह लौटकर आ सकता है क्या ? वह फिर बाहर नहीं निकलता। उसका तो स्वभाव पड़ जाता है। जो कान में पड़ा तो पड़ गया।

एक कोई चेला था। गुरु ने उसको मन्त्र दिया। गुरु से झगड़ा हो गया उसका तो बोला कि अब हम तुमको गुरु नहीं मानेंगे। गुरु ने कहा कि मेरा मन्त्र वापस करो। चेला अपने कान में पानी डालकर खोदने लगा। अब कान में पानी डालने से शब्द थोड़े ही निकलेगा। जो भीतर चला गया वह चला गया। अन्जाने में भी बुरी बात सुन लेने से मन में उसका संस्कार पड़ जाता है। इसलिए वेदों में कहा गया– **भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम।**

अपने कानों से दूसरो की निन्दा, दूसरों की चुगली, दूसरों की बुरी कथा न सुनें। आजकल यह हालत हो गई है कि समाज में लोग बैठे रहेंगे तो चुप रहेंगे। अगर सबको मुखर बनाना हो तो किसी की निन्दा शुरु कर दो। सबके मुँह खुल जाएँगे। उसने ये किया, ये किया। चिन्तन करते-करते वही मन में आ जाता है जो आदमी मुँह से बोलता है।

यन्मनसा ध्यायते तद्वाचा वदति। यद् वाचा वदति। तत्कर्मणा करोति।

एक व्यक्ति था। अपने बच्चे को गोद में लेकर उछालता था। आँगन के पास कुँआ था। वहीं जाकर कहता था कि कुँए में फेंक दूँ ? कुँए में फेंक दूँ। वह केवल कह ही रहा था पर एक दिन फेंक ही दिया। जो मनुष्य कहता है वह कभी कर बैठता है। जो सुनता है उसका प्रभाव मनुष्य के मन में पड़ ही जाता है। इसलिए जहाँ तक हो बुरी बात नहीं सुननी चाहिए। अच्छी भगवान् की कथा सुननी चाहिए। ग्राम्य कथा, गँवारू गाने, गँवारू गीत आदि की हमारे भारत में अभी भी परम्परा है। संगीत होते हैं लेकिन सब संगीत

के साथ भगवान् की लीला जोड़ दी गई है । भगवच्चरित्र के साथ उसको जोड़ देने से मनोरंजन भी होता है और भगवान् का स्मरण भी होता है । इसी तरह से देखना । हम जो देखते हैं वह भी आहार है ।

आहार्यन्ते इति आहाराः विषयाः ।

आप अपनी आँखों से भगवान् के दर्शन करते हैं तो वह पुण्य हो जाता है । किसी महात्मा का दर्शन करते हैं । उनके दर्शन से आपके नेत्रों से एक पवित्र धारा आपके हृदय में जाती है । उसी आँखों से किसी अर्धनग्न अवस्था में किसी परस्त्री को आप देख लें और नारी अपने पति को छोड़कर दूसरे की ओर देखे तो कलुषित भावना मन में आ जाती है । इसलिए आँखों से अच्छा देखो । अपनी नाक से अच्छा सूँघो । अपनी जीभ से शुद्ध भोजन करो । आज अपने देश की हालत बिगड़ गई है । हमने आज अपने जन्मदिवस का सन्देश दिया है । उसमें बताया है कि भोक्ता के लिए भोग्य होता है, भोग्य के लिए भोक्ता नहीं होता । आप जो भोजन करते हैं वह इसलिए करते हैं क्योंकि आपका स्वास्थ्य ठीक रहे । ऐसा भोजन आपको नहीं करना चाहिए जिससे कि आपका स्वास्थ्य बिगड़ जाए । ऐसा भोजन नहीं करना चाहिए जिससे आपका मन बिगड़ जाए ।

एक बार एक परिवार में हम पादुका पूजन के लिए गए । एक वृद्धा माता वहाँ थीं। कहने लगी कि महाराज! हमारा मन एकाग्र नहीं होता । मन नहीं लगता । उसके पास एक व्यक्ति बैठा था । वह कहने लगा पेट को कब्रिस्तान बनाई है और कहती है कि मन नहीं लगता । दुनिया भर का भक्ष्याभक्ष्य खाती है । अण्डा, मुर्गी खाती है और कहती है कि मन नहीं लगता । यह बात है । हमें उत्तर देने की आवश्यकता ही न रही।

अब हम व्यापक दृष्टि से देखते हैं अभी आपने गंगा की बात सुनी । हमने जल बिगाड़ दिया । गंगा जल बिगाड़ लिया । गंगा पवित्रता की सीमा मानी जाती थी । उसमें हमने दूषित जल डाल दिए । अनेकों बाँध बन रहे हैं गंगा पर । उत्तराखण्ड में ही अनेकों बाँध बन रहे हैं। गंगा को बाँधा जा रहा है । गंगा की दो प्रमुख धाराएँ हैं। एक भागीरथी और दूसरी अलकनन्दा। भागीरथी गंगोत्री से निकलती है । अलकनन्दा बद्रीनाथ से आती है । उनमें पचासों बाँध प्रस्तावित हैं । बाँध करके बैराज में डालेंगे । पहाड़ों में बैराज बनाए जा रहे हैं । ये सुराख कुदाली और फावड़े से नहीं अपितु ब्लास्टिंग से बनाए जा रहे हैं। पहाड़ हिलता है । पहाड़ में दरार पड़ती है । मकान खिसकते हैं । झरने नीचे चले जाते हैं । सिंचाई के लिए झरने का उपयोग बन्द हो जाता है । हमारे भारत की सेना पड़ी है। उसके पीने की समस्या खड़ी हो जाएगी । बाँध देने से पानी का मल साफ नहीं होगा ।

जल-जन्तु हैं वे पानी को शुद्ध करते हैं। आप देखिए कि हमलोग कुँआ खोदते हैं तो उसको चारों तरफ से बाँध देते हैं लेकिन जमीन से नहीं बाँधते। पानी का सम्बन्ध जमीन से रहना चाहिए और उसका सम्बन्ध आकाश से भी रहना चाहिए। उसमें सूर्य की किरणें और पवन जाना चाहिए तब उसमें ऑक्सीजन आएगा। उसमें जो मछलियाँ और अन्य जल-जन्तु हैं बाँध बना देने से बाँध के इस पार मर जाते हैं। सुराख में जब पानी जाता है तो न तो जमीन से उसका सम्बन्ध रहता है न आकाश से। वह ऑक्सीजन की गुणवत्ता से हीन हो जाता है। ऐसा कई जगह वहाँ किया जा रहा है। फिर शहरों का मल-मूत्र गंगा में डाला जाता है। फिर जो ऐसे कारखाने हैं जिनका अवजल ट्रीटमेण्ट से भी शुद्ध नहीं होता वह गंगा में डाला जा रहा है। आप देखिए कि करोड़ों लोग गंगा-स्नान करेंगे। वे सभी सनातनधर्मी हैं। उनके लिए आप क्या व्यवस्था कर रहे हैं ? वे उसी जल को पिएँगे, उसी में नहाएँगे और आपके रोके रुकेंगे नहीं। क्योंकि एकमात्र साधन हमारे धर्म में यही तो बचा है। पाप धोने कहाँ जाएँ ? गंगा और नर्मदा आदि ही तो है। अगर वह भी हमारी दूषित हो गई तो हम परलोक कैसे बनाएँगे ? इसीलिए लोग चाहते हैं कि हम वहाँ जाएँगे, नहाएँगे। अच्छे-अच्छे लोग जाकर नहाएँगे। बीमार होकर लौटेंगे। इसी तरह से हमलोग यह भी देखते हैं कि भारत के अधिकांश लोग निरामिष हैं। माँसाहार नहीं करते। जो मांसाहार नहीं करते उनके पौष्टिक आहार में मुख्य रूप से गाय का दूध है। अगर गाय ही नहीं रहेगी तो गाय का दूध कहाँ से मिलेगा ? इसकी रक्षा होनी चाहिए। यूरिया ने जमीनों को बंजर कर दिया है। पंजाब के लोगों ने यूरिया डाल-डालकर अपनी जमीन को बंजर कर लिया। अब वे राजस्थान और मध्य प्रदेश में जमीन खरीद रहे हैं। यहाँ भी यदि आपने नहीं सुधारा तो यहाँ की जमीन भी बंजर हो जाएगी। अगर इसको बचाए रखना है तो गोबर की खाद का उपयोग करना पड़ेगा। गाय की रक्षा करनी पड़ेगी।

रामजन्मभूमि की बात है। हमलोगों ने मन्दिर की बात उठाई। मस्जिद के विरोध के लिये नहीं। मनुष्य अपने विचार विश्वास के अनुसार ईश्वर की आराधना करे तो इसमें कोई झगड़े की बात नहीं है। लेकिन जिस भूमि की बात हमलोग करते हैं वह भगवान् राम की जन्मभूमि है। वहाँ प्रभु का अवतार हुआ है। वाल्मीकि रामायण कहती है कि अयोध्या में भगवान् राम का राजा दशरथ के यहाँ कौशल्या के द्वारा अवतरण हुआ है। जब हम अयोध्या जाते हैं तो हमारी आँखें खोजती हैं कि वह भूमि कौन सी है जहाँ **भए प्रकट कृपाला।** हमको परम्परा से यही बताया जाता है कि यह वही भूमि है। हमलोग रामजन्मभूमि की परिक्रमा करने गए थे। वहाँ अंग्रेजी राज के समय के पत्थर लगे हैं।

नं एक का पत्थर जन्मभूमि में लगा हुआ है। वह जन्मभूमि है। हाई कोर्ट में हमलोगों ने यह सिद्ध कर दिया कि वह जन्मभूमि है। कभी वहाँ बाबर आया नहीं। कभी वहाँ मस्जिद बनी नहीं। किसी ने वहाँ तोड़ा नहीं। तोड़ा है तो विश्व हिन्दू परिषद् वालों ने तोड़ा है। इनके तोड़ने से यह भ्रम पैदा हो गया कि यहाँ मस्जिद रही होगी क्योंकि हिन्दुओं ने उसको तोड़ा है। हिन्दुओं ने उसको तोड़कर मस्जिद साबित किया है। वस्तुतः हमलोग वहाँ गए और देखा कि वहाँ चौदह कसौटी का खम्भा है। वहाँ हनुमान जी का चित्र देखा, मंगलकलश देखा, रामयन्त्र बना देखा है चौखट में। कहाँ वहाँ मस्जिद थी। वहाँ कोई ऐसी चीज नहीं थी जो मस्जिद का चिह्न हो। नमाज पढ़ने पर कोई स्थान मस्जिद नहीं हो जाता। सड़क पर भी पढ़ लेते हैं लोग, रेल में भी और अदालत में भी पढ़ लेते हैं लोग। मन्दिर में पढ़ लेने से वह मस्जिद थोड़े ही हो जाएगी? वह रामजन्मभूमि है। हाई कोर्ट में यह फैसला हो गया कि यह रामजन्मभूमि है और यहाँ से राम लला की मूर्ति नहीं हटाई जाएगी। इसी तरह से हमलोगों ने रामसेतु के लिए कहा। रामसेतु की भी रक्षा होनी चाहिए। अभी स्थिति यह है कि एक पचौरी नाम के सज्जन थे। उनको कहा गया था कि कोई दूसरा रास्ता खोजो। उन्होंने रिपोर्ट दी है कि इसको छोड़कर अन्य कोई दूसरा रास्ता नहीं है। हाई कोर्ट में उन्होंने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी है। हाई कोर्ट ने भारत सरकार से पूछा है कि आपका क्या कहना है ? भारत सरकार के एडवोकेट जनरल ने कहा है कि हम रिपोर्ट को नहीं मानते। हम कैबिनेट की बैठक में इसको तय करेंगे। हमलोग प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कैबिनेट क्या कहती है। अगर कैबिनेट यह मान ले कि इसकी सचमुच जरूरत नहीं है। भारत की सुरक्षा के लिए भी उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। यदि यहाँ कोई मार्ग बन गया तो चीन भी आ जाएगा, पाकिस्तान भी आ जाएगा, भारत की दक्षिण सीमा असुरक्षित हो जाएगी। पर्यावरण की भी क्षति होगी और **सेतुबन्धे च रामेशं** सेतुबन्ध में रामेश्वर है। सेतुबन्ध के दर्शन से ब्रह्म हत्या दूर होती है यह शास्त्रों में लिखा है वह हमारा धार्मिक स्थान नष्ट हो जाएगा। हमलोग यह नहीं चाहते कि सेतुबन्ध को भी छेड़ा जाए। यही सब बातें हमलोग कहते हैं लेकिन इन सब बातों को हम सत्ता प्राप्ति की सीढ़ी नहीं बना रहे हैं। इसके द्वारा हमें कुछ पद मिल जाए, हमारी सरकार बन जाए, हम शासन करें यह हमलोगों का लक्ष्य नहीं है। हम जो बात कह रहे हैं अभी आप लोगों के सामने तो जिस स्थान से बोल रहे हैं शङ्कराचार्य बनकर बोल रहे हैं। अब इससे बढ़कर और कौन सा पद होगा जिसके लिए हम बोलेंगे। हमें इसके बदले में कुछ नहीं चाहिए लेकिन हम यह देख रहे हैं कि हिन्दुओं का जो सनातन धर्म है इसमें गंगा आती है, गायत्री आती है, वेद आते हैं, शास्त्र आते

हैं, जिसमें यह सब भागवत, पुराण आते हैं इनका कोई समर्थक इस समय दिखाई नहीं पड़ता है । सब उलट-पुलट बोल रहे हैं । कहते हैं कि जो हिन्दुस्तान में जन्मे वह हिन्दू। हिन्दुस्तान में तो सब पैदा हो रहे हैं । इससे उनकी भी पहचान मिटी और हिन्दुओं की भी मिटी । यह नहीं होना चाहिए । जो हिन्दू धर्म को माने, जो हिन्दू वेद-शास्त्र, पुराणों को माने, गंगा को माने वह हिन्दू है । जो इस्लाम को माने, कुरान को माने वह मुसलमान है । जो बाइबिल को माने, ईसाई धर्म को माने वह ईसाई है । परिभाषा हिन्दू धर्म के साथ लगना चाहिए कि जो हिन्दू धर्म को माने वह हिन्दू । यह सब बातें हमलोगों को सोचना है । यह सब इसलिए गड़बड़ हो गया है क्योंकि हमने अपना देखना सुनना बोलना सब बिगाड़ लिया है । आहार की शुद्धि खत्म हो गई है । इसको ठीक करना चाहिए । यहाँ से बात शुरु होती है ।

आप सब लोग यहाँ पधारे हैं । सभी लोगों ने बड़ी अच्छी भावनाएँ व्यक्त कीं और हमलोगों का, सबका लक्ष्य यह है कि हमारा देश, हमारा समाज धर्म के मार्ग से आगे बढ़े । इस देश में फिर से रामराज्य आ जाए। सब लोग परस्पर प्रेम रखें । सबलोग शुद्धता से रहें । **नहिं दरिद्र कोउ दुःखी न दीना ।**

सारे विश्व को भारत से प्रेरणा मिले । यहाँ से हमारे सदाचार हैं, जो धर्म के सामान्य नियम हैं उन सबको लोग अपनाएँ तो मानवता का विकास होगा । आज के दिन सबके लिए, आप सबके लिए और आपके माध्यम से आपके पारिवारिक जनों और देश के लिए अपनी नारायणस्मरणात्मक शुभाशंसा व्यक्त करते हुए हम अपना प्रवचन पूर्ण करते हैं ।

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[25]

।। राम राम पच्चीस ।।

अभ्युदय-निःश्रेयस की सिद्धि करे वह धर्म

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

हमलोगों ने अभी धर्म की जय हो का नारा लगाया । धर्म क्या है ? प्रश्न आता है कि धर्म की परिभाषा क्या है ? किसको धर्म कहते हैं ? इसके उत्तर में वैशेषिक दर्शन है एक उसने परिभाषा दी है –

यतोभ्युदयनिःश्रेयस सिद्धि स धर्मः ।

जिससे लोक-परलोक में अभ्युदय हो और मोक्ष हो जाए, निःश्रेयस हो जाए उसको धर्म कहते हैं । फिर भी समझ में नहीं आया कि आखिर वह कौन सा धर्म है जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस होते हैं । उसकी पहचान तो बताइए । उत्तर में कहा - **वेदप्रणिहितो धर्मः ।** जो वेद के द्वारा प्रतिपादित है । जिसको वेद ने कर्त्तव्य रूप से बतलाया है उसको धर्म कहते हैं । वेद के द्वारा प्रतिपादित धर्म कब से है ? किसने उसको चलाया ? अगर इस सम्बन्ध में कोई प्रश्न करे तो इसका उत्तर यह है कि वेदों का कोई कर्ता नहीं है । वेद अनादि हैं, अपौरुषेय हैं। इसलिए उनके द्वारा जो धर्म प्रतिपादित हुआ है वह भी अनादि और अपौरुषेय है । इसीलिए उसके आगे विशेषण लगाते हैं सनातन। वैसे सनातन लगाने की जरूरत नहीं है । धर्म शब्द से ही सब कुछ निकल आता है लेकिन सनातन इसलिए लगाते हैं क्योंकि आजकल अनेकों मत-मतान्तर फैले हैं । उन मत-मतान्तरों में और धर्म में क्या अन्तर है ? यह लोगों को समझ में नहीं आता । वे मत भी अपने को धर्म कहते हैं । इसका उत्तर है कि जो दूसरे मत हैं उनको किसी न किसी ने चलाया है । जिसने चलाया उसका बाप उस धर्म का अनुयायी नहीं था। वह उसके पहले का नहीं अपितु उसके बाद का है । जैसे आप समझ लीजिए कि आर्यसमाज को स्वामी दयानन्द जी ने चलाया। दयानन्द जी के पिता कर्षण जी आर्यसमाजी नहीं थे । हर मत का कोई सन् संवत्सर है कि वह कब शुरू हुआ । आप समझ लीजिए कि ईसाई धर्म है । अभी २०१२ चल रहा है । २०१२ साल पहले ईसाई धर्म चला । इसके पहले कौन सा धर्म था ? हम यह कहेंगे जिसका कोई आदि नहीं है और जिसका कोई अन्त नहीं है वह सनातन है । सना का मतलब है सदा और तन का अर्थ है रहने वाला । जो

सदा रहने वाला है वह धर्म सनातन धर्म है। कहा भाई ! आपके जो राम हैं, राम नाम जो आपलोग लेते हैं यह राम नाम भी तो राम के बाद ही शुरु हुआ है। उसके पहले दशरथ कौन सा नाम जपते थे ? आप भी बताइए। तो हमलोग यह कहते हैं कि राम के पिता दशरथ भी राम नाम लेते थे, अज भी राम का नाम लेते थे और उनके पिता दिलीप भी राम का नाम लेते थे। राम अनादि हैं। राम का कोई आदि नहीं है।

इसके लिए एक दृष्टान्त है कि जब भगवान् श्रीराम को वनगमन की आज्ञा हुई और वे वन जाने लगे तो सीता जी ने कहा कि हम भी आपके साथ चलेंगे। भगवान् राम बोले कि देखो सीते तुम मत चलो। यहाँ वन में बहुत कष्ट होते हैं। तुम्हारे इन सुकोमल चरणों को बहुत काँटे लग जाएँगे। कंकड़ों से तुम्हारे चरण बिंध जाएँगे और वहाँ बड़े-बड़े भयंकर जानवर हैं, साँप हैं, बिच्छू हैं। तुम तो यहीं रहो। कहते हैं कि –

पितुगृह कबहुं कबहुं ससुरारी। रहहु जहाँ रुचि होइ तुम्हारी।
दिवस जात नहि लागहिं बारा। सुन्दरि सिखवन सुनहु हमारा।

जब आपकी इच्छा हो यहाँ रहो जब चाहे पिता के घर में रहो। चौदह वर्ष बीत जाने में विलम्ब नहीं लगेगा। हम आ जाएँगे। तुम मत चलो। सीता जी बोली हम तो चलेंगे। भगवान् बोले हम नहीं ले चलेंगे। सीताजी ने कहा कि हमारे बचपन में एक तापसी हमारे घर आई थी। उसने हमको रामायण की कथा सुनाई थी और उसमें यह सुनाया था कि राम को जब पिता ने वनवास दिया तो सीताजी साथ गईं थीं। अब क्या आप दूसरी रामायण रचोगे ? तब भगवान् बोले ठीक है चलो।

यह सनातन है। पहले भी राम हुए हैं। पहले भी दशरथ-कौशल्या हुए हैं। उनके घर में राम हुए हैं और वे भी वन गए हैं और उनके साथ सीताजी वन गई हैं। यह हमारा अनादि धर्म है। हमलोग मत-मतान्तर नहीं मानते। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् अर्जुन को कर्मयोग का उपदेश दे रहे थे। अर्जुन को सन्देह हुआ कि यह कर्मयोग भगवान् श्रीकृष्ण का अपना मत है। इस कर्मयोग मत के ये प्रवर्तक हैं। जहाँ कहीं किसी के द्वारा कोई वस्तु, कोई सिद्धान्त स्थापित होता है उसमें हम भारतीयों की श्रद्धा नहीं होती। बहुत से मत-मतान्तर अब भी पैदा हो रहे हैं लेकिन उनके प्रति हमारी श्रद्धा थोड़े दिन ही रहती है। उदाहरण के लिए सन्तोषी माता पैदा हो गईं। कुछ दिन खूब चलीं लेकिन आज सन्तोषी माता का पता ही नहीं। अब शिरडी की माया चल रही हैं। इनके मन्दिर बन रहे हैं। कहीं पुट्टपारथी, ब्रह्मा कुमारी चल रहे हैं। लेकिन यह सब थोड़े दिनों का ही है। सब चले जाएँगे क्योंकि हमलोग परम्परा को मानने वाले हैं। अनादि काल से जो

धर्म चला आ रहा है उस पर हमारी श्रद्धा होती है। नये-नये जो निकाल लेते हैं उनसे तो ज्यादा हमारी बुद्धि है। हम भी निकाल सकते हैं पर हमलोग इसलिए नहीं निकालते कि धर्म हमारी बुद्धि की उपज नहीं है। धर्म ईश्वर की बुद्धि की उपज है। इसलिए जो शङ्कराचार्य लोग हैं वे फतवा नहीं देते। व्यवस्था देते हैं। अगर कोई उनसे यह पूछे कि एकादशी कब की है तो वे फतवा नहीं देंगे। वे शास्त्र के अनुसार देखेंगे कि कब एकादशी मानी जाएगी। शास्त्र में इसका क्या विधान है। जन्माष्टमी कब है। प्रत्येक वस्तु के सम्बन्ध में शास्त्र को ही आगे रखकर वे व्यवस्था देते हैं। मनमाना फतवा नहीं देते। इसलिए उनको आचार्य कहते हैं।

आचार्य भी मत प्रवर्तक नहीं होते। भगवान् श्रीकृष्ण ने जब अर्जुन को कर्मयोग की शिक्षा देना प्रारम्भ किया तो अर्जुन के मन में भावना आई कि क्या यह कृष्ण का अपना मत है ? तब श्रीकृष्ण बोले –

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययं।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्॥

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप॥

हे परंतप अर्जुन ! यह योग मैंने सृष्टि के प्रारम्भ में विवस्वान् को सुनाया था। विवस्वान् ने मनु को सुनाया। मनु ने इक्ष्वाकु को सुनाया। फिर परम्परा से राजर्षि इसका पालन करते रहे। बहुत काल हो जाने के कारण यह योग नष्टप्राय हो गया था। वही पुरातन योग मैंने तुझको आज सुनाया है। अर्जुन ने कहा महाराज! हमको एक शंका हो गई है। शंका बड़ी बुरी चीज होती है।

एक व्यक्ति था। उसको बार बार शंका हो जाती थी। हर बात में शंका करता था। गाँव के लोगों ने उसका नाम शंकाराम रख दिया। जब लोग बार-बार उसे शंकाराम-शंकाराम कहने लगे तो उसको उस गाँव से वैराग्य हो गया। संन्यास लेकर घर से निकल गया। घूमता-घूमता एक गाँव में पहुँचा। वहाँ पूछा कि यहाँ कोई ब्राह्मण का घर है। बोले कि हाँ है। गए वहाँ। गृहस्थ के घर में गृहणी थी। उसने बहुत आदर किया। भोजन बनाया खूब खिलाया पिलाया। जब शंकाराम बैठे तो उसने हाथ जोड़कर कहा कि महाराज ! एक शंका है। उसने सोचा कि अब यहाँ भी शंका आ गई ? गृहिणी ने कहा कि शंका यह है कि यह गाँव मुसलमानों का है। हम भी मुसलमान थे। गाँव के

लोगों ने यह कहा कि यहाँ साधु-महात्मा आकर चले जाते हैं । अपने में से ही किसी एक को ब्राह्मण बना दो । सबने मिलकर हमको ब्राह्मण बना दिया है महाराज! हमारी तीन लड़कियाँ हैं और तीन लड़के हैं । तीन लड़कियों को मुसलमानों में व्याह दिया । अब दो लड़के हैं । इनका विवाह हम हिन्दू में करें या मुसलमानों में करें यह शंका है । शंकाराम बोले कि हमने तुम्हारे यहाँ भोजन कर लिया हमको भी यह शंका है कि हम श्मशान में जाएँ या कब्रिस्तान में जाएँ । **संशयात्मा विनश्यति ।**

संशयापन्न आत्मा विनष्ट हो जाता है । लेकिन शंका का स्वभाव अलग है और जिज्ञासा अलग है । जिज्ञासा तो होना चाहिए । अर्जुन ने जिज्ञासा की । अर्जुन ने पूछा कि महाराज ! आपका जन्म जो है अभी-अभी हुआ है। हममें आपमें कोई ज्यादा अन्तर नहीं है और विवस्वान् का जन्म सृष्टि के प्रारम्भ में हुआ था तो मैं कैसे मान लूँ कि यह योग आपने विवस्वान् को सुनाया था ।

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः ।
कथमेतं विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति ।।

मैं कैसे समझूँ कि आपने ही सुनाया था ? भगवान् ने उत्तर दिया –

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि नत्वं वेत्थ परंतप ।।

हे अर्जुन ! मेरे तेरे बहुत जन्म हो गए । मैं उन सबको जानता हूँ और तू उन सबको नहीं जानता । अर्जुन ने पूछा कि महाराज ! जब आपके भी जन्म हुए और मेरे भी हुए तो आप क्यों जानते हैं और मैं क्यों नहीं जानता? भगवान् बोले कि तू जीव है, मैं ईश्वर हूँ । तू अल्पज्ञ है, मैं सर्वज्ञ हूँ । तू अल्प शक्ति वाला है, मैं सर्वशक्तिमान हूँ । तू परिच्छिन्न है, मैं अपरिच्छिन्न हूँ । तू कर्म के बन्धन में बँधा है और मैं कर्म से मुक्त हूँ । इसलिए मैं जानता हूँ और तू नहीं जानता। अर्जुन ने कहा कि यह तो हमारी शंका का समाधान हो गया लेकिन यह प्रश्न आता है कि हम कर्म बन्धन में पड़े हैं, हम जीव हैं, परतन्त्र है इसलिए हमारा जन्म होना तो ठीक है परन्तु आपका जन्म क्यों होता है ? आपने ऐसा कौन सा कर्म कर दिया कि आपको जन्म लेना पड़ा ? भगवान् बोले –

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोपि सन् ।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया ।।

अर्जुन ! मैं अज हूँ । अव्ययात्मा अविनाशी हूँ । सब जगत् का, सब प्राणियों का

ईश्वर हूँ तो कोई मुझे जन्म लेने के लिए बाध्य नहीं कर सकता और मैं अज होकर जन्म लेने वाला बन भी नहीं सकता। यह तो परिणाम हो जाएगा। दूध यदि दही हो जाए तो दूध का काम दही से कैसे निकलेगा ? मैं अज होकर जन्म वाला हो जाऊँ तो मेरा स्वरूप ही बदल जाएगा। कहते हैं कि मैं ज्यों का त्यों हूँ। अव्ययात्मा हूँ। प्राणियों का ईश्वर हूँ इसलिए

प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय।
स्वां सच्चिदानन्दलक्षणां स्वरूपभूतां प्रकृतिं अपरित्यज्यैव सम्भवामि।

अपनी सच्चिदानन्दरूपा स्वरूपभूता जो प्रकृति है उसको बिना छोड़े ही मैं अवतार धारण करता हूँ। किसलिए अवतार धारण करते हैं ? धर्म की रक्षा के लिए। धर्म पहले से है। श्रीकृष्ण को या श्रीराम को हम भगवान् मानते हैं लेकिन हमारे धर्म के वे प्रवर्तक हैं यह नहीं मानते। वे उस धर्म के रक्षक हैं।

त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता।

आप शाश्वत धर्म के रक्षक हैं। उस धर्म में जब ग्लानि हो जाती है तब भगवान् का अवतार होता है। इसलिए कोई उपदेश भगवान् ने दिया है केवल इसलिए हम उसको नहीं मानते हैं। वेदानुकूल बोल रहे हैं इसलिए मानते हैं। गीता भगवान् ने कही है इसलिए प्रमाण नहीं है। यह उपनिषद् के अनुकूल है इसलिए प्रमाण है। समस्त उपनिषदों को गाय बनाकर श्रीकृष्ण ने गीतारूपी अमृत का दोहन किया है। यह उपनिषदों का सार होने के कारण प्रमाण है। भगवान् श्रीकृष्ण के मुख से निकलने के कारण प्रमाण नहीं है। अगर ऐसा होता तो बुद्ध के वचन को हमलोग प्रमाण मान लेते। बुद्ध भगवान् के अवतार हैं लेकिन उनके बताए मार्ग को हमलोग नहीं मानते। वह सनातन धर्म के अनुकूल नहीं समझते। इसलिए तुलसीदास जी ने कहा है –

अतुलित महिमा वेद की तुलसी कीन विचार।
जेहि निन्दत निन्दित भयो विदित बुद्ध अवतार ।।

वेद की महिमा अतुलित है। तुलसी ने इसका विचार किया है। वेद की निन्दा करने के कारण भगवान् बुद्ध स्वयं ही निन्दित हो गए। वेद निन्दित नहीं हुआ। इसलिए भगवान् शङ्कराचार्य जी ने आकर पुनः सनातन धर्म की प्रतिष्ठा करके बुद्ध भगवान् को नमस्कार करते हुए भी उनके बताए हुए सिद्धान्तों का खण्डन कर दिया। जो अद्वैत सिद्धान्त नारायण से चला था।

नारायणं पद्मभवं वशिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्र पराशरं च ।
व्यासं शुकं गौडपदं महात्तं गोविन्दयोगीन्द्रमथास्य शिष्यम् ।।

नारायण, ब्रह्मा, शक्ति, पराशर, व्यास, शुक, गौड़पादाचार्य, गोविन्दपादाचार्य यहाँ तक ब्रह्मविद्या आई और गोविन्दपादाचार्य जी ब्रह्मविद्या को लेकर साँकल घाट की एक गुफा में जाकर ध्यान में बैठ गए । विद्या विलुप्त हो गई । शङ्कर भगवान् ने आदि शङ्कराचार्य के रूप में अवतार लेकर उस गुफा में जो ब्रह्मविद्या थी उसको गोविन्दपादाचार्य जी के द्वारा ग्रहण किया और उसको पूरे भारत में फैला दिया । उसके पहले पूरे भारत में बौद्ध धर्म फैल गया था लेकिन शङ्कराचार्य जी ने जैसे ही अद्वैत का शंख बजाया सब छोड़-छाड़कर उनके पीछे आ गए। वैसे ही जैसे भगवान् श्रीकृष्ण की वंशी बजी तो सब मोहित हो गए ।

हमलोग एक बार अजन्ता की गुफा देखने गए थे । वहाँ एक गाइड था मुसलमान। वह सब बता रहा था। बड़े पुराने-पुराने चित्र वहाँ थे । हमलोग देखते गए । एक स्थान पर गए जिसमें बहुत बड़ा हॉल था । भवन बना हुआ था । उसने बताया कि यहाँ पर दस हजार बौद्ध साधक प्रार्थना किया करते थे । लेकिन यह जो मठ था यह उजाड़ हो गया था । यहाँ कोई आता नहीं था । आने का रास्ता नहीं था । जंगल हो गया था । एक अंग्रेज शिकारी आया । उसने इसका पता लगाया । हमने पूछा कि बताओ यह उजाड़ कैसे हो गया ? उस मुसलमान ने कहा कि जब शङ्कराचार्य यहाँ आए तो जो उन्होंने उपदेश दिया तो ये लोग सब छोड़-छाड़कर उनके पीछे लग गए । क्योंकि जो सत्य बात होती है वह गले के नीचे उतर जाती है ।

तत्त्वपक्षपातो हि स्वभावो धियाम् ।

बुद्धि का स्वभाव है कि वह तत्त्व का पक्षपात करती है । जब कोई व्यक्ति सही बात कहता है तो उस समय भले ही बुरा मान ले लेकिन मन में बैठ जाता है कि इसने जो कहा वह ठीक है। मन में तो बैठ ही जाता है । यह अपने सनातन धर्म की बात है । वह परमात्मा कभी राम के रूप में अवतार लेते हैं, कभी कृष्ण के रूप में, कभी विभिन्न रूप में अवतार लेकर जगत् की रक्षा करते हैं ।

कल एक संवाद लोगों ने सुनाया सीता जी के निर्वासन का । बड़ा करुण था । बहुत से लोग भगवान् राम के ऊपर यह आक्षेप करते हैं कि सीता जी पर उन्होंने अन्याय करके उनका निर्वासन कर दिया । उन्हें निकाल दिया । नारियों के साथ उन्होंने अन्याय किया।

कुछ लोग कहते हैं कि सीता जी से लोगों ने पूछा कि जब राम वन में गए तो तुम साथ में गई। जब तुम वन में आई तो राम क्यों नहीं आए ? तुम्हारे साथ अन्याय हुआ है। कल आप लोगों ने यह सब सुना। लेकिन इसके पीछे एक रहस्य है। रहस्य यह है कि सीता जी के पेट में जब बालक आ गए तो स्त्री के मन में जो भावना आती है उसको पूरी करना पति का कर्त्तव्य हो जाता है। उसको दोहद कहते हैं। उत्तर रामचरित में यह कथा है कि एक दिन एक चित्रकार राजमहल में आया जिसने भगवान् के जन्म से लेकर अभी तक के समस्त चित्र बनाए। वह भगवान् को अर्पित किए। वह चित्र भगवान् सीता जी को दिखा रहे थे। भगवान् राम का अवतार, बाल लीला, वशिष्ठ जी के यहाँ पढ़ना, विश्वामित्र जी का आना, राम-लक्ष्मण को माँगना, राम-लक्ष्मण को भेजना, बीच में दशरथ जी पर विश्वामित्र जी नाराज भी हुए थे, यह सब चित्र में थे। फिर उसके बाद ताड़का आई। ताड़का को भगवान् ने एक बाण से मारा क्योंकि वह विश्वामित्र जी को ही खाने दौड़ी थी। गुरुजी मर जाएँगे तो हम रहकर क्या करेंगे ऐसा कहकर बाण मारा था। उसके अनन्तर ताड़का वध से परितुष्ट होकर विश्वामित्र जी के पास कृशाश्व मुनि के ४९ दिव्य अस्त्र थे पुत्र रूप में। वह सब विश्वामित्र जी को परम्परा से प्राप्त हुए थे। उन्होंने सब राम को अर्पित कर दिया। यह पूछा सीता जी ने कि यह आपको क्या दे रहे हैं ? राम बोले कृशाश्व मुनि के द्वारा अर्पित दिव्य अस्त्र जो विश्वामित्र जी के पास थे वे उन्होंने मुझको दिए हैं और वे ही अस्त्र मैं तुम्हारे पेट के बालक को दे रहा हूँ। लव कुश को वही मिल गया।

रामराज्य में कोई दरिद्र, दीन-हीन नहीं था। भगवान् के जो दूत थे रात को निकलकर देखते थे कि कौन क्या कह रहा है ? प्रजा के मन में कौन सी बात उठ रही है इसका वे पता लगाते थे। राजा जो होते हैं वे चार की आँखों से देखते हैं - दूतों के, गुप्तचरों की आँख से देखते हैं। एक जगह बालक दूध नहीं पी रहा था। रो रहा था। माँ कह रही थी कि बेटा दूध पी ले। इसके बाद तेरा जन्म नहीं होगा। तू रामराज्य में जन्मा है। माँ का दूध तेरे लिए दुर्लभ हो जाएगा। ऐसा माँ कह रही थी। एक जगह स्त्री-पुरुष चौपड़ खेल रहे हैं। स्त्री कहती है कि अबकी पासा मेरा पड़ेगा। पुरुष कहता है कि अरे तू माया है। तेरा पासा तो जन्म-जन्म से पड़ता आ रहा है। अब राम राज्य में मैं आया हूँ। अब मेरा पासा पड़ेगा। मैं अब तेरे बन्धन से मुक्त हो जाऊँगा। ऐसी चर्चा खेल में होती थी। वहीं एक रजक के मन में शंका आ गई। उसकी स्त्री कहीं बाहर रह गई थी तो उसने पूछा कि अभी तक कहाँ रही ? दूसरे के घर में रहने वाली स्त्री को मैं नहीं रख सकता। मैं राम नहीं हूँ। यह बात गुप्तचर ने आकर कान में भगवान् राम को

बताया कि यह प्रवाद एक रजक के मुख से हमने सुना है । उसी बीच में जानकी जी को जब वनवास के दृश्य दिखाए गए । ऋषि-मुनियों का आश्रम दिखाया गया तो सीता जी के मन में दोहद आया । एक उनका हृदय और एक बालक का हृदय । यह दोहद आया कि मैं वन में जाकर निवास करूँ। जानकी जी बोलीं कि मेरी इच्छा है कि कुछ दिन ऋषि-मुनियों के आश्रम में आपके साथ रहूँ । भगवान् ने कहा कि ठीक है । तुम अभी चली जाओ । मैं राजकाज में फँसा हूँ । दुर्मुख की बात उनके मन में आ गई थी । उन्होंने सुन लिया था । उन्होंने यह सोचा कि धोबी की बात नहीं है । यह लोगों के दिल की शंका है । इस शंका का निवारण यदि नहीं हुआ तो सीता जी के पुत्रों पर लोगों की श्रद्धा नहीं रहेगी । राम के हैं कि रावण के हैं कौन कहेगा ? इस शंका का निवारण कैसे हो ? यदि मैं डोली पिटवाऊँ कि सीता निर्दोष है तो लोग कहेंगे कि राजा का प्रचार है । सरकारी प्रचार है । आज भी ऐसा ही होता है और अगर हम वशिष्ठ जी से कहलवाएँगे तो कहेंगे कि वशिष्ठ जी तो उनका नमक खाते हैं । इसलिए वे चाहते थे कि किसी एक ऐसे तपस्वी सत्यभाषी महात्मा के द्वारा यह बात आए । इसलिए उन्होंने जान-बूझकर सीता जी को निष्कलंक सिद्ध करने के लिए उनके निर्वासन का नाटक किया । यह उनकी नीति थी । हृदय से सीता जी का त्याग नहीं था । नीति के साथ-साथ प्रीति । प्रीति यह रही कि आजीवन एकपत्नी व्रती रहे। यज्ञ के लिए भी दूसरी पत्नी से विवाह नहीं किया । स्वर्णमयी प्रतिमा सीता की रखी गई । यह प्रीति थी राम जी की । स्वार्थ यह कि हमारे बालक जब ऋषि-मुनियों के आश्रम में जन्मेंगे तो उनकी शिक्षा ग्रहण करेंगे । उनका भविष्य उज्ज्वल होगा । इसलिए उनको वहाँ भेज दिया । परमार्थ यह कि अब जब बच्चा पेट में माँ के आ ही गया तो संसार के भोग से अब वैराग्य ले लेना चाहिए । क्षत्रिय को संन्यास नहीं लेना है । उसको तो राजकाज करना है । राजकाज करते हुए भी संन्यासी के जैसा जीवन राम जी ने रखा।

नीति प्रीति स्वारथ परमारथ । कोउ न राम सम जान यथारथ ।

इसके बाद आपने देखा होगा । हम नहीं बता पाए कि उन बालकों ने सारी अयोध्या की सेना को छका दिया । पराजित कर दिया । अंगद हनुमान को भी पराजित कर दिया। बात क्या है कि जो व्यक्ति राजा के अन्याय का विरोध नहीं करता वह भी दण्ड का पात्र होता है । सीता जी का निर्वासन हुआ तो कोई तो बोला होता कि आपको ऐसा नहीं करना चाहिए । सब चुप रह गए । तुम कैसे भक्त हो ? लव-कुश ने उनको दुरुस्त किया। इसके बाद फिर राम आए । जब किसी से नहीं संभले यह दोनों बालक तब राम आए । राम

ने दिव्य अस्त्र छोड़े। जो दिव्य अस्त्र उन्होंने छोड़े वही बालकों ने भी छोड़े । उन्होंने सोचा कि यह कहाँ से आ गया इनके पास ? उनके मन में यह सन्देह हो गया कि कहीं ये सीता के ही पुत्र न हों । मेरे ही बेटे न हों । उन्होंने बाण एक तरफ रखा और पूछा कि बताओ। तुम्हारी माता का क्या नाम है ? बोले हमारी माँ का नाम है वनदेवी । कहा अच्छा । पिता का नाम ? तो कुश ने कहा कि हम नहीं जानते । लव बोले कि हमको पता है तुम्हारे पिता का क्या नाम है ? एक बार हमारी माता हमारे ऊपर रुष्ट हुई तो उन्होंने हम दोनों को डाँटते हुए कहा कि –**निरनुक्रोशपुत्रौ** ।

तुम निरनुक्रोश के बेटे हो। इसका मतलब यह है कि हमारे पिता का नाम निरनुक्रोश था । अनुक्रोश कहते हैं दया को और निरनुक्रोश कहते हैं निर्दयता को । तुम निर्दयी के बेटे हो यह कहा सीता जी ने । भगवान् के नेत्रों में आँसू आ गए । यह सब बढ़िया कथा है ।

सीता जी का कभी उन्होंने हृदय से त्याग नहीं किया । सीता जी उनके हृदय में सदा बसी रही । अभी हमलोगों का सत्संग चल रहा था । एक प्रतिमा नाटक है जिसमें बताया गया है कि भगवान् ने अनेकों यज्ञ किए। अश्वमेध यज्ञ किए और प्रत्येक में सीता जी की स्वर्णमयी प्रतिमा रहती थी । उस पर प्राण-प्रतिष्ठा कर दी जाती थी । एक कक्ष में रख दी गई थी । एक बार भगवान् राज काज देखते हुए उस कक्ष में गए । वह प्रतिमा जीवित थी । कोई बोल रही थी । कोई उठ रही थी । कोई सो रही थी । कोई कुछ कर रही थी । अन्त में सबने देखा राम को तो उनसे बोलीं कि आपके धर्म में तो हम सहयोगी रही हैं । काम में आपने हमारा सहयोग क्यों नहीं किया ? भगवान् श्रीराम बोले अगले जन्म में तुम ब्राह्मणों की पत्नी बनोगी । मथुरा के ब्राह्मणों ने यज्ञ किया था। उनकी जो पत्नियाँ थीं जिन्होंने यज्ञ की सामग्री यज्ञ में न देकर भगवान् श्रीकृष्ण को अर्पण की ये वे सीताएँ थीं। इस तरह से इन लोगों का जो चरित्र है वास्तव में तो यह सब लीला है। सीता और राम को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता । इसलिए तुलसीदास जी ने सीता जी के निर्वासन की कथा ही नहीं सुनाई ।

गिरा अर्थ जल वीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न ।
वन्दौ सीताराम पद जिनहिं परमप्रिय खिन्न ।

इतना जरूर है कि गोस्वामी तुलसीदास जी भी भगवान् राम से इस मामले में थोड़े नाराज हो गए । वे कहते हैं कि –

दुई दुई सुत सब भ्रातन केरे ।

सब भाईयों के दो-दो बेटे हुए । भरत के दो, लक्ष्मण के दो, शत्रुघ्न के दो बेटे हुए लेकिन राम के बेटे नहीं बताए । जब रामजी के बेटों के बताने का अवसर आया तो बोले-

दुई सुत सुन्दर सीता जाए । लव कुश वेद पुराणन गाए ।

सीता जाए कह दिया । बात क्या है कि जो मायके में बेटे को जन्म देती है तो उसका नाम वहाँ से चलता है कि ये उसके बेटे हैं । तुमने सीता का त्याग किया इसलिए तुम बाप कहलाने के अधिकारी नहीं हो । यह सब चरित्र की बातें हैं । आज इतना ही कहकर समाप्त करेंगे ।

उर्मिला जी महामहिम हैं, गवर्नर हैं लेकिन आपने देखा कि इनके मन में जरा भी अभिमान नहीं है । निरभिमान । अपने को वैसे ही मान रही हैं और हमलोग यही चाहते हैं कि मनुष्य किसी भी पद पर चला जाए अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करे लेकिन उससे निर्लिप्त रहे । निर्लिप्त होकर अपने कर्त्तव्य का पालन करे और अपने स्वरूप को कभी न भूले ।

एक राजा था । उसके पास एक व्यक्ति आया । वह बड़ा बुद्धिमान था पर बहुत गरीब था । फटे कपड़े पहने आया । राजा से कहा कि हमको आप आश्रय दीजिए । हम कुछ सेवा करना चाहते हैं । उन्होंने आश्रय दिया। अपनी योग्यता से बढ़ते-बढ़ते प्रधानमन्त्री बन गया। प्रधानमन्त्री बनकर उसने इतना अच्छा राज्य चलाया कि राजा बहुत प्रसन्न हो गया लेकिन वह अपने आवास में, कमरे में एक घण्टा बन्द रहता था । भीतर से किवाड़ बन्द कर लेता था । कुछ विरोधियों ने राजा से इस बात की शिकायत की कि यह मन्त्री आपका बुद्धिमान तो है लेकिन एक घण्टा कमरे के भीतर बन्द रहकर कुछ षड्यन्त्र करता है । इसका पता लगाना चाहिए । जिस समय वह भीतर बैठा था उसी समय लोगों ने कहा कि आप अभी जाकर देखिए कि वह क्या कर रहा है ? राजा पहुँचा और किवाड़ खटखटाया । उसने चिल्लाकर पूछा कि किवाड़ खोलो तो उसने खोल दिया। देखा कि वह उसी पुराने कपड़े में जिस कपड़े में वह पहली बार आया था पहने था । वह सोच रहा था कि मैं इतना बड़ा मन्त्री बन गया पहले क्या था ? मुझे इसका अभिमान नहीं करना चाहिए ।

ऐसा निरभिमानी व्यक्ति ही उच्च पद का अधिकारी होता है और वही अपने कर्त्तव्य पालन में सफल होता है । बस इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं । उर्मिला

जी इसी प्रकार सेवा करें। हिमाचल में बहुत ऊँची चोटी के गवर्नर हैं। दूर हटो ऐ दुनिया वालों हिन्दुस्तान हमारा है, ऐसा नारा कभी लगता था। इतने ऊँचे स्थान में बैठी हैं। हमलोग चाहेंगे कि इनका सेवा कार्य अच्छा रहे और आगे भी ये जनता की सेवा करती रहें।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[26]

।। राम राम छब्बीस ।।

भगवान् का अवतार दुरधिगम आत्मतत्त्व को बताने के लिये

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

पिछले प्रवचन में एक श्लोक पर चर्चा हुई थी जो श्रीमद्भागवत की वेदस्तुति में आया है ।

दुरवगमात्मतत्त्वनिगमाय तवात्ततनोश्चरितमहामृताब्धिपरिवर्तपरिश्रमणाः ।
न परिलषन्ति केचिदपवर्गमपीश्वर ते चरणसरोजहंसकुलसंगविसृष्टगुहाः ।।

इसका अर्थ है कि हे प्रभु ! यह वेदस्तुति है । वेद सृष्टि के प्रारम्भ में भगवान् की स्तुति करते हैं । आप अवतार धारण करते हैं । किसलिए करते हैं ? **दुरधिगमात्मतत्त्व निगमाय** माने दुरधिगम जो आत्म तत्त्व है उसके निगम अर्थात् बोध के लिए आप श्रीविग्रह धारण करते हैं । उस विग्रह को धारण करने के साथ-साथ जो विविध प्रकार की आपकी लीलाएँ होती हैं, जो चरित्र आप करते हैं, उनकी चर्चा भक्तजन करते हैं । जो संसार ताप से तप्त प्राणी है वह जब सत्संग में जाता है और वहाँ महापुरुषों से आपके लीलामृत का पान करता है या लीलामृत सिन्धु में अवगाहन करता है, डुबकी लगाता है, जब मनुष्य सत्पुरुषों के पास जाता है तो सत्पुरुषों के पास और क्या चर्चा होगी ? सांसारिक लोगों की चर्चा का विषय सांसारिक लोगों का जन्म और कर्म होता है । किसने कहाँ जन्म लिया । किसने कहाँ अच्छे या बुरे कर्म किए । चाहे कोई भी समाज हो लोग तब तक चुप रहते हैं जब तक कोई चर्चा नहीं छिड़ती । यदि किसी की निन्दा शुरु हो गई तो वही चर्चा का विषय बन जाता है । अखबार में देख लो । टेलीवीजन में देख लो। यही तो है । किसने क्या किया ? कौन कहाँ उत्पन्न हो गया और किसने क्या कर दिया? किसने क्या अच्छा किया और किसने क्या बुरा किया ? बुराई की चर्चा अधिक होती है। उसी में लोगों को आनन्द आता है । दूसरों की बुराई, निन्दा में सुख मिलता है लेकिन उससे मनुष्य के हृदय में ताप होते हैं । मनुष्य के हृदय में राग और द्वेष की वृद्धि होती है । अशान्ति होती है पर जब भगवान् के भक्तों के बीच में मनुष्य जाता है तो वहाँ भी

जन्म-कर्म की चर्चा होती है पर वह सामान्य मनुष्यों के जन्म कर्म की चर्चा न होकर भगवान् के दिव्य जन्म और कर्म की चर्चा होती है। भगवान् श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं–

जन्म कर्म च मे दिव्यं एवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन।।

होता क्या है कि भगवच्चरित्रामृत के अवगाहन से मनुष्य की भगवान् के प्रति भक्ति उत्पन्न होती है। भक्ति क्या है? **भजनं भक्ति।** भजन ही भक्ति है। लोग तो आजकल यही समझते हैं कि झाँज मजीरा लेकर बैठ जाओ, ढोलक लेकर बैठ जाओ, कुछ गा लो तो हो गया भजन। बहुत से लोग तो भजन क्या करते हैं केवल नशा करने की एक गोष्ठी करते हैं। गांजा पी लिया, नशे की चीजें खा ली और नाच रहे हैं। हो गया भजन। यह भजन नहीं है। भजन वह है जिससे भगवान् के प्रति प्रेम का उदय हो जाए। भगवान् के चरित्रों का यदि कोई श्रद्धा से श्रवण करता है, यह समझकर करता है कि जिसके चरित्र का हम श्रवण कर रहे हैं वह वेदवेद्य हैं। परब्रह्म परमात्मा है। जीवों के ध्येय, ज्ञेय, परमाराध्य हैं उसके जन्म की चर्चा हम सुन रहे हैं। उसके कर्म की चर्चा हम सुनते हैं। फिर उनके इस चरित्र के बीच में जो उनका भक्तों के प्रति अनुग्रह है उस अनुग्रह को देखकर उनके स्वभाव को देखकर उनके प्रति प्रेम का उदय हो जाता है।

उमा राम स्वभाव जिन जाना। तिनहिं भजन तजि भाव न आना।

भगवान् के प्रति उनके मन में भाव का उदय हो जाता है। जहाँ प्रेम होता है, प्रेम के पीछे ही आनन्द चलता है। जहाँ प्रेम का उदय हुआ वहीं आनन्द होता है। जहाँ आनन्द होता है वहीं प्रेम होता है। जहाँ प्रेम होता है वहाँ आनन्द होता है। भगवान् की चर्चा से भक्तिरूपी प्रेम का उदय होता है। वह प्रेम क्या है? इसकी परिभाषा नारद भक्ति सूत्र में मिलती है –

अथातो भक्तिं व्याख्यास्यामः। सा तस्मिन् परमप्रेमरूपा च।
अमृत स्वरूपा च।

अब हम भक्ति का व्याख्यान करते हैं। वह भक्ति क्या है? उस परब्रह्म परमात्मा में परमप्रेम का नाम भक्ति है। परम प्रेम का अर्थ यह है कि जिसके लिए हम सबकुछ छोड़ सकें और जिसको किसी के लिए न छोड़ें उसी को परमप्रेम माना जाता है। यहाँ तो प्रेम बहुत से लोगों का होता है। प्रेम के पीछे बहुत से लोग पागल हो जाते हैं। लेकिन कुछ दिनों के बाद फिर नफरत भी आ जाती है। द्वेष भी हो जाता है। जिससे बिना मिले

चाय भी नहीं पीते थे बाद में कभी-कभी ऐसा अवसर आता है कि कहते हैं उसका नाम मत लो । हम उसकी चर्चा ही नहीं सुनना चाहते । यह प्रेम तो टूटने वाला हुआ । यह परमप्रेम नहीं है । परमप्रेम वह है जो कि कभी टूटे न। निरन्तर बढ़ता ही रहे ।

गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षणवर्धमानं अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम् ।

गुणरहितं कहा । कामनारहितं कहा । गुण के पीछे यदि हम प्रेम किसी से करते हैं तो यदि उसमें से वे गुण चले जाएँ तो प्रेम भी समाप्त हो जाएगा । हमारी कुछ इच्छाओं की पूर्ति उससे होती है तो हम उससे प्रेम करते हैं । यदि वह नहीं पूरी होती तो प्रेम समाप्त हो जाता है । लेकिन सच्चा प्रेम वह है जिसके मूल में गुण और कामना न हो । **गुणरहितं कामनारहितं** इसीलिए कहा ।

आज राधाष्टमी है । आज श्रीराधा जी का जन्म हुआ है । नारदभक्तिसूत्र में **यथा व्रजगोपिकानां** दृष्टान्त दिया गया है । प्रेम कैसा होना चाहिए जैसा ब्रज की गोपियों का था।

असुन्दरः सुन्दरशेखरो वा द्वेषोऽथवा स्यात् करुणाम्बुधिर्वा ।

चाहे वह असुन्दर हों या सुन्दरों में शिखामणि हो, चाहे मुझसे द्वेष ही क्यों न करते हों, चाहे करुणाम्बुधि करुणा के सागर ही क्यों न हो, किसी भी अवस्था में श्रीकृष्ण ही हमारी गति हैं । यह उनकी भावना होती है। जहाँ प्रेम होता है वहाँ गुण की बात नहीं देखी जाती । आप देखिए रामचरितमानस में भगवान् शंकर के लिए पार्वती जी तपस्या करती हैं । बड़ी कठिन तपस्या करती हैं । उनकी भगवान् शंकर के प्रति प्रीति है, भक्ति है इसकी परीक्षा के लिए सप्तर्षि जाते हैं । सप्तर्षि जाकर पूछते हैं कि कन्ये ! राजकन्ये! तू इतनी तपस्या क्यों कर रही है ? वे बोली कि मैं भगवान् शंकर को अपना स्वामी बनाना चाहती हूँ । उनके लिए तपस्या कर रही हूँ । कहा यह किसने बता दिया तुझको ? बोली हमारे गुरु जिनका नाम नारद है बाल्यावस्था में हमारे घर आए थे । हमारे माता-पिता ने हमारा हाथ दिखाया तो उस समय उन्होंने कहा कि यह कन्या बड़ी सुलक्षणा है । पति को अत्यन्त प्रिय होगी और इसका अहिवात सौभाग्य अचल होगा । अच्छा महाराज ! यह तो अच्छा है । लेकिन वर कैसा मिलेगा ?

योगी जटिल अकाम मन नगन अमंगल वेष ।
अस स्वामी एहि कहं मिलिहिं परी हस्त असि रेख ।।

इसका जो स्वामी है वह योगी होगा, बड़ी-बड़ी जटाओं वाला होगा । योगी भी होते

हैं, जटिल भी होते हैं। लेकिन मन में कामना तो होती है। कहा अकाम मन। कामना नहीं होगी उसके मन में। किसी प्रकार की इच्छा ही नहीं होगी उसके मन में। कहा धन सम्पत्ति तो कहा नग्न। दिगम्बर रहेगा। वस्त्र आभूषण धारण करता है तो कहा अमंगल वेष होगा, केवल चिता भस्म लपेटा रहेगा। नागों की माला है और नागों के ही कर्णभूषण हैं। कपाल माला है। गजचर्म ओढ़े रहता है। यह भी नहीं कि अच्छा कपड़ा ही पहनता हो। नग्न रहता है। ऐसा स्वामी इसको मिलेगा। ऐसी रेखा हाथ में पड़ी है। सब रोने लगे कि हाय-हाय। मैंना रो रही है कि अरे मेरी बेटी के लिए विधाता ने क्या लिख दिया है ? ऐसा पति इसको मिलेगा। नारद जी ने कहा था कि अगर ऐसा व्यक्ति शंकर हो तो ये दुर्गुण भी गुण हो जाएँगे।

जो तप करइ कुमारि तुम्हारी। भाविहु मेटि सकहिं त्रिपुरारी।

यदि तुम्हारी कुमारी कन्या तप करेगी तो भगवान् शंकर इसकी भावी भी मिटा देंगे। वही मिल जाएँगे। उनमें दुर्गुण भी गुण हो जाएँगे। हमने निश्चय कर लिया कि हम उन्हीं को अपना पति बनाएँगे। गुरु के वचन को मन में धारण कर लिया। सप्तर्षियों ने कहा कि तुम्हारा जो गुरु है उसका कोई ठिकाना नहीं है। इसने कभी किसी के घर को बनाया नहीं है, बिगाड़ा ही है। जो नारद की शिक्षा पर चलता है घर छोड़कर उसे भिखारी बनना पड़ता है। कहाँ खल के बौराई हो ? हमसे बोलो। हम तुम्हारा विवाह वैकुण्ठनाथ से करा देंगे। वैकुण्ठनाथ वैकुण्ठ में रहते हैं। साँवला श्रीअंग है। मस्तक में मुकुट है। कानों में कुण्डल हैं और गले में वनमाला है। भुजाओं में बाजुबन्द हैं। हाथों में कंकण है। कटि में मेखला है। चरणों में नूपुर है। पीताम्बर धारण किए हुए हैं। ऐसे परम सुन्दर परमाभूषण धारण करने वाले विष्णु से हम तुम्हारा विवाह करा देंगे। वे आएँगे तुमको ले जाएँगे वैकुण्ठ। कहाँ तुम कैलाश जाने की तैयारी कर रही हो ? जहाँ कुछ भी नहीं है सिवाय पहाड़ के। पार्वती जी क्या कहती हैं ? सप्तर्षि आप सुनिये।

महादेव अवगुण भवन विष्णु सकल गुण खानि।
जा कर मन रम जाहि पर ताहि ताहि सन काम ।।

ठीक है हमारे महादेव अवगुण के भवन हैं और जिन विष्णु का नाम आप ले रहे हैं वे गुणों के धाम हैं।

लेकिन हमारा मन तो भगवान् शंकर से रमा हुआ है। हमको तो उन्हीं से काम है। आपको अगर ऐसा ही कुछ करना है। लड़के लड़की का विवाह ही कराना है तो बहुत से हैं। जाओ। मतलब यह है कि पार्वती जी कहती हैं कि हम गुण के पीछे नहीं हैं।

इसी तरह से गोपियाँ भी भगवान् के गुण के पीछे नहीं हैं । जैसा भी हो श्रीकृष्ण यह हमारा सर्वस्व है। ऐसी भावना है उनकी **गुणरहितं भावनारहितं और प्रतिक्षणवर्धमानं।** प्रेम घटता नहीं है । दिनों दिन बढ़ता ही चला जाता है । अनिर्वचनीय है । ऐसे प्रेम का जब उदय हो जाता है तो मनुष्य की स्थिति, भावना, मानसिक स्थिति ऐसी बन जाती है कि भगवच्चरित्रामृत के पान को छोड़कर वह किसी वस्तु की इच्छा नहीं करता ।

ते चरणसरोजहंसकुलसंगविसृष्टगुहाः ।

आपके चरणकमल सरोज हैं और सन्त-महात्मा उन चरणकमलों के हंस हैं । उनके संग से **विसृष्टगुहाः** घर जिनके छूट गए हैं, द्वार जिनके छूट गए हैं । भगवान् की कथा में इतना आनन्द आता है कि और सब आनन्द फीके पड़ जाते हैं । कहते हैं कि हमको मोक्ष नहीं चाहिए। वैकुण्ठ में चले चलो । बोले वैकुण्ठ में कथा हो रही है क्या ? कहा नहीं तो वैकुण्ठ में तो कथा नहीं हो रही । वहाँ तो वैकुण्ठनाथ हैं । तो भक्त कहता है कि हम तो यहीं रहकर कथा सुनेंगे । भगवान् श्रीरामचन्द्र जी साकेतगमन करने लगे तो विमान में भगवान् श्रीराम आरूढ़ हो गए । लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, अयोध्या के समस्त वासी, वानर, भालू सब बैठ गए । हनुमान जी सबको चढ़ाते रहे । जब सब चढ़ गए तब लोगों ने कहा कि तुम भी चढ़ो । वे बोले कि तुम सब जाओ । हम यहीं रहेंगे । क्यों? वहाँ कथा थोड़े ही है । रामकथा तो यहाँ मिलेगी हमको।

यत्र यत्र रघुनाथ कीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकांजलिं ।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम् ।।

बोले जहाँ-जहाँ भगवान् की कथा होगी वहाँ-वहाँ हम पहुँचेंगे । कहते हैं कि अगर हजार स्थानों में भगवान् की कथा हो रही हो तो हजार रूप धारण करके हनुमान जी पहुँच जायेंगे । कहते हैं कि हम भगवान् के कथामृत का पान सादर करेंगे । हाथ जोड़कर मस्तक झुकाकर आँखों से प्रेम के अश्रु बहाकर शरीर को रोमांचित करके वे भगवान् की कथा का सादर श्रवण करते हैं । भगवान् की कथा क्या है ? वह अमृत है । जब अमृतपान करने को मिल रहा है तो वैकुण्ठ जाकर क्या करेंगे ? हम यहीं कथा सुनेंगे।

इसलिए भगवान् की भक्ति के जो प्रेमी होते हैं उनके सामने भगवान् आते हैं । वे कहते हैं कि तुम हमारा भजन करते हो तो चलो सालोक्य मुक्ति हम तुमको देते हैं । हमारे लोक में आकर तुम रहने लगो । भक्त हाथ जोड़कर कहते हैं कि महाराज ! नहीं चाहिए। हमारे जैसा ऐश्वर्य तेरा हो जाएगा । सार्ष्टि मुक्ति । वह भी नहीं चाहिए । अरे जैसे हम चतुर्भुज हैं वैसे तेरी भी चार भुजाएँ होंगी । तू भी पीताम्बरधारी, वनमाली हो जाएगा ।

सारूप्य मुक्ति। कहा कि हमें यह भी नहीं चाहिए। अरे कहा सामीप्य मुक्ति। मेरे समीप रहेगा। भक्त बोले हमको वह भी नहीं चाहिए। एकत्त्व। हम अपने स्वरूप में तुमको लीन कर लेंगे। सायुज्य मुक्ति दे देंगे।

दीयमानं न गृह्णन्ति बिना मत्सेवनं जनाः।

भगवान् दे रहे हैं लेकिन वह कहता है कि हमको नहीं चाहिए। यहाँ कैवल्य मुक्ति की बात नहीं है। वह तो दी ही नहीं जा सकती। कौन देगा उसको ? वह तो है ही। ये मुक्तियाँ दीयमान हैं। दी जाती हैं। **दीयमानं न गृह्णन्ति।**

जो प्रेम है इसकी प्रतिमा का जो प्रतिमान है नारद भक्ति सूत्र में **यथा व्रजगोपिकानां** लिखा है। भक्ति में भगवान् के प्रति कोई न कोई नाता लगाया जाता है। किसी भावना से भगवान् में अपनत्त्व लाया जाता है क्योंकि वस्तु में प्रेम तभी होता है जब वह अपनी हो। पराई वस्तु में प्रेम नहीं होता। अपना होना चाहिए। किसी माँ से किसी दूसरे बेटे की तारीफ की जाए तो वह सुन-सुनकर कहती है कि क्या वह मेरे बेटे के बराबर सुन्दर है। उससे सुन्दर तो उसका ही बेटा है। और दूर मत जाइए दुनिया में कितने नोट छपे बट रहे हैं। उनसे आपका प्रेम है ? उस नोट से प्रेम है जो आपके पॉकेट में है। जो आपका हो गया है। यह खर्च न होने पाए। दुनिया में कई हैं। आप नई गाड़ी खरीदें, नई-नई गाड़ी खरीदते हैं तो कहते हैं कि ड्राइवर गाड़ी को ऐसे चलाओ कि खरोच न लगे। गाड़ी में खँरोच लगी तो हमारी छाती में खँरोच लगा माना जाएगा। इतना प्रेम गाड़ी से आपका हो गया लेकिन यदि आपने उसको बेच दिया, दूसरे की हो गई तो जहन्नुम में जाए। हमारी अब नहीं है। प्रेम अपने में, अपनेपन में होता है। इसीलिए भक्त लोग भगवान् को अपना इष्ट बनाते हैं। अपनापन उनमें स्थापित करते हैं। कोई स्वामी समझता है उनको। कोई भगवान् को अपना सखा समझता है। कोई बेटा समझता है। वात्सल्य भाव से पूजा करता है। गोपियाँ कान्त भाव से भगवान् की पूजा करती हैं, उनका भजन करती हैं। उनके सम्बन्ध में वैसे ही यह कहा जाता है कि उनका प्रेम आदर्श है।

प्रेम के, भक्ति के कई स्तर हैं। एक प्रेम कर्त्तव्य रूप से होता है। वैधी भक्ति। भगवान् का भजन करना चाहिए इसलिए कर रहे हैं। मन नहीं कह रहा है। लेकिन कहते हैं कि भाई सबेरे उठकर भजन करो। आलस्य छोड़ो, राम-राम करो। जब कोई उपदेश देते हैं तो उस उपदेश के कारण अपना कर्तव्य समझकर जो भगवान् की भक्ति करता है उसका नाम वैधी भक्ति है। इसी से प्रेरित होकर बड़ों की आज्ञा है, शास्त्रों की आज्ञा है, उस आज्ञा के कारण हम प्रेम करते हैं, अच्छा व्यवहार करते हैं। उदाहरण के लिए

समझिए आपके पास आपका कोई मेहमान नया नया आया। प्रतिष्ठित व्यक्ति है। आप उठकर खड़े हो जाते हैं। यह समझकर कि हमारा यह फर्ज है, कर्त्तव्य है, करना चाहिए। प्रेम नहीं है। कर्त्तव्य बुद्धि है। कर्त्तव्य बुद्धि से जो भजन होता है, भक्ति होती है उसका नाम वैधी भक्ति है। उसके बाद होती है भावयुक्त भक्ति। जैसे किसी से हमारी मित्रता हुई तो हम मित्रता का निर्वाह करते हैं नियम के अनुसार। लेकिन जब घनिष्ठता हो जाती है तो मित्र के आने पर खुशी-खुशी प्रेमपूर्वक उसको सुख पहुँचाने की कोशिश करते हैं। यह भक्ति का दूसरा स्तर है। माने भावयुक्त भक्ति। पहले हुई भावरहित क्रिया अब दूसरी स्थिति भावसंयुक्त क्रिया। भावसंयुक्त क्रिया हो गई और जब अन्तरंगता बढ़ जाती है तो क्रियारहित भाव हो जाता है। फिर उसके आने पर हमें उठकर खड़े होने की आवश्यकता नहीं रहती। अपने आप वह बैठ जाता है आकर। क्रियारहित भाव और फिर क्रियारहित भाव में भी आगे बढ़कर महाभाव आ जाता है। गोपियों का जो भगवान् के प्रति भाव है वह महाभाव है। उनके हृदय में किसी प्रकार की गुण की भावना नहीं है, कोई कामना नहीं है। सब कामनाओं का त्याग करके भगवान् के प्रति उनका प्रेम हुआ है। मोक्ष तक की इच्छा नहीं है। श्रीकृष्ण को पति के रूप में समझती थीं। परपति से प्रेम करने से स्वर्ग नहीं मिलेगा, नरक मिलेगा। कहा भले ही नरक मिल जाए लेकिन हम इससे प्रेम करेंगे। इस तरह की जो भावना थी उनकी श्रद्धा। उनके हृदय में भी भगवान् ही बस गए थे।

गोप्यः कामाद् भयात् कंसः द्वेषाच्चैद्यादयो नृपाः।

भागवत में आता है कि गोपियाँ भगवान् का भजन काम से करती थीं। लेकिन वह काम क्या था ?

प्रेमैव गोपरामाणां काम इत्यगमत् प्रथाम्।

गोपांगनाओं का जो प्रेम है उसी का नाम काम है। काम तो मनुष्य के हृदय में या किसी नारी के हृदय में, पुरुष के हृदय में अवस्था बढ़ने पर आता है। जब बड़ी अवस्था होती है तब काम का उदय होता है। ये तो छोटी-छोटी हैं और काम का नाम है अनंग। उसका कोई अंग नहीं है। भगवान् शंकर ने काम को भस्म करके अनंग बना दिया है। बाल्यावस्था में अनंग की जगह सांग श्याम बैठ गया है। उनके हृदय में श्याम बैठ गया है। जब वे बैठ गए तो अनंग के लिए जगह कहाँ बची ? इसीलिए वे सब सदा महाभाव में रहती थी। भगवान् के ही प्रेम में सदा निमग्न रहती थीं। उसके भी आगे श्रीराधिका जी का प्रेम था।

अधिरूढ़ महाभाव ।

उनका वह महाभाव क्षण भर के लिए भी उनके हृदय से नहीं हटता था । वे भगवान् श्रीकृष्ण से तादात्म्यापन्न हो गई थीं । भगवान् श्रीकृष्ण उनके प्रति अत्यन्त अनुरक्त हो गए थे । माना तो यह जाता है कि यह भगवती राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी का मधुर रूप है। ऐश्वर्य रूप राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी हैं और उसका जो मधुर रूप है वह श्रीराधारानी वृषभानुनन्दिनी हैं । ये जो राधा रानी हैं भगवान् श्रीकृष्ण इनकी भी आराधना करते हैं। लिखा है –

यस्या कदापि वसनाञ्चलखेलनोत्थ धन्यातिधन्य पवनेन कृतार्थमानी ।
योगीन्द्रदुर्गमगतिर्मधुसूदनोपि तस्यै नमोस्तु वृषभानुभुवो दिशोऽपि ।।

इसका अर्थ यह है कि भगवान् श्रीकृष्ण कहीं से जा रहे हैं और राधारानी वृषभानुनन्दिनी आ रही हैं । मार्ग में एक-दूसरे से मिलन तो नहीं हो रहा है लेकिन उनके आँचल की हवा उड़कर इनके अंग में लग रही है । उसी से अपने आपको धन्य समझते हैं । कौन श्रीकृष्ण ? **योगीन्द्रदुर्गमगतिः** बड़े-बड़े योगियों को जिनकी गति दुर्लभ है वे भी अपने आपको धन्यातिधन्य मानते हैं उन वृषभानुसुता श्रीराधारानी की दिशा को भी हम प्रणाम करते हैं। एक दूसरा श्लोक है श्रीराधाजी के सम्बन्ध में –

यो ब्रह्मरुद्रशुकनारदभीष्ममुख्यैरालक्षितो न सहसा पुरुषस्य तस्य ।
सद्यो वशीकरणचूडमनन्तशक्तिं तं राधिकाचरणमहं स्मरामि ।

इसका अर्थ यह है कि भक्तों में ब्रह्मा, रुद्र भगवान् के भक्त हुए हैं । नारद जी, शुकदेव जी भक्त हैं । भीष्म उनके भक्त हैं । ऐसे ऐसे जो भक्त लोग हैं उन भक्तों के द्वारा भी जिनका दर्शन दुर्लभ है जो लक्षित नहीं हो पाते हैं इनके द्वारा भी । उस परम पुरुष कृष्ण को जो अपने वश में कर रखे हैं कहते हैं कि **सद्योवशीकरण चूडमनन्तशक्तिं** श्रीराधिका के चरणों की जो रज है वह भगवान् श्रीकृष्ण को अपने वश में कर रखती हैं । अपने प्रेम से उनके चरण की रज को हम प्रणाम करते हैं । यह श्रीराधिकाजी हैं। वस्तुतः स्थिति यह है कि राधा भगवान् श्रीकृष्ण का ही दूसरा रूप है । आत्मा ही राधा है । क्योंकि भगवान् आत्माराम हैं । स्वयं अपने स्वरूप को देखकर जब वे मुग्ध हो जाते हैं भगवान् की बड़ी मनोरम लीला है जो पहले भी हमने आप लोगों को सुनाई है । नन्द जी के मणिमय प्रांगण में, मणि के ही स्तम्भ में, रेशम की डोरी से माता यशोदा ने दधिमन्थन किया और मक्खन निकालकर एक मटके में रखा । किसी काम से कहीं थोड़ी देर के लिए वे बाहर गईं । इतने में ही चपल श्रीकृष्ण वहाँ आ गए और उस मक्खन को

लेने के लिए हाथ बढ़ाया। मणि के खम्भे में अपने प्रतिबिम्ब को देखकर समझे कि कहीं ये बालक माता ने छिपा कर रखा है मुझे देखने के लिए। मेरी चोरी पकड़ने के लिए। कहते हैं -

मित्र ! मैय्या से मत कहना। एक लोंदी माखन की तुझको भी दे दूँगा। कोई उत्तर नहीं मिला क्योंकि वह तो प्रतिबिम्ब था। अच्छा भाई ! ऐसा है कि इतने में नहीं मानते हो तो माखन की जो कमोरी है इसमें से आधा तेरा और आधा मेरा। मित्रता कर ले। फिर भी जब कोई उत्तर नहीं मिला तो बोले कि अच्छा भाई तू पूरा ही ले ले लेकिन तू हमसे मित्रता कर ले। इतने में माता यशोदा आ गईं और श्रीकृष्ण को बात करते हुए देखा तो दबे पाँव चलकर पता लगाने लगी कि किससे बात कर रहा है। जब समझ में न आया तो पूछ उठीं कि अरे कन्हैया! किससे बात कर रहा है ? भोले से कृष्ण कहने लगे कि मैय्या। इस खम्भे में जो बालक तूने छिपाकर रखा है वह इतना गर्वीला है अपनी सुन्दरता का। इसको इतना घमण्ड है कि मैं इससे कुछ बात करना चाहता हूँ तो मेरी बात का उत्तर न देकर मेरे जैसा मुँह बनाता है। मैया इससे मेरी मित्रता करा दे। माता यशोदा ने गोद में ले लिया, सिर चूमा और बोली मेरे लाल ! यह तू ही है। तेरा ही प्रतिबिम्ब उस खम्भे में दिखाई पड़ रहा है। भगवान् बोले अच्छा। मैं इतना सुन्दर हूँ? भगवान् अपने सौन्दर्य को देखकर स्वयं आश्चर्यचकित हो जाते हैं। देखना चाहते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने कृष्णगीतापदी लिखी है। उसमें आया है कि भगवान् श्रीकृष्ण का माता यशोदा ने श्रृंगार किया। उबटन लगाया, स्नान कराया, श्रृंगार किया और माथे में डिठौना लगाया। बाल सँवारे। पीली झँगुरी पहनाई और अपनी गोद में बैठा दिया। अपना मीठा दूध पिलाया। प्यार से भगवान् का मुखचन्द्र देखने लगी। उनके नेत्रों से आँसू बह रहे थे। शरीर रोमांचित हो रहा था। कभी मुस्कुराती थी। कभी आँखों से आँसू बहते थे। भगवान् श्रीकृष्ण पूछ उठे कि मैया तुझे आज क्या मिल गया है जो तू कभी हँसती कभी रोती है। तेरे शरीर में रोमांच हो रहा है। माता यशोदा बोलती हैं कि –

मो सम नहीं पुण्य पुंज बालक है तेरे

अरे बालक ! मेरे समान तेरे इतने पुण्य पुंज नहीं हैं। तेरे जैसे बेटे को पाकर माँ को कितना सुख मिलता है इसको तू क्या जाने ? तूने ऐसा पुण्य ही नहीं किया है। मैंने किया है जो तेरे जैसे बेटे को गोद में लेकर तेरा लालन कर रही हूँ। भगवान् अपने सौन्दर्यामृत का स्वयं पान करने के लिए एक से दो हो जाते हैं। एक ही तत्त्व राधा और

माधव के रूप में परिणत हो जाते हैं । दोनों एक हैं । इसीलिए कहा –

एक स्वरूप सदा द्वय नाम । आनन्द की आह्लादिनि श्यामा । आह्लादिनि के आनन्द श्याम ।

एक स्वरूप हैं पर दो नाम हैं । आनन्द की आह्लादिनी शक्ति श्यामा हैं और उसके आनन्द श्याम हैं । दोनों एक दूसरे से इतने अभिन्न होकर भी प्रेम में इतने निमग्न रहते हैं कि एक दूसरे को पहचानते तक नहीं हैं ।

भक्त लोग कहते हैं कि अनादि काल से दोनों विहार कर रहे हैं लेकिन यह नहीं पहचान पा रहे हैं कि कौन राधा है और कौन कृष्ण हैं । क्षण मात्र में राधा श्याम सुन्दर का ध्यान करके कृष्ण बन जाती हैं और क्षण मात्र में कृष्ण राधा का ध्यान करके राधा बन जाते हैं । इस तरह दोनों अभिन्न हैं । इसलिए भक्त लोग राधा की आराधना करते हैं । क्यों करते हैं ? क्योंकि राधा की आँख से यदि हम कृष्ण को देखेंगे तभी उनके सौन्दर्य माधुर्य को ठीक-ठीक देख पाएँगे । आँखों में शक्ति होती है । वही आँख हैं जिससे हमलोग रत्न देखते हैं । कौन सा हीरा असली है और कौन नकली यह हमारी आँख नहीं बता सकती । जौहरी यदि होगा तो वह बता देगा । जौहरी की आँख से पता लगेगा कि यह हीरा कितनी कीमत का है । इसी तरह से अगर कृष्ण के सौन्दर्यामृत का पान करना हो तो राधा की आँख से देखो । इसलिए लोग उनकी आराधना करते हैं । वे प्रेम की स्वरूपभूता हैं । यह माना जाता है कि भगवान् का जो त्रिपाद विभूति में गोलोकधाम है वहाँ आज भी राधा कृष्ण सदा विहार करते हैं । समय-समय पर वही उनका जो वृन्दावन है जो त्रिपाद विभूति में हैं । जब भगवान् का अवतार होता है तो वृन्दावन का भी अवतार होता है । वह भी उतरकर आता है । एक ही ब्रह्म नाम, रूप, लीला और धाम के रूप में प्रकट होता है । अभिव्यक्त होता है । यह इनका रहस्य है । आज राधाष्टमी में हमलोगों ने उनका स्मरण किया यह पुण्य है । इतना ही कहकर आज का प्रसंग पूर्ण करते हैं । थोड़ा सा भगवान् का नाम लीजिए ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो । प्राणियों में सद्भावना हो ।
विश्व का कल्याण हो । गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[27]

।। राम राम सत्ताइस ।।

परमात्मा की अभिव्यक्ति नाम-रूप-लीला-धाम के रूप में

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

एक ही परमब्रह्म परमात्मा नाम, रूप, लीला और धाम; इन चारों रूपों में अभिव्यक्त होता है। यद्यपि वह एक है पर उसकी अभिव्यक्ति चार रूपों में होती है। नाम में हम यह देखते हैं राम नाम। राम यह नाम है। और रूप जो भगवान् ने माता कौशल्या को रामनवमी के मध्याह्न में दिखलाया। चतुर्भुज रूप दिखलाया। लीलाएँ -जो भगवान् ने बाल लीला की, किशोर लीला की, वनगमन किया, रावण से युद्ध हुआ, सीता जी से विरह हुआ, भगवान् ने विलाप किया। रावण का वध हुआ, अयोध्या लौटकर आए, राजसिंहासन पर बैठे। यह सब लीला है। अब धाम। जिस धाम में भगवाान् की लीला हुई, जहाँ बैठकर उन्होंने यह सब किया उसको धाम कहते हैं। यह माना जाता है कि ये चारों एक ही हैं। चलिए हम इनमें खोजें।

चारों में पहले नाम को लें। राम नाम में तो रकार, अकार और मकार ये तीन अक्षर हैं राम के नाम में। इनमें से कौन सा अक्षर राम है ? अब हम यह कहें कि नहीं, इन तीनों अक्षरों के द्वारा जो जाना जाता है वह रूप राम है। रूप तो अनेक हैं। इतने रूप आप देखिए जब भगवान् श्रीराम कौशल्या अम्बा के सामने प्रकट होते हैं तो कौशल्या अम्बा उनके चतुर्भुज रूप को देखकर हाथ जोड़कर स्तुति करती हैं।

ब्रह्माण्ड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति वेद कहें।
मम उर सो वासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहे ।।

बोली कि महाराज ! आप कौन है ? आपका जो विराट् रूप है। विराट् रूप भगवान् ने माता कौशल्या को दिखाया था।

देखरावा मातहिं निज अद्भुत रूप अखण्ड।
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मण्ड ।।

भगवान् ने अपना विराट् रूप माता कौशल्या को दिखाया। जैसे मनुष्य के शरीर में अनेकों रोम होते हैं। रोम के भीतर छिद्र होता है। तभी उसमें से पसीना निकलता है। भगवान् विराट् के रोम के छिद्र में एक नहीं, करोड़ो-करोड़ ब्रह्माण्ड आते-जाते हैं। ब्रह्माण्ड कितने का होता है ? जिसमें चौदह भुवन होते हैं वह ब्रह्माण्ड होता है। अनेक करोड़ ब्रह्माण्ड में से एक ब्रह्माण्ड, एक ब्रह्माण्ड में चौदह भुवन, सात नीचे के और सात ऊपर के। उनमें से एक भुवन पृथ्वी। पृथ्वी में सात द्वीप। सात द्वीपों में जम्बूद्वीप। जम्बूद्वीप में नौ खण्ड। नौ खण्ड में भरत खण्ड। भरत खण्ड में भारत वर्ष। भारत वर्ष में उत्तर प्रदेश। उत्तर प्रदेश में फैजाबाद जिला। फैजाबाद जिले में अयोध्या। अयोध्या में राजा दशरथ का महल। उस महल में तीन रानियों के महल। उनमें से कौशल्या का महल। कौशल्या के महल में अनेकों कोठियाँ। जिस कोठरी में इस समय कौशल्य जी बैठी हैं उस कोठरी के सामने भगवान् श्रीराम खड़े हैं। माता कौशल्या जी कहती हैं कि ऐसे भगवान् मेरे बेटे के रूप में मेरे पेट में रहे।

कौन मानेगा कि इतनी सी, छोटी सी नारी के पेट में अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड जिनके रोम-रोम में हैं वे निवास किये। यह तो बात समझ में नहीं आती। यह भी कहना होगा कि लीला है। इन्होंने लीला धारण की और लीला से यह रूप बनाया। अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड नायक के रूप में होते हुए भी चतुर्भुज रूप में सामने आए। शंख, चक्र, गदा, पद्म हाथ में लिए हैं। माथे में मुकुट कानों में कुण्डल, गले में वनमाला है। हाथों में बाजूबन्द है। कटि में करधनि, चरणों में नूपुर, श्यामल श्रीअंग में पीताम्बर धारण किए हैं। अब देखते ही देखते जब माता कहती है कि महाराज! आप अनन्तकोटि ब्रह्मण्डनायक हैं। मेरे पेट में कैसे आ गए ?

उपजा जब ज्ञाना प्रभु मुसकाना चरित विविध विधि कीन चहैं।
कहि कथा सुनाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै।

भगवान् मुस्कुरा उठे। जब माता कौशल्या भगवान् के उस अनन्त, अखण्ड ऐश्वर्य को जान गईं तो भगवान् मुस्कुरा उठे। **हासो जनोन्मादकरी च माया।**

भगवान् का जो हास है वह माया है। **माया हास बाहु दिगपाला।** उनके मुस्कुराते ही कौशल्या जी का जो ज्ञान का पटल था वह ढँक गया। ज्ञान को ढँक दिया। भगवान् ने कहा कि देखो कौशल्या। पहले जन्म में तुम शतरूपा थी तुम्हारे पति मनु थे। तुमने तपस्या करके मुझे पुत्र रूप में माँगा था। मैं तुम्हारे घर में आया हूँ। तुम्हारा बेटा बनकर लीला करूँगा। अब कौन से भगवान् राम ? वे बालरूप हैं या अखण्ड ब्रह्माण्ड वाला रूप

है या फिर किशोर रूप है या वनवासी रूप है या राजा रूप है ? रूप अनेक हैं । राम तो एक ही होंगे। नाम, रूप और लीला । लीला भी अनेक है । चरित्र भी अनेक है । वह कौन हैं जिसके अनेक नाम हैं, जिसके अनेक रूप हैं, जिसकी अनेक लीलाएँ हैं ? तीन तो समझ में आ गई । धाम एक है । जिसमें भगवान् लीला कर रहे हैं वह एक है । धाम क्या है ? जो सामान्य व्यक्ति होता है उसका आधार कोई दूसरा होता है किन्तु परमात्मा का आधार और कौन दूसरा होगा? कहते हैं वे भगवान् किसमें प्रतिष्ठित हैं ? **स्वमहिम्नि।** अपनी महिमा में ही स्थित है। धाम भगवान् का एक है और वह धाम उनका स्वरूप ही है । गीता में भगवान् ने कहा –

न तद् भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः ।
यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ।।

जिसमें सूर्य का प्रकाश नहीं है, चन्द्रमा का प्रकाश नहीं है, अग्नि का प्रकाश नहीं है, जहाँ जाकर प्राणी लौटकर नहीं आता वह मेरा परम धाम है । यह क्या बात है भाई? सूर्य का प्रकाश नहीं तो चन्द्रमा का कैसे होगा? कहने का मतलब यह है कि सूर्य है आँख का अधिष्ठातृ देवता । आँख जिसको देख नहीं सकती और मन का अधिष्ठातृ देवता है चन्द्रमा । मन जिसका मनन नहीं कर सकता और पावक माने अग्नि वाणी का अधिष्ठातृ देवता है । वाणी भी जिसका वर्णन नहीं कर सकती ।

मन समेत जहँ जाइ न बानी । तरकि न सकहिं सकल अनुमानी ।।

जहाँ मन सहित वाणी न जाए वह मेरा परम धाम है । प्रश्न उठा कि मेरा क्यों कहा? इससे तो ऐसा लगता है कि वे अलग और उनका धाम अलग । जैसे हम राहु का सिर कहते हैं जबकि राहु ही सिर है । धाम ही राम है, धाम ही कृष्ण है । धाम माने स्वयंप्रकाश आत्मा, उनका स्वरूप । इन सब लीलाओं को सुनने पर भक्त के मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि राम क्या है ? कृष्ण की लीला सुनकर यह इच्छा होती है कि हम समझें कि कृष्ण क्या हैं ? उसको कौन बताए ? गीता में बताया यह जिज्ञासा है । चार प्रकार के हमने बताए थे। अब चातुर्मास्य में इसी श्लोक के आस-पास प्रवचन होता रहा ।

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ।।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि चार प्रकार के भक्त मेरा भजन करते हैं । आर्त,

जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी। आप देखिए आर्त माने जो कष्ट में पड़ा है । जो दुःख से पीड़ित है । इसके लिए भगवान् के भजन की क्या जरूरत है ? अगर मलेरिया हो गया तो भाई ! दवा ले लो । मलेरिया दूर हो जाएगा । अगर आपके शरीर में कोई कष्ट हो रहा है तो इलाज कर लो । लौकिक दुःखों को मिटाने के लिए लौकिक उपाय हैं लेकिन एक ऐसा दुःख है जिसका कोई दूसरा उपाय नहीं है । वह क्या है ? वह है जन्म-मरण का दुःख । जन्म लेना, फिर मरना। माता के पेट में रहना ।

जन्म लेना, मरना और उसी में आगे बुढ़ापा, व्याधि । ये दुःख जो हैं इनका इलाज किसी के पास नहीं है । हमने एक दिन कहा था न कि जब बुढ़ापा आता है बाल सफेद हो जाते हैं तो आप बताइए कौन सा ऐसा वैज्ञानिक है जो आपके सफेद बालों को काला कर देगा ? नहीं हो सकता । आप कृत्रिम उपाय कर सकते हैं थोड़ी देर के लिए लेकिन वे सब उपाय स्थायी नहीं हैं। यह जो आर्ति है यह परमात्मा की प्राप्ति से ही दूर हो सकती है । अर्थात् आपको धन, मान, वैभव चाहिए । आप उनको प्राप्त कर लें तब भी आपकी इच्छा पूरी नहीं होगी। जितना मिलता जाएगा उतना ही आपके मन में और भी प्राप्त करने का भाव बढ़ता जाएगा ।

निःस्वो वष्टि शतं शती दशशतं लक्षं सहस्राधिपः लक्षेशः क्षितिपालतां क्षितिपतिश्चक्रेशतां वाञ्छति।

चक्रेशः पुनरिन्द्रतां सुरपतिः ब्रह्मपदं वाञ्छति ब्रह्मा शैवपदं शिवो हरिपदं चाशावधिं को गतः ।

जिसके पास कुछ नहीं है वह चाहता है कि हमको सौ रुपया मिल जाए । सौ वाला चाहता है हजार मिल जाए । हजार वाला लाख चाहता है । लाख वाला दस लाख । दस लाख वाला करोड़ चाहता है । करोड़पति चाहता है मिनिस्टर हो जाए । कहीं के राज्यपाल बन जाए । फिर और आगे बढ़े तो राष्ट्रपति हो जाए । अगली टर्म में भी बन जाए । फिर पूरे विश्व में हमारी ख्याति हो जाए । तृष्णा का कोई अन्त नहीं । कहाँ जाकर अलं बुद्धि होगी यह कह नहीं सकते । असल में क्या है ? धन क्यों चाहते हैं हमलोग? धन इसलिए चाहते हैं क्योंकि हमको उससे सुख मिले। सुख के लिए धन चाहते हैं । धन के लिए हम धन नहीं चाहते । वह सुख धनियों को भी नहीं मिलता है । धन होने के बाद भी बहुत से लोग दुःखी हैं । असल में सुख-दुःख का सम्बन्ध तो मन से है । आप चाहे हवाई जहाज में चलते हों, चाहे आप बैलगाड़ी में चलते हों सुख-दुःख दोनों में समान है। सबकी वही समस्या है । एक बार अखबारों में हमारे खिलाफ बहुत से वक्तव्य निकले।

होता रहता है । कोई बात पसन्द आती है और कोई नहीं भी आती है । कोई भी बात आप बोलिए तो कुछ लोगों को तो परेशानी हो ही जाती है। हमने एक सज्जन से पूछा कि भाई! आजकल हमारा बहुत विरोध हो रहा है । उन्होंने कहा कि महाराज ! जब आप गिल्ली डण्डा खेलते थे तो वे विरोधी थे। अब आप बड़े आदमी हो गए तो विरोध भी तो बड़े होंगे । अब इससे आपको डरने से काम नहीं चलेगा । आदमी कहीं भी चला जाए उसका विरोध होता है । कुछ लोग तो इसलिए सोचते रहते हैं कि ये रोते क्यों नहीं, हँसते क्यों है ? कहने का मतलब यह है कि धनी होने के बाद भी लोग दुःखी रहते हैं और अगर आपको यह देखना हो तो धनियों के बीच में चले जाइए । किसी का बेटा कहना नहीं मान रहा है । किसी के बेटे की बहू ने जाकर दहेज प्रथा का कानून लगा दिया है । किसी की बेटी अपने यार के साथ भाग गई है । यही सब हो रहा है । यह चिन्ता तो हरेक जगह पर है । चाहे आप करोड़पति बन जाओ चाहे कौड़ीपति रहो। धन हम क्यों चाहते हैं ? सुख के लिए और सुख की प्राप्ति सुखस्वरूप परमात्मा को जानने से ही हो सकती है । इसलिए यदि आप अर्थार्थी हैं तो आप भगवान् को जानिए । अगर आप अपनी आर्ति, दुःख को दूर करना चाहते हैं तो भी भगवान् को जानिए । अब भगवान् को कैसे जाने ? श्रीकृष्ण ने गीता में बताया –

तद् विद्धिः प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ।

हे अर्जुन ! तुझे ज्ञान प्राप्त करना हो तो तू तत्त्वदर्शी ज्ञानी के पास जा । ज्ञानी के दो विशेषण । तत्त्वदर्शी और ज्ञानी । इसमें तत्त्वदर्शी का अर्थ है ब्रह्मनिष्ठ और ज्ञानी का अर्थ है श्रोत्रिय ।

तद् विज्ञानार्थ गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् ।

यदि आपको परमात्मा को जानना है तो गुरु की शरण में जाइए । गुरु भी कैसा हो ? श्रुति का ज्ञाता होना चाहिए । परमात्मा को जानने के लिए प्रमाण की जरूरत है। प्रमाण श्रुति है। प्रमाणगत संशय की निवृत्ति श्रोत्रिय करेगा और प्रमेय का ज्ञान ब्रह्मनिष्ठ कराएगा।

कथा आती है कि एक व्यक्ति कहीं जा रहा था । रास्ते में एक नदी पड़ी । नदी के पानी को देखकर उसने सोचा कि हम यदि नदी में घुसेंगे तो बह जाएँगे । कैसे पार करें ? एक अन्धा वहीं बैठा था । उसने कहा कि आप क्यों ठिठक रहे हो ? बोला हम नदी के पार जाना चाहते हैं । बोला कि हमारे पीछे चलो । हम तुमको पार करा देंगे ।

उसने सोचा कि अन्धा खुद बहेगा और हमको भी बहाएगा । इसलिए नहीं जाएँगे । वहीं एक लंगडा भी बैठा था । उसने कहा कि हम यहीं से बता देते हैं । उसने सोचा कि जब यह लंगड़ा है तो इसको क्या पता कि कहाँ नदी गहरी और कहाँ उछली ? इसके पीछे नहीं जाएँगे । वह बैठा रहा। जब उसको ऐसा व्यक्ति मिला जिसकी आँख भी थी और पैर भी थे उसने उसके साथ नदी पार किया । आँख श्रुति है और पैर है ब्रह्मनिष्ठा ।

गुरु के पास जाने के लिए हमारे उपनिषद् बतलाते हैं कि खाली हाथ नहीं जाना चाहिए। **समित्पाणिः** हाथ में कुछ लेकर जाइए । समिधा लेकर जाइए । गुरु की नीति है। पत्र-पुष्प हाथ में रखकर फल लेकर गुरु के पास जाना चाहिए । जाकर प्रणाम करना चाहिए। प्रणाम करके विनम्र बनिए । बिना नम्रता के कोई ज्ञान देने वाला नहीं है । ज्ञान का प्रवाह ऊपर से नीचे आता है। यदि आप नीचे नहीं बनेंगे तो नम्र नहीं बनेंगे । आपको ज्ञान कैसे मिलेगा? इसीलिए **प्रणिपातेन** प्रणाम करना चाहिए । प्रणाम करके नम्रतापूर्वक प्रश्न करो । **परिप्रश्नेन** कहा। प्रश्न से पता लगता है कि यह व्यक्ति समझ रहा है कि नहीं । समझदार पूछेगा बीच बीच में और जो मूर्ख है वह पूछेगा ही नहीं ।

भैंस के आगे बीना बाजे । भैंस रही पगराए ।

कहते है कि कहीं पर भागवत की कथा हो रही थी । एक बुढ़िया देख-देख कर आँसू बहा रही थी। निरन्तर आँसू बहाती जा रही थी । भागवत की कथा हो गई तो लोग चढ़ावा करने लगे । बुढ़िया नहीं आई । पण्डित जी ने सोचा कि बुढ़िया किसी कारण से नहीं आई होगी । बड़ी भक्त थी । चढ़ावा अच्छा चढ़ाएगी । हम ही चलें उसके पास । पहुँच गए उसके पास और बोले । माता राम ! आपने तो बड़े प्रेम से कथा सुनी । बोली हाँ । पूछा क्या समझ में आया? उसने कहा कि हम पढ़े-लिखे नहीं है । हम क्या समझेंगे ? हमारा एक बकरा था । उसकी दाढ़ी आपकी जैसी थी । अब वह मर गया है । जब आपकी दाढी हिलती थी तो महाराज ! हमको उसी की याद आती थी । उन्होंने अपने माथे में हाथ ठोंका कि हाय-हाय हम कहाँ फँस गए ? ऐसे भी लोग होते हैं ।

तद् विद्धि प्रणिपातेन । प्रणिपात होकर प्रश्न करके कहिए महात्मा जी । आप हमको समझा सकते हैं? यदि महात्मा जी होंगे तो कहेंगे कि हमारी ताकत नहीं है समझाने की । यह लिखा है –

नाऽपृष्टः कस्यचित् ब्रूयात् न चान्यायेन पृच्छतः ।
जानन्नपि हि मेधावी जडवल्लोक आचरेत् ।।

बिना पूछे न बताए और अन्याय से पूछे तो भी न बताए । जानता हुआ भी मेधावी

पुरुष मूर्ख ही बना रहे। इसीलिए परिप्रश्न करे कहा । गुरु यदि उस समय उत्तर न दें तो यह समझें कि हममें अभी कुछ पात्रता की कमी है । **सेवया ।** सेवा करे । तब **उपदेश्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ।** तत्त्वदर्शी ज्ञानी की खोज करनी चाहिए । अभी कल हमारे पास कुछ विद्वान् लोग आए थे । कहने लगे कि कैसे पता लगे कि महात्मा तत्त्वदर्शी ज्ञानी हैं ? किसका सत्संग करें ? उसकी पहचान कैसे हो ? हमने उनको बताया कि अगर आपके मन में शुद्ध तत्त्व जिज्ञासा है तो आप धोखे में नहीं रहोगे आप ठगे नहीं जा सकते । पर यदि आप दस रुपया के नोट को सौ रुपया का बनाना चाहोगे तो आपको कोई तत्त्वदर्शी ज्ञानी थोड़े ही मिलेगा ? ठग ही मिलेगा । क्योंकि आप भी ठग हो और वह भी ठग है । जैसे को तैसा मिल जाता है । बहुत से लोग ऐसे हैं कि उनके साथ-साथ दलाल होते हैं । वे प्रचार करते हैं । कोई कहता है कि हमारी आँख से बिल्कुल नहीं दिखता था । इनके यहां आते ही दिखाई पड़ने लगा। कोई कहता पैर खराब थे यहाँ आने से ठीक हो गए । घूम-घूम कर कहते हैं और उनकी दलाली करते हैं। जो कुछ उनके पास आता है उसमें उनका भी हिस्सा रहता है । ऐसे बहुत से लोग रहते हैं । चाहे जहाँ इकट्ठा कर लो आप । आप समझ लो यहाँ अपने गोटेगाँव क्षेत्र में भैसा में कितनी भीड़ होने लगी थी। इतनी भयंकर भीड़ होने लगी कि नर्मदा मैया ने हमको जड़ी बताई है हम घोल-घोलकर देते हैं सारी बीमारी दूर हो जाती है। तमाम भीड़ दूर-दूर से वहाँ पहुँचने लगी। वहीं से लोग हमारे पास आते थे । बाद में पता लगा कि उनके सब लोग मिले हुए थे । सच पता लगा तो लोग वहाँ से हट गए । ऐसे जो ढोंगी लोग होते हैं उनके पास आप तभी फँसोगे जब आप भी ढोंगी होंगे ।

तुलसी देखि सुवेश भूलहिं मूढ़ न चतुर नर ।
सुन्दर केकिहि देखु वचन सुधा सम असन अहि।।

सुन्दर वेश को देखकर मूर्ख भूल जाते हैं, चतुर मनुष्य नहीं भूलते । वाणी से भी नहीं भूलते । मोरनी कितना मधुर बोलती है । लेकिन उसका भोजन तो देखो साँप खाती है । यह देखो कि उसकी वाणी बड़ी मधुर है लेकिन वह करता क्या है ? अगर आपके मन में शुद्ध जिज्ञासा है, परमात्मा को प्राप्त करने की इच्छा है तो परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग जिसने जाना है, जो उस मार्ग से चला है, वही आपको बता सकता है । जिसका उससे कोई सम्बन्ध नहीं है वह क्या बताएगा ? बहुत से लोग ऐसे हो जाते हैं । इससे क्या होता है कि अपने सनातन धर्म की अप्रतिष्ठा हो जाती है और बहुत से लोग आकर हमलोगों के नेता बन जाते हैं । इससे बचना चाहिए । अच्छी तरह से आप समझ लें । **पानी पिए छान गुरु करे जान ।** अगर आपके मन में शुद्ध जिज्ञासा है तो जिज्ञासा जहाँ

आपकी पूरी होगी वहीं आपकी श्रद्धा हो जाएगी । पहले अपने मन को शुद्ध बनाना पड़ेगा। शुद्ध बनाने के बाद जब आप खोजेंगे तो भगवान् ही आपको गुरु के रूप में मिल जाएगा। भगवान् ही आपके ऊपर कृपा करेंगे और आपकी श्रद्धा भी बढ़ जाएगी क्योंकि श्रद्धा और विश्वास जरूरी है ।

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ।।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं कि हम भवानी शंकर की वन्दना करते हैं । भवानी क्या है श्रद्धा और शंकर कौन है विश्वास । विश्वास क्या है ? एक तो होता है अन्धविश्वास और दूसरा होता है प्रामाणिक विश्वास। पीपल के पेड़ में भूत रहता है यह अन्धविश्वास है। कई जगह ऐसा अन्धविश्वास लोग कर लेते हैं और वहीं पहुँच जाते हैं। यह विश्वास अन्धविश्वास हैं । प्रामाणिक विश्वास होना चाहिए । प्रामाणिक विश्वास तभी होगा जब आप शास्त्रों को समझेंगे । वेदों को समझेंगे । उनमें जो बताया गया है उसको जानेंगे । इसके लिए आवश्यक है कि अपने हृदय को क्षेत्र बनाया जाए । श्रद्धा विश्वास उसमें लाया जाए । शास्त्रों, गुरु के वचनों में विश्वास हो और इसीलिए भी गुरु को सोच-समझकर बनाना चाहिए क्योंकि एक जगह से आदमी चूक गया तो फिर कहीं ठिकाना नहीं रहता । फिर वहाँ भी अश्रद्धा हो जाती है । जीवन बेकार हो जाता है ।

कहते हैं एक महात्मा थे । जंगल में रहते थे । बड़े तपस्वी ज्ञानी थे । एक राजा ने उनकी तारीफ सुनी तो वे उनको गुरु बनाने के लिए चला । उनके पास जाएँगे और उनसे दीक्षा लेकर गुरु बना लेंगे । चलने के लिए अपने रथ में बैठने जा रहा था । महात्मा अन्तर्यामी थे । वे जान गए और उन्होंने योग शक्ति से एक रूप बनाया। मैले-कुचेले कपड़े पहनकर सामने आ गए । राजा ने सोचा कि इसने हमारी यात्रा में अपशकुन कर दिया। एक डण्डा मारा कि हट सामने से । अपना रथ बढ़ाया और घूमता-घामता उनकी कुटिया में गया जहाँ वे जंगल में रहते थे । वहाँ देखा कि वही महात्मा बैठे हैं जिनको हमने डण्डा मारा था । अब तो वह काँप उठा । उसने सोचा कि इन्हें हमने डण्डा मारा है यह कभी हमको चेला नहीं बनाएँगे । हमको शाप और दे देंगे । लेकिन जब राजा सामने गया तो गुरु हँसे और बोले कि व्यक्ति जब दो पैसे की हण्डी खरीदता है कोई तो भी ठोंक बजाकर देख लेता है । तू गुरु बनाने चला है अगर तूने मुझे ठोंक-बजा लिया तो क्या बुरा किया?

बहुत से लोग अपने यहाँ ऐसे ही हैं कि जो भी सामने आया कहते हैं कि हम सबको मानते हैं । हमारा कोई भेद भाव नहीं है । हम सभी को मानते हैं । ऐसे लोग भी हैं ।

कहते हैं कि आषाढ़ के महीने में जामुन के पेड़ के नीचे काले-काले जामुन पड़े थे। एक आदमी प्रेम से जामुन के फल उठा-उठाकर खा रहा था । संयोग से काला भौंरा उसके हाथ में आ गया । जामुन के भ्रम में उसने काला भौंरा अपने मुँह में डाल लिया। वह भौंरा जिन्दा था । जब दाँत से उसको दबाया तो भौंरा चें चें करने लगा। जामुन खाने वाला बोला कि तुम चाहे चें करो चाहे में हम काला-काला एक भी नहीं छोड़ेंगे । ऐसे ही कोई वेश बनाकर आ गए तो हमारा यह कहना है कि दोपहर के समय आपके घर में कोई साधू के वेश में आ जाए तो बेशक उसको भोजन दो । अतिथि सत्कार करो । गृहस्थ का यह धर्म है लेकिन सलाह उसकी मानो जो आपको सही मार्ग बताए । चाहे जिसकी सलाह न मानो । अब बहुत से लोग हैं जो हमसे मन्त्र लेकर जाते हैं। उनसे दूसरे लोग कहते हैं कि अच्छा । अब तुमको पंचदशी दिया महाराज ने षोडशी लेकर आओ। षोडशी वाले को कहेंगे महाषोडशी लेकर आओ । आज ऐसा ही एक व्यक्ति आया । दूसरा मन्त्र माँगने लगा तो हमने कहा कि तूने पहले जो हमने बताया था उसको किया कि नहीं किया? अगर तेरी निष्ठा है तो एक अक्षर से तुझे सिद्धि हो सकती है । मन्त्र बार-बार क्यों बदलता है ? उससे तुझे क्या मिल जाएगा ? अगर कोई तुमको बहकाता है कि इसको और माँग लो तो तुम उसी से जाकर पूछ लो । हम तो वह बताएँगे जिससे कि तुम्हारा कल्याण हो । पूर्ण रूप से उसमें निष्ठा करो गुरु जो बता दे वही तुम्हारे लिए सही है ।

एक कथा और तुम्हें सुनाए देते हैं कि एक व्यक्ति किसी महात्मा का शिष्य बनने गया। बहुत से लोग बैठे थे वहाँ जैसे आप सब लोग बैठे हैं । हाथ जोड़कर बोला कि महाराज! हमको मन्त्र दीक्षा दे दीजिए । गुरु ने कहा कि मन्त्र दीक्षा एकान्त में होती है। एकान्त खोजने लगा । कहीं एकान्त नहीं मिला तो एक दिन गुरुजी कमण्डलु लेकर जंगल में गए थे शौच करने वहीं पर पहुँच गया । महाराज ! मन्त्र दे दो । गुरु जी ने कहा कि–

धत तेरी की । वखत न देखा सबेरे सबेरे । उसने समझा कि यही गुरु मन्त्र है।

वह इसी का जप करने लगा । जपते-जपते गुरु के प्रति विश्वास के कारण वही सिद्ध भी हो गया । एक दिन वह कहीं रास्ते से जा रहा था तो वहाँ से राजकुमार की अर्थी जा रही थी। उसने पूछा कि यह कौन है ? लोगों ने बताया कि राजकुमार है बेचारा छोटी उमर में मर गया। श्मशान में ले जा रहे हैं । कहा नीचे रखो । **बोला धत तेरे की ....** कहते ही वह जी उठा ।

जब वह जिन्दा हो गया तो लोग उसको लेकर राजा के पास गए । पूछा कैसे जिन्दा

हो गया यह तो मर गया था । बोला कि एक महात्मा मिले थे उन्होंने मन्त्र दिया था । उसी से जिन्दा हो गया यह । राजा ने कहा कि सात ऊँट में मोहरें लाद कर इनके यहाँ दे आओ। उसको जाकर दे दो । लोग गए उसके पास । बताया कि ऐसा है कि गुरु के रहते हम क्या लेंगे ? हमारे गुरु महाराज हैं उनको दो यह सब । उन्हीं की कृपा से हमने यह किया है । लोगों ने पूछा कि तुम्हारे गुरु कौन है ? उसने महन्थ जी का नाम बताया। लोग सात ऊँट लेकर उनके यहाँ गए और कहा कि यह सब राजा ने आपके लिए भेजा है । क्या बात है ? आपके चेले ने राजकुमार को जिला दिया है इसीलिए उन्होंने यह भेंट भेजी है । ऐसा कौन चेला है हमारा ? उसको बुलाओ । लोग ढूँढ कर उसको लाए उसने साष्टांग प्रणाम किया और पूछा कि क्यों रे ! हमने तुमको कब मन्त्र दिया ? उसने कहा कि जंगल में आप बैठे थे तभी दिया था । कहने का मतलब यह है कि श्रद्धा और विश्वास हो तो गुरु का दिया एक अक्षर एक वाक्य भी सध जाता है ।

एक गुरु के दो चेले थे । दोनों भाई-भाई थे । दोनों में मतभेद हो गया तो दोनों ने बँटवारा कर लिया। खेती बँट गई । मकान बँट गए । दुकान के भी दो हिस्से हो गए। गुरु तो एक ही हैं । बोले गुरु की टाँग बाँट दो । एक को दाहिनी टाँग दे दिया और एक को बाँयी। बोले कि अपनी-अपनी टाँग की सेवा करो । एक चेला आकर दाहिनी दबा जाए और दूसरा बाँयी दबा जाए। हुआ यह कि गुरु जी ने करवट ले ली । करवट ले ली तो दाहिनी टाँग के ऊपर बाँयी टाँग आ गई । बाँयी टाँग वाले ने कहा कि हमारी टाँग के ऊपर यह टाँग क्यों आ गई ? एक डण्डा मारा उस पर और चला गया । अब बाँए पैर वाला चेला आया तो उसने अपने बाँये पैर की सेवा करना शुरु किया । जहाँ डण्डा लगा था वहाँ सूजन आ गई थी । गुरुजी सी सी करने लगे । पूछा कि महाराज! क्या हो गया? बोले कि धोखे से हमारी दाहिनी टाँग के ऊपर बाँयी टाँग आ गई थी । तेरे भाई ने डण्डा मारा है । बोला कि हम उसके पैर कुल्हाड़ी से काटेंगे । वह कुल्हाड़ी लेकर आया तो गुरु वहाँ से भाग गए । ऐसे चेलों से भगवान् बचाये। कहने का मतलब यह है कि कोई राम के, कोई कृष्ण के, कोई शिव के, कोई शक्ति के भक्त हैं । अब अपनी-अपनी भक्ति करो। दूसरे से द्वेष क्यों करते हो ? इसका यही अभिप्राय है ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो । प्राणियों में सद्भावना हो ।
विश्व का कल्याण हो । गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

[28]

।। राम राम अट्ठाइस ।।

सुख-दुःख को देने वाला कोई दूसरा नहीं होता

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

आज चातुर्मास्य की अन्तिम सभा है। लगभग तीन मास से आप सब सत्संग का लाभ ले रहे हैं। चातुर्मास्य के अवसर पर ही सन्त-महात्मा, संन्यासी एक स्थान पर निवास करते हैं। चातुर्मास्य व्रत बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। हमलोग भागवत में पढ़ते हैं कि नारद जी अपने पूर्व जन्म की बात सुनाते हैं कि पहले जन्म में हम एक ब्राह्मण की दासी के पुत्र थे। वे ब्राह्मण संन्यासियों के भक्त थे। एक बार उनके ग्राम में चातुर्मास्य के लिए संन्यासी आए। उनकी सेवा में हम लिप्त हो गए। उनसे जब भी भगवान् की कथा सुनते थे तो उनसे कथा सुन-सुनकर हमारे हृदय में भगवान् के चरणों के प्रति प्रेम का उदय हो गया और जब वे चले गए तो जाते समय उन्होंने हमें भगवान् के ध्यान की विधि बता दी। इस प्रकार से ध्यान करना है। वहाँ प्रश्न पूछा गया उनसे कि जब संन्यासी चले गए तो आपने क्या किया ? नारद जी बोले कि मेरी माता ब्राह्मण की दासी थी और मैं उसका एकमात्र पुत्र था।

एकात्मजा मे जननी योषिन्मूढा च किंकरी ।
मय्यात्मजेऽनन्यगतौ चक्रे स्नेहानुबन्धनम् ।।

मेरी माता का मैं इकलौता बेटा था। वह किंकरी थी। नारी थी। ज्यादा पढ़ी-लिखी भी नहीं थी। केवल उसका स्नेह मेरे प्रति था। मैं संन्यास ले लेना चाहता था। उस माता को छोड़ना नहीं चाहता था जिससे माता को अकेले कष्ट न उठाना पड़े लेकिन एक दिन मेरी माता गाय दुहने के लिए जा रही थी। किसी विषैले सर्प ने उसको काट खाया। वह वहीं मर गई। माता के मर जाने पर मैंने यह समझा कि प्रभु ने मेरे ऊपर कृपा की है। इसलिए कि जब तक यह रहती मैं गृह का त्याग नहीं कर सकता था।

तदा तदहमीशस्य भक्तानां शमभीप्सतः ।
अनुग्रहं मन्यमानः प्रातिष्ठं दिशमुत्तराम् ।।

मैंने भक्तों के ऊपर अनुग्रह करने वाले भगवान् की बहुत बड़ी अनुकम्पा समझा और

भगवान् को धन्यवाद देते हुए उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया । मेरा कोई नहीं था सिवाय भगवान् के । भिन्न-भिन्न क्षेत्रों को पार करते-करते एक गहन वन में गया जहाँ एक स्वच्छ सरोवर मिला । उसमें स्नान करके मैं जो महात्माओं ने ध्यान की विधि बताई थी उस विधि से भगवान् का ध्यान करने लगा । इस प्रकार मेरा मन ध्यान मग्न हो गया। भगवान् की मूर्ति मेरे हृदय में आ गई । मुझे न संसार का भान रह गया, न शरीर का भान रह गया । केवल मुझे मेरे प्रभु श्रीमन्नारायण का ही दर्शन हो रहा था । किन्तु एकाएक वह मूर्ति मेरे हृदय से अन्तर्हित हो गई । मैं मछली जैसा तड़पने लगा । आकाशवाणी हुई –

हे नारद ! इस जन्म में तुम मेरा दर्शन नहीं कर सकते । जिनका हृदय कषाय अपरिपक्व है । देखिए। मन का कच्चा होना क्या है ? राग और द्वेष । अनुकूल विषय में राग और प्रतिकूल विषय में द्वेष । विषय के साथ-साथ जो व्यक्ति हमारे सुख में सहायक है उसके प्रति राग और जो दुःख देने वाला है उसके प्रति द्वेष । यह मन का कषाय है । वस्तुतः देखा जाए तो कौन किसको सुख देता है । कौन किसको दुःख देता है ?

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता । निज कृत कर्म भोग सब भ्राता ।

कोई किसी को न सुख देता है, न दुःख देता है । आप सोचिए कि पोस्ट मैन आपको पत्र देता है । आपका पता देखकर । अब उसमें क्या लिखा है पुत्र का उत्सव लिखा है कि किसी की मृत्यु का समाचार लिखा है इसका वह जवाबदार नहीं है । वह तो केवल पोस्टमैन है । जो हमें सुख-दुःख होता है वह हमारे कर्मानुसार होता है। व्यक्ति तो पोस्टमैन है । वह एक निमित्त बन जाता है । अगर वह निमित्त न बने तो भी हमको मिलेगा । कोई न कोई उसका निमित्त बन ही जाएगा । अभी आप कैकेयी माता का चरित्र सुन रहे थे । भरत जी जब माता कैकेयी को दोष देने लगे कि कैकेयी के कारण ही राम को दुःख हुआ तो भगवान् श्रीराम बोले–

दोष देहि जननी जड़ तेही । नाहिन साधु सभा जिन सेई ।

वही मूर्ख माता कैकेयी को दोष देंगे जो कभी साधुओं की सभा में नहीं बैठे होंगे। साधु सभा में जो कभी नहीं बैठे वे ही दोष देंगे । साधु सभा में बैठने वाले क्या करते हैं ? जहाँ साधु समाज बैठता है वहाँ तो यह समझा जाता है कि सुख-दुःख कोई दूसरा देने वाला नहीं है ।

सुखस्य दुःखस्य न कोपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा ।
अहं करोमीति वृथाभिमानः स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः ।।

सुख-दुःख को कोई देने वाला नहीं है । दूसरा कोई देता है यह कुबुद्धि है । इसलिए एक भक्त कहता है कि मैं न तो शोक करता हूँ और न मुझे विस्मय होता है । जो मनुष्य को मिलने वाला है वह मिलकर ही रहता है । कोई उसको रोक नहीं सकता । जो हमारा है वह दूसरे का नहीं हो सकता । इसमें एक दृष्टान्त है –

एक ब्राह्मण दम्पति थे । उसके घर में एक बेटा पैदा हुआ । उस बेटे के हाथ पैर नहीं थे । वह ठूठा था। केवल सिर था और पेट था । न हाथ था न पैर था । बेचारे माता पिता अपनी सन्तान जैसी भी हो उसका तो कल्याण चाहते ही हैं । उसको असाध्य रोग हो तब भी वे ध्यान रखते हैं । कहीं कोई मिल जाए तो हमारा बेटा ठीक हो जाए । ठूठे के उपचार के लिए उन्होंने बहुत उपाय किए लेकिन था ही नहीं हाथ-पैर जन्म से । कहाँ से आ जाते ? अब जब यह बालक बड़ा हुआ तो उसका मुख चलने लगा । अगर कोई देर लगती थी किसी बात में तो डाँटता था । अब बेचारी माता घर के लोग भोजन देना पानी पिलाना, कपड़े पहनाना, नहलाना, धुलाना सब कुछ करते थे । लेकिन वह बीच में जरा सी भी त्रुटि हो जाए तो एकदम से डाँटता था । माँ-बाप ने कहा बेटा कि तुम्हारे न हाथ है न पैर है पर तुम्हारा मुँह इतना तेज है । अगर हम तुमको छोड़ दें तो तुम क्या करोगे ? उसने कहा –

प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यो देवोऽपि तं वारयितुं न शक्तः ।
तस्मान्न शोचामि न च विस्मयो मे यदस्मदीयं नहि तत् परेषाम् ।।

जो हमारा है वह हमको मिलकर रहेगा । तुम क्या कहती हो ? एक दिन वे लोग इस पर नाराज हो गए। बैलगाड़ी में बैठाया और घोर जंगल में एक पेड में टिकाकर चले गए । कहा जाओ । फिर भी उसने यह मिन्नत नहीं की कि हमें छोड़कर मत जाओ, मेरा क्या होगा ? केवल बोलता रहा **यदस्मदीयं नहि तत् परेषाम् ।**

संयोग से पेड़ में टंगा हुआ था । इतने में चरवाहे गौवे चराते हुए वहाँ आए । पेड़ में इसको टिका हुआ देखकर इन्होंने समझा कि यह कोई भगवान् की मूर्ति है । वे अपने साथ कलेवा लाए थे । अपने हाथ से उसको मुँह में खिलाने लगे और पत्तो का दोना बनाकर गाय दुहकर दूध पिलाने लगे । फिर और भी जितनी हो सकी करने लगे । नियम से करने लगे पर वह उनको भी फटकारने लगा । वह भी डर के मारे उसका सब काम करते थे । इस तरह से बहुत से लोग उसके दर्शन के लिए आने लगे । एक बार नारद

जी घूमते-घूमते वहाँ पहुँच गए। उन्होंने देखा कि हाथ नहीं, पैर नहीं, असमर्थ है लेकिन फिर भी इसके मन में दीनता नहीं है। दैन्य नहीं है। नारद जी ने जाकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश से कहा कि मृत्युलोक में हमने एक ऐसा मनुष्य देखा है जिसके न हाथ है न पैर है लेकिन उसके हृदय में अपनी असहायता का कोई क्लेश या मन में किसी प्रकार का दैन्य नहीं है। त्रिदेव बोले कि हम भी जाकर देखेंगे। जाकर तीनों सामने खड़े हो गए। इसने देखा कि तीन देवता खड़े हैं। बोला कि कहिए आपलोग कैसे आए ? बोले कि आपको देखने आए। देख लिया तो जाओ। बोले भाई ! हम ब्रह्मा, विष्णु, महेश है। हमारा दर्शन निरर्थक नहीं होता है। बोला ठीक है। तुम क्या करोगे। जो हमारा है वह हमको मिलकर रहेगा ही। वे चले गए। उन्होंने सोचा कि अब तो व्यक्ति को राज दे देना चाहिए। उसके हाथ पैर भी ठीक कर देना चाहिए। उसको एक गाँव के बाहर नगर के बाहर एक चबूतरे में इसको रात को ले जाकर भगवान् ने बैठा दिया। हाथ पैर जोड़ दिए और उस राज्य में चाहारदीवारी थी। एक ही दरवाजा था। वहाँ का नियम था कि राजा जब मर जाता था तो किवाड़ बन्द हो जाता था। रात भर किवाड़ बन्द रखने के बाद भोर में जब किवाड़ खोला जाता था तो जो सामने दिख जाए उसी को राजा बना दिया जाता था। यह ठूँठा बैठा था। किवाड़ खुला तो लोगों ने कहा कि मिल गए राजा। हाथी में बैठाया। टनाटन घण्टा बजा। ले जाकर सभागार में सिंहासन में बैठा दिया। वहाँ बैठ गया। वहाँ जाकर मन्त्रियों को भी डाँटने लगा। थोड़ी सी गड़बड़ी हो तो भी डाँट देता था। एक दिन उसने वहाँ अपने माँ बाप को बुलाया। वे महल में आए। उन्होंने सोचा कि राजा ने क्यों हमें बुलाया है ? हमसे क्या कसूर हो गया ? आकर खड़े हुए हाथ जोड़कर कि हूजूर कैसे याद किया? बोला कि हमको पहचाना ? कहने लगे कि हम तो नहीं पहचानते। बोला कि हम वही ठूठ हैं। जिसको आपलोग जंगल में छोड़कर आए थे। जो हमारा है वह हमको मिलकर रहेगा।

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत कर्म भोग सब भ्राता।

इसलिए कैकेयी को कोई दोष नहीं है। हमारे भाग्य में ही वनगमन लिखा था। बदी जो है वह होकर रहती है। हमारे भाग्य में वनवास बदा था तो तुम लौटकर जाओ। हमें तो वह भोगना ही पड़ेगा। कहते हैं जैसे हजार बछड़ों के बीच में गौ अपने ही बछड़े को दूध पिलाती है उसी तरह से संसार में प्राणी कहीं चला जाए कर्म उसको खोजकर उसके पास चला जाता है। वहीं जाकर उस कर्म का फल देता है। कर्म में ही यह शक्ति है और कर्म का फल ईश्वर की ओर से प्राप्त होता है। यह बात नारद जी ने सुनी समझी कि मेरी मुक्ति का बाधक मेरी माता का स्नेह था। यह मुझे वहाँ से मुक्त नहीं होने देती

थी । अब वह मैंने समझ लिया । अब वहाँ जब वह ध्यान में बैठे, मूर्ति हृदय में हट गई, मन में व्याकुलता हुई ।

हम बता रहे थे अपरिपक्व कषाय ।

कच्चा फल डाल से जल्दी नहीं टूटता है । जब पक जाता है तो अपने आप टूटकर गिर जाता है । मन में जब तक कषाय माने कच्चापन है तब तक बन्धन नहीं छूटता । राग द्वेष ही कषाय हैं । यह कषाय विचार से दूर होता है तो संसार से आसक्ति का बन्धन टूट जाता है । कहने का मतलब यह है कि नारद जी फिर तपस्या करते रहे और दूसरे जन्म में वह ब्रह्मा के पुत्र हुए । देवर्षि नारद हो गए । यह होता है सत्संग ।

वाल्मीकि नारद घट जोनी । निज निज मुखन कही निज होनी ।।

जलचर थलचर नभचर नाना । जे जड चेतन जीव जहाना ।।

मति कीरति गति भूति भलाई । जब जेहि जतन जहाँ जो पाई ।।

सो जानब सतसंग प्रभाऊ । लोकउ वेद न आन उपाऊ ।।

सत्संग के प्रभाव से कौआ भी हंस हो जाता है । बक भी हंस हो जाता है और काक भी पिक हो जाता है । सत्संगरूपी सरिता में जो नहा लेता है वह तर जाता है –

मज्जन फल पेखिय तत्काला । काक होइ पिक बकहु मराला ।

यह सत्संग का प्रभाव है । कुसंग भी जैसे जहर है । आप यह समझिए कि अजामिल का उपाख्यान आप सुनें तो आपकी समझ में आ जाएगा कि बहुत अच्छा ब्राह्मण का बेटा था । वेद-वेदांग पढ़ता था । घर में पतिव्रता नारी थी । अग्निहोत्र करता था । अग्निहोत्र के ही लिए वन में समिधा लेने गया था । वहाँ सुरापान करके मदमस्त स्त्री और पुरुषों के विवाह को देखकर उसका मन इतना कलुषित हो गया कि वह वहीं जाने लगा और जाते-जाते अपने माता पिता और पत्नी को छोड़कर उसी का हो गया । पापों का कोई शुमार नहीं कि वह कितना पाप करने लगा । यह दुःसंग का प्रभाव है ।

सत्संग का प्रभाव क्या है ? अजामिल घोर पापी था । कई तरह के दुष्कर्म करता था । लोगों का अपहरण कर लेना, छल करके धन छीन लेना, हत्या कर देना ऐसे अनेकों उसके दुष्कर्म थे । अपने घर में जुआ खिलाना, सुरापान कराना यही सब अनुचित कार्य थे उसके । संयोग की बात है कि कुछ महात्मा लोग तीर्थयात्रा के लिए जाते-जाते सायंकाल एक गाँव में पहुँचे जिस गाँव में अजामिल रहता था। उन्होंने पूछा कि भाई !

गाँव में कोई अच्छे सद्गृहस्थ का घर हो तो रात्रि में हमलोग विश्राम करें । वहाँ कुछ लम्पट मिल गए । उन्होंने सोचा कि ऐसी जगह बताओ जहाँ इनके लता-पत्र भी खत्म हो जाएँ । इनके दण्ड-कमण्डलु का भी पता न लगे । बोले कि एक अजामिल नाम के बड़े पण्डित हैं उनके घर चले जाइए । महात्मा बेचारे मानकर चले गए । बड़ा सा आँगन था। सब अपनी अपनी मृगछाला बिछाकर कोई पूजा कर रहा है, कोई पाठ कर रहा है, कोई ध्यान कर रहा है । महात्माओं का समूह वहाँ बैठ गया। अजामिल कहीं बाहर था । लौटकर आया, देखा तो संस्कार तो थे ही पुराने । हमारे घर में महात्मा आ गए । उसने उनको प्रणाम कर लिया । महात्मा बोले कि कहिए ! अजामिल पण्डित जी आप ही हैं। बोला कि अरे महाराज ! पण्डित शब्द को कलंकित करने वाला मैं हूँ । आप यहाँ कैसे आ गए? आपके योग्य तो जगह है ही नहीं । मैं तो घोर पापी हूँ । बोले भाई तुम जैसे भी हो । हम तो आ गए । अब क्या करें ? बोले कि महाराज ! अब आप आ गए हो तो एक बात बताओ कि हमारा उद्धार कैसे होगा ? महात्माओं ने सोचा कि इसको जप-तप बतायेंगे तो करेगा नहीं, और यह अधिकारी भी नहीं है क्योंकि इसके लिए भी आचरण शुद्ध होना चाहिए । जब तक कि आचरण शुद्ध न हो मनुष्य साधना नहीं कर सकता । उन्होंने एक युक्ति बताई कि बोले तुम्हारा लड़का अगर हो तो उसका नाम नारायण रख देना । बस इसी नारायण नाम के बल पर उसका उद्धार हो गया । यह सत्संग का प्रभाव है ।

बन्धुओ ! सन्त-महात्मा लोग भ्रमण करते रहते हैं । आज वहाँ, कल वहाँ, परसो वहाँ । **बहता पानी निर्मला ।** पानी जब बहता रहता है तो निर्मल रहता है । एक जगह रहने पर गड़बड़ हो जाता है । एक साधु आया था हमारे पास । वह किसी गाँव में कुटी बनाकर रहता था । कहने लगा कि महाराज ! हम योगभ्रष्ट हो रहे हैं। हमारा कोई उपाय बताइए । हमने कहा कि तुम ऐसी जगह रह रहे हो जहाँ कोई अच्छे संस्कार वाले रहते ही नहीं हैं तो भ्रष्ट नहीं होगे तो क्या होगे? कहने का अभिप्राय यह है कि यदि मनुष्य को गिरना भी हो तो सत्पुरुषों में गिरे । राजा नहुष को स्वर्ग से ढकेला गया । ऋषियों ने शाप दिया तो गिरते-गिरते उसने कहा कि **सत्सु पतेयं** हम गिरें लेकिन सत्पुरुषों के पास गिरें । वहाँ गिरने पर हमारी बुद्धि शुद्ध हो जाएगी ।

ऐसा है कि साधु जो होते हैं दो तरह के होते हैं । एक सज्जन थे । उनसे पूछा गया कि आप महात्मा हो। सब लोग आपस में बात कर रहे थे । बताओ साधु क्यों हो गए । किसी ने कहा हमारी औरत मर गई । क्या करते घर में ? किसी ने कहा हमारे व्यापार में घाटा लग गया । किसी ने कहा हमसे कुछ अपराध हो गया । सजा होने की नौबत

थी तो हम साधु बन गए। कई कारण होते हैं साधु बनने के। बड़ा मुश्किल होता है। संसार में रहना भी तो बड़ा मुश्किल है। एक बोला कि हम तो नहीं बने लोगों ने हमको बना दिया। कैसे बना दिया? बोले कभी सन्त-महात्माओं के पास पैर नहीं रखते थे। एक महात्मा कहीं बाहर से आए। पेड़ के नीचे आसन जमाकर बैठे थे। दो चार उनके भक्त भी आस-पास बैठे थे। हम हल जोतने के लिए हल टाँगे जा रहे थे। हम भी खड़े-खड़े देखने लगे। बोले कि आइए महात्माओं के दर्शन के लिए आइए। तारीफ सुनकर दर्शन करने लगे। दर्शन करते-करते लोगों ने कहा कि नियम से महात्माओं की सेवा करो। तो हम सेवा करने लगे। फिर लोगों ने कहा कि यह तो अब महात्मा के प्रेमी हो गए। बराबर नियम से कथा सुनेंगे। कथा सुनने लगे। फिर लोगों ने कहा कि अब तो घर रहेंगे नहीं छोड़ देंगे। सबने कहा छोड़ देंगे तो छोड़ ही दिया। ऐसे भी हो जाता है। कभी-कभी परिस्थितियाँ ऐसी हो जाती हैं।

एक मिलेट्री का सिपाही था। आफीसर था कोई। वह अपनी स्त्री को घर में छोड़कर नौकरी करता था। माता-पिता भी थे। स्त्री भी थी। माता-पिता मर गए और वह बेचारा नौकरी करता था। स्त्री अकेली थी। क्या हुआ कि उस स्त्री का किसी परपुरुष से प्रेम हो गया। वह उसके साथ जाने लगी। परपुरुष भी उसके पास आने लगा।

सिपाही का अपनी स्त्री से बहुत प्रेम था। उसने अपनी नौकरी छोड़ी और पेंशन के सारे रुपये लेकर स्टेशन से उतरकर अपने घर आ गया। घर में आया तो सायंकाल पहुँचा। वहाँ पर उसने भोजन कराया। बिस्तर लगा दिया। सो गया। इतने में रात में उसका यार घर आ गया। उसने कहा कि अब हमारे पति आ गए हैं। तुम मत आओ। बोला कि हमारा तुम्हारा प्रेम तो अटल है। अब हम तुमको कैसे छोड़ सकते हैं। तुमको भी सच्चा प्रेम दिखाना चाहिए और इस कंटक को दूर करना चाहिए। बोली कि ठीक है तुम इसको मार डालो। बोला कि मारना तो तुम्हीं को पड़ेगा। हम हाथ पकड़ेंगे और तुम छुरा लो। उसकी छाती में भोंक देना। आपस में सलाह हो गई। संयोग की बात है जब वह स्टेशन से चला तो एक चोर था उसकी यह भावना हो गई कि इसका धन छीने, इसको मार कर। वह भी रात को उसके घर आ गया। एक आलमारी के पीछे सन्धि में छिप गया कि जब यह सो जाएगा तो हम इसको मारकर इसका धन छीन लेंगे। अब इतने में वह किवाड़ खटकाया उसके यार ने। स्त्री बाहर गई तो यह भी जाकर सुनने लगा। उनकी सलाह मारने की हो गई। यह फिर आकर अपनी जगह छिप गया। जब वह आया तो उसके मित्र ने हाथ पकड़ा। उसने छुरा उठाया। इतने में चोर वहाँ आ गया उसने उसकी स्त्री का हाथ पकड़ लिया और जोरों से ललकारा खबरदार ! इसकी आँख खुली

तो दीपक जल रहा था। उसने देखा कि क्या तमाशा है यह ? उसने कहा कि यह कौन है और यह कौन है । कौन है जिसने हमारा हाथ पकड़ा है और यह कौन है जो छुरा मार रही थी और तुम कौन हो । उसने बताया हम चोर हैं यह तुमको मारने के लिए आया है । तुम्हारी स्त्री से तुमको मरवा रहा है । तुम्हारी स्त्री का नया यार है । यह जब उसने सुना तो उसने क्या किया कि भैया ऐसा करो कि हमको छोड़ो । उसने आलमारी खोली रुपया की गड्डी उठाई और चोर को दे दिया । स्त्री को पकड़ाया उस यार के हाथ में और कहा कि हमें छोड़ दो । हमें बक्शो । इस तरह से हम साधु हो गए । ऐसा भी होता है। संसार के ठोकर कई तरह के होते हैं । कई लोग ऐसे होते हैं कि–

मूड मुड़ाए तीन गुण सिर की मिट गई खाज ।
बनी बनाई रोटी मिले लोग कहे महाराज ।।

वैसे ही बहुत से लोग मूड मुडा लेते हैं । इनका उद्देश्य सत्संग करना नहीं है । इनका उद्देश्य मोक्ष नहीं है । जो संन्यास लिया जाता है मोक्ष के लिए लिया जाता है । हम बता रहे थे कि अगर आपको मोक्ष प्राप्त करना है भक्ति प्राप्त करनी है तो ऐसे लोग बता ही नहीं सकेंगे । आप वहाँ बैठ ही नहीं सकेंगे । आप उनको अच्छे ही नहीं लगेंगे । उसी तरह के लोगों से उनका प्रेम होगा जो उसी के जैसे होंगे । **समानशीलं व्यसनेषु सख्यम् ।**

जिसके मन में भगवान् के प्रति प्रेम है वह उसी से प्रेम करेगा । हमलोगों ने देखा है शहरों में स्टेशन से जुआरी निकलेगा जुआ के अड्डे में पहुँच जाएगा । वैश्यागामी वैश्या के अड्डे में पहुँच जाएगा, शराबी शराब के अड्डे में पहुँच जाएगा, राजनीतिक अपनी पार्टी में पहुँच जाएगा और साधु सत्संग में पहुँच जाएगा । जिसका जहाँ प्रेम होता है वह वहाँ चला जाता है । अगर आपकी रुचि सही है तो दुनिया में आपको ठगने वाला कोई नहीं है । और आपको भगवान् की कृपा से भगवद्‌भक्त मिल जाएँगे । हमलोगों के चातुर्मास्य की यह आज अन्तिम सभा है ।

कथा है मरने वाले की । जो मनुष्य यह सोचता है कि हम संसार में आए हैं तो सदा रहेंगे । किसी कवि ने कहा है –

लट्टो लगे चाहे नोनो जू । एक दिन गोनो होनो जू ।
आए लेवहुआ लौटत नइहां, चाहे तोल दो सोनो जू ।।
लट्टो लगे चाहे नोनो जू ......

पहले जमाने में लड़कियों का विवाह छोटी अवस्था में ही हो जाता था और गौना

बड़ी अवस्था में होता था। ससुराल वाले आते थे बहू को विदा कराने। उसके माँ बाप कहते थे कि अभी हमारी बेटी छोटी है। कुछ दिन ठहर जाओ। कुछ ले देकर विदा कर देते थे। लेकिन अब जो यमराज आ गया है वह नहीं लौटेगा।

भीतर गोरी माँग सँवारे बाहर हो रहो रोनो जू।
लट्टो लगे चाहे नोनो जू ....

शरीर तो छूटने वाला है। जीवात्मा भगवान् से मिलने के लिए तैयार हो रहा है और बाहर घर के लोग रो रहे हैं कि हमें छोड़कर कहाँ जा रहे हो ?

चार जना मिल खाट उठावे ले चल ले चल गोनो जू।
लट्टो लगे चाहे नोनो जू ....

कहत कबीरा सुन भई साधो सतगुरु नाम ठिकानो जू।
लट्टो लगे चाहे नोनो जू ...

आप लोग सत्संग में बराबर आया करें। जहाँ भी रहे अगर कोई महात्मा मिल जाए तो उनका सत्संग करे। पण्डित मिल जाए तो उनका सत्संग करे। ठगों से बचें और नहीं तो आपस में ही बैठकर किसी सद्ग्रन्थ के आधार पर सत्संग किया करें। उतनी देर के लिए आप कुसंग से बच जाएँगे। ग्राम्य कथा से बच जाएँगे। हरि चर्चा से आपका हर प्रकार से कल्याण होगा। अभी हमलोगों की यह सब बातें हुईं। तीन महीने तक यहाँ बराबर सत्संग की गंगा बहती रही। इधर-उधर की प्रपंच की बातें हुई नहीं। एकदम भगवान् की कथा आपने सुनी। लगातार तीन महीने तक होता रहा। आज से इसका विराम हो जाएगा। फिर आप भी अपने-अपने घर का काम धाम देखिए। खेती पाती देखिए। व्यापार भी देखिए। बात यह है कि **भूखे भजन न होई गोपाला।** बिना कुछ खाए पिए कुछ नहीं हो सकता। अपने भोजन पानी का भी इंतजाम करते रहो। नवरात्र आ रहा है।

शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी।

शरत्काल में भगवती की आराधना कर लो जिससे आपकी शक्ति बढ़े। दुःख दारिद्र्य दूर हो। बुद्धि आपकी शुद्ध हो जाए। यहाँ भगवती राजराजेश्वरी विराजमान हैं। दुर्गा काल्यादि रूप यहीं हैं। यही दुर्गा है, यही काली हैं, यही छिन्नमस्ता है, यही बगला हैं, यही मातंगी हैं, यही धूमावती हैं, यही कमला हैं, त्रिपुरभैरवी हैं, यही तो हैं। यही गायत्री हैं। यही जगन्माता हैं। इन माता के चरणों में अपना मस्तक झुकाना चाहिए

और बड़ी करुणामयी हैं। इनका दर्शन-स्मरण करने से, इनका नाम लेने से कल्याण होता है।

यह अपना जो आश्रम है परमहंसी गंगा आश्रम यहाँ आप आइए। हमलोगों ने यह व्यवस्था की है कि यहाँ कोई पण्डागिरी नहीं है। किसी से नहीं कहा जाता कि यहाँ इतना चढ़ाओ। कहीं कोई ऐसा बोलने वाला नहीं है। लोगों को तो इस बात की शिकायत है कि हम आते हैं तो हमें कोई पहुँचाने वाला नहीं है। धक्का खाकर चले जाते हैं। यह यहाँ की विशेषता है। आप यहाँ जहाँ चाहें आकर भजन करें अपनी इच्छा से। गुफा में बैठकर ध्यान करें, मठ में सत्संग करें, विचार शिला में विचार करें। यह अपने ढंग का तीर्थ बना हुआ है जहाँ पर कोई किसी को सताने वाला नहीं है और सन्त सेवा करना हो करें, न करना हो मत करें। हमलोग तो ठूठा जैसे हैं। जब भगवान् को देना होगा तो वह छप्पर फाड़कर देगा।

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[29]

।। राम राम उन्तीस ।।

कथा सुनने से होता है भगवान् के चरणों में प्रेम

समुपस्थित सज्जनो, देवियो !

चराचरात्माऽऽसनिमीलितेक्षणः । पूतना के आते ही बालकृष्ण ने आंख मूंद ली। इस पर अनेक भाव हैं। कोई कहता है कि कौन क्या कर रहा है इस ओर सज्जनों को ध्यान ही नहीं देना चाहिए।

कः किं करोति इति अव्यापृतबुद्धिः स्यात् ।

संसार में नाना प्रकार के कर्म लोग कर रहे हैं। यदि हम उसका चिन्तन करते रहेंगे तो भगवान् का चिन्तन कब होगा ? सज्जनों को अपना मन भगवान् में लगाना चाहिए। संसार का कर्म करने वाले लोगों के कर्मों की तरफ ध्यान नहीं देना चाहिए। आँख मूँद लो कि कौन क्या कर रहा है ? आँख फेर लो, दूसरों के पाप मत देखो। उससे अपना भला नहीं होना है। सज्जनों की यह रीति है और भगवान् सज्जनों के इष्टदेवता हैं। उन्होंने आँख मूँदकर यह बतलाया कि बस तुम अपना मन हटा लो। दुर्जनों से न तो प्रेम करना अच्छा और न बैर ही करना अच्छा।

उदासीन नित रहिय गोसाईं । खल परिहरिय श्वान की नाईं ।

कुत्ते से प्यार करोगे तो चाटेगा और झगड़ा करोगे तो काटेगा। हानि दोनों में है। इसीलिए भाई ! अपना मन हटाओ। उदासीन हो जाओ। भगवान् ने अपनी आँखें मूँद ली। एक भाव भगवान् का यह भी है कि यह पूतना हमें मारने आई है। इसके स्तन में जहर है। अपने स्तनों में हलाहल विष लपेटकर पूतना आई थी कि गला नहीं दबाऊँगी दूध पिलाऊँगी और स्तन को मुँह में दूँगी। जहर रहेगा तो दूध के साथ जहर भी इसके पेट में चला जाएगा और यह अपने आप मर जाएगा। भगवान् ने सोचा कि यह तो जहर लेकर आई है। हम तो यहाँ पर दही, दूध, माखन खाने आए हैं। माखन मिश्री खाने आए थे। **जहाँ जाए भूखा वहीं पड़े सूखा ।**

अपना-अपना भाग्य होता है। वैकुण्ठ छोड़कर आए। माखन-मिश्री तो नहीं, यहाँ जहर मिल रहा है। भगवान् शंकर जी को याद करने लगे कि महाराज ! माथे की यह

रेखा तो मिटाओ। कम से कम ठीक से खाने पीने को मिले । इसीलिए भगवान् ने अपनी आँखें मूँद लीं । और इसलिए भी अपनी आँखें मूँद लीं क्योंकि उन्होंने सोचा कि जब देवताओं और असुरों ने मिलकर समुद्र मन्थन किया था तो सबसे पहले हलाहल विष निकला था वह विष उन्होंने शंकर जी को पिला दिया था । भगवान् विष्णु ने जहर नहीं पिया था ।

असुरों को पिला दी शराब, शंकर को दे दिया विष और आप रमा और कौस्तुभ मणि ले लिए । बेचारे शंकर जी जहर पीकर रह गए । जहर पीने के कारण शंकर जी देवों के देव महादेव माने गए । जो प्रजा के लिए जहर पी ले और स्वयं विष पान करके दूसरों को अमृत पिलाए वही महान् होता है । जो स्वयं अमृत पिए और दूसरों को विष पिलाए वह महान् नहीं है । भगवान् ने कहा कि महाराज ! ऐसा है कि अब जहर पीने का मौका आ गया है । यह पूतना स्तन में जहर लपेट कर आई है तो ऐसा करो कि बँटवारा कर लो । जहर-जहर आप पी लो और दूध-दूध हम पी लेंगे । पूतना के स्तनों का जहर आप और दूध हम पी लें । इसलिए आँख मूँदकर भगवान् शंकर का भगवान् श्रीकृष्ण ने ध्यान किया है ।

एक भाव यह भी कि यह बात सोची कि क्या बताएँ ? यह पूतना अगर हमको दूध पिलाने के लिए ही आई थी तो कोई और रूप बनाकर आ जाती । लक्ष्मी बनकर ही आ गई । अपनी पत्नी का ही दूध पिएँ हम यह कहाँ तक ठीक है ? **शान्तं पापं ।** इसलिए भगवान् ने आँख मूँद लिया । ऐसे अनेकों भाव हैं ।

भगवान् ने अपनी आँखें मूँद ली और पूतना ने देखा कि छोटा सा बालक और वह भी आँख मूँदी हुई है, सो रहा है । इसको मारने में क्या देर है ? बस आई और देखते ही देखते कृष्ण को गोद में ले लिया । उनकी माता यशोदा जी बैठी थी । साथ में दूसरी सहेलियाँ भी सब उसकी प्रभा से हर्षित हो गईं । उसने इतना प्यार जताया कि सन्देह हो गया कि बेटा यशोदा का है कि इसका ही है। नक्काल लोग होते हैं वे असल को मात करते हैं । जो सही होता है उसको वे डाउन कर देते हैं अपने रूपक से । इस पूतना ने भी यशोदा जी को मात दे दी। कितना प्यार । आ हा । बड़े प्यार से झट गोद में उठा लिया । खिलाते-खिलाते अपना स्तन निकालकर भगवान् के मुँह में दे दिया । भगवान् ने भी सोचा कि हमने तो खूब बचने की कोशिश की । जब आ ही गई तो क्या किया जाए? भगवान् के मुख में जब पूतना ने अपना स्तन दे दिया तो सोचा कि हम तो प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि-

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।

जो जिस प्रकार मेरी शरण में आता है मैं उसी प्रकार उसका भजन करता हूँ। मुझे मारने आई है इसलिए मैं भी इसे मारने के लिए ही पियूँगा। अगर जिलाने आती तो जिलाता लेकिन मारने आई है तो मैं भी मारूँगा। भगवान् ने उस स्तन में जो दुग्ध था उसके साथ साथ **प्राणैः समं रोषसमन्वितोऽपिबत्** । पूतना के प्राणों के सहित रोष समन्वित होकर पूतना का स्तन पीने लगे। **रोषसमन्वितः** अब यह बात आ गई। क्रोध के सहित। क्रोध होता है तमोगुण। तमोगुण के देवता हैं रुद्र। उनके सहित पिया। **प्राणै समं ।** इस पूतना ने न जाने कितने बालकों का वध किया था। उसके पेट में भक्तों के प्राण प्रतीक्षा कर रहे थे। मानों भगवान् ने उन सबको मोक्ष देने के लिए पूतना के स्तनों को दूध के साथ प्राणों को भी पीना आरम्भ कर दिया। जब मनुष्य के प्राण निकलते हैं तो मनुष्य के जो मर्मस्थान हैं उनमें पीड़ा होने लगती है। जब पूतना के मर्म में पीड़ा होने लगी तो जैसे लोगों को तो रस्सी में साँप का भ्रम होता है वैसे ही इसको साँप में रस्सी का भ्रम हो गया। वह समझती थी कि कृष्ण का काल मैं हूँ। अब जब भगवान् ने उसके प्राणों को खींचा और उसके मर्म में पीड़ा होने लगी तो घबराकर बोली कि छोड़-छोड – **सा मुञ्च मुञ्चालमितिप्रभाषिणी** ।

भगवान् ने कहा कि देखो ! हमें पकड़ने में भले ही देर लगे लेकिन जब हम पकड़ लेते हैं तो छोड़ते नहीं है। अब हो गया अब तो पकड़ ही लिया। कह रही है छोड़ कृष्ण और जोरों से उसके स्तनों को अपने हाथ से पकड़े हुए हैं। अब उसको इतनी पीड़ा हुई कि भूल गई कि वह क्या बनकर आई थी। उसका सारा स्वरूप इधर-उधर हुआ। भयंकर राक्षसी बनी। अपने वास्तविक रूप में प्रकट होकर भागी। भगवान् उसके स्तनों में लटके हुए चले गए। गोकुल के बाहर जहाँ वन था वनों को चर्पट करते हुए निर्जीव होकर वह गिर पड़ी। भगवान् उसके स्तनों के ऊपर छाती में बैठकर खेलने लगे। भगवान् ने पूतना को मारा नहीं।

भक्तों का कहना यह है कि भगवान् तो बड़े दयालु हैं। वे क्यों मारते पूतना को ? पर कारण यह बन गया कि उसने स्तन में हलाहल विष लपेट लिया था और बच्चों के नख बड़े पैने होते हैं। उन्होंने जब स्तन पकड़ा तो नख गड़ गया। नख गड़ने से उसमें से निकला खून। खून में मिल गया विष और वही इंजेक्शन बन गया। सारे शरीर में जहर फैल गया और वह अपने आप अपने कर्म से मर गई। भगवान् ने थोड़े ही मारा। इस प्रकार पूतना निष्प्राण हो गई। गोकुल के निवासी दौड़े, गोपियाँ दौड़ी। जिधर-जिधर

पूतना के पैर के निशान थे देखते हुए जहाँ पर वह गिरी पड़ी थी वहाँ पहुँचे। कृष्ण तो खेल ही रहे थे। उनको भय था नहीं। झट गोपियों ने कृष्ण को उठाया और यशोदा जी की गोद में दे दिया कि आज बच गया तेरा बेटा। साक्षात् मौत के मुँह में चला गया था। यशोदा जी ने गोद में लिया। अपना स्तन देना चाहा। भगवान् ने यशोदा जी का स्तन नहीं पिया। दूध का जला छाँछ भी फूँक-फूँककर पीता है। कहीं यहाँ भी विष न हो। यशोदा जी ने झाड़ने-फूकने वाले बुलाए, सब उपचार किया। गोपियों के, गोविन्द के जो बारह नाम हैं उन नामों से गोबर की टिपकी लगाकर भगवान् के शरीर में न्यास किया। इसके द्वारा यह बतलाया कि भगवान् का रक्षण भी नाम करता है। नाम इतनी बड़ी वस्तु है कि भगवान् तक की रक्षा करती है फिर भक्तों की तो रक्षा होनी ही है। इस तरह से श्रीकृष्ण ने फिर बाद में दूध पिया। सारे गोकुल के निवासी एकत्र हो गए। उसकी आँखें लगता था जैसे सूखा कुँआ हो, नाक ऐसी थी जैसे दोनों कुँओं के बीच में पुल हो और नाक के छिद्र मालूम पड़ते थे कि पहाड़ की गुफा है। जैसे हल का फाल होता है ऐसे पैने-पैने दाँत। गोपों को तो देखकर ही डर लगता था कि इतनी भयानक राक्षसी ? इसके हाथ से कृष्ण बच गए। इतने में नन्द जी आए तो सब कहने लगे कि नन्द तुम्हारे ऊपर भगवान् की कृपा है जो बालक बच गया। सब लोगों ने सोचा कि राक्षसों का कोई ठिकाना नहीं है। कहीं फिर जिन्दा न हो जाए। कुल्हाड़ी से काट काटकर उसके अंगों को टुकड़े-टुकड़े किया और जंगल से लकड़ी लाकर चिता सजाई और उसमें उसके शरीर को आग लगाई। उसके शरीर से जो धुआँ निकला वह इतना सुगन्धित था जैसे अगरू। जिसका स्तन भगवान् पी ले उसमें अपवित्रता, दुर्गन्ध कहाँ रह सकता है ? भगवान् ने उस राक्षसी रुधिरासना पूतना जिसका नाम ही था जो पवित्र नहीं है। ऐसी राक्षसी को भी मोक्ष प्रदान कर दिया। यह सोचकर कि यह हमारी माता तो हो ही गई चाहे जहर ही पिलाया हो। इसलिए जो गति माता को मिलनी चाहिए वह गति पूतना पा गई। इसीलिए कहा है –

अहो बकीयं स्तनकालकूटं जिघांसया पाययदप्यसाध्वी।
लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं कं वा दयालुं शरणं ब्रजेम ।।

देखो कितने आश्चर्य की बात है कि यह **पूतना लोकबालघ्नी राक्षसी** बकी माने बकासुर की बहन। बक जो होता है वह दम्भ का प्रतीक होता है। बगला दम्भ का प्रतीक है। बगला बिना हिले-डुले पानी में खड़ा रहता है। जैसे ही मछली आती है टप से खा लेता है। भगवान् रामचन्द्र जी ने कहा कि देखो लक्ष्मण।

पश्य लक्ष्मण पम्पायां बकः परम धार्मिकः ।
मन्दं मन्दं पदं धत्ते जीवानां वधशंकया ।।

बोले कि लक्ष्मण ! देखो । यह बक कितना धार्मिक है ? जीव मर न जाए पैरों से दबकर इसलिए धीरे धीरे पैर रखता है । वहीं एक मछली थी पानी के अन्दर । उसने जब राम के उद्‌गारों को सुना तो वह बोल पड़ी।

बकः किं वर्ण्यते राम येनाहं निष्कुलीकृता ।
सहवासी हि जानाति चरितं सहवासिनाम् ।।

अरे राम ! इस बगुले का क्या वर्णन करते हो ? इसने हमारे खान्दान में एक को भी नहीं बचने दिया। जो साथ में है वही साथ वाले का स्वभाव जानता है । दूसरा नहीं। यह बकासुर की बहन बकी है ।

कहते हैं एक टेढ़ी खीर की कथा है । एक जगह भोजन के लिए बुलाया गया । पंक्ति बैठी । सब चीजें परोसीं जानी लगे । अन्धे से अपने बाजू के लोगों से पूछा कि क्या-क्या है उसने बताया कि पूड़ी है, सब्जी है, चावल है, दाल है । इतने में जब खीर आई तो उसने कहा कि यह क्या है ? उसने कहा कि खीर है । पूछा कि खीर कैसी होती है ? लोगों ने कहा कि सफेद होती है । कहा सफेद कैसा होता है ? लोगों ने कहा जैसे बगला होता है । पूछा कि बगला कैसा होता है तो उसने हाथ ऐसा किया । हाथ से टटोला अन्धे ने और कहा कि अरे खीर तो बड़ी टेढ़ी होती है । हम नहीं खाएँगे । तभी से टेढ़ी खीर कहावत चल पड़ी। यह बगला बड़ा टेढ़ा होता है । जो दाम्भिक लोग होते हैं, मक्कार लोग इनकी वाणी में कुछ होता है, मन में कुछ होता है और कर्म में कुछ होता है । **मनस्यन्यत् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यत् दुरात्मनाम् ।** मन में कुछ, वचन में कुछ और कर्म में कुछ यह दुरात्माओं का काम है । **मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्** । मन, वचन और कर्म से एक रहना ही महात्माओं का काम है ।

यह बकी दम्भ को लेकर आई थी और बनी थी वात्सल्यमयी । भगवान् ने उसका दुर्गुण नहीं देखा । स्तन से दूध थोड़े ही पिलाया । उसमें कालकूट विष लपेटकर आई थी। उसकी भावना क्या थी ? **जिघांसया** मारने की इच्छा से पिलाया । यद्यपि असाध्वी थी परन्तु माता की गति उसको भगवान् ने दे दी । कौन ऐसा दयालु है जिसकी शरण में हम जाएँ ? **कं वा दयालुं शरणं ब्रजेम ।**

ब्रह्मा जी तो पूछ उठे कि आप ब्रजवासियों को क्या देंगे ? भगवान् ने कहा कि उन सबको हम मुक्ति देंगे। बोले मुक्ति तो पूतना को भी आपने दे दी तो भगवान् बोले कि हम

ब्रजवासियों के पूरे कुल-कुटुम्ब को मुक्ति दे देंगे। ब्रह्मा जी ने पूछा कि पूतना के कुल-कुटुम्ब में भी कौन बचा? सबको तो आपने मुक्ति दे दी । क्या यह न्याय होगा कि जो पूतना को गति मिली वही माता यशोदा को और वही ब्रजवासियों को मिले ? भगवान् ने कहा कि हम सदा इनके ऋणी रहेंगे । कभी इनसे उऋण नहीं हो सकते । ऐसे भगवान् दयालु हैं जो सबके ऊपर दया करते हैं । इस प्रकार भगवान् ने पूतना को मोक्ष प्रदान किया । कहते हैं जो पूतना के चरित्र को सुनता है उसकी भगवान् गोविन्द के चरणों में प्रीति हो जाती है । अब राजा परीक्षित ने कहा कि –

येन येनावतारेण भगवान् हरिरीश्वरः ।
करोति कर्णरम्याणि मनोज्ञानि च नः प्रभो ।।

भगवान् जिन अवतारों से जो-जो चरित्र करते हैं, जो मनोज्ञ होते हैं, रम्य होते हैं वो आप सुनाइए ।

यच्छृण्वतोऽपैत्यरतिर्वितृष्णा सत्त्वं च शुद्ध्यत्यचिरेण पुंसः ।
भक्तिर्हरौ तत्पुरुषे च सख्यं तदेव हारं वद मन्यसे चेत् ।।

जिस भगवत्कथा के श्रवण से **अपैत्य रतिः** मनुष्य को भगवान् की कथा अच्छी लगती है ।

पूर्व जनम के पाप ते हरि चर्चा न सुहाय ।
जैसे ज्वर के जोर ते भोजन की रुचि जाय ।।

पहले जन्मों के पाप से प्राणी को भगवान् की चर्चा अच्छी नहीं लगती । जैसे जिसको बुखार आया हो उसके सामने छप्पन व्यंजन रख दो । पापी को भगवान् के चरित्र अच्छे नहीं लगते। एक तो वह वहाँ जाता ही नहीं है। जहाँ भगवान् की कथा होती हो वहाँ उसके पैर पड़ेंगे ही नहीं और अगर कुछ मित्रों ने कहा भी कि चलो तो वह बार-बार घड़ी देखेगा कि कब खत्म हो और कब भागे । जैसे पानी में कोई गर्दन दबा दे तो वैसी ही घुटन लगती है उसको सत्संग में ।

सम्बुक भेक सेवार समाना । इहां न कथा विषय रस नाना ।।
तेहि कारण आवत हिय हारे । कामी काक बलाक विचारे ।।

जैसे मलिन सरोवरों में घोंघा, सीप कीड़े-मकोड़े आदि रहते हैं । कौआ और बगुला उनको खाने के लिए पहुँच जाते हैं लेकिन हंस नहीं जाता । इसी प्रकार जहाँ भगवान् की कथा होती है वहाँ विषय रस तो है नहीं । आने में ही वे लोग संकोच करते हैं और यदि

आ भी गए तो उनको नींद आ जाती है । जैसे कोई तीर्थ में नहाने के लिए जाए और उसी समय उसको बुखार आ गए और छींक आने लगे जुकाम से तो लोग कहते हैं कि मत नहाओ ऐसे ही उसको हो जाता है –

जो करि कष्ट जाइ पुनि कोई । जातहिं नीद जुड़ाई होई ।।
जड़ता जाड विषम उर लागा । गयेउ न मज्जन पाव अभागा ।।

जड़ता का ज्वार जब लग जाता है तो वह पहुँचने पर भी स्नान नहीं कर पाता ।

एक भागवती पण्डित थे गुजरात में । वे बता रहे थे कि एक कोई सेठ था । बहुत बड़ा आदमी था । उसने भागवत कराई । बड़ा भारी पण्डाल बना, लाउड स्पीकर लगा, बिजली लगी। अच्छे पण्डित बुलाए गए । पहले दिन स्नान किया जाता है प्रायश्चित्त का। सेठ जी ने स्नान किया ठण्डे पानी के सरोवर में तो उनके कान बन्द हो गये। सात दिन कथा होती रही । एक भी शब्द कान में नहीं पड़ा । कुछ सुनाई ही नहीं पड़े । अब जब सात दिन बाद कथा समाप्त हो गई और कथा खत्म होने के बाद अन्तिम दिन जुलूस निकला और उसमें पटाखे फोड़े गए तो उनके कान खुल गए । **जन्मान्तरे यदा पुण्यं तदा भागवतं लभेत्** । जिसके जन्म-जन्मान्तर के पुण्य होते हैं उसी को भगवान् की कथा प्राप्त होती है । समझ में आता है, रुचि आती है । भगवान् की कथा अच्छी नहीं लगती लेकिन यदि भगवान् की मनोरम बाल-लीलाओं को सुनें तो प्रेम भी हो जाता है । **अरति ।** यह जीव का बहुत पुराना रोग है । अपने उपनिषदों में कहा है हिरण्यगर्भ का जब जन्म हुआ तो उसको अकेले अच्छा नहीं लगा –

स एकाकी नाऽऽरमत् । ततो द्वितीयं असृजत् । एकोऽहं बहुस्याम प्रजायेय ।

अकेले में अच्छा न लगना **अरति** है । इसीलिए घर में कोई न हो तो लोग पड़ोसी के यहाँ पहुँच जाते हैं और कोई काम न हो तो ताश खेलने लगते हैं कि मन नहीं लग रहा। यह जीव की बीमारी है । यह **अरति** भगवान् की कथा के श्रवण से दूर होती है।

लोग कहते हैं कि चलो कथा हो रही है सुन लें । कहते हैं कि हम तो कई बार सुन चुके हैं । वही तो कथा है । कथा से मन का हट जाना – **राम कथा जे सुनत अघाहीं। रस विशेष जाना तिन नाही** । जो भगवान् की कथा सुनकर अघा जाते हैं उन्होंने भगवान् की कथा के रसविशेष को जाना ही नहीं । यदि उसके रसविशेष का ज्ञान हो जाए तो मनुष्य सौ कोस से दौड़कर आता है। कथा सुनता है । यह वितृष्णा है । बढ़ी हुई तृष्णा। तृष्णा का कोई अन्त नहीं है । कितना ही खाते जाओ तृष्णा बनी रहती है । कितना ही

धन मिल जाए तृष्णा बनी रहती है । तृष्णा पिशाची है । सारे संसार के भोग एक साथ किसी को दे दो और उसके हृदय में यदि तृष्णा है तो कभी वह सुखी नहीं होगा । इस तृष्णा का भी अन्त भगवान् की कथा के श्रवण से होता है ।

मनोरंजन के अनेकों साधन होते हैं । आप सिनेमा देखते हैं । अच्छे दिल से जाते हैं। लेकिन जब वहाँ से देखकर लौटते हैं तो ऐसा लगता है कि लिपे पुते आँगन में किसी ने कचरा डाल दिया । मन मलिन हो जाता है । भगवान् की कथा की यह विशेषता है कि मन भी लगता है और मन शुद्ध भी होता है ।

भक्तिर्हरौ । कथा सुनते-सुनते भगवान् के चरणों में प्रेम होने लगता है । **तत्पुरुषे च सख्यं ।** भगवान् के भक्तों से मित्रता हो जाती है । **तदेव हारं ।** हीरे का हार हार नहीं है। हरि के चरित्र हार है । **बलमन्यसे चेत्** यदि आप समझते हैं कि मैं उस कथा के श्रवण का अधिकारी हूँ तो आप कृपा करके बताइए । श्री शुकदेव जी बोले एक दिन भगवान् का जन्म नक्षत्र आया और उस दिन भगवान् ने अपने आप करवट ले ली । माता यशोदा ने उसका उत्सव मनाया । अपने परिवार की और दूसरी-दूसरी महिलाओं को भोजन के लिए निमन्त्रित किया । ब्राह्मणों को बुलाकर स्वस्तिवाचन कराया, दान दिया और भगवान् श्रीकृष्ण को स्नान कराया । आँखों में अंजन लगाया प्यार से दूध पिलाया । और जब देखा कि इनकी आँख में आलस्य आ रहा है तो एक पलने में सुला दिया और एक बहुत बड़ा शकट था, बैलगाड़ी थी उसके नीचे उसकी छाँव में भगवान् का पालना रख दिया । जो बच्चे खेल रहे थे उनसे कहा कि देखना उठ जाए तो हमें बता देना । वे खेलने लगे । इतने में ही एक शकटासुर नाम का दैत्य जिसका शरीर नहीं था उसकी छाया उसमें आ गई । भगवान् की नींद खुली और रोने लगे। बालक जब रोते हैं तो हाथ पैर फटकारते हैं । भगवान् के लाल-लाल मूँगों जैसे चरणतल उछलने लगे । उछालते-उछालते भगवान् ने एक लात उस शकट के ऊपर जो मारी वह पलट गया । **विध्वस्त नानारसकुप्यभाजनम्।** उसमें दूध रखा था, दही रखा था, मधु रखा था सब उलट गया । बड़े जोरों की भड़भड़ की ध्वनि आई तो गोप-गोपियाँ दौड़कर आई देखा कि यह शकट उलटा पड़ा है । कैसे अपने आप उलट गया ? जो खेलने वाले बालक थे उन्होंने कहा कि इसी की लात से उलटा है पर किसी ने इस बात पर विश्वास नहीं किया । सब पूजा करके देवताओं की उसको ज्यों का त्यों रखा । सब सामान रखा । इस प्रकार भगवान् की लीलाएँ होने लगी ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

हर हर महादेव !

[30]

।। राम राम तीस ।।

अपने आराध्य में अटूट विश्वास और श्रद्धा होनी चाहिए

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

मनुष्य को अपने आराध्य में अटूट विश्वास और श्रद्धा होनी चाहिए । इसी श्रद्धा और विश्वास के बल पर मनुष्य अनेकों कार्य करने में सक्षम हो जाता है ।

हम एक दृष्टान्त दिया करते हैं कि एक बार एक पण्डित और मौलवी रेल में यात्रा कर रहे थे । दोनों में बातचीत होने लगी । दोनों अपने-अपने ईश्वर के बारे में बताने लगे। पण्डित कहने लगे हमारे भगवान् संकट में रक्षा करते हैं इसलिए हमारा ईश्वर सबसे बड़ा है और मौलवी कहने लगे कि हमारे खुदा रक्षा करते हैं इसलिए वह तुम्हारे ईश्वर से बड़ा है । दोनों में शर्त लग गई । एक ने कहा अगले स्टेशन में एक ऊँचा लम्बा पेड़ है । उस पेड़ से दोनों कूदो । जिसका ईश्वर बड़ा होगा उसका कुछ नहीं होगा। दोनों तैश में आ गए । रेल से उतरकर गए उस पेड़ के पास । पण्डित से कहा कि तुम चढ़ो और कूदो । पण्डित चढ़ा और चढ़कर उसने कहा कि राजा रामचन्द्र की जय । जो कूदा तो उसे कुछ नहीं हुआ । फूल जैसा गिर गया। अब मौलवी साहब से कहा गया कि तुम कूदो। वो चढ़ा उसने चढ़कर देखा तो कहा कि बहुत ऊँचा है । हम यदि कूदेंगे तो हमारा पैर जरूर टूट जाएगा । और इसका राम कुछ ठीक मालूम पड़ता है। क्योंकि इसका कुछ नहीं बिगड़ा। ऐसा कूदना चाहिए जिससे कि कोई आकर बचा ले । मौलवी कूदा और बोला कि बोलो रम खुदैया की । उसको बचाने के लिए न राम आए न खुदा आए । चकनाचूर हो गया वह । कहने का मतलब यह है कि अपना विश्वास पक्का होना चाहिए । कल भी हमने आपको बताया था कि विश्वास हमारे भीतर है । किसी बाबा के अन्दर नहीं है जो तुम शिरडी के साई बाबा के यहाँ जाते हो । ढोंगी लोग आजकल गुरु बन गए हैं । सब शंकराचार्यों की निन्दा करते हैं । हरियाणा में है । हमलोगों ने उससे हमारे अमृतानन्द जी से शास्त्रार्थ कराया तो वह निरुत्तर हो गया । इन लोगों में कोई दम नहीं है । उनका कोई तर्क नहीं है । जो नासमझ लोग हैं उनको इन लोगों ने कान फूँककर चेला बना लिया है । अपने यहाँ जो गुरु की महिमा है शास्त्रों में उसको अपने साथ जोड़ लिया कि हम

तुम्हारे गुरु हो गए –

काना वाती कुर । तुम चेला हम गुर ।।

वे सोचते हैं कि अब यह हमारा गुरु हो गया तो इसकी बात मानो। चाहे योग्य हो या न हो । सोच समझकर गुरु बनाओ । चाहे जिसको नहीं ।

पानी पियो छान । गुरु करो जान ।।

जान के गुरु करना चाहिए । चाहे जिससे आप कान फुकवा लोगे तो वह बाद में धोखा देगा । मान लीजिए कि आपने गुरु बना लिया । गुरु क्रोधी निकला । सेवा में कोई त्रुटि हो गई और शाप दे दिया उसने तो जिन्दगी भर की सेवा बेकार जाएगी । सोच समझकर करो। जो शान्त हो, विरक्त हो, निरपेक्ष हो । ऐसा है कि बहुत से लोग जो हमारे यहाँ की गुरु-शिष्य प्रणाली है उसका मनमाना उपयोग कर रहे हैं ।

एक सज्जन थे । वे लाउडस्पीकर से चेला बनाते थे । उन्हीं की दुकान से नारियल लो, उन्हीं की दुकान से कपड़ा लो और बैठ जाओ । लाउडस्वीकर से कई मन्त्र उन्होंने बता दिए जो मन्त्र अच्छा लगे उसको जपो । जब हमको अपने मन से ही मन्त्र चुनना था तो हम किताब में पढ़ लेते । तुम्हारे पास क्यों आते ? लेकिन ये लोग बेवकूफ बनाते हैं। गड़बड़ी यह होती है कि जब मरने का समय आएगा तो तुम्हारे मन में कई मन्त्र आएँगे। किसका जप करोगे ? जब गुरु का दिया हुआ मन्त्र आपके पास होगा और उसमें आपका दृढ़ विश्वास होगा तो वही काम आएगा। इसलिए योग्य गुरु से मन्त्र लेना चाहिए । उसके द्वारा लाउडस्पीकर से नहीं, मुख से मन्त्र सुना जाता है । पर अब कहाँ से करें ? क्योंकि चेला बहुत हैं और गुरु एक ही हैं । दूसरे के यहाँ जाने नहीं देंगे । वे लाउडस्वीकर से बोलते हैं । कुछ तो आकर कहते हैं कि लाउडस्पीकर से सत्यनारायण की कथा करवा लो । जब तक कि पण्डित कथा नहीं कहेगा । जब तक पण्डित कथा नहीं कराएगा तब तक कैसे पूरा होगा ? विवाह पढ़ा लो तुम लाउडस्पीकर से तो क्या विवाह हो जाएगा ? जब तक विद्वान् वेद मन्त्रों का उच्चारण शुद्ध रूप से नहीं करेगा तब तक कथा का पुण्यलाभ कैसे मिलेगा ? दक्षिणा नहीं दोगे तो फल कैसे मिलेगा ? टेप को कहाँ दक्षिणा देने जाओगे तुम ? यही सब समझने की बात है । हम प्रसंगवश कह रहे हैं । कुमारिल भट्ट ने गुरु को पराजित कर दिया । लोगों ने कहा कि आपने गुरु को पराजित किया । इसका प्रायश्चित्त कीजिए ।

गुरुं हुंकृत्य तुंकृत्य विप्रान् निर्जित्य वादतः। श्मशाने जायते वृक्षः कंकगृध्रोपसेवितः।।

गुरु को हुं कहे तुं कहे और वाद-विवाद में ब्राह्मण को जीत ले तो मरने के बाद श्मशान का वृक्ष होता है जिस पर कौआ, चील, गीध आदि बैठते हैं । कुमारिल भट्ट चाहते तो उनकी बात न मानते । लेकिन उन्होंने कहा कि हम शास्त्र के विधि-निषेध को मानते हैं । हम प्रायश्चित्त करेंगे । यह सिद्ध कर देंगे कि शास्त्र सच्चे हैं। उन्होंने प्रयाग में तृषाग्नि में अपने जलने का निश्चय कर लिया । धान की भूसी इकट्ठी हुई उसमें कुमारिल भट्ट बैठ गए। नीचे से आग लगा दी गई । इसी बीच में भगवान् शंकराचार्य वहाँ पहुँचे । उनको अपने ब्रह्मसूत्र में वार्तिक लिखवाना था । कुमारिल भट्ट से उन्होंने कहा कि आप कहाँ जलने जा रहे हो ? इस पर आपको वार्तिक लिखना है तो कहा दिखाइए। दस हजार वार्तिक बनेंगे लेकिन मैं अब आधा जल चुका हूँ । शङ्कराचार्य जी ने कहा कि हम कमण्डलु के जल से तुमको स्वस्थ कर देंगे । बोले महाराज ! मैं कर्मकाण्ड के मार्ग पर चला हूँ । अपने प्राण के लोभ से कर्मकाण्ड छोड़कर ज्ञानकाण्ड में नहीं आऊँगा । मुझे मरने दीजिए तभी वेदों की प्रामाणिकता वेदों का प्रामाण्य विश्वसनीय होगा । नहीं तो लोग दूसरों को बताने के लिए तो शास्त्र बताते हैं पर अपने करने के लिए नहीं मानते । उनकी बात का असर नहीं पड़ता ।

हम एक दृष्टान्त दिया करते हैं । एक गाँव था । उसमें ठाकुर लोग, क्षत्रिय लोग अधिक रहते थे और एक ही ब्राह्मण था । ब्राह्मण उनका पुरोहित था । एक बार क्या हुआ कि वह ब्राह्मण जो भी व्यवस्था देता था उसे सब क्षत्रिय लोग मानते थे । एक बार लड़कों ने खेल-खेल में एक गधे को मार डाला । उनके माता-पिता आए कहने लगे कि महाराज! हमारे लड़कों ने गधे को मार दिया है । कोई पाप लगेगा क्या ? बोले कि बहुत पाप लगेगा। प्रायश्चित्त करना चाहिए । गधे को मारना बड़ा पाप है । जैसे गौ को मारना पाप वैसे ही गधे को मारना पाप है। उन्होंने कहा कि प्रायश्चित्त बताओ । पण्डित जी बैठे थे हमारे शास्त्री जी जैसे । इन्होंने लिस्ट बनाई कि यह लगेगा, यह लगेगा, यह लगेगा। लम्बी खर्चीली लिस्ट बनी । अब पण्डित जी कहने लगे कि यह सामान लाओ तो प्रायश्चित्त होगा गधा मारने का। उनमें से एक बोला कि इसमें आपके बेटा सन्तोष भी शामिल थे गधे की हत्या में । उनका भी प्रायश्चित्त होगा । बोले कि हम फिर से शास्त्र देख लें । इधर-उधर टटोला और कहने लगे कि –

चार लड़के ठाकुरों के पाँचवे सन्तोष ।
गधा मर गया मर जाने दो पाप न दोष ।।

कहने का मतलब यह है कि अगर पाप है तो सन्तोष को भी लगेगा और नहीं है तो

फिर किसी को नहीं लगेगा। अपने कल्याण के लिए, अपने सुख-सुविधा के लिए शास्त्रों का त्याग शास्त्रविश्वासी नहीं करता है। कुमारिल भट्ट का बलिदान इसीलिए माना जाएगा क्योंकि उन्होंने शास्त्र को प्रमाण मानकर अपने शरीर की आहुति दे डाली। वह कुमारिल भट्ट जो थे उन्होंने बौद्ध धर्म का अपसारण कर दिया। पर कुछ जो वेदों का भाग था उपनिषद् उसका उद्धार रह गया। वह काम भगवान् शङ्कराचार्य जी ने किया। इस तरह से वैदिक धर्म की पुनःप्रतिष्ठा हुई। यह देश एक हो गया। हमारे देश की एकता का आधार यह सनातन धर्म है। हिन्दू धर्म है। हिन्दू उसको कहते हैं जो वेद-शास्त्रों को मानता है। अभी माघ की अमावस्या में हम प्रयाग में थे। एक करोड़ लोगों ने गंगा में स्नान किया। हमने कहा कि ये कौन हैं ? ठण्ड में ठिठुरते हुए गंगा में नहाने वाले। सब शास्त्रविश्वासी हैं जो यह मानते हैं कि गंगा स्नान से पुण्य होता है। पापों का क्षय होता है। पाप-पुण्य आँख से थोड़े ही दिखते हैं। आँख से नहीं दिखते। यह शास्त्र से दिखते हैं। शास्त्र ही हमारे चक्षु हैं। हम आपलोगों को बता रहे थे कि राम निर्गुण हैं। निर्गुण के हाथ से गुण होने के कारण वे भी गुण इसलिए हो गए कि राम साक्षात् धर्म थे। **रामो विग्रहवान् धर्मः।**

राम सगुण भी हैं और निर्गुण भी हैं। दोनों का प्रतिपादन रामनाम करता है। हम यह बताना चाहेंगे कि ॐकार से निर्गुण निराकार का बोध कैसे होता है ? इसके लिए आपको वेदान्त में आना पड़ेगा। वेदान्त में यह बतलाया गया है कि जीव की तीन अवस्थाएँ हैं। जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति। इन्द्रियों से विषयों को जब हम ग्रहण करते हैं तो वह अवस्था जाग्रत कहलाती है। अभी हमलोग जाग्रत में हैं। जब हम बिस्तर में लेट जाएँगे तो होगा क्या कि हमारी इन्द्रियाँ देखना-सुनना बन्द कर देंगी। फिर मन से संसार बनेगा। मन में जो अपने को स्वप्न दिखाई पड़ता है वह स्वप्न बाहर नहीं है। वह भीतर है। जाग्रत के संस्कारों को लेकर मन वहाँ नया संसार बनाता है। अगर आपको सरलता से समझना है तो यूँ समझिए कि आप सिनेमा देखने जाते हैं। सिनेमा में क्या है ? एक मशीन में रील लगा दी जाती है। रील मशीन से घूमती है। पीछे लाइट रहती है। वह लाइट रील में पड़कर पर्दे में जाती है। रील में छोटी-छोटी मूर्तियाँ हैं। वह मूर्तियाँ पर्दे में बड़ी हो जाती हैं और इतनी तीव्रता से वह घूमती है एक हाथ उठता है तो एक हाथ के अनेकों चित्र ले लेती है वह रील। लेकिन इतनी तीव्रता से लेती है कि लगता है कि एक ही हाथ उठ रहा है। अनेक चित्र होते हैं। हमारी आँख उस भेद को पकड़ नहीं पाती। आपने देखा होगा कि पंखा देखते हैं कभी कभी। पंखे के नीचे तार रहता है। पंखे के पत्ते इतनी तीव्रता से घूमते हैं कि लगता है कि हम तार को बराबर

देख रहे हैं लेकिन कई बार वहाँ से तार और पंखे के बीच में पंखा आ गया और चला गया। यह सिनेमा है। हमारे मन में जो संस्कार जाग्रत के पड़े वह मानों मन में रील बन गए। मन ही रील बन गया। अब यह चलता है। पीछे आत्मा की लाइट पड़ती है। चैतन्य की लाइट पड़ने से संसार दिखाई पड़ता है।

शून्य बीच बिन चित्र रंग बिनु तन बिनु लिखा चितेरे।
धोए मिटे न मरे भित्ति दुःख पाइए एहि तन हेरे।।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं। हमारा मन ही नया संसार दिखाता है वहाँ। वहाँ न सूर्य की लाइट है न चन्द्रमा की है और न ही अग्नि की। आत्मा स्वयंज्योति हो जाता है। जाग्रत अवस्था का अभिमानी विश्व है। मैं देख रहा हूँ इस तरह का अभिमान। स्वप्न देखने वाले का अभिमानी तैजस् और गाढ़ी नींद का अभिमानी प्राज्ञ। तीन अवस्थाएँ एक व्यक्ति की हुईं। ऐसे ही तीन अवस्थाएँ समष्टि की होती हैं। समष्टि जाग्रत में अभिमानी होगा विराट्। समष्टि स्वप्न का अभिमानी होगा हिरण्यगर्भ और समष्टि सुषुप्ति का अभिमानी होगा ईश्वर। समष्टि व्यष्टि एक हैं। जैसे हमने बताया था कि मटर की राशि एक और मटर का एक दाना अलग। राशि है समष्टि और मटर का एक दाना है व्यष्टि। व्यष्टि को समष्टि में मिला दो तो प्राज्ञ मिल गया विराट् में, तैजस् मिल गया हिरण्यगर्भ में और प्राज्ञ मिल गया ईश्वर में। तीन रह गए। विराट् हिरण्यगर्भ और अव्याकृत उसी का नाम ईश्वर है। राम नाम में र का अर्थ है विराट्, अ का अर्थ है हिरण्यगर्भ और म का अर्थ है प्राज्ञ। आप र को अ में लीन कर दो और अ को म को लीन कर दो। म के लीन होने के बाद जो रह जाता है वह ब्रह्म है। वह राम हैं। इसका नाम राम है। राम नाम से ब्रह्म का साक्षात्कार होता है। वह निर्गुण को भी दिखाता है और अवतार रूप से सगुण को दिखाता है।

सगुण अगुण बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाषी।।

यह राम नाम दोनों का बोधक है इसलिए गोस्वामी जी कहते हैं -

हिय निर्गुण नयनन सगुण रसना नाम सुनाम।
मनहु पुरट सम्पुट लसत तुलसी ललित ललाम।

जैसे कोई ललित ललाम माने रत्न हो, वह रत्न सोने के सम्पुट में रखा हो, सम्पुट में दो पलडे होते हैं एक नीचे एक ऊपर। उसमें रखकर दोनों को बन्द कर दिया जाता है। हमारा हृदय एक सम्पुट का पलडा और नेत्र दूसरा पलड़ा। रसना माने हमारी जीभ।

आँख और हृदय दोनों के बीच में जीभ है। मानो सोने के डिब्बे में कोई रत्न रखा हो ऐसे ही यह राम नाम हमारे नेत्रों और हृदय के बीच में जिह्वा में बैठा हुआ है। यह प्रबोधक है। राम वेद तत्त्व हैं। जब भगवान् रामचन्द्र जी का नामकरण का समय आया तो वशिष्ठ जी ने दशरथ जी से कहा कि राजन् ! तुम्हारे चार बेटे चार वेदों के तत्त्व हैं।

वेद तत्त्व कैसे ? यह समझ लीजिए कि जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीय। तीन अवस्था तो हमने बता दिया। इन तीन अवस्थाओं को जानने वाला तुरीय कहलाता है। कहा गया है कि वह परमात्मा जाग्रत अवस्था का अभिमानी हो गया। स्वप्नावस्था का अभिमानी अनुज्ञात। सुषुप्ति का अभिमानी अविज्ञात। तीनों अवस्थाओं का साक्षी शत्रुघ्न है। जाग्रत में भी चार अवस्था हैं और स्वप्न में भी चार हैं। सुषुप्ति में भी चार अवस्था हैं। स्वप्न की चार अवस्था। स्वप्न जाग्रत, स्वप्न स्वप्न, स्वप्न तुरीय, स्वप्न प्राज्ञ। स्वप्न का तुरीय लक्ष्मण है। सुषुप्ति तुरीय भरत। तुरीय जाग्रत, तुरीय स्वप्न, तुरीय सुषुप्ति और तुरीय तुरीय। तुरीय तुरीय ही राम हैं। राम तत्त्व है। वशिष्ठ जी ने बताया कि राम क्या है ? बोले राम कौन है ?

जो आनन्द सिन्धु सुख राशी। सीकर ते त्रैलोक्य सुपासी।।

सो सुख धाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक विश्रामा।।

जो आनन्द का समुद्र है सुख की राशि है और सुख का धाम है। आनन्द समुद्र में एक सीकर ले लो उसमें से। घाँस के तिनके को पानी में डालकर उछालने पर जो छोटे-छोटे कण उड़ते हैं वह सीकर। तीनों लोकों का सुख मिलाओ तो आनन्द समुद्र के एक सीकर के बराबर है। वह आनन्द का धाम, आनन्द की राशि राम हैं। राम नाम से इसका बोध हो जाता है और जिसका यह नाम रखा गया वह सगुण है। राम नाम से तत्त्व का भी बोध हो गया और जो दशरथ जी के यहाँ जन्मे हैं उनका भी बोध हो गया। आप यह समझिए कि कल हमने बताया था कि आनन्द सिन्धु में भव सिन्धु की कल्पना। इसको आप समझ लीजिए भगवान् रामचन्द्र जी सीता जी के विरह में व्याकुल होकर हा सीते हा सीते कहकर घूम रहे हैं। कितना दुःख दिखाई पड़ रहा है उनमें। राम के दुःख का कोई पारावार नहीं है। जिसको देखकर पशु-पक्षियों को भी दुःख हो गया। ऐसा राम का दुःख। यह दुःख किसमें प्रतीत हो रहा है? यह आनन्द सिन्धु में प्रतीत हो रहा है। जो आनन्द के सिन्धु राम हैं उनमें यह प्रतीत हो रहा है अर्थात् आनन्द सिन्धु में भव सिन्धु की कल्पना हो रही है। वहाँ पर कल्पित है यह दुःख, वास्तविक नहीं है। लेकिन यह वास्तविक दुःख इसलिए नहीं है। यदि आनन्दस्वरूप न होते तो यह वास्तविक होता

लेकिन स्वयं तो आनन्द सिन्धु हैं उनमें यह दुःख दिखाई पड़ रहा है तो हम इसको वास्तविक कैसे कह सकते हैं। **झूठेउ सत्य जाई बिनु जाने।** भगवान् का स्वरूप अविकृत है।

कबहूं योग वियोग न जाके। देखा प्रकट विरह दुःख ताके।।

बिल्कुल अलीक मान लो। यह है ही नहीं। खरगोश के सींग के समान होता, बन्ध्या पुत्र के समान होता तो दिखाई क्यों पड़ता। दिखाई पड़ता है लेकिन है नहीं। इसी का नाम मिथ्या है। इसी को अनिर्वाच्य कहते हैं। दिखाई तो पड़ रहा है। परमात्मा में, आनन्द समुद्र में सीता के विरहजन्य दुःख को हम देख रहे हैं। यह जो हमारा देखना है यह मिथ्या देखना है। अनिर्वाच्य है यह। यह राम को व्याप्त नहीं हो रहा है। क्यों नहीं हो रहा है ? राम की बनाई हुई तो माया है यह। उन्होंने यह नाटक किया है। इस नाटक को कौन समझ सकता है ? जो राम का कृपापात्र होता है।

सो नर इन्द्रजाल नहीं भूला। जापर होई सो नट अनुकूला।।

वह मनुष्य इन्द्रजाल में नहीं भूलता जिस पर नट अनुकूल हो जाए। जो इन्द्रजाल दिखा रहा है उसका कृपापात्र हँसता रहेगा। वह भूलेगा नहीं। जो कृपापात्र नहीं है वह तो रो पड़ेगा।

भगवान् शङ्कराचार्य के माण्डूक्य उपनिषद् के भाष्य में एक दृष्टान्त आया है कि एक ऐन्द्रजालिक आया और अपने श्रोताओं से कहा कि भाई ! हम अपना एक अभिनय कर रहे हैं। आप लोग सावधान रहिएगा। इतने में ऊपर आवाज आती है नगाड़ों और शंखों की तो वह बोलता है कि देखिए हम उस युद्ध में सम्मिलित होने जा रहे हैं। हमारी स्त्री को यहीं छोड़ रहे हैं। आप लोग इसको सुरक्षित रखेंगे। इतने में उसने कच्चे सूत की गड्डी आकाश की तरफ फेंकी। लम्बा सूत का धागा दिखाई पड़ा। उसको पकड़कर वह चढ़ गया। अब वह जब चढ़ गया तो वहाँ पर आवाज आने लगी। लोगों के तन कट-कट कर गिरने लगे। बड़ा हाहाकार सा मचने लगा। सब लोग घबड़ा गए। इतने में वह ऐन्द्रजालिक का भी सिर कट गया और धड़ भी गिर गया। उसकी स्त्री ने देखा कि हमारे पति युद्ध में मारे गए तो वह ऐसा विलाप करने लगी कि सारे दर्शक रो पड़े। हाय-हाय बेचारी हमको तमाशा दिखाने आया था वह मारा गया। उसके बाद उसने कहा कि हम जीवित नहीं रहेंगे। सती बनेंगे। सती बनने के लिए उसने चिता रचवाई। उसमें अपने पति के धड़ में सिर जोड़कर उस शरीर को गोद में लेकर बैठी और आग लगवा ली। धू-धू करके आग जल पड़ी और थोड़ी देर में वहाँ राख बन गई। अब उसके बाद वहाँ

कुछ नहीं रहा तो वह ऐन्द्रजालिक उतर कर आ गया। बोला कि हमारी स्त्री कहाँ है ? अब लोगों से कहने लगा कि हमने आपसे कहा था कि हमारी स्त्री को आप सुरक्षित रखिएगा। आपने उसको जलने क्यों दिया ? लोगों ने कहा कि हम क्या करते ? वह तो मानी नहीं, जल गई। इस तरह से उसने यह सब दिखाने के बाद पटाक्षेप किया। पर्दा गिरा और जब पर्दा उठा तो दोनों एक दूसरे में गलबहियाँ देकर खड़े थे। यह इन्द्रजाल है।

भगवान् के बनाए हुए इन्द्रजाल को देखकर सारा संसार मोहित हो रहा है। **यन्माया वशवर्ति विश्वमखिलम्।** सारा विश्व उस भगवान् की माया से मोहित हो रहा है। संसार को सच्चा मान रहा है। **ब्रह्मादिदेवासुराः।** ब्रह्मादि देवता सब उसके वशवर्ती हो रहे हैं। अत्रि मुनि भगवान् राम के बारे में बताते हैं।

जग पेखन तुम देखनि हारे। विधि हरि शम्भु नचावनि हारे ।।

महाराज ! जगत् एक नाटक है। नाटक में सब लोग नाचने वाले हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन जीवों को नचाने वाले हैं। **केउ न जानहि मरम तुम्हारा। और तुमहिं को जाननि हारा।** कहा कि सारे जगत् के प्राणी जीव मात्र नाचने वाले और ब्रह्मा, विष्णु, महेश, नचाने वाले। और आप नाचने वाले और नचाने वाले दोनों को देखने वाले। न आप नाचते हैं न नचाते हैं। नचाने वाले भी जब आपके मर्म को नहीं जानते तो नाचने वाले क्या जानेंगे ? प्रश्न आया कि फिर तो आपका किसी को पता ही नहीं चलेगा? आपका ज्ञान कैसे होगा? वे बोलते हैं कि –

तुम्हरी कृपा तुमहिं रघुनन्दन। जानइ भगत भगति उर चन्दन ।।

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुमहिं तुमहिं होइ जाई ।।

हे रघुनन्दन ! आपकी कृपा से जिनका हृदय चन्दन के समान शीतल है। वे संसार के मर्म को जानते हैं। क्यों जानते हैं ? जिसको आप जना देते हैं कि अरे मेरी माया है रे! क्यों भटक रहा है ? जिसको आप अपने स्वरूप का बोध करा देते हैं वह आपको जानता है और दूसरा कोई भी आपको नहीं जानता। भगवान् की कृपा से भगवत्तत्त्व का ज्ञान होता है। भगवत्तत्त्व के ज्ञान से भवसागर की निवृत्ति होती है। राम जी की रामचरितमानस के अनुसार चार रूपों में उपासना है। चार रूपों में वर्णन है। एक है सगुण साकार। सगुण साकार कौन है ?

अगुण अपार अलख अज जोई। भक्त प्रेम वश सगुण सो होई।

जो अगुण, अपार, अलख, अज हैं वही भक्त के प्रेम परवश होकर सगुण हो गया है। वह सगुण साकार हो गया। हमलोग यह मानते हैं कि परमात्मा के पाँच रूप सगुण साकार हैं। वह पाँच रूप कौन हैं ? वे हैं शिव, शक्ति, विष्णु,गणेश और सूर्य। ये पाँच देवता सगुण साकार ब्रह्म हैं। एक ही ब्रह्म पाँच रूप धारण करके दिखाई पड़ रहा है। इसीलिए जब भी इनकी स्तुति होती है वह ब्रह्मरूप से होती है। ब्रह्म ही माने जा रहे हैं पाँचों। यह सगुण साकार हो गए। एक दूसरा रूप है - सगुण निराकार। निराकार का आकार तो नहीं है लेकिन सगुण है।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापमिद्धं ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधात् शाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।।

सब जगह व्यापक है। पवित्र है उसकी कोई काया नहीं है। अव्रण है। भूख प्यास उसमें नहीं है लेकिन संवत्सराभिमानियों के द्वारा प्राणियों के कर्म फल का विधान करता है। ये सगुण निराकार हुआ। तीसरा है जिसका मानस में वर्णन है। राम रूप में ही वर्णन है -

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ विधि नाना ।।

आनन रहित सकल रस भोगी। बिनु वाणी वक्ता बड़ जोगी ।।

तन बिनु परस नयन बिनु देखा। गहई घ्राण बिनु वास असेषा ।।

अस सब भांति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ।।

ऐसा परमात्मा। यद्यपि हम जो चलते हैं जब चेतन रहता है तभी चलते हैं। शरीर से चेतना निकल जाए तो कौन चलता है ? कान से तभी सुनते हैं जब चेतना रहती है। जैसे लोहे को आप अग्नि में तपा लो तो लोहा लाल हो जाता है उसको छूने से आपका हाथ जल जाएगा। लोहा नहीं जला रहा है। इसके भीतर जो आग है वह जलाती है। इसी तरह से जो भी हमको ज्ञान होता है वह ज्ञान चेतन के कारण होता है। वह राम है। उसके बिना कुछ ज्ञान हो ही नहीं सकता। आत्मा से ही सब होता है। लेकिन हमें विषयों के ज्ञान के लिए इन्द्रियों और अन्तःकरण की आवश्यकता है। लेकिन ईश्वर के लिए उसकी उपाधि माया है। वह मायोपाधिक होने के कारण, विद्या उपाधि के कारण सब कुछ बिना इन्द्रियों के जान लेता है। **बिनु पद चले सुने बिनु काना।** सब परमात्मा देख रहा है। कहीं भी आप जाओ परमात्मा देख रहा है।

दो व्यक्ति किसी महात्मा के पास गए। कहने लगे कि महाराज ! हमको अपना शिष्य बनाइए। महात्मा जी ने कहा एक शर्त है कि हम एक पक्षी देते हैं। इसको आप ऐसी जगह मारकर लाओ जहाँ कोई न देखे। उनमें से एक शिष्य मोटी अकल का था। महात्मा की कुटिया के पीछे गया और पक्षी की गर्दन मरोड़ दी। ले आया। कहने लगा कि किसी ने नहीं देखा हमने मार दिया। दूसरा गया कुटिया के पीछे। कहा कि सूरज देख रहा है। रात को चन्द्रमा देख रहा है। गाय देख रही है। पवन देख रहा है। अपने घर गया। घर में कोई आ न जाए इसलिए भीतर से किवाड़ बन्द कर लिया। लाइट बुझा दी। कोई नहीं तो हम तो देख ही रहे हैं। अपनी आँख में पट्टी बाँध लिया। चाहा कि गर्दन मरोड़ दें। कहा कि हमारे भीतर के भगवान् जो अन्तर्यामी हैं वे तो देख रहे हैं। वह पक्षी लेकर वापस आ गया। उसने कहा कि गुरुजी ! चेला बनाओ चाहे मत बनाओ। हमसे यह काम नहीं होगा। गुरुजी ने कहा कि हम तुम्हीं को चेला बनाएँगे। यह तो नालायक है। उन्होंने योग बल से उस पक्षी को जीवित कर दिया।

कहने का मतलब यह है कि वह चेला जानता था कि अन्तर्यामी घट-घट में बैठा है। सबकी बात बिना आँख के देख रहा है। बिना कान के सुन रहा है। भगवान् राम के सामने जब बाली गया और भगवान् ने बाण मारा तो वह पूछता है कि आपने मुझे क्यों मारा ? भगवान् बोलते हैं कि भाई ! **मूढ़ तोहि अतिशय अभिमाना। नारी सिखावन सुनेहि न काना।** जो तारा बाली को समझा रही थी उसको भगवान् राम ने कैसे सुन लिया ? **बिनु काना।** बिना कान के सुन लिया।

सवेन्द्रिय गुणाभासां सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ।।

यह हुआ सगुण निराकार। सगुण निराकार की उपासना गुणों के वर्णन से होती है। गुणों के चिन्तन से होती है। निर्गुण निराकार की उपासना होती है गुणों के निषेध से होती है और फिर अन्त में बोध होता है। बोध में उपासना नहीं है, ज्ञान है, अनुभव है। इस तरह से राम के ये सब स्वरूप हैं। वही राम दशरथ के पुत्र कैसे बने यह कथा आप कल सुनेंगे।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

—*—

[31]

।। राम राम इकत्तीस ।।

धर्म के सच्चे स्वरूप को समझने की आवश्यकता

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

धर्म क्या है ? धर्म का स्वरूप क्या है ? यह ठीक तरह से समझने की आवश्यकता है । आजकल लोग यह कह रहे हैं कि धर्म लोगों में भेद पैदा करता है इसलिए धर्म को छोड़ देना चाहिए । हमारा यह कहना है कि आप पहले धर्म के स्वरूप को तो समझो कि धर्म क्या है ?

धर्म के दो प्रकार होते हैं - एक सामान्य धर्म और दूसरा विशेष धर्म । साामान्य धर्म का लक्षण है –

धृतिः क्षमा दमोस्त्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्यासत्यमक्रोधो दशकम् धर्मलक्षणम् ।।

यह मनु ने कहा है । धैर्य धारण करना, विपत्ति के आने पर भी मन को अडिग रखना। विपत्तिकाल में अपने धर्म का, कर्त्तव्य का त्याग न करना यह धृति है । जीवन में उतार-चढ़ाव आते हैं । यदि आपके मन में धैर्य न होगा तो अनर्थ हो जाएगा । बहुत से लोग दुःखों को न सह सकने के कारण आत्महत्या कर लेते हैं । स्त्रियाँ अपने शरीर में तेल छिड़क कर आग लगा लेती हैं, जहर खा लेती हैं । सोचती हैं कि मर जाएँगे तो दुःख का अन्त हो जाएगा लेकिन ऐसा नहीं है । आत्महत्या करने से प्रेत बनना पड़ता है। आत्महत्या करने से नरक में जाना पड़ता है । उस समय धैर्य धारण करके सह लेना चाहिए । यदि मनुष्य जीवित रहेगा तो एक दिन अच्छा समय भी आ जाएगा । भगवान् राम के विरह में सीता जी अपने शरीर का त्याग करने को तैयार हो गईं तो उनको स्मरण आया कि गुरुजन कहते हैं कि एक दिन अच्छा समय भी आएगा । यदि मनुष्य जीवित रहा तो दुर्जनों का अन्त होगा ।

यदि सुख सदा रहता नहीं तो दुःख का भी अन्त है ।
यह जानकर मन में सदा विचलित न होता सन्त है ।।

यदि सुख सदा रहता नहीं तो दुःख का भी अन्त है । यह जानकर मन में सदा प्रभु

श्रीराम का स्मरण करती रहीं। विचलित न होता सन्त का लक्षण है । जब हमारा सुख सदा नहीं रहता तो दुःख का भी अन्त होगा। यह समझकर अच्छे लोग विचलित नहीं होते। धैर्य रखते हैं । सहसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए ।

एक कोई व्यापारी था । अपनी स्त्री को उसके गोद के बच्चे के साथ छोड़कर परदेश धन कमाने चला गया। कई वर्ष हो गए परदेश में । धन कमाकर वह लौटा । राजस्थान का रहने वाला था । उन दिनों रेल, मोटर नहीं थी । ऊँट में चढ़कर, दूसरी सवारी में चढ़कर फिर पैदल चलकर अपने गाँव में पहुँचा । गर्मी के दिन थे । सब लोग रात को बाहर अपना बिस्तर लगाकर सो रहे थे । जब वह अपने घर पहुँचा तो उसने देखा कि हमारी स्त्री एक जवान पुरुष के साथ सो रही है । उसको क्रोध आ गया । उसको यह लगा कि हमारी स्त्री कुलटा हो गई। रात में पर पुरुष के साथ सो रही है । म्यान से तलवार निकाल ली कि दोनों का सिर काट लूँ पर मन में विचार आया कि धैर्य धारण करो । पहले इनको जगाओ । जगाया तो चाँदनी रात में अपने पति को देखकर पत्नी उसके चरणों में गिर गई और उस जवान पुरुष से कहा कि उठ अपने पिता को प्रणाम कर । वह सोचने लगा कि अरे! हमने यदि इन दोनों के सिर काट लिए होते तो पत्नी और बेटे दोनों को खो देते । यह धृति है । धर्म का पहला अंग है । यह बुरी चीज है क्या?

फिर है क्षमा । क्षमा कहते हैं अपराधी के अपराध को क्षमा कर देना । कहते हैं

क्षमा खड्गः करे यस्य किं करिष्यति दुर्जनः ।
अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेव प्रशाम्यति ।।

जिसके हाथ में क्षमारूपी तलवार है दुर्जन उसका क्या कर सकता है ? बिना ईंधन के यदि कहीं आग पहुँच भी जाए तो वह अपने आप ठण्डी हो जाएगी । क्योंकि उसको जलाने के लिए कुछ मिलेगा ही नहीं । कोई यदि आपको गाली दे रहा है तो उसको गाली देने में तभी मजा आएगा जब आप भी पलटकर गाली दोगे । यदि आप शान्त रहेंगे तो कहाँ गाली देगा ? देते-देते थक जाएगा । इसलिए पति जब पत्नी पर नाराज होता है और पत्नी चुपचाप रहती है । क्रोध में आकर वह कहता है कि बोलती क्यों नहीं है ? क्योंकि उसको गाली देने में मजा नहीं आता है । इसलिए वह चाहता है कि ये भी कुछ बोले तो हमारी आग और भड़के। लेकिन यदि उसने मौन धारण कर लिया तो थोड़ी देर के बाद पतिदेव अपने आप शान्त हो जाएँगे ।

अब आप सोचिए कि एक लड़का परीक्षा देने जा रहा था तो उसके पिता ने कहा कि यदि तू फेल हो गया तो घर में पैर मत रखना । उसने कहा ठीक है । वह सच में

फेल हो गया। जब घर में आया तो हाथ के बल आया। पैर ऊपर करके आया। कहा कि आपने कहा था कि मेरे घर में पैर मत रखना तो हम पैर नहीं हाथ रख रहे हैं। पिता का क्रोध खत्म। कहने का मतलब है कि क्षमा। यदि कोई कह दे कि आप घर से निकल जाइए तो निकल ही न जाएँ और क्रोध में कोई बात कह दे कोई तो उसे क्षमा कर दें। अगर न हो तो समाज में लोगों के झगड़े बढ़ते ही चले जाएँगे। क्रोध से क्रोध बढ़ता है उससे शान्ति नहीं होती।

इसी तरह से तीसरा धर्म है दम। इन्द्रियों को वश में रखना। आपकी जीभ बड़ा चटपटा माँगती है। इसको अपने वश में रखो। आँख को वश में रखो। कान को रखो। हाथ-पैर इन सबको वश में रखना, मनमाना आचरण न करना यही दम है। ऐसा नहीं करोगे तो बीमार पडोगे।

चोरी न करना यही अस्तेय है।

परान्नं परद्रव्यं वा पथि वा यदि वा गृहे।
अदत्तं नैव गृह्णीयात् एष धर्म सनातनः॥

दूसरे का अन्न, दूसरे का धन चाहे रास्ते में पड़ा हो चाहे घर में रखा गया हो जब तक उसका स्वामी न दे दे उसको न लेना ही अस्तेय है। यह धर्म है। बहुत से लोग रास्ते में कोई चीज मिल गई तो कहते हैं कि हमको मिल गई। देखते हैं कि कोई देख तो नहीं रहा है। यदि नहीं देख रहा है तो तुरन्त जेब में डाल लेते हैं। लेकिन यह समझना चाहिए कि कोई नहीं देख रहा है पर ईश्वर तो देख रहा है। ईश्वर की बात छोड़ो तो तुम तो देख रहे हो। मनुष्य जब अधर्म करता है तो अधर्म पहले मनुष्य के मन को खराब कर देता है।

धर्म का अगला लक्षण शौच माने पवित्रता है। **मृज्जलाभ्यां बाह्यं** मिट्टी और जल से बाह्य शौच होता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर इन विकारों को हटाने से, न्यायोपार्जित शुद्ध अन्न खाने से आन्तरिक शौच होता है। जो आप भोजन कर रहे हैं यह जो भोजन है उसके तीन भाग होंगे। **अन्नमशितं त्रेधाऽभिधीयते।** जो अन्न का स्थूल भाग है वह मल-मूत्र बन जाएगा। मध्यम भाग है वह रस-रक्त बनेगा और सप्त धातुओं के रूप में परिणत होगा और उसका सूक्ष्म भाग है वह मन बनेगा। इसलिए जैसा खाओ अन्न वैसा बने मन। भोजन अपना शुद्ध होना चाहिए। भोजन का प्रभाव मन पर पड़ता है। इसीलिए हमलोग कहते हैं कि माँसाहार मत करो, अशुद्ध भोजन मत करो। भगवान् को जिस चीज का भोग लग सकता है उसी चीज को भोग लगाकर खाओ। पानी शुद्ध

पियो तो लोग कहते हैं कि यह कर्मकाण्ड करते हैं । बहुत बड़े कर्मकाण्डी बने हैं । यह आपके हित की बात है । मन को यदि शुद्ध करना है तो भोजन को भी शुद्ध रहना चाहिए। जल भी शुद्ध रहना चाहिए । चाहे जिसका झूठा नहीं खाना चाहिए। माँस, मद्य और भी कोई अनुचित चीजों को अपने भोजन से अलग कर देना चाहिए । शौच, पवित्रता यह भी धर्म है ।

अगला धर्मलक्षण है इन्द्रिय निग्रह । मन को भी वश में रखो । मन के कहने पर मत चलो ।

मन का कहा न मानिये मन है पक्का धूर्त ।
ले डूबे मझधार में जाए हाथ से छूट ।।

कहा गया कि मन का कहना मत मानो । लेकिन इसके उत्तर में एक दोहा और है।

मन को वश कर राखिए मन है पक्का मीत ।
परब्रह्म को पाइए मन ही की परतीत ।।

यदि आप अपने मन को वश में रखेंगे तो मन आपका मित्र हो जाएगा पर यदि मन के पीछे आप चलेंगे तो यही मन आपको न जाने कहाँ डुबा देगा ? यह हो गया इन्द्रिय निग्रह। इन्द्रिय से यहाँ मन को ले लिया । दम से वहाँ कर्मेन्द्रिय को ले लिया । कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय दोनों को वश में करना चाहिए । तात्पर्य यही है ।

धीर्विद्या । ज्ञान प्राप्त करना । ज्ञान किसका ? आप दस विषय से एम.ए. हो गए लेकिन परमात्मा के बारे में नहीं जानते तो आपका ज्ञान किस काम का ? स्वप्न के विस्तार के ज्ञान को ज्ञान नहीं कहते । स्वप्न को जो देखता है उसका ज्ञान ही ज्ञान है । बाकी सब अज्ञान है । परमात्मा के स्वरूप को जानना । आजकल यह शिक्षा स्कूलों, कालेजों में नहीं मिलती कि क्या परमात्मा है ? क्या ज्ञान है ? क्या धर्म है ? इसलिए पढ़े-लिखे लोग विश्वविद्यालय की डिग्री लिए बैठे हैं पर धर्म के मामले में बच्चे के बराबर हैं । कोई भी जाकर उनको बहका देता है । किसी की भी बात मान बैठते हैं क्योंकि उनको पता ही नहीं है कि धर्म क्या है । जो बताने लगता है सोचते हैं कि यही सच्चा है । कोई भी लाल कपड़ा पहनकर तिलक लगाकर पहुँच जाए उनके घर में तो उसी की बात मानने लगते हैं। उनको विश्वकल्याण आश्रम जाने की फुरसत तो है नहीं । क्योंकि उनको ऑफिस समय से अटेण्ड करना है । उनके घर में जो आ जाए और जो बता दे वही मान बैठते हैं । इसी कारण बहुत से पाखण्डी भारत में पनप रहे हैं क्योंकि लोगों को धर्म का ज्ञान नहीं है ।

पहले अपने देश के लोग धर्म को जानते थे ।

एक व्यक्ति दण्डी संन्यासी बनकर किसी गाँव में गया । गाँव में एक के घर में आँगन में खाट बिछी थी। खाट में जाकर बैठ गया । उस घर के गृहस्थ ब्राह्मण ने उससे कहा कि तुम संन्यासी नहीं हो । संन्यासी होते तो खाट में न बैठते । पहचान गया वह । जिसको पता ही नहीं है कि संन्यासियों के क्या नियम होते हैं वह तो कहीं भी बैठ जाएगा। एक व्यक्ति हमारे पास आया द्वारका में । बोला कि हम शङ्कराचार्य हैं । हमने कहा कि कहाँ के हो ? बोले कि हम अमेरिका से आए हैं, वहीं के हैं । पूछा हमने कि तुम्हारे मठ में क्या मिलता है ? उसने कहा कि जो हमारे यहाँ आता है उसको बढ़ियाँ शराब पिलाते हैं । ऐसा शङ्कराचार्य । ऐसे कई घूम रहे हैं । जो समझेगा सुनेगा कि भगवान् आदि शङ्कराचार्य ने चार ही मठ बनाए। उत्तर में ज्योतिर्मठ, दक्षिण में श्रृंगेरी मठ, पूर्व में गोवर्धन मठ, पश्चिम में द्वारका शारदा मठ और उन सबका स्थान बता दिया है कि ज्योतिर्मठ बदरिकाश्रम में है, श्रृंगेरी मठ कर्णाटक में है, गोवर्धन मठ पुरी में है और शारदामठ द्वारका में है । अब कोई आ जाए और कहे कि हम रांची के शङ्कराचार्य हैं तो क्या मान लोगे ? यदि आपको मालूम होगा तो क्या आप मानोगे ? अब काशी के शङ्कराचार्य, प्रयाग के शङ्कराचार्य, ब्रह्मावर्त के शङ्कराचार्य, दिल्ली के, हरिद्वार के, न जाने कितने बन कर आ रहे हैं । कई लोग अपने आपको जगद्गुरु कहने लगे । ऐसे लोगों को अखबार वाले मिल जाते हैं । चैनल वाले मिल जाते हैं । आप यह माने बैठे हैं कि जो कोई ज्ञानी है वह चैनल वाले ही हैं । अरे खुद भी तो सोचो। अपना ज्ञान भी रहना चाहिए केवल उनकी बातों में ही मत पड़ो । आकाशवाणी नहीं है । पुराने जमाने में आकाशवाणी में भगवान् बोलते थे । यह तो दिल्ली से चलती है और दिल्ली की आकाशवाणी के उद्घोषक बहुत ट्रेण्ड नहीं होते । बेचारे जितना जानते हैं उतना ही बोलते हैं । ज्ञान होना चाहिए । परोक्ष ज्ञान और फिर अपरोक्ष ज्ञान । परमात्मा है परमात्मा के स्वरूप का क्या लक्षण है ? **सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म ।** परमात्मा सत्य है, ज्ञान है, अनन्त है । इस बात को जान लेना ही परोक्ष ज्ञान है और ब्रह्म में और जीव में कोई भेद नहीं है । आत्मा को अभिन्न जान लेना अपरोक्ष ज्ञान है ।

सत्यम् । सत्य बोलना धर्म है । कुछ लोग कहते हैं कि महाराज ! सत्य बोलने से काम नहीं चलता है। व्यवहार चलाने के लिए कुछ असत्य बोलना पड़ेगा । बहुत से वकील हमलोगों को बतलाते हैं कि पहले हमारे यहाँ मुवक्किल आते थे तो हम कहते थे कि आप अदालत में जा रहे हैं तो कुछ असत्य बोल दीजिए । कुछ झूठ बोलना पड़ेगा तो वे कहते थे कि हम बाल-बच्चेदार हैं झूठ कैसे बोल दें ? आज के मुवक्किल से जब हम कहते

हैं कि सत्य बोलो तो वे कहते हैं कि बाल-बच्चेदार हैं सत्य कैसे बोल दें ? बिना झूठ के काम नहीं चल सकता । लोग सोचते हैं कि झूठ के बिना काम नहीं चलेगा । लेकिन झूठ का काम भी बिना सत्य के नहीं चलेगा । खोटा पैसा भी तब चलेगा जब सच्चे पैसे के साथ मिलाओगे। सत्य के साथ जब झूठ मिलाओगे तो झूठ कुछ देर के लिये सत्य माना जाएगा।

अक्रोध । क्रोध न करना धर्म का लक्षण हैं । आप बोलो इन सबसे मानव जाति का क्या नुकसान है ? कौन सी संकीर्णता है इसमें ? अगर यह नहीं है तो मानव और पशु में क्या अन्तर है । बहुत से लोग कहते हैं कि हम धर्म नहीं मानते । मानवता को मानते हैं । हम पूछते हैं कि आप धर्म को छोड़कर मानवता की परिभाषा कीजिए। पशु और मानव में क्या अन्तर है ? आपको कहना पड़ेगा कि पशु धर्म नहीं जानता पर मानव धर्म जानता है । जो धर्म को जानता है, धर्म को मानता है वही मानव है । इसी का नाम मानव धर्म है जिसको सनातन धर्म कहते हैं । यह सनातन धर्म कब से चला आया ? बहुत पहले ही से ।

सतयुग में सब सात्विक होते थे । लेकिन हमने आपको बताया था कि रजोगुण, तमोगुण भी बीच-बीच में हो जाता है । हुआ क्या कि रावण का राज्य हो गया । रावण का जब राज्य हुआ तो उसने देवताओं से बैर मान लिया । देवताओं को अपना शत्रु समझने लगा । ऐसा है कि जो दुराचारी लोग होते हैं वे सज्जनों से अकारण द्वेष करते हैं । उनको बुरा लगता है कि कोई सच्चा रहे, आजकल नौकरी करने वालों में रिश्वत का चलन है । कोई कर्मचारी यदि रिश्वत न ले तो उसके ऊपर नीचे के कर्मचारी उसके बैरी हो जाएँगे । उसको फँसा देंगे क्योंकि ये उनके दुराचार में, भ्रष्टाचार में बाधा डाल रहा है । ये खुद नहीं करेगा तो काम कैसे बनेगा ? कहने का मतलब यह है कि दुर्जन सज्जनों को बिना सताए नहीं रहता । देवता दैवी सम्पत् वाले हैं । दो सम्पत् होती है मनुष्य के हृदय में । एक दैवी सम्पत् और दूसरी आसुरी सम्पत् । भगवद् गीता में दोनों के बारे में विस्तार से बताया है ।

जो अच्छे लोग होते हैं उनमें दैवी सम्पत् होती है और जो बुरे होते हैं उनमें आसुरी। उनमें दम्भ होता है। वेश, भाषा और क्रिया की चतुरता से दूसरो के सामने अपने माहात्म्य का प्रकटीकरण ही दम्भ है । भागवत के अनुसार ब्रह्मा जी का नाती है दम्भ । ब्रह्मा जी की छाती से धर्म और पीठ से अधर्म उत्पन्न हुआ । अधर्म ने विवाह किया मृषा माने झूठ के साथ । **मृषा धर्मस्य भार्यासीत्**। मृषा और अधर्म दोनों से दम्भ और माया पैदा हुए।

यह भगवान् का नाती हो गया । एक दिन ब्रह्मा की सभा में पहुँचा खट-खट खड़ाऊँ पहने, तिलक लगाए । हाथ में कमण्डलु लिए, मृगचर्म दबाए । सब लोग उठकर खड़े हो गए। लोगों ने कहा कि आप बैठिए तो बोला कि हमारे योग्य स्थान नहीं है । ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी गोद में बैठ जा । ब्रह्मा जी ने अपनी गोद दिखाई तो उसने उसमें पानी छिड़का। **अपवित्रः पवित्रो वा ।** पानी छिड़क कर ब्रह्मा की गोद में मृगछाला बिछाई और कमर सीधी करके बैठ गया । सब लोग बैठ गए। लेकिन उसको शान्ति नहीं थी । ब्रह्मा जी से बोला कि आपकी नाक से आ रही अशुद्ध श्वाँस हमारे ऊपर पड़ रही है इसको बन्द करो। अब उनकी श्वाँस घुटने लगी तो उन्होंने ध्यान से देखा कि हमारी श्वाँस बन्द कराने वाला कौन है ? गौर से देखा तो बोल पडे । अरे बेटा दम्भ! तुम हो । कहा कि हाँ हम ही हैं। कहा तुम अब ब्रह्मलोक में नहीं रह सकते । तुम भारत में चले जाओ और जहाँ बड़े-बड़े तीर्थ हैं वहाँ जाकर निवास करो । लोगों को ठगो । **दम्भो दर्पोभिमानश्च ।** मन में अहं भावना रखना **दर्प** अभिमान, क्रोध, कठोर वचन और अज्ञान । यह भावना कि मैंने यह ले लिया, ले लूँगा । इसको बर्बाद कर दिया, बर्बाद कर दूँगा। मैं सबका मालिक हूँ । मेरे समान कौन है मेरे परिवार के लोग बड़े हैं । ऐसी भावना के लोग आसुरी सम्पत् के कहलाते हैं । जब आसुरी सम्पत् बढ़ जाती है तो धर्म की ग्लानि हो जाती है । रावण आसुरी सम्पत् का पोषक था । उसने कहा कि हमारे बैरी देवता हैं । ये सामने लड़ाई नहीं करते हैं पर हमारे हैं विरोधी । इनको मारना बहुत आवश्यक है । हम जब जाते हैं इनसे लड़ने तो ये भाग खडे होते हैं । इन देवताओं को नष्ट करने के लिए इनकी जड़ को नष्ट करना पडेगा ।

मूलं हि विष्णुर्हि देवानां यत्र धर्म सनातनः ।

देवताओं का मूल विष्णु है । विष्णु माने यज्ञ । जहाँ सनातन धर्म होता है वहीं यज्ञ होते हैं और यज्ञ में दो वस्तुओं की आवश्यकता पडती है । जिसकी आहुति देना है वह और आहुति के साथ वेद मन्त्र पढ़ना है । वेद मन्त्र पढ़ते हैं ब्राह्मण और आहुति दी जाती है गौ के घी की । जब तक गौ रहेंगी, ब्राह्मण रहेंगे, तब तक यज्ञ होते रहेंगे । जब यज्ञ होते रहेंगे तो देवताओं की पुष्टि होती रहेगी । इसलिए यज्ञ बन्द करने के लिए ब्राह्मणों के यहाँ महामारी फैला दो । गौओं को काट डालो और कभी-कभी यह भी होता है कि ब्राह्मणों को भोजन कराना भी यज्ञ होता है । ब्राह्मणो के मुख में यदि आप ग्रास डालते हैं तो वह भी एक प्रकार से भगवान् के ऊपर हवन हो जाता है । जहाँ पर श्राद्ध हो वहाँ बाधा डालो । तर्पण होता हो देवताओं के लिए वहाँ बाधा डाल दो तो यह सब चाहते ही थे आसुरी सम्पत् के लोग । इन्होंने धर्म कार्यों में बाधा डालना प्रारम्भ कर दिया ।

गोस्वामी जी वर्णन कर रहे हैं –

बाढ़े बहु खल चोर जिवारा । जे लम्पट पर धन पर दारा ।।

मानहिं मातु पिता नहीं देवा । साधुन सन करवावहिं सेवा ।।

जिनके अस आचरण भवानी । ते जानहु निसिचर सम प्रानी ।।

चोर बढ़ गए, जुआरी बढ गए । परस्त्रीगामी बढ गए, परधन माने दूसरों का धन हरण करने वाले बढ गए । इस तरह के जो लोग हैं जो अपने माता-पिता को नहीं मानते, देवताओं को नहीं मानते । साधुओं की सेवा करनी चाहिए उल्टे उन्हीं से सेवा करवाते हैं। ऐसे लोगों के सींग भले ही न हो परन्तु वे निशाचर जरूर हैं । देखने में बडे ही सुन्दर दिखते हों पर आचरण जिनके दूषित हों वे राक्षस हैं । अधर्म जब बढ़ जाता है तो समाज में विश्रृंखलता उत्पन्न हो जाती है । आज भारत की यही दशा है । माता पिता की सेवा करने वाले नहीं है। कहते हैं कि पिताजी ! अब वृद्धाश्रम चले जाओ । माता जी को साथ ले जाओ । क्यों ? जब घर में बहू आती है तो वह नौ बजे सोकर उठती है और सासू पहली पीढ़ी की है । वह चार बजे ही उठ जाती है । वह अपने पति से कहती है कि यह बुढ़िया आधी रात को खट-खट करती है । हमारी नींद में बाधा डालती है । पति कहता है कि भाई! देखो वह हमारी माँ है लेकिन वह रोज-रोज कहते-कहते पति को वश में कर लेती है और जब साँस कहती है तुम्हारी बहू हमारी बात नहीं मानती है तो ससुर समझाता है कि पराए घर की लडकी है । प्रेम से रखो कुछ दिनों में ठीक हो जाएगी । अन्त में झगडा हो जाता है । बाप बेटे से कहता है तू अपनी बहू को संभाल । ये तेरी माँ को कष्ट दे रही है तो बेटा कहता है आप भी हमारी माँ को संभालिए । यह हालत हो जाती है तो बेटा कहता है कि पिताजी ! आप वृद्धाश्रम चले जाओ । वृद्धाश्रम आजकल बहुत बन रहे हैं । हमारे पास एक टेलीफोन आया था । बोले कि पंजाब में हमने एक वृद्धाश्रम बनाया है । उसमें हम बढ़िया भोजन दे रहे हैं । कमरे बनाए हैं आप आकर देख लीजिए । मतलब हम भी जाकर वृद्धाश्रम में भर्ती हो जाएँ ?

ऐसी हालत में पृथ्वी में इन लोगों का भार बढ़ गया । धरती सबका भार सहन कर लेती है । धरती जड़ नहीं, धरती माता है । जो हमारे यहाँ पर्वत हें, नदियाँ हैं, पृथ्वी है ये सब चेतन के द्वारा अधिष्ठित हैं । सबके भीतर चेतन हैं । अगर चेतन न रहे तो सब बिखर जाए । धरती के भीतर भी एक देवी है जिसको हमलोग धरती माता कहते हैं । इसको हमलोग लक्ष्मी भी मानते हैं । सबेरे उठकर जो बुद्धिमान होते हैं वे कहते हैं–

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ।।

हे देवि ! समुद्र तेरे कपड़े हैं, पर्वत तेरे स्तन हैं, तू विष्णु की पत्नी लक्ष्मी है । हम तेरे ऊपर पैर रख रहे हैं । हमें क्षमा करना । धरती का नाम ही क्षमा है । वह धरती कहती है –

गिरि सर सिन्धु भार नहिं मोही । जस मोहि गरुअ एक परद्रोही ।

मेरे ऊपर पर्वत हैं, नदियाँ हैं, सरोवर हैं, समुद्र हैं । उनका मुझको उतना भार नहीं लगता जितना कि एक परद्रोही का भार लगता है । वे देवताओं के पास गई गौ रूप धारण करके ।

गौर्भूत्वाश्रुमुखी खिन्ना क्रन्दन्ती करुणं विभोः ।
उपस्थितान्तिके तस्मै व्यसनं समवोचत ।

पृथ्वी ने गौ का रूप धारण किया । गौ बनी । गौ इतनी दयनीय प्राणी है कि उससे बढ़कर और कोई दयनीय नहीं है । कहते हैं कि एक बार बादशाह अकबर कहीं जा रहा था । नरहरि कवि उसके साथ बैठे थे । गाय रम्भा रही थी । अकबर ने पूछा कि नरहरि बताओ यह गाय रम्भा कर क्या बोल रही है ? नरहरि ने कहा कि गाय कह रही है कि दुश्मन भी अगर अपने मुँह में तिनका दबा ले तो लोग उसको नहीं मारते । मैं तो तिनका ही चरती रहती हूँ । और इतना ही नहीं, मेरे मन में विषमता नहीं है कि हिन्दुओं को मीठा दूध पिलाऊँ और तुर्कों को कड़वा दूध पिलाऊँ । सबको एक समान मीठा दूध पिलाती हूँ। अपने बेटों को पृथ्वी जोतने के लिए लोगों को देती हूँ । किसी का मैं अनिष्ट नहीं करती। लेकिन फिर भी मैं मारी जा रही हूँ । गाय यही कह रही है । अकबर बादशाह ने कहा कि हमारे राज्य से गोकशी बन्द हो ।

मतलब यह है कि गाय को मारना बहुत अनुचित है । अपने देश में आज गाय मारी जा रही है । रोज कई हजार गौवें कट जाती हैं । जहाँ कानून बने हैं कि यहाँ गौ मारी नहीं जाएगी वहाँ से लोग गायों को ढोकर दूसरी जगह ले जा रहे हैं । एक पाप तो यह कर रहे और दूसरे उसको जर्सी बना रहे हैं । उसमें कृत्रिम गर्भाधान करके उसका स्वरूप बदल रहे हैं । गौ के लिए जो चारा था वह सब लोगों ने खेती के लिए बाँट दिया । गाय के चरने की कोई जगह नहीं है आज । वन विभाग वाले गाय को जंगल में घुसने नहीं दे रहे हैं । गाँव में जो भूमि थी उसको बाँट लिया । अब गाय रहे कहाँ ? गौओं की ऐसी

दशा भारत में हो रही है । ऐसी स्थिति में अधर्म नहीं बढ़ेगा तो क्या बढ़ेगा ? जब कसाई के यहाँ काटी जाती है तो वह दुःख की श्वाँस छोडती है । उसकी हाय देश को लग रही है । इसलिए देशवासी गड़बड़ हो रहे हैं । किसी ने हमको बताया कि मोदी कह रहे हैं कि गाय पालो और नौ साल की हो जाए तो बेच दो । जब गाय हम बेच देंगे । बिना कटे कहाँ जाएगी । किसी के मन में गाय के प्रति दर्द नहीं है । कोई नहीं है जो यह कहता हो कि हम गाय को रखेंगे और गाय का शुद्ध दूध जनता को पीने के लिए देंगे । अस्तु।

हम यह कह रहे कि थे कि पृथ्वी गौ रूप धारण करके देवताओं के यहाँ गई । देवता ब्रह्मा के पास गए। सब देवता सोचने लगे कि अब इसके दुःख को कौन दूर करे। सब विचार कर रहे हैं । रामचरितमानस के अनुसार बोल रहे हैं ।

बैठे सुर सब करहिं विचारा । कहँ जाइअ केहि करिअ पुकारा ।।
पुर वैकुण्ठ जान कह कोई । कोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई ।।

कोई कहता है कहाँ प्रभु को पुकारें ? विष्णु भगवान् ही रक्षा का दायित्त्व लेते हैं। किसी ने कहा विष्णु भगवान् वैकुण्ठ में रहते हैं । किसी ने कहा क्षीर समुद्र में रहते हैं। कहाँ जाएँ ? कहाँ पुकारें ? भगवान् शङ्कर बोले –

तेहि समाज गिरिजा में रहेहूं । अवसर पाइ वचन एक कहेहूं ।।
हरि व्यापक सर्वत्र समाना । प्रेम ते प्रकट होइं मैं जाना ।।

भगवान् शङ्कर कहते हैं कि समाज में हम भी थे । जब लोगों में विचार चलने लगा और कोई निर्णय नहीं हो रहा था तो हमने कहा भाई ! क्यों चिन्ता करते हो ? कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है । भगवान् समान रूप से व्यापक हैं । जहाँ प्रेम होता है वहाँ से प्रकट हो जाते हैं । कहते हैं –

अग जगमय सब रहित विरागी । प्रेम ते प्रभु प्रकटत जिमि आगी ।।

आप देखते हैं कि यज्ञ में अरणि मन्थन होता है । अरणि मन्थन में एक लकड़ी नीचे रहती है और दूसरी ऊपर से घुमाई जाती है । थोड़ी देर में आग प्रकट हो जाती है । आग क्यों प्रकट हो जाती है ? पानी के मथने से घी क्यों नहीं निकलता ? तिल के पेरने से तेल निकलता है । क्यों ? क्योंकि तेल उसमें है । इसी तरह से लकड़ी में, काष्ठ में अग्नि पहले से है इसलिए मन्थन से निकलती है । इसी तरह से परमात्मा सर्वत्र है । अग जग मय। स्थावर जंगम सबमें परमात्मा है और सबसे अलग है । जहाँ प्रेम होता है वहाँ वह प्रकट हो जाता है । इसीलिए सब देवताओं ने मिलकर भगवान् की स्तुति की । **जय जय**

सुरनायक कहकर भगवान् की स्तुति की । भगवान् ने उनकी वाणी सुनी और आकाशवाणी में कहा कि –

जनि डरपहुँ मुनि सिद्ध सुरेशा । तुमहिं लागि धरिहौं नर वेशा ।।

अरे मत डरो । मैं तुम्हारे लिए नरवेश धारण करूँगा । नरवेश धारण करके इस पृथ्वी के भार को दूर करूँगा । इस तरह से देवताओं को आकाशवाणी से आश्वासन मिला। ब्रह्मा जी ने कहा –

धरणि धरहु मनु धीर कह विरंचि हरि पद सुमिरु ।
जानहिं जन की पीर प्रभु भंजिहिं दारुण विपति ।।

हे धरणी ! तू धीर धारण कर । भगवान् के चरणों का स्मरण कर । भगवान् तेरे भक्तों के मन की पीडा को जानते हैं । तुम्हारी दारुण विपत्ति का वे हरण करेंगे । जा अब भगवान् आने वाले हैं । पृथ्वी को आश्वासन मिला । इधर क्या होता है कि मनु और शतरूपा तपस्या कर रहे थे।

स्वायम्भुव अरु मनु शतरूपा । जिनते भई नर सृष्टि अनूपा ।।

ब्रह्मा जी ने अपने संकल्प से अनेकों प्रकार की सृष्टि की रचना की । तीन प्रकार की सृष्टि होती है । एक सांकल्पिकी सृष्टि, दूसरी सांसिद्धिकी सृष्टि और तीसरी मैथुनी सृष्टि । ब्रह्मा जी ने संकल्प से देवता, दानव और विविध प्रकार के प्राणियों की रचना की । ऋषियों ने अपने तप की सिद्धि से अनेकों प्राणियों की रचना की । लेकिन तपस्या करने वाले बहुत कम थे । सृष्टि नहीं बढ़ रही थी तो उन्होंने मैथुनी सृष्टि से संसार की वृद्धि के लिए अपनी दाहिनी भुजा से पुरुष और बाँयी भुजा से नारी को उत्पन्न किया । पुरुष का नाम मनु और नारी का नाम शतरूपा था । इन्हीं से सृष्टि उत्पन्न हुई । हमारे आपके पूर्व पुरुष मनु हैं । इसीलिए हमलोग मानव कहलाते हैं । मनुष्य कहलाते हैं । आजकल के लोग कहते हैं हम आदमी हैं। आदमी का मतलब क्या ? यह मुसलमानों के धर्म में लिखा है कि आदम और हव्वा दो पैदा हुए थे । इन लोगों ने फल खा लिया तो दुनिया में आए । उनसे सृष्टि हुई तो वे आदमी कहलाए । तुम आदमी नहीं हो । तुम मानव हो । आजकल एक आदमी नाम की पार्टी बन गई है। हमलोग आदम की औलाद हैं क्या जो आदमी बन गए । ये दोनों जब पैदा हुए तो इन्होंने राज्य किया । आप लोगों ने भागवत में कथा सुनी होगी कि मनु शतरूपा से दो पुत्र हुए और तीन कन्या हुईं । प्रियव्रत और उत्तानपाद पुत्र और आकूति, देवहूति और प्रसूति नाम की तीन कन्याएँ ।

इनसे आगे की सृष्टि चली। उनके मन में आया कि अब तपस्या करना चाहिए। तपस्या करने का मन में भाव आया लेकिन भोगों से तृप्ति ही न हो। विषयों से वैराग्य ही न हो। विषयों से वैराग्य हो तो तपस्या करने का अवसर मिले।

होइ न विषय विराग भवन बसत भा चौथपन।
दम्पति मन अतिलाग जनम गयहु हरि भजन बिनु ।।

कहते हैं कि चौथापन आ गया। सौ वर्ष की आयु होती है। २५ वर्ष पहली, फिर २५ वर्ष और फिर २५ वर्ष। ७५ वर्ष की आयु के बाद आ गया चौथापन। लेकिन मन नहीं मान रहा है। अभी और भोग लो। अभी और राज्य कर लो। कहा अब मन के साथ जबरदस्ती करना पडेगा। हम एक दृष्टान्त दिया करते हैं।

एक बादशाह ने एक बकरी पाली। यह घोषणा की कि बकरी का जो पेट भर देगा उसको हम आधा राज्य दे देंगे। बहुत से लोग आए। बकरी को लेकर जंगल गए। खूब पत्ती खिलाई और शाम को लेकर आए। बकरी का पेट तना हुआ था। जब राजा के सामने बकरी लाई गई तो उन्होंने बबूल की पत्ती दिखाई। उसने तुरन्त मुँह मार दिया। कहने लगे कि इसका पेट भर गया होता तो मुँह क्यों मारती। इस तरह कई लोग फेल हो गए। वे बकरी का पेट नहीं भर पाया। एक बुद्धिमान व्यक्ति गया। कहा कि हम आपकी बकरी का पेट भर देंगे। वह उसको ले गया। बकरी को उसने खूब खिलाया। खिलाते-खिलाते जब उसका पेट तन गया तो बबूल की पत्ती दिखाई। जो उसने मुँह मारा तो एक डण्डा लगाया। मुँह मोड लिया। दर्द हुआ। दर्द भूल गई तो फिर पत्ती दिखाया। फिर मुँह मारा तो फिर दूसरा डण्डा लगाया। ऐसे डण्डा मारते-मारते डण्डे से वह इतना डर गई कि अब वह पत्ती की तरफ न देखकर डण्डा देखने लगी। अब वह राजा के पास लेकर आया। राजा ने पत्ती दिखाई लेकिन बबूल की पत्ती की तरफ न देखकर उस व्यक्ति के डण्डे की तरफ देखने लगी। मुँह बन्द हो गया। राजा ने समझा कि अब इसका पेट भर गया। यह मन भी बकरी है। यह चरता ही रहेगा। इसका पेट कभी नहीं भरेगा। इसको वैराग्य का डण्डा मारना पड़ेगा। जब वैराग्य का डण्डा लगेगा तब इसका मुँह बन्द होगा नहीं तो यह खाता ही रहेगा।

आप देखो कि दादी के भी बच्चा हो रहा, साँस का भी हो रहा और बहू का भी हो रहा है। यह क्या है ? वैराग्य नहीं हो रहा है। संसार के भोगों को भोगने का एक समय होता है। उसके बाद उससे विरक्त होकर भगवद्भजन में लगना चाहिए। स्त्री और पुरुष दोनों को। स्त्री को भी अपने पति को समझाना चाहिए कि अब भजन का वक्त आ गया

है। दाँत टूट गए, बाल सफेद हो गए। शरीर जर्जर हो रहा है। कब तक भोगते रहोगे? इसलिए चलें भगवान् का भजन करें। मनु-शतरूपा ने जबरदस्ती मन हटाकर अपने पुत्र को राज्य दिया और तपस्या के लिए मन किया। तीर्थवर नैमिष क्षेत्र में आकर मनु शतरूपा तपस्या करने लगे। तपस्या करते-करते बहुत समय बीत गया। वह तपस्या करते समय ध्यान करते थे कि जो अनन्त ब्रह्माण्ड का उत्पादक, पालक, संहारक परब्रह्म परमात्मा है हम उसका दर्शन करना चाहते हैं। उनके अपार तप को देखकर

विधि हरि हर तप देखि अपारा। मनु समीप आए बहु बारा।।

मांगु मांगु बहु भांति लुभाये। परम धीर नहिं चलहिं चलाये।।

उनकी तपस्या देखकर ब्रह्मा जी गए कि वरदान माँग, विष्णु आए कहा वरदान माँग। रुद्र आए कहा वरदान माँग।पर उन्होंने सबसे कहा कि नहीं। हम जिसका भजन कर रहे हैं। जो कुछ माँगना होगा हम उसी से माँगेगे। तुम क्यों आए?

एक कथा आती है जिसमें एक ब्राह्मण था। उस ब्राह्मण ने राजा के लड़को के साथ खेलते-खेलते राजभवन में प्रवेश किया। राजकुमारों के साथ उसको भी दूध पीने को मिल गया। उस ब्राह्मण बालक का नाम था उपमन्यु। उसने दूध का स्वाद जब लिया तो घर में आकर अपनी माता से कहा कि माताजी ! हम दूध पियेंगे। घर में गाय थी नहीं। गरीबी थी। माता ने गेहूँ पीसकर उसको पानी में घोला और बेटे को दे दिया कि यही दूध है। सफेद है पी लो। उपमन्यु कहने लगा कि माँ यह तो दूध नहीं है। माँ बोली कि जा भगवान् शंकर की शरण में जा। वही तेरा दुःख दूर करेंगे। उपमन्यु ब्राह्मण का बालक भगवान् शंकर की आराधना करने के लिए जंगल चला गया। बहुत काल तक उसने तपस्या की। उसकी परीक्षा लेने के लिए भगवान् शङ्कर इन्द्र का रूप धारण करके ऐरावत हाथी पर बैठकर आ गए। बालक से कहा कि वरदान माँग। बालक ने कहा कि आप क्यों पधारे? हमने तो भगवान् शङ्कर को पुकारा है। बोले जो शङ्कर दे सकते हैं वह मैं भी दे सकता हूँ। मुझसे ही माँग ले वाद-विवाद चला। उपमन्यु बोला कि देखिए इन्द्र जी ! हम शंकर के बनाए कीड़ा भी बनने को तैयार हैं पर तुम्हारे बनाए इन्द्र भी नहीं बनना। जो कुछ हमको लेना है हम शंकर से लेंगे। इन्द्र को बड़ा क्रोध आया कहा कि हम वज्र से सिर तोड देंगे। उसने सिर झुका लिया। सोचा कि वज्र पड़ने ही वाला है लेकिन जब आँख खोली तब देखा कि शंकर बैल पर बैठे दिखाई पड़े। वृषभारूढ़ शंकर आ गए थे परीक्षा लेने। उपमन्यु को उन्होंने दूध का समुद्र दे दिया। भगवान् के जो अनन्य भक्त होते हैं वह भगवान् को छोडकर किसी अन्य के सामने हाथ नहीं पसारते। लेना होगा

तो उन्हीं से लेंगे । दूसरे के सामने हाथ नहीं पसारेंगे। जो स्वयं हाथ पसार रहा है उसके सामने हाथ पसारने से क्या लाभ होगा ? मनु शतरूपा ने सबकी बात नहीं सुनी । जब उन्होंने तपस्या नहीं छोड़ी तो भगवान् श्रीराम जानकी जी के साथ में वहाँ प्रकट हुए । राम सीता सामने आ गए । यह राम कौन हैं ? कहते हैं –

उपजहिं जासू अंश ते नाना । शंभु विरंचि विष्णु भगवाना ।।

जिनके अंश से अनेकों शंभु, ब्रह्मा और विष्णु उत्पन्न होते हैं वह राम प्रकट होते हैं। और सीता ?

भृकुटि विलास जासु लय होई । राम वाम दिशि सीता सोई ।।

जिसके भृकुटि विलास से संसार का लय हो जाता है वह सीता राम के वाम भाग में खड़ी थी और दोनों अभिन्न हैं । अगर आप इसको देखें तो आपको समझ में आ जाएगा कि गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज विशिष्टाद्वैतवादी नहीं थे । वे तो अद्वैतवादी हैं । सीता और राम को अभिन्न मानते हैं । उनके यहाँ तो लक्ष्मी जीव कोटि में हैं और नारायण उनके यहाँ विशेष्य हैं । विशिष्टाद्वैत का मतलब क्या है ? बहुत से लोग विशिष्टाद्वैत कहते तो हैं पर उसका अर्थ नहीं समझते । न्याय शास्त्र में विशेषण के भेद से विशेष्य में भेद हो जाता है । विशेषण विशेष्य दोनों मिलकर विशिष्ट होता है । सृष्टि प्रलयकाल में सूक्ष्म रहती है । प्रलयकाल में जीव भी रहते हैं, सृष्टि भी रहती है लेकिन सूक्ष्म रहती है । सृष्टि के पहले सूक्ष्म रहते हैं । सृष्टि के पूर्व जीव और जगत् सूक्ष्म रूप में रहते हैं । वे नारायण के विशेषण बनते हैं । सूक्ष्म चित् अचित् विशिष्ट एक ब्रह्म हो गया । वहाँ पर विशेषण हो गए सूक्ष्म चित् अचित् । चित् माने जीव, अचित् माने जगत और जब सृष्टि हो गई और यही स्थूल हो गए। स्थूल चित् और अचित् से विशिष्ट ब्रह्म नारायण दूसरा दो हो गए । सूक्ष्म चित् अचित् एक ब्रह्म नारायण विशेष्य और दूसरा स्थूल चित् अचित् विशिष्ट । दो विशिष्ट हो गए । **विशिष्टं विशिष्टं च विशिष्टे** यह नपुंसक लिंग में दो विशिष्ट हो गए विशिष्टे माने दो विशिष्ट । श्रुति कहती है **तयोरद्वैतं विशिष्टाद्वैतं** दोनों विशिष्ट का अभेद ही विशिष्टाद्वैत है । और वेदान्त कहता है कि विशेषण मिथ्या है । विशेष्य सत्य है और दोनों विशेष्य चेतन चेतन है इसलिए एक है। विशेष्य से अतिरिक्त विशेषण की कोई सत्ता नहीं है । इसलिए एक अद्वितीय है । यह सिद्धान्त है जो गोस्वामी तुलसीदास जी रामचरितमानस में प्रतिपादित कर रहे हैं । राम और सीता राम परब्रह्म हैं उन परब्रह्म का एक स्वरूप सामने खडा हुआ जिसको राम के रूप में देखा । राम के आश्रित शक्ति है । शक्ति शक्तिमान में भेद नहीं है वह सीता है।

दोनों का दर्शन देखकर, भगवान् का दर्शन करते ही उनका शरीर हृष्ट पुष्ट हो गया। मानो अभी घर से आए हों । भगवान् की स्तुति की तो भगवान् श्रीराम बोले कि वरदान माँग । मनु बोले कि महाराज! **चाहहुँ तुमहिं समान सुत ।**

मैं पुत्र चाहता हूँ लेकिन वह पुत्र आपके समान होना चाहिए । यह कहने में थोडा संकोच कर गए कि आप ही पुत्र बन जाओ । आपके जैसा मेरा बेटा हो यह कहा । भगवान् राम बोले कि

आप सरिस कहँ खोजहुँ जाई । नृप तव तनय होब मैं आई ।।

मैं अपने समान किसको खोजूँ ? इसलिए हे राजन् मैं ही तेरा बेटा बनूँगा । यह भगवान् ने आश्वासन दे दिया । फिर शतरूपा के पास आए । शतरूपा तुम क्या चाहती हो? बोली कि महाराज ! चतुर राजा ने जो वरदान माँगा वह तो मुझे चाहिए ही ।इसके अतिरिक्त आपकी भक्ति भी ।

सोइ गति सोइ मति सोइ तव चरन सनेहु ।
सोइ विवेक सोइ रहनि प्रभु हमहिं कृपा कर देहु ।।

उन्होंने पुत्रता तो माँगी लेकिन साथ-साथ में विवेक भी माँग लिया । जब शतरूपा ने यह माँगा तो मनु ने भगवान् से कहा कि सुनिए ! शतरूपा से मेरा मतभेद है । यह जो विवेक माँग रही है । मैं विवेक नहीं चाहता।

सुत विषयक तव पदरति होऊ ।

मैं आपसे प्रेम करूँ केवल पुत्र भाव से करूँ । और इसके साथ-साथ मैं यह चाहता हूँ कि जैसे मणि के बिना फणि नहीं रहता, जैसे बिना जल में मीन नहीं रहती वैसे तुम्हारे वियोग में मैं अपने शरीर का त्याग कर दूँ । यह चाहता हूँ । भगवान् ने यह वरदान दिए और अन्तर्धान हो गए । वही मनु-शतरूपा दूसरे जन्म में दशरथ कौशल्या बनते हैं । अयोध्या के राजा दशरथ और उनकी पत्नी का नाम कौशल्या । दशरथ-कौशल्या के रूप में इन्होंने जन्म लिया तो बहुत वर्ष हो गए । इनके कोई सन्तान नहीं हुई । तीन रानियाँ प्रमुख थीं । कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा । पर किसी से भी सन्तान नहीं हुई । कई वर्ष बीत गए ।

एक बार भूपति मन माहीं । भई ग्लानि मेरे सुत नाही ।।

मन में ग्लानि हुई कि अरे हमारा कोई बेटा नहीं है । अब इस राज्य को कौन

संभालेगा ? अयोध्या के राज्य का वारिस कोई है नहीं । उस ग्लानि से प्रेरित होकर वे गुरु वशिष्ठ के यहाँ गए । वहाँ जाकर उनसे अपना दुःख निवेदन किया । गुरु देव ने आश्वासन दिया ।

धरहु धीर होइहैं सुत चारी । त्रिभुवन विदित भक्त भयहारी ।।

राजन् ! धैर्य धारण करो । तुम्हारे चार पुत्र होंगे जो त्रिभुवन विदित होंगे । भक्तों के भय को हरण करने वाले होंगे । हम उसके लिए यज्ञ करायेंगे । अश्वमेध यज्ञ और उसमें भी पुत्रेष्टि यज्ञ करायेंगे । मानस में लिखा है कि-

शृंगी ऋषिहिं वशिष्ठ बुलावा । पुत्र काम शुभ जज्ञ करावा ।।

शृंगी ऋषि को बुलाया । शृंगी ऋषि बडे तपस्वी थे । इनके पिता विभाण्डक ऋषि अकेले बेटे का पालन करते थे । जंगल में रहते थे । स्त्री का इन्होंने दर्शन ही नहीं किया था। स्त्री क्या होती है ये जानते ही नहीं थे । हुआ यह कि वहाँ पर एक राजा थे । उन राजा के यहाँ अनावृष्टि हो गई । पुरोहितों ने बताया कि यदि शृंगी ऋषि आ जायेंगे तो वृष्टि हो जाएगी। शृंगी ऋषि को वहाँ से कौन ला सकता था ? विभाण्डक ऋषि कहीं जाते नहीं थे तो उन्होंने अप्सराओं को भेजा । अप्सराएँ गईं मुनि का वेश बनाकर । जब विभाण्डक जी कन्दमूल फल लेने गए तब आईं अकेले में । पूछा कि कहाँ से आए हैं ? कहा कि हमारा अलग देश है वहाँ से हम आए हैं । कहते हैं कि मुनि कुछ खाते नहीं थे । नीम की छाल खाते थे । उन्होंने उस छाल में मलाई लपेट दी । जब नीम की छाल दाँत से कुतरने गए तो उसमें मलाई आ गई। और कहते हैं कि उसमें धीरे-धीरे अप्सराओं ने तमाखू भी मिला दिया। मलाई के साथ-साथ जब मुँह में तमाखू भी गई तो बुद्धि कुछ अलग हो गई । फिर वह उन पर मुग्ध हो गए फिर वे फल खिलाने लगी और कहने लगी कि हमारे देश में चलिए । एक दिन वे नाव लेकर आ गईं और शृंगी ऋषि को लेकर उस राज्य में गईं । उनके जाते ही वहाँ वृष्टि हो गई । विभाण्डक ऋषि बहुत क्रुद्ध हुए । उस राजा के यहाँ दशरथ की पहली बेटी जिसका नाम शान्ता था वह शान्ता वहाँ पर थी । उसका विवाह नहीं हुआ था । विभाण्डक ऋषि ने देखा कि हमारा बेटा नहीं है तो वे गए तब तक उन्होंने शान्ता के साथ उनका विवाह कर दिया। शृंगी ऋषि शान्ता के पति दशरथ जी के दामाद होते हैं । हम इसलिए बताना चाहते हैं कि भगवान् के जो जन्म और कर्म है वे दिव्य हैं । जैसे प्राकृत गर्भाधान होता है वैसे भगवान् का गर्भाधान नहीं होता। यज्ञ में मन्त्रों से जो आहुति निकली उसमें से प्रकट हुए ।

प्रकटे अग्नि चरु कर लीन्हे ।

हाथ में खीर का पात्र लेकर अग्निदेव प्रकट हुए। और उन्होंने राजा दशरथ से कहा कि यह हवि तुम अपनी स्त्रियों को बाँट दो तो उससे तुम्हारे पुत्र हो जाएँगे। राजा दशरथ ने वह हवि लेकर उसका आधा भाग कौशल्या को दिया। और आधे का आधा कैकेयी को दिया। उसके आधे भाग को दो भाग करके एक भाग कौशल्या के हाथ से, एक भाग कैकेयी के हाथ से सुमित्रा को दिया। इस तरह से उसके चार भाग हुए। ये रानियाँ गर्भस्थिति हो गईं। पेट में खीर गई। खीर के रूप में भगवान् के सूक्ष्म अंश चले गए।

इस तरह से भगवान् रानियों के उदर में आ जाते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[32]

।। राम राम बत्तीस ।।

संसार-सागर को पार करने का प्रमुख साधन है धर्म

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, सज्जनों, देवियों !

धर्म इस अपार संसार समुद्र को पार करने के लिए सबसे बड़ा हमारा साधन है, सेतु है। यह भी लिखा है कि -

यत्फलं कपिला दाने कार्तिक्यां ज्येष्ठ पुष्करे ।
तत्फलं पाण्डवश्रेष्ठ विप्राणां पादसेचने।।

कार्तिक की पूर्णिमा को ज्येष्ठ पुष्कर के सामने कपिला दान करने से जो पुण्य होता है ब्राह्मण के चरण धोने से वह पुण्य होता है । हम लोग राजराजेश्वरी माता की पूजा प्रारम्भ करते हैं कि ब्रह्मलोक से लेकर लोकालोक पर्वत तक जो ब्राह्मण देवता रहते हैं उनको प्रणाम है । सबसे पहले हम यहाँ जो वेद के छात्र हैं उनसे यह बताना चाहते हैं कि वे ब्राह्मणत्त्व के महत्त्व को समझें। अभिमान मनुष्य को गिराता भी है और उठाता भी है । यदि हम दूसरों को नीच समझने के लिए अपने को बड़ा कहते हैं तो वह अभिमान हमको गिराता है । किन्तु हम यदि अपने पूर्वजों का स्मरण करते हैं, अपने कुल का स्मरण करते हैं । यदि हमें अपने ब्राह्मणत्त्व का स्वाभिमान है तो वह अभिमान हमें उठाता है, पतन से बचाता है । हम इन छात्रों से यह कहना चाहेंगे कि वे अपने हृदय में ब्राह्मणत्त्व का स्वाभिमान बनाये रखें । वर्णाश्रम हमारे देश का प्राण है, सनातन धर्म का मूल है। सनातन धर्म का मूल ही वर्णाश्रम है । इस धर्म का जब तक पालन नहीं होगा तब तक देश की उन्नति नहीं हो सकती ।

लोगों ने कहा कि जब हम मुसलमान से पूछते हैं तो वह कहते हैं कि हम मुसलमान हैं । चाहे जितने ही लोग हों मुसलमान अपने को मुसलमान ही कहते हैं लेकिन जब हम हिन्दू से पूछते हैं तो कोई अपने आपको ब्राह्मण कहता है, कोई क्षत्रिय, कोई वैश्य, कोई शूद्र कहता है । विभिन्न जातियों में बँटने के कारण हिन्दू लोग मुसलमानों से पराजित हो जाते हैं । इसीलिए उनके द्वारा पराजित होने से बचने के लिए हम हिन्दुओं को अपनी

वर्णाश्रम जाति व्यवस्था को समाप्त कर देना चाहिए। इस पर हमारा यह कहना है कि इसी वर्णाश्रम व्यवस्था ने, जाति व्यवस्था ने मुसलमानों के शासन में और अंग्रेजों के शासन में हिन्दुओं को बचाकर रखा। अगर हिन्दुओं की एक ही जाति होती तो एक के मुसलमान हो जाने पर सब मुसलमान हो जाते। औरंगजेब के जमाने में यदि कोई भी हिन्दू मुसलमान हो जाता तो सारे हिन्दू मुसलमान हो जाते। किसी ने यदि धर्मविरुद्ध कार्य किया या अपने धर्म को छोड़ा तो हमने उसका बहिष्कार कर दिया। बहिष्कार करके अपने समाज को बचाया। इस जाति भेद से यह लाभ हुआ कि एक जाति यदि दूषित हो गई तो दूसरी ने अपने को बचा लिया।

आप देखिये कि ईसाईयों ने आदिवासियों को धर्मान्तरित करने के लिए अनेक उपाय किए। आदिवासियों के अनेक भेद हैं। गौड़ हैं, कोल हैं, भील हैं, सन्थल हैं, बोडो हैं, मुण्डा हैं, पुरान हैं, कँवर हैं। इनकी अनेकों शाखाएँ हैं। झारखण्ड में पुरान लोगों ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया तो कँवर लोगों ने अपने आपको बचा लिया। अगर वे सब एक होते तो सबके सब ईसाई बन जाते। हमारी इस जाति व्यवस्था ने मुगल काल में हमारी रक्षा की है। हमें मुसलमानों से मुकाबले के लिए अपने आप को खण्डित करने की आवश्यकता नहीं है। हमलोग विविधता में एकता देखते हैं। हम भिन्न-भिन्न जाति के लोग हैं पर हम समय-समय पर एक भी हो जाते हैं। जब चन्द्रग्रहण आता है तब हम काशी में एकत्र हो जाते हैं। किसी जाति का भेद गंगा जी करती नहीं। सूर्यग्रहण आता है तो कुरुक्षेत्र में पहुँच जाते हैं। इसी प्रकार कुम्भ का मेला आता है तो बिना निमन्त्रण के करोड़ों लोग पहुँच जाते हैं। जाति भेद होते हुए भी धर्म का भेद नहीं है। सबका धर्म सनातन धर्म है। इसलिए अपने आपको नष्ट करके मुसलमानों से बचने की बात यदि हम करते हैं तो हम खुद ही मुसलमान हो जाएँगे। आप देखिए ! लोग कहते हैं कि सब लोग अपने आपको हिन्दू कहें। एक व्यक्ति हैं वे कहते हैं कि जितने भी लोग हैं वे अपने आपको हिन्दू कहें। चाहे वह किसी भी जाति और किसी भी धर्म के हों। वे कहते हैं कि सनातन धर्म एक पंथ है। धर्म नहीं है। यह एक सम्प्रदाय है। कोई भी किसी पंथ का हो। जैसे मुसलमानों और ईसाइयों का पंथ है ऐसे ही सनातन धर्म भी एक पंथ है। इसलिए सब लोग पंथनिरपेक्ष हो जाएँ। सब लोग अपने आपको हिन्दू कहें।

आजकल मुसलमानों के घर वापसी की बात चल रही है। यह किस रूप में हो। वे अपने आपको मुसलमान कहना छोड़कर हिन्दू कहने लग जाएँ तो उनकी पहचान तो खत्म होगी ही पर इससे हमारी भी पहचान खत्म हो जाएगी। जब गोमांस खाने वाला भी हिन्दू कहलाएगा तो हम अपने को क्या कहेंगे ? इसलिए आज हमारे ऊपर दायित्त्व

आया है कि हम अपने सनातन धर्म के माध्यम से इसको रोकें और जो इस तरह की बातें कर रहे हैं उनके सिद्धान्तों से देश की रक्षा करें ।

शनि की बात आजकल चल रही है । शनि के सम्बन्ध में आप विद्वानों के विचार हमने सुने । शनि की बात इतनी बढ़ गई कि हर स्थान पर शनि के ही मन्दिर बनने लग गए और यह लोगों के व्यवसाय का एक साधन बन गया । एक तरफ साईं दूसरी तरफ शनि। हमारा शनि से उतना विरोध नहीं है जितना कि इनके नाम पर रोजगार चलने से है । इसने हमको ईश्वर से विमुख किया है । हमलोग चाहते हैं कि सब भगवान् के भक्त बने रहें । महिलाएँ भी भगवान् की भक्ति करें ।

यान्ति देवव्रता देवान् पितृन्यान्ति पितृव्रताः ।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् ।।

गीता में भगवान् ने कहा कि जो देवताओं का व्रत करने वाले हैं वे देवताओं को प्राप्त होते हैं, पितरों की आराधना करने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं, भूतों की आराधना करने वाले भूतों को प्राप्त करते हैं और मेरी आराधना करने वाले मुझको प्राप्त करते हैं । कुछ लोग कहते हैं कि शनि भी देवता है । ग्रह भी देवता हैं लेकिन **भूतोपि देवयोनयः ।** भूत भी देव हैं तो क्या उनकी भी पूजा करनी चाहिए ? जो मनुष्य से इतर लोग हैं कहीं-कहीं उनको भी देव कहा जाता है लेकिन वे आराध्य नहीं होते । हमें तो भगवान् की आराधना करनी चाहिए।

जहाँ तक महिलाओं का प्रश्न है । महिलाओं को मोक्ष के लिए कहीं कोई रोक-टोक नहीं है । **स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ।** चाहे कोई भी हो, महिलाओं के ऊपर भी भगवान् ने कृपा की है । एक बात और आपके सामने रखना चाहते हैं कि आजकल विश्व हिन्दू परिषद् यह मानकर चलती है कि बौद्ध भी हिन्दू हैं, जैन भी हिन्दू हैं ।

एक बार क्या हुआ कि बिहार के पटना जिले में आदिवासी और हरिजन बौद्ध धर्म स्वीकार करने के लिए एकत्र होने जा रहे थे । सब मिलकर यह घोषणा करने वाले थे कि **बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि ।** इसका विरोध विश्व हिन्दू परिषद् कैसे करता ? उनको तो हिन्दू मिल रहा है । पीड़ा हमलोगों को हुई कि जब ऐसा हो जाएगा तो ये रामनवमी नहीं मनाएँगे । हिन्दू ही नहीं रहेगा तो हमारे साथ बैठेगा नहीं, होली नहीं खेलेगा । नामसंकीर्तन नहीं करेगा । ऐसी हालत में समाज में विघटन होगा । हमने उनसे पूछा कि आप ऐसा क्यों कर रहे हो ? वे लोग बोले कि

हिन्दू धर्म में गैर बराबरी है, ऊँच-नीच है और बौद्ध धर्म में गैर बराबरी नहीं है। सब समान है। उनका एक ग्रन्थ है ललितविस्तर। हमने उसको निकालकर बताया कि उसमें कहा गया है कि बुद्ध का जन्म या तो ब्राह्मण कुल में होता है या क्षत्रिय कुल में होता है। वैश्य और शूद्र में नहीं होता। यह एक बात हुई। दूसरी यह कि अम्बष्ट नाम का एक सेवक था बुद्ध का। उससे बुद्ध ने कहा कि अम्बष्ट तू शूद्र है। तू क्षत्रियों की बराबरी नहीं कर सकता। हमने कहा कि जब वहाँ भी यही है तो फिर अपना घर क्यों छोड़ते हो ? अपने धर्म को छोड़कर दूसरी जगह जाएँ और वहाँ भी यही बात रहे तो क्या मिला? यहाँ हास्य कवि भी बैठे हैं। उनके सामने एक बात रखते हैं।

एक आदमी का नाम था छेदीलाल। छेदीलाल-छेदीलाल लोग कहते थे तो उसको पीड़ा होने लगी। कहने लगा हमारे नाम के आगे छेद है तो उसने अपना धर्म बदल दिया। मुसलमान बन गया। मुसलमान बनने के बाद उसका नाम बदल गया। नया नाम हुआ सुराख अली। यहाँ भी सुराख मिला तो वह ईसाई बन गया। ईसाई धर्म में उसका नाम हो गया मिस्टर होल। अब उसने सोचा कि छेदीलाल क्या बुरा था ?

एक दूसरा दृष्टान्त और है। एक स्त्री थी। उसके पति का नाम था ठनठन राय। लोग चिढ़ाते थे ठनठन राय की औरत। उसने सोचा कि लोग चिढ़ते हैं। इसका कुछ उपाय करना चाहिए। अपने पति को छोड़कर एक दिन वह चली। सामने से एक मुर्दा उठाये लोग जा रहे थे। उसने पूछा कि ये कौन हैं ? लोगों ने बताया कि यह मर गया है इसका नाम है अमर सिंह। कुछ और आगे चली तो एक फटे-चिटे कपड़े पहनकर एक आदमी जंगल में कण्डे बीन रहा था। उसने पूछा आपका नाम तो उसने कहा धनतप राय। फिर आगे बढ़ी तो सामने से एक अन्धा चला आ रहा था लाठी टेकते हुए। उसने नाम पूछा तो उसने बताया नयनसुख। स्त्री ने कहा –

अमर सिंह को मरते देखा। कण्डा बीने धनपत राय ॥

नयनसुख तो नैन विहीने। भले बने मेरे ठनठन राय ॥

हमारे सनातन धर्म में आप देखेंगे कि ऐसी कोई जाति नहीं है जिसमें भगवद्भक्त न हुए हों। भगवान् राम ने शबरी के यहाँ जाकर उसके बेर खाए। कुछ लोगों ने कहा कि शबरी ब्राह्मणी थी। बहुत विवाद चला लेकिन सवाल यह है कि जब अहिल्या के पास भगवान् राम गए तो वाल्मीकि रामायण में यह लिखा है कि भगवान् राम ने अहिल्या को प्रणाम किया लेकिन शबरी उनके चरण छूती है। अगर वह ब्राह्मणी होती तो भगवान् राम उसको अपने चरण छूने नहीं देते। जहाँ प्रेम होता है वहाँ भगवान् जाते हैं।

कुछ लोग शास्त्रार्थ करने के लिए कहते हैं । गाली देते हैं । आज कुछ पत्रकार लोग हमारे पास आए थे। हमने कहा कि भाई ! यदि कोई शास्त्र में शंका हो तो आओ उसका निर्णय कर लें पर वे चाहते हैं कि जैसे वे गाली देते हैं हम भी उनको गाली दें और ये लोग उसको छापें । हमारा यह कहना था कि अगर हम शबरी को ब्राह्मणी कह देते हैं तो श्रीमद्भागवत में जो आया है कि –

त्वयाऽऽहूतस्तु भगवान् याति नीचगृहेष्वपि ।

हे भक्ति ! तेरे द्वारा बुलाये जाने पर भगवान् नीच के घर में भी जाते हैं । हम उदाहरण क्या देंगे ? उदाहरण तो देना पड़ेगा । उदाहरण शबरी है । हम कह रहे हैं कि हर जाति में भक्त लोग हुए हैं । तुकाराम हो गए । रैदास हुए हैं । मन चंगा तो कठौती में गंगा कहा है। ऐसी स्थिति में हर जाति को अपना स्वाभिमान होना चाहिए । इसके लिए धर्म परिवर्तन करने की या जाति को समाप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है । भारत में विविध जाति हैं । यही भारत का सौन्दर्य है । यही हिन्दू धर्म का अलंकार है कि हम अनेक होते हुए भी एक हो जाते हैं । अभी आप देखेंगे कि उज्जैन का कुम्भ आएगा । वहाँ कोई भेद-भाव नहीं होगा। कोई जाति का भेद नहीं होगा । लोग कहते हैं कि इससे संकीर्णता आती है । संकीर्णता मानव की निर्बलता है । अगर हम जाति को छोड़ देंगे तो भी संकीर्णता रहेगी । आपके नगर में यदि पार्षद का चुनाव होगा और दूसरे क्षेत्र का व्यक्ति किसी दूसरे क्षेत्र में जाकर चुनाव लड़ना चाहेगा तो कहेंगे कि बाहरी है । संकीर्णता तो कहीं भी आ जाएगी । भाषा की होगी, वेश की रहेगी । ऐसी स्थिति में हमको देखना चाहिए कि एकता के सिद्धान्त को हमें लाना पड़ेगा । इसलिए हमलोग चाहते हैं कि ब्राह्मणों का महत्त्व बना रहना चाहिए । अन्य और जातियों की तरह ही ब्राह्मणों का स्वाभिमान बना रहना चाहिए।

दक्षिण भारत में ब्राह्मण और गैर ब्राह्मण दो ही हैं । वहाँ ब्राह्मणों के विरुद्ध द्रविड नाम की एक संस्था है । एक बार हम कांची गए थे तो वहाँ के छोटे महाराज हमको पहुँचाने एयरपोर्ट तक आए । हमने उनसे पूछा कि अब यहाँ ब्राह्मणों की क्या अवस्था है ? वे बोले कि अब ब्राह्मण वोट बैंक हो गए हैं । अब पार्टी के लोग उनके पास जाते हैं । इसी तरह यदि ब्राह्मण एक हो जाएँ तो हिन्दू को हराने की ताकत किसी की नहीं होगी । कहते हैं –

सिंहानां महदालस्यात् सर्पाणां च महद्भयात् ।
ब्राह्मणानां अनैक्याच्च तेन जीवन्ति जन्तवः ।।

सिंहों में बहुत ज्यादा आलस्य है, सर्पों में भय है और ब्राह्मणों में फूट है इसीलिए लोग जीवित हैं । हम यह चाहते हैं कि सब एक रहें । ब्राह्मणों में भी कई भेद हैं । कोई सरयूपारीण है, कोई कान्यकुब्ज है, कोई गौड़ है, कोई कुछ है । जो जहाँ है वह वहाँ रहते हुए भी ब्राह्मण बना रहे । सभी ब्राह्मण अपने आपको श्रेष्ठ मानते हैं । जब हम अपने घर से निकले थे तो हम भी समझते थे कि हमसे श्रेष्ठ ब्राह्मण कोई और नहीं है। लेकिन हम जहाँ भी गए, जिससे भी बात करें वह भी यही कहे कि हम ही सबसे श्रेष्ठ ब्राह्मण हैं । हमने कहा कि सब बड़े हैं । आपस में झगड़ा मत करो । अपने-अपने समाज में सब बड़े हैं । सबको मिल-जुलकर रहना है । एक के संस्कार दूसरे से नहीं मिलते हैं। इसलिए आपस में मिलते नहीं हैं लेकिन हमारी एकता बनी रहनी चाहिए । सबसे बड़ी बात यह है कि हम सबको अपने ब्राह्मणत्त्व के स्वाभिमान को नहीं छोड़ना चाहिए । अपनी बेटियों को भी यही संस्कार देना चाहिए । अगर संस्कार रहेगा तो सदा सुरक्षित रहेगा।

हमारे गुरुजी स्वामी ब्रह्मानन्द जी सरस्वती महाराज नौ वर्ष की अवस्था में ही घर से निकल गए थे । उन्होंने हमको बताया कि हम कई जगहों पर घूमे पर हमें हमारे ब्राह्मणत्त्व के अभिमान ने कहीं गिरने नहीं दिया। इसी स्वाभिमान ने हमें बचाया । हम सबके हृदय में इसका स्वाभिमान होना चाहिए कि हम ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए हैं और अविच्छिन्न रूप से चले आ रहे हैं ।

श्रीरामजन्म भूमि के सम्बन्ध में आपको हम बताना चाहेंगे कि जन्मभूमि में मस्जिद कभी नहीं थी और यह बात हमलोगों ने एक संस्था बनाई थी रामजन्मभूमि पुनरुद्धार समिति । इस समिति को रामजन्मभूमि मुकदमे का पक्ष बनाया था । इसी समिति ने मुकदमा लड़ा । परमेश्वर नाथ मिश्र नाम के एक अधिवक्ता हैं । यहीं मिर्जापुर के रहने वाले हैं उन्होंने चौबीस दिन तक बहस करके यह सिद्ध कर दिया कि बाबर के यहाँ आने के कोई प्रमाण नहीं हैं और मीर बाँकी भी यहाँ कभी नहीं आया । यहाँ पर मस्जिद थी ही नहीं । हमने अपनी आँख से यह देखा है कि वहाँ चौदह कसौटी के खम्भे थे । एक खम्भे में मंगल कलश था । ऊपर हनुमान जी का चित्र था । लकड़ी की चौखट थी । परिक्रमा पथ था । वहाँ वजू का कुँआ नहीं था । अजान की मीनारें नहीं थी । वह हमारे प्राचीन मन्दिर का अवशेष था । एक मुसलमान ने हमको चिट्ठी लिखी । धर्म क्रान्ति से कारागार तक नाम की एक पुस्तक छपी है उसमें उस चिट्ठी का उल्लेख है । उसने कहा कि यह राजा विक्रमादित्य के द्वारा निर्मित मन्दिर के अवशेष नहीं हो सकते क्योंकि इसकी ऊँचाई बहुत छोटी है । हमने इसके उत्तर में उन्हें लिखा कि यदि यह छोटी है तो बाबर इतनी छोटी जगह पर अपना मन क्यों लगाता ? बड़ी जगह पर लगाता। लोगों ने

आरोपित कर दिया कि वहाँ मस्जिद थी और परिणाम यह हुआ कि लोगों के मन में यह भावना बनी कि यहाँ मस्जिद थी तभी हिन्दुओं ने इसे तोड़ा। सच यह है कि वहाँ कोई मस्जिद नहीं थी। वह राम जन्मभूमि है और वहाँ मन्दिर बनना ही चाहिए।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के मोहन भागवत जी अभी बोल रहे थे चैनल में कि वहाँ आदर्श राम का मन्दिर बनवाएँगे। किसी ने उनसे पूछा कि गरीब के मुँह में रोटी क्या राम मन्दिर से मिल जाएगी ? किन्तु वे उसका उत्तर नहीं दे पाए। हमसे यदि पूछा जाता तो हम कहते कि जब राम मन्दिर बनेगा तो हर गरीब के मुँह में रोटी जाएगी। नहीं तो भ्रष्टाचार होगा और गरीब सदा गरीब ही रहेगा। आज आप देखिये कि सरकार कहती है कि हम दो रुपया किलो चावल, गेहूँ देंगे। कोई गरीब नहीं रहेगा, कोई भूखा नहीं रहेगा। लेकिन सवाल यह है कि वह दो रुपया किलो चावल या गेहूँ कहाँ मिलेगा ? राशन की दुकानों में। राशन की दुकानों में उसको मिलेगा जिसके पास राशन कार्ड होगा। राशन कार्ड कैसे बनेगा ? जो पैसा देगा। हमारे यहाँ आश्रम में एक गरीब है। उससे लोगों ने कहा कि तुम राशन कार्ड बनवा लो। उसने कहा कि दो हजार में एक कार्ड बन रहे हैं। हम कहाँ से लाएँ रुपया ? झारखण्ड में एक बार अकाल पड़ा। हम वहाँ जाते हैं। हमने पूछा कि अब तो यहाँ पर कोई गरीब नहीं होगा क्योंकि यहाँ पर तो दो रुपया किलो चावल मिल रहा है। लोगों ने कहा कि अभी भी लोग भूखे हैं। जिनके पास कार्ड है उनको मिल जाता है केवल। हमने पता लगाया तो वहाँ हजारों लोग बिना कार्ड के थे। हमलोगों ने वहाँ कईयों के राशन कार्ड अपने आश्रम के बनवाए। साल भर तक चावल, दाल और जो भी आवश्यक सामग्री है हम लोग बाँटते रहे। कहने का मतलब यह है कि जब आपके भीतर धर्म होगा तब आप सोचेंगे कि पड़ोसी के घर में चूल्हा जला कि नहीं ? कोई व्यक्ति भूखा तो नहीं है ? हमारे यहाँ यह बताया जाता है कि जब घर में भोजन बन जाए तो घर का स्वामी किवाड़ बन्द करके भोजन न करे। पहले आँगन में जाकर देखे कि कोई भूखा तो नहीं है ? कोई अतिथि तो नहीं है। उसको खिलाकर तब खाए। यह हमारे यहाँ का विधान है। आपके यहाँ मिठाई आए तो किवाड बन्द करके पहले खा लो ऐसा नहीं। सबको खिलाकर खाओ। यह हमारा सनातन धर्म है। जब हम राम के सिद्धान्त को अपनायेंगे तो भूखे को भोजन कराने की भावना आएगी। लेकिन अगर हम इस पर ध्यान नहीं देंगे तो लोगों में वैमनस्य बढ़ेगा। उत्तराखण्ड में कुछ दिन पहले भूकम्प आया। चमोली और कुछ अन्य जिलों में तो लोगों ने कम्बल भेजे। कुछ लोगों ने कम्बल ले लिए और बाजार में बेच दिया। अनाज भेजते गए लोग और वहाँ लूटते गए लोग। गरीबों तक जाता ही नहीं था।

मानवता तो धर्म से ही आएगी। राम का जब मन्दिर वहाँ बनेगा तो वह आदर्श होगा। जहाँ पर हम उनका चरित्र पढ़ेंगे। आज आप देखिये हमारे भारत के प्रधानमन्त्री यहीं से निर्वाचित हुए। उन्होंने अमेरिका के राष्ट्रपति को भारत की पहचान श्रीमद्भगवद्गीता भेंट किया और जापान के प्रधानमन्त्री को भी दिया। भारत की पहचान गीता है। हमारा प्रश्न है कि फिर अपने बालकों और बालिकाओं को देश में गीता क्यों नहीं पढ़ाई जाती? यहाँ तो मानव संसाधन मन्त्रालय से जो सिलेबस तय होगा केवल वही पढ़ाया जा सकता है और अनिवार्य शिक्षा कर दी गई है। आपको वह पढ़ना ही पड़ेगा। दूसरा कुछ नहीं पढ़ सकते। जब तक यह बात है तब तक भारत में धर्म की स्थापना नहीं हो सकती। जब तक हम धर्म का पोषण नहीं करेंगे तब तक धर्म के आधार पर आप कभी भी आगे नहीं हो पाएँगे। आप घाँस को तैयार नहीं करेंगे, अनाज को सींचेंगे नहीं तो कब तक काटेंगे। इसीलिए आवश्यक है कि लोगों के मन में धार्मिक भावना पैदा करें और यह धार्मिक भावना शिक्षा से आएगी।

आज महिलाओं के ऊपर अत्याचार हो रहे हैं। आपके अन्दर यदि धर्म और अधर्म की भावना होती तो दस बार पहले सोचते। हमलोग कहा करते हैं कि एक पण्डित था। बहुत गरीब था। उसकी गरीबी से वह तंग आ गया। प्रतिग्रह को अपने यहाँ बड़ा पाप माना जाता है। उसने कहा कि प्रतिग्रह करने से अच्छा है कि चोरी कर लें। उसने सोचा कि किसकी चोरी करें ? गरीब की करेंगे तो वह भी हमारी ही तरह परेशान होगा तो इसलिए राजा की चोरी करें। राजा के यहाँ उसने सेंध लगाई। वहाँ बहुत से सामान थे। उसने रत्न उठाया तो सोचा कि रत्नों की चोरी से यह दुर्दशा होती है। सोना उठाया तो सोने की चोरी से यह दुर्दशा होती है। वह शास्त्र पढ़ा था तो उसको शास्त्र में लिखी बातें याद आती गईं। अब कुछ ले ही न पाए वह। सब उठा-उठाकर रखता गया। अन्ततोगत्वा उसने सोचा कि क्या चुराएँ ? उसकी गाय भी भूखी थी तो उसने भूसा चुराया। भूसा की गठरी बाँधी और जब वह सेंध से बाहर निकलने लगा तो गठरी में एक छेद हो गई। वह चलता गया तो भूसा भी गिरता गया। ऐसे लकीर बन गई उसके घर तक। दूसरे दिन पता चला कि चोरी हुई है तो उस भूसे की लकीर देखकर उसके घर तक सिपाही पहुँच गए। पकड़कर ले गए राजा के सामने। राजा ने पूछा कि आपने बहुत सी चीजें वहाँ रखीं थी आपने भूसा ही क्यों चुराया ? उसने कहा कि पाप लगता और भूसा हम गाय के लिए चुराए। लिखा है कि गाय और ब्राह्मण के लिए कुछ किया जाए तो उतना पाप नहीं लगता है इसलिए चुराया हमने। राजा ने कहा प्रतिग्रह ले लो तो कहा कि पाप लगता है। अन्त में राजा ने यज्ञ कराया और यज्ञ में उसको ऋत्विक बनाया, दक्षिणा दी। दक्षिणा

प्रतिग्रह नहीं है। दक्षिणा पण्डित का मेहनताना है। कहने का हमारा अभिप्राय यह है कि जो लोग धर्म को जानते हैं वे हर बात में डरते हैं कि ऐसा करने से यह फल होता है। हम कहते हैं कि यदि बालकों को रामायण पढ़ाई गई होती तो वे समझते कि परनारी के हरण से रावण का वंशनाश हो गया था। यदि महाभारत पढ़ाई गई होती तो यह समझते कि द्रौपदी के चीरहरण से कौरवों के कुल का सर्वनाश हो गया था। इसीलिए हमारे धर्मग्रन्थों का अध्ययन सबको करना चाहिए। यदि सरकार नहीं कराती है तो हम अपने घरों में कराएँ। अपनी परम्परा को बनाए रखें।

इतना ही कहकर यहाँ के जो विद्वान् हैं उनको आदर की दृष्टि से देखते हुए उनको आशीर्वाद देते हुए हम बच्चों से कहना चाहते हैं कि यहाँ से वेद पढ़कर आप जहाँ भी जाएँ यह सन्देश लेकर जाएँ कि सनातन धर्म से अच्छा और कोई धर्म नहीं है। वैदिक धर्म ही सबसे बड़ा है। यही भावना आपके हृदय में रहेगी तो सर्वत्र आपकी विजय होगी।

इतना ही कहकर हम अपनी बात को पूर्ण करते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[33]

।। राम राम तैंतीस ।।

दुर्लभ मानव देह से दुर्लभ प्राप्ति करें

समुपस्थित सज्जनों, देवियों !

भागवतजी में वचन आया है-

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ।।

इसका अर्थ है कि यदि कोई पुरुष मनुष्य शरीर को प्राप्त करके भवसागर पार नहीं करता है तो वह आत्महत्यारे के समान है । हमारे शास्त्रों में इस संसार को समुद्र कहा गया है । जैसे समुद्र में अगाध जल भरा रहता है और उसकी बडी-बडी तरंगों की थपेड से लोग उसके सामने टिक नहीं सकते उसी तरह से यह संसार भी एक समुद्र है । आप संसाररूपी समुद्र में है ।

आप पूछ सकते हैं कि हम तो शहर में बैठे हैं । समुद्र यहाँ से बहुत दूर है । तो संसार को समुद्र कहने का क्या अभिप्राय है ? अभिप्राय यह है कि यह जो संसार समुद्र के ही समान है । समुद्र में जैसे अगाध जल भरा रहता है उसी तरह संसार में भी दुःख का जल भरा है । जैसे समुद्र में बडी-बडी तरंगें होती हैं वैसे ही इसमें भी होती हैं । कोई कितना भी बड़ा पहलवान हो जाए समुद्र की बडी-बडी तरंगें यदि आ जाएँ तो वह टिक नहीं सकता। इसी तरह से इस संसार समुद्र में भी बड़ी-बड़ी तरंगें हैं और ये तरंगें छः हैं । दो शरीर की, दो प्राणों की और दो मन की । शरीर की दो तरंगें हैं जरा और मरण। जरा माने बुढ़ापा और मरण माने मृत्यु । आप देखिये कि विज्ञान बहुत आगे बढ़ गया है लेकिन आज तक बुढ़ापा न आए इसका कोई उपाय विज्ञान नहीं बता सका है । अगर आपके बाल सफेद हो जाएँ तो उनको आप थोड़ी देर के लिए काला भले ही कर लें लेकिन फिर से जवानी आ जाए या हमेशा के लिए बाल काले हो जाएँ यह नहीं हो सकता । बुढ़ापा आता है तो फिर नहीं जाता। कहते हैं कि जवानी जाकर नहीं आती और बुढ़ापा आकर नहीं जाता । जो आया सो आ ही गया । एक कथा है न कि एक मेहमान आ गया तो फिर जाने का नाम ही नहीं लेता था । वैसे ही बुढ़ापा भी है ।

जरा के बाद मृत्यु। जब से मनुष्य होश संभालता है। मौत से बचने की कोशिश करता है। सोचता है कि हम न मरें लेकिन प्रयत्न के बावजूद दुनिया भर के डाक्टर आकर बैठे रह जाते हैं और प्राण-पखेरू उड़ जाते हैं। जरा-मरण से कोई मुक्त नहीं है। जिन्दा रहेंगे तो एक दिन सबको बुढ़ापा आएगा और मौत भी आएगी।

प्राणों की दो तरंगें हैं भूख और प्यास। महाभारत का युद्ध हो गया। गांधारी के सौ पुत्र मारे गए। वह अपने पुत्रों की लाशों के पास जाकर रो रही थी। लोगों ने कहा कि उठो गांधारी अब भोजन करो। गांधारी बोली कि अब मेरे बेटे मर गए। मैं इनके बिना नहीं रह सकती। भगवान् श्रीकृष्ण ने भी समझाया। वे भी समझाकर हार गए लेकिन फिर भी वह नहीं उठी। भगवान् मुस्कुराए और अपनी माया छोड़कर चले गए। जब कुछ समय बीता तो गांधारी को बहुत जोरों की भूख लगी। उसको इतनी पेरशानी हुई कि उससे रहा ही नहीं गया। आँख की पट्टी जो उसने जीवन भर बाँध कर रखा था उसको खोल दिया। इधर-उधर देखने लगी। उसने देखा कि एक बेर का पेड़ है जिसमें पके हुए फल लगे हैं। वह बेर तोड़कर खाने के लिए पहुँच गई लेकिन हाथ में जब बेर नहीं आए तो अपने बेटों की लाश खींचकर लाई और उनके ऊपर खड़ी होकर बेर तोड़ने लगी। उसी समय भगवान् श्रीकृष्ण वहाँ आ गए। पूछा कि गांधारी क्या कर रही हो? लज्जित होकर गांधारी बोली –

वासुदेव जराकष्टं कष्टं निर्धनजीवितम्।
पुत्रशोकं महाकष्टं कष्टात् कष्टतरा क्षुधा॥

हे वासुदेव! बुढ़ापा सबसे बड़ा कष्ट है। उससे भी बड़ा कष्ट है निर्धन का जीवन। उससे भी बड़ा कष्ट है पुत्रशोक। पिता-माता के सामने बेटा मर जाए तो क्या होता है? लेकिन आज मेरी समझ में आया कि क्षुधा माने भूख सबसे बड़ा कष्ट है। संसार में कौन ऐसा है जिसको यह क्षुधा नहीं सताती।

कल भगवान् शंकर का प्राण-प्रतिष्ठा समारोह है। कल प्राण-प्रतिष्ठा हो जाएगी। हमारे मन्त्रों में वह शक्ति है कि किसी मूर्ति में प्राणों की प्रतिष्ठा करके हम उसकी पूजा कर लेते हैं। मन्त्र बोला जाएगा तो प्राण शिवलिंग में आ जाएँगे। जब भगवान् की मूर्ति में प्राण आ जाता है तो पुरोहित कहता है कि तत्काल भगवान् को भोग लगाओ। भगवान् को भूख लग गई है। जहाँ प्राण है वहाँ भूख है, प्यास है। प्राणधारी जो कोई भी हो वह भूख और प्यास से मुक्त नहीं है। ये दो प्राणों की तरंगें हैं। तीसरी शोक और मोह मन की तरंगें हैं। अपने प्रियजनों के वियोग से जो दुःख होता है उसको शोक कहते हैं।

ऐसा कोई प्राणी नहीं है जो शोक और मोह से मुक्त हो। जिस माँ ने हमको प्यार से पाला, हम बीमार पड़ गए तो रात-रात भर जागती रही। पेशाब कर दिया बिस्तर पर तो स्वयं गीले में सोकर हमें सूखे में सुलाया। पिता मारने दौड़ा तो सामने आकर खड़ी हो गई कि मुझे मार दो पर मेरे बेटे को मत मारो। ऐसी वात्सल्यमयी माँ देखते-देखते चली जाती है। माता का शोक हो जाता है। जो पिता व्यापार करके, खेती करके, नौकरी करके चाहे तो डाका डालकर अपने बेटों का पालन करता है। उन्हें पढ़ाता-लिखाता है वह बाप एक दिन चला जाता है। भाई के सामने उसका सहोदर भाई चला जाता है। पिता के सामने पुत्र चला जाता है और पुत्र के सामने पिता। पत्नी के सामने पति और पति के सामने पत्नी चली जाती है। ऐसा कौन है जिसको शोक न हो। मोह ममता भी सबको लगती है। मनुष्य के मन में मोह बना हुआ है। बेटा कहना नहीं मानता, बेटी कहना नहीं मानती। संसार के चीजों के प्रति ममता बनी हुई है जिससे दुःख होता है। यह शोक-मोह मन की दो तरंगें हैं। इस प्रकार दो शरीर की, दो प्राणों की और दो मन की यही छः तरंगें हैं संसार समुद्र की जो दुःखरूपी जलधि को आच्छादित करती हैं। इससे पार कराने वाले गुरु हैं। सच्चे गुरु। आजकल कहते हैं –

गलियन गलियन गुरु फिरैं दीक्षा हमरी लेव।
स्वरग पडो चाहे नरक पडो हमें रुपैया देव ।।

ऐसे गुरु हो गए हैं आजकल। पर असल में गुरु कौन ? जो हमारे अज्ञानरूपी अन्धकार को ज्ञान के प्रकाश से दूर कर दे वही गुरु होता है। गुरु ही कर्णधार होते हैं। मानव शरीर पाकर हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए यह गुरु बताते हैं। गुरु बताते हैं कि जीवन में चार पुरुषार्थ हैं – अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष। मनुष्य को धन भी कमाना चाहिए, संसार का सुख भी लेना चाहिए, धर्म भी करना चाहिए और मोक्ष भी प्राप्त करना चाहिए। कुछ लोग केवल धन के पीछे लगे रहते हैं। हमलोग देखते हैं कि कलकत्ता में व्यक्ति धन कमाने आता है। एक ही कमरे में कई लोग रहते हैं। उसी में सोते हैं, उसी में खाते हैं, उसी में और भी काम करते हैं और जब व्यापार करते-करते बुढ़ापा आ जाता है तब कहीं बंगला बनता है। तब कहीं फ्लैट खरीदते हैं। शरीर में पचाने की शक्ति नहीं रहती। शरीर इतना जर्जर हो जाता है कि जीवन का आनन्द ले ही नहीं पाते। कुछ लोग केवल अर्थ में ही लगे हैं। न अपने खाते हैं और न किसी दूसरे को खिलाते हैं। दूसरों के लिए कुछ नहीं किया तो उसका कोई मोल नहीं है और केवल अपने लिए ही किया तो क्या किया ? अपना पेट तो कुत्ता भी भर लेता है। अपने कुटुम्ब

का, अपने परिवार का, दीनों का, दुःखियों का, जो जरूरतमन्द हैं उनका सबका ध्यान रखते हुए संसार के भोग भोगो । सबको अपने ही समान समझो । गीता कहती है –

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यिति योऽर्जुन ।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ।।

हे अर्जुन ! जो दूसरों के सुख-दुःख को अपने ही समान समझता है वह परम योगी है । यह समझने की जरूरत है । आपको भगवान् ने कपड़ा दिया है तो जो लोग फुटपाथ पर सो रहे हैं उनको देखिए । आपको हलुआ-पूड़ी खाने को मिला है तो खा लीजिए लेकिन यह देख लीजिए कि पड़ोसी के घर में चूल्हा जला है कि नहीं जला है । यदि पड़ोसी के घर में चूल्हा नहीं जला है तो उसका इन्तजाम कीजिए । आवश्यकता पूरी कीजिए । शरीर की आवश्यकता क्या है ? मकान चाहिए, कपड़ा चाहिए । आजकल लोग कहते हैं कि कपड़ा, मकान और रोटी इन तीनों के सिवाय अन्य किसी की आवश्यकता नहीं है । किसी नेता ने कहा कि मैं नहीं जानता कि ईश्वर है कि नहीं है । यदि है तो भी हमें उसकी जरूरत नहीं है क्योंकि हमें रोटी चाहिए, मकान चाहिए और कपड़ा चाहिए। ईश्वर नहीं चाहिए ।

उनको पता ही नहीं है कि ईश्वर क्या चीज है ? ईश्वर वह हैं जिनके बिना न तो हम खा सकते हैं, न पी सकते हैं, न पहन सकते हैं और न ही और कुछ कर सकते हैं। यह नियम है कि प्रतिदिन मनुष्य सोता है । आपने संगीत सभा बुलाई । बड़े-बड़े गवैये आ गए। सभा शुरु हुई । अच्छी लगी फिर सभा समाप्त । फिर घर गए और सो गए । फिर दूसरा दिन शुरु हुआ । फिर वहीं हुआ । फिर रात में सो गए । तो यह नींद क्या है ? जिस तरह से कोई मशीन कार्य करता है और फिर चार्ज हो जाता है । जब तक व्यक्ति नहीं जानता तब तक वह भ्रम में पड़ा रहता है । यही बात गुरु बतलाते हैं कि परमात्मा क्या वस्तु है ? ईश्वर क्या वस्तु है । अपने जीवन में धन कमाए। संसार के सुख भोगे पर साथ-साथ धर्म भी करता रहे । धर्म वह है जो मरने के बाद मनुष्य की सहायता करता है । संसार समुद्र के बारे में आपने सुना । इस संसार समुद्र में दुबारा लौटकर न आना पड़े इसके लिए हमें प्रयत्न करना चाहिए। यह कौन बताएगा ? **गुरुकर्णधारम् ।** इसीलिए बताया गया है कि गुरु अवश्य होना चाहिए। **आचारवान् पुरुषो वेद ।** जो पुरुष आचारवान् है वही वेद को जान सकता है । जो धनवान बनना चाहते हैं । विद्वान् बनना चाहते हैं । भगवान् बनना चाहते हैं उन्हें आचारवान भी बनना चाहिए ।

आचिनोति हि शास्त्रार्थान् आचारे स्थापयत्यपि ।

स्वयमाचरते यस्मात् तस्मादाचार्य उच्यते ।।

जो शास्त्रों का चयन करे, लोगों को आचार में लगाए और केवल दूसरों को ही न लगाए जो स्वयं भी आचरण करे उसको आचार्य कहते हैं । वह आचार्य ही गुरु है । कठोनिषद् में कहा गया है कि सामान्य मनुष्य के द्वारा उसे नहीं जाना जा सकता ।

मानव शरीर की सार्थकता कैसे हो इस पर सबको ध्यान देना चाहिए । एक महात्मा के दर्शन के लिए बहुत से श्रद्धालु गए । उनमें एक गरीब बनिया भी था । फटे कपड़े थे उसके। पेट पीठ में सट रहा था । आँखें धँसी हुई थी । उस बनिये को देखकर महात्मा को दया आ गई । महात्मा ने कहा कि मैं अपने पास से पारस मणि तुमको दे रहा हूँ । पारस मणि में यह गुण है कि लोहा छुआ दो तो सोना हो जाता है । तुम जितना सोना बना सको बना लो और अपनी गरीबी मिटा लो । मैं तीर्थयात्रा में जा रहा हूँ । तीर्थयात्रा से जब तक लौटूँ तब तक तू अपनी गरीबी मिटा लेना । बनिया बहुत प्रसन्न हुआ । पारसमणि लेकर रख लिया लेकिन सोना नहीं बनाया। मुहूर्त पूछने लगा । दाम पूछने लगा । आज बनाऊँगा कल बनाऊँगा इसी में समय निकल गया । करते-करते साल बीत गया और महात्मा जी लौटकर आ गए। बनिये की दशा देखकर उन्होंने कहा कि क्या हुआ ? पारस मणि ने अपना गुण छोड़ दिया क्या ? बनिया दौड़कर आया प्रणाम किया। महात्मा ने पूछा कि हमारी मणि कहाँ है? बनिया बोला कि महाराज ! सुरक्षित रखी है। महात्मा ने पूछा कि सोना क्यों नहीं बनाया ? बनिया बोला कि महाराज ! एक चक्कर और लगा लो हम बना लेंगे । महात्मा जी मणि लेकर चले गए और वह रोता रह गया। यह तो हो गया दृष्टान्त और इसका द्राष्टान्त यह है कि परमात्मा महात्मा हैं और जीव बनिया है जो चौरासी लाख योनियों में भटक रहा है । जीव की हालत देखकर परमात्मा ने उसे मानव शरीर रूपी मणि दी है ।

स्वरग नरक अपवर्ग नसेनी । ज्ञान विराग भगति सुख देनी ।।

परमात्मा ने मानव शरीर दिया है पर जीव का समय बीतता चला जा रहा है । बचपन खेलने में चला गया । जवानी नींद में चली गई और वृद्धावस्था सोचते-विचारते चली गई। मानव शरीर का उपयोग नहीं किया। भगवान् कहते हैं कि –

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ।।

इन सब संयोगों को प्राप्त करने के बाद भी जो मनुष्य संसार समुद्र को पार नहीं

करता वह आत्महत्यारे के समान है। एक बात और वह यह कि सभी पापों का प्रायश्चित्त तो हो सकता है पर आत्महत्या के पाप का प्रायश्चित्त नहीं हो सकता। क्योंकि आत्महत्या करने वाला प्रायश्चित्त के लिए बचा ही नहीं रहता।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[34]

।। राम राम चौंतीस ।।

राम नाम महामन्त्र है

समुपस्थित देवियों, सज्जनों !

हम सभी सनातनधर्मी लोग परमात्मा की छः रूपों में उपासना करते हैं । एक तो परमात्मा का निर्गुण निराकार स्वरूप है । जिस स्वरूप का योगी लोग समाधि के द्वारा साक्षात्कार करते हैं । **ध्यायन्ति यं योगिनः** और पाँच रूप वे हैं जिनकी हम उपासना करते हैं भक्ति करते हैं । वे रूप हैं शिव, शक्ति, विष्णु, गणेश और सूर्य । ये पाँच सगुण साकार और एक निर्गुण निराकार । इसीलिए उसी देवता का मन्त्र गुरु से ग्रहण करके साधक उसका जप करते हैं । मन्त्र में, भगवान् के स्वरूप में, गुरु में और आत्मा में अभेद बुद्धि होना चाहिए।

ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेदविभागिने ।
व्योमवद् व्याप्तदेहाय दक्षिणामूर्तये नमः ।।

ईश्वर, गुरु और आत्मा ये तीन और मन्त्र कुल मिलाकर चार माने जाते हैं । मन्त्र तो अनेक होते हैं । जिस देवता की जो उपासना करता है वह उनके मन्त्र का जप करता है । किन्तु सबसे सरल और सबसे श्रेष्ठ भगवान् का मन्त्र है राम नाम । राम नाम एक ऐसा मन्त्र है जिसको महामन्त्र कहा गया है । अभी आप लोग व्यास जी को सुन रहे थे। भगवान् के नाम की महिमा । भगवान् के दो रूप हमने अभी आपको बताए । एक निर्गुण रूप और दूसरे सगुण रूप । गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं कि –

अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी ।
उभय प्रबोधक चतुर दुभाषी ।।

निर्गुण और सगुण दोनों के रूप में राम का नाम आता है । वह निर्गुण का भी बोधक है और सगुण का भी बोधक है । चतुर दुभाषी का मतलब है दुभाषिया । जो दुभाषिया होता है वह दो भाषाओं की जानकारी रखता है और उन दो लोगों के बीच वार्तालाप का माध्यम बनता है जो एक दूसरे की भाषा नहीं जानते हैं । यह ठीक उसी तरह है जैसे संस्कृत में देहलीदीपकन्याय है । कि अगर देहली में दीपक रख दिया जाए तो घर के

भीतर भी उजाला होता है और घर के बाहर भी ।

राम नाम मणि दीप धरु जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहरो जो चाहसि उजियार ।।

राम नाम को भी गोस्वामी तुलसीदास जी ने अमृत बतलाया है । आपने भागवत में कथा सुनी होगी कि देवताओं और दैत्यों ने मिलकर क्षीरसमुद्र का समुद्र मन्थन किया। मन्थन से चौदह रत्न निकले । अन्त में जिसमें अमृत था उसको भगवान् ने दैत्यों से छल करके देवताओं को पिला दिया । यह राम नाम भी अमृत है । यह अमृत कहाँ से निकला? गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में सुनिए । वे इसे एक श्लोक में बोल रहे हैं –

ब्रह्माम्बोधि समुद्भवं कलिमल प्रध्वंसनं चाव्ययं,
श्रीमच्छंभुमुखेन्दुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा ।

संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनम्,
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ।।

वे सुकृती पुण्यात्मा पुरुष धन्य हैं जो वेदरूपी समुद्र के मथने से उत्पन्न हुये, कलियुग के मल को सर्वथा नष्ट कर देने वाले और श्रीजानकी जी के जीवनस्वरूप श्रीराम नाम रूपी अमृत का निरन्तर पान करते हैं ।

बोले कि ब्रह्मरूपी समुद्र से यह निकला है । यहाँ ब्रह्म का अर्थ है वेद । गीता में भी ब्रह्म शब्द का अर्थ वेद किया है । कथा आती है कि वेदवेद्य अर्थात् वेदों के द्वारा जाने जाने योग्य ब्रह्म ने जब दशरथात्मज के रूप में जन्म लिया माने राम के रूप में अवतार लिया तो वेद ने भी रामायण के रूप में अवतार लिया । दशरथ के माध्यम से ब्रह्म ने राम रूप में अवतार लिया और रामायण ने प्राचेतस् वाल्मीकि के द्वारा अवतार लिया ।

वेदवेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।
वेदप्राचेतसादासीत् साक्षाद्रामायणात्मना ।।

भगवान् श्रीरामचन्द्र जी बड़े सफल राजा हुए । उनके राज्य में प्रजा बराबर सुखी रहती थी और वे गुप्तचरों से यह पता लगाते रहते थे कि प्रजा के मन में क्या है ?

राम के राज्य में एक बार एक चित्रकार कुछ चित्रावलियाँ लेकर आया और उसने वह चित्रावली राम को अर्पित की । रामचन्द्र जी जानकी को वही चित्र दिखा रहे थे ।

दिखाया कि चारों बालक खेल रहे हैं । सीता जी ने पूछा कि कौन हैं तो बोले कि हम चारों भाई हैं । एक मुनि बड़े क्रुद्ध दिख रहे थे तो पूछा कौन हैं ये ? तब राम बोले विश्वामित्र जी हैं । हमें माँगने आए थे । आगे भयंकर राक्षसी । गुरु को मारने आई थी तो मारा । जानकी जी ने पूछा कि गुरु क्या दे रहे हैं । बोले कि पचास दिव्य अस्त्र दे रहे हैं ताड़का के वध से सन्तुष्ट होकर । इसे मैं तेरे पेट में जो मेरे पुत्र हैं उनको प्रदान करता हूँ । दिखलाते-दिखलाते धनुष यज्ञ, सीता विवाह, कैकेयी का वनगमन, ऋषि आश्रम में जाना आदि सब दिखाया । जानकी जी ने कहा कि मेरा मन होता है कि एक बार फिर आपके साथ ऋषि-मुनियों के आश्रम में निवास करूँ।

इधर उसी समय गुप्तचार ने सुनाया लांछन का समाचार । तब राम विचार करने लगे कि क्या करें ।और फिर जानकी की लोकप्रतिष्ठा के लिये तथा उनके दोहद की पूर्ति के लिये श्रीराम ने सीता जी को लक्ष्मण जी के साथ वाल्मीकि आश्रम भेज दिया ।

नीति प्रीति परमारथ स्वारथ ।
कोउ न राम सम जान यथारथ ।।

राम जी के इस व्यवहार में उनकी नीति, प्रीति, परमार्थ और स्वार्थ आदि का स्पष्ट निदर्शन होता है । जिसे हमने अपने प्रवचन में बताया भी है ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[35]

।। राम राम पैंतीस ।।

जीवन का वास्तविक उद्देश्य

समुपस्थित यतिवृन्द, विद्वद्वृन्द, महानुभावों, सज्जनों, देवियों !

आज आप सबके बीच में जन्मदिवस पर स्वयं को पाकर हमें प्रसन्नता हो रही है कि आज हमलोग एक साथ बैठकर जीवन के उद्देश्य पर कुछ चिन्तन करेंगे ।

जीवेम शरदः शतम् । यह हमारी वेद मन्त्र की प्रार्थना है कि हम सौ वर्ष तक जिएँ। सौ वर्ष तक हम सुनें, देखें, बोलें और सुख-शान्ति का अनुभव करें । किसलिए? **दृशे विश्वाय सूर्यम्** यह बतलाया कि जैसे सूर्य स्पष्ट रूप से हमें विदित हो जाता है उसी प्रकार परब्रह्म परमात्मा को प्रत्यगात्मा के रूप में हम स्पष्ट दर्शन कर सकें । इसके लिए हमारा जीवन है ।

आप देखें कोई व्यक्ति कहीं जाता है, कुछ करता है, कोई व्यवसाय करता है, खेती करता है, नौकरी करता है तो उससे यदि हम यह पूछें कि तुम यह क्यों करते हो ? वह उत्तर देगा कि नहीं करेंगे तो खायेंगे क्या और यदि पूछेंगे कि खाते क्यों हो तो उत्तर देगा कि यदि नहीं खायेंगे तो जियेंगे कैसे । लेकिन फिर भी यदि हम पूछें कि जीते क्यों हो? तो कहेगा क्या खाने के लिए ? नहीं । जीवन का कोई और उद्देश्य है ।

तत्त्वजिज्ञासा। जीवन का लक्ष्य तत्त्वजिज्ञासा है । परमेश्वर का साक्षात्कार है । जो हमारे भारतवर्ष का सर्व श्रेष्ठ एक स्वरूप है । इस देश में पहले भी भौतिक समृद्धि थी। आप महाभारत पढ़ें रामायण पढ़ें तो उस समय बड़े-बड़े महल थे । उस समय रेशमी वस्त्र थे । भगवान् श्रीकृष्ण रेशमी कौशेय वस्त्र पहनते थे । उस समय सुन्दर आभूषण हुआ करते थे । उस समय विमान थे । रथ थे । कृषि कार्य होता था । कोई भूखा नहीं रह सकता था । और इतने बड़े-बड़े अस्त्र थे कि एक ही ब्रह्मास्त्र से, पाशुपतास्त्र से संसार का संहार किया जा सकता था। लेकिन हम भारतीय उससे सन्तुष्ट नहीं हुए । हमने उसके आगे सोचा । हमने आध्यात्मिक जीवन बिताया । बहुत से ऋषि-मुनियों ने अपना पूरा जीवन कन्दमूल फल खाकर बिता दिया । केवल ध्यान करके, समाधि करके अपना जीवन उन्होंने बिता दिया । उनको सफलता मिली । उन्होंने ध्यान योग के द्वारा, उस परब्रह्म परमात्मा का साक्षात्कार किया ।

यह हमारे भारत का स्वरूप है जिसमें अध्यात्म प्रधान है और उस अध्यात्म के अनुकूल भौतिकता है। भौतिकता का हम विरोध नहीं करते हैं। लेकिन वह व्यावहारिक है। पारमार्थिक तो अध्यात्म है। मनुष्य के सुख-दुःख का सम्बन्ध मन से अधिक है। सांसारिक पदार्थों से अधिक नहीं है। यह हमारे भारत का स्वरूप है और कुछ लोग आजकल भारत के स्वरूप को विकृत करने के प्रयत्न में हैं। कुछ लोग कहते हैं कि पहले राष्ट्र और फिर धर्म। राष्ट्र पहले होना चाहिए धर्म उसके बाद। राष्ट्र रहेगा तो धर्म रहेगा। लेकिन आप इस बात पर विचार करें कि राष्ट्र क्या है ? मातृभूमि क्या है ? **सदा वत्सले मातृभूमे** हम कहते हैं। अगर वह केवल पृथ्वी होती, जड़ होती तो हम उसको **वत्सले** क्यों कहते? वह चैतन्य है। चैतन्य का मतलब, देश का मतलब क्या होता है? राष्ट्र का मतलब क्या होता है ? केवल धरती राष्ट्र नहीं है। धरती में रहने वाले जो मनुष्य हैं वे राष्ट्र हैं। उनकी संस्कृति राष्ट्र है। उनका धर्म राष्ट्र है। उनकी जीवन की प्रणाली राष्ट्र है। अगर वह न रही तो राष्ट्र रहेगा कैसे? और उसका मूल है धर्म।

मनुष्य की जितनी भी चेष्टाएँ हैं वही जब ठीक से की जाती हैं तो संस्कृति बनती हैं। सम्यक् कृति संस्कृति। कृति की शोभा। कहते हैं कि कृति के पहले सम् उपसर्ग है और उसमें शोभन अर्थ में, साधु अर्थ में सुट् का आगम है। इसी से संस्कृति बनता है। शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि की जो शोभन माने उत्तम चेष्टाएँ हैं उनका नाम संस्कृति है। वह संस्कृति यदि हमारे चेष्टा के या धर्म के अनुकूल न हो तो वह संस्कृति संस्कृति नहीं रहेगी। इसीलिए **धर्मेण शासिते राष्ट्रे न च बाधा प्रवर्तते।** धर्म के द्वारा राष्ट्र की रक्षा होती है। इसलिए धर्म को जानना, धर्म का पालन करना अत्यावश्यक है। इसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते। धर्मनिरपेक्ष शब्द का यह अर्थ धर्म की उपेक्षा नहीं है। धर्मनिरपेक्ष का अर्थ यह है कि शासन राम राज्य करे। सबके साथ एक सा व्यवहार हो। सबको भोजन मिले। सबलोग प्रेम से रहें। **सब नर करहिं परस्पर प्रीती।**

लेकिन धर्म के नाम से जो और मत-मतान्तर आ गए हैं उनको भी आप धर्म मान लें और यह चाहें कि सब धर्मों का एक व्यक्ति पालन करे तो यह सम्भव नहीं है। आप सोचिए। परसों हम बहस सुन रहे थे कि गीता, रामायण, महाभारत लड़कों को पढ़ाई जाए कि न पढ़ाई जाए। एक मुस्लिम सज्जन कह रहे थे कि नहीं ठीक है। गीता पढ़ाओ लेकिन कुरान भी पढ़ाओ। ठीक है साहब। हम कुरान भी पढ़ायेंगे लेकिन यह बताइए कि जब हम लड़कों को महाभारत पढ़ाएँगे और भगवान् श्रीकृष्ण को अर्जुन के रथ के सारथी के रूप में चित्रित करके स्कूल में दिखायेंगे तो क्या तुम वहाँ ठहरोगे ? तुम वन्दे मातरम् को सहन नहीं कर पा रहे हो। हाथी सरोवर में अपनी सूँड डालता है। उसकी

सूँड से खींचने से क्या होता है कि पानी तो थोड़ा सा आता है फिर कीचड़ आने लगता हे । वह वहाँ से अपनी सूँड हटाता है । दूसरी तलैया में जाता है फिर तीसरी तलैया में जाता है । तब उसको पूर्ण रूप से तृप्ति होगी जब अगाध सरोवर उसको मिलेगा । यह संसार के भोग ताल तलैया हैं और परमात्मा अगाध सरोवर है । हम उसकी ओर खींचना चाहते हैं । हमारी जीवन प्रणाली उस ओर हमको ले जाती है । यह हमारी संस्कृति है। यह हमारी सभ्यता है । वहाँ तो हमेशा के लिए आपकी सत्तर औरतें हो गईं और जो बेचारी वहाँ गईं हैं उनकी ६९ सौतें हो गईं और वह भी हमेशा के लिए हो गईं । क्या हमेशा ही भोग करते रहेंगे ? **दृष्टवदानुश्रविकं** जो इस लोक के भोगों में दोष है वही परलोक के भोगों में भी हैं । इसलिए हम स्वर्ग को भी छोड़ना चाहते हैं ।

आप संन्यासी लोग जो प्रैष उच्चारण करते हैं कहते हैं कि हम लोकेष्णा, वित्तैषणा और पुत्रैषणा का त्याग करते हैं । इन्होंने सांसारिक भोगों को छोड़कर, परमात्मा के स्वरूप को जानकर सुख का अनुभव करने के लिए घर द्वार का त्याग किया है । इन्हीं का अनुसरण हमारे भारत के गृहस्थ लोग करते हैं। यह भारत की संस्कृति है जिसके अनुसार हमको चलना है ।

अब हम यह बताना चाहेंगे कि कुछ लोग कहते हैं कि हमारे लड़कों को हम इसलिए धर्म की शिक्षा नहीं दे सकते क्योंकि संविधान इसकी इजाजत नहीं देता । लेकिन हमने संविधान की लिखित पुस्तक देखी है अपनी आँख से । संविधान भारत का लिखा गया है । हस्तलिखित पुस्तक में भगवान् रामचन्द्र जी लंका से लौटकर अयोध्या आ रहे हैं ऐसा उसमें चित्रित किया गया है । अर्जुन के रथ के सारथी बनकर भगवान् श्रीकृष्ण हाथ में घोड़ों की रस्सी को लेकर बैठे हैं । यह दिखाया गया है । क्या आप कहते हैं कि संविधान में नहीं है । यह संविधान है भारत का कि भारतीय संस्कृति का सम्मान करता है । धर्मनिरपेक्ष का तो लोगों ने कुछ का कुछ अर्थ कर लिया। धर्मनिरपेक्ष का अर्थ यह नहीं है । सबके साथ समान व्यवहार किया जाएगा यह हमारे राम राज्य का आदर्श है। हमारी शुक्रनीति है । शुक्रनीति में यह बताया गया है कि अगर राजा किसी ऐसे देश को अपने हाथ में ले ले जिसमें आपकी संस्कृति न हो, आपका धर्म न हो तो **तथैव परिपाल्योऽसौ यदा वशमुपागतः ।** वहाँ उसका उसी रूप से परिपालन करना चाहिए । हमारे यहाँ संकीर्णता नहीं है । लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि हम अपने स्वरूप को ही छोड़ दें ।

भारत में आज भी एक अरब हिन्दू रहता है । भले ही विभिन्न सम्प्रदायों में बँटा

हो लेकिन उसकी आत्मा एक है । कल आपने देखा होगा भारत साधु समाज के अधिवेशन में । सब लोग आए और आज आप देख रहे हैं । यह हमारा सम्मान नहीं है। यह भारतीय संस्कृति का सम्मान है । एक समय था जब भारत में बौद्ध धर्म फैल गया था और बौद्ध कह रहे थे कि कोई ईश्वर नहीं है । नदियों में नहाने से पुण्य नहीं होता है । तपस्या करने से पापों का नाश नहीं होता है । जाति वर्ण का कोई अर्थ नहीं है । यह मठ मन्दिर किसी काम के नहीं हैं । परिणाम यह हो गया कि भारत खण्ड-खण्ड होने लगा ।

अहिंसा परमो धर्मः अहिंसा हमारे यहाँ बहुत बड़ी चीज है । वह दैवी सम्पत् का लक्षण है । लेकिन साथ-साथ यह भी बताया गया है कि अगर कोई आततायी आता हो तो वहाँ हिंसा को नहीं रोका जाएगा । वहाँ **आततायिनमायान्तं हन्यादेवाऽविचारयन् ।** क्या कहते थे बौद्ध गुरु ? जब विदेशी आक्रमण होते थे तो आक्रमण करने के बाद वे वहाँ के धर्मगुरु बन जाते थे । बौद्ध गुरुओं के चेले उनको पाठ पढ़ा देते थे कि तुम लूटो और यहाँ के राजाओं से कहते थे **अहिंसा परमो धर्मः ।** भगवान् शङ्कराचार्य जब आए तो उन्होंने गीता का पाठ पढ़ाया कि अगर कोई तुम्हारे सामने आततायी आए तो तुम युद्ध से विमुख मत होना । देश की रक्षा के लिए तत्पर रहना। यह शङ्कराचार्य जी ने उपदेश दिया ।

वैदिक धर्म यदि न होता तो यह देश खण्डित हो जाता । इसीलिए धर्म जो है कोई ऐसी चीज नहीं है। धर्म को आप शास्त्रों से समझ सकते हैं । और अगर आपको उसका साकार रूप देखना है तो राम के चरित्र से देख सकते हैं । **रामो विग्रहवान् धर्मः ।** वे विग्रहवान् धर्म थे । आज ऐसी स्थिति है कि देश को लोग भौतिकता की ओर ले जा रहे हैं । भारत के लोग अन्धानुकरण कर रहे हैं । हमारे बालकों को धर्म की शिक्षा नहीं मिल रही है । मुसलमान अपने मदरसे में कुरान की शिक्षा दे देता है । ईसाई मिशनरी स्कूलों में बाइबिल के माध्यम से ईसाइयत की शिक्षा दे देता है लेकिन हम अपने लड़कों को गीता नहीं पढ़ा सकते, रामायण नहीं पढ़ा सकते।

इस पर पहली सरकारें तो कुछ कर ही नहीं रही थी । आज की सरकार भी हिचक रही है। बेहिचक हो करके उनको यह काम कर देना चाहिए । महात्माओं का यहाँ से आदेश जाएगा। भारत में गोहत्या सदा के लिए बन्द होना चाहिए । आप देखिये विकास की बात आप कह रहे हैं । इस समय हम लोग विकास में बैठे हैं। पण्डाल है, बिजली है, माइक लगा है, आसन बिछी हुई है । थोड़ी देर के बाद आप कहोगे कि हमको भूख

लगी है। भोजन आपको शुद्ध न मिले । आज कहाँ भोजन तुमको शुद्ध मिल रहा है ? कहाँ सब्जी शुद्ध मिल रही है? मनुष्य के जीवन के लिए जो अन्न और जल है उसको आपने दूषित कर रखा है । यह विकास किस काम में आएगा?

आपकी जो गंगा है और गंगा की सहायक नदियों की जो धार है उसको रोका जा रहा है । पहाड़ में सुराख करके उसमें सीमेण्ट के पाइप डाले जा रहे हैं । उन पाइप के भीतर से गंगा बहाई जा रही है । गंगा के जल में जो जड़ी-बूटियों का तत्त्व था वह समाप्त हो रहा है । पहाड़ खिसक रहे हैं । हमारे ज्योतिर्मठ के आगे जो हाथी पहाड़ था वह टूट रहा है क्योंकि उसमें ब्लास्ट किया गया है । इस तरह से आप देखिये बद्रीनाथ का रास्ता नहीं सुधर रहा है । क्या करोगे बिजली को लेकर जब आपके रहने की जगह नहीं मिलेगी। आपके झरने जो पहाड़ के हैं वे नीचे चले जाएँगे तब पानी क्या पिओगे ? इसी तरह से आगे आप देखिये पटना में जहाँ गंगा इतनी बड़ी हो गई है वहाँ के लोग पानी के लिए तरस रहे हैं । क्यों नहीं गंगा का जल पी लेते ? क्योंकि गंगा को लोगों ने प्रदूषित कर रखा है । हमारी गंगा, हमारी नदियाँ केवल गंगा ही नहीं, नर्मदा आदि भी रोकी जा रही हैं। कहा गया है कि **नदी वेगेन शुद्ध्यति ।** नदी वेग से शुद्ध होती है । अगर उसका प्रवाह रोक दिया जाए तो उसकी गुणवत्ता खत्म हो जाती है । इसलिए जो बार-बार बाँध बाँधकर फिर छोड़ते हैं, फिर बाँधते हैं उसका वेग रुकता है तो उसकी जो क्षमता है दोषों को दूर करने की वह खत्म होती है । हमको बताते हैं कि तुम अस्थि विसर्जन मत करो। गंगा शुद्ध हो जाएगी और कारखाने का पानी डालते रहो । सारे गाँव का, शहर का मल-मूत्र डालते रहो । अस्थि विसर्जन मत करो बस । वाह री ! शुद्धि की प्रकिया है क्या यह कोई ? जो हमारी गंगा है वह तारने के लिए पहले है फिर दूसरे काम के लिए है । तारने के लिए आई है गंगा । तुम्हें अगर सिंचाई करना है करो । आपके शरीर में अगर खून है तो वह खून निकालकर दूसरों के उपकार में लगा सकते हो । लेकिन इतना खून मत निकालो कि तुम ही मर जाओ । गंगा के जल को इतना कम मत कर दो, इतना प्रदूषित मत कर दो कि वह किसी काम की न रहे और मर ही जाए । इसी तरह से नर्मदा है, क्षिप्रा है दूसरी नदियाँ हैं। अगर आपके पास पानी नहीं रहा तो अन्न बचेगा कैसे ? हमारे आपके शरीर में ७० प्रतिशत पानी है । उस पानी को हमने दूषित कर रखा है ।

एक तो हमारा जीवन भी संकटापन्न है और फिर मन को भी आपने भौतिकवादी बना दिया है । आप समझिए भारत की संस्कृति थी कि पति-पत्नी एक साथ जीवन बिताते थे । आज जरा-जरा सी बात में अलग हो रहे हैं । भाई बहन का प्रेम खत्म कर दिया । हिन्दू कोड बिल बना दिया । हिन्दू उत्तराधिकार विधेयक बना दिया। आपने

निमर्मता से हिन्दुओं को तो मार दिया लेकिन दूसरों के सामने आप कुछ नहीं कर सके। आज लोग कहते हैं आबादी बढ़ाओ । छः छः लड़के पैदा करो । तुम छः करोगे वे चौबीस करेंगे। क्या इससे काम होगा ? जब तक संयम नहीं होगा । सब लोग मिलकर नहीं करेंगे आबादी कम नहीं होगी । यह सब बातें तब होंगी जब आपके जीवन का लक्ष्य बदलेगा। जब आप यह सोचेंगे कि पुत्र जो है वह हमको परलोक में सहायता देने के लिए है। विवाह की जो संस्था है यह क्यों है ? भोग तो कुत्ते कुतिया भी कर लेते हैं । विवाह इसलिए है कि हमारी संतान हमारे मरने के बाद हमारी विरासत की रक्षा करे । परलोक में हमारी सहायता करे ।

जीविते वाक्यकरणात् मरणे भूरिभोजनात् ।
गयायां पिण्डादानाच्च त्रिभिः पुत्रस्य पुत्रता ।।

जीवित रहने पर जो माता-पिता के वचनों का पालन करे, मरने के बाद भोजन कराए और गया में पिण्डदान करे इसी के लिए विवाह नाम की संस्था बनाई गई है । सब भौतिकवादी, केवल भोगवादी बना रहे हो। अदालतें तलाक के मामलों से भरी पड़ी हैं । लोगों के हृदय में यह भावना ही नहीं है कि क्या पाप है क्या पुण्य है ? यह सब चीजें दूर होना है । इसके लिए हमलोग यह चाहेंगे कि हमारा जो निवृत्तिमार्गी धर्म है वह अपनी निवृत्ति मार्ग में चलते हुए प्रवृत्तिमार्गियों को भी धीरे-धीरे निवृत्ति की ओर आकृष्ट करें और हमारा सनातन धर्म अक्षुण्ण रहे ।

राम जन्मभूमि में राम मन्दिर महात्मा लोग आगे होकर बनायें । कोई पार्टी का काम नहीं है । सब लोग मिलकर रामजन्मभूमि में राम मन्दिर बनावें और भव्य मन्दिर बनावें। इसी तरह से हमारी नदियों की अविरल धारा बहे । इस देश में हमारे बच्चों को धर्म की शिक्षा मिले । राम हमारे आदर्श रहें । कृष्ण हमारे आदर्श रहें। गीता एक ऐसी पुस्तक है जो हमको जीवन जीने का तरीका बताती है ।

एक दृष्टान्त बताकर हम अपनी बात खत्म करेंगे । एक किसान किसी कुँए में पानी भरने के लिए गया। उस समय उसमें गिन्नी नहीं थी । लकड़ी लगी हुई थी । उसमें पैर रखकर जब वह पानी खींच रहा था तो वह लकड़ी टूट गई और वह कुँए में गिर पड़ा। जब वह कुँए में गिर पड़ा तो क्या हुआ कि कोई वस्तु पकड़ने की मिल गई तो वह डूबने से बच गया। अब वह चिल्लाता है बचाओ, बचाओ, बचाओ । बेचारा चिल्ला रहा था कि इतने में एक बौद्ध भिक्षु वहाँ पहुँचे । उन्होंने पूछा कि भाई ! क्यों चिल्ला रहे हो ? उसने कहा कि हम कुँए में गिर पड़े हैं । हमको बचाओ । उसने कहा कि **सर्वं क्षणिकं सर्वं दुःखं**

सर्वं शून्यम् । यह चिन्तन करते रहो । निर्वाण पदवी प्राप्त हो जाएगी । निकलने की क्या जरूरत है ? वह वहाँ से चलता बना । एक मुँह में पट्टी बाँधकर आए । उन्होंने कहा कि क्या बात है ? क्यों चिल्लाते हो ? कहा कि कुँए में हम गिर पड़े हैं । हमको बचाओ । बोले कि जब बाहर निकलोगे तो जितने पैर रखोगे उतने ही जीव मरेंगे । जितनी श्वाँस लोगे उतने ही जीव मरेंगे। **अहिंसा परमो धर्मः ।** यहीं पड़े रहो । सन्थारा कर दो । तुम्हारा मोक्ष हो जाएगा । उसके बाद एक पादरी आए । उन्होंने कहा कि कैसे गिर पड़े ? बताया कि अब तो गिर ही पड़े हैं। बोले कि ठीक है हम तुमको निकाल देते हैं । रस्सी डालकर उसको निकाला । धन्यवाद देने लगा । बोले कि धन्यवाद की कोई बात नहीं । आपका यह जीवन ईसा मसीह का दिया हुआ है । अगर हम न यहाँ आए होते तो तुम डूब जाते। इसलिए चर्च में चलकर बपतिस्मा लो और शेष जीवन ईसा मसीह की शरण में बिताओ। उसने कहा भाई यह तो गड़बड़ है । गीता कहती है **स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।** अपने धर्म में मरना ठीक है परधर्म भयावह है । बोले कि आपको तो चर्च चलना ही पड़ेगा । यह जीवन हमने दिया है । उसने कहा इससे अच्छा तो कूद ही पड़ना है । फिर वह कूद पड़ा । फिर किसी तरह से पकड़कर बचा । इतने में चूड़ीदार पैजामा और शेरवानी पहने एक नेताजी आए । उन्होंने कहा कि क्या बात है क्यों चिल्ला रहे हो? उनको भी बताया सब । कहा कि जाली बहुत पुरानी थी । सड़ गई थी, टूट गई थी । बोला कि यह ग्राम पंचायत की बदइंतजामी है । कलेक्टर की नादानी है । मैं इसके खिलाफ सभा करूँगा। अखबारों में निकालूँगा । कहा हमें तो पहले निकालो। बोले कि तुम ही निकल जाओगे तो हमारा न्यूज क्या रह जाएगा ? अब नेताजी भी वहाँ से चले गए । इसके बाद एक सन्त वहाँ पहुँचा । सन्त ने देखा तो उसने रस्सी लाकर उसको बाहर निकाला। निकालने के बाद वह डरा हुआ किसान पूछता है कि महाराज ! तुम्हारा भी कोई धर्म है। बोले मेरा यही धर्म है कि कोई दुःखी हो तो उसके दुःख को दूर करना । अब तुम अपने घर जाओ और कोई सेवा हो तो बताओ । यह गीता है । निष्काम कर्मयोग। कर्म करो लेकिन फल की आकांक्षा मत करो । क्या है इसका मुकाबला दुनिया में ? इसका नाम सनातन धर्म है । बस इतना ही कहकर अपनी बात को यहीं विराम देते हैं। बहुत-बहुत आप सबको धन्यवाद ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो । प्राणियों में सद्भावना हो ।
विश्व का कल्याण हो । गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

[36]

राम राम छत्तीस

रामकथा है मानव-कल्याण का स्रोत

समुपस्थित विद्वद्वृन्द देवियो, सज्जनो !

हमलोग राम कथा के श्रवण के प्रसंग से यहाँ एकत्र हुए हैं । जीवन का वही क्षण सार्थक और बहुमूल्य माना जाता है जब मनुष्य सत्संग में बैठकर भगवद्कथा का श्रवण करता है । मानस में लिखा है –

धन्य घड़ी सोई जब सत्संगा ।

वह घड़ी धन्य है जब सत्संग होता है और यह भी कहा गया है -

तुलसी सनत समागम सम न लाभ कछु आन ।
बिनु हरि कृपा न मिलहिं सो गावहिं वेद पुरान ।।

तुलसीदास जी कहते हैं कि सन्त समागम को छोड़कर और कोई लाभ नहीं है और वह लाभ बिना भगवान् की कृपा के नहीं मिल सकता । वेद पुराण इस बात का कथन करते हैं । हमलोग सनातनधर्मी हैं । सनातनधर्मी ही हिन्दू कहलाता है । हिन्दू वह है जो वेद शास्त्रों को मानता है । जैसे जो कुरान हदीस को मानता है वह मुसलमान है, जो इंजील बाइबिल को मानता है वह ईसाई है उसी प्रकार जो वेद शास्त्रों को मानता है वही हिन्दू कहलाने का अधिकारी है । जो वेद शास्त्र नहीं मानता और अपने आपको हिन्दू कहता है वह नास्तिक हिन्दू कहलाने का अधिकारी नहीं होता है । सबसे बड़ी बात यह है कि जो वेद शास्त्र मानने वाला है उसका विश्वास सबसे पहले तो इस बात पर होता है कि इस जगत् का किसी ने निर्माण किया है । इसको कोई बनाने वाला है। यह अपने आप नहीं बन गया है ।

भूधर, सागर, गगन, पर्वत, सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र सब अपनी-अपनी राशि में घूम रहे हैं । कोई एक दूसरे से टकराता नहीं है । यह किसकी व्यवस्था है ? इसको किसने बना दिया ? एक उदाहरण आपके सामने रखते हैं ।

एक पिता था किसी बालक का । उस पिता के बालक को उसकी माँ ने भगवान् का

नाम जपना और ध्यान करना सिखा दिया। वह रोज उठकर भगवान् का ध्यान किया करता था। एक दिन उसके पिता ने बुलाया। पिता नास्तिक था। भगवान् को नहीं मानता था। उसने बेटे को पुकारा तो उसके आने में देर हो गई। पिता ने नाराज होकर पूछा कि तू क्या कर रहा था ? अभी तक क्यों नहीं आया ? बोला कि ध्यान कर रहा था। पिता ने पूछा किसका ध्यान कर रहा था। उसने कहा भगवान् का ध्यान कर रहा था। पिता ने कहा कि तेरी माँ ने उल्टा सिखा दिया। भगवान् नाम की कोई चीज नहीं है। पिताजी यदि भगवान् नहीं है तो यह संसार किसने बना दिया। उसने कहा कि नेचर ने बना दिया। पाँच चीजें पृथ्वी, जल, आकाश, वायु, अग्नि इनके परमाणु आपस में मिल गए अपने आप तो यह संसार बन गया। इसमें ईश्वर का क्या काम ? बेटे ने सोचा कि पिताजी से शास्त्रार्थ करना ठीक नहीं है। वह उस समय चुप रह गया। उसने चित्रकला सीखी थी। एक बहुत ही सुन्दर चित्र उसने बनाया और उसमें सब रंग भरकर जहाँ जैसा आवश्यक था वैसा ही चित्र बनाकर रख दिया सामने अपने पिता की टेबल में। पिता ने देखा कि बहुत बढ़िया चित्र था। बेटे को बुलाया पूछा कि बैटा यह चित्र किसने बनाया? उसने कहा कि पिताजी नेचर ने बना दिया। रंग रखे थे। हवा आई और रंग के परमाणु उड़कर अपने आप लग गए उसमें तो यह चित्र बन गया। उसने कहा कि ऐसा कैसे हो सकता है कि जहाँ जैसा रंग आवश्यक है वहाँ वैसा ही रंग बना दे। देखने में भी कोई गड़बड़ी नहीं है। यह किसी योग्य कलाकार ने ही बनाया है। मैं जानना चाहता हूँ कि वह कलाकार कौन है ? बेटे ने कहा कि पिताजी जब एक चित्र बिना कलाकार के नहीं बन सकता तो यह संसार बिना परमात्मा के बन सकता है क्या ? इसको बनाने वाला जरूर कोई है। अब जब इसको बनाने वाला कोई है तो उसने चौरासी लाख योनि बनाई और उन चौरासी लाख योनियों में मनुष्य बनाया। आप देखिये इस मनुष्य शरीर की कारीगरी। कैसी इसमें व्यवस्था है कि एक भी पुर्जा निकाल दिया जाए तो यह बेकार हो जाता है। कुछ नहीं तो यह सोचिये कि आप पानी पी रहे हैं, दूध पी रहे हैं, चाय पी रहे हैं। अगर वह घूँट आहार की नली को छोड़कर श्वाँस की नली में चला जाए तो एकदम से ठस लगेगी। वहाँ पहरा बैठा रखा है परमात्मा ने कि इस जगह पानी नहीं जाना चाहिए। अगर वह ठस न आती तो श्वाँस की नली में पानी चला जाता और आदमी मर जाता। यह सारी कारीगरी परमात्मा ने हमारे शरीर में की है। हमलोग परमात्मा को स्वीकार करते हैं। इस जगत् का रचयिता, इसका कर्ता-धर्ता, इसका पालनहार इसका सर्जनहार कोई है और वह परमात्मा के नाम से कहा जाता है। उसी को हम जगदम्बा के नाम से भी कहते हैं, ब्रह्म भी कहते हैं, भगवान् भी कहते हैं, भगवती भी कहते हैं।

भगवान् ने सोचा कि सृष्टि के निर्माण और संचालन के लिये किसी को ज्ञान दिया जाए वह ज्ञान परमात्मा ने सबसे पहले मनुष्यों को दिया। वेदों के द्वारा। श्रीमद्भागवत में जो मंगलाचरण का श्लोक है उसमें लिखा है – **तेने ब्रह्म हृदाय आदि कवये।** जिस परमात्मा ने आदि कवि ब्रह्मा के हृदय में वेदों का विस्तार किया। ब्रह्मा जी के हृदय में वेद मन्त्र प्रकट हुए। उन वेद मन्त्रों के द्वारा यह समझा गया कि इस संसार का कोई रचयिता है। वेदों में यह लिखा है– **यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते।**

जिस परमात्मा से यह संसार उत्पन्न होता है, जिसके द्वारा स्थिर रहता है और अन्त में जिसमें विलीन हो जाता है तद् ब्रह्म। वह परमात्मा वह ब्रह्म है और उस ब्रह्म को जानने के साधन के रूप में परमात्मा ने उन्हीं वेदों के द्वारा धर्म का उपदेश दिया। धर्म का उपदेश देकर परमात्मा ने जीव को परलोक में सुख का साधन बता दिया। सबसे बड़ी बात यह है कि हमलोग सनातनधर्मी हैं। हमलोग यह मानते हैं कि शरीर की उत्पत्ति के पहले भी हम थे और जब शरीर नहीं रहेगा तब भी हम रहेंगे। जब शरीर नहीं रहेगा तो हम क्या खायेंगे? कहाँ जायेंगे? हमारा वहाँ पर कौन रहेगा ? कहाँ हम रहेंगे ? इसका कोई प्रबन्ध है ? जब हम नर्मदा में स्नान करने के लिए जाते हैं संक्रान्ति के मौके पर तो कलेवा रख लेते हैं। माताएँ लड्डू बनाकर रख देती हैं कि भूख लगे तो खा लेना। जब इतनी दूर जाने के लिए इन्तजाम करते हो तो मरने के बाद के लिए कौन सा इन्तजाम किया आपने ? कहा भाई हम मोबाइल से बोल देंगे बेटों से। ये मोबाइल वहाँ जाएगा क्या ? इतने पूर्वज हमारे आपके मर गए किसी का तार आया ? किसी का मोबाइल से सन्देश आया क्या कि हम कहाँ है ? कोई पता नहीं है। उस जगह आप जब जाएँगे तो आपके साथ आपके नोट नहीं जाएँगे। आपका जो नोट है यह तो पाकिस्तान में भी नहीं चलेगा तो परलोक में क्या चलेगा ? वहाँ क्या चलेगा ? वहाँ चलेगा धर्म। जो अपने-अपने जीवन में अच्छे कर्म किए हैं वह आपके साथ जाएगा। जो आप श्रीमद्भागवत से रामायण की कथा सुन रहे हैं। सत्संग कर रहे हैं यह पुण्य बनकर आपके साथ जाएगा। यही वहाँ आपको सुख प्रदान करेगा।

हमलोग परलोक को मानने वाले हैं और इसीलिए भी परलोक को मानते हैं क्योंकि मनुष्य जो कर्म करता है उस कर्म का फल इस जीवन में पूरा नहीं भोग पाते हम। अभी हमलोगों ने आज सुना ब्रह्माकुमारियों ने कहा कि मनुष्य के कर्मों का फल इसी जीवन में मिल जाता है। आप बताइए कि आप कोई कर्म करते हैं किसी की हत्या करते हैं तो आपको आजीवन कारावास की सजा होती है। हत्या तो एक मिनट में हो गई और भोगना पड़ा जीवन भर। ठीक है ? इतने कर्म आपने किए हैं इसी जन्म में उन सबका भोग कैसे

हो सकेगा ? आप जो पुण्य कर रहे हैं । हमलोग यह देखते हैं कि कभी-कभी धर्मात्मा लोग भी दुःख पाते हैं । पाण्डवों ने दुःख पाया । वे भगवान् श्रीकृष्ण के परम भक्त थे लेकिन उनको भी वनवास का दुःख भोगना पड़ा । कहना होगा कि मनुष्य को अपने जीवन के पहले जो उसने कर्म किए हैं इस जन्म में उनका फल मिल रहा है । और यहाँ जो वह कर्म कर रहा है उसका फल मरने के बाद वह जहाँ जाएगा वहाँ उसको मिलेगा । कुछ कर्म ऐसे होते हैं जो अति उत्कट होने के कारण यहीं उनका फल मिल जाता है । कहते हैं तीन वर्ष, तीन मास, तीन पक्ष, तीन दिन में अति उत्कट पुण्य पाप करने का फल यहीं मिल जाता है । धर्म जो है यह बतलाता है कि परलोक है और परलोक में आप जो अच्छे कर्म कर रहे हैं यदि यहाँ आपको सुख नहीं मिला तो वह आपका पुण्य बेकार नहीं जाएगा। परलोक में आपका साथ देगा । वहाँ आपको सुख मिलेगा । यह बात जो है हमारे वेद शास्त्रों में बतलाई गई है । लेकिन वेद शास्त्रों में जो बात बतलाई गई है वह शब्द रूप में है । शब्द रूप में है इसलिए निराकार है । परमात्मा ने यह सोचा कि यह जो धर्म है जो मनुष्य को परलोक में सहायता देता है परमात्मा का ज्ञान कराता है, उस धर्म को ऐसा कुछ बनाकर दिया जाए कि लोग उसको देख सकें, समझ सकें । उस परमात्मा ने कहा है–

वेदवेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।
वेदप्राचेतसादासीत् साक्षाद् रामायणात्मना ।।

वेदवेद्य परम पुरुष ने अवतार लिया । परब्रह्म परमात्मा ने राम के रूप में जब अवतार लिया तो यह वेदवेद्य हैं ये राम । राम हों, कृष्ण हों, भगवती हों, वेदों के द्वारा जाने जाते हैं ।

वेदैश्च सर्वैरहमेववेद्यः समस्त वेदों के द्वारा परमात्मा वेद्य होता है । परमात्मा ने राम के रूप में जब अवतार लिया तो वेद ने भी रामायण के रूप में अवतार लिया । वाल्मीकि रामायण के द्वारा वेद ने रामायण के रूप में अवतार धारण किया । और वहाँ राम को जो पवित्र चरित्र दिखलाया उन्होंने इससे समझ में आ गया कि धर्म क्या चीज है ? इसीलिए राम को साक्षात् धर्म माना गया है । मूर्तिमान् धर्म माना गया। जब रावण मारीच के पास पहुँचा और उससे कहा कि मारीच तुम कंचन मृग बनो, कंचन मृग बनकर राम को कुटिया से दूर ले जाओ तो समय पाकर हम सीता का हरण करेंगे । मारीच कहता है अरे ! रावण !

रामो विग्रहवान् धर्मः साधुः सत्यपराक्रमः ।

राजा सर्वस्य लोकस्य देवानां मघवानिव ।।

अरे रावण ! राम साक्षात् मूर्तिमान् धर्म है । साधु है । सत्य पराक्रम है और जैसे देवताओं का राजा इन्द्र है वैसे अनन्त ब्रह्माण्ड का स्वामी राम है । उसकी जो नारी सीता है वह जैसे सूर्य की प्रभा सूर्य से अलग नहीं हो सकती उसी तरह से राम से सीता अलग नहीं हो सकती है । तुम कहाँ उनको ले जा रहे हो ? लेकिन रावण न समझ पाया ।

जो आसुरी सम्पत् के लोग होते हैं वे खुद को ही ईश्वर मानते हैं । **ईश्वरोहं भोगी सिद्धोहं बलवान् सुखी।** वे लोग धर्माधर्म का विचार नहीं करते । जो मन में आता है वह करने के लिए तैयार रहते हैं । रावण न माना। सीता जी का हरण करने के लिए कंचन मृग मारीच को बनने के लिए बाध्य किया । सीता जी का हरण हुआ । परिणाम क्या हुआ ? यह माना जाता है कि भगवान् राम धर्म हैं और सीता नीति है । राजनीति ही धर्म के साथ रहती है । अगर धर्म न हो तो नीति काम नहीं करती है । नीति को हटा लिया जाए तो जैसे केवल कोई नीति को पकड़े और धर्म को छोड़ दे तो उसकी दशा सूर्पणखा जैसी होती है । जैसे सूर्पणखा ने राम को पकड़ा । राम धर्म हैं । धर्म को पकड़ा लेकिन नीति सीता को खा जाना चाहा । बिना नीति के धर्म काम नहीं करता । और बिना धर्म के नीति चल नहीं सकती । इसीलिए धर्म के ऊपर नीति होना चाहिए । नीति और धर्म का जोड़ा है ।

लोग कहते हैं कि हम धर्मनिरपेक्ष हैं । तो धर्मनिरपेक्ष क्यों रोटी निरपेक्ष हो जाओ। कपड़ा निरपेक्ष हो जाओ । यह नहीं चलेगा । धर्मनिरपेक्ष रहकर मनुष्य मनुष्य ही नहीं रह जाएगा । मनुष्य और पशु में यही अन्तर है कि मनुष्य धर्म को मानता है और पशु धर्म को नहीं मानता है । पशु कहीं भी लघुशंका कर देता है, कहीं पर गोबर कर देता है, कहीं भी सन्तान पैदा कर लेता है लेकिन मनुष्य सोचता है कि क्या करना चाहिए। शास्त्र किसको कर्तव्य कहता है और किसको अकर्तव्य । शास्त्र के अनुसार जो चलता है वही मनुष्य है । मानवता की बात अगर कोई करता है उससे पूछना चाहिए कि मानवता क्या है यदि धर्म को हटा दिया जाए तो मानवता और पशुता में कोई अन्तर नहीं रह जाएगा । इसीलिए धर्म को मानना यह बहुत आवश्यक है । धर्म का ज्ञान कहाँ से होता है? आजकल लोग मनमाना धर्म कर रहे हैं । अब आप सोचिए कि शिरडी के साई बाबा की मूर्ति की प्रतिष्ठा हो रही है । तुम्हारे नरसिंहपुर में ही हो रही है । तुम्हारे तैंतीस कोटि देवता खत्म हो गए क्या ? हनुमान जी नहीं रहे क्या ? यह बताओ कि तुमने इन सबको छोड़कर उसको क्यों पकड़ा ? या तो वह अवतार है या गुरु है । अवतार होता तो किसी

पुराण में लिखा होता कि म्लेच्छ कुल में भगवान् का अवतार होने वाला है कलियुग में शिरडी में। पर यह तो कहीं लिखा नहीं है। अगर वह गुरु होता तो मांसाहारी न होता। मांस का पुलाव न खाता। न तो वह भगवाान् है न गुरु है। तुम सोचते हो कि उसकी पूजा करने से हमारा मनोरथ सिद्ध हो जाएगा। एक निर्मल बाबा हैं। वह कहता है कि तुम समोसा खा लो तो तुम्हारा काम बन जाएगा। रसगुल्ला खा लो। पकौड़ी खा लो। अब आप कहते हैं कि अगर वह कहता है कि तुम मेरे पास आओ तो कृपा हो जाएगी भगवान् की। हम तुम्हारे पास नहीं आएँगे तो क्या कृपा नहीं आएगी। भगवान् यदि कृपा करते हैं तो तुम्हारे पास आने की क्या जरूरत ? तुम्हारे पास आने पर कृपा हुई इसका मतलब यह हुआ कि हमने अपने ऊपर कृपा किया जो उस पर विश्वास किया।

हमलोग यह दृष्टान्त दिया करते हैं कि एक आदमी जंगल में घूमते-घूमते किसी पेड़ की छाया में बैठा। छायादार वृक्ष था। उसको भूख लगी सोचा कि अगर भोजन मिल जाता तो अच्छा था। भोजन मिल गया। उसके बाद भोजन करके सोचा कि अगर बिस्तर मिल जाए तो अच्छा। बिस्तर भी मिल गया। लेट गया सोचा कि कोई पैर दबा देता तो अच्छा। अब पैर दबाने वाला भी मिल गया। नींद लग गई। उठा तो देखा कि अँधेरा हो चुका था। सोचा कि कहीं शेर न आ जाए तो वहाँ शेर आ गया। और जब सोचा कि खा न ले तो खा भी लिया। यह क्यों हो गया ? बात यह थी कि वह कल्पवृक्ष था। कल्पवृक्ष के नीचे जो कल्पना की जाती है वह पूरी हो जाती है। जो-जो कल्पना वह करता गया वह वह पूरी होती गई। इसी तरह से हमारा जो आत्मा है वह कल्पवृक्ष है। जहाँ हम विश्वास कर लेते हैं वह विश्वास हमारा काम करता है। वह सामने वाला नहीं करता। वह तो बेवकूफ बना रहा है। अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहा है। अपने आत्मा को दृढ़ बनाओ शुद्ध बनाओ। उसको शक्तिशाली बनाओ तो तुम्हारे सब काम बन जाएँगे और यह भी नियम है कि मनुष्य जो चाहता है वह बात हमेशा पूरी नहीं होती। जिनकी पूरी नहीं होती वे तो बेचारे कहने आते नहीं है और जिनकी पूरी हो जाती है वे चैनल में आकर बतलाते हैं। ऐसे अन्धविश्वास में नहीं पड़ना चाहिए। अन्धविश्वास और प्रामाणिक विश्वास। जो प्रामाणिक विश्वास है जिसका आधार कोई शास्त्र वचन है वह हमको मानना चाहिए और जिसका कोई आधार न हो, मनमानी कोई बतलाता हो उसको स्वीकार नहीं करना चाहिए। गीता में लिखा है –

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।

बन्धुओं ! शास्त्र की विधि माननी चाहिए । राम कथा ऐसा पवित्र काम है कि इस कथा के द्वारा सबका कल्याण होता है । जो वक्ता है, जो कथा सुनाता है उसका कल्याण होता है और जो करवाता है यजमान उनका कल्याण होता है और जो सुनते हैं उनका कल्याण होता है । भागवत में एक श्लोक है –

वासुदेवकथाप्रश्नः पुरुषांस्त्रीन् पुनाति हि ।
वक्तारं पृच्छकं श्रोतृंस्तत्पादसलिलं यथा ।।

भगवान् वासुदेव की कथा के सम्बन्ध में जो प्रश्न है उससे तीन पुरुष पवित्र होते हैं। एक तो कथा सुनाने वाला पवित्र होता है । उसका मन और वाणी पवित्र होते हैं । जो सुनते हैं उनके कान पवित्र होते हैं और जो कराते हैं वे पवित्र होते हैं । जैसे भगवती भागीरथी गंगा। सगर के जो साठ हजार पुत्र थे वह ब्राह्मण के शाप से भस्म हो गए थे। ब्राह्मण के शाप से जो भस्म होता है उसको नरक की प्राप्ति होती है । उनके उद्धार के लिए राजा भगीरथ गंगा लाए । राजा भगीरथ जिनके लिए लाए उनका तो कल्याण हुआ ही साथ ही साथ भगीरथ का भी कल्याण हुआ । आज तक गंगा को जो जानता है वह भगीरथ को भी जानता है । सगर के जो पुत्र थे वे पवित्र हुए और जो गंगा में स्नान करते हैं वे पवित्र हो रहे हैं । **तत्पादसलिलं यथा ।**

प्रसंग से आपको हम बताना चाहेंगे कि वह गंगा जो सगर के पुत्रों के उद्धार के लिए आई थी जो आज तक हमारे पुरखों को पवित्र की । हमें पवित्र कर रही है आज उस गंगा में बाँध बँध रहे हैं । उस गंगा में शहरों का गन्दा पानी डाला जा रहा है और उसमें चमड़े को पकाने के लिए जो एसिड डाले जाते हैं तेजाब डाला जाता है वह भी जा रहा है और यही हाल सब नदियों का हो रहा है । नर्मदा में नये-नये बाँध बनाने की तैयारी फिर हो रही है । हमलोग कहते हैं गंगा में, नर्मदा में बाँध मत बाँधो । वे भगवती सबका कल्याण करने वाली है । उत्तराखण्ड में लोगों ने बाँध बाँधे गंगा में और किसानों ने जमीन बेच दी । रुपया मिल गया उनको और रुपया लेकर उन्होंने अपनी जमीन बेचकर होटल बना दिया । गंगा के किनारे । इससे हम पेट भरेंगे । और इस बार ऐसी गंगा की बाढ़ आई कि सारी होटलें खत्म हो गईं । जमीन भी गई। होटल भी नहीं रही । इसी तरह चिरचिटा में बन रहा है । इसका घोर विरोध हो रहा है । अब नर्मदा में बाँध बाँधने की कोई आवश्यकता नहीं । चिनकी में। तैंतालीस गाँवों की जमीन चली जाएगी गवर्नमेण्ट के पास। उस तरह की जमीन देने को है नहीं तो अपनी जमीन बेचकर होटल बनाओगे और तुम दोनों चीजों से जाओगे । इसीलिए ऐसा काम मत करो जिससे कि अपना धर्म भी जाए

और अपना स्वार्थ भी खत्म हो। किसी भी नदी में अब ज्यादा बाँध बाँधने की जरूरत नहीं है । नदी को शुद्ध रखना चाहिए । आज हालत यह है कि आपको पानी खरीद कर पीना पड़ रहा है । साठ रुपया में एक बोतल मिलती है पीने के लिए । आप अपने नदियों का पानी नहीं पी सकते क्योंकि उसके किनारे के कुएँ का पानी भी नदी के पानी के कारण दूषित हो गया है । तालाब दूषित हो गए हैं ।

आपके पास पीने को पानी नहीं है और खाने को अनाज नहीं है । जो आप अनाज खा रहे हैं वह रासायनिक खाद का परिणाम है । यूरिया से पैदा हो रहा है । गाय के गोबर की खाद से नहीं हो रहा है । वह आप जहर खा रहे हो । आपकी साग-सब्जियों में इंजेक्शन लग रहा है । केमिकल डालकर पकाया जा रहा है । उनमें मिलावट हो रही है । उनमें पाउडर पड़ रहा है । इसी तरह से मिर्च-मसाले में घोड़े की लीद मिलाई जा रही है । दूध और मिठाई भी शुद्ध नहीं है । क्या खाओगे ? क्या विकास कर रहे हो? विकास आपका होगा कैसे ? आपको बढ़िया मकान मिल गया । उसमें बहुत सुन्दर पलंग एयरकंडीशनर लग गया लेकिन खाने को दूषित द्रव्य है तो आपका विकास किस काम का ? इसीलिए यह भौतिक सुख की ओर से हटकर आध्यात्मिक सुख की ओर जाना चाहिए। उसके लिए राम कथा है । राम कथा क्यों चली ? आप तुलसीदास जी के पास आइए । तुलसीदास जी के सामने एक समस्या आ गई । कुछ लोग कहने लगे कि राम कोई और हैं । जो राम दशरथ का बेटा है वह राम राम नहीं है । राम कोई और ही है। उस समय लोग कहने लगे थे कि –

एक राम दशरथ का बेटा, एक राम सब घट पर बैठा ।
एक राम का सकल पसारा, एक राम सब जग से न्यारा ।।

वह राम कौन हैं ? राम को मनुष्य मानने वाले खड़े हो गए थे । वे यह कह रहे थे कि राम परमात्मा नहीं है । राम मनुष्य हैं । इस बात से क्या हुआ ? राम को मनुष्य मानने के कारण रामभक्ति समाप्त हो गई । भक्ति मार्ग लुप्त हो गया और जब भक्ति मार्ग लुप्त हो गया तो मनुष्य के चित्त की शुद्धि का कोई कारण नहीं बचा। राम ने जो पवित्र चरित्र किए थे उसमें प्रश्न खड़े हो गए इसीलिए तुलसीदास जी ने रामचरितमानस की रचना की। रामचरितमानस की उपमा एक सरोवर से दी गई है । राम चरित मानस । मानस माने मानसरोवर । सरोवर माने तालाब । यह एक ऐसा तालाब है जिसके चार घाट हैं ।

सुठि सुन्दर संवाद पर विरचे बुद्धि विचार ।
तेहि यह पावन सुमग सर घाट मनोहर चार ।।

कहते हैं इसमें जो चार संवाद हमने विचार करके रखे हैं यह रामचरितमानसरूपी सरोवर के मनोहर घाट हैं। एक घाट है याज्ञवल्क्य-भरत संवाद, दूसरा घाट है शिव-पार्वती संवाद, तीसरा घाट है कागभुशुण्डी व गरुड़ का संवाद और चौथा संवाद है तुलसीदास और भक्तों का संवाद। एक है कर्मकाण्ड का घाट, दूसरा उपासनाकाण्ड का घाट, तीसरा है ज्ञानकाण्ड का घाट और चौथा है भगवद् भक्तों का घाट। इनमें आप देखेंगे कि सबके सामने यही प्रश्न है। मानस में प्रारम्भ में कहा गया है कि -

माघ मकर गति रवि जब होई। तीरथपतिहिं आव सब कोई ।।

देव दनुज किन्नर नर श्रेणी । सादर मज्जहिं सकल त्रिवेणी ।।

तहाँ होई मुनि विषय समाजा ।

माघ मास में जब सूर्य मकर राशि में आते हैं तो सब तीर्थराज प्रयाग में जाते हैं। देव दानव किन्नर नर सब मज्जन करते हैं। त्रिवेणी में स्नान करते हैं और कुछ लोग नियम से वहाँ पर निवास करते हैं, कल्पवास करते हैं। वहाँ पर सत्संग होता है बैठकर। जब महात्माओं का सम्मेलन होता है तो हरि चर्चा होती है और जब दुष्टों का सम्मिलन होता है व्यर्थ चर्चा होती है। पहले हमलोग निकलते थे गाँवों में तो रात के समय दो चार जगह रामायण होती थी। अब गाँवों में सिवाय राजनीति के, सिवाय पार्टीबन्दी के कोई चर्चा ही नहीं है। रामायण अब नहीं है। अब दुनिया भर की फालतू बातें हैं। निन्दा-स्तुति में लोग पड़े हैं। जो सज्जनों का सम्मिलन होता है तो भगवद्-चर्चा होती है।

याज्ञवल्क्य मुनि परम विवेकी । भरद्वाज राखे पद टेकी ।

भरद्वाज जी ने याज्ञवल्क्य जी के चरण पकड़कर रोका और उनसे पूछा कि महाराज! **राम कवन पूछौ प्रभु तोही ।** राम कौन हैं ? आप दशरथ के पुत्र को राम मानते हैं कि कोई राम दूसरा है ? जिसका भगवान् शंकर आराधन करते हैं। याज्ञवल्क्य जी ने समझाया और समझाया कैसे ? तर्क-वितर्क करके नहीं समझाया अपितु रामचरित ही सुना दिया। राम कथा सुनने से स्वयं ही राम के प्रति विश्वास हो गया राम के वैभव का। राम की महत्ता का ज्ञान श्रोता को हो जाता है। दूसरा संवाद है शिव-पार्वती का संवाद। इसकी कथा आती है कि रावण जब सीता जी का हरण करके ले गया तो उस समय भगवान् रामचन्द्र जी ने एक नाटक रचा। सीता जी के वियोग में व्याकुल होकर राम भटकने लगे। जगह-जगह घूमने लगे। कहते हैं –

हे खग मृग हे मधुकर श्रेणी । तुम देखी सीता मृगनयनी ।

हे खग मृग ! हे मधुकरों की श्रेणी ! तुमने मृगनयनी सीता को देखा है ? हा सीते! हा सीते ! क्यों भगवान् ने किया ? क्या भगवान् ने सीता जी के विरह का अनुभव किया था ? अरे ! यह तो उनकी लीला थी । रावण सीता का हरण करने के लिए आए उसके पहले ही लक्ष्मण जी जब कन्दमूल फल लेने के लिए गए थे तब भगवान् राम ने कहा था–

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुशीला । मैं कछु करब ललित नर लीला ।।

तुम पावक महँ करहु निवासा । जब लग करहुं निशाचर नासा ।।

मैं एक लीला करने वाला हूँ । जब तक मैं राक्षसों का नाश न कर लूँ तब तक तुम अग्नि में रहो । सीता जी ने भगवान् की आज्ञा का पालन करके अपनी छाया भगवान् के पास छोड़ी और स्वयं अग्नि में विराजमान हो गईं । **लक्ष्मणहू यह मरम न जाना ।** लक्ष्मण जी को भी इसका पता नहीं चला । **जो कुछ चरित रचा भगवाना।**

अब आप सोचिये कि भगवान् को तो पता ही था कि सीता जी अग्नि में हैं । उनका हरण हुआ ही नहीं है फिर क्यों रोए ? भगवान् के रोने का कारण गोस्वामी तुलसीदास जी ने बताया कि कामी कैसा दीन हो जाता है और दूसरे जो वहाँ के ऋषि-मुनि थे सीता और राम के दाम्पत्य सुख को देखकर जो विरक्त हो गए थे उनके मन में भी इस बात का कुछ पश्चात्ताप होने लगा था कि हमारी भी गृहस्थी होती तो हम भी आनन्द करते । यह व्यर्थ न हो जाए इसलिए भगवान् ने रोकर बताया कि तुम्हारी भी होती तो राक्षस ले जाते और तुम रोते ।

यह उनकी लीला का उद्देश्य था और गोस्वामी जी कहते हैं कि –

कबहु जोग वियोग न जाके । देखा प्रकट विरह दुख ताके ।

जिस परमात्मा में कभी योग वियोग नहीं है सीता और राम दोनों सर्वथा अभिन्न हैं। जैसे राधा और कृष्ण अभिन्न हैं ।

एक स्वरूप सदा द्वय नाम ।
आनन्द की आह्लादिनि श्यामा आह्लादिनि के आनन्द श्याम ।।

स्वरूप एक हैं और नाम दो हैं । आनन्द की आह्लादिनी शक्ति राधा है और राधा का जो आनन्द है वह श्याम है । ऐसे ही जो भगवान् राम की आह्लादिनी शक्ति है वह सीता है और उसके आनन्द राम हैं । जैसे गंगा की शीतलता और पवित्रता गंगा से पृथक् नहीं हो सकती उसी प्रकार से सीता और राम का वियोग नहीं हो सकता। यह तुलसीदास

जी बतलाते हैं कि **कबहुँ योग वियोग न जाके ।** अरे जब योग नहीं तो वियोग कहाँ ? योग वियोग की लीला है । भगवान् ने यह लीला की । वे सीता जी को खोजते हुए वन-वन भटक रहे थे । इसी बीच में सती जी के साथ भगवान् शंकर अगस्त्य मुनि के आश्रम में गए । कुछ काल सत्संग किया तो भगवान् शंकर ने तो एकाग्र मन से कथा सुनी । और जैसे कुछ महिलाएँ अभी इधर-उधर हो रही हैं ऐसे ही सती जी ने भी कथा में पूरा ध्यान नहीं दिया । ध्यान देती तो उनको शंका न होती । जब उन्होंने लौटते समय देखा कि भगवान् राम हा सीते कह रहे हैं तो शंकर जी तो समझ गए कि उनकी लीला है । यह वास्तव में नहीं है । भगवान् कभी विरही नहीं हो सकते । उन्होंने जय सच्चिदानन्द कहकर राम जी को प्रणाम कर लिया लेकिन सती ने उसको सत्य माना और सत्य मानकर कहा कि यह हो नहीं सकता । राम को प्रणाम किया हमारे पति देव ने तो क्या समझकर किया? ब्रह्म समझकर किया कि विष्णु समझकर किया ? ये ब्रह्म तो हो नहीं सकते ।

ब्रह्म जो व्यापक विरज अज अकथ अनीह अभेद ।
सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत वेद ।।

जो अकल अनीह अभेद है वह ब्रह्म मनुष्य बनकर कैसे रह सकता है ? मनुष्य कैसे बन सकता है ? शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध से रहित है । जो अशब्द, अस्पर्श, अरूप, अरस और अगन्ध है वह मनुष्य कैसे बन सकता है ? ब्रह्म तो राम हो नहीं सकता । यदि यह कहा जाए कि विष्णु के अवतार हैं तो विष्णु भी सर्वज्ञ हैं । इसलिए उनको पता होना चाहिए कि सीता कहाँ है । फिर क्यों खोज रहे हैं । भगवान् शंकर से पूछा कि यह तो हमको भगवान् नहीं मालूम पड़ते । आपने कैसे प्रणाम कर लिया ? कहा कि यह लीला है उनकी। बोली नहीं कुछ गड़गड़ है । जाओ परीक्षा ले लो कहकर भगवान् शंकर वट वृक्ष के नीचे बैठ गए। **वटविश्वास** । विश्वासरूपी वट के भीतर भगवान् शंकर बैठ गए और सती तर्क-वितर्क में पड़ गईं । वह पहुँची वहाँ जहाँ भगवान् घूम रहे थे । सोचा कि सीता के विरह में व्याकुल हैं । हम सीता बन जाएँ तो दौड़कर हमारे पास लिपट जायेंगे । हम समझ जायेंगे कि यह मनुष्य हैं । सती जी सीता बनकर भगवान् राम के सामने खड़ी हो गईं । भगवान् राम ने क्या किया ? जैसे ही उनको देखा हाथ जोड़कर खड़े हो गए और बोले कि माता ! मैं दशरथ का पुत्र राम आपको प्रणाम कर रहा हूँ । बताइए इस समय वृषकेतु भगवान् शंकर कहाँ हैं? आप जंगल में अकेली क्यों घूम रही हैं? अब उनको काटो तो खून नहीं । वे समझीं थीं कि ये हमको ही सीता मान लेंगे । भगवान् के माहात्म्य को उन्होंने सुना परन्तु भगवान् शंकर ने यह देखा कि सीता हमारी माता हैं और यह लीला

को सत्य मान रही है । इन्होंने सत्य मान लिया अपने को इसलिए अब इनका पत्नी के रूप में स्वीकार किया जाना भक्ति के विरुद्ध होगा ।

शिव संकल्प कीन्ह मन मांहीं । एहि तन सती भेंट अब नाही ।।

सती को वह जीवन छोड़ना पड़ा । शरीर छोड़ना पड़ा । इसकी कथा आपलोग जानते ही होंगे । सती ने देहत्याग किया । हिमालय ने तपस्या करके उनको ही बेटी के रूप में चाहा तो उनकी पुत्री के रूप में उन्होंने अवतार लिया । पर्वत की पुत्री होने के कारण पार्वती बनीं। उमा उनका नाम हुआ । काली उनका नाम हुआ । भगवती पार्वती का विवाह भगवान् शंकर से हुआ । शंकर जी से उन्होंने पूछा कि महाराज ! राम कौन हैं ? भगवान् शंकर ने कहा कि यह परमात्मा हैं । परब्रह्म परमात्मा हैं । सबके हृदय के साक्षी हैं । भगवान् श्रीराम के स्वरूप के सम्बन्ध में भगवान् शंकर ने बतलाया –

विषय करण सुर जीव समेता । सकल एक सन एक सचेता ।।

सब कर परम प्रकाशक जोई । राम अनादि अवधपति सोई ।।

विषय है शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध । करण है इन सबको जानने का साधन । स्पर्श को जानने का करण स्पर्शेन्द्रिय । रूप को जानने का करण आँख । रस को जानने का करण जिह्वा । गन्ध को जानने का करण नासिका । शब्द को जानने का साधन कान। इन्द्रियाँ विषयों को प्रकाशित करती हैं लेकिन इन्द्रियों को अपने विषय का प्रकाश करने के लिए अपने अधिष्ठातृ देवता की आवश्यकता पड़ती है । जैसे हमारी आँख भी हो और रूप भी हो । अँधेरा हो । प्रकाश न हो तो आँख नहीं देख सकती । यह सुर । आँख के देवता सूर्य, कान के दिशा। नाक के अश्विनी कुमार । त्वक् के वायु और जिह्वा के वरुण । ऐसे ही प्रत्येक इन्द्रिय का एक अधिष्ठातृ देवता होता है जो उस इन्द्रिय को अपने विषय को जानने की शक्ति देता है । विषय का प्रकाशक इन्द्रियाँ, इन्द्रियों के प्रकाशक हो गए देवता और उनका प्रकाशक हो गया मैं । अगर मैं रहेगा तो सब रहेगा । जब गाढ़ी नींद में आप सो जाएँ तो यह का भी पता नहीं । मैं जीव है । यह जीव इन विषयों, इन्द्रियों और देवताओं का प्रकाशक है। लेकिन मैं का जो प्रकाशक है । आप देखिए मैं सूर्य के प्रकाश से आँखों से रूप देख रहा हूँ । मैं से लेकर रूप तक को कौन जान रहा है ? जो सबको जानने वाला है **सबकर परम प्रकाशक जोई** जो सबका परम प्रकाशक है जिसका कोई प्रकाशक न हो । राम अनादि हैं । वह अनादि ही राम है । वह राम ही अपनी योगमाया से अवधपति हो गए हैं ।

भगवान् राम के स्वरूप का बोध पार्वती जी को शंकर जी ने कराया और उसके बाद क्या होता है कि भगवान् श्रीराम नर लीला कर रहे हैं । मेघनाथ के युद्ध में मेघनाद ने भगवान् राम के ऊपर नागपाश फेकी । उसके बाणों से नाग निकल-निकल कर भगवान् राम के शरीर को जकड़ लिए । राम निश्चेष्ट होकर पड़ गए ।

व्याल पाश वश भये खरारी । जदपि अनन्त एक अविकारी ।

जो अनन्त हैं वे कैसे वश में हो सकते हैं ? लेकिन हो गए । भगवान् राम निश्चेष्ट पड़े थे युद्धस्थल में। मेघनाद उनको ले जाना चाहता था लेकिन नहीं ले जा पाया । अन्ततोगत्वा एक लीला हुई कि गरुड़ जी को कुछ मोह होना था तो नारद जी ने गरुड़ जी से कहा कि देखो । एक सेवा है भगवान् की । उसको करके नाम बना लो । नागपाश में बँधे हैं और नाग तुम्हारे भोजन हैं । गरुड़ आया और टप-टप करके जितने भी नाग लिपटे थे सबको खा गया । रामचन्द्र जी मुक्त हो गए । सर्प को तो उसने खा लिया लेकिन एक संशयरूपी सर्प ने उसको खा लिया । वह सोचने लगा कि अगर यह भगवान् होते तो नाग पाश से कैसे बँधते ? मैं न होता तो यह तो ऐसे ही पड़े रहते । इसलिए ये भगवान् हैं इसमें सन्देह है । चले गरुड़ तो रास्ते में नारद जी मिले । नारद जी से पूछा कि कहो नारद ! राम परब्रह्म हैं ? उन्होंने कहा कि इसमें क्या सन्देह है ? बोले कि ब्रह्म नहीं है। ब्रह्म होते तो नागपाश में कैसे बँध जाते ? चुपचाप बैठो । बाधा मत डालो । आप ब्रह्म होते तो नागपाश में बँध जाते ऐसा नहीं सम्भव था । उन्होंने कहा कि देखो यह भगवान् की माया है । उस माया ने मुझको कई बार नचाया है । इसीलिए अब मैं तो इसका उत्तर दे नहीं सकता । तुम ब्रह्मा जी के पास जाओ । ब्रह्मा के पास गरुड़ गया। सीधे पूछा कि राम परमात्मा हैं कि नहीं ? प्रश्न पूछने का भी कोई तरीका होता है । कहिए महात्मा जी! आप हमारे प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं ? अगर कोई पूछेगा तो महात्मा जी यही कहेंगे कि और किसी के यहाँ जाओ। एक आदमी हमारे पास आया । कहने लगा कि महाराज! हमको कोई महात्मा बताइए । हमने कहा क्यों ? बोले हम महात्मा का सत्संग करना चाहते हैं । हमने कहा भईया हम तो महात्मा नहीं बता सकते । पूछा कि क्यों नहीं बता सकते ? हमने कहा कि तुम हमको तो महात्मा मानते नहीं हो । अगर हम तुम्हारी दृष्टि में महात्मा होते तो हमसे ही तुम दूसरा महात्मा क्यों पूछते ? इसका मतलब यह है कि हम महात्मा नहीं है। जो महात्मा नहीं है वह महात्मा का पता कैसे बता सकता है ? प्रश्न करने का भी कोई तरीका होता है । गीता में भगवान् ने बतलाया –

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ।।

पहले जाओ, प्रणाम करो और प्रणाम करके प्रश्न करो। फिर उत्तर न दे तो कुछ काल सेवा करो। तब तत्त्वदर्शी ज्ञानी तुमको ज्ञान का उपदेश दे देंगे। ब्रह्मा जी ने कहा बेटा हमको समय नहीं है। तुम भगवान् शंकर के पास चले जाओ। शंकर जी जा रहे थे कुबेर के यहाँ। रास्ते में मिले। यह बताया गया है कि प्रणाम करने का भी कोई समय होता है। यह लिखा है कि कब प्रणाम करना चाहिए।

जपन्तं जलमध्यस्थं गच्छन्तं धनगर्वितम् ।
अश्वारूढमजानन्तमेतान्नैवाभिवादयेत् ।।

शास्त्र में लिखा है कि जब कोई महात्मा ब्राह्मण जप कर रहा हो तो उस समय उसको प्रणाम मत करो। बेचारा माला हाथ में लिए है। तुमको आशीर्वाद कैसे दे सकता है ? जब वह जल में खड़ा हो तो प्रणाम नहीं करना चाहिए। जल्दी-जल्दी कहीं जा रहा हो तो प्रणाम नहीं करना चाहिए। जब खड़ा हो या बैठा हो तो प्रणाम करो। धन से गर्वित हो तो प्रणाम नहीं करना चाहिए। घोड़े में बैठा हो तो प्रणाम नहीं करना चाहिए। उसको पता न हो पीछे से प्रणाम मत करो। कई आदमी हमको पीछे से ही प्रणाम कर लेते हैं। किसी को कुछ नहीं मिलता तो बाल ही खींच लेते हैं। यह तरीका नहीं है। यह भी लिखा है –

प्रणामेन बिना राज्ञां स्वस्ति कुर्वन्ति ये द्विजाः ।
राजानो नरकं यान्ति ब्राह्मणाः ग्रामसूकराः ।।

जब तक क्षत्रिय लोग प्रणाम न करें उन्हें आशीर्वाद भी नहीं देना चाहिए। कोई क्षत्रिय आए और ब्राह्मण पहले ही कह दे कि भइया जी को आशीर्वाद तो वह क्षत्रिय नरक जाएगा और जो ब्राह्मण पहले से बिना किसी को प्रणाम किए ही आशीर्वाद देता है वह अगले जन्म में गाँव का सूअर होगा। पहले प्रणाम करना चाहिए। पहले से आशीर्वाद देने वाला जो ब्राह्मण है वह ठीक नहीं। इसके सबके प्रकार हैं। अब वह जा रहे थे भगवान् शंकर वहाँ तो प्रणाम किया। लेकिन कहा महाराज ! राम कौन हैं ? भगवान् शंकर ने कहा कि देखिये आपको जो संशय हो गया है यह संशय सत्संग से दूर हो सकता है।

जब कछु काल करिय सत्संगा। बिन प्रयास होइहि भ्रम भंगा। जब कुछ काल सत्संग करोगे तब बिना ही प्रयास के मोह भंग हो जाएगा। तुम रास्ते में मिले हो हम कैसे समझाएँ ? जाओ कागभुशुण्डि के पास। तो कागभुशुण्डि के पास भेज दिया तो कारण क्या था ? अभिमान होता है गरुड़ के मन में। मैं पक्षियों का राजा हूँ। कौआ

सबसे छोटा है । कौआ को सबसे नीच पक्षी माना गया है। गरुड़ को सबसे ऊँचा माना गया है । लेकिन अभिमान करने के कारण गरुड़ को भी कागभुशुण्डी के पास जाना पड़ा। जो अपने पूज्यों को नहीं मानेगा वह पाखण्डियों के यहाँ जाएगा । जो अपने गुरुओं को अनादर की दृष्टि से देखेगा उसको ऐसे ही ठग मिल जायेंगे।

इसीलिए भगवान् शंकर ने कहा कि जाओ कागभुशुण्डि के पास । इसकी एक बड़ी मनोरम कथा भी है। भगवान् श्रीरामचन्द्र जी अयोध्या में जब बाल्यावस्था थी तो मालपूआ खा रहे थे । कागभुशुण्डि जी बालक राम के दर्शन के लिए अयोध्या में रहते थे । भगवान् कागभुशुण्डि जी की ओर पूआ दिखाते थे कि ले ले । कागभुशुण्डि पास में आते वैसे ही हाथ पीछे कर लेते थे । कई बार चिढ़ाया तो एक बार कागभुशुण्डी जी ने लपक कर भगवान् के हाथ का पूआ खींच ही लिया । भगवान् रोने लगे । हमारा पूआ ले गया । हमारा पूआ ले गया । अब राम को रोते देखते ही कौशल्या जी आ गईं । कहा बेटा क्या हुआ । कहा कि हमारा पूआ ले गया । कहा हम दूसरा दे देंगे । कहा कि हम वही लेंगे । दशरथ जी आ गए । उन्होंने कहा कि दूसरा ले आयेंगे। हमको तो वही चाहिये। इतने में नारद जी ने गरुड़ से कहा कि गरुड़ ! जाओ कौआ जो है वह भगवान् के हाथ का पूआ लेकर भाग गया है । यह पेड़ में बैठकर भगवान् का प्रसाद समझकर कुतर कुतर खा रहे थे । गरुड़ ने जाकर कहा कि उठ ! चल । पूआ वापस कर । कागभुशुण्डी जी को वापस करना पड़ा । कागभुशुण्डी ने जाकर उनका पूआ उनके सामने रख दिया कि लो महाराज ! अब भगवान् ने उठाया कहा कि ले । बोले हम अब नहीं खायेंगे । हम खा ही नहीं सकते । अब भगवान् कागभुशुण्डि जी को मनाने लगे कि भैया खाओ । बोले नहीं हम न खायेंगे । आपने हमारा अपमान किया । गरुड़ से हमारी शिकायत हो गई । उसने हमको डाँटा । तब भगवान् ने कहा कि बोलो चाहते क्या हो ? बोले कि उस गरुड़ को हमारा चेला बनाओ तो हम मानेंगे । भगवान् ने कहा कि यही होगा। उनकी इच्छानुसार कागभुशुण्डी के यहाँ गरुड़ जी गए और गरुड़ ने उनके आश्रम में पहुँचते ही उनका मोह भंग हो गया। होता यह है कि महात्मा जो होते हैं उनके शरीर में ऐसे परमाणु होते हैं कि उनके पास जाने से बहुत सी शंकाएँ अपने आप दूर हो जाती हैं । उनमें शक्ति होती है । आप प्रश्न लेकर जाइए और वहाँ जाते ही आपके प्रश्न अपने आप दूर हो जाते हैं । यही हाल गरुड़ जी का हुआ । कागभुशुण्डी के आश्रम में जाने से उनका मोह दूर हो गया। इस तरह से इन सब बातों से यह सिद्ध होता है कि राम मनुष्य नहीं थे ।

इसीलिए हमलोग कहते हैं कि राम मन्दिर अयोध्या में जो बनेगा वह राम भक्त

बनायेंगे। राजनीतिज्ञ नहीं बनायेंगे। वे कहते हैं कि हम राम को देवता के रूप में नहीं, आदर्श राम के रूप में उनका मन्दिर बनायेंगे। हमलोगों का यह कहना है कि हम आराध्य रूप राम का मन्दिर बनायेंगे। उनकी पूजा का स्थल बनायेंगे। हम मनुष्य के रूप में नहीं बनायेंगे। अगर राम को मनुष्य के रूप में उनकी मूर्ति बनाओगे मन्दिर बनाओगे तो बल्लभ भाई पटेल की मूर्ति में और राम की मूर्ति में क्या फर्क रहेगा ? हम तो यह मानते हैं कि राम परब्रह्म परमात्मा हैं। और जन्मभूमि जो है वह परमात्मा की जन्मभूमि होने के कारण सिद्ध भूमि है। और वहाँ पर बहुत से लोगों ने तपस्या की है। आराधना से देवता में कला आ जाती है। उस स्थान पर भगवान् का मन्दिर बनना चाहिए। राम भक्तों के द्वारा सनातनधर्मियों के द्वारा बनना चाहिए। क्योंकि हमलोग वह हैं जो यह मानते हैं कि प्राण प्रतिष्ठा हो जाने पर भगवान् आ जाते हैं। और अगर उनको भोजन न दिया जाए तो वह भूखे रहते हैं। उनको जाड़ा लगता है। उनको गर्मी लगती है। इसीलिए भगवान् की मूर्ति में जो पूजा करते हैं उस समय पर भोग लगाते हैं। गर्मी के दिनों में पंखा चलाते हैं। जाड़े के दिनों में गर्म वस्त्र पहनाते हैं। पर यह काम जो है भगवान् के ही मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा होती है। भगवान् आते हैं। चाहे जिसकी मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा करोगे तो प्राण भी आ जाएगा। फिर जीव का जीव रह जाएगा। परमात्मा थोड़े ही आएगा।

परमात्मा में और जीव में यही अन्तर है कि परमात्मा में निरावरण ब्रह्म है और जीव में आवरण है। दोनों यद्यपि एक ही है लेकिन विद्या में प्रतिबिम्बित जो परमात्मा है उसमें आवरण नहीं है और अविद्या में प्रतिबिम्बित जो चैतन्य है वह जीव है। उसमें अपने स्वरूप को विस्मृति हो गई है। अज्ञान है। आवरण है। इसलिए भगवान् राम साक्षात् परब्रह्म परमात्मा हैं। निरावरण हैं। उनको जो चित्रण हुआ है वह ब्रह्म और धर्म को प्राप्त करने का एक मात्र साधन है। चाहें आप वाल्मीकि रामायण पढ़ें चाहे राम चरित मानस पढ़ें। राम चरित मानस में राम की ब्रह्मरूपता का और स्पष्ट वर्णन है। और साथ ही साथ भगवान् राम ने जो लीलाएँ की हैं उनमें एक लीला उन्होंने राज्याभिषेक के बाद राम राज्य के रूप में की है। राम ने राज्य किया।

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज्य काहुहि नहिं व्यापा ।।

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। रहहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती ।।

बयर न कर काहू संग कोई। राम प्रताप विषमता खोई ।।

इस तरह से भगवान् रामचन्द्र जी ने राज्य किया यह बताया कि आज तक

रामराज्य सब राज्यों का आदर्श माना जाता है। यह भगवान् ने करके दिखा दिया कि राजाओं को शासकों को कैसा होना चाहिए। और फिर भगवान् ने लीला संवरण की। लीलासंवरण में भगवान् ने समस्त अयोध्यावासियों के साथ अपने धाम में गमन किया। लेकिन हनुमान जी ने सबको बैठाला विमान में पर स्वयं नहीं बैठे। सबको बैठाने के बाद लोगों ने कहा कि आप भी आइए। चलिए भगवान् के धाम में तो हनुमान जी बोले कि हम नहीं जायेंगे। हम तो राम कथा सुनेंगे। राम कथा वैकुण्ठ में नहीं है। राम कथा मनुष्य लोक में है। आप हम सबलोग भाग्यशाली हैं जो यहाँ पर राम कथा हो रही है और सुन रहे हैं। राम कथा सुनने से सब प्रकार का कल्याण होता है। आप सबलोग इतनी बड़ी संख्या में यहाँ पर एकत्र हुए। नौ दिन से आपलोग कथा सुन रहे थे। दण्डी स्वामी सदानन्द के द्वारा। इसी तरह का सत्संग जगह जगह होना चाहिए। और अपने जीवन को मानव जीवन को भगवद् कथा के श्रवण से पवित्र करके धन्य बनाना चाहिए। आप सबके कल्याण के लिए भगवान् श्रीराम से प्रार्थना करते हुए अपनी वाणी को विश्राम देते हैं। थोड़ा सा भगवान् का नाम लीजिए।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[37]

राम राम सैंतीस

सनातनधर्म में नारी का सर्वोच्च सम्मान

समुपस्थित देवियों, सज्जनों !

हमलोग महिलाओं के अधिकार का हनन नहीं कर रहे हैं । वे प्रधानमन्त्री न बनें, आगे न बढ़ें, उनको अधिकार न मिले यह हमारा कहना नहीं है । हमलोग महिलाओं का सम्मान करते हैं । हमारे भारत में महिलाओं को जितना सम्मान मिला है उतना और कहीं नहीं मिला है । यह सनातन धर्म है जिसमें हमलोगों ने भगवान् को भगवती के रूप में, नारी के रूप में देखा है । जगदम्बा के रूप में देखा है । इसलिए देखा है कि माँ करुणामयी होती है । अपने पुत्र के लिये उनके मन में वात्सल्य होता है । माँ का यह गुण है कि अगर उसके बेटे में कोई दुर्गुण भी हो तो वह उसको नहीं देखती । किसी से झगड़ा हो जाए तो भी अपने ही बेटे का पक्ष लेती है । यह गुण हमने माँ में देखा तो यह समझा कि यह किसी दूसरी माँ से आया है जो सबकी माँ हैं ।

आप देखिये माँ अपने बेटे का वात्सल्य पूर्ण हृदय से पालन करती है । इसमें आप स्वार्थ भी देख सकते हैं कि शायद यह सोचती होगी कि यह बुढ़ापे में हमारी सेवा करेगा। लेकिन आप देखिये कि पक्षी के जब अण्डे देने का समय आता है तब वह पहले से ही नरम नरम पंखें इकट्ठे करके जहाँ किसी का हाथ नहीं जाता वहाँ पर घोंसला बनाती है। उसमें अपने अण्डे देती है । उनको बढाने के लिए अपने पैरों के बीच में रखकर ऐसा प्रेमपूर्वक स्पर्श करती है वह पक्षी कि उसको चोट न लगे और दबे नहीं । प्यार से उसका स्पर्श करके अण्डों को बढ़ाती है । उनका आकार भी वजन भी बढ़ता है और जब वह अण्डे फूटकर पक्षी के रूप में प्रकट होते हैं वह जंगल में जाकर चारा चुगती है और चुग चुग कर चारे अपने गले की थैली में एकत्र करती है । खुद नहीं खाती । जब वह शाम को आती है तो उसके बेटे जिनकी चोंच इतनी नरम है कि जमीन में लग जाए तो टूट जाए। चीं चीं कहकर उसके सामने खड़ी हो जाती है । वह तोड़ तोड़ करके उनके मुँह में चारा डालती है । बचता है तो वह भी खा लेती है । उस पक्षी को जब पंख लग जाएगा तो वह उस माँ को पहचानेगा भी नहीं । यह प्यार उस पक्षी में कहाँ से आया ?

कोयल का नाम परभृत है । जब उसको अण्डा देना होता है तो समझती है कि मैं

बच्चे को से नहीं सकती। वह कौए के घोंसले में अण्डे दे आती है । कौआ गिनती नहीं जानता और अपने अण्डों के साथ साथ कोयल के अण्डों को भी से देता है । जब पंख लगते हैं तो भी पता नहीं लगता दोनों काले काले होते हैं । लेकिन जब वसन्त ऋतु आती है तब कौआ काँव कॉव और कोयल कूहू कुहू करने लगती है तब पता चलता है । ये जो पक्षी के दिल में वात्सल्य आया । भगवन् की पालिनी शक्ति के द्वारा आया ।

एक गाय जब अपना बछड़ा जनती है कितनी ही सीधी हो अगर कोई उसके बछड़े को छूने जाए तो रोकती है और विवश होकर जब उसको चारा चराने के लिए जंगल में ले जाया जाता है तो वह अपने बेटे का ही चिन्तन करती रहती है । शाम को अपने दौड़ते हुए अपने बछड़े के पास आती है । आँख से ऐसा देखती है कि जैसे पी जाएगी । चाटती है ऐसे कि अपने साथ मिला लेगी । यह प्यार उस गाय को कहाँ से मिला ? क्योंकि जब वह बछड़ा बड़ा हो जाएगा तो अपनी माँ को पहचानेगा भी नहीं । यह प्यार उसको कहाँ से मिला ? यह भगवती राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी माता का दिया हुआ है जो उस बछड़े के, पक्षी के हृदय में आकर मनुष्य माता के हृदय में आकर उसको पालने की भावना उत्पन्न करती है ।

हमलोग यह मानते हैं कि जगदम्बा परमात्मा हमारी माँ हैं और हम इस रूप में नारी को देखते हैं । मुसलमान अल्लाह कहता है । ईसाई गॉड कहता है लेकिन हम जगदम्बा कहते हैं । जब हम कोई बात कहते हैं तो आजकल के लोग कहते हैं कि शंकराचार्य नारियों का विरोधी है । वह धर्म को संविधान के साथ जोड़ते हैं।

हमारा यह कहना है कि धर्म सबका भिन्न भिन्न भी होता है और एक भी होता है। सनातन धर्म सबका एक है लेकिन कर्तव्य रूपी धर्म सबका अलग अलग है । नारी का अलग है । पुरुष का अलग है । हमने कहा कि नारियों को शिंगणापुर जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि शनि क्रूर ग्रह है। उसको लेकर उन्होंने सोचा कि हम नारी के विरोध की बात कर रहे हैं । हम आपसे बताना चाहेंगे कि हमारी जगदम्बा जो माँ हैं उसके दस रूप हैं । दस महाविद्या । उसमें से एक धूमावती देवी हैं । धूमावती देवी का इतिहास यह है कि पार्वती जी ने शंकर जी से कहा कि हमको भोजन लाओ । शंकर जी बहाने बताते रहे पर नहीं लाए तो उनको ही चबा गई । शंकर जी पेट में चले गए । और फिर शंकर जी धूम बनकर वहाँ से निकले तो उन्होंने कहा कि तू विधवा हो गई । तेरा नाम धूमावती होगा । उसका रथ बनाया । काक उसमें बैठा हुआ है और कर्कशा दिखाई पड़ती है पर भीतर से दयामयी है । लेकिन नारियां उनका दर्शन नहीं करती क्योंकि वह

विधवा रूप है ।

हमलोग धर्म और कल्याण की बात करते हैं । हमें इस बात से कोई आपत्ति नहीं है कि राष्ट्रपति न बने नारी, प्रधानमन्त्री न बने । आप खूब बनाइए । बहुत बार नारियां सफल हुई हैं । अपने भारत की आजादी के पहले भी और आज भी हुईं हैं । हमारे यहाँ तो यह बात आती है कि जब भगवान् श्रीरामचन्द्र जी को वन जाने की आज्ञा दशरथ जी के द्वारा हुई और भगवान् जब जाने के लिए दशरथ जी के पास गए तो कैकेयी ने आकर वल्कल भगवान् राम को दे दिए । अपने राजसी वस्त्र उतार और वन जा । भगवान् ने चीर पहना और वह उतार दिया । लक्ष्मण जी ने भी पहन लिए । उसके बाद वह सीता जी के लिए भी ले आई और कहा कि यह तू पहन । तो सीता जी नहीं जानती थी । भगवान् राम की ओर देखा । राम ने उनके वस्त्र के ऊपर ही वल्कल पहनाए तो वह बोली कि ये चीर वल्कल उतार और राजसी वस्त्र उतार और चीर पहनकर जा । हाहाकार मच गया । रानियाँ रोनी लगीं। लोग कहने लगे कि जनकराज की पुत्री ने कौन सा अपराध किया है जो उसको राजसी वस्त्र उतार कर भेजा जा रहा है ?

वशिष्ठ जी इस बात को नहीं सह सके और कहा कि दुर्बुद्धे ! इस तरह तो तू अन्याय कर रही है । तूने राम का वनवास माँगा है, सीता का नहीं । राम तो जाएगा लेकिन तेरा बेटा भरत भारत का राजा नहीं बन पाएगा। मैं सीता को राजसिंहासन में बैठा दूँगा । यह कहा उस समय । इस पर दशरथ जी को दुःख हुआ । उन्होंने कहा कि नहीं, सीता इन्हीं वस्त्रों में जाएगी । चौदह वर्ष के लिए जितनी साड़ियों की जरूरत है वह सब साथ जाएगा इसके साथ । और भी जो जरूरत है सब जाएगा ।

नारी का हमारे यहाँ सम्मान है । हमलोग उनके विरोधी नहीं है । किसी ने हमसे कहा कि महाराज ् साईं के मामले में आप सफल हो गए पर शनि के मामले में नहीं होओगे। हम कहते हैं कि हमें सफलता की कोई जरूरत नहीं है । हमने तो यह व्यवस्था दी है । शंकराचार्य फतवा नहीं देता । वह व्यवस्था देते हैं । शास्त्रों के अनुसार क्या उचित है और क्या अनुचित है यह बताना उनका कर्तव्य होता है । बहुत से लोग कहते हैं कि हम आपसे शास्त्रार्थ करेंगे । सामने ही बैठे हैं। शास्त्रार्थ करना हो तो हम तैयार हैं आओ। पहले विषय निश्चित करो । शंकराचार्य तो बनते हो तो उनकी विरुदावली है कि **पदवाक्यप्रमाणपारावारपारीणाः ।** यह बताओ कि तत्त्वमसि वाक्य कैसे है ? इसके ऊपर आक्षेप कौन से हैं और इसका समाधान क्या है ? शंकराचार्य के सम्बन्ध में यदि शंका हो तो पहले मध्यस्थ और विषय तय करो । हम बैठे हैं । इस तरह की शास्त्र की बात

करोगे तब न होगा। अब तुम कहते हो कि सरस्वती नामा कैसे है ? अगर तुम सुमेरु मठ को भौतिक मठ मानते हो तो वहाँ का शंकराचार्य सरस्वती नामा कैसे हो सकता है ? वहाँ तो लिखा है कि सत्य और ज्ञान उसका पद होगा । सबसे बड़ी बात यह है कि यह चार मठ प्रामाणिक क्यों हैं ? क्योंकि आदि शंकराचार्य जी से लेकर आज तक इनकी गुरु परम्परा है । आप बताइए कि सुमेरु मठ की कौन सी परम्परा है । स्वामी महेश्वरानन्द जी के पहले कौन शंकराचार्य था काशी का? आप परम्परा बतायेंगे हमें ? स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी ने स्वामी करपात्री जी के कहने से महेश्वरानन्द जी का अभिषेक किया था । उसी समय हम गाड़ी में महाराज जी के साथ दारागंज जा रहे थे। हमने महाराज जी से पूछा कि ज्योतिर्मठ में उन्होंने अभिषेक कर दिया । क्या ये शंकराचार्य हो गए ? यदि हां तो क्या अब कृष्णबोधाश्रम जी ज्योतिष्पीठ के शंकराचार्य नहीं रहे? तब उन्होंने कहा कि हमने इनको ज्योतिर्मठ की शाखा का मठाधीश बनाया है । जब यह अच्छा काम करेंगे तो भविष्य में ज्योतिर्मठ का शंकराचार्य बनाया जा सकता है । शाखा बताया था और मठाधीश बताया था। इन्होंने ऊर्ध्वाम्नाय की कल्पना कर रखी है । यह भौतिक मठ नहीं है । आध्यात्मिक मठ है । ऊर्ध्वाम्नाय यदि भौतिक मठ है तो उसके बाद दो मठ और है । एक मठ का नाम है परमात्मा मठ । एक का नाम है सहस्रार्कद्युति मठ। यह क्या भौतिक हो सकते हैं ? क्या परमात्मा भौतिक हैं ? इन सब बातों का शास्त्रीय उत्तर दे दें । आप अपने ढंग से धर्म का प्रचार कीजिए । हमें आपत्ति नहीं। सुमेरु मठ नाम की कोई भौतिक चीज नहीं है । और यदि मठ है तो काशी में एक दूसरा सुमेरु मठ है जिनकी अपनी परम्परा है लेकिन वे अपने आपको शंकराचार्य नहीं कहते । दण्डी संन्यासी हैं वे । ये तो स्वामी शंकरानन्द ने बनाया है । फिर आपके मठ में भी आप एक नहीं है । कई बन गए हैं । पहले अपने आपको संभालो फिर हमलोगों के ऊपर आक्षेप करो ।

कई लोगों ने तो पहले यह कहा था कि हम गुरु शंकराचार्य हैं और बाकी चार शंकराचार्य हमारे शिष्य हैं । यहाँ तक सोचने लगे थे । हमने इसका विरोध किया । चार शंकराचार्यों का सम्मेलन श्रृंगेरी में हुआ । वहाँ यह निश्चय पुनःपुष्ट हुआ कि भगवान् शंकराचार्य ने चार ही आम्नाय मठ बनाए हैं । न तो कांची में हैं और न काशी में है । हमारा बदरी, द्वारका है । पुरी का है । श्रृंगेरी का है । हमारी बिरादरी से ये लोग बाहर हैं । हम आपको यह बता देना चाहते हैं ।

दूसरी बात यह है कि साईं के सम्बन्ध में हमने जो कहा है वह सही है। साई साक्षात् मुसलमान है । अल्लाह मालिक कहता था । हमारे चरणों में गंगा यमुना आकर पवित्र

होती है यह कहता था। उसकी आरती में लिखा है यवनवंशी मोमिनवंशी। हमारा यह दायित्व है कि हम अपने सनातनधर्मियों के सामने सही बात रखें जो हमने रखी हैं। शनि के सम्बन्ध में हम आपको बताना चाहते हैं कि शनि देव है इस पर हमने नहीं कहा। भूतोऽमी देवयोनयः। यक्ष राक्षस देव किन्नर सब योनि देवयोनि हैं। कौन सा देव पूज्य और कौन सा नहीं है इसका भी तो देखना पड़ेगा। इसको ग्रह कहा गया है शनि को। ग्रह जो होता है वह मारक होता है। आप देखिये भागवत में भगवान् श्रीकृष्णका जब जन्म हुआ तो पूतना पहुँची। वहां लिखा है कि बालग्रहा। ये पूतना बालग्रह थी जो शिशुओं को खोजती थी कि किसको हम मारें। ग्रह मारक होता है। शनि मारक होता है और किसी किसी के लिए शनि अनुकूल भी हो जाता है। लेकिन यह सामान्य रूप से हानिकारक होता है। भागवत के प्रथम स्कन्ध में लिखा है यह सर्वदैव हानिकारक है। इसीलिए शनि की पूजा शान्ति के लिए होती है। सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु। हम पूजा करते हैं तो पहले ही हम विघ्न हटा देते हैं।

दुर्जनं प्रथमं वन्दे सज्जनं तदनन्तरम्।
मुखप्रक्षालनात् पूर्वं गुदप्रक्षालनं यथा।।

दुर्जन का पहले वन्दन किया जाता है। सज्जनों का बाद में। जैसे प्रातःकाल गुदा पहले धोयी जाती है मुख बाद में। इसीलिए तुलसीदास ने खल वन्दना की।

पुनि बन्दउं खलगन सति भायें।

जे बिनु काज दाहिनेहु बायें।।

सबकी वन्दना करने के बाद हम सद्भाव से खलों की भी वन्दना करते हैं क्योंकि जिनके मन में दूसरों की हानि को देखकर ही हर्ष होता है। बहुत से लोग हैं जिनको इस बात की तकलीफ है कि अगला हँसता क्यों है ? वह रोता क्यों नहीं है ? आप देखिये बहुत से लोग ऐसे हैं जिनको दूसरों को रोते हुए देखकर खुशी होती है। कोई सुखी हो जाए तो दुःख होता है और कोई दुःखी हो जाए तो सुख होता है। यह खलों का लक्षण है। रामचरितमानस में तीन प्रकार के मूर्ख बताए गए हैं - शठ, खल और मूर्ख। शठ किसको कहते हैं ? **शठ सुधरहिं सत्संगति पायें।** सत्संगति पाकर शठ सुधर जाते हैं और खल सत्संगति पाकर कुछ दिनों के लिए अच्छे हो जाते हैं लेकिन बाद में फिर वही काम करते हैं। कौए को आप सोने के पिंजरे में रखकर खीर खिलाओ लेकिन वह अपना स्वभाव नहीं छोडता। यह खल का लक्षण है। और मूर्ख ! मूर्ख उसको कहते हैं जो सुधरता नहीं।

मूरख हृदय न चेत जौ गुरु मिलहिं विरंचि सम ।
फूलहिं फरहिं कि बेंत जदपि सुधा बरसहिं जलद ।।

शठ तो सुधर सकते हैं लेकिन खल और मूर्ख नहीं सुधर सकते । इन सब बातों को ध्यान में रखें । हमलोग जो बात कहते हैं वह लोकहित में कहते हैं । नारियों के हित के लिए कहते हैं । उनके उत्थान में बाधा के लिए नहीं कह रहे हैं । एक ने कहा कि सांई के मामले में आप जीत गए पर शनि के मामले में नहीं जीत सकोगे क्योंकि स्त्रियाँ खड़ी हो गई हैं । हम कहते हैं कि यदि महिलाएँ शनि के मन्दिर में चली ही गईं तो हमारा क्या बिगड़ेगा? वे मन्दिरों में जाएँ । कोई रोक नहीं है । आप देखिये गंगा स्नान करने के लिए हमलोग आए हैं । बहुत सी महिलाएँ कल्पवास कर रही हैं । गंगा स्नान से किसको रोका? बद्रीनाथ में कितने लोग जाते है। कभी नारी को रोका जाता है ? कभी नहीं रोकते हमलोग । नारियों का सदा सम्मान करते हैं और हमलोग तो नवरात्र में कन्या भोजन कराते हैं । सुवासिनी की पूजा करते हैं । हमारे भारत में कभी नेहरू जी इतने बड़े नेता हो गए पर किसी ने उनको बाप नहीं कहा । लेकिन कोई भी स्त्री जैसे ही वृद्ध होती है तो सबलोग, चाहे वह किसी भी जाति की हो उसको माँ कहते हैं । हमारे यहाँ सम्मान है। वह माँ का स्वरूप है । भगवती का रूप है ं हम तो उसका सम्मान करते हैं ।

एक पण्डित जी थे । शास्त्रों के विद्वान् थे । माता पिता के भक्त थे । रोज माता का चरणोदक लेकर ही भोजन करते थे । एक दिन माता ने कहा कि बेटा मैं शालिग्राम की पूजा करना चाहती हूँ । बेटे ने कहा कि यह ठीक नहीं है । शालिग्राम की पूजा स्त्रियों के लिए निषिद्ध है । सब शास्त्रों का पण्डित था । माँ का भक्त था लेकिन जब धर्म की बात आई तो बोल दिया । आप देखिये -इसी तरह से जब भगवान् राम वन प्रस्थान के पूर्व माता कौशल्या के पास पहुँचे तो कौशल्या बोलीं -

जो केवल पितु आयसु ताता । तो जनि जाहु जानि बड़ि माता ।।

बेटा तू क्यों वन में जा रहा है ? कहा कि पिता जी की आज्ञा है । मां कहती है कि पिता से माता बड़ी होती है । मैं तुझको रोकती हूँ । तब भगवान् बोले कि माता कैकेयी की भी आज्ञा है । सिद्धान्त यह है । शास्त्रों में लिखा है -

पितुः दशगुणा माता गौरवेणातिरिच्यते ।
मातुः दशगुणा ज्ञेया विमाता धर्मभीरुणा ।।

पिता से दशगुणी माता गौरवान्वित होती है । माता से दश गुणी विमाता होती है।

माता आगे बोलीं-

जो पितु मातु कहेहु वन जाना । तब कानन शत अवध समाना ।।

लेकिन बेटा ! मैं भी तेरे साथ चलूँगी । जहाँ बछड़ा जाएगा गाय वहीं जाएगी । मैं तेरे बिना नहीं रह सकती। राम कहते हैं कि माँ ! पिताजी के रहते हुए मैं तुमको अपने साथ नहीं ले जा सकता । तुम्हारा धर्म यह है कि बेटा पीछे और पति पहले । यह सिद्धान्त की बात है । इसको अगर आप संविधान के साथ जोडोगे । संविधान मनुष्य का बनाया हुआ है और वह कई बार बदला जाता है । लेकिन शास्त्र परमात्मा के बनाए हुए हैं। उनमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता । अगर आप मरकर जाओगे तो संविधान की पोथी वहाँ काम नहीं देगी कि हम जीवन भर संविधान के अनुसार चलते गए इसलिए हमको स्वर्ग मिलेगा । वहाँ तो यह देखा जाएगा कि शास्त्र के अनुसार धर्म किया है कि नहीं किया है । आप देखिये कि धर्म की बात को मानने वाले आज भी भारत में हैं । आज इतने लोग ठंड में आकर बैठे हैं । कल्पवास कर रहे हैं । गंगा स्नान करने से पुण्य होता है कोई सिद्ध कर सकता है प्रत्यक्ष में ? शास्त्र कहता है कि गंगा पवित्र होती है । माघ मास में स्नान करने का फल अद्‌भुत हो जाता है । शास्त्र का विश्वास लेकर यहाँ धार्मिक लोग बैठे हैं । जोड़े में भी बैठे हैं । जिस समय लोग रजाई में सोते हैं उस समय कल्पवासी ठिठुरता हुआ भले ही पैर ठण्डे हो रहे हैं, काँप रहे हैं वह गंगा स्नान करने जाता है और गोता लगाता है । लेकिन उसके बाद जो उसको आनन्द मिलता है वह आनन्द नौ दस बजे तक रजाई में लेटने वाले को नहीं मिल सकता । वह आनन्द तो धर्म करने से ही मिलता है । यह सच्चा रास्ता है । आप परोपकार करें उसका फल मिलेगा । एक माता थी । बेटा स्नान के लिए जा रहा था । माता ने एक पोटली में चार लड्डू बाँधकर दे दिया कि बेटा भूख लगे तो खा लेना । वह पोटली लेकर गया । स्नान करके उसने पोटली खोली। भूखा था । खाने के लिए तैयार हुआ कि इतने में एक गरीब भूखा आ गया । उसने कहा कि हमने तीन दिनों से नहीं खाया है । हमको भी कुछ दे दो । उसने दो लड्डू उसको खिला दिया और दो खुद खा लिया । जब लौटकर आया तो माता ने पूछा कि बेटा मैंने तुझे चार दिए थे तूने क्या किए । बेटा बोला- दो तो मैंने खा लिए और दो कूड़े में डाल दिए । क्या मतलब ? उसने कहा कि मैंने एक भूखे को खिलाया वह तो खाने के समान हुआ और जो खुद खा लिया समझो कूड़े में डाल दिया । यह परोपकार है । हम परोपकार करते हें वह समझो हमारा है। आपके पास करोड़ों अरबों की सम्पत्ति है पर वही आपकी है जिसको आप अच्छे काम में लगाते हो । वह आपकी नहीं है जिसको आप बैंक में, तिजोरी में रखे हो । वह आपका है जो आपके साथ परलोक जाएगा । यह हमारे शास्त्र

के सिद्धान्त हैं। इनको समझना चाहिए। हमारे यहाँ धर्म का यह मतलब नहीं है कि लोक की सिद्धि हो।

यतोभ्युदय निःश्रेयससिद्धिः स धर्मः ।

जिससे लोक परलोक में सिद्धि हो और अन्त में मोक्ष हो जाए उसको धर्म कहते हैं। इसलिए धर्म करना चाहिए। आप देखिये कि यदि आप धन चाहते हैं तो धनी के पास जाइए। पद चाहते हैं तो जिसके पास पद है उसके पास जाना चाहिए। ज्ञान चाहते हैं तो ज्ञानी के पास जाइए। अधकचरे लोगों के पास जायेंगे तो कुछ का कुछ बता देंगे। ऐसे लोगों के पास तो जाना भी नहीं चाहिए क्योंकि ये लोग कान फूँक देंगे और कहेंगे कि किसी को बताना मत। जिन्दगी बर्बाद हो जाएगी। एक आदमी हमारे पास आया। पहले वह योगाभ्यास करता था। हमसे आकर कहने लगा कि महाराज ! अब हमने दीक्षा ले ली है एक माताजी से। हमने पूछा कि क्या मन्त्र मिला है ? उसने कहा कि मन्त्र किसी को बताना नहीं है। हमने कहा कि वह तो गुरु हैं पर हम तो जगद्गुरु हैं। हमें बताओ तो उसने बड़ी मुश्किल से हमें मन्त्र बताया कि हमको मिला है ओंगा। बताओ। ऐसे तो वह जिन्दगी भर रटता रहता तो उसकी जिन्दगी ही खराब हो जाती। ऐसे ढोंगी लोग कुछ भी बता देते हैं। इसलिए जो सच्चे गुरु हैं उनके पास जाना चाहिए। मुण्डकश्रुति का वचन है-

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् ।

अनुभवी लोगों का वाक्य है कि - **पानी पियो छान। गुरु करो जान।** क्योंकि चाहे जिसको बना लिया तो बाद में छोड़ भी नहीं सकते। पहले अच्छी तरह से जान लो। जहाँ तुमको अच्छा समझ में आए। जहाँ ज्ञान की बात हो वहाँ जाओ। हमलोग यहाँ बैठे हैं। हम यहाँ पर आते हैं और आते रहेंगे। शास्त्रार्थ करना है तो शास्त्रार्थ करो और जिज्ञासा हो तो पूछ लो। लिखकर पूछ लो। हमलोग सबका उत्तर देंगे। समझायेंगे। जिसको नहीं समझा सकेंगे उसको शास्त्र देखकर बतायेंगे। लेकिन यह बात हम बताना चाहेंगे और कल भी हमने बताया था कि हमारे भारत में आचार्य की परम्परा है। विचार करके काम होता है। आचार्य वेद वेदान्त का ज्ञाता होना चाहिए। सदाचारी होना चाहिए। यह सब बातें हैं। आज इतना ही कहकर हम अपनी बात समाप्त करेंगे।

श्रीराम जय राम जय जय राम

हर हर महादेव !

—*—

[38]

राम राम अड़तीस

आचरण ऐसा करो जो लोक-परलोक दोनों सुधारे

समुपस्थित सज्जनों देवियों !

एक छोटा सा रूपक है । एक सन्त के पास एक सामान्य व्यक्ति आता है और दोनों में वार्ता होती है । देखिये दोनों की वार्ता जो कि पद्यबद्ध है । हम गाकर सुना रहे। (सामान्य अक्षरों में भक्त के कहे वाक्य हैं और बोल्ड अक्षरों में महात्मा जी के)

दण्डवत् बाबा महाराज । **बच्चा जय सीता राम**

दीन-दुःखियों को मारग बताओ । **साधु सेवा में चित्त लगाओ ।**

साधु सेवा को धन तो नहीं है । **धन को जाने दे तन तो सही है ।**

तन को विषयों से फुरसत नहीं है । **यम के दण्डों की दहशत नहीं है ।**

दण्डवत् बाबा महाराज । **बच्चा जय सीता राम**

मर कर जब जाओगे तो यम के डण्डे पड़ेंगे । सरकारी मन्त्री बनकर, ऑफीसर बनकर जो अन्याय अत्याचार कर रहे हैं वे लोग यहाँ भले ही बच जाएँ लेकिन यमराज के यहाँ से नहीं बच सकेंगे। यमराज उनको दण्डित करेगा । वहाँ झूठी गवाही काम नहीं देगी । परलोक की बात जब आती है तो वहां देश का संविधान भले मौन हो पर हमारे शास्त्र सजग रहते हैं । और वे पापों से निवृत्ति का मार्ग भी हमें सुझाते हैं। उन्हीं में से एक मार्ग है गंगा जी का स्नान । गंगा जी को दशपापहरा, दशहरा कहा गया है क्योंकि पाप दश प्रकार के बताये गये हैं।

दशपापहरा यस्मात् तस्मात् दशहरा स्मृता ।

गंगा दश प्रकार के पापों को हरण करती हैं इसलिए उसका नाम दशहरा है। गंगा आपके दश पापों का हरण करती है लेकिन पाप करके स्नान करे तो फिर दुबारा पाप न करे । पापों को छोड़ दें । गंगा जल है उसमें स्नान नहीं करोगे तो कहाँ जाओगे । कौन तुम्हें बचायेगा ? आप सब कुछ करके राजा की शरण में जाएँ राजा को कहें कि हम आपकी शरण में आए हैं तो वह आपको बचा लेगा पर राजा का ही यदि आप अपराध

करोगे तो कौन बचाएगा ? सब पाप करके गंगा के पास जाओ तो गंगा बचा लेगी लेकिन गंगा का ही अपराध करोगे तो कौन बचाएगा? हम यहां प्रयाग आये हैं । सुन रहे हैं कि कुछ लोगों ने गंगास्नान के बहिष्कार की बात कही हैं। गंगा के बहिष्कार की यह बात बहुत गम्भीर है । जिन लोगों ने यह बात कही है हम समझते हैं कि उनको प्रायश्चित्त करना चाहिए । कुछ भी कह देना सही नहीं है । गंगा जी का बहिष्कार यह शब्द ही चुभता है। बहुत से लोग अपने आपको शंकराचार्य के रूप में कहते हैं । आप देखिये आप अगर अपने को शंकराचार्य कहते हैं तो कम से कम उसके स्वरूप तो बनाये रखिये । बचाकर रखिये ।

एक आदमी ने एक बार शंकर जी का रूप बनाया । एक बैल के ऊपर सवार हो गया । माथे में लुटिया रख लिया कि टेढा करे तो गंगा जल गिरने लगे । भस्म लगा लिया। हाथ में त्रिशूल और डमरू ले लिया । एक किसान के यहाँ पहुँचा । किसान ने सोचा कि हमारे कितने भाग्य हैं कि आज भगवान् हमारे यहाँ पधारे हैं । उसने साष्टांग प्रणाम किया कि महाराज ! मेरी मनोकामना सिद्ध कर दीजिए । शिव वेषधारी कहने लगे कि कुछ मिल जाय । इतना सुनते ही किसान की समझ में आ गया कि यह बहुरूपिया है ।

आपको एक और दृष्टान्त सुनाते हैं । एक बहुरूपिया था । वह बहुरूपिया अनेकों प्रकार के रूप बनाता था । स्वांग रचता था । राजा का मनोरंजन करता था । राजा बहुत प्रसन्न हुआ । इनाम दिया । उसने कहा कि महाराज और कोई स्वांग देखना चाहते हैं आप ? राजा बोले कि बाबा का, महात्मा का स्वांग देखना चाहते हैं। तो बहुरूपिये ने एक साल का समय मांगा और निकल गया। एक साल में उसने बड़ी बड़ी जटाएँ बढ़ा लीं । शरीर में भभूति लगा लिया । महात्माओं के जो तौर तरीके होते हैं वह भी सीख लिया और एक लंगोटी लगाकर गाँव के बाहर एक पीपल के पेड़ के नीचे बैठकर उसने आँख मूँद ली । न खाना न पीना न देखना । लोगों ने सोचा कि कितने बड़े त्यागी महात्मा आए हैं । भीड़ इकट्ठी हो गई लोग दर्शन करने लगे । साष्टांग प्रणाम करने लगे । राजा ने सुना कि एक त्यागी पुरुष आए हैं तो एक सोने की थाल में हीरा मोती जवाहरात रखकर उनके पास गया और महात्मा जी के सामने थाल रखकर साष्टांग प्रणाम किया । उस योगी ने एक लात मारी थाली में कि क्या कंकड-पत्थर लेकर आया है ? चल हट । राजा थाली लेकर वहाँ से चला गया । दरबार में जब पहुँचा तो योगी बाबा दौड़कर राजा के यहाँ पहुँचा कि हूजूर मेरा ईनाम मिल जाये। पूछा कि तुम कौन हो ? बोला कि हम वही योगी। राजा ने कहा कि अब जो तुम हमारे पास ईनाम माँगने आए हो जब हम थाल में सजाकर

तुम्हारे पास ले गए थे तब क्यों नहीं लिया ? उसने कहा कि ले तो लेता पर स्वांग बिगड़ जाता ।

उसी तरह से यदि आप स्वयंभू शंकराचार्य बनते हो तो कम से कम अपने स्वांग की तो रक्षा करो । बनते शंकराचार्य हो और ऑफीसरों के यहाँ जाकर उनसे जमीन के लिए प्रार्थना करते हो । क्यों तुम शंकराचार्य बने हो ? अगर तुमने स्वांग रचा है तो उसको तो कम से कम बचाये रखो । वह तो करते नहीं हो । स्तर गिरा रहे हो । ऐसे लोगों से जनता को सावधान रहना चाहिए । आप देखिये एक पीड़ा हमारे हृदय से नहीं जा रही है। हमारे शिष्य स्वामी परिपूर्णानन्द जी थे । वे परिपूर्णानन्द जी बड़े त्यागी पुरुष थे और केदारनाथ में जाकर उन्होंने चातुर्मास्य किया था । मेला क्षेत्र में चतुष्पथ बनाने के लिए अविमुक्तेश्वरानन्द ने यह माँग की कि चारों शंकराचार्यों को एक चौक में आप जगह दे दो तो नकली शंकराचार्य कौन हैं यह बात लोग अपने आप समझ जायेंगे । इन लोगों ने ऐसा षड्यन्त्र रचा कि वह काम न होने पाए इसलिए तरह-तरह के उपाय करने लगे। परिपूर्णानन्द जी अनशन पर बैठ गए । उनको ऐसा गायब किया है कि आज तक उनका पता नहीं चल सका है । पुलिस वालों ने अभी तक नहीं बताया कि वे कहाँ गए ? अदालत में हम लोग गए । अदालत को भी नहीं बता रहे हैं कि वे कहाँ हैं ? बताइए कि जो व्यक्ति अनशन करने बैठा होगा वह कहा चला गया ? जबकि पुलिस की ड्यूटी उस स्थान पर थी और करोडों रूपये के सीसी कैमरे मेला क्षेत्र में लगे हुये हैं । मेला प्रशासन क्यों नहीं बता पा रहा? कहीं न कहीं तो गया या ले जाया गया । हमें तो आशंका है कि उनकी हत्या न कर दी गई हो। यदि ऐसा है तो ब्रह्महत्या इन लोगों को लग गई है जिन्होंने उनको गायब करवाया है। पुलिस वालों को लगेगी जो नहीं बता रहे हैं । ब्राह्मण वह भी संन्यासी। ये ऐसे लोग हैं जो अपना पद बनाने के लिए जितना भी अनुचित काम हो वह करने के लिए तैयार हो जाते हैं । ये लोग ऐसे ही लोगों के साथ सन्त सम्मेलन करेंगे जो उनकी हाँ में हाँ बोले ।

एक बार क्या हुआ कि मुसलमानों की बारात आई । मुसलमानों की बरात को जनवासे में ठहरा दिया गया । सबेरे पूड़ियाँ गईं । टोकरे में भर-भर कर लोग पूड़ियाँ ले गए । ले जाते समय कुछ पूड़ियाँ छलक कर नीचे गिर गईं । मुसलमानों ने अपने मौलाना से पूछा कि ये जो पूड़ियाँ छलक कर नीचे गिर गई हैं उनका क्या करें ? उठायें कि छोड़ दें ? वह मौलवी बोला कि हिन्दू क्या करता है ? बोले कि वह छोड़ देता है तो मौलवी बोला कि उठा लो । ठीक इसी तरह इन नकली लोगों को जो शंकराचार्य स्वरूपानन्द कहता है उसका उल्टा कहना है । जो हम कहेंगे उसका उल्टा वे बोलेंगे ।

हमारे यहाँ हर बातों में धर्म में शास्त्र ही प्रमाण हैं । कहा है -

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ।।

जो शास्त्र की विधि को छोड़कर मनमाने ढंग से आचरण करता है उसको न तो सिद्धि मिलती है, न सुख मिलता है और न ही मोक्ष मिलता है । कर्तव्य अकर्तव्य के विषय में शास्त्र ही प्रमाण । शास्त्र के कारण ही हमलोग यहाँ पर आए हैं । यदि शास्त्र को नहीं मानोगे तो गंगा के पानी में और तालाब के पानी में क्या अन्तर रह जाएगा? शास्त्र के अनुसार गंगा पवित्र है । किसने देखा है । कहते हैं कि शास्त्र प्रमाण है । हमारे यहाँ यह माना जाता है कि प्रमाणों का प्रामाण्य स्वतः होता है । अप्रामाण्य परतः होता है । शास्त्र में यह लिखा है कि गंगा पवित्र हैं। गंगा में स्नान करने से मनुष्य के पाप नष्ट हो जाते हैं और उनको पवित्र लोक की प्राप्ति होती है । गंगा के सम्बन्ध में भगवान् शंकराचार्य ने लिखा है कि

कुतोऽवीची वीचिस्तव यदि तव गता लोचनपथं त्वमापीता पीताम्बरपुरनिवासं वितरसि ।

त्वदुत्संगे गंगे पतति यदि कायस्तनुभृतां तदा मातः शातक्रतवपदलाभोऽप्यलघुः।।

इसका अर्थ यह है कि हे माता गंगे ! जिसने तुम्हारी वीचि माने तरंगों का दर्शन कर लिया उसके लिए अवीचि माने नरक कहाँ रहा ? जिसने आपको पी लिया उसको आपने पीताम्बरपुर वैकुण्ठ दे दिया । हे माँ गंगे। जिसका शरीर आपकी गोद में शान्त हो जाता है उसके लिए इन्द्रपद भी तुच्छ हो जाता है । कहते हैं कि एक बार एक गरुड़ किसी सर्प को अधमरा करके अपनी चोंच में दबाकर उड़ा ले जा रहा था कि कहीं बैठकर खायेंगे। गंगा की धारा के ऊपर से जब वह निकला तो सर्प छटपटा कर गंगा की धारा में जा गिरा और वहाँ उसकी मृत्यु हो गई । परिणाम यह हुआ कि वह मरा हुआ सर्प विष्णु बनकर उसी गरुड़ की पीठ में बैठकर वैकुण्ठ चला गया। यह गंगा का महत्त्व है। आप उसका बहिष्कार कर रहे हो । हाय हाय । यह क्या है । यह समझना चाहिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित है । इस सम्बन्ध में शास्त्र को देखो । शास्त्र के सम्बन्ध में हमलोग और भी चर्चा करते रहेंगे ।

महिलाओं के सम्बन्ध में हम आपको बताना चाहेंगे कि हमारे यहाँ शास्त्रों के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति भगवती जगदम्बा से होती है । जगदम्बा ने सृष्टि करने के लिए

पहले ब्रह्मा को अपने संकल्प से उत्पन्न किया । ब्रह्मा ने हाथ जोड़कर पूछा कि माँ क्या आज्ञा है ? बोलीं कि सृष्टि कर । ब्रह्मा बोले कि हमको शक्ति दो । तब भगवती ने उनको सरस्वती नाम की शक्ति दी । उसके बाद ब्रह्मा ने सृष्टि करना प्रारम्भ कर दिया लेकिन वह सृष्टि नष्ट हो जाती थी । जैसे कोई घड़ा बन जाए और फूट जाए । फिर भगवती ने विष्णु को अपने संकल्प से उत्पन्न किया । विष्णु ने हाथ जोड़कर पूछा कि क्या आज्ञा है ? बोलीं कि पालन कर । शक्ति दो तो उन्होंने शक्ति दी। उसके बाद सृष्टि बढ़ती ही चली गई । आप सोचिये कि एक घर में माँ बाप रहते हैं । उनके बाप उनके बाप उनके बाप उनके बाप रहते हैं तो क्या चल जाएगा ? कुछ लोग हटते हैं तो कुछ को मौका मिलता है । बढ़ते ही जायेंगे तो रह पायेंगे क्या ? तब भगवती ने अपने संकल्प से रुद्र को उत्पन्न किया और कहा कि संहार कर । रुद्र ने कहा शक्ति दो तो उनको भी भगवती ने शक्ति दी । तब रुद्र ने पूछा कि थोक में करूँ या धीरे धीरे? तब भगवती ने कहा कि थोक में तो प्रलय के समय करना अभी फुटकर में करो । उन्होंने मृत्यु को इस काम में लगाया । मृत्यु मारती है तब कुछ लोग कम होते हैं । मृत्यु ने मारना प्रारम्भ किया । लोग कम होने लगे । हाय हाय यह क्या हो गया ? मृत्यु ने भगवती से कहा कि हम अपना इस्तीफा देना चाहते हैं । यह काम हम नहीं करेंगे । भगवती ने कहा कि यह काम तो करना ही पड़ेगा। जब मृत्यु ने अनुनय विनय किया तो भगवती ने कहा कि अब तुम्हारा नाम कोई नहीं लेगा । जब मौत आएगी तो तो लोग कहेंगे कि हार्ट अटैक हो गया । मूत्रोत्सर्ग बन्द हो गया आदि आदि रोग बतायेंगे । हिल्ले रोजी बहाने मौत । भगवान् विष्णु हिल्ले से रोजी देते हैं और मौत किसी न किसी बहाने से आती है । यह सब भगवती के द्वारा रचना हुई है । महिलाओं को हम अपमानित क्यों करेंगे । हम तो उनको मानते हैं लेकिन उनके कल्याण के लिए कोई बात कहते हैं तो यह लोग उल्टा समझाते हैं कि शंकराचार्य जी के यहाँ न जाएँ ये स्त्री विरोधी हैं । इससे आप सबको सावधान रहना चाहिए । स्त्री पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं । एक दूसरे के विरोधी नहीं है । दोनों से ही सृष्टि होती है । इसलिए हमलोगों को मिलकर रहना चाहिए और अपने धर्म के अनुसार लोक-परलोक बनाना चाहिए ।

आज इतना ही कहकर अपना प्रवचन पूर्ण करते हैं । थोड़ा सा भगवान् का नाम लीजिए।

श्रीराम जय राम जय जय राम

हर हर महादेव !

—*—

[39]

राम राम उन्तालीस

धर्मग्रन्थों में हो रही घालमेल से सावधान

समुपस्थित सज्जनों देवियों !

अभी आप ब्रह्मचारी निर्विकल्पस्वरूप से सुन रहे थे । एक गीता की टीका किसी अड़गड़ानन्द नाम के साधु ने लिखी है और उसका नाम दिया है यथार्थ गीता । इसके पहले ब्रह्माकुमारियों ने भी कहा था सच्ची गीता। वे कहती थीं कि जो दादा वीरेन्द्र राय सिन्धी ने अनाप शनाप बका है वह सच्ची गीता है और जो भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है वह झूठी गीता है । इसी तरह से यह लोग यथार्थ गीता कह रहे हैं । यथार्थ विशेषण आपने दे दिया। यथार्थ शब्द जो है वह गीता का विशेषण हो गया । विशेषण व्यावर्तक होता है । तो क्या कोई अयथार्थ गीता है जिसका खण्डन करने के लिए आप यथार्थ को ले आए हो ? आपको यह बताना पड़ेगा । वही जिसकी गीता सबको यथार्थ कर रही है उसी को कहते हैं यथार्थ है । अयथार्थ कैसे ? इनको शब्दों के प्रयोग का पता ही नहीं है । आप देखिये जैसे आपने सुना कि भगवान् श्रीकृष्ण को भगवान् ही नहीं मानते किन्तु गीता में वह प्रसंग हम आपको सुनाते हैं । जब भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्मयोग की शिक्षा दे रहे थे । अर्जुन सोच रहा था कि कौन सा नया योग है ? हमारे सनातन धर्म में परम्परा को प्रमाण माना जाता है । जो ज्ञान गुरु परम्परा से प्राप्त होता है हम उसका आदर करते हैं। कोई नये ढंग कहने लग जाए तो हम उसको नहीं मानते । गुरु भी हम उसी को मानते हैं जिसका कोई गुरु हो और गुरु का भी गुरु हो । जो पुस्तक पढ़कर मन्त्र दे रहा है वह हमारा गुरु कैसे ? मनमाना पंथ बना रहा है। जैसे धियो यो नः प्रचोदयात् की जगह साई प्रचोदयात् कर रहा है । सीता राम की जगह साई राम कह रहा है। परम्परा क्या है ? यह परम्परा है -

नारायणं पद्मभुवं वशिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्र पराशरं च.
व्यासं शुकं गौडपदं महान्तं गोविन्दयोगीन्द्रमथास्य शिष्यम् ।

श्रीशंकराचार्यमथास्य पद्मपादं च हस्तामलकं च शिष्यम्,
तं तोटकं वार्तिककारमन्यानस्मद् गुरून् सन्ततमानतोऽस्मि ।।

नारायण से प्रारम्भ होती है परम्परा । उनके शिष्य ब्रह्मा हुए । ब्रह्मा के पुत्र वशिष्ठ

हुए । उनके शिष्य शक्ति । शक्ति के पुत्र पराशर हुए । पराशर के शिष्य व्यास । व्यास के शुक और शुक के शिष्य गौड़पादाचार्य हुए। उनके शिष्य गोविन्दपादाचार्य हुए उनके शिष्य शंकराचार्य हुए । शंकराचार्य जी ने चार पीठ बनाए । उन पीठों की अविच्छिन्न पराम्परा में हमारे गुरु आए । इसीलिए हमलोग परम्परा से चला हुआ ज्ञान का आदर करते हैं । यह सनातन धर्म नया नहीं है । जो सदा से चला आ रहा है उसका नाम सनातन धर्म है । भगवान् श्रीकृष्ण जब अर्जुन को कर्मयोग का उपदेश दे रहे थे तो अर्जुन को यह शंका हो गई कि यह ज्ञान परम्परा का है या इनका अपना है । क्योंकि हमारे यहाँ परम्परा मानी जाती है । उपनिषद् जो वेद हैं। वेदों का शिरोभाग उपनिषद् कहलाता है और जब किसी विद्या का प्रसंग आता है तो वहाँ भी लिखा है ।

इति सुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे ।

यह हमने अपने पूर्वजों से सुना था ।उन्होंने हमारे लिये यह व्याख्यान किया था। व्यास जी भी परम्परा स्वीकार करते है । भगवान् ने कहा कि-

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् ।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ।।

एवं परम्परा प्राप्तमिमं राजर्षयो विदः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप।।

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् ।।

भगवान् बोले कि यह जो मैं तुम्हें सुना रहा हूँ यह सृष्टि के प्रारम्भ में विवस्वान् को सुनाया था। विवस्वान् ने मनु को बताया मनु ने इक्ष्वाकु को बताया और फिर परम्परा से राजर्षियों ने ग्रहण किया था। इधर बहुत काल से लुप्तप्राय हो गया था । वही पुरातन योग मैंने तुझको आज सुनाया है । अर्जुन के मन में सन्देह हुआ । उसने कहा कि महाराज! आप कहते हैं कि मैंने विवस्वान् को यह योग सुनाया । आपका जन्म तो अभी हुआ है । विवस्वान् का जन्म सृष्टि के प्रारम्भ में हुआ था ।

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः ।
कथमेतद् विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति ।।

आपका जन्म अभी हुआ है और विवस्वान् का जन्म पहले हुआ है । मैं कैसे मान लूँ कि आपने ही यह विवस्वान् को दिया था । भगवान् बोलते हैं कि-

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप ।।

हे अर्जुन ! मेरे तेरे अनेक जन्म हो गए । किन्तु मैं जानता हूँ तुम नहीं जानते । अर्जुन ने कहा कि जब हम दोनों का जन्म हुआ है तो क्या कारण है कि आप जानते हैं और मैं नहीं जानता । भगवान् बोले कि अर्जुन! तू यह समझ ले कि तू जीव है मैं ईश्वर हूँ । तू अल्पज्ञ है मैं सर्वज्ञ हूँ । तू परिच्छिन्न है मैं व्यापक हूँ । तू अल्प शक्ति है मैं सर्वशक्तिमान् हूँ । तू कर्म से परतन्त्र है और मैं कर्म से स्वतन्त्र हूँ । इसलिए मैं जानता हूँ और तू नहीं जानता । अर्जुन ने कहा कि ठीक है । आप ईश्वर हैं मैं मानता हूँ । मैं जीव हूँ और ईश्वर जीव के कर्मों के अनुसार फल देता है तो मेरा जन्म तो होना ठीक है पर आपका जन्म क्यों हुआ ? आप क्यों जन्म लेते हो ? आपके ऊपर कौन सा ईश्वर है ? भगवान् बोले-

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ।।

मैं अजन्मा अविनाशी हूँ । सब प्राणियों का ईश्वर हूँ मेरा जन्म तो नहीं होना चाहिए। लेकिन मैं अपनी स्वरूपभूता प्रकृति अपनी योगमाया से अवतार धारण करता हूँ । मैं कर्म परतन्त्र नहीं हूं । जो लोग कर्म परतन्त्र होते हैं वे माता के गर्भ में आकर नौ महीने के बाद उत्पन्न होते हैं और मैं अपनी इच्छा से जब चाहूं उसी समय प्रकट हो सकता हूँ और अपनी इच्छा से बालक बन जाता हूँ । जब भगवान् ने सम्भवात्ममायया कहा तो अर्जुन ने पूछा कि आप क्यों अवतार लेते हो ? तब भगवान् ने अपने अवतार का प्रयोजन बताया।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ।।

धर्म तो पहले से ही रहा है । कभी कभी उस धर्म में ग्लानि हो जाती है । पाखण्डी खड़े हो जाते हैं और वह धर्मशास्त्रों के अर्थ का अनर्थ करने लगते हैं इसलिए -

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम् ।।

जब धर्म की ग्लानि होती है । अधर्म का उत्थान होता है तब धर्म की स्थापना के लिए अवतार धारण करता हूँ । यह गीता में स्पष्ट रूप से लिखा है लेकिन यह यथार्थ

गीता लेकर आ रहे । आखिर इनका उद्देश्य क्या है? ये लोगों को भ्रमित करने धर्म के मार्ग से हटाकर गलत रास्ते पर लाने के लिए हो रहा है ।

अभी आपने सुना कि बहुत से लोग हमारे बीच में ही आकर हमारे धर्म का नाश कर रहे हैं । मुसलमान आएगा तो हम देखेंगे कि दाढ़ी लम्बी है और इसकी बोली में उर्दू शब्द ज्यादा है । अलग ही ढंग से बोलता है तो हम सतर्क हो जाते हैं पर जब वह साईं बनकर आ जाता है और उसकी मूर्ति हमारे मन्दिरों में रख दी जाती हैं तो हम भ्रम में पड़ जाते हैं कि हो सकता है कि यह भी हमारे भगवान् हैं । यह सब षड्यन्त्र हो रहा है हमारे साथ। ये लोग हमारे भीतर घुसकर हमारा नाश कर रहे हैं । आप देखिये कि हरिद्वार का जो कुम्भ होने जा रहा था उसमें ब्रह्माकुमारियों के कैम्प में उन्होंने एक विशाल कल्पित मूर्ति बनाई और कहा कि कुम्भादेव का दर्शन करो। कुम्भा देव देखा है क्या कभी ? लोग गए । क्योंकि लोगों के मन में उत्सुकता जागृत हो गई । वहाँ जाकर लुटा महसूस किये पर चले तो गये ही ।

एक बार क्या हुआ कि किसी मेले में कैम्प लगा और उसमें बोर्ड लगा दिया गया कि हमारे यहाँ आदमी की जात दिखाई जाती है । आदमी की जात । भारत के लोग कुतूहलप्रिय होते हैं उन्हें टिकट ही तो खरीदनी थी। खरीदकर भीतर गए तो फाटक बन्द हो गया । बैठा दिया गया और कहा कि हम आदमी की जात दिखाते हैं आदमी की जात दिखाते हैं । सब लोग ध्यान से देखने के लिए उत्सुक रहे । थोड़ी देर में वह रोटी लेकर आया कहा कि यह आदमी की जात है । अब लोग वहाँ से निकले तो बाहर के लोगों ने पूछा कि आपने देखा क्या तो कहने लगे कि हाँ देखा । आप भी देख लो । खुद तो बेवकूफ बने और दूसरों को भी नष्ट कर देते हैं । ऐसे लोग हैं । इनसे अपने लोगों को बचने की आवश्यकता है ।

अडगडानन्द को शुरु से लेकर अन्त तक खण्डन लिख रहे हैं निर्विकल्पस्वरूप । खण्डन लिख जाए तो आप लोगों को छपवाकर उसको बाँट देंगे । क्योंकि इस तरह से सनातन धर्म को नष्ट करना । अभी आप लोगों ने सुना कि बौद्ध लोग शंकराचार्य बन कर आ रहे हैं । शंकराचार्य की महिमा है तो इनको सुनो । हम ही शंकराचार्य हैं । ये अपने को शंकराचार्य कहते हैं ।ये कहते हैं कि स्वामी करपात्री जी ने स्वामी महेश्वरानन्द जी को बनाया । उन्होंने शंकरानन्द को बनाया । उसके बाद हम बन गए । देखिये करपात्री जी महाराज धर्मसम्राट् कहलाते थे । उन्होंने सनातन धर्म के लिए बहुत बडा काम किया। धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो । प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो यह उन्हीं का बनाया हुआ नारा है । उन्होंने धर्म शास्त्रों का अध्ययन किया

और जब ज्योतिष्पीठ पर विवाद खड़ा हुआ तो उन्होंने नकली लोगों को अलग करके स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी को ज्योतिर्मठ का शंकराचार्य नियुक्त कर दिया । काशी विद्वत परिषद् बुलाकर । ये लोग जो थे शान्तानन्द आदि की परम्परा में अभी के वर्तमान सज्जन हैं । आप देखिये कि जब स्वामी करपात्री जी महाराज ब्रह्मलीन हुए तो सारे भारत में शोक छा गया । माघ मास की पूर्णिमा तिथि थी । काशी में उनका देहान्त हो गया था तो माघ मेले के जितने भी कैम्प थे सब बन्द हो गए लेकिन इनका कैम्प लगा रहा । जिन्होंने करपात्री जी महाराज के ब्रह्मलीन होने के दिन को नहीं मनाया । उनके साथ ये बैठते हैं और कहते हैं कि हमें करपात्री जी ने बनाया। उनका नाम भी लेने के ये लोग अधिकारी नहीं है । इन्हीं लोगों ने आज विरोध कर रहे हैं । इन्होंने ही मोदी लाओ और देश बचाओ का यज्ञ करवाया था । जब उसने इनकी नहीं सुनी तो विरोध करने बैठ गए। बात यह है कि हमलोग अच्छी तरह समझ रहे हैं और जनता को समझायेंगे । लडाई लडने हम नहीं जाते लेकिन सच्ची बात तो हम कहते ही रहेंगे ।

गीता हमारे यहाँ प्रमाण है । क्यों प्रमाण है ? भगवान् ने कहा है इसलिए प्रमाण हो ऐसी बात नहीं है । इसका मूल उपनिषद् और वेद है । इसलिये प्रमाण है । ब्रह्मसूत्र में आया है कि गीता के वचनों को प्रमाण रूप में स्वीकार किया जाता है । स्मृति है यह। श्रुति स्मृति के अनुकूल होती है । रघुवंश में आया है-

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुरपांसुलानां धुरि कीर्तनीया ।
मार्गं मनुष्येश्वर धर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत् ।।

जब राजा दिलीप गौसेवा के लिये चलते थे तो उनकी पत्नी सुदक्षिणा उसी प्रकार से उनके पीछे चलती थी जैसे श्रुति के पीछे स्मृति चलती है । गीता का प्रामाण्य उपनिषद् है । भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है केवल इसलिये प्रमाण नहीं है । उसके सिद्धान्त को यथार्थ रूप में जो अर्थ किया है उसी को माना जाएगा । जो लोग उसके उल्टे पुल्टे अर्थ कर रहे हैं उनसे हमको सावधान रहना चाहिए ।ये कहते हैं कि श्रीकृष्ण का नाम गीता के पहले कोई नहीं जानता था लेकिन हमारे उपनिषद् अनादि वेद हैं । गोपालतापनीयोपनिषद् में भगवान् श्रीकृष्ण का नाम आता है । आप कैसे कहते हैं कि कोई नहीं जानता था । इन लोगों से हमको सावधान रहना है । बस इतना ही कहकर आज का प्रवचन पूर्ण करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

—*—

[40]

राम राम चालीस

लोग संसार-बगीचा देखते हैं पर उसके रचयिता को नहीं

समुपस्थित विद्वद्वृन्द! सज्जनो ! देवियो !

जब कोई व्यक्ति घर से यात्रा के लिए निकलता है तो उसका कोई निश्चय होता है कि कहाँ जाना है । यदि वह निकले तो पर उसको पता न हो कि कहाँ जाना है तो वह भटक जाएगा । इसी प्रकार देश-देशान्तर की यात्रा में जैसे किसी उद्देश्य की आवश्यकता है गन्तव्य के निश्चय की आवश्यकता है उसी प्रकार हमारा जो मानव जीवन है यह काल से कालान्तर की यात्रा है । मनुष्य एक समय जन्म लेता है और दूसरे समय में चला जाता है । इसके बीच में वह जो कुछ भी अपना जीवन बिताता है वह उसकी काल से कालान्तर की यात्रा है । प्रत्येक प्राणी को यह सोचना है कि हम इस संसार में क्यों आए हैं ? और हमको कहाँ जाना है ? जो व्यक्ति इस बात पर विचार नहीं करता वह भटकता रह जाता है । उसको पता ही नहीं लगता कि हमको कहॉ जाना है ।

वास्तव में मनुष्य को कहाँ जाना है ? सीधी सी बात है कि जहाँ से वह आया है वहीं उसको जाना है । यह परमात्मा के काम से आया है और उस कार्य को पूरा कर परमात्मा के पास ही उसको जाना है । परमात्मा के पास कैसे लौटें ? इसके लिए भी हम दृष्टान्त दिया करते हैं कि एक राजा था । उस राजा ने अपने राज्य में एक बहुत बड़ा बगीचा बनाया । लम्बे चौड़े क्षेत्र में दीवार लगाकर उसमें अनेकों प्रकार के वृक्ष लगाए । सरोवर बनाए । और पशु पक्षियों को पाला । सरोवर में अनेकों प्रकार की मछलियों को पाला और बड़े सुन्दर-सुन्दर फलदार वृक्ष लगाए । ऐसा सुन्दर बगीचा उस राजा ने बनाया। उस राजा की संतान एकमात्र कन्या थी । कोई पुत्र नहीं था । उसने यह घोषणा की कि बगीचे के भीतर हम रहेंगे । जो सबेरे से शाम तक हमको इसमें से खोज लेगा हम अपनी कन्या उससे व्याह देंगे और अपना सारा राज्य भी उसको सौंप देंगे । लाखों नौजवान उस बगीचे के सामने दरवाजे पर खड़े हो गए कि हम राजा को खोजेंगे और राजकन्या को प्राप्त करेंगे और राज्य भी पा लेंगे। निर्धारित समय पर फाटक खुला । खुलते ही जैसे ही वे सब घुसे ऐसा अद्‌भुत बगीचा था जिसने देखा वही उसमें विश्राम

करने लगा । कुछ लोग सरोवर में मछलियों को देखने लगे । पक्षियों की शोभा को निहारने लगे । कुछ फलों को खाने लगे । कुछ लोगों ने देखा कि छाया है यहाँ हम थोड़ा विश्राम कर लें तो वे लोग विश्राम करने लगे। लोगों ने कहा कि राजा को ही तो खोजना है उन्होंने कहा कि अभी तो पूरा दिन पड़ा है कभी भी खोज लेंगे ।

लेकिन एक व्यक्ति था जिसने सोचा कि पहले राजा को खोज लें तो बगीचा हमारा ही हो जाएगा और हम रोज ही देखा करेंगे । उसने सब तरफ से अपने मन को हटाया और राजा को खोजने लगा । खोजते-खोजते उसने राजा को देख लिया । पा लिया । शाम हो गई । सब लोग विश्राम ही करते रह गए । तमाशा ही देखते रह गए। बगीचे की शोभा देखने में समय गंवा देने वाले सबको सिपाहियों ने पकड-पकड कर बाहर कर दिया। पर उस व्यक्ति को राजकन्या मिल गई और राज्य भी मिल गया जिसने बगीचे की शोभा को छोडकर राजा को खोजने का प्रयत्न किया था। यह तो एक दृष्टान्त है । इसका दार्ष्टान्त यह है कि यह संसार परमात्मा का बनाया हुआ बगीचा है । परमात्मा ने संसार की रचना की है । अद्‌भुत संसार बनाया है और यह कहा है कि इस संसार रूपी बगीचे में जो हमको खोज लेगा उसको हम अपनी मुक्ति रूपी बेटी दे देंगे । और उसको सारे संसार का अधिष्ठान बना देंगे । लोग इस संसार में आते हैं । संसार को देखते हैं पर संसार के बनने वाले को नहीं खोजते । इसलिए उपनिषदों में लिखा है कि

आराममस्य पश्यन्ति न तं पश्यन्ति केचन ।

आश्चर्य की बात यही है कि लोग इस अद्भुत बगीचे को तो देखते हैं पर इसको उत्पन्न करने वाले को नहीं देखते हैं । जो उसको देख लेता है वह परमात्मा का स्वयं ही स्वरूप बन जाता है और मुक्ति रूपी कन्या को वह प्राप्त कर लेता है । यही हमारा आपका जीवन लक्ष्य होना चाहिए कि हम इस संसार में आकर परमात्मा की खोज करें । कैसे खोज करोगे ? आप देखते होंगे कि बहुत से लोग भ्रम में डाल देते हैं । एक चैनल में नाटक चलाते हैं कि ऊपर वाला देख रहा है । कार्यक्रम दिखाते हैं । वे लोग कहते हैं कि परमात्मा ऊपर है । ऊपर का मतलब तो नीचे की अपेक्षा ऊपर है । और ऊपर की अपेक्षा नीचे है । सच पूछा जाए तो परमात्मा ऊपर भी है। नीचे भी है । आजू भी है । बाजू भी है । भीतर भी है और बाहर भी है । सब जगह है । परमात्मा सर्वत्र है। केवल ऊपर नहीं है वह हमारे हृदय में है । यह ऊपर वाला तो मुसलमानों की बात है । मुसलमान कहते हैं कि उनका खुदा सातवें आसमान पर हैं । हमारे शास्त्र यह नहीं कहते । हमारे शास्त्रों में तो लिखा है कि -

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।

ईश्वर सब प्राणियों के हृदय में रहता है । आपको एक कथा सुनाएँ । कहते हैं कि मौलवी, पादरी और पण्डित तीनों एक बार एक जगह बैठकर आपस में बहस कर रहे थे । मुसलमान कहता था हमारा खुदा बड़ा, पादरी कहता था कि हमारा गॉड बड़ा और पण्डित कहता कि भगवान् बड़ा । इतने में क्या हुआ कि एक व्यक्ति ने खीर से भरा हुआ पात्र उनके बीच लाकर रख दिया और कहा कि आप लोग इसको खा लीजिए । पात्र एक था और खाने वाले तीन थे । उन तीनों ने तय किया कि ऐसा करो कि सो जाओ । जिसको अच्छा स्वप्न आएगा वही खीर खाएगा । पादरी को, मौलाना को तो नींद आ गई । पण्डित उठा और सारी खीर खा गया और सो गया । अब जब वे दोनों उठे तो आपस में पूछा कि अपना अपना स्वप्न बताइए । मुसलमान बोला कि हम सातवें आसमान में पहुँच गए थे । वहाँ मोहम्मद साहब को देखा और हमने उनसे बातचीत की । पादरी बोला कि हम हेवेन में चले गए थे । हमने वहाँ ईसा मसीह से मुलाकात की । पण्डित से पूछा तो उसने कहा कि हम तो यहीं थे । हनुमान जी आ गए और बोले कि खीर खा । हमको खाना पड़ा । उन दोनों ने कहा कि हमको क्यों नहीं बुलाया ? तो पण्डित ने कहा कि तुम तो सातवें आसमान में थे । पादरी ने कहा तो बोला कि तुम तो हेवेन में थे । कहानी भले कल्पित हो लेकिन ईश्वर के सम्बन्ध में इन तीनों के सिद्धान्त प्रकट कर देती है । कहने का मतलब यह है कि हमारे परमात्मा हेवन में या कहीं और सातवें आसमान में नहीं हैं। वह हमारे भीतर हैं । उनको हमें भीतर ही खोजना है । यही मिलेंगे । और उनको खोजने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी बहिर्मुखता को छोड़कर अन्तर्मुखता की ओर चलें । हम अपने भीतर हैं । हम कौन हैं यह समझें।

अपने आपको जानने के लिए गुरु का आश्रय लेना पड़ता है । आप समझिये कि उस परमात्मा को जो घट-घट में व्याप्त है । बाहर है । भीतर है । उस परमात्मा को जानने के लिए सबसे पहले अपने अन्तःकरण को शुद्ध बनाना पड़ेगा। जिसका मन शुद्ध नहीं है वह व्यक्ति परमात्मा को प्राप्त करने की इच्छा ही नहीं करेगा। इसलिए हमारे यहाँ माना गया है कि मन को शुद्ध करने के लिए प्रयास करना चाहिये । अगर आपके शरीर में मैल लग जाए तो नहाने से आपका शरीर शुद्ध हो जाएगा । और अगर आपके कपड़े में मैल लग जाए तो साबुन से शुद्ध हो जाएगा । पर अगर आपके मन में मैल है तो वह मैल न पानी से शुद्ध होगा न साबुन से शुद्ध होगा। वह धर्म से शुद्ध होगा । धर्म की साबुन लगानी पड़ेगी ।

धर्म भी दो प्रकार का होता है । एक सकाम धर्म और दूसरा निष्काम धर्म । आजकल लोग धर्म के तत्त्व को जानते ही नहीं हैं । वे यह समझते हैं कि कामनाओं की पूर्ति का साधन धर्म है । इसलिए अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए वे इधर उधर भटकते हैं। कई निर्मल बाबा के यहाँ जाते हैं । कई साईं के यहाँ जाते हैं । कई शनि के यहाँ जाते हैं । आप देखिये कि आप वहाँ जाकर क्या प्राप्त करेंगे ? वहाँ जाकर आप अपनी इच्छा की पूर्ति करेंगे। इच्छा की पूर्ति तो होती ही रहती है । इच्छाओं का कोई अन्त नहीं है । आप देखिये कि अगर आपको एक वस्तु प्राप्त है तो तीन की इच्छाएँ होंगी । तीन वस्तु प्राप्त हैं तो चार इच्छाएँ होंगी । बढते बढते ७५ वस्तु प्राप्त होंगी तो सौ इच्छाएँ होंगी । इच्छाओं का कोई अन्त नहीं है । किसी महात्मा ने कहा है-

निःस्वो वष्टि शतं शती दशशतं लक्षं सहस्राधिपः लक्षेशः क्षितिपालतां क्षितिपतिश्चक्रेशतां वाञ्छति।

चक्रेशः पुनरिन्द्रतां सुरपतिः ब्रह्मंपदं वाञ्छति ब्रह्मा शैवपदं शिवो हरिपदं चाशावधिं को गतः ।।

जिसके पास कुछ नहीं है वह चाहता है कि सौ रुपया हो जाए तो अच्छा हो । सौ रुपया मिल जाए तो सोचता है कि हजार मिल जाये । हजार मिल जाए तो सोचता है कि लाख मिल जाए । लाख मिल जाए तो सोचता है कि हमारे पास करोड हो जाए । फिर सोचता है कि हम कहीं के राजा हो जाएँ । प्रधानमन्त्री बन जाएँ । इस तरह से बनते-बनते वह सोचता है कि हम इन्द्र बन जाएँ । इन्द्र बनने के बाद सोचता है कि ब्रह्मा बन जाए। ब्रह्मा भी बन जाए तो सोचता है कि हम विष्णु बन जाएँ । फिर सोचता है कि हम शंकर बन जाए । तृष्णा का कोई अन्त नहीं है । चाहे कोई कितना ही धनवान् हो अपने को छोटा ही समझता है । इसी तरह से कामनाओं का भी कोई अन्त नहीं है । जितना भोग भोगते जाओगे उनकी तृष्णा उतनी ही बढती चली जाएगी ।

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति । हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।

भोग करते-करते इन्द्रियों की कुशलता बढ जाती है । एक व्यक्ति नर्म स्पर्श का प्रेमी था । वह इतना सूक्ष्म हो गया कि उसे बाल भी गडने लगे । खाने का शौक रखने वालों को तरह-तरह की चीजें खाने के बाद भी तृप्ति नहीं होती है । शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध इनके भोग से मनुष्य को कभी तृप्ति नहीं होगी । और एक समय के बाद ये इन्द्रियाँ जवाब देने लग जाएँगी । अगर आपको विषय का भोग करना हो तो अनुकूल विषय खोजेंगे आप और हमेशा वह मिलेगा नहीं । और मिल भी जाएँ तो आपकी इन्द्रियों को अनुकूल होना

चाहिए जिससे कि आप उनका भोग कर सकें। पहले अपने घरों में जब कोई मेहमान आता था। कोई महात्मा आते थे कोई श्राद्ध का मौका आता था तो पक्का भोजन बनता था। लोग उनको खिलाकर खुद खाते थे। अब रोज होटल में जाकर पक्का खा रहे हो तो डायबिटीज नहीं होगी तो क्या होगी ? यही बात है आप रोज-रोज पकवान का सेवन करेंगे तो आपका पेट जवाब दे देगा। जो चीज आपको अच्छी लगती है वही गोबर जैसी लगने लगेगी। इसलिए सच्चा सुख इन सबमें नहीं है। सच्चा सुख परमात्मा के स्वरूप में ही है। परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग इसी से निकलता है कि पहले हम अपने को सबल बनायें। हम धर्म का पालन करें और कामना छोड़ दें। जो आपकी समस्याएँ हैं उनको भी आप भगवान् के चरणों में लगा दें। भगवान् हमारे सभी सुख दुःख को जानते हैं। जिसमें हमारा हित होगा वह उसे अपने आप करेंगे। हमें कहने की क्या आवश्यकता है?

सुहृदः सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ।

जब हम परमात्मा को अपना सुहृद् मान लेते हैं तब हमें शान्ति मिलती है। सुहृद उसको कहते हैं जो बिना किसी इच्छा के हमारा हित करे और यह केवल भगवान् ही करते हैं। हम कर्म करें और उसका फल भगवान् को अर्पित कर दें। बहुत से लोग प्रश्न करते हैं कि यदि हम भगवान् को अर्पित कर देंगे तो हमारे पास क्या बचेगा? एकादशी का व्रत हम करें, उपवास हम करें और फल अर्पित कर दें भगवान् को तो हमें क्या मिला? पर आप समझिये जो मनुष्य भगवान् को अर्पण करता है वह घाटे में नहीं रहता। भगवान् उसको कई गुना बनाकर उसको लौटा देते हैं। इसलिए चिन्ता नहीं करनी चाहिए। यदि कर्म का फल आप भगवान् को अर्पित करते हैं तो वह आपको अनन्त गुणा होकर मिलेगा और आपका मन परमात्मा से विलग भी न होगा। इसलिए हमारे यहाँ गीता में निष्काम कर्म करने को कहा गया है। अनेकों पंथ हैं। अनेकों मत हैं। पर सनातन धर्म का कोई मुकाबला नहीं कर सकता। हमारे यहाँ बताया गया है कि परोपकार करो पर उसका अभिमान मत करो। निष्काम कर्म करोगे तो मन शुद्ध होगा। तब न साईं अच्छा लगेगा न शनि अच्छा लगेगा न गाने बजाने वाले नट-नाटक अच्छे लगेंगे। चाहे वह मैले कुचेले कपडे पहने हो पैरों में जूते न हो जिसमें ज्ञान हो भक्ति हो उसकी कथा अच्छी लगेगी। यहाँ जब लोग आते हैं तो रास लीला वाले तो अब आ गए हैं। पहले यहॉ माघ मेले में सन्तों का मेला लगता है। यहाँ सन्तों का उपदेश सुनने को मिलता था। यहाँ स्नान के लिए बडे बडे महात्मा आते हैं उनका सत्संग करने से ज्ञान के चक्षु खुल जायेंगे। जीवन का रहस्य समझ में आएगा। इसलिए यहाँ आकर महात्माओं के पास जाकर ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। भगवान् की कथा का श्रवण करना चाहिए।

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न मिलहि सोउ गावहि वेद पुराण ।।

सन्त समागम से बढकर कोई और दूसरा लाभ नहीं है और वह सन्त समागम बिना भगवान् की कृपा के नहीं मिलता है। बन्धुओं यदि आप सन्त समागम में जायेंगे तो सन्त आपको यथार्थ बात बतायेंगे। बतायेंगे कि अयोध्या में राम मन्दिर कहाँ बनना चाहिए। नेता तो वोट लेने के लिए नारा देते हैं। हमलोग तो चाहते हैं कि रामजन्मभूमि में राम का विराट मन्दिर बने। राम लला अर्थात् बालकराम की मूर्ति स्थापित की जाए। कौशल्या की गोद में विराजमान राम लला की मूर्ति स्थापित हो।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[41]

राम राम इकतालीस

जन्मान्तरीय पुण्यपुंजों के उदय से मिलती है 'कथा'

समुपस्थित देवियों, सज्जनो !

जन्मान्तरे यदा पुण्यं तदा भागवतं लभेत् ।

जब प्राणी के जन्म-जन्मान्तर युग युगान्तर कल्प-कल्पान्तर के पुण्यों का उदय होता है तभी भागवत कथा के श्रवण का सौभाग्य मिलता है । यह भागवत भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का दुःख मिटाने और संसार को भगवान् श्रीकृष्ण की भक्ति प्रदान करके परमानन्द दान करने के लिए श्री शुकदेव जी महाराज ने राजा परीक्षित को सुनाया था। प्रारम्भ में उन्हीं की वन्दना की गई है ।

यं प्रव्रजन्तमनुपेतमपेतकृत्यं द्वैपायनो विरहकातर आजुहाव ।
पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदुस्तं सर्वभूतहृदयं मुनिमानतोऽस्मि ।।

श्री शुकदेव जी महाराज अपनी माता के उदर से निकलते ही संन्यासी हो गए । इसके पहले की कुछ कथा है । एक बार पार्वती जी ने शंकरजी से पूछा कि आपके गले में जो मुण्ड की माला है उसमें किसके मुण्ड है ? भगवान् बोले कि तुम्हारे ही हैं । जब जब तुम मरती हो हम तुम्हारे मुण्ड की माला बनाकर पहन लेते हैं । पार्वती बोली कि यह क्या बात हुई ? आप तो एक ही बने हैं और मेरे कई जन्म हो गए । ऐसा कोई मार्ग बताइए कि जिससे हमारा भी जन्म न हो । अर्थात् न मृत्यु हो और न जन्म हो । शंकर जी बोले इसका उपाय यह है कि तुम अमर कथा सुन लो । पार्वती जी ने कहा कि सुनाइए बड़ी कृपा होगी आपकी । भगवान् शंकर ने यह शर्त लगाई कि अमर कथा तुम ध्यान से सुनोगी और बीच बीच में हुंकारी भरती जाओगी । पार्वती जी ने इस शर्त को स्वीकार किया। भगवान् शंकर ने जितने भी जीव जन्तु थे कैलाश के सबको त्रिशूल के भय से वहाँ से भगा दिया । कोई भी वहाँ नहीं रह गया और शंकर जी पार्वती जी को कथा सुनाने लगे । अमर कथा ।

संयोग की बात है एक तोते का अण्डा जो कदाचित् बीच से गल गया था या कुछ भी हो उसको शंकर जी ने छोड़ दिया था। अमर कथा होने लगी तो वह अण्डा पूरा हो गया। उसमें से पक्षी निकल आया। तोता पक्षी। तोते की आदत होती है नकल करने की। पार्वती जी हूं हूं करती थीं तो वह भी हूं हूं करने करने लगा। इतने में पार्वती जी को नींद आ गई। भगवान् शंकर तो ध्यान में मग्न होकर अमर कथा सुनाये जा रहे थे। पक्षी हूं हूं करता जा रहा था। उन्होंने समझा कि पार्वती जी हुंकारी भर रही हैं। जब कथा पूरी हो गई तो भगवान् शंकर ने देखा कि पार्वती जी तो सो रही हैं। उन्होंने उनको उठाया पूछा कि सो गई थी क्या ? बोली कि हाँ हम सो गए थे। पूछा कि हुंकारी कौन भर रहा था ? बोलीं कि हमें पता नहीं। शंकर जी बोले कि लगता है किसी और ने सुन लिया। दौड़े उसको खोजने के लिए जिसने अमर कथा सुन ली। घोंसले की तरफ शंकर गए वह पक्षी फुर्र से उड़ा। अब भगवान् शंकर उसके पीछे पीछे दौड़ने लगे। उड़ते-उड़ते व्यास जी की पत्नी शैब्या थी। उन्होंने जम्हाई ली। वह स्नान कर रही थीं उनके पेट में पक्षी चला गया और वहाँ उनके गर्भ का बालक बन गया। अब भगवान् सोचते हैं कि पेट में चला गया। जब जन्म लेगा तब देखेंगे। चले गए और शुकदेव जी शंकर जी के डर से पेट में ही रह गए। सोलह साल तक और कुछ भक्तों का यह कथन है कि वह सोलह साल तक इसीलिए पेट में रह गए क्योंकि गर्भावस्था में प्राणी को ज्ञान रहता है लेकिन गर्भ से निकलने के बाद भूल जाता है।

भागवत में कपिल देव जी ने बतलाया है कि पाँचवे महीने में जीव को सौ जन्म का स्मरण होता है और उस समय वह सोचता है कि हमारे कितने जन्म हो गए। हमने अपना जीवन व्यर्थ गँवा दिया। अब भगवान् से प्रार्थना है कि हमको सकुशल माँ के पेट से निकाल दें। सिवाय भगवान् के भजन के हम कुछ नहीं करेंगे। भगवान् भी सोचते हैं कि ठीक है इसको मौका दिया जाए। नौवाँ महीना पूरा होते ही प्रसव वायु के वेग से वह बालक बाहर हो जाता है। बाहर होते ही जब उसको संसार की हवा लगती है तो वह अपने सौ जन्मों को भूल जाता है। पहले तो उसने कहा था कि यदि हम माता के गर्भ से निकलेंगे तो भगवान् का भजन छोड़कर और कुछ नहीं करेंगे लेकिन संसार की हवा लगते ही कहने लगता है - काँ कहा। मैंने कब कहा ? कहां कहा। शुकदेव जी इसबात को जानते थे कि बाहर होते ही माया का वेग चलेगा। हमारी बुद्धि शायद विचलित हो जाए इसलिए माँ के पेट में ही रहो। व्यास जी ने कहा कि अरे बालक ! माँ के उदर से बाहर आ। तो शुकदेव जी बोले कि पिताजी ! एक शर्त पर हम बाहर आ सकते हैं। यदि शंकर जी हमको दीक्षा दें। मन्त्रोपदेश दें तो हम बाहर आ सकते हैं। उनका दो मतलब था

कि शंकर जी के मुख से गुरुमुख हो जायेंगे तो माया हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगी और दूसरी यह कि वे नाराज हैं तो जब चेला ही बन जायेंगे तो नाराजगी खत्म हो जाएगी। व्यास जी ने भगवान् शंकर से प्रार्थना की । भगवान् शंकर प्रसन्न हुए उन्होंने कहा कि ठीक है । तुम्हारे बालक को पेट से बाहर आने दो । मैं उसको उपदेश दे दूँगा । शुकदेव जी जैसे ही माँ के पेट से बाहर आए सोलह वर्ष की अवस्था । श्यामल श्रीअंग, विशाल नेत्र, घुँघराली अलकें, सुन्दर भौहें, सुन्दर नासिका, अरुण अधर, सुन्दर ठोड़ी, शंख के समान गर्दन, उच्च वक्षःस्थल, विशाल बाहु, लाल हथेलियाँ और दिगम्बर सुन्दर स्वरूप । भगवान् शुकदेव जी प्रकट हुए। शंकर जी ने कान में उनको मन्त्र दिया । प्रैष मन्त्र दे दिया ।

यं प्रव्रजन्तमनुपेतमपेतकृत्यं द्वैपायनो विरहकातर आजुहाव ।
पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदुस्तं सर्वभूतहृदयं मुनिमानतोऽस्मि ।।

तुरन्त ही वैराग्य हो गया । वैराग्य होते ही वन की ओर चले । लिखा है उपनिषदों में कि- **महत्पदं ज्ञाते वृक्षमूले वसेत् ।** महत् पद को जानकर वृक्ष के मूल में चला जाए । वृक्षमूले माने जंगल में कोई अच्छे पेड़ के नीचे बैठकर तपस्या करे । और दूसरा अर्थ है वृक्ष मूले का कि हमारे वेद ही वृक्ष हैं इनका जो मूल है वह ॐकार है। उस ॐकार में निवास करे । ॐकार को अपनी आत्मा समझे । संन्यासियों का दण्ड ॐकाररूप है। साढ़े तीन हाथ इसका है और ॐकार में भी साढ़े तीन मात्रा होती है । अकार उकार मकार और अर्धमात्रा । ॐकार में भी यही है । उसी को आत्मा समझे । शुकदेव जी चले। अब व्यास जी को मोह हो गया कि एक बेटे ने जन्म लिया और हाय हाय वह भी संन्यासी होकर वन जा रहा है । हा पुत्र! हा पुत्र! कहाँ जा रहे हो ? कहते हुये पीछे लग गये । पुत्र के विरह में कातर होकर व्यास जी ने पुकारा । लौटकर नहीं देखा शुकदेव जी ने। घोर वन में चले गए तो समस्त प्राणियों को आत्मा समझने वाले शुकदेव जी की ओर से उन वृक्षों ने उत्तर दिया कि हा पुत्र ! अर्थात् जो अज्ञानी है वही पुत्र होता है । भले ही तुम्हारी आयु बड़ी हो लेकिन इस बालक में मोह नहीं है इसलिए यह पिता है और तुम उसके पुत्र हो ।

तं सर्वभूतहृदयं मुनिमानतोस्मि ।

समस्त प्राणियों के हृदय स्वरूप मुनि श्री शुकदेव जी हैं साक्षात् ब्रह्म। उनको हम नमस्कार करते हैं। अब उसके पश्चात् आपने सुना होगा कि नारद जी दक्षिण में आए, पुष्कर प्रयाग सेतुबन्धन भिन्न भिन्न तीर्थों में गए लेकिन कहीं उनको शान्ति नहीं मिली ।

उन्होंने देखा कि अधर्म का मित्र कलि ने पृथ्वी को आक्रान्त कर रखा है। कहाँ जाएँ ? तो वृन्दावन आए ।

यत्र लीला हरेरभूत् ।

जहाँ भगवान् की लीलाएँ हुईं थीं वहाँ उन्होंने देखा कि ओह हो ! एक तरुणी सुन्दरी पवित्र हृदया नारी अपनी आँखों से आँसू बहा रही है और दो बूढ़े जिनके बाल दाढ़ी सफेद हैं और शरीर की हड्डियाँ दिख रही हैं। नरकंकाल जैसे हैं, वे दीर्घ श्वाँस लेते हुए पड़े थे। वह तरुणी रो रही है और कई सुन्दरी स्त्रियाँ उसकी सेवा कर रही हैं । कोई पंखा झल रही है, कोई जल लेकर खड़ी है, कोई छाया कर रही है । नारद जी वहाँ पहुँचे । उन्होंने पूछा कि आप कौन हैं ? यहाँ कैसे बैठी हैं ? और चिन्ता क्या है ? उस तरुणी नारी ने कहा -

अहं भक्तिरिति ख्याता इमौ मे तनयौ मतौ ।
ज्ञानवैराग्यनामानौ कालयोगेन जर्जरौ ।।

उत्पन्ना द्रविडे साहं वृद्धिं कर्णाटके गता ।
क्वचित् क्वचिन्महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतां गता ।।

मेरा नाम भक्ति है । मेरा जन्म द्रविड देशमें हुआ है । इसका अर्थ यह निकला कि द्रविड़ नाम की कोई अलग से जाति नहीं है । द्रविड़ एक देश है । उसमें जो रहता है वह द्राविड़ कहलाता है । लोगों ने यह भ्रम पैदा कर दिया है कि द्रविड़ अलग हैं और आर्य अलग हैं । दोनों भिन्न भिन्न जातियाँ हैं । ऐसा कुछ नहीं है । भक्ति का जन्म द्रविड़ देश में होता है और आप देखिये कि हमलोगों के मन में --हम सनातनधर्मी हैं --हमलोगों के मन में ऐसा कोई भेद-भाव नहीं है कि जो द्रविड़ देश में जन्मे वह नीचा होता है । भगवान् आदि शंकराचार्य केरल में जन्मे जो हमारे आचार्य हैं । रामानुजाचार्य निम्बार्काचार्य वल्लभाचार्य ये भी दक्षिण भारत में जन्मे । ऐसे अनेकों भक्त और अभी जो कथा आएगी जो हम आपको सुनाने जा रहे हैं गोकर्ण की कथा वहाँ भी **तुंगभद्रा नदी तीरे** कहा है । तुंगभद्रा नदी के तीर में आत्मदेव ब्राह्मण रहते थे । वे भी दक्षिण भारत के थे । तुंगा नदी श्रृंगेरी पीठ के सामने से बहती है । दक्षिण में है वह भी । यह सब भ्रम पैदा कर रहे हैं लोग । वास्तव में द्रविड़ एक देश है । उस देश में भक्ति का जन्म हुआ । **उत्पन्ना द्रविड़े साहं** और कर्णाटक प्रदेश में जाकर मैं थोड़ी बढ़ी और महाराष्ट्र में मैंने विस्तार लिया और गुर्जर देश में मैं जीर्ण हो गई। कुछ लोग कहते हैं कि पाखण्डी खड़ा हो गया वहाँ।

उन्होंने भक्ति के अंगों को खण्डित कर दिया इसलिए जीर्ण हो गई । यह भी अर्थ है कि और प्रदेशों में थोड़ी थोड़ी रही और गुजरात में बुढ़ापे तक रही । **गुर्जरे जीर्णतां गताः** लेकिन वहाँ जीर्ण शीर्ण अवस्था में तीनों जीर्ण हो गए । भक्ति भी बूढ़ी , ज्ञान वैराग्य भी बूढ़े लाठी टेकते-टेकते वृन्दावन आए । व्रज भूमि में आते ही आते भक्ति पुनः तरुणी हो गई लेकिन भक्ति के तरुणी हो जाने पर भी ज्ञान और वैराग्य का कोई ग्राहक नहीं था वहाँ। वे बेचारे वैसे ही रहे । भक्ति को इस बात का दुःख था । वह कह रही है नारद जी से कि मुझे इस बात का दुःख है कि मेरे दोनों बेटे बूढे और मैं जवान हूँ । यह तो बहुत बुरा है । और इस संवाद से यह भी सिद्ध होता है कि भक्ति, ज्ञान और वैराग्य--इन तीनों का जोड़ा है । ये तीनों साथ रहते हैं । कहते हैं

भक्तिः परेशानुभवो विरक्तिरन्यत्र चैष त्रिक एक कालः ।
प्रपद्यमानस्य यथाश्नतः स्युस्तुष्टिः पुष्टिः क्षुदपायोऽनुघासम् ।।

एकादश स्कन्द में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि भक्ति और परेशानुभव जो परब्रह्म परमात्मा है उसका अनुभव और उससे भिन्न जो संसार उससे विरक्ति । जो भगवान् की शरण में आता है उसको ही तीनों एक साथ मिल जाते हैं । जैसे कोई भूखा व्यक्ति जब भोजन करता है तो प्रत्येक ग्रास में तुष्टि पुष्टि और क्षुधा की निवृत्ति एक साथ उसे मिलती है । यह समझ लीजिए कि भक्ति तुष्टि हो गई । भक्ति की पुष्टि ज्ञान और क्षुधा की निवृत्ति वैराग्य है । तीनों साथ-साथ रहना चाहिए लेकिन वृन्दावन में उस समय ज्ञान वैराग्य के ग्राहक कम मिले तो भक्ति तो तरुणी हो गई लेकिन ज्ञान वैराग्य बूढे रह गए । भक्ति कहने लगी कि गंगा आदि नदियाँ मेरी ही सेवा कर रही हैं। इतना सुनकर नारद जी ने दोनों भक्ति पुत्रों को सम्बोधित करते हुये कहा कि ज्ञान ! वैराग्य ! उठो। पर उनके इस प्रबोधन वाक्य से उनका दुःख दूर नहीं हुआ । आकाशवाणी हुई। देवर्षे ! इसके लिए तुम सत्कर्म करो। और वह सत्कर्म दीनवत्सल साधु बताते हैं । नारद जी ने सोचा कि साधु कहां मिलेंगे कौन सा सत्कर्म होगा ? भक्ति से कहा कि भक्ति ! तू धीरज रख । मैं तुझको स्थान-स्थान में, घर-घर में ज्ञान वैराग्य के सहित स्थापित कर दूंगा । मैं आता हूँ । ऐसा कहकर वहां से चले नारद जी । अब सुना कि अमुक स्थान में कोई महात्मा रहते हैं उनसे जाकर कहा कि महाराज ! भक्ति तरुणी है ज्ञान वैराग्य बूढे हैं इनका दुःख कैसे दूर हो। बताइए । उन्होंने मौन धारण कर लिया कि हम तो बोलते ही नहीं है । **मौनं मूर्खस्य भूषणम्** । मौन मूर्खों का भूषण है । पूछेगा कोई तो उत्तर नहीं दे पायेंगे तो लोगों की दृष्टि में गिर जायेंगे तो । घूमते-घूमते नारद जी एक आश्रम पहुँचे। बद्रीनाथ में सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार ये चार भाई सत्संग कर रहे थे । नारद जी ब्रह्मा जी के पुत्र थे।

ये चारों नारद जी के भाई भी हैं। इनका वैशिष्ट्य यह है चारों भाइयों की अवस्था सदा पाँच वर्ष की रहती है।

चारों ने नारद जी को देखा कि मुख म्लान है। अंग-अंग में थकावट है। जैसे किसी का धन छिन जाए तो वह व्याकुल हो जाता है नारद जी भी वैसे ही व्याकुल हैं तो सनत्कुमारों ने पूछा कि तुम्हारी ऐसी दशा कैसे? तुम तो संन्यासी हो। जो साधु हो गया उसको तो उदास रहना ही नहीं चाहिए। किस बात की चिन्ता ? चिन्ता के जितने कारण हैं वह सब छोड़ चुके हो। नारद जी ने बताया कि हमने भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का दुःख देखा है। भक्ति वृन्दावन में तरुणी है। ज्ञान-वैराग्य वृद्धावस्था में हैं। ज्ञान वैराग्य के दुःख को दूर करने के लिए मैंने गीता का पाठ किया। वेद वेदांग सुनाया पर उनका दुःख दूर न हुआ। आकाशवाणी ने कहा है कि महर्षे ! इसके लिए सत्कर्म करो। आप बताइए कि किस सत्कर्म से उनका दुःख दूर होगा ? आपसे इसलिये पूछ रहे कि सत्कर्म तुमको साधु बतायेंगे। महाराज ! वह सत्कर्म क्या हो सकता है ? आप बताइए। सनत्कुमारों ने कहा कि अरे नारद जी ! तुम क्या सोच रहे हो ? सत्कर्म भागवत का श्रवण है। और तुम तो इसके मूल प्रवक्ता हो। व्यासजी के मन में जो ग्लानि थी उस ग्लानि को दूर करने के लिए तुमने ब्रह्मा जी से जो चतुःश्लोकी भागवत सुनी थी और वह चतुःश्लोकी भागवत तुमने व्यास जी को सुनाई। व्यास जी ने उसको अट्ठारह हजार श्लोकों में विस्तृत कर दिया। वह भागवत अगर सुनी जाए तो भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का दुःख दूर हो जाएगा।

विशेषकर सप्ताह में सुना जाए। क्यों ? सप्ताह में सुना जाए ? बोले कि **सर्वदा श्रवणं मतं**। जिन लोगों का कोई नियम नहीं है। उन्हें सदा सुनना चाहिए। लेकिन सदाचार से संयम से और एकाग्र मन से सब काम छोड़कर श्रवण करेगा तो उसका फल मिलेगा तो सदा ऐसा मन रहता नहीं है इसलिए सप्ताह का नियम लेकर सदाचार से जमीन में सोकर एक समय भोजन करके। स्त्रियों, महापुरुषों की निन्दा का त्याग करके अगर कथा का श्रवण करे तो लाभ होता है। कलियुग में पूरा जीवन इस तरह का बिताना कठिन है अतः सात दिन में कलियुग में मनुष्य किसी तरह से रह सकता है। उसको उसका फल मिलेगा। नारद जी ने कहा कि ठीक है। सनत्कुमारों ने कहा कि यह भागवत ज्ञान यज्ञ है। यज्ञ में ब्राह्मण वेद मन्त्र पढ़कर अग्नि में आहुति डालते हैं। इस ज्ञानयज्ञ में भागवत के प्रवक्ता हैं वे भागवत के श्लोकों के ज्ञान को श्रोताओं के हृदय में कान से पहुँचाते हैं। यह भी एक प्रकार से आहुति है। यह ज्ञानयज्ञ द्रव्य यज्ञ से भी बड़ा होता है। नारद जी बोले कि-

ज्ञानयज्ञं करिष्यामि शुकशास्त्रकथोज्ज्वलम् ।

हम यह ज्ञानयज्ञ करेंगे । आप बताइए कि महाराज ! कहाँ करें ? तो सनत्कुमार बोले कि गंगा के द्वार में आनन्द नाम का एक तट है आपको पता होगा आपमें से अधिकांश लोग उत्तराखण्ड की यात्रा में गए होंगे । एक ओर से गंगोत्री से भागीरथी आती है और ब्रदीनाथ से अलकनन्दा आती है । दोनों के अलग अलग नाम हैं। भागीरथी गंगा और अलकनन्दा गंगा । अलकनन्दा में पाँच प्रयाग हैं - पहला विष्णु प्रयाग, दूसरा नन्द प्रयाग, तीसरा कर्ण प्रयाग, चौथा रुद्र प्रयाग और पाँचवाँ देव प्रयाग । देव प्रयाग में भागीरथी और अलकनन्दा एक हो जाती हैं । दोनों अपना नाम भूलकर गंगा हो जाती हैं । हरिद्वार में यह निकलती हैं । गंगा द्वार पहाड़ों से निकल रही हें । यह स्थान हरिद्वार भी कहलाता है और हर द्वार भी । यह इसलिए क्योंकि यहीं से केदारनाथ और बदरीनाथ जी का द्वार खुलता है जाने के लिये ।

हरिद्वार में आनन्द नाम का तट है । वहाँ पर यह यज्ञ किया जाना चाहिए । नारद जी ने इसके आयोजन का भार लिया । देश-देश में विरक्तों को, साधुओं को, भगवद् भक्तों को आमन्त्रण भेजा कि आइए भागवत की कथा सुनने । और जब भागवत की कथा का प्रारम्भ होने जा रही थी तो गंगा आदि सब तीर्थ वहाँ आ गए । सब नदियाँ आ गईं। पर्वत आ गए। बड़े बड़े ऋषि मुनि भी वहाँ आ गये। कुछ लोग ऐसे होते हैं कि भाई ठीक है कि काम तो अच्छा हो रहा है लेकिन हमारे पास निमन्त्रण नहीं आया है। कार्ड नहीं भेजा हमको । हम वहाँ जाएँ कैसे ? प्रभु ने कहा कि कहाँ पड़े हो ? चलो । मान अपमान की बात छोड़ो। कहाँ यह मौका मिलता है । कहाँ सनत्कुमार जैसे वक्ता मिलेंगे ? कहाँ नारद जी जैसे श्रोता मिलेंगे ? वहाँ पर पहुँच गए । अब कथा का मौका आया तो कथा सुनने के लिए सब लोग तैयार हो गए तो फिर बड़े प्रेम से सनत्कुमारों ने भागवत की कथा प्रारम्भ की । और कथा सुनते सुनते श्रोताओं के मन में वैराग्य हो गया । संसार से उनके मन में वैराग्य हो गया कि संसार में कितने बड़े बड़े राजा हुए हैं महाराजा हुए हैं लेकिन यह धरती किसी के साथ नहीं गई । और संसार के भोगों से किसी को तृप्ति नहीं हुई। भोग भोगते हुए ही सारी उमर बिताने पर भी। **भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते** भक्ति करते करते ज्ञान हो जाता है । इस तरह से जब वहाँ भागवत का प्रारम्भ हुआ तो पहले-पहल माहात्म्य सुनाया सनत्कुमारों ने । माहात्म्य क्या है ? वस्तु की महिमा । कुछ सुनाना माहात्म्य होता है । कभी कभी लोग भूल जाते हैं। एक बार एक सज्जन हमारे पास आए । कहने लगे कि महाराज ! हम गवर्नर साहब के यहाँ गए थे तो वहाँ उनकी पत्नी ने सत्यनारायण की कथा करवाई थी । उसमें गवर्नर साहब भी आए । हमने कहा कि

लकड़हारा था । तुंगध्वज राजा ने सुनी । भगवान् सत्यदेव का व्रत किया जाता है । सायंकाल भगवान् सत्यदेव का विधि विधान से पूजन करके फिर उसके बाद प्रसाद चढ़ाया जाता है और प्रसाद बाँटकर इसलोक में सुख भोगते हुए अन्त में सत्कुल में जाता है । यह व्रत है उसकी महिमा यह बताई गई है कि यह व्रत किसने किसने किया । व्रत का यह माहात्म्य है यह कोई अलग से कथा का माहात्म्य नहीं है जो तुम कथा पूछ रहे हो । कहा क्यों कहा जाता है? तो कहा इसलिए जाता है कि कोई भी कर्म यदि श्रद्धापूर्वक किया जाता है तो वह उसका फल मिलता है । गीता में भगवान् ने कहा है -

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत् ।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ।।

जो अश्रद्धा से तप किया जाता है, अश्रद्धा से दान यज्ञ आदि किया जाता है तो वह असत् कहलाता है। उसका न तो इस लोक में फल मिलता है न परलोक में मिलता है । श्रद्धा बढ़ाने के लिए माहात्म्य सुनाया जाता है । भागवत का जो माहात्म्य आप लोग सुन रहे हैं इसलिए कि आपके हृदय में भगवत्कथा के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो जाए और श्रद्धा उत्पन्न होगी, मन में विश्वास होगा तो भागवत की कथा के श्रवण का फल आपको तत्काल मिलेगा ।

भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ।

तुलसीदास जी कहते हैं कि हम श्रद्धा विश्वास रूपी भवानी शंकर की वन्दना करते हैं । जिनके बिना सिद्ध लोग भी अपने हृदय में रहते हुए भी परमात्मा को नहीं देख पाते। सबसे पहले सनत्कुमारों ने कहा -

तुंगभद्रा तटे पूर्वमभूत्पत्तनमुत्तमम् ।
यत्र वर्णाः स्वधर्मेण सत्यसत्कर्मतत्पराः ।।

आत्मदेवः पुरे तस्मिन् सर्ववेदविशारदः ।

तुंगभद्रा के तट पर आत्मदेव नाम के ब्राह्मण रहते थे जो सभी वेदों के ज्ञाता थे। उनको बाकी सब सुख था पर सन्तान न हुई कोई । एक दिन इसी कारण घर से निकल पडे और जंगल में एक तालाब के किनारे जाकर बैठे हुये यही चिन्तन कर रहे थे कि बिना सन्तान के जीने का क्या प्रयोजन आदि । लोगों को बहुधा पुत्र की कामना होती है । वे चाहते हैं कि हमारे पुत्र हो जाएँ । पुत्र कहते ही हैं- **पुं नाम्ना नरकात् त्रायते इति पुत्रः।**

पुं नाम के नरक से जो तार दे उसको पुत्र कहते हैं । यहां तक लिखा है कि -

एष्टव्या बहवः पुत्राः कश्चिदेको गयां व्रजेत् ।

अर्थात् बहुत पुत्रों की इच्छा करनी चाहिए । शायद उनमें से कोई एक गया चला जाए तो उद्धार कर दे। इसलिए लोग सोचते हैं कि पुत्र हो जाए लेकिन आजकल के पुत्र सम्पत्ति के लिए तो लड़ेंगे लेकिन गया जाने की बात करो तो कहेंगे हमारा इन बातों में विश्वास नहीं है । वहाँ पण्डा तंग करते हैं । यह सब बात है । इसलिए बुद्धिमत्ता की बात यह है कि अपना मोक्ष पुत्रों के ऊपर मत छोड़ो । जो कुछ करना है अपने हाथ से खुद ही कर लो । तुम्हारा भी इस जीवन में कल्याण हो जाएगा । पुत्रों की आवश्यकता नहीं। तुम्हारे ही पुण्यों से तुम्हारा भी पुत्र तर जाएगा। आत्मदेव को जब पुत्र नहीं हुआ तो उसने सोचा कि जंगल में जाकर अपने प्राण दे देना चाहिए। घोर जंगल में वह चला गया । चलते चलते उसको प्यास लगी । जंगल में उसको एक सरोवर मिला जिसमें निर्मल शीतल जल भरा हुआ था । आत्मदेव ब्राह्मण ने उसमें पानी पिया और पास के ही एक पेड़ की छाँव में बैठ गया। इतने में एक संन्यासी आया और संन्यासी ने भी उस सरोवर में से जल पीया । वह भी दूसरे पेड़ के नीचे बैठ गया । आत्मदेव उनके पास गया और प्रणाम किया। संन्यासी ने पूछा कि अरे ब्राह्मण ! तुम तो बहुत चिन्तातुर मालूम पड़ते हो क्या बात है? क्या कष्ट है ? आत्मदेव बोला कि महाराज ! मेरा दुर्भाग्य है कि आज तक मेरी कोई सन्तान नहीं हुई । मैं जिस गौ का पालन करता हूँ वह गौ बन्ध्या हो जाती है और सगर्भा गौ का दूध सूख जाता है । फल सूख जाता है । मेरे घर के वृक्षों में फल नहीं लगते संतान की तो बात ही क्या है । इसलिये मैं तो मरने आया हूँ महाराज ! संन्यासी ने उसका भाल देखा । माथे की रेखाएँ देखीं ।

तदभालाक्षरमालां च वाचया मास योगवान् ।

योगवित् महात्मा थे वे । उसके माथे की अक्षर माला को पढ़कर कहा कि अरे ब्राह्मण!

सप्तजन्मावधि तव पुत्रो नैव च नैव च ।

सात जन्म तक तेरे घर में पुत्र नहीं होगा । तू पुत्र की आशा छोड़ दे । सगर ने पुत्र उत्पन्न किए । साठ हजार पुत्र हुए लेकिन कष्ट ही तो दिया । जो ब्रह्मा ने लिख दिया है उसका मार्जन मत करो । और अच्छा हो कि जब तुमको पुत्र ही नहीं है तो तुम भी संन्यास ले लो ।

रे मुञ्चाद्य कुटुम्बाशां संन्यासे सर्वथा सुखम् ।

संन्यास में सर्वथा सुख है । आत्मदेव ब्राह्मण बोला कि महाराज ! पुत्रादि के सुख से रहित जो संन्यास है वह सूखा है । हमें तो पुत्र दो । आत्मदेव ब्राह्मण ने समझ लिया कि जब ये सात जन्म की बात पढ़ लेते हैं तो यह पुत्र भी दे सकते हैं । सिद्ध महात्मा मालूम पड़ते हैं । बोला- हमको तो पुत्र दो । नहीं तो आपके सामने ही सिर पटक कर मर जायेंगे । महात्मा ने कहा कि देखो । विधि लेख का मार्जन मत करो । पर न माना ब्राह्मण। उन्होंने एक फल उठाकर दिया । बोले कि जाओ । अपनी पत्नी को खिलाओ। वह जब तक पेट में बालक रहे सदाचार से रहे । संयम से रहे । तो उससे एक निर्मल पुत्र होगा । आत्मदेव प्रसन्न होकर घर लौटा और वह फल अपनी स्त्री धुन्धुली को बुलाकर दिया । कहा कि महात्मा ने यह फल दिया है । इसको तुम खा लो और सदाचार संयम से रहो तो तुम्हारा पुत्र हो जाएगा । उसने ले तो लिया लेकिन फल खाया नहीं । जो प्रारब्ध होता है वह होकर रहता है । उसकी एक सखी थी । उसके सामने रोई कि सखी ! मेरे ऊपर बड़ी विपत्ति आ गई है । सखी ने पूछा कि क्या हो गया ? बोली कि हमारे पति जंगल गए थे । वहाँ किसी संन्यासी ने उनको यह फल दिया है । और कहते हैं कि इस फल को खाने से तुम्हारे पेट में बच्चा आ जाएगा । और पुत्र हो जाएगा नौ महीने के बाद । सखी ने कहा कि यह तो अच्छी बात है । ऐसा आशीर्वाद मिल गया । बोली कि मैं सोचती हूँ कि -

फलभक्षेण गर्भः स्याद् गर्भेणोदरवृद्धिता ।
स्वल्पभक्षं ततोऽशक्तिर्गृहकार्यं कथं भवेत् ?

मैं अगर फल खा लूँगी तो मेरा पेट बड़ा हो जाएगा । जब पेट बड़ा हो जाएगा तो भोजन कम हो जाएगा। जब भोजन कम हो गया तो शक्ति कम हो जाएगी । तब घर का काम कैसे होगा ? बोली कि अपनी ननद को बुला लेना वह सब काम कर देगी । बोली कि हमारी ननद बड़ी चोट्टी है । घर के सब सामान ले जाएगी । और फिर नौ महीने तक नियम संयम से कौन रहेगा ? यह भी हमसे नहीं हो पाएगा । मुझसे तो जरा सा भी कष्ट सहन नहीं होता है । जब मेरे पेट में बच्चा आ जाएगा तो कैसे निकलेगा ? कभी टेड़ा हो गया तो मैं तो मर ही जाऊँगी ।

बन्ध्या वा विधवा नारी सुखिनी चेति मे मतिः ।

मेरा तो यह मानना है कि बन्ध्या या विधवा स्त्री ही सुखिनी है । लड़के वाली स्त्रियाँ सुखी नहीं है । वह सखी बोली कि अच्छी बात है । मेरे पेट में बच्चा है । मेरे और भी

बच्चे हैं । जब मेरा पेट का बच्चा जन्म लेगा तो मैं चुपके से तेरे यहाँ उसे भेज दूँगी और तू यह कहकर कि मेरे स्तनों में दूध नहीं है मेरी सखी के स्तनों में दूध हो गया है क्योंकि उसका बेटा होकर मर गया है तो मैं तेरे बेटे को पाल दूँगी । बदले में हमें तुम हमें पर्याप्त पैसा दिला देना । यह सलाह हो गई । धुन्धुली ने कहा कि फल का क्या करूँ ? सखी बोली कि गाय को खिला दो । यदि फल में ताकत होगी तो गाय को कुछ हो जाएगा । उसने गाय को फल खिला दिया और अपने पति को कहलवा दिया दासी से कि हमारे पेट में बच्चा आ गया है । कुद दिनों के बाद जब उसकी सखी ने अपने सद्योजात बालक को उसके पास पहुँचाया तो उसने अपने पति से कहलवाया कि हमारे सुखपूर्वक प्रसव हो गया है । बालक ने जन्म लिया है । आत्मदेव बड़े प्रसन्न हुए । गाजे बाजे बजे । खूब दान पुण्य किया । हर्ष मनाया। और कुछ ही समय के बाद उस गौ ने भी एक बालक को जन्म दिया । बालक के कान गौ के जैसे थे और सारा शरीर मनुष्य जैसा था । लोग कहने लगे कि जब भाग्य का उदय होता है तो गाय तक बच्चा दे देती है । इस तरह से बालक के नामकरण संस्कार का समय आया । पण्डितों ने पंचांग निकाला । राशि निकाली कहा कि इसका यह नाम होना चाहिए । धुन्धुली बोली कि तुम्हारा कुछ नहीं चलेगा। मेरा चलेगा । मेरा नाम धुन्धुली तो मेरा बेटा धुन्धुकारी । उसने जबरदस्ती अपने बेटे का नाम धुन्धुकारी रख दिया । कुछ दिनों के बाद दोनो बड़े हो गए ।

गोकर्ण पण्डितो ज्ञानी धुन्धुकारी महाखलः ।

गोकर्ण पण्डित हो गया और धुन्धुकारी महाखल हो गया । वह चाहे जहाँ भोजन कर लेता था । कन्धे में जाल रखकर नदियों से मछली माकर लाता था और वही खाता था। खेल-खेल में बालकों को गला पकड़कर डुबो देता था । बड़ा अन्याय करने लगा । कुछ दिनों के बाद जुआ खेलने लगा । जुए में घर का सारा धन और बर्तन सब हार गया । अब बेचारे आत्मदेव को उन संन्यासी की बात याद आई कि ठीक कहा था उन्होंने। अब मैं क्या करूँ ? तो वे अपने दूसरे बेटे गोकर्ण के पास गए । कहने लगे कि बेटे ! मेरे कल्याण का मार्ग बता । गोकर्ण ने कहा कि पिताजी !

देहेस्थिमांसरुधिरेऽभिमतिं त्यज त्वं, जायासुतादिषु सदा ममतां विमुंच ।
पश्यानिशं जगदिदं क्षणभंगनिष्ठं, वैराग्यरागरसिको भव भक्तिनिष्ठः ।।

पिताजी ! यह जो शरीर है यह शरीर क्या है ? यह आत्मा नहीं है । हड्डी का ढाँचा है और माँस इसमें चिपका हुआ है और ऊपर से चमड़ा मढ़ा हुआ है । यह पाँच भूतों से बना हुआ है । तेरा आत्मा अर्थात् तू इससे अलग है । इसमें मैं हूँ इस प्रकार का अभिमान

छोड़ दे और जब तू शरीर नहीं है तो तेरी स्त्री कहाँ रहेगी ? कहाँ बेटा हुआ ? यह सब शरीर के नाते हैं । आत्मा का किसी से कोई नाता नहीं होगा यह जानकर वन में चले जाओ। दूसरों के गुण दोष का चिन्तन छोड़कर भगवान् के भक्तों की सेवा और उनके मुख से निकली भगवान् की कथा रस का पान करो ।

धर्मं भजस्व सततं त्यज लोकधर्मान्, सेवस्व साधुपुरुषान् जहि कामतृष्णाम् ।
अन्यस्य दोषगुणचिन्तनमाशु मुक्त्वा, सेवा कथारसमहो नितरां पिब त्वम् ।।

तुम निरन्तर धर्म का सेवन करो । धर्म का अर्थ जो किया जाता है सत्कर्म वह भी होता है और जगत् को धारण करने वाला परमात्मा है इसलिए वह भी धर्म है । उनका निरन्तर भजन करो । निरन्तर धर्म का भजन का मतलब यह है कि जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तीनों का जो साक्षी आत्मा है वह धर्म है । उसको अपना आत्मा समझ लो । सूक्ष्म देह कारण देह से आत्म बुद्धि हटा लो यही भजन हो गया । लोक धर्मों का त्याग कर दो। जो साधु पुरुष हैं उनकी सेवा करो । भोग की तृष्णा का त्याग कर दो और इस संसार को क्षणभंगुर समझो। वैराग्य में ही राग के रसिक बनो और भक्तिनिष्ठ हो जाओ । इस तरह से गोकर्ण का उपदेश सुनकर आत्मदेव चले गए वन में । वहाँ जाकर उन्होंने भागवत के दशम स्कन्ध का पाठ करते-करते भगवान् श्रीकृष्ण का ध्यान करके अपने शरीर को त्याग करके सद्गति प्राप्त कर ली । अब पिता जब चले गए तो धुन्धुकारी आया अपनी माता के पास। कहा कि माँ ! धन कहाँ हैं ? मां धुन्धुली बोली कि तूने तो सब पहले ही खर्च कर दिया । धुन्धुकारी बोला कि कहीं गड़ा हो तो बता । बोली कि कहीं गड़ा नहीं है । बोला- झूठ बोलती है ? सच बता ! नहीं तो जलती हुई लकड़ी से मारूँगा । आजकल बहुत से धुन्धुकारी हो गए हैं जो माताओं को आँख दिखाते हैं । मारते-पीटते हैं लेकिन उनकी क्या दशा होती है आप भागवत में ही सुन लीजिए । डर के मारे उसने कहा कि बेटा कल सबेरे बता दूँगी । धुन्धुकारी बोला कि ठीक । सबेरे ही सही पर बता देना । बता क्या देना हमें सबेरे ही चाहिए ।

उस रात धुन्धुली को नींद नहीं आई और वह घर से निकल गई । घर के पास ही एक कुँआ था उसी में कूदकर मर गई । अब घर में पिता माता जैसा कोई अभिभावक तो रहा नहीं। धुन्धुकारी स्वतंत्र हो गया। अभी तक वेश्याओं के यहां जाता था । अब उन्हें ही अपने घर बुलाने लगा । जब घर के सामान तक बिक गये तो वेश्याओं को देने के लिये धन एकत्र करने के लिये चोरी करने लगा । जब बहुत धन चुरा लाया तो वेश्याओं ने विचार किया कि यदि यह पकड़ा गया तो यह भी जायेगा और धन भी ।

कहीं हम भी पकड़ न ली जायें । ऐसा सोचकर उसको मार डालने की योजना बनाई । और सोते समय उसके गले में फांसी लगा दिया । पर गले में फाँसी लगाकर टाँग दिया जाने पर भी नहीं मरा । तब जिस जलती लकड़ी का डर माँ को दिखाया था उसी से उसको जलाया । बड़ी मुश्किल से उसके प्राण निकले । उसी घर में गड्ढा खोदकर उसको गाड़ दिया । पड़ोस की औरतों ने पूछा कि धुन्धुकारी नहीं दिखते । तो कहा कि हमारे पति धन के लोभी हैं परदेश चले गए हैं । आयेंगे लौटकर। धीरे-धीरे सारा धन जो भी धुन्धुकारी लाया था वह बाँट लिया और लेकर भाग गईं । अब धुन्धुकारी प्रेत हो गया। गोकर्ण ने सुना तो उन्होंने धुन्धुकारी के कल्याण के लिए गया में श्राद्ध किया । फिर अपने गाँव आए । अब गाँव में आकर उन्होंने अपने घर में एक चबूतरे में बैठकर रात बिताई। रात को उनको धुन्धुकारी का प्रेत दिखने लगा। कभी कोई रूप बनाए । कभी कोई । उन्होंने उसके ऊपर जल छिड़का तो वह धुन्धुकारी के रूप में सामने आकर खड़ा हो गया। कहने लगा कि मेरे भाई ! अपने पाप के कारण मेरी यह दुर्गति हुई है । मेरा उद्धार कर। गोकर्ण ने कहा कि मैंने तेरे लिये गया में श्राद्ध कर दिया है । धुन्धुकारी बोला-

गया श्राद्धशतेनापि मुक्तिर्मे न भविष्यति ।

सौ बार गया के श्राद्ध से भी मेरी मुक्ति नहीं होगी । कोई और उपाय करो । तब गोकर्ण ने कहा कि रात्रि में तुम शान्ति से रहो । गोकर्ण जी सूर्य के उपासके थे । उन्होंने सबेरे भगवान् सूर्य नारायण से प्रार्थना की तब आकाशवाणी हुई कि-

श्रीमद्‌भागवतान् मुक्तिः सप्ताहं वाचनं कुरु ।

भागवत से मुक्ति होगी । सप्ताह में तुम इसका वाचन करो । गोकर्ण ने गाँव के बाहर बहुत बड़ा मण्डप बनवाया। वहाँ भागवत की कथा की । ग्राम के लोगों को सुनाना प्रारम्भ किया । धुन्धुकारी प्रेत था। वहाँ एक सात पोर का बाँस गड़ा था । उसमें धुन्धुकारी आकर बैठ गया । एक दिन के बाद एक गाँठ फूटती गई । फूटते-फूटते साँतवें दिन प्रेत योनि से धुन्धुकारी की मुक्ति हुई । भगवान् का विमान उसे लेने आया और धुन्धुकारी भगवान् का रूप बनाकर जाने के पहले गोकर्ण के पास आया । कहा कि दयासिन्धु भाई ! तुमने हमको प्रेत योनि से मुक्त किया है । हम वैकुण्ठ जा रहे हैं । जो धुन्धुकारी को लेने आए थे उनसे गोकर्ण ने पूछा कि और लोगों ने भी तो भागवत सुनी है । उनकी मुक्ति क्यों नहीं हुई । बोले और लोगों ने तो सुना पर जैसा धुन्धुकारी ने श्रवण किया वैसे नहीं सुना । आप फिर से कथा सुनाइए । गोकर्ण ने फिर से कथा सुनाई उसके अन्त में भगवान् का विमान आया और पूरे ग्राम वासियों के सहित गोकर्ण भी भगवान् के धाम में चले गए।

इस तरह से भागवत की कथा सुनने का, कहने का यह फल निकला। यह सप्ताह में कहनी चाहिए। और श्रद्धापूर्वक इसको श्रवण करना चाहिए। अच्छा हो कि एक समय भोजन करे। पत्तल का भोजन करे। दाल, मधु और मांस का त्याग करे। महापुरुषों की निन्दा न करे। उपवास करके भी सुन सकता है। दूध पीकर सुन सकता है। घी पीकर सुन सकता है। एक समय भोजन करके भी सुन सकता है। जिस प्रकार आलस्य न आए और कथा में मन लगा रहे उस तरह की विधि बनाकर भगवान् की कथा सुनने से उसके हृदय में भगवान् आ जाते हैं। इसी तरह से भागवत की कथा जब सनत्कुमारों ने सुनाई तो वहाँ पर भक्ति, ज्ञान और वैराग्य के साथ आकर नृत्य करने लगी। बड़ा कीर्तन हुआ। जय जय शब्द हुआ। बड़े-बड़े ऋषि मुनि आकर भगवान् के नाम का कीर्तन करने लगे।

श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे। हे नाथ नारायण वासुदेव।
जिह्वे पिबस्वामृतमेतदेव गोविन्द दामोदर माधवेति ।।

इस तरह भगवान् के नाम का वहाँ कीर्तन होने लगा। भक्ति सबके हृदय में विराजमान हो गई और भगवान् से सनत्कुमारों ने प्रश्न किया कि महाराज! जिनके हृदय में भक्ति हो उनके हृदय में आप भी जाकर निवास करें। इस प्रकार भागवत के श्रवण का आपने आज माहात्म्य सुना। कल से आप कथा सुनेंगे। ध्यान से सुनेंगे तो आपको आनन्द भी मिलेगा और लोक परलोक दोनों सुधरेंगे।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण! हे यादव! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[42]

।। राम राम बयालीस ।।

वेद ही हमारे लोक-परलोक का मार्ग प्रशस्त करते हैं

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो ।

चार वेद हैं । ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद । ये चार वेद ही हमारे लोक परलोक में कल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हैं । वाल्मीकि रामायण में और तुलसीदास जी की रामायण, दोनों में प्रसंग आता है कि भगवान् श्रीराम जब प्रयाग पहुँचे तब भरद्वाज मुनि ने उनका बड़ा स्वागत किया । चित्रकूट जाने की इच्छा भगवान् ने प्रकट की और कहा कि कुछ मार्गदर्शक हमको दे दीजिए तो भरद्वाज मुनि के संकेत से पचासों आ गए ।

सकल कहहिं मग दीख हमारा ।

सब कहने लगे रास्ता हमारा देखा हुआ है । हम आपको चित्रकूट पहुँचा देंगे । भगवान् श्रीराम ने उनमें से चार को पकड़ा । इसका मतलब यह है कि पंथ तो कई थे लेकिन ये पंथ पगडण्डी हैं । मार्ग केवल चार वेदों के द्वारा उपदिष्ट मार्ग हैं । और सब पगडण्डी हैं । कभी कभी ये खतरनाक भी होती हैं । हमलोग उत्तरकाशी के पैदल यात्रा कर रहे थे। स्वामी अखण्डानन्द जी महाराज थे । हम थे और कभी कई साधु थे । उनका शरीर बड़ा स्थूल था । बीच में एक पागल मिल गया हमलोगों को । पहले अच्छी सी बात कर रहा था । बोला कि आप इस रास्ते से जायेंगे तो बहुत लम्बा पड़ेगा । यह पगडण्डी पकड़ लीजिए तो कल ही उत्तर काशी पहुँच जायेंगे । उसकी बात में हमलोग आ गए और मार्ग छोड़कर काफी नीचे उतर गए । फिर चढ़ाई शुरु हुई । दूसरा पहाड़ आया। अब स्वामी जी दो तीन कदम चले और हाँफने लगे । डण्डा हाथ में लिया । हमारी ओर देखकर बोले कि स्वामी जी ! यह पगडण्डी नहीं है यह पागल डण्डी है । पागल ने बता दिया । ऐसे ही कई तरह के पंथ वाले अपने भारत में आ जाते हैं । आपके छत्तीसगढ़ में भी आ जाते हैं पागल डण्डी वाले । कुछ का कुछ बता देते हैं ।

चार वेद और एक हमारा पंचम वेद । पंचम वेद है इतिहास और पुराण । इतिहास पुराण में दो ही ग्रन्थ हैं हमारे यहाँ । वाल्मीकि रामायण और व्यास जी के द्वारा निर्मित

अट्ठारह पुराण तथा महाभारत। यही पंचम वेद हैं। अन्तर इतना ही है कि जो वेद हैं वे अपौरुषेय हैं और पुराण पौरुषेय हैं। वेदों का कोई निर्माता नहीं है और पुराणों को व्यास जी ने बनाया है। व्यास जी भी भगवान् के ही अवतार थे। उन्होंने ही वेदों के चार विभाग किए। वेदों के तत्त्व को हम कैसे समझें ? इसके लिए उन्होंने पुराणों की रचनाकी और सत्रह पुराणों की रचना के पश्चात् जब उनको सन्तोष नहीं हुआ तो फिर इस अट्ठारहवें पुराण श्रीमद् भागवत की रचना हुई। माना यह जाता है कि भागवत पुराण शब्दों का समूह है। यह जो भागवत के शब्द, पद, श्लोक, अध्याय हैं, स्कन्ध हैं ये भगवान् के शब्दमय विग्रह हैं। शब्द ही रूप में भगवान् बैठे हैं यह समझ लीजिए। साक्षात् श्रीकृष्ण का ही स्वरूप है। कल हमने भागवत का माहात्म्य आपको सुनाया था। जब भगवान् स्वधाम जाने को उद्यत हुए तो उद्धव जी को कुछ आभास हो गया। उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण से कहा कि प्रभो ! आप इस लोक को छोड़ जाओगे तब आपके भक्त किसका आलम्बन करके रहेंगे ? भक्तों के लिए ही तो आप निर्गुण से सगुण। निराकार से साकार हुए हैं। अब आप अपने भक्तों के लिए कोई आलम्बन तो छोड़िये। भगवान् ने गम्भीरता से इस बात को सुना और अपने सारे तेज को श्रीमद् भागवत में स्थापित कर दिया। इसीलिए यह साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण का शब्दमय विग्रह है। और इस शब्द को यदि कोई ध्यान से अपने कानों के द्वारा हृदय में ले जाता है मानो वह भगवान् को ही ले जा रहा है। ऐसा यह पुराण है। बड़ा दुर्लभ है।

अब आपने पढ़ा कि रामसेतु की रक्षा के लिए यज्ञ हो रहा है। रामसेतु की रक्षा के लिए रैली भी निकल रही है। कुछ लोगों को यह भ्रम हो सकता है कि सरकार ने ही यह रचना रची होगी। यह सब झूठ बात है। सबसे पहले हमलोगों ने यह बात उठाई है और उसको सभी दृष्टि से रोकने का उपाय किया है और कर रहे हैं। यह अब दैवी उपाय हो रहा है कि भगवान् प्रसन्न होकर लोगों की बुद्धि शुद्ध करें और जनता के भी हृदय में यह भावना बने कि अपनी धरोहर की रक्षा हो। इसके लिए यह आयोजन हो रहा है। यह कोई सरकारी काम नहीं है। यह जनता का है। सनातन धर्म का है। यह बात हम आपके सामने स्पष्ट करना चाहते हैं। अस्तु। आइये कथा में अपने मन को ले चलें।

प्रसंग चल रहा है कपिलदेव जी का अवतार हुआ। बात क्या है कि पहले भगवान् ब्रह्मा ने संसार की रचना अपने संकल्प से शुरु की। मानसी सृष्टि की। ब्रह्मा जी के मन में आया और वह मन का भाव साकार हो गया। उसी से सब ऋषि महर्षि उत्पन्न हुए। देवता उत्पन्न हुए। उत्पन्न होते-होते सृष्टि की वृद्धि उस समय अपेक्षित थी क्योंकि सृष्टि

का प्रारम्भ था । प्रजा बढ़े । प्रजा को बढ़ाने के लिए ब्रह्मा जी संकल्प करते थे लेकिन जितना चाहे उतनी प्रजा बढ़ती नहीं थी । उन्होंने ऋषियों को जन्म दिया । ऋषियों के अन्दर सिद्धियाँ थी । उन्होंने भी सृष्टि बढ़ाई । उनके द्वारा बढ़ाई हुई सृष्टि का नाम है सांसिद्धिकी सृष्टि । मानसी और सांसिद्धिकी सृष्टि । इसके बाद जब पूर्ण रूप से प्रजा नहीं बढ़ी तो उन्होंने अपने संकल्प से दाहिनी भुजा से मनु और बाँयी भुजा से शतरूपा को उत्पन्न किया ।

स्वायम्भुव मनु अरु शतरूपा । जिनते भई नर सृष्टि अनूपा ।।

स्वयम्भू मनु और शतरूपा के जोड़े से नर सृष्टि होती है इसलिए हमलोग मनु के द्वारा उत्पन्न होने के कारण मानव कहलाते हैं । मनुष्य कहलाते हैं । दूसरे लोग कहते हैं कि आदम और हव्वा से संसार बना । अपने को आदमी कहते हैं । हमलोग अपने आपको मानव कहते हैं । मनु और शतरूपा जो थे दोनों का विवाह हुआ । इनसे दो पुत्र और तीन कन्याएँ हुईं । आकूति,देवहूति और प्रसूति इन तीन कन्याएँ हुईं और प्रियव्रत और उत्तानपाद नाम के दो पुत्र हुए । आकूति का विवाह ऋचीक नाम के ऋषि से किया गया उससे भगवान् यज्ञ की उत्पत्ति हुई । यज्ञ रूप में भगवान् प्रकट हुए । देवहूति का विवाह कर्दम ऋषि से हुआ जिनसे नौ कन्याएँ और एक पुत्र हुआ । जो पुत्र भगवान् का अवतार कपिल थे । उसके अनन्तर प्रसूति नाम की जो कन्या थी उस कन्या का विवाह दक्ष से हुआ । उससे भी बहुत बड़ी सृष्टि हुई । अभी आप सुन रहे थे कि कपिलदेव का आख्यान। भगवान् कपिल सांख्य शास्त्र के निर्माता माने जाते हैं । सांख्य शास्त्र क्या है ? जिसमें तत्त्वों की संख्या की जाती हो उस शास्त्र का नाम सांख्य कहलाता है । और दूसरी बात यह है कि जिसमें त्याग की प्रधानता हो ।संन्यास की प्रधानता हो उसको भी सांख्य कहते हैं । गीता में सांख्य शब्द आप सुनते होंगे ।

सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः ।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ।।

सांख्य और योग को पृथक् पृथक् बालक समझते हैं पण्डित नहीं । भगवान् कपिल का अवतार हुआ । उसके पहले आपने सुना होगा कि मनु ने अपनी कन्या देवहूति कर्दम ऋषि से व्याही । और चले गए अपनी राजधानी में ।

यहां प्रसंगवश एक बात आपको और बता दें । मानव की सृष्टि सबसे पहले भारत में हुई है । हमलोग कहीं बाहर से नहीं आए हैं । जो लोग यह कहते हैं कि आर्य भारत में बाहर से आए हैं यह सब झूठ है । अंग्रेजों ने यह सब फैलाया है । आदि सृष्टि मनु

एवं शतरूपा से ब्रह्मावर्त में यहीं से मानव की सृष्टि प्रारम्भ होती है। यहीं पर कर्दम ऋषि निवास करते थे। तपस्या करते थे। कर्दम ऋषि का आश्रम गुजरात में था। उसका नाम है सिद्धपुर। बड़ी विचित्र बात है। कर्दम ऋषिने बहुत वर्षों तक भगवान् की आराधना की। भगवान् प्रकट हुए और जब उनसे वरदान माँगने को कहा तो कर्दम बोले कि महाराज ! मैंने आपकी आराधना उत्तम पत्नी के लिए की है। मुझे अच्छे कुल की पतिव्रता नारी प्राप्त हो जाए इसके लिए मैंने आपकी तपस्या की है। पत्नी अच्छी मिल जाए यह भी भाग्य से ही होता है। आप सोचिये मनुष्य की सारी प्रतिष्ठा उसकी पत्नी पर निर्भर रहती है। कल्पना कीजिये कि आप अपने मित्रों के साथ घर में आए और पत्नी से कहा कि चाय भेजो। और उसने कहा कि शक्कर ही नहीं है तो गई इज्जत। बड़ा मुश्किल होता है। इसीलिए दुर्गा सप्तशती में आता है

पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसुरिणीं।
तारिणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम्।।

भगवती से प्रार्थना करता है भक्त कि मनोरमा पत्नी हमको मिले जो हमारी मनो गति के अनुसार चले और हमको इस संसार सागर से पार कराने वाली बने। नारी मन्त्रिणी होती है। पति को अच्छी सलाह देती है। जिसके घर में अच्छी सलाह देने वाली पत्नी हो गई उसका कल्याण हो जाता है। कहीं ऐसी हो गई कर्कशा तो वह उल्टी सलाह देती है। अब लोग जाते हैं भागवत का यज्ञ जो हो रहा है इसके लिए लोग जायेंगे गृहस्थों के यहाँ। कहेंगे कि हम जरा अपनी स्त्री से सलाह कर लें। घर से सलाह कर लें। कहीं स्त्री ने कहा कि ऐसे तो बहुत आते हैं तुम कहाँ तक देते रहोगे ? तो बस बात खत्म। नारी उत्तम शिक्षा देकर पति को उत्तम मार्ग पर लगाती है। इसीलिए जब बाली ने भगवान् से कहा कि आपने हमको क्यों मारा ? तो भगवान् श्रीराम बोले

मूढ तोहि अतिशय अभिमाना। नारी सिखावन सुनेसि न काना।।

तुझको इतना अभिमान था कि अपनी नारी की शिक्षा को तूने नहीं माना। तारा ने कहा था कि सुग्रीव से लड़ने मत जाइए। सुग्रीव में ताकत नहीं है कि वह आपको युद्ध के लिए ललकार सके। वह राम के बल पर ललकार रहा है तो ऐसी स्थिति में वहाँ जाओगे तो मारे जाओगे। बाली ने ध्यान नहीं दिया। भगवान् ने यही कहा। आप रामायण पढ़ते हैं। मन्दोदरी रावण को समझाती है कि पतिदेव ! राम के साथ बैर मत करो। बुद्धि बल में जो अपने समान हो उसी से बैर करना चाहिए। राम के साथ तुम्हारा कोई मुकाबला नहीं है। नहीं माना तो वह भी मारा गया। अतः उत्तम लोग उत्तम नारी

की खोज करते हैं । उत्तम नारी । भगवान् ने देखा कि ओह हो ! इसलिए तपस्या किए हो हजारों वर्ष तक । कन्दमूल फल खाकर रहा और माँग रहा है स्त्री । उनकी आँखों से आँसू निकला । आँसू के बूँद टपक पड़े । हाय हाय मेरी माया देखो । उसी बिन्दु से एक सरोवर बन गया । जिसका नाम बिन्दु सरोवर हुआ । आज भी है । मातृ गया होती है वहाँ । माता का यदि गया श्राद्ध करना हो तो वहाँ बिन्दु सरोवर में माता का श्राद्ध तर्पण किया जाता है । माता की सद्गति होती है । भगवान् ने कहा कि अच्छी बात है हम तुम्हारे गर्भ से जन्म लेंगे। पर तुम्हारा कल्याण करेंगे । भगवान् कपिल का अवतार हुआ । कर्दम ऋषि ने उनकी परिक्रमा की और प्रणाम करके वन में चले गए । अपनी माता का प्रिय करने के लिए कपिल जी उसी बिन्दु सरोवर में रह गए । एक दिन माता देवहूति आती है । कहती है-

तं त्वा गताहं शरणं शरण्यं स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारं ।
जिज्ञासयाहं प्रकृतेः पूरुषस्य नमामि सद्धर्मविदां वरिष्ठम् ।।

देखिये ! गुरु के पास जब तक शरणागति नहीं लेंगे । नम्रतापूर्वक नहीं जायेंगे तब तक ज्ञान नहीं होगा। चाहे आप कितने ही बड़े हों । गुरु के पास नम्र होकर जाना चाहिए। भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन के मित्र होने पर भी तब तक उनको उपदेश नहीं दिया जब तक कि अर्जुन ने यह नहीं कह दिया कि -

शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ।

मैं आपका शिष्य हूँ । आपकी शरण में हूँ । मुझको ज्ञान दीजिए । कपिल बेटा है और देवहूति माता है लेकिन ज्ञान प्राप्त करने के लिए जब अपने बेटे के पास गई तब कहा कि आप मेरे शरण्य हैं, आपकी शरण में आई हूँ । **नमामि त्वां** कहा । **वरिष्ठं** कहा । धर्म को जानने वाले आपको प्रणाम करती हूँ कहा । देखिये माँ ने अपने बेटे को प्रणाम किया । जब गुरु बनाते हैं तो वहाँ झुकना पड़ता है । पानी ऊपर से नीचे जाता है । गुरु ऊपर बैठता है उसके सामने हम नतमस्तक होंगे तब आपको ज्ञान होगा । आप समझिये कि दो खेत एक दूसरे से लगे हुए हैं । एक में पानी है और एक खाली है । बाँध फोड़ने पर जो खेत में पानी भरा है वह दूसरे खेत में चला जाएगा। लेकिन दोनों भरे हों तो कहाँ जाएगा ? एक को खाली होना पड़ेगा । माता गईं । माँ पूछा कि कैसे मेरा उद्धार हो? जन्म मरण के चक्र से कैसे छूटूँ ? इसका मार्ग मुझे बताइए । भगवान् कपिलदेव जी कहते हैं-

प्रसंगमजरं पाशमात्मनः कवयो विदुः। स एवं साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम्।।

माँ ! मनुष्य के बन्धन का कारण प्रसंग है । प्रसंग कहते हैं आसक्ति को । राग को।

यह ऐसा पाश है कि इससे छूटना बड़ा कठिन है । यह जीर्ण नहीं होता है । आपके हाथ में न हथकड़ी है न पैर में बेड़ी है लेकिन फिर भी बँधे हुए हो । छूटे नहीं हो । कथा में थोड़ी देर हो जाएगी तो घर की याद आने लगेगी । क्या है यह? घर की इच्छा । राग ले जाता है वहाँ । बद्रीनाथ में हमलोग जाते हैं । बड़ी कठिनाई से लोग पहले बद्रीनाथ पहुँचते थे । पैदल जाते थे जय बद्रीविशाल कहते हुए । अब तो गाड़ी से जाते हैं । लेकिन कई गाड़ियाँ गिर पड़ती हैं रास्ते में । लेकिन फिर भी पहुँचते हैं लोग । जैसे ही मन्दिर के सामने जाते हैं लगता है कि वैकुण्ठ में आ गए। बड़ा आनन्द आता है । दुर्लभतम आनन्द होता है पर भगवान् का दर्शन करके जब लौटकर आए धर्मशाला में तो पूछते हैं कि हमारे नाम की कोई चिट्ठी तो नहीं आई है । चिट्ठी पढ़ते हैं । बाबूजी ! बिटिया आपको बहुत याद करती है । आप कब लौटोगे ? इच्छा होती है कि अभी उड़ जाएँ । अभी घर पहुँच जाए । यह राग खींच रहा है ।

एक बार हमलोग उत्तर काशी गए । एक महात्मा के पास पहुँचे । उन्होंने कहा कि कुछ दिन आपलोग यहीं पहाड़ में रहिये । उन्होंने बड़ा अच्छा दृष्टान्त दिया कि गृहस्थाश्रमी भी घोड़ा है और साधु भी घोड़ा है । गृहस्थाश्रमी ऐसा घोड़ा है जिसके चारों पाँव बँधे हैं। झटका देकर आगे के पाँव भले ही खोल ले पर पीछे के नहीं खोल सकता और साधु के चारों पाँव खुले हैं । यहाँ रहना हो रहो जाना हो चले जाओ । ये है राग-विराग का अन्तर। एक बड़ा सुन्दर श्लोक है जो हमें बहुत बडा उपदेश देता है । यह श्लोक एक भ्रमर के बारे में है ।

एक भ्रमर था । भ्रमर माने भौंरा । वह भौंरा सरोवर में बड़े सुन्दर-सुन्दर कमल खिले हुए थे । उन कमलों का जो राजा था, बीच में था । उस कमल के ऊपर बैठकर भ्रमर उसके मकरन्द का पान कर रहा था । आपने देखा होगा कि छत्तीसगढ़ में बहुत से तालाब हैं । कईयों में कमल भी खिलते हैं । जब कमल खिलता है तो आस पास पुखुड़ियाँ होती हैं । बीच में गोल सा होता है जिसको कर्णिका कहते हैं । पंखुड़ियों और कर्णिकाओं के बीच में पीली पीली मंजरियाँ निकलती हैं और उनमें छोटे-छोटे कण होते हैं । उन कणों में रस भरा रहता है । भौंरा अपना डंक उन कणों में डालकर रस को खींचता है । खिले हुए कमल की सुगन्ध लेते हुए मकरन्द का पान करता करता भ्रमर उसी में आसक्त हो जाता है । इसी में सायंकाल हो जाता है । नियम यह है कि सायंकाल होने पर कमल मुकुलित हो जाता है और जब प्रातःकाल होता है तो कमल खिल जाता है । जब कमल मुकुलित हो गया तो भ्रमर में यह ताकत थी कि वह उन कोमल पंखुड़ियों को काटकर बाहर निकल जाता लेकिन आसक्ति का बन्धन, प्रेम का बन्धन है कि वह उन्हें नहीं

काटता। वह सोचता है -

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम् भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः।
इत्थं विचिन्तयति कोशगते द्विरेफे हा! हन्त! हन्त! नलिनीं गज उज्जहार ।।

भ्रमर मनोरथ कर रहा है भीतर से ही कि रात्रि जाएगी, सुप्रभात होगा। भगवान् अंशुमाली उदयाचल पर अधिरूढ़ होकर भुवन के तम को अपनी मनोरम किरणों से विदीर्ण करेंगे। यह कमल विकसित हो जाएगा और मैं उन्मुक्त होकर गगन में विहरण करूँगा। यह मन में मनोरथ कर रहा है पर क्या दुःख की बात है कि उसी समय एक मत्त गजेन्द्र वहाँ आ गया और उसने अपनी सूँड से उस कमल को उखाड़कर अपने पैरों तले मसल दिया। भ्रमर उसी में पड़ा-पड़ा अपने प्राणों को गँवा देता है।

संग का मतलब एक साथ बैठकर सिनेमा देखना, एक साथ बैठकर इधर-उधर के काम करना इसका नाम दोस्ती नहीं है। यह तो सत्यानाश है। दोस्ती यह है कि हम अच्छे लोगों के साथ बैठें। अच्छी बात सीखें। वह सच्चा दोस्त है जो तुम्हें कथा सुनने ले जाए, सन्त महात्माओं के पास ले जाए। वह सच्चा है जो तुम्हें दान- पुण्य, परोपकार करने के लिए प्रेरित करे। बिगाड़ने वाले काहे के दोस्त ? ऐसे पुरुषों से अपना प्रेम हो जो स्वयं संसार से तर गए हैं और दूसरों को भी तारने के लिए मार्ग बताते हैं।

प्रसंगमजरं पाशमात्मनः कवयो विदुः।
स एव साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम् ।।

कुछ लोग पूछते हैं कि साधुओं के पास जाने से क्या मिलेगा महाराज ! क्या फायदा है ?

एक सज्जन हमारे पास आते थे। उनके पड़ोसी उनसे बोले- तुम स्वामी जी के पास जाते हो कोई उनमें विशेषता हो तो बताओ, हम भी चलें। माने कोई लाभ होता हो तो चलें। मतलब कोई चमत्कार। भस्म दिखाते हैं, कि ताबीज देते हैं, कि अंगूठी देते हैं या कि पानी पिलाते हैं। ऐसे कई तरह के लोग उपाय रचते हैं लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए। उसको लोग लाभ समझते हैं। यह लाभ नहीं है। लाभ है भगवान् के चरणों में प्रीति उत्पन्न हो जाना। इससे बड़ा कोई लाभ नहीं है।

बिनु सत्संग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग ।।

जब प्राणी सत्संग में बैठता है तो हरि कथा होती है। महात्मा लोग भगवान् की

कथा सुनाते हैं और भगवान् की जो कथा है वह मनुष्य के हृदय के तापों का नाश करने वाली है ।

मन करि विषय अनल वन जरहीं । होहिं सुखी जो एहि सर परहीं ।।

मन हाथी है । विषयरूपी दावानल से झुलस रहा है । आकर थोड़ी देर भगवान् की कथा में बैठ जाए तो उसके हृदय की सारी गाँठें खुल जाती हैं । भगवान् बोले कि -

सतां प्रसंगान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः ।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ।।

सत्पुरुषों का जब सत्संग मिलता है तो लोगों को भगवान् की महिमा का बोध होता है । भगवान् क्या हैं? यह समझ में आता है । लोग तो आजकल भगवान् का मतलब समझते हैं कि जो हमारी इच्छा पूरी करे सो भगवान्। चले जा रहे हैं रास्ते में कुत्ता पड़ा है । डर लगा हाथ जोड़कर भगवान् से कहते हैं कि अगर तुम सच्चे हो तो कुत्ता न भौंके। भौंक गया तो भगवान् झूठे भौंका नहीं तो भगवान् सच्चे । आजकल पूजा करते हैं जहाँ देखो आफीसरों के पास जाओ, नेता के पास जाओ काम क्या कर रहे हैं कहेंगे पूजा कर रहे हैं । पूजा किस बात की । जाँच चल रही है सजा न हो जाए इसलिए पूजा है । यह सब पूजा है । और भगवान् को छोड़कर कई तरह के बाबा लोगों की पूजा फोटो रखकर और जब तक इच्छा पूरी हुई तब तक तो फोटो रहता है । यदि गडबड हुई तो फोटो उठाकर भूसा में डाल दिया । यह नहीं होना चाहिए । भगवान् आपको हमेशा परीक्षा देते रहेंगे क्या ? वे क्या-क्या करें?

एक किसान था । उसकी दो बेटियाँ थीं । दोनों एक ही गाँव में व्याही गई थी । एक बेटी के ससुराल में किसानी का काम था और दूसरी बेटी के ससुराल में कुम्हारी का काम था । पिता अपनी बेटियों की खबर लेने गया तो किसान बेटी के यहाँ पूछा कि क्या हालचाल है ? बोली कि पिताजी ! फसल हुई है बस एक पानी की जरूरत है। थोड़ा सा पानी गिर जाए तो फसल हो जाएगी । नहीं तो खेती सूख रही है । किसान बोला कि भगवान् ! बरस जाओ । मेरी बेटी का दुःख दूर करो । अब कुम्हार बेटी के यहाँ पहुँचा। बोली कि पिताजी ! हमने बड़ी मुश्किल से घडा बनाकर रखा है । और बादल आ गए। पानी यदि गिर गया तो हमारा सब गीला हो जाएगा । हमने उधार लेकर यह सब काम किया है । हमारा तो सर्वनाश हो जाएगा । किसान कहता है कि मत गिरो । अब भगवान् क्या करे ? कहो! गिरे कि न गिरे ? अगर नहीं गिरते हैं तो किसान बेटी मरती है और गिरते हैं तो कुम्हार बेटी मरती है । आप जो चाहें वही भगवान् करें यह जरूरी नहीं है।

जिसमें आपका हित हो वह भगवान् करेंगे। जिसमें आपका कल्याण होगा उसको भगवान् करेंगे। इसलिए कोई-कोई बातें आपकी भगवान् मान भी लेते हैं और कुछ नहीं मानते हैं। नारद जी के विवाह करने की बात नहीं मानी। और बात मान ली। यही होता है। अस्तु।

भगवान् क्या हैं ? भगवान् प्राणियों के परमप्रेमास्पद हैं। संसार में सबसे अधिक हमारा अगर प्रेम का पात्र है तो वह भगवान् हैं। प्रत्येक प्राणी यह चाहता है कि हम किसी से प्रेम करें। यह भी चाहता है कि कोई हमारे ऊपर अनुग्रह करे। संसार के लोग तो जब तक आपसे उनका स्वार्थ सिद्ध होगा तब तक आपसे प्रेम करेंगे और स्वार्थ सिद्धि नहीं हुई तो ठुकरा देंगे लेकिन भगवान् कभी नहीं छोड़ते। भगवान् करुणावरुणालय हैं। जिसको अपनाते हैं उसका कभी त्याग नहीं करते। उसका कल्याण करते हैं। भगवान् भक्तवत्सल हैं। भक्तों के वत्सल होते हैं। जब गाय बछड़ा जनती है तो बछड़े से नहीं कहती कि तुम नहाकर आओ तब मैं तुझे चाटूँगी। अपितु चाट-चाटकर उसके शरीर को स्वच्छ कर देती है। उसी तरह से अपने भक्तों के दोषों को भगवान् अपने प्यार से दूर कर देते हैं और अपनाते हैं। संसार में जहाँ प्यार होता है वहीं आनन्द होता है। आनन्द और प्रेम दोनों एक साथ रहते हैं। अगर कोई प्रेमास्पद की खोज कर ले तो आनन्द की खोज पूरी हो जाएगी। और आनन्द सब कोई चाहते हैं। आनन्द प्राणिमात्र के जीवन का लक्ष्य है। आप कहीं भी जाएँ कुछ भी करें। आपसे कोई पूछे आप बतायेंगे फिर पूछे आप क्यों जा रहे हो। वह पूछता चला जाएगा। जब आप कहोगे कि हमको वहाँ जाने से सुख मिलता है तो फिर नहीं पूछेगा। समझ जाएगा कि सुख तो सब चाहते हैं। इस प्रकार सुख की प्राप्ति प्राणिमात्र का लक्ष्य है। सुख की प्राप्ति प्रेमास्पद के साथ जुड़ी हुई है। भगवान् सच्चिदानन्दस्वरूप हैं। सबके परम प्रेमास्पद हैं। सबकी अन्तरात्मा हैं। इस बात का ज्ञान जब प्राणी सत्पुरुषों के पास जाएगा तब पता चलेगा।

सतां प्रसंगान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति।

और देखिये भगवान् की जो कथा है वह सत्पुरुषों से सुनने पर अच्छी लगती है। कहते हैं कि कुछ नशे हैं जिनसे बचना चाहिए। कुछ नशे ऐसे हैं जिनको लगा लेना चाहिए। शराब का नशा, गांजा का नशा, पान का नशा। आजकल तो और भी कई तरह के नशे आ गए हैं, इनसे बचो। ये सर्वनाश करने वाले हैं और उतर जाने वाले हैं। राजा जा रहा था। हाथी में बैठकर। कुछ लोग शराब के नशे में धुत थे। रास्ते में खड़े थे।

बोले कि ऐ हाथी वाले ! हाथी बेचेगा ? क्या दाम लेगा ? राजा ने कहा कि अच्छा ! सिपाहियों से कहा कि पकड़कर बन्द करो । बन्द कर दिया हवालात में । रात भर बन्द रहे । सबेरे राजा ने बुलाया तब तक होश में आ गए थे। राजा ने पूछा क्यों हाथी खरीदोगे? एक ने कहा हुजूर खरीदने वाला उतर गया । नानक कहते हैं -

विषयी जन मद पीवते उतर जात परभात ।
नाम खुमारी नानका चढी रहे दिन रात ।।

ये नशे तो लगाने के नहीं हैं । इनसे तो पीछा छुड़ाओ और एक नशा है वह लगाने का है । वह कौन सा है ? भगवान् की कथा के श्रवण का नशा । सनत्कुमारों को यह नशा लगा है । मानस में आता है -

आसा वसन व्यसन यह तिनहीं । रघुपति चरित होइ तह सुनहीं ।

दिगम्बर हैं, लेकिन उनको व्यसन लग गया है । व्यसन क्या है ? नशा । माता रोके, पिता रोके, गुरु रोके, समाज रोके तब भी न रुके वह व्यसन है । उनको भी व्यसन लग गया है पर कौन सा ? जहाँ भगवान् की कथा होती है वहाँ जाकर सुनने लगते हैं। हनुमान जी को भी यही व्यसन है । जहाँ-जहाँ भगवान् रघुनाथ जी का कीर्तन होता है वहाँ वे पहुँच जाते हैं ।

यत्र-यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र-तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम् ।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम् ।।

यहाँ तक कि भगवान् श्रीरामचन्द्र जी जब वैकुण्ठ जाने लगे तो सारे अयोध्यावासियों को विमान में बिठाल लिया । हनुमान जी ने सबको बिठाल दिया । सब बैठ गए । विमान जब उड़ने का जब समय आया तो हनुमान जी से लोगों ने कहा कि आप भी आइए तो कहा कि हम नहीं आयेंगे । कहा क्यों ? बोले वहाँ भगवान् की कथा थोडे ही सुनने को मिलेगी । हम तो इसी लोक में रहेंगे । जहाँ-जहाँ कथा होगी वहाँ जायेंगे और सुनेंगे । इसका भी एक आनन्द है । जब मनुष्य सत्पुरुषों के पास जाता है तो उसका मन आनन्दित होता है ।

बात यह है कि जिसको जो रोग लगा होता है, संक्रामक रोग -उसके पास बैठने से वह रोग दूसरों को भी लग जाता है । जिसको भगवान् की कथा सुनने का रोग लगा है, भगवान् के प्रेम का रोग जिसको लगा है उस प्रेमी के पास जब बैठोगे तो वह रोग तुमको भी लग जाएगा । भगवान् के भक्तों से जब भगवान् का चरित्र सुनेंगे, उनकी कथा

सुनेंगे तो -

तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ।

मोक्ष मार्ग में कथा के श्रवण से पहले श्रद्धा होगी । श्रद्धा के बाद विरक्ति होगी । विरक्ति के बाद भक्ति होगी । इस प्रकार मनुष्य भक्ति को प्राप्त करके परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त कर लेता है । कहते हैं-

न युज्यमानया भक्त्या भगवत्यखिलात्मनि ।
सदृशोऽस्ति शिवः पन्था योगिनां ब्रह्मसिद्धये ।।

अखिलान्तरात्मा भगवान् में भक्ति को छोड़कर ब्रह्म की सिद्धि के लिए योगियों के लिए दूसरा मार्ग नहीं है । भक्ति क्या है ? देखिये कितनी अच्छी बात भगवान् कपिल बता रहे हैं । बोले कि भक्ति भी कई प्रकार की होती है । तमोगुणी भक्ति, रजोगुणी भक्ति आदि। तमोगुणी भक्ति कौन सी है ?

जे परिहरि हरिहर चरन भजहिं भूतगन घोर ।
तिनकी गति मैं पावहुँ जो जननी मत मोर ।।

जो हरिहर के चरणों को छोड़कर घोर भूतगणों का भजन करते हैं । शराब चढ़ाओ। सूअर चढ़ाओ। बकरा चढ़ाओ । न जाने कौन कौन से उपाय बताते हैं । ऐसे लोग हैं जो भूतों की सेवा कर रहे हैं । यह तमोगुणी है । कुछ रजोगुणी हैं जो यक्ष-रक्षों की पूजा करते हैं । कुछ सत्त्वगुणी लोग हैं जो भगवान् की सेवा करते हैं । मनुष्य जैसा होता है उसका प्रेमास्पद उसके ही जैसा होता है । आप किसी के व्यक्ति को यदि समझना चाहें तो यह देखिये कि उसके दोस्त कैसे हैं ? कैसे लोगों से उसकी मित्रता है ? कैसा साहित्य पढ़ता है ? कैसा भोजन करता है ? समझ लो कि उसका स्वभाव वैसा ही है और कैसा गुरु बनाता है यह भी देखना पड़ेगा ।

एक राजा था । गुरु खोजने चला । बड़े-बड़े महात्माओं के पास गया । कोई पसन्द नहीं आया । एक नट था वह बाँस के ऊपर चढ़कर नाच रहा था । राजा ने कहा कि यह महात्मा है । कैसे इसने अपनी आत्मा को तौल दिया है । उसको प्रणाम किया और उसी को अपना गुरु बना दिया है । ऐसा होता है जो ढोंगी पाखण्डी होते हैं उनको ढोंगी पाखण्डी ही गुरु के रूप में मिल जाते हैं और वे दान भी उन्हीं लोगों को करेंगे । जो उत्तम प्रकार के लोग होते हैं वे भगवान् के सात्त्विक स्वरूप की पूजा करते हैं और सात्त्विक पूजा में भी एक पूजा होती है निर्गुण पूजा । निर्गुण भक्ति ।

मद् गुणश्रुतिमात्रेण मयि सर्वगुहाशये ।
मनोगतिरविच्छिन्ना यथा गंगाम्भसोऽम्बुधौ ।।

लक्षणं भक्तियोगस्य निर्गुणस्य ह्युदाहृतम् ।
अहैतुक्यव्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ।।

भगवान् बोले मेरे गुणों के श्रवण मात्र से मेरे प्रति प्रेम हो जाता है । यह निर्गुण भक्ति है । बड़ी मनोरम बात आपको सुनाते हैं।

एक बार किशोरी जी राधा रानी अपनी ललिता नाम की सखी से बोलीं कि सखी मेरा मन बड़ा कलुषित है । मैं अपना यह शरीर का त्याग करना चाहती हूँ । जीवन नहीं रखना चाहती । पूछा ललिता सखी ने कि क्या बात है ? बोली मेरा तीन से प्रेम हो गया है । मेरा मन तीन जगह जाता है । जब कि प्रेम एक ही से हो सकता है । पूछा कि वह तीन कौन कौन है ? तो किशोरी जी बोली कि एक तो जो वन में वंशी बजाता है उसकी ओर मेरा मन जाता है । दूसरा मैं अपनी सखियों से सुनती हूँ कि नन्द का लाल है छोरा है जो सखियों के यहाँ जाकर माखन चुराता है उसमें भी मेरा मन जाता है और आज मैंने कृष्ण नाम सुना। कृष्ण नाम सुनते ही मेरा मन उसकी ओर चला गया । तीन-तीन के प्रति मेरे मन में प्रेम हो रहा है ।

इससे अच्छा तो मर जाना है सखी । ललिता सखी बोली कि अरी बावली ! ये तीन नहीं हैं । ये तीनों एक ही हैं । जो वंशी बजाता है वही नन्द का छोरा है और जो नन्द का छोरा है उसी का नाम कृष्ण है ।

पूर्व जन्म के जिसके पुण्य रहते हैं उसे भगवान् की आराधना की प्रवृत्ति है उसका प्रेम उसी से होता है। आप देखिये भगवान् श्रीराम जब पुष्पवाटिका में जाते हैं तो जानकी जी उनकी ओर देखकर उनको अपना सब कुछ समर्पण कर देती हैं । **प्रीति पुरातन लखहि न कोई** । पुरातन प्रीति है । दोनों पहले से ही पति पत्नी थे । पार्वती जी भगवान् शंकर को प्राप्त करने के लिए तपस्या करती हैं । लोग आकर शंकर जी की बुराई करते हैं लेकिन पार्वती जी नहीं सुनती । वह तो यही कहती हैं

महादेव अवगुण भवन विष्णु सकल गुण धाम ।
जाकर मन रम जाहि सन ताहि ताहि सन काम ।।

भगवान् शंकर के विकराल रूप को देखकर माता मेना घबड़ा गईं । पार्वती जी को गोद में लेकर बैठकर रोने लगी। वे बोलीं कि उनसे तेरा विवाह नहीं बनेगा । यदि विवाह

हुआ तो जहर खा लूँगी। लेकिन इसके साथ मैं तेरा विवाह नहीं होने दूँगी। इस नारद का मैंने क्या बिगाड़ा है जो तुझे उल्टी शिक्षा देकर गया है। नारद जी की बुराई कर ही रही थी कि इतने में ही नारद जी वहाँ पहुँच गए। मैना ! क्या सोच रही है ? तेरी पुत्री तो सदा से ही शंकर की है। जन्म-जन्म से इसका शंकर के साथ सम्बन्ध है। इसलिए यह उन्हीं से व्याही जाएगी। तुम शोक मत करो। मैंना ने शर्त लगाई कि अगर उनको विवाह करना हो तो उनको ठीक से आना पड़ेगा। भूत बनकर न आएँ। नारद जी लौटकर भगवान् शंकर के पास जनवासे में कहने लगे कि महाराज ! बरात लौटाना है कि शादी करनी है ? बोले कि शादी करके जाना है तो बोले कि तब ठीक से बनो। तब भगवान् ने अपना रूप बनाया।

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि ।।

उनका जो गजचर्म था वह नील वर्ण का था वह सुन्दर वस्त्र बन गया। सब नाग आभूषण बन गए। सुन्दर गौरवर्ण हो गया। माथे में तिलक चन्द्रमा हो गया। शंकर जी का स्वरूप देखकर सबलोग मुग्ध हो गए। पूर्व जन्म का जिसका सम्बन्ध होता है या फिर सत्पुरुषों का संग करके उनके जो प्रेम का नशा है जिसको लग जाता है वह भगवान् के गुणों के श्रवण मात्र से भगवान् का प्रेमी हो जाता है। भगवान् कहते हैं कि सब प्राणियों के हृदय में मेरा निवास है। मेरे प्रति प्रीति की जो धारा है जैसे गंगा की धारा अनवरत समुद्र की ओर बहती है उसी तरह से मेरे प्रति प्रीति की धारा बहती जाए। अहैतुकी क्यों बहती है ? क्यों भगवान् से प्रेम करने कोई बता नहीं सकता ? बीच में व्यवधान नहीं। ऐसा प्रेम ही निर्गुण भक्ति है। ऐसी भक्ति जिसको प्राप्त हो जाती है वह संसार सागर से पार हो जाता है।

फिर भगवान् ने प्रकृति और पुरुष दोनों का विवेचन किया। बताया कि मूल प्रकृति से महत् तत्त्व हुआ। महत् तत्त्व से अहं तत्त्व हुआ। उससे पंच तन्मात्राएँ हुईं। फिर उसके द्वारा पाँच कर्मेन्द्रियाँ पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ पंच प्राण हुए। सभी तत्त्व हुए। पच्चीसवाँ तत्त्व आत्मा हुई। तत्त्वों की संख्या हो गई। यह बताया कि यह जो प्रकृति है यह पुरुष को भोग मोक्ष प्रदान करने के लिए संसार की रचना करती है। जब तक यह पुरुष अपने स्वरूप को नहीं समझता तब तक इसके मोह में पड़कर भटकता रहता है। जब इसको अपने स्वरूप का बोध हो जाता है तो वह इससे मुक्त हो जाता है। इस तरह से बड़ा सुन्दर उपदेश भगवान् कपिल ने माता देवहूति को दिया और भगवान् वहाँ से उठकर समुद्र के किनारे तपस्या करने चले गए जहाँ पर फिर गंगा पहुँची। जब बेटा जाने लगा तो थोड़ा

कष्ट तो हुआ। पुत्र हीतो थे पर अब गुरु भी हो गए । वह उसी बिन्दु सरोवर में रहकर निदिध्यासन करने लगी। ध्यान करने लगी । धीरे-धीरे उसका शरीर के प्रति आसक्ति का भाव ही नहीं रह गया । जैसे कोई मदिरा के मद से अन्धा हो उसके अपने कपड़ों का ध्यान नहीं रहता वैसे ही उसे अपने शरीर का कोई ध्यान न रहा और नित्य निरन्तर अपने स्वरूप की स्थिति को प्राप्त करके वह परम पद को प्राप्त हो गई । बस आज कथा का यहीं पर विराम करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[43]

।। राम राम तिरालीस ।।

मन को समता में स्थित कर ही संसार को जीता जा सकता है

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो ।

मनु के दो पुत्र थे और तीन कन्याएँ थीं । पुत्र में प्रियव्रत और उत्तानपाद थे और कन्याओं में आकूति, देवहूति और प्रसूति । उत्तानपाद के वंश का और उस वंश में उत्तानपाद के जो पुत्र हुए हैं ध्रुव जी उनका परम पवित्र चरित्र सुना । यह जो प्रियव्रत राजा थे । ये विरक्त हो गए थे । नारद जी के सत्संग से इन्होंने राज काज से अपना मन हटाकर भगवान् के चरणों में लगा दिया था । वन में जाकर रहने लगे थे । राजा प्रियव्रत को अपने स्वधर्म में, क्षत्रिय का धर्म है प्रजा का पालन करना । उसमें लगाने के लिए ब्रह्मा जी गए। हंस में बैठकर ब्रह्मा जी वहाँ पहुँचे । प्रियव्रत और नारद दोनों ने ही उनको प्रणाम किया। ब्रह्मा जी ने उनको उपदेश दिया । उन्होंने कहा आओ हम तुमको अमृत सुनाते हैं । तुम्हारे कल्याण का उपदेश देते हैं । वह उपदेश यह है कि तुम पहले गृहस्थाश्रम स्वीकार करो। गृहस्थाश्रम स्वीकार करके अपने स्वधर्म प्रजा का पालन करो । उसके बाद फिर संन्यास लेकर संसार का त्याग करना । गृहस्थाश्रम कोई बुरी वस्तु नहीं है । गृहस्थाश्रम भी जरूरी है । एक प्रकार का किला है गृहस्थाश्रम । जैसे कोई किले में बैठकर शत्रु से लड़ाई लड़ता है और शत्रु को जीत लेता है उसी प्रकार गृहस्थाश्रम में बैठकर काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, मत्सर इन शत्रुओं से संघर्ष करता है और उसके बाद इन पर विजय प्राप्त कर लेता है । सच्ची विजय तो यही है कि हमारे मन में जो काम क्रोधादि विकार हैं इनको हम जीत लें और मन समता में स्थित हो जाए । भगवद् गीता में बताया है-

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ।।

जिन्होंने अपने मन को समता में स्थित कर लिया उन्होंने इस लोक में रहते-रहते ही संसार को जीत लिया। क्योंकि ब्रह्म निर्दोष ओर सम है । जिसका मन निर्दोष और सम हो गया उसका मन ब्रह्म हो गया । सब ब्रह्म में जाकर विलीन हो गया । वह ब्रह्म

में स्थित हो गया । इसीलिए समता का अभ्यास करना चाहिए । घर छोड़ दिया। जब कोई अपने सामने है ही नहीं तो झगड़ा किस बात से होगा ? क्रोध क्यों आएगा ? निमित्त के रहते हुए भी जब हमरा मन शान्त रहे तब समझना चाहिए कि हमने मन के विकार को जीता और निमित्त नहीं है तो क्या जीता? मनुष्य को व्यवहार में रहते हुए भी अपने आपको संयत रखना चाहिए । बहुत से लोगों का यह स्वभाव होता है कि बिना बात के लोगों से झगड़ा करते रहते हैं । घर में भी झगड़ा होता है । सास बहू पति पत्नी देवरानी जेठानी लड़ते हैं । अगर उनको समझाओ कि झगड़ा मत करो तो कहते हैं कि हम बोलेंगे ही नहीं । बोलना बन्द करना सरल है पर सोच समझकर बोलना कठिन है । बोलना तो कोई भी छोड़ सकता है ।

हम कहा करते हैं कि एक साधु था । मौनी था । दिखने में बड़ा सुन्दर शरीर था। बड़ी जटाएँ, तिलक। वह स्लेट में लिखकर बात करता था। बोलता नहीं था । लोग उसके स्वरूप को देखकर प्रभावित हो गए और उनसे प्रार्थना की कि महाराज ! आप बोलना शुरु कर दीजिए । आप बोलेंगे तो लोगों का कल्याण होगा । उन्होंने स्लेट में लिखकर दिया कि जब तक यज्ञ नहीं होगा तब तक मौन नहीं खुलेगा । लोगों ने चन्दा करके यज्ञ कराया। यज्ञ हुआ । पूर्णाहुति हो गई । बड़े-बडे महात्मा पण्डित आए । दक्षिणा बँटी । अब लोगों ने कहा कि महाराज ! मौन खोल दो । फिर लिखकर दिया कि एक गौ का दान और कराओ । गौ भी बुलाई गई । गौदान कराया उनसे। अब उसके बाद महात्मा जी का जब मौन खुला तो बात-बात पर गाली निकलने लगी । बडी कर्कश बोली । लोग दो ही चार दिन में घबड़ा गये और इकट्ठे होकर हाथ जोड़कर बोले कि महाराज ! भले ही एक यज्ञ और करा लो लेकिन अब मौन हो जाओ । यह होता है ।

सोच समझकर बोलना सरल बात नहीं है । तौल कर बोलना चाहिए। गृहस्थाश्रम इसके तैयारी के लिए है । अपने आपको तैयार करो कि हम संसार में रहते हुए भी काम, क्रोध को जीत सकते हैं कि नहीं जीत सकते हैं ? अगर गिर गए तो गिरेंगे । गृहस्थ ही तो हैं । साधु होकर गिरेगा तो जाने कहाँ जाएगा ? यह साधु कम्बल ओढ़ने वाले हैं और तुमलोग राजकुमार हो । गृहस्थाश्रम बुरी चीज नहीं है । अभ्यास के लिए एक स्थान है। लेकिन यह भोग के लिए नहीं है । संसार के भोगों के लिए गृहस्थाश्रम भगवान् ने नहीं बनाया । धीरे-धीरे संसार से अपने मन को हटाकर वश में करने के लिए भगवान् ने बनाया । ये अपने ध्यान में रहना चाहिए । और अगर यह ध्यान में न रहा तो गृहस्थाश्रम भी नरक बन जाता है । तृष्णा शान्त नहीं होती ।

ब्रह्मा जी ने राजा प्रियव्रत को समझाया कि पहले गृहस्थ बनो। उनके उपदेश को शिरोधार्य करके राजा प्रियव्रत लौटकर घर आए और उन्होंने राज किया। पृथ्वी के जो नौ द्वीप हैं ये राजा प्रियव्रत ने बनवाये। जम्बूद्वीप में हमलोग रहते हैं। इसमें कहते हैं कि नौ द्वीप हैं और सात खण्ड हैं। उन सात खण्डों में भरत खण्ड हैं जिसमें हमलोग रहते हैं। उनके पुत्र हुए आग्नीध्र। उर्वशी में वे आसक्त हो गए। फिर उनके पुत्र हुए नाभि। नाभि का विवाह मेरुदेवी से हुआ। उनकी सन्तान नहीं थी। सन्तान के लिए उन्होंने यज्ञ किया। उस यज्ञ में भगवान् प्रकट हो गए। वरदान माँगने के लिए कहा तो नाभि ने कहा कि महाराज! आपके समान पुत्र चाहिए। भगवान् बोले कि हम ही तुम्हारे घर में पुत्र के रूप में अवतार लेंगे। उनके घर में भगवान् ने ऋषभदेव जी के रूप में अवतार लिया। पहला भगवान् का मानव अवतार हुआ। इन्हीं ऋषभदेव को जैन लोग अपना तीर्थंकर मानते हैं। हमलोगों के अवतार और उनके तीर्थंकर। इसलिए जैन लोग भागवत की बड़ी इज्जत करते हैं। मस्तक पर धारण करते हैं क्योंकि इसमें उनके तीर्थंकर का चरित्र है। ऋषभदेव के सौ पुत्र हुए। सौ पुत्रों में सबसे बड़े पुत्र थे भरत। इक्यासी कर्मकाण्डी हो गए और नौ योगीश्वर हुए। इसका वर्णन भागवत के एकादश स्कन्ध में आता है। ऋषभदेव जी महाराज बड़े प्रभावशाली थे। एक बार उन्होंने ब्रह्मावर्त में यज्ञ किया। उसमें बहुत प्रजा एकत्र हुई। उन्होंने अपने पुत्रों को उपदेश देने के बहाने सारी प्रजा को उपदेश दिया।

महत्सेवां द्वारमाहुर्विमुक्तेस्तमोद्वारं योषितां संगिसंगम्।
महान्तस्ते समचित्ताः प्रशान्ता विमन्यवः सुहृदः साधवो ये।।

भगवान् ऋषभदेव जी बोले कि महान् पुरुषों की सेवा मोक्ष का द्वार है। और दुर्जनों का संग नरक का द्वार है। महात्माओं की सेवा करने से मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति होती है। महात्मा कौन ? यह भी समझना है। किसका संग करें कौन महात्मा है यह पहले ही समझ लेना चाहिए। केवल कपड़ों से तिलक से यह सिद्ध नहीं होता कि यह महात्मा हैं। बिना जाने ऐसे ही आजकल लोग गुरु बना लेते हैं।जबकि पूर्वजों ने कहा है- **गुरु करे जान और पानी पिये छान।** गुरु भी जानकर अच्छी तरह से समझकर करना चाहिए। चाहे जिसको गुरु बना बैठे और बाद में ग्लानि हो रही कि हाय हमने क्या कर लिया। आजकल तो ऐसे गुरु बने हैं कि लाउडस्पीकर से दीक्षा दे रहे हैं। इन्हीं की दुकान से सामान खरीद लो और वे सब मन्त्र बता देते हैं और कहते हैं कि इनमें से कोई मन्त्र पकड़ लो। ऐसे नहीं होता। गुप्त रूप से जो उपदेश दिया जाता है उसको मन्त्र कहते हैं। जो एक ही इष्ट के उपासक हैं उनको तो एक साथ दिया जा सकता है पर दूसरों को नहीं।

पहले तो यह समझें कि गुरु कैसा और गुरु को भी समझना चाहिए कि चेला कैसा है। कहीं चेला भी भस्मासुर होते हैं। गुरु से ज्ञान लिया और उन्हीं की खोपड़ी में हाथ रख दिया। यह भी समझ लेना पड़ता है।

हम आपको यह बताना चाहेंगे कि गुरु मन्त्र ब्राह्मण से ही लेना चाहिए। जो ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ है और सदाचारी है। साथ ही परम्परा से दीक्षित होकर उस मन्त्र को सिद्ध कर चुका है। उसी को मन्त्र देने का अधिकार है। इसी तरह शिष्य बनने आये व्यक्ति मेंभी देखना चाहिए कि यह मन्त्र लेने योग्य है कि नहीं।

यहां महात्मा के जो लक्षण बताये उनका विचार करें। महान्तस्ते महात्मा कौन ? बताया कि **समचित्ताः**। जिसका चित्त समान होता है।

बन्दौ सन्त समान चित हित अनहित नहिं कोय।
अंजलिगत शुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोय।।

सन्त समान चित्त वाले होते हें। गोस्वामी जी कहते हैं कि अंजलि में आप फूल रखिये। भगवान् को आप पुष्पांजलि अर्पित कीजिए। दोनों हाथ से। फूल यह नहीं देखेगा कि मैं बाँये हाथ को सुगन्धित कर लूँ कि दाहिने हाथ को। इसी तरह महात्मा प्राणिमात्र का कल्याण करते हैं। उनके मन में भेदभाव नहीं होता। आप देखिये कि आप इतने सारे लोग यहाँ पर बैठे हैं। भागवत की कथा सुन रहे हैं। नर नारी चारों वर्ण के लोग यहाँ पर बैठे हैं। किसी से यह नहीं कहा जाता कि उठकर चले जाओ। आप कथा सुनने के अधिकारी नहीं हैं। आप देखिये गोकर्ण ने भागवत की कथा सुनाई ग्रामवासियों को तो पहली बार में तो केवल धुन्धुकारी का कल्याण हुआ और दूसरी बार जब कथा सुनाई तो जितने गाँव के लोग थे चाहे किसी भी जाति के रहे हों। यहाँ तक कि वहाँ के कुत्ते और चाण्डाल भी चतुर्भुज विष्णु बनकर भगवान् के लोक में चले गए। यह है सनातन धर्म। सबका कल्याण महात्मा लोग चाहते हैं। सबकी कल्याण की व्यवस्था हमारे आपके सनातन धर्म में है।

दूसरा विशेषण कहा- **प्रशान्ताः**। महात्मा प्रशान्त होते हैं। हमारे गुरुजी महाराज थे। ब्रह्मानन्द जी सरस्वती। ज्योतिष्पीठाधीश्वर ब्रह्मलीन महाराज। वे बताया करते थे कि जब हम घर से निकले तो हमने संकल्प लिया था कि हम उसको गुरु बनायेंगे जो बाल ब्रह्मचारी होगा और जिसमें क्रोध न हो। खोजते रहे। खोजते- खोजते एक महात्मा मिले। बाल ब्रह्मचारी थे। दण्डी स्वामी थे। सोचा कि इनसे दीक्षा ले लें। उन महात्मा के पास जाकर उन्होंने कहा कि महाराज ! हमें आग चाहिए। अब महात्मा जी क्रोधित

हो गए । यहाँ आग माँगने आया है । संन्यासियों के पास आग होती है ? इन्होंने कहा कि महाराज ! बाहर भले ही न हो । भीतर तो है ही। भीतर तो सुलग रही है । तो क्रोधी गुरु बना लो दुर्वासा जी जैसे जिन्दगी भर की सेवा एक क्षण में खत्म हो जाएगी । न जाने कब और कौन सा शाप दे दें । इसीलिये प्रशान्त महात्मा । क्योंकि जो स्वयं शान्त होगा वही दूसरों को शान्ति दे सकता है ।

इसी में **विमन्यवः** भी आ गया । क्रोधरहित । फिर कहा- **सुहृदः** माने सबके सुहृद्। सुहृद् उसको कहते हैं जो बिना प्रत्युपकार की अपेक्षा के हमारा उपकार करे । वह सुहृद् कहलाता है । आप देखिये वकील के पास जाओगे तो कन्सल्टेशन की फीस पहले ही रखवा लेगा। डॉक्टर भी आपको देखने के लिए आएगा तो वह भी फीस लेगा । लेकिन महात्मा के पास जाओगे तो वह आपसे कुछ माँगेगा नहीं, नारियल लेकर जाओ, फूल पत्ती लेकर जाओ, खाली हाथ चले जाओ । सन्त आपको आपके कल्याण की बात बतायेंगे । कभी जाओ । नेताओं के पास जाओ तो सिफारिश की चिट्ठी चाहिए । जब सिफारिशी चिट्ठी होगी तब नेता आपकी बात सुनेगा । महात्माओं के पास कोई सिफारिशी चिट्ठी नहीं । बिना पहचान के चले जाओ तब भी वे आपके कल्याण की बात करेंगे । वे हैं सबके सुहृद्।

सब के प्रिय सब के हितकारी । दुःख सुख सरिस प्रशंसा गारी ।।

उनको सुख-दुःख दोनों समान होते हैं । इनके लिये निन्दा-स्तुति दोनों समान होती है । ऐसे जो महात्मा हैं उनका संग करना चाहिये । साथ ही ऋषभदेव ने यह भी बताया कि दुर्जनों के संग से बहुत बड़ी हानि होती है। आप दुर्गुणों से मुक्त हो सकते हैं । आपको कोई व्यसन लग गया है शराब का, गांजा का, भांग का और किसी तरह का नशा लग गया है तो आप चाहें तो अपने मन को पक्का करके उससे मुक्त हो सकते हैं । लेकिन जिनको यह नशा लगा है उनका संग करेंगे तो वह फिर आपको वहीं डाल देंगे । इसीलिए यह कहा जाता है कि आग छूकर एक बार मनुष्य बच सकता है लेकिन आग में गरम किया हुआ चमीटा छुओगे तो बिना जले नहीं रहोगे । इसलिए दुर्जनों का संग छोड़ देना चाहिए । आप सिगरेट छोड़ सकते हैं लेकिन सिगरेट पीने वालों के बीच में बैठेंगे तो फिर शुरु करा देंगे । इसीलिए दुर्जनों का त्याग करना । सत्पुरुषों का संग करना और फिर बहुत सुन्दर सुन्दर उपदेश भगवान् ऋषभदेव ने अपनी प्रजा के लिए अपने पुत्रों को सम्बोधित करके दिए ।

उसके पश्चात् अपने ज्येष्ठ पुत्र भरत को इस देश का सिंहासन देकर वह विरक्त

होकर घर से निकल गए। घोर जंगल में ऋषभदेव जी चले गए । वहाँ जाकर उन्होंने आत्मचिन्तन आत्मध्यान करते-करते शरीर से अपनी अहंता और ममता छोड़ दी । यह शरीर मैं हूँ और यह शरीर मेरा है यह भावना उनके हृदय से निकल गई । आत्मस्वरूप में स्थित हो गए । उनके पास सिद्धियाँ आईं । जब कोई मनुष्य भगवान् को प्राप्त करने के लिए साधना प्रारम्भ करता है ज्ञान प्राप्त करने के लिए तो सिद्धियाँ आ जाती हैं ।

ऋद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई । बुद्धिहिं लोभ देखावहिं आई ।।
कल बल छल करि जाहिं समीपा । अंचल बात बुझावहिं दीपा ।।
होइ बुद्धि जौं परम सयानी । तिन्ह तन चितव न अनहित जानी ।

अणिमा, लघिमा, महिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व-- ये आठ सिद्धियाँ हैं और नौ प्रकार की निधियाँ हैं । मान, पूजा, विख्याति धनलाभ और नाना प्रकार के उपद्रव मनुष्य जब साधना में अग्रसर होता है तो उसके सामने होने लगते हैं । इन ऋद्धि और सिद्धियों में पड़ गया तो साधना छूट जाती है । मनुष्य जब मोक्ष के मार्ग पर आगे बढ़ता है तो देवताओं को अच्छा नहीं लगता । वह सोचते हैं कि हमारा गुलाम बना रहे। इसीलिए ऋद्धि-सिद्धि भेजकर उसकी तपस्या में बाधा डालते हैं । इसलिए उनसे सावधान रहना पड़ता है । सिद्धियाँ आयेंगी लेकिन आप उनकी तरफ अगर देखेंगे तो फिर आपको यह अभिमान हो जाएगा कि मैं सिद्ध हूँ । मैं यह कर सकता हूँ । मैं वह कर सकता हूँ । अभिमान आया तो अपने स्वरूप को भूल जाओगे । **अहं सिद्धः** । यह अभिमान हो जाने पर साधना छूट सकती है । इसीलिए इनकी ओर जो विद्वान् हैं वे देखते ही नहीं । ऋषभदेव जी ने जब सिद्धियों को नहीं देखा तो राजा परीक्षित ने श्रीशुकदेव जी से पूछा कि महाराज ! जो आत्माराम, पूर्णकाम, परम निष्काम हैं, आत्मज्ञानी हैं भला सिद्धि उनका क्या बिगाड़ सकती है ? स्वीकार कर लेते । तब श्रीशुकदेव जी ने कहा कि मन का विश्वास नहीं करना चाहिए।

मन का कहा न मानिये मन है पक्का धूर्त ।
ले डूबे मझधार में जाए हाथ से छूट ।।

कहते हैं कि मन का कहना नही मानना चाहिए । मन पक्का धूर्त है । ऐन मौके पर मझधार में डूब जाएगा और हमें भी डुबो देगा इसीलिए मन की बात नहीं मानना चाहिए। कोई कोई विद्वान् कहते हैं कि मन को वश में कर ले तो मन ही मित्र भी हो जाएगा ।

मन को वश करि राखिये मन है पक्का मीत ।
परम ब्रह्म को पाइए मन ही की परतीत ।।

मन को अपने वश में कर लो मन पक्का मित्र है । मन की ही प्रतीति से परब्रह्म को भी प्राणी प्राप्त कर सकता है । भगवान् ऋषभदेव तो भगवान् ही थे । दिगम्बर रहते थे । वे जहाँ ठहरते थे वहीं मल मूत्र का भी त्याग कर देते थे लेकिन उनके मल मूत्र से चन्दन जैसी सुगन्ध निकलती थी । उसी से मलयागिरि बना । ऋषभदेव के मल से मलयागिरि बना । इस तरह से उन्होंने परमहंस चर्या के द्वारा लोगों को मार्गदर्शन दिया। और अपने स्वरूप परम तत्त्व में विलीन हो गए । कुछ लोगों ने बाद में चलकर ऋषभदेव जी के ज्ञान को तो छोड़ दिया पर उनकी बाह्य चर्या की नकल करने लगे । यह बात ठीक नहीं । उनका जो ब्रह्मज्ञान है वह मुख्य वस्तु है ।

ये सब बातें आपको इतिहास की पुस्तकों में नहीं मिलेंगी । स्कूली पुस्तकों में नहीं मिलेंगी । यह सब मिलेगा वाल्मीकि रामायण में जिसमें उनके चरित्र का सजीव वर्णन है । अगर आप इतिहास को नहीं मानते हो तो भारत का भारत नाम छोड़ दो क्योंकि भरत के नाम पर ही भारत का नाम भारत हुआ है। इसलिए बहुत सी बातें ऐसी हैं जो भ्रामक हैं और उनके भ्रम को दूर किया जाना बहुत आवश्यक है ।

एक पेरियार नाम का दक्षिण भारत में नास्तिक हो गया है । उसने सच्ची रामायण नाम की एक पुस्तक लिखी जिसमें राम, सीता, भरत, शत्रुघ्न, हनुमान सबके चरित्र पर उसने छीटा उछाला है । उस पुस्तक को उत्तर प्रदेश की मुख्यमन्त्री मायावती ने लाखों की संख्या में बँटवाया और लखनऊ के अमीनाबाद पार्क में उसकी मूर्ति स्थापित कराई। वह सच्ची रामायण यदि कोई पढ़ ले तो उसके मन से राम के प्रति श्रद्धा कम हो जाएगी। हमारे सामने वह पुस्तक आई तो हमने शास्त्री जी से और अन्य विद्वानों से कहा कि इसका उत्तर लिखो । झगड़ा करने से कोई फायदा नहीं है । विचार की लड़ाई विचार से ही लड़ी जाएगी । जो उसने कहा है पुस्तक में वह सब झूठ है । वह अध्याय कहता है जबकि वाल्मीकि रामायण में अध्याय न होकर सर्ग है । यही पहला झूठ है । अस्तु। हम अभी उस पर नहीं जायेंगे । राम का चरित्र जब सुनाने जायेंगे तब आपको बतायेंगे । अभी तो हम यह बता रहे हैं कि राजर्षि भरत बहुत बडे शासक हुए और उनके शासन काल में अपने जो भारत की नीति है कि राज्य बड़े भाई को मिलता है । अतः भरत को राजा बनाया गया और जो छोटे भाई हैं वे दूसरे द्वीपों में चले गए । दूसरे द्वीपों में जाकर उन्होंने राज्य किया इसलिए आज हड्डियाँ, खोपड़ियाँ अगर हमारी जैसी दूसरे देशों में मिलती हैं तो इसका मतलब यह नहीं है कि हम दूसरे देश से आए हैं । इसका मतलब यह है कि हम यहाँ से राज करने वहाँ गए थे। यह सब बातें समझने की हैं । अस्तु ।

राजर्षि भरत ने बहुत समय तक राज्य किया । उसके पश्चात् उनको वैराग्य हुआ। वैराग्य होने के पश्चात् वे अपने पुत्र को राज्यसिंहासन देकर भरत गण्डकी नदी के साथ जहां गंगा का संगम है वहाँ आकर तपस्या करने लगे । भगवान् का आराधन मन से करते हुए वन में कन्दमूल फल से अपना निर्वाह करते हुए वानप्रस्थ जैसे धर्म का पालन करने लगे । इस प्रकार उनका मोक्ष बिलकुल समीप आ गया था । परमात्मा की प्राप्ति होने ही वाली थी लेकिन बीच में ही विघ्न आ गया ।

घृणा शंका भयं लज्जा जुगुप्सा चेति पंचमी । कुलं शीलं च वित्तं च अष्टौ पाशाः प्रकीर्तिताः ।

घृणा माने दया भी एक प्रकार का पाश है । दया से भी प्राणी बँध जाता है । राजर्षि भरत गंगा गण्डकी के संगम पर नदी किनारे बैठकर माला जप रहे हैं । सन्ध्या का समय है । एक गर्भिणी हरिणी जल पीने के लिए वहाँ आई । जल पी ही रही थी कि इतने में नाहर की गर्जना सुनाई पड़ी । सिंह की गर्जना सुनकर वह चौंक गई और नदी के जल में डर के कारण कूद पड़ी । उसके पेट का बच्चा पूरा हो चुका था । नदी में ही वह उसके पेट से बाहर हो गया । किसी प्रकार किनारे आई और लड़खड़ाती हुई गिर पड़ी और मर गई । अब वह जो बालक था हिरण का वह बड़ा सुकुमार नदी में बह रहा था । उसको देखकर भरत जी को दया आ गई । दौड़कर उन्होंने उस बालक को बहने से बचाया । वह ठिठुर रहा था । अपने चीर वल्कल से उसका शरीर पोछा और लेकर अपनी कुटिया में आ गए । अब जहाँ भगवान् का भजन पूजन करते थे हवन करते थे वहाँ उस हरिण बालक का लालन पालन करने लगे । हरी-हरी घास खिलाने लगे । उसके साथ प्रेम करने लगे । हवन करते समय अगर वह हवन की सामग्री छूता तो उसको डाँटकर अलग करते। उदास बैठ जाता तो उनका हवन में मन नहीं लगता था । जल्दी जल्दी हवन करके पहुँचते और उसको गले लगाकर कहते थे कि अरे राजकुमार तुम रुष्ट हो गए । इस तरह से भगवान् का ध्यान छूट गया और हरिण का ध्यान हो गया । बस मन में हरिण भर गया। यह दया भी खतरनाक होती है । माया दया के रूप में भी आ जाती है ।

एक बार एक बड़े योगी महात्मा घूम रहे थे । इतने में एक नारी बड़ी सुन्दरी हाथ में सोने की लगाम लिए रास्ते में मिल गई । उन्होंने पूछा कि आप कौन हैं ? बोली मैं माया हूँ । बोले कि लगाम किसके लिए लिए हो ? कहा कि जो बड़े-बड़े योगी हैं उनके मुँह में लगाने के लिए लिये हूँ । बोले कि मेरे मुँह में भी लगाएगी ? कहा कि तुम तो हमारी गिनती में ही नहीं हो । तुम तो सहज में लगवा लोगे । तो महात्मा जी को भी तैश आ गया ।

बोले कि अरे मुझको लगा तो जानूँ। ऐसा कहकर महात्मा जी अपनी कुटिया में आ गए। सायंकाल नदी के किनारे घाट में बैठकर सन्ध्या कर रहे थे। देखा कि एक तरुणी स्त्री जर्जर आँसू बहाती हुई रो रही है। उन्हें उस पर दया आ गई। पूछा कि क्यों रो रही है ? बोले कि गुरुजी ! ससुराल के लोगों ने मुझे निकाल दिया है। अपने मायके जाना चाहती हूँ लेकिन अब मायके के और मेरी ससुराल के बीच में यह नदी है। मैं इसको कैसे पार करूँ? उन्होंने कहा कि नदी में बहुत जल नहीं है। तू यहाँ से निकल जा। बोली कि महाराज ! मैंने तो कभी अकेले नदी पार की नहीं। कैसे पार होऊँ। उनको दया आ गई। बोले कि चल मैं दिखाए देता हूँ। वह लड़खड़ाने लगी। बोली कि महाराज मैं तो गिर पड़ूँगी। आगे-आगे योगी जी थे। कहा कि मेरी ऊँगली पकड़ ले। उसने ऊँगली पकड़ ली। दो चार कदम बाद बोली कि हाथ से ऊँगली छूट जाएगी। तो महात्मा जी ने उसकी ऊँगली पकड ली। बोली कि मेरे पैर खिसक रहे हैं। मैं तो गिर पड़ूँगी। कहा कि थोड़ा ही सा किनारा बचा है। हिम्मत करके आगे बढ़। बोली मैं तो अब नहीं चल सकूँगी। गिर ही पड़ूँगी। महात्मा जी बोले कि अच्छा तू मेरे कन्धे पर बैठ जा। उनके कन्धे पर दोनों पाँव आगे करके बैठ गई।पर दो चार कदम बाद ही कहा कि अब मैं डगमगा रही हूँ। गिर पड़ूँगी। अब महात्मा जी ने अपना एक कपड़ा दिया। अपने मुँह में कपड़ा दबाया और उसका दोनों सिरा उसको देकर कहा कि इसे पकड़ लो। अब जब दोनों सिरे उसने पकड़ लिया तो वह खिलखिलाकर हँसी। महात्मा जी बोले- अरे तू तो रो रही थी अचानक हँस कैसे रही है ? बोली कि महाराज ये बताओ कि लगाम लग गई कि नहीं? महात्मा जी ने विचारा कि बात तो सही है। मेरे मुख में दुपट्टा दबा है और उसके छोर इसके हाथ में हैं। उसे नीचे उतार कर देखा तो वही माया थी। यह है माया। दया संस्कृत में घृणा-करुणा।यह भी बन्धन का कारण बनती है।

इसी तरह शंका। बात-बात में शंका हो जाती है। वह भी बांधती है। बहुत लोगों का यह स्वभाव होता है शंका ही करते रहते हैं। एक मनुष्य था वह बात-बात में शंका करता था। गाँव के लोगों ने उसका नाम शंकाराम रख दिया। शंकाराम शंकाराम कहने लगे। उसको बड़ी ग्लानि हुई उसने गाँव छोड़ दिया और साधु बनकर घूमने लगा। एक गाँव में गया और लोगों से पूछा कि यहाँ कोई ब्राह्मण का घर है। लोगों ने एक घर बता दिया तो वह वहाँ चला गया। घर में ब्राह्मणी थी उसने भोजन बनाया। महात्मा जी को भोजन कराया। भोजन करके जब महात्मा जी उठे तो उसने कहा कि हमारी एक शंका है। सोचने लगा कि शंका से बचने निकले तो अब इसे भी शंका ? फिर भी कहा कि कहो तुम्हारी क्या शंका है ? ब्राह्मणी बोली कि महाराज ! शंका यह है कि यह गाँव

मुसलमानों का है । इस गाँव में सब मुसलमान रहते हैं । हम लोग भी पहले मुसलमान ही थे । लेकिन गाँव के लोगों ने कहा कि तुम हिन्दू बन जाओ क्योंकि साधु-सन्त आयें तो उनका स्वागत होगा। तदनुसार हम हिन्दू बन गए हैं और जितना बन पड़ता है, आये-गये की सेवा करते हैं । हमारी तीन बेटियाँ और दो बेटे हैं। तीन बेटी तो हमने व्याह दी। बेटों का विवाह हिन्दुओं में करें कि मुसलमानों में यही शंका है । महात्मा जी बोले कि मुझे भी शंका है कि अब हम तुम्हारे हाथ का खा चुकने के बाद कब्रिस्तान में जायेंगे कि श्मशान में ? तुम्हारा भोजन तो हम कर ही चुके हैं । यह शंका होती है ।

इसी तरह भय, लज्जा । अच्छे काम में लोगों को लाज लगती है । जुगुप्सा, कुल, शील और धन ये आठ पाश हैं जिनसे जीव बंधा हुआ है। कहते हैं -

पाशबद्धः सदा जीवः पाशमुक्तः सदाशिवः ।

पाश से जो बद्ध है वह जीव और जो पाश से मुक्त है वह सदाशिव होता है । तो दया आ गई जड़भरत को और वे हिरण का ही चिन्तन करने लगे । धीरे धीरे वह हिरण बालक बड़ा हो गया । एक दिन अपने झुण्ड में जाकर मिल गया और फिर लौटकर नहीं आया । राजर्षि भरत हाय मेरा हरिण ! कहाँ है ? कहाँ गया? किस हाल में है? ऐसा पुकारते हुये जगह-जगह हरिण को खोजते-खोजते परेशान हो गए । चन्द्रमा का उदय हुआ । चन्द्रमा से पूछते हैं कि अरे चन्द्रमा ! तूने मेरे हरिण को तो गोद में नहीं ले रखा है और उसी समय प्राणान्त हो गया । यह नियम है कि **- अन्तकाले या मति सा गतिर्भवेत् ।** अन्तकाल में जैसी मति होती है वैसी ही गति प्राणी की होती है । गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ।।

जिस-जिस भाव का स्मरण करता हुआ प्रणी अपने कलेवर माने शरीर का त्याग करता है उस-उस भाव से भावित होने के कारण उसी-उसी गति को प्राप्त हो जाता है । हरिण का चिन्तन करते हुए मरे तो हरिण की योनि में पहुँच गए । दूसरा जन्म हरिण का मिल गया । समझ लीजिए कि मरने का जो समय है वह समय समझिये कि आप कैमरे के सामने बैठते हैं तो जैसा आपका स्वरूप उस समय होगा वैसा ही उसमें आ जाएगा । अगर आप क्रोधित होंगे तो क्रोधी का चित्र हो जाएगा । मरते समय जिसका हम चिन्तन करेंगे । वही आपको बनना पड़ेगा। इसीलिए जो शिकारी लोग हैं शिकार खेलने के लिए जानवरों का ध्यान करते रहते हैं मरने के बाद वे जानवर ही बनेंगे । इसी

तरह से जो भी इधर-उधर का चिन्तन करेगा वह वही बनेगा। बुद्धिमान् वह है जो मरने के समय सबको भुलाव, सबसे अपने मन को हटाकर भगवान् के चरणारविन्द में लगा दे। भगवान् का चिन्तन करते हुए यदि मरेगा तो उसका मोक्ष हो जाएगा। लेकिन मौत नोटिस देकर तो आती नहीं। कब आ जाएगी इसका कौन ठिकाना ? इसलिए भगवान् कहत हैं कि -

तस्मात् सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।

सब कालों में मेरा स्मरण करो और संसार का व्यवहार करो। युध्य माने अपने संसार के जो कर्तव्य है उनका भी पालन करते जाओ और मेरा स्मरण करना मत छोड़ो।

ज्ञान में तीन प्रकार के बाधक होते हैं। प्रतिबन्ध कहते हैं उनको। भूत प्रतिबन्ध, वर्तमान प्रतिबन्ध और भावी प्रतिबन्ध। भूत प्रतिबन्ध यह है कि पहले आपका यदि कहीं प्रेम रहा हो तो वह ज्ञान नहीं होने देगा। एक व्यक्ति था। वह किसी महात्मा के पास गया आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए। उन्होंने उसको उपदेश दे दिया। लेकिन उसके मन में बैठता ही नहीं था। उन्होंने सोचा कि क्या बात है ? इसको अच्छी तरह से दृष्टान्त देकर समझाता हूँ तब भी नहीं बैठ रहा है। पूछा कि बता कि तेरा कहीं प्रेम तो नहीं था? बोला हाँ गुरुजी ! घर में जब था तो मेरी एक भैंस थी उससे मेरा प्रेम था। गुरुजी बोले -अच्छा ये बात है। यह भूत प्रतिबन्ध है। उन्होंने कहा कि अच्छा। एक गुफा बताई कहा कि इसी में रहो। इसी में नहाने धोने की व्यवस्था है। भोजन तुमको यहाँ से भेज दिया जाएगा। बस उसी भैंस का चिन्तन करो। अब वह भैंस का चिन्तन करने लगा। उसी भैंस का चिन्तन करते-करते उसको लगा कि हम ही भैंस हैं। एक दिन गुरु ने पुकारा कि इधर आओ। कहा गुरुजी कैसे आएँ। सींग अड़ रहे हैं। बड़े-बड़े सींग थे। कहा कि मत आओ। आने की नहीं सोचने की जरूरत है। ये सोचो कि भैंस मर गई और उसका शरीर मिट्टी में मिल गया। पानी-पानी में मिल गया। वायु-वायु में मिल गई। अग्नि ठण्डी हो गई और आकाश-आकाश में मिल गया। पाँच तत्त्व उसके समाप्त हो गए तो भैंस का नाम और भैंस का रूप भी खत्म हो गया। उसने ऐसा चिन्तन किया तो उसको आत्मज्ञान हो गया। इसी तरह वर्तमान प्रतिबन्ध होता है प्रज्ञावान् को। बुद्धि कमजोर है। बात बात में कुतर्क करना स्वभाव है। ऐसे लोगों को भी ज्ञान नहीं होता। विपरीत लोगों की बुद्धि सुनते-सुनते उसमें दुराग्रह करके बैठ जाते हैं। कुतर्क और विपर्यय दुराग्रह है। इनके कारण वर्तमान प्रतिबन्ध में ज्ञान का उपदेश मिलने पर भी मनुष्य को बोध नहीं होता। और एक होता है भावी प्रतिबन्ध। किसी ने ऐसे कर्म किए हैं जिनके कारण उसको और

भी जन्म होना है तो वह जब तक कि जन्म नहीं हो जायेंगे तब तक ज्ञान नहीं होगा। जब हो जायेंगे तो ज्ञान हो जाएगा। प्रतिबन्ध मिट जाएगा। प्रतिबन्ध क्या कहलाता है? जैसे घास और चन्द्रकान्त मणि साथ साथ में रखे हों तो अग्नि से वह घास नहीं जलेगी क्योंकि मणि प्रतिबन्धक है। इसी तरह से जब प्रतिबन्धक रहता है तो ज्ञान की अग्नि प्रज्ज्वलित होने पर भी कर्म को जला देने में असमर्थ हो जाती है। अस्तु।

दूसरे जन्म में भरत जी मृग बन गए। मृग बनकर उनको याद रहा। जो भगवान् की प्राप्ति के लिए कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग में से किसी भी योग का साधन करते हैं उनका साधन व्यर्थ नहीं जाता। वह बना रहेगा। अगले जन्म में रहेगा। अगले जन्म में उनको याद आएगी कि हम राजर्षि भरत थे। मृग की आसक्ति के कारण हम मृग बन गए। वह मृग फिर वहीं आया। हरिहर क्षेत्र में और वहाँ व्रत करके, उपवास करके मृग शरीर का त्याग कर दिया। अब तीसरे जन्म में एक वेदवेत्ता ब्राह्मण के घर में इसका जन्म हुआ। उनकी दो पत्नियाँ थीं। एक पत्नी से नौ पुत्र थे और एक से भरत और एक लड़की थी। भरत का नाम जड़भरत के रूप में जाना जाता है। पिता ने भरत को पढ़ाना प्रारम्भ किया। पर ये तो पढते ही नहीं थे। **हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई** पिता पढ़ा-पढ़ाकर हार गए। क्यों ? अपढ़ होते तो न पढ़ते। इन्हें तो पूर्व जन्म का सब ज्ञान था। उन्होंने कहा कि अगर अधिक विद्वान् बनने का हमने स्वांग किया तो पकड़े जायेंगे इसलिए मूर्ख ही बने रहने में सार है। उन्होंने पढ़ाई नहीं की। इतने में पिताजी की मृत्यु हो गई और इनकी जो माता थी वह अपने पति के साथ सती हो गई। उन्हीं भाईयों के साथ ये रहने लगे। जो व्यक्ति किसी काम का होता है घर में उसी की इज्जत होती है। अब यह जड़भरत पढ़े लिखे तो थे नहीं। इनकी भौजाइयाँ बासी रोटी बची बचाई इनको दे देती थीं। भरत जी वही खा लेते थे। और इनको काम भी बताने लगे कि जाओ खेत में जाकर फसल की रक्षा करो तो खेत में जाते थे। वहाँ चिड़िया आए तो कहते थे -

राम की चिड़िया राम का खेत। खाओ चिड़िया भर-भर पेट ।।

चिड़िया को भगाते ही नहीं थे। लोगों ने सोचा कि किसी काम का नहीं है। यह भी नहीं कि घर का ही काम करें। दूसरे लोग भी कोई काम बता दे तो वह भी करे। अपने पराये का भेद तो था ही नहीं। इसी बीच में एक घटना घटी। एक डाकुओं का सरदार था। डाकुओं के सरदार ने जंगल में भद्रकाली की मूर्ति के सामने मनौती की कि मेरा मनोरथ पूरा हो जाए तो मैं नरबलि चढ़ाऊँगा और संयोग से उसकी इच्छा पूरी हो गई। उसने ढूँढा किसी मनुष्य को बलि देने के लिए। पर वह समझ गया कि हमारी बलि

होगी। मौका पाकर वह भाग गया। जब वह भाग गया तो अब देवी के सामने बलि चढ़ाना है तो उसने अपने अनुचरों से कहा कि जाओ किसी को ढूँढ कर लाओ। भरत जी का यह था कि खाने पीने को चाहे जैसा मिले लेकिन शरीर मोटा तगड़ा था। क्योंकि कोई चिन्ता नहीं थी इसलिए शरीर पुष्ट दिखाई पड़ता था। वह तो भाग गया। भरत पकड़े गए। इनको डाकुओं के सरदार के पास लोग ले गए। उन्होंने इनको स्नान कराया। नवीन वस्त्र पहनाये। बढ़िया भोजन दिया। भोजन कराकर अच्छी तरह से फिर बलिदान देते थे वे लोग। खा लिया और बलि के लिये प्रस्तुत हो गये। चूंकि ये ब्रह्मदर्शी ज्ञानी थे जैसे ही भद्रकाली के सामने गए। भद्रकाली प्रकट हो गईं। योगिनी नृत्य करने लगी और उस डाकू का सिर धड़ से अलग कर दिया। जितने उनके साथी थे सबको मार डाला। इस तरह से भगवती एक ब्रह्म तत्त्व को जानने वाले विद्वान् का तत्त्वज्ञानी का अपमान सहन नहीं कर सकी और डाकू का ही विनाश कर दिया। जो महापुरुषों के अनिष्ट की बात सोचता है उसका स्वयं का ही अनिष्ट हो जाता है। जड़भरत का कुछ नहीं बिगड़ा। फिर ये इसी तरह से घूमने लगे।

सिन्धु सौवीर देश का एक राजा था। उस राजा का नाम रहूगण था। वह पालकी में बैठकर कपिल मुनि के आश्रम में ज्ञान प्राप्त करने के लिए जा रहा था। रास्ते में उसकी पालकी का एक कहार बीमार पड़ गया। दूसरे कहार की जरूरत पड़ी। कर्मचारियों ने खोजा तो यही वहाँ दिखाई पड़े। कहा कि चल पालकी उठाना है। जड़भरत उनकी पालकी में जुत गए। अब बात क्या है कि संसारी लोग तो चाहे जैसा चलते हैं लेकिन साधु!! वह तो अलग ही चाल चलता है।

साधु चले पैंया पैंया चीटियाँ बचाए।

कोई जीव हमारे पैरों के नीचे आकर दबकर मर न जाए यह सोचते हुए वे चलते हैं। कभी उनका पैर नजदीक पड़ता था तो कभी लम्बा। पालकी हिल जाती थी। रहूगण ने कहा कि क्यों रे ? कैसी पालकी ढो रहे हो ? यह हिलती है। कहारों ने कहा महाराज! हमारा दोष नहीं है। जो नया कहार आया है यह ठीक से नहीं चल रहा है। यही इधर-उधर चलता है। रहूगण ने झाँक कर देखा। कहा कि आप तो बहुत दुबले-पतले मालूम पड़ते हो। जरा ठीक से चलो। व्यंग्य किया। कुछ नहीं बोले पर चाल नहीं बदली। चलते गए, चलते गए लेकिन उसकी पालकी जब ज्यादा हिली तो रहूगण ने कहा कि क्यों रे ! तुझको अब ठीक करना पड़ेगा ऐसा लगता है। क्यों ठीक से नहीं ढो रहा है ? जड़भरत का मुँह खुल गया।

उन्होंने कहा कि राजन् ! किसको ठीक करोगे ? यह जो शरीर है यह तो पांचभौतिक है । और यह नश्वर है ही । इसको क्या तुम ठीक करोगे ? यह तो ठीक ही है । मैं जो इसके भीतर आत्मा हूँ मैं नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव हूँ । अजर अमर अनन्त अखण्ड सब प्रकार से हूँ । तुम किसको ठीक करने जा रहे हो ? तुम्हारा यह भ्रम है कि तुम पालकी में बैठे हो । अरे कौन किसके ऊपर बैठा है ? मैं धरती के ऊपर बैठा हूँ । मेरे कन्धे पर तुम्हारी पालकी है और पालकी के ऊपर तुम हो । तुम अपने आपको राजा समझ रहे हो । यह जो तुम्हारा शरीर है जिसको तुम राजा समझते हो यह पाँच भूतों का पुतला है । पृथ्वी, जल, आकाश, वायु और अग्नि-- इन पाँच तत्त्वों से बना हुआ है । जब यह मरेगा तो अगर इसको जलाया जाएगा तो यह भस्म हो जाएगा । गाड़ देंगे तो कीड़े हो जायेंगे । और कोई जानवर खाएगा तो विष्ठा हो जाएगा । क्या तुम इस शरीर को राजा समझते हो ? कौन किसको ढो रहा है ? यह तुम्हारा भ्रम है । रहूगण पालकी से कूद कर उतर गया । उनके चरणों में गिरा। बोला महाराज ! मैं देवराज इन्द्र के वज्र से नहीं डरता । न वरुण के पाश से डरता हूँ । किसी से मैं नहीं डरता। यम के पाश से भी मुझे डर नहीं है । पर ब्राह्मणों के कुल से मुझे डर लगता है । ऐसा न हो कि आप मुझपर क्रुद्ध होकर मुझें शाप दे दें । महाराज ! मुझे क्षमा कीजिए । लेकिन आप जो यह कह रहे हैं कि आत्मा शरीर से अलग है । मुझको इसमें सन्देह है कि शरीर से अलग होने पर भी शरीर का प्रभाव तो आत्मा पर पड़ता ही है । जैसे आग में अगर पानी गरम करने के लिए किसी बर्तन को रखा जाए तो आग के संसर्ग से पानी भी गर्म हो जाता है। इसी तरह से शरीर समझिये आग है और आत्मा पानी है । आग का प्रभाव पानी पर तो पड़ेगा ही । बोले कि रहूगण । तुम समझते नहीं हो । शरीर दृश्य है । आत्मा द्रष्टा है। शरीर क्षेत्र है आत्मा क्षेत्रज्ञ है । शरीर साक्ष्य है आत्मा इसका साक्षी है । साक्षी के ऊपर साक्ष्य का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । दीखने वाली वस्तु से देखने वाला सर्वथा पृथक् होता है । शरीर दिखने वाला है इसको आत्मा जानता है । और सुख-दुःख आत्मा में नहीं है अनात्मा में हैं । क्षेत्र में हैं । अगर ये आत्मा में होते तो आत्मा को उनका अनुभव न होता। अनुभव करने वाला जिसका अनुभव करता है उससे वह भिन्न होता है । इसलिए आत्मा में सुख दुःख कुछ भी नहीं है । तुम्हारा यह भ्रम है । इसको दूर करो । कहा महाराज! यह ज्ञान हमको कैसे मिलेगा? जड़भरत ने कहा-

रहूगणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद् गृहाद् वा ।
न च्छन्दसा नैव जलाग्निसूर्यैर्विना महत्पादरजोभिषेकम् ।।

हे रहूगण ! यह आत्मा, यह ब्रह्मज्ञान तपस्या से नहीं, यज्ञ से नहीं और घर छोड़

देने से भी नहीं । न ही वेदों के अध्ययन से, न जल, अग्नि और सूर्य की पूजा करने से होता है । आत्मज्ञान उसी को होता है जो तत्त्वदर्शी महात्माओं के चरणों की रज से अभिषेक करता है । इस तरह से जब राजा रहूगण को जड़भरत ने उपदेश दिया तो राजा रहूगण ने उनको प्रणाम किया और वहीं से उपदेश प्राप्त करके वे अपने स्थान पर चले गए। इस तरह से जड़भरत का यह चरित्र आप लोगों ने सुना । तीसरे जन्म में जड़भरत ने अपने शरीर का त्याग करके मोक्ष गति को प्राप्त किया और कहा जाता है कि रहूगण ने भी उनके उपदेश से मोक्ष पद को प्राप्त कर लिया । रहूगण वही मृगशावक था जिसके ऊपर दया करके उन्होंने मृग देह प्राप्त की थी । वही अगले जन्म में राजा रहूगण बना। जब जड़भरत जी ने उसको ज्ञान देकर उसका मोक्ष कर दिया तब उनका भी मोक्ष हो गया। इस तरह से भगवान् ऋषभदेव और उनके पुत्र राजर्षि भरत का आपने चरित्र सुना। यह बड़ा पावन चरित्र है । इन चरित्रों से हमें अनेकों प्रकार की उत्तम शिक्षा प्राप्त होती है । बस, अब प्रवचन यहीं पूर्ण करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[44]

।। राम राम चव्वालीस ।।

भक्तों पर अनुग्रह करने परमात्मा अवतार धारण करते हैं

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियों, सज्जनों ।

परमपुरुष परमात्मा भक्तों पर अनुग्रह करके उनकी प्रार्थना से अनेकों अवतार धारण करते हैं । भगवान् के अनेकों अवतार हुए हैं । चौबीस प्रमुख अवतार भगवान् के हुए हैं । भागवत के प्रारम्भ में उन अवतारों का वर्णन करते हुए श्री व्यास जी ने कहा है-

एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयं।
इन्द्रारि व्याकुलं लोकं मृडयन्ति युगे-युगे ।।

हमने जो चौबीस अवतार बतलाए ये परमपुरुष नारायण के अंश और कला हैं । पर **कृष्णस्तु भगवान् स्वयं** कृष्ण स्वयं भगवान् हैं । जो कि शत्रुओं के द्वारा व्याकुल लोक का युग-युग में रक्षण करते हैं । अब प्रश्न आता है कि **कृष्णस्तु भगवान स्वयं** कहेंगे तो अब राम कहाँ जायेंगे ? कुछ लोगों का कहना है कि राम अंश हैं भगवान् के अंश हैं और कृष्ण पूर्ण ब्रह्म हैं । लेकिन ऐसा नहीं है । **एते चांशकलाः ।** यहां चकार है । च इसका मतलब कृष्ण और राम । च से राम को भी लेना चाहिए । ये दोनों साक्षात् परमात्मा हैं।

कुछ लोगों का कहना है कि राम बारह कला से हुए हैं और कृष्ण सोलह कला से हुए हैं । यहां बात यह है कि भगवान् श्रीराम का अवतार सूर्यवंश में हुआ है और उनका चन्द्रवंश में हुआ है । शास्त्र के अनुसार सूर्य की बारह कला और चन्द्रमा की सोलह कला होती है । सूर्य बारह कलाओं से पूर्ण हो जाता है और चन्द्रमा सोलह कलाओं से पूर्ण हो जाता है इसीलिए दोनों ही पूर्ण ब्रह्म परमात्मा हैं । रामस्तु भगवान् स्वयं । हम डंके की चोट पर कह सकते हैं कि राम भी भगवान् हैं । और देखिये अब तो दूसरे ढंग से चलने लगा । पहले बारह मासे का एक तोला होता था और सोलह आने का एक रूपया होता था । दोनों पूर्ण चाहे बारह मासा कह लो चाहे सोलह आना कह लो । भागवत में सूर्य वंश का वर्णन किया गया है । पहले सूर्य वंश का वर्णन उसके बाद सोम वंश का वर्णन। सोम वंश में कृष्ण का वर्णन आता है । सूर्य वंश में बड़े बड़े राजा हुए हैं । हरिश्चन्द्र हुए।

राजा सगर हुए। जिनके साठ हजार पुत्र थे। अश्वमेध यज्ञ में इन्द्र ने घोड़ा चुरा लिया तो खोजते-खोजते कपिलदेव जी के आश्रम में वे सब पहुँच गए। इन्द्र ने वहीं पर घोड़ा बाँध दिया था। वे सब दौड़े कपिल जी को मारने यह सोचकर कि यही चोर है। उनकी आँखें जब क्रोध से खुलीं तो वे सब भस्म हो गए। उनके कल्याण के लिए राजा सगर का दूसरा पुत्र था असमंजस। असमंजस का पुत्र था अंशुमान। अंशुमान ने उनको खोजा। गंगा को लाने का प्रयत्न किया लेकिन सफल नहीं हुआ। अन्त में राजा भगीरथ हुए। राजा भगीरथ गंगा ले आए। उस गंगा में जैसे ही सगर पुत्रों की हड्डियाँ और भस्म डूबे सब के सब मुक्त हो गए। उसी वंश में खट्वांग हुए। धीरबाहु हुए। नग हुए। अज हुए। और दशरथ जी हुए। दशरथ जी के घर में परमात्मा ने अवतार धारण किया। दशरथ जी की राजधानी परम्परा से अयोध्या थी। सरयू के किनारे अयोध्या। **योद्धुं अशक्या।** जिसके सामने युद्ध में कोई ठहर नहीं सकता था ऐसी थी अयोध्या। राजा दशरथ के कोई पुत्र नहीं था। तीन रानियाँ थीं। कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा। न तो कौशल्या से कोई सन्तान हुई न कैकेयी से और न ही सुमित्रा से। राजा के मन में ग्लानि हुई।

एक बार भूपति मन माहीं। भइ गलानि मोरे सुत नाहीं।।

मन में उनके ग्लानि हुई तो गुरु के घर गए। अपने गुरु वशिष्ठ के चरणों में गए और कहा कि महाराज! हमारा तो अब बुढ़ापा आने जा रहा है। इस राजसिंहासन पर कौन बैठेगा ? गुरु ने आशीर्वाद दिया। **धरु धीरज होइहें सुत चारी।** राजन्! धैर्यधारण करो। तुम्हारे यहाँ चार पुत्र होंगे। तीनों लोकों में भक्तों के भय का हरण करने वाले होंगे। उसके बाद -

शृंगी ऋषिहिं वशिष्ठ बुलावा। पुत्र लागि शुभ यज्ञ करावा।।

वशिष्ठ जी ने यज्ञ करवाया। यज्ञ कुण्ड से खीर पात्र लेकर अग्नि प्रकट हुये। खीर राजा दशरथ को देते हुए बोले कि यह पायस ले जाओ। अपनी पत्नियों को इसे बाँट दो। आपके चार पुत्र होंगे। राजा दशरथ द्वारा खीर बाँटी गई। खीर का आधा भाग कौशल्या को दे दिया और आधे का आधा भाग कैकेयी को दिया। और आधे का आधा भाग बचा था उसके दो भाग किए एक भाग कौशल्या के हाथ से सुमित्रा को दिया और दूसरा कैकेयी के हाथ से सुमित्रा को दिया। इस तरह से चार भाग उस पायस के हुए। इसका अर्थ क्या है ? इसका अर्थ यह है कि भगवान् का जन्म दिव्य है। साधारण मनुष्यों का जो जन्म होता है उससे भगवान् का जन्म विलक्षण होता है। भगवान! श्रीकृष्णका गर्भाधान साधारण नहीं हुआ। भगवान् पहले वसुदेव के मन में आए और मन

से देवकी के मन में आए। यही गर्भाधान है। इसी तरह से यहाँ पर खीर आती है। खीर से निमित्त बनाकर भगवान् वहाँ पर अवतार लेते हैं और जैसे बालक माँ के पेट में नौ महीना रहकर बड़ी कठिनाई से योनि मार्ग से बाहर आता है ऐसे राम नहीं आए। बल्कि- **भए प्रकट कृपाला।**

शंख, चक्र, गदा, पद्म हाथ में लेकर प्रकट होकर कौशल्या को दर्शन दिया। अब ये जो चार रूप धारण किए। लोगों का इस सम्बन्ध में अलग-अलग विचार है कि भगवान् के चार अंश हुए हैं। पर विद्वानों का इस सम्बन्ध में कथन है कि एक पक्ष में भगवान् परब्रह्म परमात्मा के अवतार हैं और दूसरे पक्ष में विष्णु के अवतार हैं। भगवान् विष्णु ने देवताओं के कल्याण के लिए मनुष्य शरीर धारण किया। विष्णु के जो आयुध हैं उपकरण हैं वह भी उनकी आत्मा हैं। शेषनाग जिनकी शय्या में भगवान् क्षीरसमुद्र में सोते हैं उनके अंश से लक्ष्मण हुए। भगवान् का पांचजन्य शंख हैं उसके अंश से भरत उत्पन्न हुए। सुदर्शन चक्र के अंश से शत्रुघ्न उत्पन्न हुए। ये भगवान् से अलग नहीं हैं। भगवान् के ही स्वरूप हैं। शेष जी के ऊपर भगवान् शयन करते हैं तो शेष भगवान् से अलग होते तो शेष जी की ताकत नहीं थी कि वे भगवान् को सह लेते। भगवान् गरुड़ की सवारी करते हैं। एक बार गरुड़ को अभिमान हो गया कि हम न ले जाएँ तो भगवान् कहीं नहीं जा सकते। हम इनका भार ढोते हें। एक दिन भगवान् ने उस पर अपना हाथ रख दिया। गरुड़ की पीठ में तब चिल्ला पड़ा कि मर जाऊँगा। बोले कि तुम तो हमको ढोते हो ? अब समझ में आया कि भगवान् ही शक्ति देते हैं। उपनिषद् में प्रश्न आया कि भगवान् का आधार क्या है ? तो जवाब 'अपनी महिमा में' ही आया।

कस्मिन्नु भगवः प्रतिष्ठितः ? स्वमहिम्नि इति।

भगवान् किसमें प्रतिष्ठित हैं तो कहा कि अपनी महिमा में। सबका निषेध करते-करते जो शेष रह जाए वह परमात्मा ही ब्रह्म है। भगवान् की प्रतिष्ठा है और इसी तरह भगवान् का पांचजन्य शंख भगवान् का ही स्वरूप है। यही पांचजन्य था जो ध्रुव के कपोल में रखकर उसको ज्ञानी बना दिया। सुदर्शन चक्र शत्रुओं को नाश करने वाला है। ये चार पुत्र हुए। अब भागवत में एक ही श्लोक में भगवान् के चरित्र का वर्णन संक्षेप में कर दिया

गुर्वथे त्यक्तराज्यो व्यचरदनुवनं पद्मपद्भ्यां प्रियायाः
पाणिस्पर्शाक्षमाभ्यां मृजितपथरुजो यो हरीन्द्रानुजाभ्याम्।

वैरूप्याच्छूर्पणख्याः प्रियविरहरुषाऽऽरोपितभ्रूविजृम्भ-
त्रस्ताब्धिर्बद्धसेतुः खलदवदहनः कोशलेन्द्रोऽवतान्नः ।।

भगवान् श्रीराम के परम पवित्र चरित्र को देखिये । क्या भगवान् का अद्भुत चरित्र है । माता पिता की भक्ति । भगवान् श्रीराम के प्रति अयोध्या के लोगों में बड़ा ही स्नेह था । बहुत प्यार करते थे वे लोग भगवान् श्रीराम से । एक बार राजा दशरथ ने अपना मुख देखा दर्पण में तो उनके कान के पास के रोम केश सफेद हो गए थे। दशरथ जी ने समझ लिया के अब बुढ़ापा आया । मृत्यु निकट है । मृत्यु का संकेत है तो अब राज्य से निवृत्त होना चाहिए । भगवान् श्रीराम को उन्होंने राजा बनाने का मन किया । उस समय राजतन्त्र था । फिर भी हमारे यहाँ का जो राजतन्त्र था वह निरंकुश नहीं था । राजा दशरथ ने सभा बुलाई । जनता के प्रतिनिधि आए और दशरथ जी ने कहा कि भाई ! मैने इतने दिन तक आपका पालन किया । अब मैं वृद्ध हो गया । मैं चाहता हूँ अगर आप लोगों की अनुमति हो तो राम को राजतिलक दे दूँ । सबने कहा कि हाँ महाराज ! रामको युवराज बना दीजिये। युवराज मतलब जो आगे राजा होने वाला है । राजा के रहते युवराज बन जाते थे । इतने जोर से लोगों ने समर्थन दिया कि दशरथ जी अवाक् रह गए । उन्होंने पूछा कि इतने दिनों से मैं आपलोगों की रक्षा कर रहा हूँ । पुत्र के समान आपका पालन कर रहा हूँ । अरे कहते कि दो चार साल और आप ही रह जाओ लेकिन आपने तुरन्त कैसे कह दिया ? बोले महाराज ! राम के ऐसे गुण हैं कि हमलोग उनके गुणों पर मोहित हो गए हें । हम चाहते हैं कि इनको शीघ्रातिशीघ्र युवराज पद में प्रतिष्ठित कर दिया जाए । भगवान् श्रीराम को दशरथ जी ने बुलाया । बोले राम ! अब मैं तुम्हारे ऊपर युवराज के पद का भार देना चाहता हूँ । वशिष्ठ जी से बुलाकर पूछा कि मुहूर्त निकाल लो । हम राम को राजा बनाना चाहते हैं । वशिष्ठ जी ने कहा कि जिस दिन राम राजा हो जाए वही शुभ मुहूर्त है । इनके लिए मुहूर्त देखने की जरूरत ही नहीं है । अब आप देखिये न कि जगन्नाथ जी का जिस दिन रथ चलता है उसको लोग सिद्ध मुहूर्त मानते हैं कि भगवान् का रथ चल गया तो अब क्या मुहूर्त देखते हो ? भगवान् राम का राजतिलक हो जाना ही शुभ है । भगवान् से कहा गया । वशिष्ठ जी स्वयं गए और कहा कि संयम करो, उपवास करो, अगर ब्रह्मा ने निर्विघ्न कार्य सम्पन्न करा दिया तो आपका कल अभिषेक होगा । और दशरथ जी से कहा -

आनहुँ सकल सुतीरथ पानी ।

सब तीर्थों का जल लेकर आओ । सब तीर्थों के जल के कलश आ गए । यज्ञ मण्डप

बनाया गया । उसमें कलश रख दिए गए । उन कलशों में गंगाजल, यमुना जल, नर्मदा जल, कृष्णा-कावेरी-सरयू आदि भिन्न-भिन्न नदियों का जल भर दिया गया । वेद मन्त्रों से उस जल का अभिमन्त्रण भी हो गया । बस दूसरे दिन भगवान् के ऊपर केवल जल छिड़कना था । तैयारी थी कि राम के महल से राम को रथ में बैठाकर गाजे-बाजे के साथ सभागार में ले जाया जाएगा और वहाँ सिंहासन पर बैठाकर उनका अभिषेक होगा । यह संवाद राज्य भर में फैला दिया गया । अयोध्या के सब घर सजा दिए गए । मंगल कलश, तोरण, ध्वजा-पताका फहराने लगे । दीपावली मानो हो रही थी । दूसरे दिन राम का राजतिलक होगा । लोगों के मन में मनोरथ था कि कल सीता सहित सोने के सिंहासन में राम बैठेंगे । उनका दर्शन करके हम धन्य हो जायेंगे । हमारे नेत्र धन्य हो जायेंगे ।

रात आने वाली थी । इधर देवताओं को यह बात सहन नहीं हुई । उन्होंने सोचा कि राक्षसों के द्वारा संत्रस्त होकर हमने भगवान् के अवतार के लिए प्रार्थना की । अवतार तो इन्होंने ले लिया । अब इनका यदि राजतिलक हो गया तो ये तो अयोध्या में ही रह जायेंगे और मारीच, सुबाहु गंगा के किनारे जहाँ पर महर्षि विश्वामित्र तपस्या करते थे ऐसे सिद्ध स्थान में वहाँ पर पहुँच जायेंगे । खर-दूषण डेरा लगाए हुए हैं । शूर्पणखा सब जगह घूम रही है और महाराज दशरथ का राज्य दिनों-दिन शिथिल हो रहा है । अगर ये रह गए अयोध्या में तो राक्षस और भी बढ़ जायेंगे । उन्होंने सोचा कि तिलक न हो। उन्होंने सरस्वती देवी को मनाया बुद्धि की देवी सरस्वती । और कहा कि सुरभारती तुम जाओ और राम के राज्य में बाधा डाल दो । कोई न कोई विघ्न करो । देवताओं की प्रेरणा से सुरभारती सरस्वती अयोध्या में गई ।

आकर कैकेयी की प्रिय दासी मन्थरा की मति को फिरा गईं । वह कैकेयी के पास जाकर बोली कि सर्वनाश होने जा रहा है तेरा । कैकेयी ने पूछा कि क्यों ? बोली राम का राजतिलक होने वाला है कल । कैकेयी ने कहा कि अरे मन्थरा ! यह तो बड़ा अच्छा संवाद सुनाया । ले गले का नौलखा हार । मन्थरा के गले में डाल दिया । राम का कल तिलक है तो मैं तुझे आँखों की पुतली बना लूँगी । मन्थरा से हार तोड़कर फेंक दिया । किसी काम का नहीं है यह हार । राम राजा हो जाएगा तो भरत रह जाएगा। भरत उसका सेवक बनेगा । कैकेयी बोली कि मन्थरा ! बड़ा भाई ही राजा होता है और छोटे भाई उसके सेवक होते हैं । राम मुझसे बहुत प्रेम करता है। तुझे उसके अभिषेक में क्या दुःख है ? बोली मन्थरा कि बात यह नहीं है । राम राजा हो जाए लेकिन तुझे पता है ? तेरी सौत कौशल्या है । वह तुझसे जलती है । जब राम राजा हो जाएगा तो तुझे कौशल्या की दासी बनकर रहना पड़ेगा । कहा हाँ ओह ! सौत की सेवा तो बड़ा कठिन काम है।

कश्यप जी की पत्नी थी। उनमें से एक का नाम था कद्रू और दूसरी का नाम था विनता। समझ लो कि वही कहानी यहां दोहराई जायेगी।

कद्रू विनतहिं दीन्ह दुःख तुमहिं कौशिला देब।
भरतु बन्दिगृह सेइहहिं लखन राम की नेब ।।

जैसे कद्रू ने विनता को अपनी दासी बना लिया था वैसे ही तू भी दासी बनेगी। कैकेयी को यह संभावना सता गई। बोली कि चाहे मैं कहीं चली जाऊँ मायके में जिन्दगी बिताऊँगी पर सौत की सेवा नहीं करूँगी। तू तो मेरी प्रिय है बता मैं कैसे इस समय इस आयोजन को रोक सकूँ ? तब मन्थरा ने याद दिलाया कि तुमको राजा दशरथ ने दो वरदान दिए थे आज माँग लो। ऐसे मत माँगना। पहले तू कोप भवन में चली जा। कपड़े उतार कर मैले कपड़े पहन कर औंधे मुँह लेट जा। बाल बिखेर ले। राजा दशरथ से सीधी बात मत करना और जब वे राम की शपथ खा लें तब तुम दो वरदान माँगना। एक तो भरत का राज्य और दूसरे राम को चौदह वर्ष का वनवास। खूब अच्छी तरह से कुबड़ी मन्थरा ने पाठ पढ़ा दिया। कैकेयी की बुद्धि ऐसी हो गई कि वह कोप भवन में जाकर विराजमान हो गई। राजा दशरथ कैकेयी के भवन में आए कि आज हम अपने मुँह से कैकेयी को संवाद देंगे। कैकेयी बड़ी प्रसन्न होगी। जब महल में पहुँचे तो पता लगा कि वह तो कोप भवन में बैठी हैं। राजा वहाँ गए। राजा की तरफ देखकर कैकेयी ने मुँह फेर लिया। उधर गए तो वहां से भी फेर लिया। राजा कैकेयी को मनाने लगे। कहो तुम्हारे लिये हम क्या कर दें ?

कहु केहि रंकहिं करौं नरेषू। कहु केहि नृपहिं निकारौं देषू ।।

यह तो बता दो कि किसको राजा बना दूँ किस राजा को रंक बना दूँ। अपनी इच्छा प्रकट तो करो। कहा कि क्या इच्छा पूरी करोगे ? दो वरदान आपने देने को कहा था आज तक मिला नहीं। और क्या दोगे ? बोले कि दो के चार माँग ले। कहा आप पर विश्वास नहीं। दशरथ जी बोले कि कैकेयी ! संसार में सबसे प्यारा मुझे राम है। मैं राम की सौगन्ध खाता हूँ। जो तू माँगेगी वह मैं दू दूँगा। कैकेयी उठकर बैठ गई। कहा कि जो तिलक तुम राम को देने वाले हो वह भरत को मिलना चाहिए यह पहला वरदान राजा दशरथ बोले कि ठीक है। राम और भरत दोनों मेरी आँख हैं। भरत को दे दूँगा। इसके लिए कोप भवन में क्यों बैठी हो ? बोली कि दूसरा और है ? कहा कि बोल। तब बोली-

तापस वेश विशेष उदासी। चौदह वरस राम वनवासी ।।

तापस के वेश में उदासीन भाव से चौदह वर्ष के लिए राम वन में चले जाएँ । दशरथ जी चौंक पडे । अरे कैकेयी ! यह क्या कह रही है ? यह तू मत माँग । मैं राम के बना रह नहीं सकता । कहती है कि हम जानते थे कि तुम राम को छोड़ोगे नहीं । लेकिन यह सुन लो । प्रातःकाल होते-होते अगर राम वन में नहीं गया तो मैं चाहे फाँसी लगा लूँ चाहे विष खा लूँ मर जाऊँगी और तुम्हारे ऊपर कलंक लगेगा कि राजा ने झूठ बोलकर रानी को धोखा दिया इसलिए वह मर गई ।

होत प्रात मुनि वेश धरि जो न राम वन जाहिं ।
मोर मरन राउर अजस नृप समुझेउ मन माहिं ।।

राजा दशरथ हाथ जोड़ते रहे । लेकिन नहीं । कैकेयी को मनाते हुए रात बिता दी। यह भी कहा कि कैकेयी तू विधवा हो जाएगी । मैं राम के बिना नहीं जिऊँगा यह वरदान मत माँग । पर कैकेयी ने अपने हृदय को बड़ा कठोर बना लिया । सबेरा हो गया । माँगध, बन्दीजन राजा का गुणगान कर रहे हैं । वशिष्ठ जी आ गए हैं । पण्डितों के द्वारा वेदध्वनि होने लगी । राजा दशरथ सबेरे उठकर प्रजा को दर्शन देते थे । आज बिस्तर से ही नहीं उठे हैं । सुमन्त्र को भेजा गया । सुमन्त्र गए और देखा कि महाराज दशरथ तो रो रहे हैं । बिस्तर में लेटे हुए हैं और कैकेयी वहाँ बैठी है । इस समय दुःखी हैं । राम को पता चला । वे आये । पूछते हैं कि क्या मुझसे कोई अपराध हो गया है ? कैकेयी बोलती है

तुम अपराध जोग नहिं ताता । जननी जनक बन्धु सुख दता ।।

हे तात ! तुम अपराध के योग्य नहीं हो । तुम जननी, जनक और बन्धुओं को सुख देने वाले हो । राम ने पूछा कि माँ ! फिर मेरे पिता क्यों दुःखी हैं ? कहा कैकेयी ने कि मेरे वरदान से दुःखी हैं । कैकेयी बोली मैंने भरत को राज्य माँग लिया है । राम ने कहा कि मेरे मन की बात कह दिया आपने । मैं भी यही चाहता था कि भाई भरत ही राजा हो जाए । इसमें क्या बात थी । मेरे पिता इसके लिए क्यों दुःखी हैं ? बोली दूसरा सुन। चौदह वर्ष के लिए तेरा वनवास मैंने यह भी माँगा है । भगवान् राम ने पूछा कि मैया तूने यह वरदान क्यों माँगा? कैकेयी सोच रही थी कि शायद राम नाराज होगा। भगवान् बोले कि मैया मैं तो तेरे कहने से ही वन चला जाता। पिता से वरदान माँगने की जरूरत ही नहीं थी ।

सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी । जो पितु मातु वचन अनुरागी ।।

जो न जाऊँ बन ऐसेहु काजा । प्रथम गनिअ मोहि मूढ समाजा ।।

ठीक है । मैं अपनी माता से आज्ञा माँगकर आता हूँ । माता से आज्ञा माँगने गए। बड़ी दुःखी हुई । सीता जी से, लक्ष्मण जी से संवाद में लम्बी कथा है । भगवान् राम, लक्ष्मण और सीता के सहित आ गए कैकेयी के भवन में । अन्तिम आज्ञा लेने के लिए। कैकेयी ने, दशरथ जी ने राम को अपने पास बैठा लिया । बोले कि बेटा ! तू वन में मत जा । मुझे कैद कर ले । सिंहासन में बैठ जा । मैं तेरे बिना नहीं रहूँगा । राम बोले कि पिताजी! मैं आपको झूठा नहीं होने दूँगा । मैं आपका पुत्र हूँ । मैं ऐसा नहीं कि आपको कलंकित करूँ । मुझे राज्य का लोभ नहीं है । कैकेयी चीर वल्कल लेकर आई । और राम से कहा कि ले कपड़े उतार और मुनियों के वस्त्र पहन । भगवान् राम ने पहन लिया। दूसरा लाई लक्ष्मण के लिए कि तू भी पहन । लक्ष्मण ने भी पहन लिया । फिर तीसरा वस्त्र लाई सीता के लिए । सीता जी पहनने जा रही थीं साड़ी के ऊपर से । कैकेयी बोली कि नहीं साड़ी उतार और केवल वल्कल चीर पहन । मुनियों की स्त्रियों के जैसे वल्कल वस्त्र पहनकर अयोध्या से निकल । हाहाकार मच गया कि राजा जनक की पुत्री चक्रवर्ती दशरथ की पुत्रवधू उसने अपराध क्या किया है जो उसे वस्त्र उतरवाकर वल्कल पहनाया जा रहा है । हाहाकार मच गया । सब लोग डाँटने लगे । बहुत सी स्त्रियों ने कैकेयी को समझाया कि हठ छोड़ दे । यह मत कर । अन्त में वशिष्ठ जी बोले-

अतिप्रवृत्ते दुर्मेधे कैकेयि कुलपांसनि ।
वंचयित्वा च राजानं न प्रमाणेऽवतिष्ठसे ।।

कैकेयी ! तूने राम का वनवास माँगा है । सीता का नहीं माँगा है । राम तो चला जाएगा वन में लेकिन मैं सीता को राजसिंहासन दे दूँगा । तेरे बेटे भरत को राजा नहीं होने दूँगा । अब जब वशिष्ठ जी ने कहा तो दशरथ जी को हिम्मत हुई । बोले कि सीता इन्हीं वस्त्रों में जाएगी । चौदह वर्ष के लिए जितने वस्त्र चाहिए उतने सब जायेंगे। इनके साथ खजाना आदि सब जायेगा । मेरी बहू ऐसे नहीं जाएगी । कैकेयी बोली कि मेरा बेटा माड़ पियेगा? इस तरह से आप देखिये - **गुर्वर्थे त्यक्तराज्यः।**

अपने गुरु, माता-पिता के लिए जिन्होंने राज्य का त्याग कर दिया । भगवान् चीर वल्कल धारण करके सीता के सहित जब सड़क में उतर गए तो राजा दशरथ ने सुमन्त्र से कहा कि अरे सुमन्त्र ! इनको ले जाओ । रथ में बैठाकर ले जाओ और ये भाई वन जाने के लिए आतुर हैं । थोड़ा सा दो चार दिन वन में घुमाकर ले आओ। ये न लौटें तो सीता को तो लौटा लाओ । सुमन्त्र रथ लेकर आए । भगवान् श्रीराम बैठ गए । सीता जी

बैठ गईं। लक्ष्मण बैठ गए । सुमन्त्र सारथी थे । सारे रनिवास ने रथ को घेर लिया । दशरथ जी महल से निकल कर आ गए । कौशल्या कभी आगे जाती कभी पीछे जाती है । रोती है । मेरे बेटे को कहाँ भेज रहे हो । दशरथ जी कहते हैं कि सुमन्त्र ! रथ मत ले जाओ । अगर मैं राजा हूँ और अगर मेरा कोई आदेश चलता हो तो मेरे बेटे को मुझसे अलग मत करो । भगवान् राम ने सुमन्त्र से कहा कि जल्दी रथ ले चलो । इस तरह से भगवान् श्रीराम ने गुर्वर्थे त्यक्तराज्यः । बहुत लम्बी कथा है ।

वन में गए । इतने सुकोमल चरणारविन्द थे उनके । जानकी जी भगवान् के सुकोमल चरणारविन्दों को अपने कर-कमलों से छूने में संकोच करती थीं कि मेरे कर्कश हाथों की खँरोच कहीं इन कोमल चरणों में न लग जाए । अपने हाथों की जो कान्ति थी उससे उनके चरणों का लालन करती थीं । उन चरणों से भगवान् वन में गए। जब कष्ट हुआ तो हरीन्द्र सुग्रीव हनुमान लक्ष्मण उनके चरणों की सेवा करते रहे । कभी भगवान् के चरणों में काँटे आते थे लक्ष्मण जी निकालते थे । इस तरह से भगवान् चौदह वर्ष तक वन में रहे । वहाँ चित्रकूट में भरत जी उनके पास गए । उनसे अनुरोध किया लौटने के लिए पर भगवान् ने भरत को समझाया । भरत ने जब बहुत हठ किया तो अपनी चरण पादुका दे दिया । एक प्रकार से उन्होंने राज्य को स्वीकार करके राज की व्यवस्था अपनी ओर से भरत को करने के लिए लौटा दिया । कहा कि जो विपत्ति आई है अपने लोग ही विपत्ति को बचाते हैं । जब कोई तलवार मारता है तो गर्दन बचाने के लिए हाथ आगे आता है । हमारे ऊपर जो विपत्ति आई है पिता की आज्ञा का पालन न करना यह हमारे लिए सम्भव नहीं है । ऐसी स्थिति में तुम हमारी सहायता करो और हमारी ओर से राज्य की व्यवस्था संभालो । भरत को लौटाया । उसके बाद भगवान् चित्रकूट से आगे बढ़े । आपके इसी छत्तीसगढ़ से होते हुए । यहीं पर शिवरी नारायण आदि अनेकों तीर्थ हैं । नर्मदा पार करने का कहीं उल्लेख नहीं आता है । अमर कण्टक को नमन करके भगवान् यहाँ से निकले । राम पाली गए । रामटेक गए और आगे निकल गए । अगस्त्य मुनि के आश्रम में जाकर रुके । अगस्त्य मुनि से उन्होंने मन्त्र लिया ।

अब सोइ मन्त्र देहु मुनि मोही । जेहि प्रकार मारउं मुनि द्रोही ।।

मुनिराज ! मुझको वह मन्त्र दीजिए जिससे कि मुनियों के द्रोहियों को मैं मारूँ । राजराजेश्वरी माता त्रिपुरसुन्दरी का पंचदशाक्षरी मन्त्र अगस्त्य जी ने भगवान् श्रीराम को दिया और कहा कि आप यहाँ से आगे चलकर गोदावरी नदी के किनारे निवास कीजिए। वहीं खर-दूषण रहते थे । अगस्त्य जी चाहते थे कि राम से उनका झगड़ा हो तभी उनका

संहार होगा। जो राक्षस थे वे नरभक्षी थे। आप समझ लीजिए। आजकल लोगों ने एक थ्योरी बनाई है वह कहते हैं कि रावण अनार्य था। द्रविड़ था। राम आर्य थे। आर्य राम ने अनार्य द्रविड़ों को हराया। द्रविड़ों के पूर्वज रावण को मारा और रावण को मारने के लिए ही सेतु बनाया। इसीलिए वहाँ के लोग द्रविड़। वहाँ के नेता हैं करुणानिधि, टी आर बालू। चाहते हैं कि राम की निशानी सेतु आज जो वहाँ विद्यमान है उसको तोड़ दिया जाए। लेकिन यह उनका भ्रम है। यह जो द्रविड़ हैं ये रावण के वंशज नहीं हैं। क्योंकि रावण नरमांसभक्षी था। मनुष्यों के माँस को खाने वाला था। तुलसीदास जी ने कहा है

कहुं महिष मानुष धेनु खर अज खल निशाचर भक्षहीं।

और दण्डकारण्य के जो ऋषि थे उनके माँस को खा खाकर वहाँ उनकी हड्डियों का ढेर लग गया था। नरमांसभक्षियों को उपदेश से बदला नहीं जा सकता था। उपदेश से वे अपना आचरण नहीं सुधार सकते थे। आदमखोर थे वे। अगर ये द्रविड़ लोग जो अपने को रावण का वंशज कहते हैं। तो राक्षस के वंश होते तो ये भी आदमखोर होते लेकिन ये लोग तो आदमखोर नहीं हैं। मनुष्य नहीं खा रहे हैं। आदमखोरों को तो राम ने निर्वंश कर दिया। सबको खत्म कर दिया। और जो बचे थे भीमसेन ने हिडिम्ब नाम के राक्षस को मारा। हम ये कहा करते हैं कि अपने पर्यावरण के लिए सबकी जरूरत है। पेड़ों की जरूरत हैं, जीव जन्तुओं की जरूरत है, नेशनल पार्क में शेर भी पाले जाते हैं। उनको भी नहीं मारा जाता। मृगों को नहीं मारा जाता। एक ने मृग को मारा था तो उसको पाँच साल की सजा हो गई थी। सृष्टि में सबकी जरूरत है। शेर की भी जरूरत है। लेकिन अगर शेर आदमखोर हो जाए तो उसको मारना पड़ता है। शेर भी आदमखोर हो जाए तो। ताड़का शेरनी थी। यह साधारण नारी नहीं थी। कहते हैं कि-

चले जात मुनि दीन्ह देखाई। सुन ताड़का क्रोध करि धाई॥

भगवान् श्रीराम लक्ष्मण विश्वामित्र जी के साथ जा रहे थे तो एक घोर जंगल मिला। जहाँ पर जीव जन्तु मनुष्य दिखाई ही नहीं पड़ते थे। विश्वामित्र जी से पूछा कि यह स्थान उजाड़ क्यों है ? बोले कि यहाँ ताड़का नाम की राक्षसी रहती है। जितने जीव जन्तु हैं पक्षी हैं जितने मनुष्य हैं सबको खा गई है। कहाँ है ? पूछने पर बताया कि वो खड़ी है। जो ऊँगली दिखाई तो वह दौड़ी आई कि मेरी तरफ ऊँगली क्यों उठाई ? मैं तुम्हें खा जाऊँगी। विश्वामित्र जी को जब खाने दौड़ी तब भगवान् ने कहा कि बाण रखना बेकार है जब गुरुजी के प्राण ही नहीं रहेंगे।

एक ही बान प्राण हरि लीन्हा । दीन जानि तेहि निज गति दीन्हा ।।

भगवान् राम ने उन राक्षसों को मारा । चौदह हजार राक्षसों को एक ही बार में मार दिया । बात क्या थी ? शूर्पणखा आ गई ।

शूर्पणखा रावण करि बहिनी । दुष्ट हृदय दारुण जस अहिनी ।।

सर्पिणी होती है दुष्ट हृदय की । वह वैसी ही थी । पंचवटी में पहुँची । राम लक्ष्मण के स्वरूप को देखकर वह मुग्ध हो गई । आकर बड़ा सुन्दर रूप बनाया उसने । राक्षसी रूप बदल दिया । और बोली-

तुम सम पुरुष न मो सम नारी । यह संजोग विधि रचा विचारी ।।

त्रिलोकी में तुम्हारे समान कोई पुरुष नहीं है और मेरे समान कोई नारी नहीं है । इसीलिए मैं अब तक कुँवारी हूँ । तुमको देखकर मेरा मन कुछ उत्सुक हो रहा है । पूरा कहती तो भगवान् तेरा बचाव भी करते । भगवान् ने कहा कि देखो ! हमारे साथ तो हमारी पत्नी है । हमारे भाई के पास चली जाओ ।

फिर लक्ष्मण ने कान-नाक काट लिया । खरदूषण बहन शूर्पणखा के पक्ष से लड़ने आये तो मारे गये । फिर शूर्पणखा रावण के पास गई । रावण ने जब सब सुना तो विचार किया कि लगता है कि देवताओं का रंजन करने वाले परमात्मा ने रघुवंश में अवतार लिया है । मेरा शरीर तमोगुणी है । इस शरीर से भजन तो हो नहीं सकता । वैर करके उनके हाथ से मारा जाऊँ तो सद्गति को प्राप्त करूँगा इसलिए मैं उनसे वैर करूँ । इस विचार से रावण भगवान् से वैर करने के लिए सीता जी का हरण करने के लिए चला । खर दूषण मारे जा चुके थे । इसलिए भगवान् के सामने सीता जी का हरण करने का साहस न हुआ तो मारीच के पास गया और मारीच से कहा कि मामाजी ! पहले तो खूब दण्डवत करी । मारीच ने कहा कि यह कभी नमस्कार नहीं करता था । आज झुक रहा है ।

नमन नीच की अति दुःखदायी । जिमि अंकुश धनु उरग बिलाई ।।

नीच अगर झुके तो समझ लो कि खतरा है । मारीच ने पूछा कि भांजे कैसे आए? रावण ने कहा कि मामा जी ! कंचन मृग बनो और राम को कुटिया से बाहर ले जाओ। हम सीता का हरण करेंगे । मारीच बोला -

रामो विग्रहवान् धर्मः साधुः सत्यपराक्रमः ।
राजा सर्वस्य लोकस्य देवानां भगवानिह ।।

राम विग्रहवान् धर्म हैं। साधु हैं, सत्य पराक्रम हैं। सारे लोक के राजा है। जैसे देवताओं का राजा इन्द्र है वैसे ही सारे संसार का राजा राम है। उसकी पत्नी वैदेही सीता है। अपने देश से रक्षित है। जैसे कोई सूर्य की प्रभा को सूर्य से अलग नहीं कर सकता वैसे ही राम से सीता को अलग नहीं किया जा सकता। अरे रावण! राम के नाम से व्याकुल हो जाता हूँ। एक बार राम ने मारा था सौ योजन लंका के समुद्र को पार कर दिया। पर रावण ने उठाई तलवार। कहा ऐ मामा ! सीधे-सीधे कंचन मृग बनते हो कि हम सिर धड़ से अलग करें ? मारीच ने सोचा कि मरना ही है तो भगवान् के हाथों से मरे। इस दुष्ट के हाथों मरने से क्या लाभ ? कंचन मृग बनकर वन में गया। अब इसके भीतर एक रहस्य है। रहस्य यह है कि लक्ष्मण जी जब कन्दमूल फल लेने के लिए बाहर जंगल में गए तो एकान्त पाकर भगवान् श्रीराम ने सीता जी से कहा -

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुशीला। मैं कछु करबि ललित नर लीला ।।

तुम पावक मँह करहुँ निवासा। जब लगि करहुँ निशाचर नासा ।।

मैं एक नरलीला करने वाला हूँ। जब तक मैं निशाचर का नाश करूँ तुम अग्नि में निवास करो। भगवान् की आज्ञा पाकर सीता जी ने अग्नि में प्रवेश किया और अपनी छाया राम के साथ छोड़ दिया। उसी छाया का हरण रावण ने किया। सीता जी को तो वह छू ही नहीं सकता था। एक पेरियार नाम के हो गए हैं जिन्होंने सच्ची रामायण लिखी है। उसमें कहा है कि सीता अपनी इच्छा से रावण के साथ गई थी क्योंकि राावण को यह शाप था कि जब वह किसी परस्त्री का हरण करेगा तो उसके सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे। पर सीता के हरण से रावण के सिर के टुकड़े नहीं हुए इसीलिए यह सिद्ध होता है कि सीता अपनी इच्छा से रावण के पास गई थी लेकिन वाल्मीकि रामायण पढ़ने से आपको स्पष्ट विदित हो जाएगा कि बहुत कटु शब्द सीता ने रावण को सुनाए और रास्ते भर करुण क्रन्दन करती रही। अपने शरीर के आभूषणों को उतार कर वानरों के पास फेंक दिया जिससे राम को पता लग जाए। हा राम ! हा लक्ष्मण ! कहते हुए वह रावण से बलपूर्वक ले जाई गईं। रावण ने अन्तःपुर में ले जाकर सीता जी को समझाया लेकिन जब वह नहीं मानी तो सीता जी को अशोक वाटिका में उसने रखा। और सीता जी के पास वह अनुनय-विनय करने गया कि तुम मेरी पत्नी बन जाओ। अगर सीता जी अपनी इच्छा से गई होती तो उसको अनुनय-विनय करने की जरूरत ही क्या होती? जब सीता जी नहीं मानी तो वह कहने लगा कि अगर तुमने महीने भर के भीतर मेरा कहना न माना तो सबेरे तुझे ही कलेवा बना लूँगा। जब डाँटने लगा तो बहुत सी स्त्रियाँ

वहाँ रावण के साथ आईं थी वे इशारे से सीता जी को समझाने लगी कि तुम लड़ो मत। कहने का अभिप्राय यह है कि सीता जी एक तो गईं नहीं । गईं भी तो अपनी इच्छा से नहीं गईं । और हम तो यह कहते हैं कि गईं भी होंगी अपनी इच्छा से तो वह इच्छा दूसरी ही थी ।

इसकी कथा है कि रावण ने दण्डकारण्य के ऋषियों से कहा कि आपलोग हमको टैक्स दीजिए तो ऋषि मुनियों के पास तो कुछ था नहीं तो उन्होंने अपनी नसें काटकर बूँद बूँद निचोड़ कर एक खून का घड़ा भर दिया और वह खून का घड़ा रावण को टैक्स में रूप में, कर के रूप में दिया । रावण के पास जब वह घड़ा पहुँचा तो लोगों ने उसको बताया । वहाँ बड़े ज्योतिषी रहते थे कि इस घड़े के रहने से आपका सर्वनाश हो जाएगा । उसने वह घड़ा उठाकर राजा जनक के राज्य में गड़वा दिया था । राजा जनक के राज्य में अनावृष्टि हो गई । बारह साल के लिए । यज्ञ के लिए सोने का हल बनाया गया । एक ओर सुनैना और दूसरी ओर जनक जुते उस हल में और शतानन्द गुरु ने मुठिया पकड़ा । हल जुतने लगा । एक जगह उस हल की नोक जिसका नाम सीता होता है संस्कृत में वह घड़े में अटकी और जोर से खींचा तो घड़ा ऊपर आया और उसमें एक सुन्दरी कन्या प्रकट हुई। वह राजा के जनक के क्षेत्र में होने के कारण उनकी पुत्री कहलाई । उसी का नाम जानकी था । उसका विवाह भगवान् राम के साथ हुआ । राम जब वन में जाने लगे तो उनके साथ गईं और अगर वह राम के साथ रहती तो रावण का नाश न होता न बाली का ही होता । वह तो माता थी । लेकिन रावण उनको ले गया तब मन्दोदरी समझाती है । वह कहती है

तव कुल कमल विपिन दुःखदायी । सीता सीत निशा सम आई ।

तुम्हारे कुल कमल को दुःख देने वाली जैसे कमल वन को शीत ऋतु की रात्रि का तुषार सुखा देता है नष्ट कर देता है ऐसे ही तुम्हारा कुल कमल सीता के साथ के कारण नष्ट हो जाएगा । लौटा दो इसको । अब वह तो खुद ही लाया था । वह घड़ा इनके नाश के लिए गया था । राावण की पत्नी बनने के लिए नहीं । कुल के सहित रावण के नाश के लिए वह गया था । अस्तु ।

पेरियार ने कहा है कि रावण सदाचारी था और राम दुराचारी थे । आप बताइए कि जो नरमांसभक्षण करे और जिसकी हजारों स्त्रियाँ हों । वह सदाचारी कैसे ? वाल्मीकि रामायण में आता है जब रावण मर गया तो उसके लिए विलाप करने के लिए मन्दोदरी गई और उसकी सौतें भी गईं । हजारों स्त्रियाँ उसकी थीं जबकि भगवान् राम

ने एकपत्नीव्रत का पालन किया। दूसरा विवाह नहीं किया। जब यज्ञ करना हुआ तो सीता जी की ही स्वर्णमयी प्रतिमा अपने बगल में लेकर यज्ञ किए। उनको जो दुराचारी कहे उससे सदाचारी की परिभाषा पूछनी होगी। वस्तुतः यह सब राजनीतिक वक्तव्य हैं। यह लड़ाई आर्य और अनार्यों की नहीं थी। यह भक्षकों और भक्ष्यों की थी।

कहहु कवन भय करिअ विचारा। नर कपि भालु आहार हमारा ।।

ऐसा कहने वाले जो राक्षस थे वे अकेले-अकेले वानर, भालुओं और मनुष्यों को खा जाते थे। ऋषियों को खा जाते थे तो राम मुनि बनकर गए। चौदह वर्ष वहाँ रहकर एक प्रकार से वहाँ के नागरिक हो गए। भालुओं और वानरों को राम ने संगठित किया और उन भक्षकों के साथ युद्ध हुआ। भक्षक मारे गए। राम का जो पक्ष था वह न्याय का पक्ष था। इसलिए इस सिद्धान्त है

यान्ति न्यायप्रवृत्तस्य तिर्यंचोऽपि सहायताम्।
अपन्थानं तु गच्छन्तं सोदरोऽपि विमुंचति ।।

जो न्याय के मार्ग में चलता है वानर भालू भी उसके सहायक हो जाते हैं और जो कुमार्ग पर चलता है उसका सगा भाई भी उसका साथ छोड़ देता है। ये आर्य-अनार्य का युद्ध तब सिद्ध होता जब अयोध्या से सेना जाती। अयोध्या से तो सेना नहीं गई। भगवान् ने बाली को क्यों मारा ? इसलिए कि वह रावणका मित्र था। वह सीता जी को प्राप्त करा देता लेकिन वह एहसान जमाता और रावण बना ही रह जाता। राम की पत्नी छूट भी जाती तो दूसरी स्त्रियों का अपहरण होता रहता। भगवान् चाहते थे कि विश्व का कंटक दूर हो। देवताओं की, नागों की, नरों की सुन्दरी कन्याओं का हरण करके समुद्र के टापू में ले जाना उनका यह स्वभाव था। रावण खुद कहता है कि परनारियों का हरण करना राक्षसाों का धर्म है।

इसलिए नारियों की रक्षा के लिए सेतु बना। वानर भालुओं के साथ मिलकर बनाया। अगर उसको तोड़ा जाता है तो नारियों को भी इसका विरोध करना चाहिए। उनकी अस्मिता की रक्षा के लिए राम के द्वारा यह सेतु बाँधा गया था। हमलोग यह चाहते हैं कि जो भगवान् के ऊपर आक्षेप कर रहा है उस टी आर बालू की सब बातों का जोरदार खण्डन किया जाए। क्योंकि उनकी बातों में कोई तथ्य नहीं है। सच्ची राामयण में सब झूठ लिखा है। झूठी कथा है हमलोग उसका खण्डन करते हैं। यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि यह जो वहाँ के द्रविड़ लोग हैं ये द्रविड़ देश का नाम है जाति का नाम नहीं है। हमने बताया था कि भागवत में आया है भक्ति कहती है कि-

उत्पन्ना द्रविडे साऽहं ।

मैं द्रविड देश में जन्मी । जैसे कान्यकुब्ज देश में कान्यकुब्ज, सरयू के पार सरयूपारी, मिथिला में रहने वाले मैथिल, उत्कल में रहने वाले उत्कल । उसी तरह द्रविड़ देश में रहने वाले द्रविड़ । यह कोई विदेशी नहीं हैं। और यह कहना कि आर्य बाहर से आए द्रविड़ों को खदेड़ा । यह सब झूठ बातें हैं । हमारे देश में पहले-पहल सृष्टि हुई । कुछ लोग जंगल में बस गए वे हमारे वनवासी भाई कहलाए जो शहर में रहे वे नागरिक कहलाए जो दक्षिण में गए वे द्रविड़ कहलाए जो इधर रहे वे दूसरे नाम से पुकारे गए । देश के नाम से । इस तरह से हम सबलोग एक हैं और आप देखिये हमलोगों के मन में दक्षिण और उत्तर का भेदभाव नहीं है । यहाँ आदि शंकराचार्य जी की मूर्ति लगी है। ये कहाँ के थे ? केरल के थे । दक्षिण भारत के थे । हम उनको अपना गुरु मानते हैं। ये लोग कहते हैं कि तुमलोगों ने हम पर अत्याचार किया है । ये सब राजनीतिक बातें हैं । अंग्रेजों का बोया हुआ जहर है इसका विरोध करना चाहिए । जो लोग रामसेतु के विखण्डन की बात कर रहे हैं इसी जहर का असर उनके ऊपर पड़ गया है । वे सोचते हैं कि हम आर्य है।˙। रावण अनार्य होता तो रावण के मरने पर अग्निहोत्र के बर्तन रावण के साथ न जलते और राम ब्रह्महत्या का प्रायश्चित्त न करते । इसलिए सब बातें झूठी हैं। भगवान् ने बहुत बड़ा काम किया है । उनके समान कौन सदाचारी होगा जो उन्होंने नरभक्षियों से देश को, जाति को, विश्व को बचाया है । राक्षसों का वध किया है । सबसे बड़ा सदाचार यह है । जानकी जी के बराबर कोई पतिव्रता नारी नहीं हुईं । उन्होंने इतने संकट में भी अपने धर्म को सुरक्षित रखा । अग्नि में प्रविष्ट होकर अपने सतीत्त्व का परिचय दिया । दूसरी बातें फिर से होंगी। संक्षेप में-

गुर्वथे त्यक्तराज्यो व्यचरदनुवनं पद्मपद्भ्यां प्रियायाः

पाणिस्पर्शाक्षमाभ्यां मृजितपथरुजो यो हरीन्द्रानुजाभ्याम् ।

वैरूप्याच्छूर्पणख्याः प्रियविरहरुषाऽऽरोपितभ्रूविजृम्भ-

त्रस्ताब्धिर्बद्धसेतुः खलदवदहनः कोशलेन्द्रोऽवतान्नः ।।

भगवान् ने यह लीला की । उनका बहुत सुन्दर राज्य हुआ । सब लोग सुखी हुए और अन्त में लिखा है बहुत सुन्दर बात है -

स्मरतां हृदि विन्यस्य बिद्धं दण्डककण्टकैः ।
स्वपादपल्लवं राम आत्मज्योतिरगात् ततः ।।

अपना स्मरण करने वालों के हृदय में दण्डक वन के काँटों से बिंधे हुए अपने चरण कमलों को छोड़कर भगवान् अपनी आत्मज्योति में समा गए। हम सब लोगों के हृदय में दण्डक वन के काँटों से बिंधे हुए चरणों को छोड़कर गए हैं। इसका मतलब है कि धर्म की रक्षा के लिए भगवान् के चरणों में काँटे गड़े। धर्म की रक्षा के लिये हमारी आँखों में काँटे गड़ें तो उसके लिए भी हमें तैयार रहना चाहिए।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[45]

।। राम राम पैंतालीस ।।

सदा रहने वाले आनन्द का नाम ही कृष्ण है

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो ।

दशमे दशमो हरिः । भागवत में बारह स्कन्ध हैं । उन बारह स्कन्धों में जो दसवाँ स्कन्ध है वह मुख्य माना जाता है क्योंकि **दशमे दशमो हरिः** । दशम स्कन्ध में दशम भगवान् जो हरि हैं उनके अवतार और लीलाओं का वर्णन है । यह जो भागवत महापुराण है । **पुराणं दशलक्षणम्** । पुराण उसको कहते हैं जिसमें दस लक्षण हों। कहते हैं कि लक्ष्यतावच्छेदक समनियत जो हो उसको लक्षण कहते हैं । तो लक्ष्य है पुराण और लक्ष्यतावच्छेदक है पुराणत्त्व । तो पुराणत्त्व में दश लक्षणों का होना आवश्यक है । लेकिन कुछ पुराण ऐसे हैं जिनमें पाँच का ही वर्णन है तो वह भी पुराण तो हैं ही । ऐसी स्थिति में लक्ष्यतावच्छेदक में हमलोग महापुराण को अगर लें तो जो महापुराण हैं उसमें दस विषयों का वर्णन होना चाहिए।

अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थानं पोषणमूतयः ।
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधो मुक्तिराश्रयः ।।

दशमस्य विशुद्ध्यर्थं नवानामिह लक्षणम् ।

बताया कि भागवत में सर्ग, विसर्ग, स्थान, पोषण, ऊति, मन्वन्तर, ईशानुकथा, निरोध, मुक्ति और आश्रय इन दस विषयों का वर्णन है । पंचमहाभूत, पंचज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रियों का जन्म सर्ग है । ब्रह्मा से गुणों के वैषम्य से जो विविध प्रकार की योनियाँ बनाई गईं वह विसर्ग है । भगवान् वैकुण्ठनाथ का जो हृदय है वह स्थान है । उनका जो भक्तों के ऊपर अनुग्रह है वह पोषण है । कर्मों की वासना प्राणी को कहाँ ले जाती है इसका वर्णन ऊति है । और एक मन्वन्तर में कितने मनु होते हैं ? और कौन मनु कितने समय तक रहता है ? और उसके काल में कितने सप्तर्षि होते हैं ? और कौन कौन से अवतार होते हैं यह मन्वन्तर है । भगवान् की भगवान् के भक्तों की कथा ईशानुकथा कहलाती है । जब संसार का प्रलय होने वाला होता है तो भगवान् का सारे संसार को अपने भीतर समेट कर योग निद्रा में शयन कर जाने का नाम निरोध है । अन्यथा रूप का परित्याग करके अपने वास्तविक स्वरूप में जो स्थिति है उसको मुक्ति कहते हैं । संसार की प्रतीति

और अप्रतीति । देखिये । दो अवस्थाओं में संसार दिखाई पड़ता है । एक तो जागृत अवस्था में आप देख रहे हैं संसार को । इन्द्रियों से जब विषयों का सम्बन्ध होता है उसका नाम जागरण है । उसके बाद जब हम लेट जाते हैं बिस्तर में तो एक दूसरे संसार की रचना करते हैं । इसको स्वप्न कहते हैं । हमको संसार वहाँ भी प्रतीत होता है । जैसे यह संसार हमको सुख-दुःख का अनुभव कराता है उसी प्रकार स्वप्न में भी हम सुख-दुःख का अनुभव करते हैं । यह प्रतीति हो गई संसार की। और जब गाढ़ी नींद में सो जाते हैं तो इसी गाढ़ी नींद को ही सुषुप्ति कहते हैं । उस समय यह संसार प्रतीत नहीं होता । यहाँ पर समष्टि में लेना है । जो व्यष्टि में है वही समष्टि में होता है । सिद्धान्त है- **यत् पिण्डे तद् ब्रह्माण्डे ।** तो परमात्मा के द्वारा संसार की उपलब्धि । यह हो गई संसार की प्रतीति । और प्रलय काल में जब सारे संसार का विलय होता है तो वह है अप्रतीति । संसार की प्रतीति और अप्रतीति दोनों को जो साक्षी है वह आश्रय परब्रह्म परमात्मा है । वह परमात्मा श्रीकृष्ण हैं ।

आभासाश्च निरोधश्च यतश्चाध्यवसीयते ।
स आश्रयः परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते ।।

कृष्ण क्या है ? कृष्णा । कृष् माने जो सदा रहे और णा माने जो आनन्द हो । जो सदा रहने वाला आनन्द है उसी का नाम कृष्ण है । वह कृष्ण महापुराण का दशम है । और इस दशम स्कन्ध में **दशमे दशमो हरिः** । भगवान् श्रीहरि ने इसीलिए इसका महत्त्व बता दिया । इसमें पहले तो भगवान् के अवतार की भूमिका है । क्यों भगवान् का अवतार हुआ ? कैसे दुष्टों ने सज्जनों को कष्ट दिया । पृथ्वी पापियों के भार से आक्रान्त होकर भगवान् की शरण में गई । भगवान् से प्रार्थना की । फिर भगवान् वसुदेव जी के मन में आए । वसुदेव जी के मन से देवकी के मन में गए । यही उनका गर्भाधान है । भगवान् का जन्म दिव्य है । प्राकृत प्राणियों जैसा नहीं होता है । अब भगवान् के अवतार का समय आता है । सबसे पहले शुकदेव जी ने अथ शब्द का प्रयोग किया ।

अथ सर्वगुणोपेतः कालः परमशोभनः । यहां विद्वानों ने विचार किया कि अथ का प्रयोग क्यों किया। बात यह है कि-

ॐकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा ।
कण्ठं भित्वा विनिर्यातौ तस्मान्मांगलिकावुभौ ।

सबसे पहले ब्रह्मा जी के मुँह से दो शब्द निकले । ॐ और अथ । इन शब्दों का उच्चारण करके ब्रह्मा जी ने सृष्टि की रचना का प्रारम्भ किया । चल रहा है । सृष्टि हो

रही है। इसका अर्थ यह है कि ॐ और अथ इन दो शब्दों का उच्चारण करने के बाद जो काम किया जाता है उसमें सफलता होती है। वह मांगलिक हो गया। अथ शब्द मांगलिक है। सबसे बड़ा मंगल क्या है ? मंगल यह है कि जो निर्गुण, निराकार, निर्विकार, अचिन्त्य, अप्रतिष्ठ, कूटस्थ, परब्रह्म, परमात्मा हैं वे अब सगुण साकार रूप धारण करने आए हैं। यह अर्थ है। **अथ सर्वगुणोपेतः कालः परमशोभनः** । सर्वगुणोपेत परमशोभन समय आ गया। इस पर विद्वानों ने यह कहा है कि परमात्मा देश काल से अवच्छिन्न नहीं है।

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये।
स्वानुभूत्यैकमानाय नमः शान्ताय तेजसे ।।

देश काल से अनवच्छिन्न अनन्त चिन्मात्र मूर्ति परमात्मा हैं। काल से जो परे है वे परमात्मा काल के भीतर आ रहे हैं। वह काल कौन है ? भादो के महीने में कृष्ण पक्ष की अष्टमी। यह काल परम शोभन हो गया। काल के परे परमात्मा को काल के द्वारा अब जाना जाएगा। परम शोभनः कहा। यह परम शोभन काल है। जब परमात्मा का मनुष्य स्मरण करे वही शोभन है। फिर जब परमात्मा साक्षात् दर्शन दे दे तब तो उससे बढ़कर कौन सा दूसरा शोभन काल होगा ? वह परम शोभन काल आया।

अथ सर्वगुणोपेतः । सब गुण। जहाँ भगवान् हैं वहीं पर सब गुण हैं। समस्त गुणों से युक्त परम शोभन काल आ पहुँचा। **यर्ह्येवाजनजन्मर्क्षं** । भगवान् का जन्म नक्षत्र आया। उनके जन्म का नक्षत्र है रोहिणी। वसुदेव जी की दो पत्नियाँ हैं रोहिणी और देवकी। भगवान् देवकी के द्वारा अवतार ले रहे हैं। सोचा कि रोहिणी को क्यों उपेक्षित किया जाए ? नक्षत्र दे दिया। **शान्तर्क्षग्रहतारकम्** और दूसरे भी ग्रह, नक्षत्र, तारागण सब शान्त हो गए। मानो भगवान् के आगमन की प्रतीक्षा में सब स्वागत करने के लिए खड़े हो गए। भगवान् दिशाओं से परे हैं। भगवान् किसी एक दिशा में थोड़े ही हैं।

देश काल दिशि विदिसहु माहीं। कहहु सो कहा जहाँ प्रभु नाहीं ।।

देश, काल, दिशा, विदिशा कौन सी ऐसी जगह है जहाँ परमात्मा न हो। भगवान् श्रीराम ने जब वाल्मीकि जी से पूछा महाराज ! हमको कुटिया बनाने के लिए कोई स्थान बताइए जिससे कि मुनियों तपस्वियों को कोई कष्ट न हो। तब वाल्मीकि जी मुस्कुराए। बोले कि महाराज ठीक है। बताऊँगा। पर पहले आप यह तो बताओ कि आप कहाँ नहीं हो ? **जहाँ न होउ तहाँ कहि देहूं ।** जहाँ आप न हो वहाँ हम बता दें। आप तो सर्वत्र हैं। आपको कौन स्थान बता सकता है ? फिर उन्होंने बताया। तो भगवान् देश से,

दिशाओं के परे हैं । लेकिन अब दिशाओं के भीतर आ रहे हैं । यह माना जाएगा । कहा जाएगा कि मथुरा पुरी यहाँ से पश्चिम में है । उत्तर में है दक्षिण में है । दिशाओं से भगवान् को सूचित किया जाएगा । **दिशः प्रसेदुः ।** दिशाएँ प्रसन्न हो गईं । हमलोग यह मानते हैं कि संसार के जितने भी तत्त्व हैं सब तत्त्वों के अधिष्ठातृ देवता हैं । काल का भी अधिष्ठातृ देवता है और दिशाओं के भी ।

दिशः प्रसेदुर्गगनं निर्मलोडुगुणोदयम् ।

हमारे यहाँ नौ द्रव्य माने जाते हैं । पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, देश, काल, मन और आत्मा । ये नौ द्रव्य हैं। इन नवों द्रव्यों की शुद्धि जब हो जाए तो भगवान् आते हैं । भगवान् को अपने भीतर बुलाने के लिए अपने मन को निर्मल बनाना चाहिए ।

निर्मल मन जन सो मोहि पावा । मोहि कपट छल छिद्र न भावा ।।

जब भगवान् के अवतार का समय आया तो आकाश स्वच्छ हो गया । तारागण स्पष्ट रूप से आकाश में दिखलाई पड़ने लगे । मानो किसी महानुभाव ने, भक्त ने अपने गुरु के आगमन पर आँगन को गोबर से लीप कर फूल बिखेर दिया हो । आकाश ने अपने हृदय के आँगन में तारागणों के फूल बिखेर दिए ।

कंस दैत्य था । दैत्य होने के कारण उसने ब्राह्मणों को, गौवों को कष्ट देना प्रारम्भ कर दिया था । अन्त ही नहीं था तो बेचारे ब्राह्मणों के घर में जो अग्निहोत्र की अग्नियाँ थीं वह ठण्डी पड़ गई थी ।

द्विज भोजन मख होम सराधा । सब कर जाइ करहु तुम बाधा ।।

ब्राह्मणों का भोजन जहाँ होता हो । जहाँ यज्ञ होता हो । होम होता हो । श्राद्ध होता हो, दैत्य लोग जाकर उसमें बाधा डालते थे । ब्राह्मणों के घर की अग्नियाँ ठण्डी पड़ गई थी लेकिन आज प्रज्ज्वलित हो गई । अपने आप उनके अग्निहोत्रों की अग्नियाँ अपने कुण्डों में प्रज्ज्वलित हो गईं । अब आकाश की शुद्धि हुई तो वायु कैसे पीछे रहता ? **ववौ वायुः सुखस्पर्शः** । शीतल, मन्द, सुगन्ध पवन चलने लगा । पुण्य-गन्ध को लेकर पवन चल रहा है । भगवान् का आगमन यदि हो तो उनका स्वागत तो होना ही चाहिए । धीरे धीरे चल रहा है । सुख स्पर्शः । तीव्र वायु से लोगों को कष्ट होता है इसीलिए मन्द-मन्द। जब अग्नि शुद्ध हो गया तो फिर जल भी । जल में क्या हुआ कि **नद्यः प्रसन्नसलिलाः ह्रदा जलरुहश्रियः ।** नदियों का जल निर्मल हो गया । और जो बीचःबीच में ह्रद माने तालाब हैं उनमें कमल खिल उठे । आप देखिये कि रात को कमल मुकुलित हो जाते हैं

लेकिन भगवान् श्रीकृष्ण के जन्म के समय रात को खिल गए । आपने देखा होगा कि सबेरे पक्षियों का कलरव सुनाई पड़ता है । और सायंकाल जब वे घोसले में आते हैं तो कलरव करते हैं । उसके पश्चात् वे शान्त हो जाते हैं लेकिन भगवान् के अवतार के समय में **द्विजालिकुलसन्नाद** पक्षी कलरव करने लगे । द्विजाति शब्द के दो अर्थ होते हैं । एक तो होता है पक्षी और दूसरा होता है ब्राह्मण । ब्राह्मण के दो जन्म होते हैं । एक जन्म जब वह माता के उदर से निकलता है तब और दूसरा जब उसका यज्ञोपवीत संस्कार होता है । वह जनेऊ पहनता है तो उसका दूसरा जन्म माना जाता है इसीलिए उसको द्विज कहते हैं । अपने जो दाँत हैं ये भी द्विज हैं । एक तो दूध के दाँत और दूसरे बाद के जो पैदा होते हैं वे । जो दो बार जन्म ले उसका नाम द्विज । इसी तरह से पक्षी भी द्विज कहे जाते हैं । क्योंकि एक बार अण्डे के रूप में और फिर चूजे के रूप में। दो बार जन्म होता है उनका भी । अतः दोनों अर्थ होगा । पक्षी भी, ब्राह्मण भी । **द्विजालिकुलसन्नाद** ब्राह्मण लोग वेद मन्त्रों का निर्भय होकर गान करने लगे । पक्षी कलरव करने लगे। सबका मन प्रसन्न हो गया । वनों की जो पंक्तियां थीं वे फूलों से खिल उठीं । इनमें फूलों के गुच्छे लटक गए। इस तरह से जल की शुद्धि हुई । वनों में पुष्प और फल आ गए । अब पृथ्वी रह गई ।

मही मंगलभूयिष्ठपुरग्रामव्रजाकरा ।

ये जो पृथ्वी है इसके पुर, ग्राम, व्रज और आकर चार भेद हैं । जिन नगरों में परकोटा होता है उनको पुर कहते हैं । जिनमें परकोटा नहीं होता उनको ग्राम कहते हैं। जहाँ गौवें रहती हैं उनको व्रज कहते हैं और जहाँ खनिज पदार्थ निकलते हैं उनको आकर कहते हैं । चारों प्रकार की पृथ्वी मंगल भूयिष्ठ हो गई । यह माना जाता है कि भगवान् की दो पत्नियाँ हैं । एक श्रीदेवी और दूसरी भूदेवी । श्रीदेवी तो लक्ष्मी है और भूदेवी है पृथ्वी । इसीलिए हमलोग बिस्तर से जब नीचे पैर रखते हैं सबेरे तो यही मन्त्र बोलते हैं-

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।।

हे माता पृथ्वी ! समुद्र तुम्हारे वस्त्र हें । पर्वत तुम्हारे स्तन हैं । तुम्हारे स्तनों से गंगा जमुना की धारा बह रही है दूध की। तुम विष्णु की पत्नी हो । हम तुम्हें नमस्कार करते हैं । इसीलिए हमलोग अपने जन्मभूमि जो भारत भूमि है उसको कहते हैं **वन्दे मातरम्**। यह हमारी माता है । विष्णु की पत्नी है । हम इसको रोज नमस्कार करते हैं। **मही मंगलभूयिष्ठ ।** एक तो भगवान् की पत्नी श्रीदेवी । उनका अवतार है रुक्मिणी और

दूसरी पत्नी है भूदेवी जिनका अवतार है सत्यभामा। अब सत्यभामा का सौभाग्य आने वाला है। अब भगवान् जब गोचारण करने जाएँगे तो जूते नहीं पहनेंगे। भगवान् जब गौओं को चराने के लिए निकले तो माता यशोदा ने कहा कि कन्हैया! जूता पहन ले। व्रज में काँटे हैं। तेरे कोमल चरणों में गड़ जाएँगे। भगवान् बोले कि माँ ! मेरी इष्ट देवता गौ है। जब वह पैदल चल रही है बिना जूते के तो मैं कैसे जूते पहन सकता हूँ ? इसलिए भगवान् अपने सुकोमल चरणारविन्दों से, निरावरण चरणों से व्रज भूमि में भ्रमण करते हैं। इसीलिए गोपियाँ कहती हैं कि महाराज !

चलसि यद् व्रजाच्चारयन्पशून् नलिनसुन्दरं नाथ ते पदम्।
शिलतृणांकुरैः सीदतीति नः कलिलतां मनः तात गच्छति।।

जब पशुओं का चारण करने के लिए श्याम निकलते हैं। हे नाथ ! कमल से सुन्दर सुकोमल आपके चरण तृण अंकुर से बिंध न जाएँ इस आशंका से हमारे हृदय में क्लेश हो जाता है। कष्ट होता है। भगवान् के चरणों का चिह्न पृथ्वी को मिलेगा इससे बढ़कर पृथ्वी के लिए मंगल का समय कौन सा दूसरा हो सकता है ? इसीलिए **मही मंगलभूयिष्ठपुरग्रामव्रजाकरा** कहा।

अब इसके पश्चात् देवताओं के यहाँ प्रसन्नता होने लगी। किन्नर, गन्धर्व सब गान कर रहे हैं। सिद्ध और चारण भगवान् की स्तुति कर रहे हैं और अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं। उस समय जब भगवान् के जन्म का अवसर आया तो मुनियों और देवताओं ने आनन्दित होकर सुमनों की वर्षा की। आप देखिये देवता भगवान् के ऊपर फूल बरसा रहे हैं। गेंदा थोड़े ही बरसाते थे। गेंदा मारो तो आँख में लग जाए। आपने देखा होगा कि पारिजात का फूल कितना कोमल होता है और कितना हल्का होता है। वह फूल बरसा रहे थे। देवताओं ने सुमन बरसाए, मुनियों ने सुमन माने अपना सुन्दर मन ही भगवान् के पास बरसा दिया कि ले लो। किसी भक्त ने भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा की। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, धूप, दीप, नैवेद्य, आरती कर समर्पण किया। जब दक्षिणा देने का अवसर आया तो वह सोचने लगा कि दक्षिणा में मैं भगवान् को क्या चढ़ाऊँ ? ऐसी चीज चढानी चाहिये जो पहले से न हो उनके पास। तो वह भगवान् से ही पूछता है

रत्नाकरस्तव गृहं गृहिणी च पद्मा किं देयमस्ति भवते जगदीश्वराय।

भगवन् ! अगर मैं आपको रत्न चढ़ाऊँ तो रत्नाकर समुद्र तो आपका घर ही है। वहाँ रत्नों की क्या कमी है ? और यदि मैं द्रव्य चढ़ाऊँ तो समस्त धन सम्पत्तियों की अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मी आपकी घरवाली है तो धन की भी आपके पास क्या कमी है ?

किं देयम् ? और फिर जगत् के ईश्वर तो आप हैं तो जगत् में जो कुछ भी है वह सब आपका ही है। आपकी वस्तु मैं आपको क्या चढ़ाऊँ ? सोचने लगा कि बिना दक्षिणा के तो पूजा अधूरी ही रह जाएगी। कुछ न कुछ तो चढ़ाना ही है। सोचते सोचते वह कहता है कि भगवन् ! आपके पास सब है लेकिन आपके मन को गोपियों ने चुरा लिया है। तो मैं अपना मन ही आपको दे रहा हूं। कृपया इसे स्वीकार कीजिये।

गोपालवामनयनाहृतमानसाय दत्तं मया निजमनस्तदिदं गृहाण ।

कहते हैं कि किसी गोपी के आँचल को छोटे से नटखट श्याम सुन्दर ने पकड़ा और खींचा तो वह डाँटती हुई बोली -

मुञ्चाञ्चलं चञ्चल पश्य लोकं बालोऽसि नाऽऽलोकयसे कलंकम् ।

अरे चंचल! मेरे अंचल को छोड़। जरा संसार की तरफ देख। तू अभी बच्चा है। देखने वाले लोग कुछ न कुछ कलंक लगाने लग जायेंगे। उसके जोर से बोलने पर अंचल छोड़कर कृष्ण थोड़ा दूर खड़े हो गए तब वह आँख नचाती हुई बोली कि -

भावं न जानासि विलासिनीनां गोपाल गोपालनपण्डितोऽसि ।

अथवा **गोपाल गोपाल न पण्डितोऽसि ।**

अरे कन्हैया ! तू विलासिनियों के भाव को समझता नहीं है। तू तो निरा गोपाल है। गौओं को पालने का पण्डित है। रस रहस्य का ज्ञाता नहीं है। गोपालन का पण्डित है। इस रस रहस्य का तू पण्डित नहीं है। ऐसा कहकर मानो गोपियों ने आपके मन को चुरा लिया है। इसीलिए आप बिना मन के हो गए हैं। कृपा करके मैं अपना मन आपको अर्पित कर रहा हूँ , स्वीकारिये। वह कहता है कि आप कृपा करके मेरे मन को ग्रहण करिए।

अस्तु। आकाश में काले-काले मेघ उस समय आ गए। मेघ आए और सागर के पास जाकर मन्द-मन्द गरजने लगे। क्योंकि उत्तर यह था कि ये जो मेघ हैं समुद्र से निकले तो समुद्र से जब निकले तो वे चाहते थे कि भगवान् का दर्शन करें लेकिन पवन ने धोखा देकर इनको दूर कर दिया था। अभी समय नहीं है कहकर। आज उन्होंने सोचा कि भगवान् अवतार ले रहे हैं, गौएँ चराने जाएँगे, धूप लगने लगेगी तो हम उनके ऊपर छाया करेंगे और जब कोई इनके श्रीअंग की तुलना करेगा तो हमसे करेगा। मेघश्याम। घनश्याम। हमसे इनकी उपमा दी जाएगी। जलधर मन्द-मन्द गरजने लगे। सबका समय आएगा। किसी का तिरस्कार नहीं करना चाहिए। मानो गरज के मेघ यही कह

रहे हैं। इस तरह से जब भगवान् के जन्म का अवतार का समय आया तो जब भगवान् के स्वर्ग लोक में दुन्दुभियाँ नगाड़े बजने लगे मानो नगाड़े यह कह रहे हैं कि फुटकर तो हम बजते ही हैं बिना ही पिटे बज जाएँ तो इस तरह से नगाड़े बजने लगे। उस समय घोर अन्धकार छाया हुआ था।

निशीथे तम उद्भूते जायमाने जनार्दने।

बात क्या है कि जब संसार में अन्धकार छा जाता है। अज्ञान का अन्धकार छा जाता है तो उसको दूर करने के लिए भगवान् प्रकट होते हैं। निशीथ भगवान् के अवतार का समय है। इसीलिए निश्चित हुआ कि भगवान् का अवतार चन्द्रवंश में हो रहा है। चन्द्र की शोभा रात्रि में होती है। भगवान् श्रीराम का अवतार दिन में हुआ था। देवरूपिणी जो देवकी थी उसमें पूर्ण निशा से पूर्ण चन्द्रमा का जैसे प्राकट्य होता है उसी प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण का प्राकट्य हुआ। भगवान् प्रकट हुए। उनका जन्म नहीं हुआ। उनके प्रकट होने को ही जन्म कहते हैं। इस तरह से भगवान् का अवतार हुआ। वसुदेव जी ने देखा कि जो बालक प्रकट हुआ है वह साधारण नहीं है।

तमद्भूतं बालकमम्बुजेक्षणं चतुर्भुजं शंखगदार्युदायुधम्।
श्रीवत्सलक्ष्मं गलशोभिकौस्तुभं पीताम्बरं सान्द्रपयोधसौभगम्॥

महार्हवैदूर्यकिरीटकुण्डलत्विषा परिष्वक्तसहस्रकुंतलम्।
उद्दामकांच्यंगदकंकणादिभिर्विरोचमानं वसुदेव ऐक्षत॥

भगवान् को वसुदेव जी ने देखा। क्या देखते हैं? अद्भुत बालक है। अद्भुत माने आश्चर्यजनक। और दूसरा अर्थ उसका यह है कि अद् धातु के बाद उतच् प्रत्यय है उसी से अद्भुत बना है। माने ऐसा अद्भुत है जो सबके नष्ट होने पर सबको खाकर भी बना रहता है। ऐसा वह अद्भुत है जिसके सम्बन्ध में वेद कहते हैं कि ब्राह्मण और क्षत्रिय को मौत की दाल से सान कर भात बनाकर जो खा जाए वह ब्रह्म है।

यस्य ब्रह्म च क्षत्रं च उभे भवत ओदनः।

मृत्युर्यस्योपसेचनम्।

इसी तरह ब्रह्मसूत्र भी है। **अत्ता चराचरग्रहणात्।** वह खाने वाला है। चराचर को ग्रहण करने वाला है। बालक साधारण नहीं है अत्ता है। और बालकं इसका अर्थ एक यह भी है कि **बाले-बाले कः ब्रह्मा यस्य सः**। जिसके रोम रोम में ब्रह्मा हैं। भगवान्

के विराट् रूप में उनके प्रत्येक रोम में अनेकों ब्रह्माण्ड हैं ।उनमें अनेकों ब्रह्माण्ड में अनेकों ब्रह्मा-विष्णु-महेश हैं। ब्रह्मा जी भी इनका बालक है और दूसरे वह जो **वासुदेवं अनन्तं ब्रह्मात्मकं सुखं** ब्रह्मात्मक सुख भी जिससे अलग कहलाते हैं वह बालक हैं यह ।

चार भुजाएँ । शंख, चक्र, गदा तथा पद्म धारण किए हुए, पीताम्बर पहने हुए गले में तुलसी, कुन्द, मन्दार पारिजात, सरोरुह की गले से लेकर चरणों तक लम्बी माला पहने हुए , भुजाओं में बाजूबन्द है , हाथों में कंकण है कटि में करधनी है, चरणों में नूपुर हैं और गले में कौस्तुभ मणि है । दाहिनी तरफ ब्राह्मणों के चरणों का चिह्न है । ऐसे परमात्मा को वसुदेव जी ने देखा । समझ रहे हैं ।

जाकर नाम सुनत शुभ होई । मोरे गृह आवा प्रभु सोई ।।

जिसके नाम को सुनने से शुभ हो जाता है वह परमात्मा मेरे घर में आ गया । हाथ जोड़कर वसुदेव जी ने प्रणाम किया । फिर उन्होंने स्नान किया और दस हजार गौओं के दान का संकल्प कर लिया । कैद से निकलूँगा तो ब्राह्मणों को दस हजार गौओं का दान करूँगा । अब फिर भगवान् की स्तुति करने लगे । बोले कि महाराज! आप साक्षात् परब्रह्म परमात्मा हैं । आपसे सृष्टि होती है । आपके चौबीस तत्त्वों से ही चराचर जगत् उत्पन्न होता है । जगत् के कारण होते हुए भी जगत् में प्रविष्ट हैं । प्रविष्ट भी हैं और वास्तव में अप्रविष्ट भी हैं । जगत् तो आपसे भिन्न है ही नहीं । उसी तरह से आप संसार में प्रविष्ट होकर उसमें अप्रविष्ट हैं। सारा चराचर आपका ही स्वरूप है ।

आपका दर्शन इन इन्द्रियों के द्वारा नहीं होता । ये जो हमारी इन्द्रियाँ हैं- आँख, कान, नाक, जीभ, त्वक्, जहाँ इनका प्रवेश है वहीं जा सकते हैं लेकिन इनमें उस परमात्मा को देखने की शक्ति नहीं है । जैसे समझ लो कि दूध आपके सामने है । अब दूध के कटोरे को देखकर आँख तो कह सकती है कि यह दूध है लेकिन इसमें मीठा पड़ा है कि नहीं यह आँख नहीं बता सकती । यह तो जीभ ही बता सकती है । इसी प्रकार से परमात्मा सर्वत्र रहते हुए भी उसका अनुभव इन्द्रियों से नहीं होता परमात्मा को जानने के लिए वेदों के महावाक्य की आवश्यकता पड़ती है । वह महावाक्य से जाना जाता है । उसके लिए वही प्रमाण है । जैसे रूप के लिए आँख प्रमाण है उसी तरह से परब्रह्म परमात्मा के लिए वेदान्त वाक्य प्रमाण होते हैं ।

भगवन् ! ये जो काल है वह आपकी चेष्टा है । वसुदेव जी ने आगे कहा कि यह जन्तु मृत्यु रूपी सर्प के भय से सभी लोकों में भागता फिरा कहीं भी शान्ति नहीं मिली। जहाँ गया वहीं पर मृत्यु ने पीछा किया । जब यह आपके चरणों में आया तो सुख से

सोया । मृत्यु भी इसको छोड़कर भागने लगी । भगवन् ! आप निर्गुण, निष्क्रिय हैं, अनीह हैं, आपसे संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार शास्त्र बतलाते हैं । क्यों ? वस्तुतः यह तो सम्भव नहीं है फिर भी आपके दो रूप हैं । एक तो आपका निर्गुण निराकार निरुपाधिक रूप है और दूसरा आपका सोपाधिक सगुण साकार स्वरूप है । माया को लेकर, प्रकृति को लेकर आप जगत् के उत्पादक, पालक, संहारक हो जाते हैं । इस प्रकार वसुदेव जी ने भगवान् की स्तुति की और यह कहा कि यह कंस तुम्हारे जन्म की बात सुनकर आने ही वाला है । देवकी ने समझ लिया कि यह मेरा बेटा भगवान् है। बोल पडीं-

रूपं यत् तत् प्राहुरव्यक्तमाद्यं ब्रह्मज्योतिर्निर्गुणं निर्विकारम् ।
सत्ता मात्रं निर्विशेषं निरीहं स त्वं साक्षात् विष्णु रध्यात्मदीपः ।।

जो विष्णु है वह अध्यात्म दीप है । जो सत्ता मात्र है । निर्विशेष है । निश्चेष्ट है। वह आप हैं । जब प्रलयकाल आता है सब कार्य अपने-अपने कारण में विलीन हो जाते हैं तो सबके विलीन होने पर जो बच रहता है वह आप हैं । आप अशेष हैं और शेष भी कहलाते हैं । भगवन् ! आपने मेरे द्वारा जन्म लिया है । जिसके उदर में सारा संसार रहता है । वह मेरे गर्भ में रहा है यह कौन कह सकता है ? महाराज ! मैं चाहती हूँ कि यह जो रूप है आपका, इसको आप संवरण कीजिए और बालक बनिए । भगवान् बोले कि पहले जन्म में तुम्हारा नाम पृश्नि था और वसुदेव जी सुतपा थे । तुम दोनों ने वर्षों तक मेरी आराधना करके वरदान माँगा कि आप मेरे पुत्र बनें तो मैं तुम्हारा पुत्र बना । दूसरे जन्म में तुम कश्यप और अदिति बने तो मैं तुम्हारे घर में वामन के रूप में अवतरित हुआ । अब तीसरे जन्म में तुम वसुदेव-देवकी बने हो मैंने तुम्हारे यहाँ अवतार लिया है । तुम ब्रह्म भाव से या पुत्रभाव से चिन्तन करते रहोगे तो परमगति को प्राप्त हो जाओगे । ऐसा कहकर भगवान् एक छोटे से शिशु बन गए । भगवान् को देवकी कैसे छोड़ती ? इसलिए आवश्यक था कि उनको पहले ऐश्वर्य बताकर आश्वस्त कर दो और दूसरे छोटे शिशु बनकर भगवान् ने देवकी के हृदय में यह ममता उत्पन्न कर दी कि इसको बचाना चाहिए। नहीं तो यह छोड़ेगी नहीं । छोड़ेगी नहीं तो माता यशोदा और गोप-गोपियों का क्या होगा? बाल सुख देखने के लिए जन्म-जन्मान्तर से तपस्या किए बैठे हैं तो छोटे से शिशु बने ।दोनों का भाव रखा । देवकी को आश्वासन के लिये अपना ऐश्वर्य रूप दिखाया। यशोदा के भाव की रक्षा के लिये माधुर्य भी प्रकट किया। भगवान् की प्रेरणा से वसुदेव जी ने सोचा कि इसको नन्द भवन में छिपा दें । कैसे ले जाएँ? बड़ी कठिनाई थी । हाथ में हथकड़ी थी। पैर में बेड़ियाँ थी । किवाड़ लगे थे । पहरेदार पहरा

दे रहे थे । भगवान् ने सब निर्देश दे दिये । इधर यशोदा के यहां योगमाया ने जन्म लिया।

या योगमायाऽजनि नन्दजायया ।

यशोदा से एक कन्या ने जन्म लिया था जो कात्यायिनी थी । जो दुर्गा थी । जो राजराजेश्वरी का अंश था । भगवान् की छोटी बहन थी । देखिए । बहन और भाई का प्रेम । मौत को बहन ने गले लगा लिया। अपने भाई को बचाने के लिए । इसीलिए उस योगमाया ने पहरेदारों को सुला दिया । बन्द किवाड़ खोल दिए । हथकड़ी बेड़ी उतार दी। खट-खट करके गिर गई । अब वसुदेव जी सूपा में भगवान् श्रीकृष्ण को कपड़े में लपेटकर ले चले। रास्ते में धीरे-धीरे पानी बरस रहा था । यह भी भगवान् की माया थी। बरसते पानी में कोई घर से नहीं निकलता है । इस तरह से वसुदेव ले जा रहे थे तो **शेषोऽन्वगाद् वारि निवारयन् फणैः** शेष नाग ने छत्र बनकर भगवान् के ऊपर पानी को गिरने से बचाया ।

यमुना में बाढ़ आ गई थी तो जैसे समुद्र ने भगवान् राम को स्थान बताया कि इस स्थान पर पुल बनाया उसी प्रकार यमुना ने भी भगवान् को ले जाने के लिए वसुदेव जी को मार्ग बताया। यमुना जी ने भगवान् का चरण छूने के लिए अपना स्वरूप बढ़ाया तो भगवान् ने अपना चरण कमल नीचे करके यमुना को ठण्डी कर दिया । वसुदेव जी निर्विघ्न रूप से भगवान् श्रीकृष्ण को लेकर गोकुल पहुँचे । वहाँ भी सब लोग सो रहे थे। यशोदा जी ने कन्या को जन्म दिया था लेकिन वे देख नहीं पाई थीं कि यह कन्या है कि पुत्र है ? इस तरह से वसुदेव जी ने भगवान् श्रीकृष्ण को यशोदा के पास में लिटाया । फिर उस कन्या को लेकर लौटे। जिस मार्ग से आए थे उसी मार्ग से वे लौटकर आ गए । कन्या जब आ गई तो वसुदेव-देवकी के हाथ की हथकड़ी और बेड़ी दोनों ज्यों की त्यों लग गई । बन्द किवाड़ लग गए।

पहरेदार उठे और कन्या ने कहर-कहर के रोना शुरु किया । पहरेदारों ने सुना । कंस दौड़ा दौड़ा आया। देवकी के सामने आकर खड़ा हो गया । रास्ते में ठोकर लगने से उसके बाल खुल गए थे । माथे से खून बह रहा था । देवकी बोलती है कि भैया ! मेरे बहुत से बालक तूने मार डाले । एक कन्या है वह मुझे दे दे । अगर बच गई तो तेरे बेटे से व्याह दूँगी । तेरी बहू बन जाएगी । लेकिन कंस भूल गया था अपना प्रेम । और जबरदस्ती खींचकर कन्या के चरण घुमाकर पत्थर में पटकने ही वाला था कि उस कन्या ने कंस के सिर में लात लगाई और आकाश में चली गई । देखा कि यह तो अष्ट भुजी

दुर्गा है । लोग इसका पूजन कर रहे हैं। उस कन्या ने कहा कि अरे मूर्ख ! मुझे मारने से क्या होगा ? तेरा मारने वाला कहीं जन्म ले चुका है ।

इस तरह से भगवान् गोकुल पहुँच गए । भोर हुआ तो नन्द बाबा के घर की महिलाओं ने यशोदा के कक्ष में जाकर उसने देखा कि एक सुन्दर साँवला बालक सोया हुआ है । बधाई देने आई नन्द जी को। बाबा तुम्हारे घर में लाल ने जन्म लियो है । नन्द जी जल्दी उठकर भगवान् का स्मरण कर ही रहे थे कि उनको यह शुभ संवाद मिला । अपने गले का बहुमूल्य हार उस दासी को दे दिया और कहा कि जाओ ब्राह्मणों को बुला लाओ । ब्राह्मणों को बुलाने गई । नन्द जी ने स्नान करके वस्त्र धारण किए । इतने में ब्राह्मण आ गए । स्वस्तिवाचन करने लगे। नान्दीमुख श्राद्ध कराया और नन्द जी ने दान देना शुरु किया । सात तिल के पर्वत बनाए । स्वर्णिम पत्थरों से उनको ढँक दिया और रत्नों को भीतर डाल दिया और ब्राह्मणों को उसे दान कर दिया । दान से धन की शुद्धि होती है । और उसके बाद दान की जो परम्परा चली जिसने जो माँगा नन्द जी ने वह सबको दिया । कवियों ने तो वर्णन किया है -

नन्द कछु इतनो जो दियो नेक इन्द्र कुबेरहु की मति बौरी ।

देखत माहि लुटाइ दियो न बची बछिया छछिया न पिछौरी ।।

सब कुछ दान कर दिया । इतने में गोपियों को पता लगा कि यशोदा ने लाला को जन्म दिया तो वह मांगलिक थाल लेकर, वस्त्र-आभूषण धारण करके नन्द के भवन की ओर चली और जाकर यशोदा के कक्ष में भगवान् श्रीकृष्ण को देखकर बोली कि यशोदा ! तेरा लाल जुग-जुग जिए । भगवान् को आशीर्वाद देती हैं । फिर गोप इकट्ठे हो जाते हैं अपनी गौओं को, बैलों को सजाकर नन्द के भवन के सामने इकट्ठे होकर बहुत बड़े कपड़ा नीचे का पहन कर पहुँचते हैं और बाबा नन्द को बधाई देते हैं और उसके बाद तो उनका उत्सव चलने लगता है। एक दूसरे के ऊपर हल्दी छिड़कते हैं । मक्खन दूध छिड़कते हैं और इस तरह से बहुत बड़ा उत्सव गोकुल में होने लगता है। लोग आनन्द में मग्न हो जाते हैं । जब से भगवान् श्रीकृष्ण आए गोकुल में लक्ष्मी नृत्य करने लगी। कोई दुःखी ही वहाँ न रहा ।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

—*—

[46]

।। राम राम छियालिस ।।

गायों की रक्षा-सेवा के लिये गोविन्द आते हैं

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो !

भगवान् श्रीकृष्ण परमात्मा ने इन्द्र की पूजा छुड़कर गिरिराज गोवर्धन की पूजा करा दी। एक ओर तो गिरिराज के रूप में प्रकट हो गए विशाल चतुर्भुज रूप धारण करके और दूसरी ओर नन्द के छोटे से बालक के रूप में उनको प्रेरित करने लगे कि बाबा ! ये चढ़ाओ ! ये चढ़ाओ । इस प्रकार यह पूजा गिरिराज गोवर्धन की पूजा नहीं थी यह साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण की ही पूजा थी । इसलिए आज लोग गिरिराज की इसी भावना से परिक्रमा करते हैं । यह साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान् का ही रूप है । इन्द्र के मन में क्रोध आ गया ।

जिन देवताओं ने भगवान् से अवतार के लिए प्रार्थना की थी उन्हीं देवताओं के राजा इन्द्र को इस बात से क्षोभ हो गया कि कृष्ण ने हमारी पूजा क्यों पूजा छुड़ाई । संवर्तक मेघ को बुलाया और उनसे कहा कि जाओ ब्रजभूमि को जलप्लावित करके डुबो दो । उन गोपों को और कृष्ण को भी । फिर देखो कि कौन बचाता है ? काले काले मेघ चले उसके पहले ही जोरों का झंझावात चलने लगा । वर्षा निकट आ गई । लोग कृष्ण के पास आए कि इन्द्र के कोप से बचाओ । ब्रजभूमि अब जलप्लावित होने वाली है । हम सब डूब जाएँगे। भगवान् बोले कि आप लोग मत डरिए । वह गिरिराज भगवान् ही आप सबकी रक्षा करेंगे । अपनी गौओं को, बैलों को और अपने घर के सब सामानों को लेकर चलो। गिरिराज की शरण में चले सब । भगवान् ने गिरिराज पर्वत को उखाड़ा । और अपने बाँये हाथ की कानी अँगुली में गिरिराज को उठा लिया । इन्द्र की प्रेरणा से मूसलाधार वर्षा मेघ करने लगे। वह वर्षा गिरिराज गोवर्धन के ऊपर पड़ने लगी । अब भगवान् ने सुदर्शन चक्र को लगा लिया । सुदर्शन घूमने लगा। वर्षा के पानी को सुदर्शन छिटकाकर दूर कर देते थे । ऐसे ही सात दिन हो गए । मेघों का जल चुकने लगा । कहाँ तक बरसाएँ । ब्रजवासियों का कुछ नहीं बिगड़ा । अब व्रजवासी खडे हैं । बाँये हाथ की कानी अँगुली में गिरिराज को कृष्ण उठाए हैं तो मन में वात्सल्य आ गया । कृष्ण के पास आकर उन्होंने कहा कि कन्हैया ! सात रात बीत गई पर्वत उठाए तेरे हाथ में दर्द होने लगा होगा । अब

तू विश्राम कर ले । भगवान् ने पूछा कि गिरिराज किसके हाथ में दे दूँ ? तो बोले कि श्रीदामा के हाथ में दे दे या फिर ऐसा कर कि दाहिने हाथ में ले ले । हम तेरे बाँये हाथको दबा दें । थक गया हो तो श्रीदामा के हाथ में दे दे । श्रीदामा संभाल सकता है क्या ? कहा कि जब तुमको कुश्ती में पटक देता है तो तुम्हारा उठाया क्यों नहीं उठा सकता । भगवान् मुस्कुरा कर रह गए। किसी के हाथ में नहीं दिया । लोगों ने सोचा कि इसका भार कम करने के लिए गिरिराज पर लाठी लगाई जाये। सात दिनों तक अनवरत वर्षा के बाद जब इन्द्र थक गया तो मेघ लौट गए । काले-काले बादल सफेद होकर लौटे। इन्द्र ने देखा कि इनका कुछ भी नहीं बिगड़ा । अब उसको भय लगा कि कृष्ण तो भगवान् है। क्षमा माँगने के लिए आया । ऐरावत हाथी की सूँड में स्वर्गंगा का जल लेकर आया । भगवान् के चरणों में मस्तक रखा । क्षमायाचना की । भगवान् ने इन्द्र को क्षमा कर दिया। उसके पश्चात् कामेधेनु भी आई थी । कामधेनु ने कहा कि कृष्ण ! तुमने गोपों की रक्षा की । लाखों की संख्या में गायें थी । यदि तुम गिरिराज न उठाते तो सब डूबकर मर जातीं । तुमने देवताओं के लिए यह कार्य किया है । हम तुमको गौओं का इन्द्र बनाते हैं । कामधेनु के थन से निकलने वाले दूध से अभिषेक कराया और जल से अभिषेक कराया और भगवान् को गोविन्द पद की उपाधि दे दी । **गां इन्द्र गोविन्दः ।**

तब से भगवान् श्रीकृष्ण का नाम गोविन्द पड़ा । अब सात दिन बीत गया तो बैठी पंचायत । नन्द जी बुलाए गए । नन्द जी को कहा कि यह कृष्ण तुम्हारा बेटा नहीं है । इसमें कुछ विलक्षणता देखी जा रही है । जब से यह जन्मा है तब से बड़े-बड़े उपद्रव होते हैं और यह बात ही बात में सब झेल लेता है । पूतना को मार डाला । शकटासुर को भगा दिया । तृणावर्त को मार डाला । इसने अघासुर को मारा । बकासुर को मारा । इसने बड़े बड़े दैत्यों को धराशायी कर दिया और अभी गिरिराज को उठा लिया । नहीं, नहीं, यह बालक नहीं है । यह तुम्हारी जात का नहीं है । यह कोई और आ गया है तुम्हारे घर में । तुम साफ-साफ बताओ कि तुम इसे कहाँ से लाए हो ? नन्द जी बोले कि मित्रों! यह तो मेरा ही बेटा है । मेरे ही घर में पैदा हुआ है । कोई दूसरा नहीं है । पर इसमें ये सब गुण हैं । इसका नामकरण करने के लिए गर्ग जी आए थे । उन्होंने कहा था कि-

तस्मान्नन्द कुमारोऽयं नारायण समो गुणैः ।

हे नन्द ! यह बेटा तो तुम्हारा ही है लेकिन गुणों में नारायण के समान होगा । श्री, कीर्ति, प्रभाव इसका सब नारायण के समान ही होगा । प्राचीन काल में दुर्जनों ने सज्जनों को सताया तो इसने उनकी रक्षा की । यह नारायण के समान हैं और है तो बेटा तुम्हारा।

लेकिन कभी वसुदेव के घर में जन्मा था इसलिए इसको वासुदेव भी कहेंगे। गर्ग जी ने मुझसे यह सब पहले से बतलाया है कि जो इसकी सेवा करेंगे, जो इसकी आराधना करेंगे उसके शत्रु उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेंगे। सबने समझ लिया कि हाँ। यह तो भगवाान् है। नन्द के घर में इनका अवतार हुआ है। मान लिया।

उसके दूसरे दिन एकादशी आई। नन्दजी एकादशी का व्रत करते थे। ऐसे वैसे लोगों के यहाँ भगवान् थोड़े ही आते हैं जो प्याज खाए, लहसुन खाए, अण्डा खाए, मुर्गी खाए, शराब पिएँ, उनके यहाँ भगवान् तो क्या महात्मा भी नहीं आएँगे। जिनका आचार-विचार शुद्ध होता है। धर्म के अनुसार जो चलते हैं उनके हृदय में भगवान् आते हैं और साक्षात् दर्शन भी देते हैं। नन्द जी ने एकादशी का व्रत किया। रात भर जागते रहे। प्रातःकाल नदी में नहाए। समय का ध्यान ही न रहा। आधी रात को यमुना नहाने चले गए। यमुना जी में जैसे ही गोता लगाया तो जलका देवता वरुण है। रात को जल में स्नान करना वर्जित है। वरुण के जो अनुचर हैं वे नन्द जी को पकड़कर वरुण लोक में ले गए और कहा कि रात को यह नहा रहा था। अब नन्द जी को बड़ा भय लगा कि मेरा क्या होगा ? इधर सबेरा हुआ। नन्द जी नहाकर नहीं आए। अकेले गए थे। घाट में जाकर देखा यशोदा माई स्वयं भी ढूँढने लगी तो वहाँ पर कपड़े रखे थे पर नन्द जी का पता नहीं था। बहुत व्याकुल हो गईं। भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा कि मईया ! मत डर मैं मेरे पिता को लेकर आऊँगा। लगाया गोता और पहुँच गए वरुण लोक में। वरुण लोक में जाकर देखा कि नन्द जी सिमटे बैठे हैं कि न जाने क्या आज्ञा होती है ? किस जेल में हम डाले जाते हैं। लेकिन जैसे ही वरुण ने भगवान् श्रीकृष्ण को देखा उठकर खड़े हो गए कि आइए! कहा कि वरुण जी ! हमारे पिता को आप कहाँ से ले आए। कहा कि महाराज भूल हो गई। यह पूरी तरह से सुरक्षित हैं। आप अपने पिता को ले जाइए। नन्द जी को लेकर भगवान् श्रीकृष्ण लौटकर आए और नन्द जी ने समस्त गोपों को बताया कि यह कृष्ण कोई साधारण बालक मत समझो। यह देवताओं का भी देवता है। वरुण तो इसके सामने आते ही खड़ा हो गया। हमें तो डर लग रहा था।

सब लोगों ने सोचा कि परमात्मा हैं। लेकिन अगर परमात्मा हैं तो अपना रूप दिखाए। ब्रह्मलोक दिखाए। रात को सब लोग सो रहे थे। भगगवान् श्रीकृष्ण ने अपना वैकुण्ठ लोक समस्त व्रजवासियों को दिखाया। सब व्रजवासी अपनी कमली मोड़कर लाठी लेकर पगा बाँधकर पहुँचे ब्रह्मलोक में, विष्णु लोक में। वहाँ भगवान् श्रीमन्नारायण रत्नजड़ित सिंहासन पर विराजमान हैं। उनके वाम पार्श्व में लक्ष्मी बैठी हुई हैं। देवता

सभा में बैठे हैं। जगमग-जगमग सभा हो रही है । उनको डर लगा कि अरे ! इससे तो हमारा कन्हैया ही अच्छा था । हम उसके पास जाते थे, खेलते थे, कुश्ती भी लड़ते थे। इनसे तो डर लगता है । हे भगवान् हमको वहीं भेज दो । इस तरह से ब्रह्मलोक से गोपों को भगवान् ने पुनः व्रज में पहुँचाया।

अब आगे की कथा आती है - रासपंचाध्यायी ।

यह माना जाता है कि दशमस्कन्ध भागवत का भगवान् श्रीकृष्ण का विग्रह है । और रासपंचाध्यायी के जो पाँच अध्याय हैं वे उनके पाँच प्राण हैं । प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान यही पाँच प्राण हैं । भगवान् ने रास लीला की है । व्यवहार में सीधे समझ लीजिए सहनृत्य । भगवान् श्रीकृष्ण और गोपियों का एक साथ नृत्य करना यह रास है । **रसानां समूहो रासः ।** रसों के समूह का नाम रास है । क्यों किया भगवान् ने ? रास का उद्देश्य क्या था ? बात यह है कि यह जो रासलीला है यह भगवान् की काम पर विजय की लीला है । श्रीधरस्वामी भागवत के टीकाकार हो गए हैं । उन्होंने कहा-

ब्रह्मादिजयसंरूढ दर्पकन्दर्पदर्पहा । जयतिश्रीपतिर्गोपीरासमण्डलमण्डनः ।।

ब्रह्मादि देवों, ऋषि-मुनियों के ऊपर विजय प्राप्त कर लेने के कारण काम का एक दूसरा नाम है कन्दर्प। दर्प का अर्थ है अभिमान । कन्दर्प के मन में दर्प हो गया था कि मेरे बराबर कोई बलवान् नहीं है । सबको मैंने मजा चखा दिया । सब मेरे वश में हो गए। कौन है मेरे बराबर ? काम के हाथ में कोई अस्त्र-शस्त्र, भयानक शस्त्र नहीं है । बस फूलों का बाण है । लिखा है मानस में कि-

काम कुसुम धनु सायक लीन्हें । सकल भुवन अपने वश कीन्हे ।।

काम को बड़ा अभिमान हो रहा था । जा रहा था कहीं इठलाता हुआ । अकड़ता हुआ । रास्ते में नारद जी मिल गए । बोले कि कन्दर्प कहाँ जा रहे हो ? कहा महाराज! जाऊँ कहाँ ? भुजाओं में खुजली हो रही है। लड़ने का मन होता है लेकिन लड़ूँ किससे सामने जाते ही सब घुटने टेक देते हैं । आप किसी को जानते हो तो बताइए । बोले कि तुम्हें अपना गर्व मिटाना हो तो व्रज में चले जाओ । वृन्दावन में भगवान् श्रीकृष्ण इस समय गोचारण कर रहे हैं । वे तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करेंगे । काम गया व्रज में । वृन्दावन में भगवान् श्रीकृष्ण के कदम्ब वृक्ष के नीचे ललित भाव से खड़े हुए हैं । माथे में मोर पंख का मुकुट, कानों में कुण्डल, गले में कौस्तुभमणि और वनमाला । वंशी । टेढ़े से खड़े हैं और अपने मित्र के कन्धे में एक हाथ रखा है । काम ने जाकर उनको प्रणाम किया ।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले कि कहो कन्दर्प कैसे आए ? बोला भगवान् आपसे दो-दो हाथ करने की मेरी इच्छा है। कहा अच्छा ! हमसे लड़ोगे ? और तो कोई है नहीं। बोले कि कौन सी ? किले की लड़ाई या मैदान की लड़ाई। व्याख्या करो। बताया कि हम वन के एकान्त स्थान में किसी वटवृक्ष के नीचे निर्विकल्प समाधि में बैठ जाएँगे और तुम्हारी ताकत हो तो हमको समाधि से उठाओ। यह तो किले की। और मैदान की लड़ाई यह है कि हम सहस्र-सहस्र गोपियों के साथ नृत्य करेंगे। उस समय हमारे मन को तुम विचलित कर दो। हमारे वास्तविक स्वरूप से हमको प्रच्युत कर दो तो हम जानें। काम ने कहा भगवन् ! हम तो किले में रहेंगे, दुर्ग में। गोपियों के कांचन में, कामना में। दुर्ग में हम बैठे हैं वहाँ से बाण मारेंगे। और तुम्हें मैदान में रहना पड़ेगा। यह लड़ाई है। भगवान् ने कहा कि ठीक। भगवान् ने काम के मद को चूर्ण करने के लिए यह लीला रची है। गोपियों के रास मण्डल के मण्डन श्रीपति श्रीकृष्ण की जय हो रही है।

एक तो उद्देश्य यह है और दूसरा यह है कि भगवान् श्रीकृष्ण आत्माराम हैं। पूर्णकाम हैं। परम निष्काम हैं। उन्होंने लोक कल्याण के लिए जो श्रीविग्रह धारण किया है। ऋषि-मुनियों ने तप किया है और वे तत्त्वसाक्षात्कार करना चाहते हैं। उन सबको अवसर देना है।

आँख-आँख में अन्तर होता है। सब आँखें सब बात को नहीं पकड़ सकती। हमलोग भी देखते हैं रत्नों को लेकिन कौन सा रत्न कितनी कीमत का है हमारी आपकी आँख नहीं बता सकती। लेकिन जौहरी बता देगा। क्योंकि रत्नाभ्यासजन्यसंस्कारमनःसुयुक्तचक्षु से रत्न तत्त्व का ज्ञान हो सकता है। उसी तरह से जहाँ निर्मल निष्कलंक उत्कट प्रेम होता है उन प्रेममय नेत्रों से भगवान् के स्वरूप सौन्दर्य का बोध होता है। भगवती राजराजेश्वरी माता त्रिपुरसुन्दरी और भगवान् त्रिपुरसुन्दर कामेश्वरी-कामेश्वर यह भी राधा-कृष्ण के समान अभिन्न हैं। कहा तो यह जाता है कि राधा कृष्ण का ही जो ऐश्वर्य रूप है वह कामेश्वर-कामेश्वरी है। और जो मधुर रूप है वह राधा-कृष्ण है। दोनों एक ही हैं। भगवान् शंकराचार्य ने लिखा है

मधुक्षीरद्राक्षामधुमधुरिमा कैरपि पदैर्विशिष्यानाख्येयो भवति रसनामात्रविषयः।

तथा ते सौन्दर्य परमशिवदृङ्मात्रविषयः कथंकारं ब्रूमस्सकलनिगमागोचरगुणैः।।

समस्त निगमों के द्वारा जिनके गुणों का वर्णन नहीं किया जा सकता मैं उनके

सौन्दर्य का वर्णन कैसे कर सकता हूँ ? जैसे मधु मधुर है, दुग्ध मधुर है, द्राक्षा भी मधुर है किन्तु इनकी मधुरता में अन्तर क्या है यह वाणी से नहीं बतलाया जा सकता। जिसको केवल रसना जीभ ही बता सकती है। उसी प्रकार आपके सौन्दर्य का रसास्वादन केवल परमशिव के नेत्रों से ही किया जा सकता है। दूसरा कोई कर नहीं सकता। तो हम उसका वर्णन कैसे करें ? इस तरह से राधा के रूप में कृष्ण का दर्शन और कृष्ण के रूप में राधा का दर्शन। एक दूसरे का दर्शन करते हैं। और एक रूप से सन्तोष नहीं। जैसे महाराज पृथु ने भगवान् से वरदान माँगा कि हमको दस हजार कान दे दो। क्या करोगे? बोले कि हम दो कानों से आपकी कथा सुनकर तृप्त नहीं हो पा रहे हैं इसलिए दस हजार कान दीजिए तो आपकी कथा हम सुनते ही जाएँ सुनते ही जाएँ।

जिनके श्रवण समुद्र समाना। कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।

भरहिं निरन्तर होहिं न पूरे। तिनके हृदय बसहु प्रभु रूरे।।

राधिका जी ने अपने अनेक रूप बनाए। सहस्र-सहस्र रूप बनाकर गोपियों के रूप में परिणत होकर रास नृत्य के लिए राधा वहाँ प्रस्तुत हो गईं। उनके नखमणि की चन्द्रिकाओं से बहुत सी गोपियाँ प्रकट हो गईं। और इसके अतिरिक्त जो नित्य गोपियाँ हैं, जो भगवान् के साथ सदा गोलोक में निवास करती हैं वे प्रकट हो गईं और चीरहरण के प्रसंग में जिनको भगवान् ने आश्वासन दिया था कि हम तुम्हारे साथ रास करेंगे। वह और जनकपुर की रानियाँ भी। कहते हैं जब राम-लक्ष्मण जनकपुर गए तो किसी कवि ने वर्णन किया है

आए कुँवर दोऊ मन के लुभनवा। ब्याही ब्याही लक्षित काली।।

अनव्याही के विकल भये प्रनवा। आए कुँवर दोऊ मन के लुभनवा।।

उनकी इच्छा थी भगवान् के साथ रास करने की। भगवान् ने कहा कि कृष्ण अवतार में गोपी बनो। तपोवन के, दण्डकारण्य के जो मुनि थे वे भगवान् को अपने हृदय से लगाना चाहते थे। भगवान् ने कहा कि तुम भी तपस्या करके गोपी बनो। ये सब वहाँ पर एकत्र हो गईं। और फिर ब्रह्मा की रात्रियों ने। एक हजार युग तक की ब्रह्मा की रात्रि। एक हजार युग का दिन होता है। ऐसी-ऐसी सब ब्रह्मरात्रियों ने तपस्या करके भगवान् से वरदान माँगा था कि हममें रासलीला कीजिए तो वे भी रात्रियाँ वहाँ इकट्ठी हो गईं। इस तरह से रास का अवसर आया।

इस रास के प्रवक्ता कौन हैं ? बताया गया कि रास के प्रवक्ता आत्माराम पूर्णकाम

परम निष्काम अमलात्मा परमहंस श्री शुकदेव जी महाराज हैं। सामान्य काम की लीला होती तो इतने बड़े मुनि उसका वर्णन क्यों करते? यह दिव्य लीला थी। यह भगवान् का दिव्य चरित्र था जो मनुष्यों के श्रवण से मनन से कल्याणकारी था। इसलिए श्रीशुकदेव जी ने उसका वर्णन किया तो रासपंचाध्यायी के अध्याय के प्रारम्भ में लिखा है **श्री शुक उवाच**।

कहते हैं कि शुकदेव जी परमहंस महात्मा थे। महात्माओं के तीन रूप होते हैं। हंस, परमहंस और श्रीपरमहंस। हंस महात्मा वे हैं जैसे नीर-क्षीर का हंस विवेचन कर लेता है। दूध और पानी मिलाकर हंस के सामने रख दो तो दूध-दूध पी लेगा और पानी पानी छोड़ देगा। उसी तरह जो सार-सार ग्रहण कर ले और असार का त्याग कर दे वह महात्मा कहलाएगा हंस। आत्मा-अनात्मा, सत्य-मिथ्या दोनों को पृथक्-पृथक् करने के बाद जो मिथ्या है उसको बाधित कर दे। एक अखण्ड अद्वितीय परब्रह्म को छोड़कर दूसरी कोई वस्तु है ही नहीं। वासुदेवः सर्वम् सबमें वासुदेव ही हैं। वासु और देव सारा संसार जिसमें वास करे वह वासु और जो प्रकाशस्वरूप हैं स्वयं प्रकाश हैं वह देव। यह सारा विश्व प्रपंच और मैं वासुदेव ही हैं ऐसा जानने वाला महात्मा दुर्लभ होता है। **वासुदेव सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।** ऐसे जो ज्ञानी हैं उनके लिए कोई कर्तव्य नहीं है। वे नित्य मुक्त हैं। भगवद् स्वरूप हो चुके हैं लेकिन फिर भी कुछ लोग ऐसे हैं जो ज्ञान प्राप्त करके भी भगवान् का भजन नहीं छोड़ते।

अस विचारि पण्डित मोहि भजहीं। पायहु ज्ञान भगति नहिं तजहीं ।।

ज्ञान प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी भक्ति का त्याग नहीं करते। क्योंकि नैष्कर्म्य, निरंजन ज्ञान भी बिना भक्ति के शोभा को प्राप्त नहीं होता है। भागवत के एकादश स्कन्ध में बताया गया है कि ज्ञान के बाद भी जो भगवान् का भजन करे वह उसके ज्ञान में श्री लग गई समझो। तो वही श्रीपरमहंस हो गया। हंस, परमहंस और श्रीपरमहंस। शुकदेव जी महाराज श्रीपरमहंस हैं। ज्ञानी होकर भी भगवान् के चरित्र का गान कर रहे हैं।

आत्मारामश्च मुनयः निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे।
कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्तिमित्थंभूतगुणो हरिः ।।

मुनि भी भगवान् की भक्ति करते हैं क्यों ? क्या कहीं कुछ चाहिए उनको ? कुछ नहीं चाहिए। केवल प्रेम चाहिए। क्योंकि भगवान् में ऐसे गुण हैं कि आत्माराम को भी अपनी ओर आकृष्ट कर लेते हैं। इस तरह से श्री शुकदेव जी परमहंस महामुनीन्द्र हैं, अमलात्मा हैं। वह रासपंचाध्यायी के वक्ता हैं।

एक दूसरा मनोरम प्रसंग है । वह यह है कि राधा रानी वृषभानुनन्दिनी किशोरी जी बरसाने में थीं । कृष्ण नन्द गाँव में थे । भगवान् के बिना देखे जो उनके भक्त हैं वे तरसते रहते हैं । यहाँ तक वर्णन आता है कि जब भगवान् गौएँ चराने के लिए वन में चले जाते थे तो गोपियाँ जाते ही उनके निकलते-निकलते ही ये सोचने लगती थी कि ये कब लौटकर आएँगे । एक-एक पल उनको कल्प के समान लगता था । विरह से व्याकुल हो जाती थीं। जब भगवान् श्रीकृष्ण लौटकर आते थे । वंशी बजाते, गोपगणों के द्वारा अपनी स्तुति सुनते, गौओं के पीछे-पीछे उनकी धूल से धूसरित होकर व्रज भूमि में आते तो गोपियाँ अपने-अपने आँगनों में आकर खड़ी हो जाती थीं । और अपने नेत्ररूपी भँवरों से श्रीकृष्ण के मुख कमल का जो मकरन्द हैं उसका पान करती हैं । अपने विरह से होने वाले ताप को दूर करती थीं । उनका तो एक-एक पल भगवान् के विरह में दुःख से बीतता था ।

किशोरी जी को बहुत समय से भगवान् के दर्शन नहीं हुए । बहुत व्याकुल हो गईं विरह से तो उनके साथ एक शुक था । शुक कहते हैं तोते को । उसको मिट्ठू भी कहते हैं । उस तोते को सन्देश देकर कृष्ण के पास भेजा कि कृष्ण के पास जाओ और हमारा सन्देश सुनाओ । सन्देश था -

दुरापजनवर्तिनी रतिरपत्रपा भूयसी,
गुरुक्तिविषवर्षणैर्मतिरतीव दौस्थ्यंगता ।

वपुः परवशं जनुः परमिदं कुलीनान्वये न,
जीवति तथापि किं परमदुर्मरोऽयं जनः।।

इसका अर्थ यह है कि श्रीराधिका जी ने सन्देश भेजा था कि मेरी जो प्रीति है वह ऐसे पुरुष के प्रति है जिसकी प्राप्ति अत्यन्त दुर्लभ है । अगर वह मिल भी जाए तो यह निगोड़ी लाज प्रेम से देखने नहीं देती है । उस समय लज्जा आ जाती है । और जो बड़े-बूढ़े लोग समझाने लगते हैं तो लगता है कि विष की वर्षा कर रहे हैं । मेरा शरीर परवश है । उत्तम कुल में जन्म लिया है इसलिए चाहे जहाँ जा भी नहीं सकती । कृष्ण के वियोग में इतने दिन बीत गए । मरना भी चाहती हूँ तो भी मृत्यु नहीं आती है । मृत्यु मेरे लिए अत्यन्त दुर्लभ हो गई है । यह सन्देश था ।

यह तोता, यह शुक श्रीकिशोरी जी का सन्देश लेकर बरसाने से नन्दगाँव आया। और भगवान् श्रीकृष्ण के आँगन के पेड़ पर बैठकर बोलने लगा वत्स ! कृष्णं पठ । वत्स! कृष्णं पठ । राधा रानी उसको पढ़ाती थी । सोने के पिंजरे में रखकर अनार के बीज

खिलाती थी। प्यार से पूछती थी और बीच-बीच में अपनी कोमल हथेली में उसको बिठालकर पाठ पढ़ाती थी। वत्स कृष्णं पठ। भगवान् ने सुना कि अरे ! यह तो लगता है कि किशोरी जी का शुक है। अपने पास बुलाया कि इधर आओ। पहुँच गए। भगवान् ने अपनी हथेली में ले लिया और बोले सुनो। ऐसा पढ़ो। वत्स ! राधाकृष्णं पठ। वत्स! राधाकृष्णं पठ। वह पढ़ने लगा। श्लोक सुनाया। अब भगवान् के प्यार में वह शुक वहीं रम गया। लौट कर गया ही नहीं। उस शुक के सम्बन्ध में किशोरी जी ने राधारानी वृषभानुनन्दिनी जी ने कहा कि शुक गया है अभी तक लौटा नहीं जरा देखो तो कहाँ गया? श्री ललिता सखी आईं। देखा कि श्रीमान जी श्रीकृष्ण के कन्धे पर बैठे हैं और वत्स ! राधाकृष्णं पठ कह रहे हैं। ललिता जी ने कहा कि कन्हैया ! अभी तक तुम माखन और दूध दही ही चुराते थे अब दूसरो का तोता भी चुराने लगे। भगवान् बोले कि क्या सारे संसार के तोते तुम्हारे ही हैं। बोली कि यह हमारी किशोरी जी का है। बोले कि हमारा है। बहस होने लगी तो ललिता जी ने कहा कि इसी को पंच बनाओ। पूछो इससे कि किसका है यह। पूछा गया इन्होंने जो कहा वह आनन्द वृन्दावनचम्पू में यूं कहा है-

गाढ़ानुरागभरनिर्भरभंगुरायाः कृष्णेति नाम मधुरं मृदुपाठयन्त्याः।
धिङ्मानधन्यमतिचंचलजातिदोषाद् देव्याः कराम्बुरुहकोरकतश्च्युतोऽस्मि ।।

गाढ़ अनुराग के भार से जो क्षीणकाय हो गई हैं और जो मुझसे भगवान् श्रीकृष्ण का मधुर-मधुर पाठ पढ़ाती थी। मुझे धिक्कार है अपनी शुक जाति के चंचल दोष के कारण उनके कर कमलों से च्युत होकर मैं यहाँ आ गया हूँ। अब फैसला हो गया। वह जो शुक था श्रीराधारानी वृषभानुनन्दिनी का। यही शुकदेव बने। यह भगवान् की अन्तरंग लीला के जानकार हैं। इसीलिए प्रारम्भ में कहा गया - **श्री शुक उवाच।** अब आगे-

भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः।
वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगामायापुमाश्रितः ।।

अब देखिए रासपंचाध्यायी के जो विषय हैं इसी में सात दिन लग जाएँगे। हम तो संक्षेप में एक्सप्रेस गाड़ी छोड़ेंगे। भगवान् ने भी। अपि माने भी। भगवान् किसको कहते हैं ?

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः।
ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणा ।।

समग्र ऐश्वर्य, समग्र धर्म, समग्र यश, समग्र श्रीः, समग्र ज्ञान और समग्र वैराग्य - ये भग कहलाते हैं। जिनमें ये सब सदा रहें उनको भगवान् कहते हैं। जिनमें सदा ज्ञान-वैराग्य रहे वे रास क्यों करेंगे ? भगवानपि अपि क्यों कहा ? कहा गोपियों ने भी भगवान् को अपनी ओर खींच लिया। उनके प्रेम को देखकर भगवान् के मन में भी आ गया कि रासलीला करनी चाहिए। **ताः रात्रीः ताः गोपी ताः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः वीक्ष्य** उन सबको देखकर भगवान् के भीतर यह अद्भुत शक्ति है कि केवल ईक्षण से, देखकर ही वे संसार की रचना कर देते हैं। संसार की रचना भगवान् ने देखकर ही तो की है। वाचस्पति मिश्र जी ने लिखा है कि भगवान् सोए-सोए श्वास छोड़ते हैं तो सांगोपांग वेद प्रकट हो जाते हैं और आँख खोलकर देखते हैं तो पंचभूतों की सृष्टि हो जाती है। मुस्कुराते ही पंचभूत पंचीकृत होकर अनन्त ब्रह्माण्ड के रूप में पुलकित हो जाते हैं। इतने में ही भगवान् नेत्र निमीलित करते हैं तो संसार का प्रलय हो जाता है। उन ब्रह्मा की रात्रियों को देखा। यद्यपि मल्लिका वसन्त में खिलती है लेकिन शरद में खिल गईं। वे गोपियाँ वहाँ उपस्थित हो गईं। अभी तक भगवान् अमना हैं। शास्त्रों में लिखा था कि उनके पास प्राण मन नहीं है। आज उन्होंने अपने मन को बनाया। **मनश्चक्रे** इसीलिए कहा। योगमाया भगवान् की अन्तरंगा शक्ति है और एक अर्थ यह है कि **योगाय या मा** जो कृष्ण को मिलाने के लिए मा माने लक्ष्मी है राधारानी। उनकी इच्छा थी कि वे रासलीला करें तो उनकी इच्छा का अनुसरण करते हुए भगवान् ने रासलीला करने का मन किया।

तदोडुराजः ककुभः करैर्मुखं प्राच्या विलिम्पन्नरुणेन शन्तमैः।
स चर्षणीनामुदगाच्छुचो मृजन् प्रियः प्रियाया इव दीर्घदर्शनः॥

जिस समय भगवान् ने मन किया उसी समय पूर्व दिशा में पूर्ण चन्द्रमा का उदय हो गया। उदय काल में चन्द्रमा अरुण वर्ण का होता है। उसकी अरुणिम किरणों से व्रज भूमि अरुणिम हो गई। लाल-लाल साड़ी जैसा लगने लगा। पूर्व दिशा अरुण वर्ण की होने लगी तो मानो कोई नारी जिसका पति परदेश चला गया हो वह उसके विरह में व्याकुल थी एकाएक उसका पति आ जाए और अपने हाथों में केसर मलकर उसके मुख को लाल कर दे ऐसे ही मानो पूर्ण चन्द्रमा ने प्राची दिशा के मुख को आसक्त कर दिया। उसकी अरुण किरणों से अनुरंजित वन भूमि को देखकर भगवान् ने वंशी बजाई।

जगौ कलं वामदृशां मनोहरम्।

जो वामांगनाएँ थीं उनके मन को हरण करने के लिए भगवान् ने बाँसुरी बजाई।

भगवान् ने बाँसुरी क्यों बजाई ? कवियों ने भाव बताया है कि भगवान् ने सोचा है कि रास करने जा रहे हैं इनका बड़ा कार्य निर्विघ्न पूर्ण हो जाए यह तभी सम्भव है जब हम अपने इष्ट देव शंकर का पूजन करके प्रारम्भ करे ।

इच्छित फल बिनु शिव अवराधे । लहहि न कोटि जोग जप साधे ।

बिना शिव की आराधना के करोड़ों जोग जप साधन कर लो तब भी इच्छित फल की प्राप्ति नहीं हो सकती। शंकर की पूजा की । वंशी का नाम उलट दो तो वही शिवं हो जाता है । वंशी को ही शिव मान लिया। अधर पल्लवों का उसे आसन दिया और मोर मुकुट का छत्र लगाया । कानों के कुण्डलों से मानो आरती उतारी। अधरामृत का भोग लगाया और कोमल अँगुलियों से चरण दबाए । इस तरह से उन्होंने बाँसुरी बजाई । कहते हैं कि यह जो काम था इसने भगवान् श्रीकृष्ण को चैलेंज दिया था । यह गोपियों के मन में बैठा था । भगवान् ने सोचा कि यह काम मन का बेटा है । बाप के सामने बेटा थोड़ा दबा-दबा सा रहता है । अतः पहले मन को खींचे। **वामदृशां मनोहरं**। मन को ही खींच लिया । इसका एक भाव यह भी है कि काम को अग्नि भी कहा गया है । सोनार जब सोना गलाता है तो अपने मुँह में पोंगरी लेकर फूँकता है तो मानो गोपियों के हृदय में जो अग्नि है उसको बाँसुरी से जगा दिया कि सोते दुश्मन को मारा तो क्या मारा ? जगा कर मारा जाए । इसके भीतर एक रहस्य और है **जगौ कलं** । एक काम बीज है जो कृष्ण के उपासक होते हैं वे क्लीं बीज के द्वारा भगवान् का स्मरण करते हैं ।**कलं वामदृशां मनोहरं** । क ल पहले ही है । दृशां का ई और मनोहरं का म यह क्लीं इसी से बनता है । इस तरह से भगवान् ने वंशी से क्लीं बीज का उच्चारण किया । कलं से क ल वाम दिशा से ई और मनोहरं का म । हो गया क्लीं ।

निशम्य गीतं तदनंगवर्धनं वज्रस्त्रियः कृष्णगृहीतमानसाः ।
आजग्मुरन्योन्यमलक्षितोद्यमाः स यत्र कान्तो जवलोलकुण्डलाः ।।

कहते हैं कि यह जो मुरली का शब्द था वह विलक्षण था । सामान्य नियम यह है कि जो प्रवाह है उसके प्रभाव में जो पड़ता है वह उसको सीधा ले जाता हैं अर्थात् प्रवाह अपने साथ अपने प्रभाव में पड़ने वाले को लिये जाता है । लेकिन वंशी ध्वनि का प्रभाव उल्टा होता है जहाँ बाँसुरी बजी वहाँ ले जाता है । इस तरह से गोपियों का मन भगवान् के पास आ गया । वे चलीं भगवान् के पास । जो जिस काम में लगी थी उसको उसी रूप में छोड़ दिया। दूध दुहना छोड़ दिया । भोजन बना रही थी भोजन बनाना छोड़ दिया । घर में झाड़ू लगाना छोड़ दिया। आँख में अंजन लगा रही थी वह छोड़ दिया । जो जिस

अवस्था में थी वैसे ही छोड़ दिया।

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

सब धर्मों का परित्याग करके मुझ ईश्वर के शरण में आ जा। खाली नहीं बैठे थे। जो धर्म करता है वही धर्म का त्याग भी करता है। यह नियम है। हमारे गुरुजी ब्रह्मानन्द जी महाराज ज्योतिष्पीठाधीश्वर जी महाराज बता रहे थे कि एक बार ट्रेन में वे ऊपर की सीट में बैठकर जा रहे थे। नीचे दो साहब आए। एक भारतीय और दूसरे विलायती थे। दोनों ने एक ही थाली में भोजन किया। मुँह पोछा। तब तक उनको पता नहीं था कि ऊपर भी कोई बैठा था। तब अचानक हिन्दुस्तानी की दृष्टि पड़ी महात्मा जी पर। उसने हाथ जोड़े। मन में ग्लानि तो हो ही रही थी। पूछा कि महाराज ! क्या इस तरह से खाने से धर्म चला जाता है। उन्होंने उत्तर दिया कि होए तब तो जाए। अब जो धर्म का पालन करेंगे वही न धर्म का त्याग करेंगे। जो धर्म को मानते ही नहीं वे क्या त्याग करेंगे। वे सब धर्म का आचरण कर रही थीं लेकिन जैसे ही कृष्ण की वंशी बजी तो वे वहाँ से सब छोड़कर चल पड़ीं। तो किसी से बोला नहीं। चलती गईं। कुछ उनके भाई बन्धुओं ने सोचा कि यह रात्रि में कहाँ जा रही है। इनको रोको लेकिन उन सबने माना नहीं। कुछ घर में भीतर थीं तो उन्होंने घर में साकल लगा दी। निकलने का रास्ता नहीं मिला तो अपने प्रियतम के दुःसह विरह की अग्नि से उनके सारे पाप जल गए। और भगवान श्रीकृष्ण उनके हृदय में आ गए। हृदय से कृष्ण का आलिंगन करने से युग-युगान्तर, कल्प-कल्पान्तर के पुण्य क्षीण हो गए। पाप और पुण्य दोनों का क्षय हो जाने पर वे परमात्मा को प्राप्त हो गईं।

चलकर जाने वाली गोपियाँ पीछे पहुँची वे पहले ही पहुँच गईं। शुकदेव जी से परीक्षित ने पूछा कि महाराज! इनको उन्होंने तो मनुष्य समझा था, प्रिय समझा था।। भगवान् तो समझा नहीं था फिर उन सबका मोक्ष कैसे हो गया ? बोले कि श्रीकृष्ण निरावरण ब्रह्म हैं। किसी भी भाव से कृष्ण की आराधना करें उसको परमात्मा की प्राप्ति हो ही जाती है। इस तरह से गोपियाँ भगवान् के सम्मुख गईं। जो उनके श्रृंगार में त्रुटि थी उसको योगमाया ने सुधार दिया। सुन्दर स्वरूप धारण करके भगवान् के पास पहुँची। श्रीकिशोरी जी के आने में कुछ देर थी तो भगवान् विनोद करने लगे।

स्वागतं वो महाभागाः प्रियं किं करवाणि वः।
व्रजस्यानामयं कच्चित् ब्रूतागमनकारणम्।।

हे महाभागाओं ! आइए आप सबका स्वागत है। कैसे आप आईं हैं ? अपने आने

का कारण क्या है ? भगवान् बोले कि देखो गोपियों !

रजन्येषा घोररूपा घोरसत्त्वनिषेविता ।
प्रतियात व्रजं नेह स्थेयं स्त्रीभिः सुमध्यमाः ।।

यह रजनी घोररूपा है और रात्रि में घोर प्राणी वन में भ्रमण करते रहते हैं इसलिए आपको यहाँ पर अधिक विलम्ब नहीं करना चाहिए । लौट जाना चाहिए । देखिए । आप यहाँ पर अगर वन की शोभा देखने आई हैं-

दृष्टं वन कुसुमितं राकेशकररंजितम् ।
यमुनानिललीलैजत्तरुपल्लवशोभितम् ।।

आपने इस कुसुमित वन का दर्शन कर लिया है जो चन्द्रमा की सुन्दर किरणों से इस समय उज्ज्वल हो रहा है और यमुना के जल से युक्त शीतल पवन से वृक्षों को भी आपने देख लिया है । आपने व्रज की शोभा को देख लिया है अब आप लौटकर अपने घर जाइए और अपने पतियों की सेवा कीजिए ।

भर्तुः सुश्रूशणं स्त्रीणां परो धर्मो ह्यमायया ।
तद् बन्धूनां च कल्याण्यः प्रजानां चानुपोषणम् ।।

स्त्रियों का निष्कपट भाव से पति की सेवा करना ही परम धर्म है और पतियों की ही नहीं, उनके माता पिता की, उनके बन्धुओं की भी सेवा निष्कपट भाव से करनी चाहिए । भगवान् ने कहा कि जो नारी पति को परमेश्वर जानती है, सासू को अन्नपूर्णा और श्वसुर को विश्वनाथ, बच्चों को बाल गोपाल, घर को भगवान् का मन्दिर और चौके को अग्निहोत्र शाला समझकर पातिव्रत धर्म का पालन करती है वह नारी पतिव्रता अपने नरकगामी पति का भी उद्धार कर देती है और मरने के बाद विष्णुलोक में अपने पति के साथ लक्ष्मी के साथ जैसे भगवान् श्रीनारायण रहते हैं उस तरह से निवास करती हैं ।

तीन प्रकार की पतिव्रता होती हैं ।

उत्तम के अस बस मन माही । सपनेहु आन पुरुष जग नाही ।।

मध्यम परपति देखहिं कैसे । भ्राता पिता पुत्र निज जैसे ।।

धर्म विचारि समुझि कुल रहई । सो निकृष्ट तिय श्रुति अस कहई ।।

बिनु अवसर भय ते रह जोई । जानेहु अधम नारि जग सोई ।।

पतिवंचक परपति रति करई । रौरव नरक कल्प शत परई ।।

उत्तम पतिव्रता वह है जिसकी दृष्टि में परपुरुष की सत्ता ही नहीं है और मध्यम वह है जो बड़े को पिता और बराबर वाले को भ्राता और अपने से छोटे को बेटा मानकर अपने मन को पवित्र रखती है । और जो निकृष्टा हैं वे अपने धर्म और कुल का विचार करके अपने शील की रक्षा करती रहती है । जो बिना अवसर के, भय से अपनी रक्षा करती है वह अधम है और एक पाँचवी होती है जो होती तो अधम है लेकिन अपने आपको उत्तम सिद्ध करना चाहती हैं । धोखा देती हैं पति को और समाज को, तो उसकी दुर्गति हो जाती है । इसलिए नारी को अपने पतिव्रत धर्म का पालन करना चाहिए । आप लोग जाइए पति आपके लिए चिन्तित हो रहे होंगे । पुत्रों को पालिए। घर के काम कीजिए ।फिर भी खड़ी रहीं । तब भगवान् बोले- अच्छा तो मैं समझ गया कि मेरे प्रेम के कारण तुम सब आई हो ।

सब प्राणी मुझसे प्रेम करते ही हैं । यह कोई नई बात तो नहीं है फिर भी आप लौटकर जाइए । भगवान् से ऐसी बात सुनने की आशा गोपियों के मन में नहीं थी । वे सोचने लगी कि हमारा नाम बाँसुरी में ले लेकर टेर रहे थे । अब हम आईं हैं तो अन्जान बन गए और कहने लगे कि आप यहाँ कैसे आईं ? आँखों से आँसू बहने लगे । पैर से धरती कुरेदने लगीं । क्रोध से, प्रेम के क्रोध से होंठ फड़कने लगे । मन को संभाला और बोलने लगी

मैवं विभोऽर्हति भवान् गदितुं नृशंसं संत्यज्य सर्वविषयांस्तव पादमूलम् ।
भक्ता भजस्व दुरवग्रह मा त्यजास्मान् देवो यथाऽऽदिपुरुषो भजते मुमुक्षून् ।।

भगवन् ! आपको ऐसे शब्द नहीं बोलना चाहिए । हम संसार के भोगों की लालसा से आपके निकट नहीं आए हैं । जैसे पुरुष भगवान् की आरधना करते हैं और भगवान् अपने मुमुक्षु भक्तों की सेवा करते हैं उसी तरह से आप हमको स्वीकार कीजिए । आपने जो कहा पति और पुत्रों की सेवा करना स्त्रियों का परम धर्म है तो भगवान् यह आपके ही ऊपर लागू होता है । गोपियों ने एक दृष्टान्त दिया । बोलीं कि महाराज ! यह बताइए कि एक थी पतिव्रता। उसके पति परदेश जाने लगे तो वह अपने पति की रोज पूजा करती थी चरणोदक लेती थी । उसने कहा कि आप चले जाएँगे तो मैं किसकी पूजा करूँगी । बोला कि हमारी मिट्टी की एक मूर्ति बना लेना । मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करने लगी । कुछ समय के पश्चात् जब वह दोपहर को अपने पति की पूजन में संलग्न थी किवाड़ भीतर से बन्द थे । पति आए और किवाड़ खटखटाया । गोपी ने पूछा कि भगवान् क्या किया

जाए । मिट्टी की पूजा करती रहे या अपने सच्चे पति का स्वागत करे । बोले कि जब सच्चा आ गया तो मिट्टी की मूर्ति की क्या जरूरत है ? बोली कि तुम्हारे मुँह में घी शक्कर । पति को साक्षात् नारायण है सबका पति तो मिट्टी की मूर्ति के समान है । जब साक्षात् आप मिल गए तो जितना उपदेश आप दे रहे हैं वह आपके ही ऊपर लागू होता है । इस तरह गोपियों ने भगवान् से प्रार्थना की । इतने में किशोरी जी आ गईं । भगवान् ने रास लीला प्रारम्भ की । कुछ गोपियों को अभिमान हो गया । वे अपने आपको सबसे बड़ी सौभाग्यशाली समझने लगीं । लीला में बाधा पड़ती है और उनके मन के दोषों को दूर करने के लिए भगवान् अन्तर्धान हो जाते हैं । गोपियाँ भगवाान् को वन- वन में खोजती हैं । रास्ते में किशोरी जी मिलती हैं । भगवान् उनको लेकर चले गए थे लेकिन उनको भी अनुमान हो गया कि हमको जहाँ ले चलना हो ले चलो कन्धे पर बैठाकर तो भगवान् झुक गए कन्धे पर गिर पड़ी इतने में अन्तर्धान हो गए ।

हा नाथ रमण प्रेष्ठ क्वासि-क्वासि महाभुज ।
दास्यास्ते कृपणाया मे सखे दर्शय सन्निधिम् ।।

कहने लगीं । रोने लगी । जब तक चन्द्रमा की किरणें पड़ती गईं तब तक खोजा जब घोर जंगल आ गया तो लौटकर वहीं आ गईं तब भगवान् का गीत गाया -

जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि ।

दयित दृश्यतां दिक्षु तावकास्त्वयि धृतासवस्त्वां विचिन्वते ।

शरदुदाशये साधुजातसत् सरसिजोदरश्रीमुषा दृशा ।

सुरतनाथ तेऽशुल्कदासिका वरद निघ्नतो नेह किं वधः ।

तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम् ।

श्रवणमंगलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जनाः ।

इस तरह गोपियों ने भगवान् के लिए गीत गाया । तब भी भगवान् नहीं आए तो **रुरुदुः सुस्वरं राजन् कृष्णदर्शन लालसाः** । भगवान् श्रीकृष्ण की दर्शन लालसा वाली गोपियों ने रोना शुरु किया । जब भक्त असहाय असमर्थ हो जाता है तो भगवान् को सामने आना ही पड़ता है ।

तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमान मुखाम्बुजः ।
पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः ।।

साक्षात् मन्मथ को भी मथ देने वाले भगवान् श्रीकृष्ण पीताम्बर धारण किए हुए वनमाला गले में पहने ,मोर मुकुट धारण किए हुए, कानों में कुण्डल पहने गोपियों के बीच में प्रकट हो गए । गोपियों को लगा कि जैसे उनके प्राण वापस आ गए हों ।

वे उन्हें बड़े प्यार से देखती हैं । कोई उनके चरणों को अपने हृदय में रखती हैं । कोई उनके हाथ को अपने कन्धे पर रखती हैं । इस तरह से बड़ा ही आनन्द हुआ । फिर भगवान् यमुना के किनारे पहुँचे । भगवान् को उन्होंने अपने उत्तरीय का आसन दिया और गोपियों ने पूछा कि महाराज ! कुछ प्रश्न हैं हमारे । आप यह बताइए कि कुछ लोग हैं जो भजने वालों को भजते हैं । कुछ लोग न भजने वालों को भजते हैं । जो भजने वालों को भजते हैं वे न भजने वालों को क्या भजेंगे । कुछ लोग भजने वालों को भी नहीं भजते। आप बताइए कि कौन ठीक है । जो भजने वाले को भजता है वह तो स्वार्थी है यह तो ठीक नहीं है । वह अपना उपकार देखता है और जो भजने वाले को न भजता और न भजने वाले को क्या भजेगा ? बोले ऐसे माता पिता होते हैं । पुत्र अगर सेवा न भी करे तो माता-पिता उससे प्रेम करते हैं । और कुछ लोग होते हैं कि भजने वालों को भी कभी नहीं भजते तो उनमें आत्माराम, आप्तकाम, अकृतज्ञ और गुरुद्रोही ये चार होते हैं । गोपियाँ कहने लगी कि आत्माराम तो हैं नहीं क्योंकि रमण करने के लिए आपने वंशी बजाई । आप्तकाम भी नहीं है क्योंकि अभी आपको कामना है। अकृतज्ञ इसलिए नहीं क्योंकि आप आ गए । हां गुरुद्रोही हैं । जिनके लिए हमने सर्वस्व छोड़ा उन हमको छोड़कर आप वन में चले गए ।

भगवान् ने कहा कि देखो गोपियो! मैं कभी-कभी ऐसी स्थिति करता हूँ लेकिन मेरा उद्देश्य दूसरा रहता है कि जैसे कोई गरीब चिन्तामणि प्राप्त करके खो जाए तो चिन्तामणि को छोड़कर और कुछ नहीं सोचता । इसी तरह मैं भी कभी मिलकर बिछुड़ जाता हूँ जिससे कि उसके हृदय में मेरी चाह और बढ़ जाए । और जब मैं फिर से मिलूँ तो उसको अनन्त सुख की प्राप्ति हो । मैं आपलोगों के प्रेम से प्रभावित हूँ । देवताओं की अनुकम्पा प्राप्त करके भी तुम्हारे प्रेम का प्रतिदान करने में मैं असमर्थ हूँ । जो आप लोगों ने अपने घर की श्रृंखला का परित्याग करके मेरा भजन किया है । इस तरह भगवान् ने गोपियों को आश्वस्त किया । गोपियों का भगवान् के साथ रास नृत्य हुआ । जितनी गोपियाँ थीं उतने ही कृष्ण भी हो गए ।

इत उत गोपी बिच-बिच कान्हा ।

यह रास नृत्य उनका ब्रह्मा की रात्रियों तक चला । इस तरह से भगवान् ने रास

लीला करके अपने भक्तों को आनन्दित किया । आध्यात्मिक दृष्टि से यदि हम देखें तो जो हमारे मन की वृत्तियाँ हैं वे गोपियाँ हैं । इन वृत्तियों की सन्धि में जो निर्विकल्पक चैतन्य है वही कृष्ण है ।

नष्टे पूर्व विकल्पे तु यावदन्यस्य नोदयः ।
निर्विकल्पकचैतन्यं स्पष्टं तावद् विभासते ।।

पूर्व विकल्प के नाश होने के पश्चात् जब तक कि अब नया विकल्प उत्पन्न नहीं हुआ है उस समय निर्विकल्प चैतन्य है वह प्रतिभासित होता है । वह निर्विकल्प चैतन्य ही कृष्ण है जो वृत्तियाँ हैं वही गोपियाँ हैं । यह रास सबके हृदय में नित्य चल रही है । केवल ज्ञान की दृष्टि से देखने की आवश्यकता है । इस प्रकार भगवान् ने यह रास लीला की। उसके पश्चात् जब ब्रह्मा की रात्रि पूर्ण हो गई तो भगवान् ने गोपियों से कहा कि अब आप घर में जाइए । गोपियाँ घर में गईं तो उनके परिवार के लोगों ने उनके प्रति दोषदृष्टि नहीं की क्योंकि उनको यह लगा कि यह तो हमारे साथ ही हैं । मानो गोपियाँ अपने दिव्य देह से भगवान् के पास पहुँची थी । इस तरह से भगवान् ने रास लीला करके काम पर विजय प्राप्त की । जो इस लीला का श्रवण करता है, वर्णन करता है वह अपने हृदय के कामरूपी शत्रु का विनाश कर देता है । बस इतना ही कहकर प्रवचन पूर्ण करते हैं। थोड़ा सा भगवान् का नाम लीजिए ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[47]

।। राम राम सैंतालीस ।।

श्रीकृष्ण भी सही रखते थे अपनी दिनचर्या

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो ।

भगवान् श्रीकृष्ण परमात्मा मथुरा से द्वारका पधार गए । द्वारका आने के पश्चात् भगवान् के विवाह हुये । भीष्मक नाम के विदर्भ देश के राजा थे । उनकी कन्या थी रुक्मिणी । और उनके बहुत से भाई थे जिनमें बड़ा भाई रुक्मी था । भीष्मक भगवान् श्रीकृष्ण के भक्त थे । चेदि देश का राजा था शिशुपाल और मगध देशका राजा था जरासंध। इन दोनों की घनिष्ठ मित्रता थी । जब विवाह का मौका आया तो भीष्मक ने अपने बेटों के साथ विचार किया कि हमारी कन्या विवाह योग्य हो गई है । विवाह कर दिया जाए । भीष्मक ने कहा कि विवाह के योग्य वर कृष्ण हैं । उन्हीं के साथ हम उसका विवाह करना चाहते हैं । रुक्मी ने कहा कि यह नहीं होगा । हम अपनी बेटी का विवाह हमारा मित्र है चेदि राज्य का राजा शिशुपाल । उससे हम विवाह करेंगे । पिता को उसने उल्टे डाँट दिया । असुरों का यही काम है ।

मानहिं मातु पिता नहीं देवा । साधुन्ह सन करवावहिं सेवा ।।

जो माता पिता को न माने, साधुओं से सेवा कराए वहीं तो असुर होते हैं । कोई सींग होने पर थोड़े ही असुर होता है ।

जिनके अस आचरण भवानी । ते जानेहु निशिचर सम प्राणी ।।

उसने इतना ही नहीं, लग्नपत्री लिखवा ली । पण्डित को बुलाया कि शुक्रवार की लगुन, शनिवार की बारात और इतवार की भाँवरी । शुक्रवार को मायना माने शुरु हुआ। अब एक ही दिन का अन्तर बचा ।रुक्मिणी ने जब यह समाचार सुना तो बड़ी घबड़ाई। कहा कि यह क्या हो रहा है ? एक ब्राह्मण को बुलाया । ब्राह्मण से कहा कि ब्राह्मण देवता ! मेरा पत्र लेकर तुम श्रीकृष्ण के पास द्वारका चले जाओ । यह पत्र उनको दे दो। ब्राह्मण तुम यह काम करोगे तो मैं तुम्हारा बड़ा उपकार मानूँगी । रुक्मिणी के कथन से ब्राह्मण सहमत हुआ और वह तत्काल वहाँ से चलकर द्वारकापुरी पहुँच गया । द्वारकापुरी में भगवान् सभागार में विराजमान थे । जाकर ब्राह्मण ने पत्र दिया ।

पत्र रुक्मिणी का था । उसमें रुक्मिणी ने लिखा था कि हे श्यामसुन्दर ! तुम्हारे गुणों को जब से मैंने नारद जी से सुना है तब से मैंने अपना आपा आपको अर्पित कर दिया है । मैं यह निश्चय कर चुकी हूँ कि अपने गुण शील आदि से योग्य आपको ही अपना पति बनाऊँ । भगवान् ! मेरा भाई रुक्मी मेरा विवाह शिशुपाल से कराना चाहता है । मैं तो आपकी हो चुकी हूँ । मुझे कहीं वह न ले जाए इसका आप उपाय कीजिए । आप सोचते होंगे कि मैं तो अन्तःपुर में रहती हूँ और मेरा भाई आपका विरोधी है । जब तक उसको मारूँगा नहीं तब तक मैं उसे कैसे पाऊँगा तो मैं एक उपाय बताती हूँ । हमारे कुल में विवाह के पहले कन्या अम्बिका की पूजा के लिए महल से बाहर जाती है । अम्बिका का मन्दिर नगर के बाहर है । उसी समय आप मेरा हरण कर लीजिए । इस प्रकार ब्राह्मण ने जब भगवान् को पत्र दिया और भगवान् ने उस पत्र को पढ़ा तो भगवान् बोले कि हमने भी जब से रुक्मिणी के गुणों को सुना है रात्रि में हमको नींद नहीं आती है । तुरन्त अपने सारथी से कहा रथ ले आओ। ब्राह्मण को रथ में बिठा लिया और कहा कि चलो विदर्भ देश की ओर । चल पड़े भगवान् । किसी से नहीं कहा कि हमारे साथ आप लोग भी चलिए । बाद में बलदेव जी को जब पता चला कि कृष्ण विदर्भ देश गया है तो वे भी सेना लेकर पीछे-पीछे हो लिए ।

इसके पहले एक कथा सुनानी आवश्यक है । भगवान् के ज्येष्ठ भ्राता बलदेव जी थे । पहले बड़े भाई का विवाह होना चाहिए तब छोटे का होना चाहिए । बलदेव जी का न हो कृष्ण का हो जाए तो कृष्ण पर्यवेत्ता हो जाते । शास्त्रों में यह लिखा है कि बड़ा भाई या बड़ी बहन बैठी है और छोटे का विवाह हो जाए तो वह बड़ा भाई पर्यवेत्ता कहलाता है । यह दोष है ।

कथा आती है कि एक राजा थे । रैवतक । उनकी कन्या थी रेवती । उन्होंने सोचा कि अपनी कन्या का किससे विवाह करूँ ? ब्रह्मा जी से ही पूछा लूँ कि कौन मेरी बेटी के योग्य हैं ? जब तक ब्रह्मा जी से पूछने के लिए गए तब तक यहाँ यह घटना हो गई। जो कुमार उन्होंने सोचे थे उनके नाती पोते हो गए । ब्रह्मा जी ने कहा कि देखो । अब वह नहीं चलेगा । भगवान् ने अंशावतार धारण किया है । बलदेव जी के रूप में । उन्हीं से अपनी कन्या का तुम विवाह करो । रेवती का विवाह बलदेव जी से हुआ । कहते हैं कि बलदेव जी से वह रेवती ऊँची थी । जबकि वह भी ऊँचे पूरे थे पर वह उनसे भी ऊँची थी । इस प्रकार बलदेव जी का विवाह हो चुका था । आगे की कथा हम सुना रहे हैं ।

भगवान् चले गए । जब भीष्मक ने सुना कि भगवान् आ गए । इधर रुक्मिणी बड़ी

आतुर हो रही थीं । क्या कारण है कि कृष्ण अब तक नहीं आए । वह तो पल-पल उनके आगमन की प्रतीक्षा में व्याकुल हो रही थी। सोच रही थी कि क्या मैंने चरती हुई गौ को चारे से हटा दिया । क्या मैंने हरे-हरे वृक्ष कटवाए । क्या मैंने दीपक से दीपक जलाया? ऐसा कौन सा पाप मुझसे हो गया जो अब तक श्यामसुन्दर नहीं आए ? भगवान् नगर में पहुँचे और ब्राह्मण को विदा किया कि जाओ । रुक्मिणी को हमारे आगमन की सूचना दो । ब्राह्मण ने जाकर रुक्मिणी को सूचना दी कि कृष्ण आ गए । इधर भीष्मक ने भगवान् के निवास के लिए उचित व्यवस्था की । कि आप हमारे यहाँ विराजमान होइए। भगवान् ने कुछ उनसे बताया नहीं कि हम क्यों आए हैं । पर वह उनके प्रभाव को तो जानता ही था । रुक्मिणी को पता लग गया कि वासुदेव आ गए हैं । इधर शिशुपाल के शरीर में हल्दी लग गई। मोर बँध गया। बाजे गाजे के साथ शिशुपाल आ गए । बरात लग गई । जनवासा हो गया । बराती में जरासन्ध भी आ गया अपनी सेना लेकर । उनको आशंका तो थी ही कि कृष्ण अवश्य कुछ गड़बड़ करेगा । अब उनको जब पता लगा कि कृष्ण आ गया तो बोले कि खतरा है । उसने पूछा रुक्मी से कि यह बताओ कि तुम्हारी बहन महल के बाहर तो नहीं निकल रही है ? रुक्मी ने कहा कि अम्बिका की पूजा की तो हमारे यहाँ परम्परा है उसके लिए तो वह बाहर जाएगी पर हमारी सेना वहाँ रहेगी । कैसे कोई उसका हरण कर लेगा । बोला कि तुम्हारी सेना पर हमारा विश्वास नहीं है । रुक्मिणी के साथ मेरी सेना जाएगी । कहा कि ठीक है अपनी सेना लगा लो । जरासन्ध शिशुपाल की सेना रुक्मिणी जी के पहरे में लग गई । अपनी सखियों के साथ रुक्मिणी जी अम्बिका जी के मन्दिर में गईं जाकर भगवती का विधि-विधान से पूजन किया । वरदान माँगा कि हमें कृष्ण की प्राप्ति हो जाए । भगवान् की प्राप्ति जगदम्बा की कृपा से ही होती है । भगवती ने उनको हृदय से आशीर्वाद दिया ।

मन्दिर से निकलकर वह बाहर आईं । बाहर चबूतरे में खड़ी होकर जो घूँघट खोला तो उनके सौन्दर्य को देखकर शत्रु की सेना मुग्ध हो गई । चमत्कृत हो गई । भूल गई कि हम कौन हैं ? देखते ही रह गए । वह तो मोहिनी लग गई उनके ऊपर । इतने में भगवान् कृष्ण आए । द्रौपदी के बाँये हाथ को दाहिने हाथ से पकड़कर खींचा । रथ में बैठाया और सारथी से कहा कि चलो । जब रथ निकल गया तब सब कहने लगे कि ले गया, ले गया । कौन ले गया । कहा कि कृष्ण ले गया । जरासन्ध, शिशुपाल को सूचना मिली कि अरे ! तो वे लोग भी सेना लेकर गए । भगवान् ने बाणों से उनको बेध दिया और रुक्मिणी को लिवा ले गए । कोई कुछ भी न कर सका । भगवान् आगे बढ़ गए । इतने में बलदेव जी आ गए । अरे तुम हमसे बिना बताए आ गए । यह ठीक नहीं है ।

यह सेना है कोई चिन्ता की बात नहीं है । इतने में रुक्मी ने सभा में प्रतिज्ञा कर ली कि मैं अपनी बहन का उद्धार करने जाऊँगा । जब तक कृष्ण को मारकर अपनी बहन को वापस न लौटा लूँ तब तक मैं अपने नगर में प्रवेश नहीं करूँगा । चला सेना लेकर । रास्ते में भगवान् की जो सेना बलदेव जी के नेतृत्त्व में आई थी उसको उसने रोका । सेना को आगे बढ़ा और भगवान् कृष्ण के पास ललकारा। कहाँ जा रहे हो ? रुको । भगवान् ने कहा कि ठीक है । थोड़ी देर में भगवान् ने उस रुक्मी को पराजित किया और पराजित करके उसका शिर काटने के लिए उद्यत हो गए । तलवार निकाल लिया तब रुक्मिणी चरणों में गिर पड़ी कि महाराज ! यह मेरा भाई है। इसे मत मारो । कहा कि ठीक है । उसके बाल कटवा दिए । रस्सी से बँधवा दिया रथ के पीछे और चले । इतने में बलदेव जी रुक्मी की सेना को पराजित करके लौटे और यहाँ देखा कि रुक्मी के बाल कटे हुए हैं । मूँछें कटी हुईं हैं और रथ के पीछे बँधे हुए हैं तो भगवान् को डाँटा । कहा कि कृष्ण ! अपने रिश्तेदारों के साथ कहीं ऐसा व्यवहार किया जाता है ? छोड़ो इसको । रुक्मी को छुड़वा दिया।

रुक्मी अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अपने राज्य घर लौटकर नहीं गया । वहीं उसने भोजकच्छ नाम का नगर बसाया और वहीं रहने लगा । वह बड़ा अहंकारी था । कहते हैं कि महाभारत का युद्ध जब होने लगा तो रुक्मी अपनी सेना को लेकर गया कि जो हमारा आधिपत्य मानेगा हम उसकी तरफ से लड़ेंगे । न तो उसको दुर्योधन ने अपने साथ शामिल किया और न ही पाण्डवों ने किया । कहा कि आप जाइए । आपकी जरूरत नहीं है । उसी को फिर बाद में बलदेव जी ने मारा । आगे की कथा है । अब इस तरह से रुक्मिणी जी को लेकर भगवान् द्वारका आए और द्वारका में उनका विधिवत् पाणिग्रहण संस्कार ब्राह्मणों ने वेद मन्त्रों के द्वारा कराया । रुक्मिणी का भगवान् श्रीकृष्ण के साथ सर्वप्रथम विवाह हुआ ।

उसके आगे की कथा है सत्राजित् नाम का एक राजा था । सत्राजित् भगवान् सूर्य का उपासक था । सूर्य ने उसको एक मणि दी थी । जिस मणि के द्वारा उसको आठ भार सोना प्रतिदिन मिलता था । उसको गले में धारण करके सत्राजित् भगवान् श्रीकृष्ण की सभा में आया । उस मणि के प्रकाश से ऐसा लगता था मानो स्वयं सूर्य ही आ गए हों। लोगों ने देखा समझा कि यह तो सत्राजित् है । जाकर भगवान् के बाजू में बैठ गया । भगवान् ने कहा कि सत्राजित् ! अपने पास कोई अच्छी वस्तु हो तो राजा को दे देना चाहिए। सत्राजित् ने सोचा कि अरे कृष्ण तो मणि लेने की बात कर रहा है । मन म्लान कर लिया और सभा से उठकर चला गया पर मणि दिया नहीं। घर जाकर यह बात उसने

अपने छोटे भाई से कही ।

उसका नाम प्रसेन था । प्रसेन ने कृष्ण को थोड़ी सी उल्टी पुल्टी बात कही और भाई के गले से मणि लेकर अपने गले में डाल लिया और शिकार खेलने के लिए जंगल चला गया । वहाँ शिकार करते समय सिंह ने आक्रमण करके प्रसेन को मार दिया । मणि उसकी छीन ली और सिंह मणि थोड़ी दूर पर जब ले गया तो एक भालू आ गया । वह सिंह से भी बलवान् था । उसने सिंह को मारकर मणि छीन ली और अपनी गुफा में चला गया । प्रसेन लौटकर नहीं आया तो घर में सत्राजित् कहने लगा अपनी स्त्री से कि देखो। किसी से कहना मत । हमें सन्देह हो रहा है कि कृष्ण ने मणि माँगी थी उग्रसेन के लिए। हो सकता है कि मणि के कारण कृष्ण ने हमारे भाई को मरवा डाला । मणि की चोरी कर ली । बोला कि किसी से बताना मत । कोई बात आपको गाँव में फैलाना हो तो अपनी स्त्री से बोल दो और यह कह दो कि इसको किसी से कहना मत । दूसरे दिन मुहल्ले में सुन लो । ऐसा होता है । यह बात धीरे-धीरे फैल गई । भगवान् के रनिवास तक यह बात आ गई । भगवान् ने अपनी पत्नियों से सुना कि आपके ऊपर मणि की चोरी का कलंक लग रहा है तो भगवान् उग्रसेन की सभा में बोले कि हम जाते हैं प्रसेन का पता लगाने के लिए कि किसने उसको मारा है ?

द्वारका के कुछ निवासियों को अपने साथ लेकर भगवान् श्रीकृष्ण गए । एक स्थान पर प्रसेन मरा पड़ा था । सिंह के पैर के निशान थे । देखते हुए आगे बढ़े तो सिंह भी मरा पड़ा था । मणि उसके पास नहीं थी । फिर भालू के पैर के निशान को देखा । वह गुफा तक गया था । गुफा के भीतर जाने लगे तो द्वारकावासियों ने कहा कि आपके कलंक का तो मार्जन हो चुका है । साफ दिख रहा है कि आपने मारा नहीं है । प्रसेन को सिंह ने मारा और सिंह को भालू ने मारा है । कहा कि आप वापस चलिए । बोले कि मणि लेकर आएँगे । कृष्ण मणि लेने भीतर जाने लगे तो कहा कि बारह दिन के भीतर यदि हम लौटकर न आए तो समझना कि हम मारे गए हैं । अब भगवान् गुफा के भीतर चले गए। धाय बालक को खिला रही थी ।

सिंहः प्रसेनमवधीत् सिंहो जाम्बवता हतः ।
सुकुमारक मा रोदीस्तव ह्येष स्यमन्तकः ।।

कहते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण ने भादों के शुक्ल पक्ष की चौथ का चन्द्रमा देख लिया था । जो चौथ का चन्द्रमा देखता है उसको कलंक लग जाता है । यदि यह श्लोक वह पढ़ ले तो कलंक मिट जाता है । देखा तो धाय जाम्बवान् निकला और कृष्ण को देखकर

उनके ऊपर झपट पड़ा। दोनों का युद्ध चलने लगा। अनवरत सत्ताइस दिन तक यह युद्ध चला।

इधर द्वारका वाले जो साथ में आए थे वे बारह दिन तक प्रतीक्षा करके लौट गए। द्वारका में जाकर उन्होंने संवाद सुनाया तो सब लोग सत्राजित् को भला बुरा कहने लगे और भगवती भद्रकाली के मन्दिर में आकर भगवान् की आराधना करने लगे कि कृष्ण सही हों, सकुशल लौटकर आ जाएँ। सत्ताइसवें दिन भगवान् श्रीकृष्ण ने ऐसा मुक्का लगाया उस भालू की छाती में कि वह घुटने के बल गिर पड़ा। कहने लगा कि महाराज! आप राम तो नहीं हो। बोले कि हम वही हैं। बोला कि और कोई हमको हरा नहीं सकता। भगवान् ने उसको राम के रूप में दर्शन दिया। कैसे पधारे भगवन्। बोले कि हमारे ऊपर चोरी लगी है स्यमन्तक मणि की। उसके मार्जन के लिए आए हैं। तुम वह मणि लाए हो। तुम वह मणि हमें दे दो।

बोला कि एक नहीं दो ले लो। हमारी कन्या है जाम्बवती। उसे भी ले जाओ। मणि उसको हम दहेज में दे देंगे। इस तरह से स्यमन्तक मणि के साथ अपनी कन्या जाम्बवती को उसने भगवान् को अर्पित कर दी। जाम्बवती को साथ में लेकर गले में मणि डाले भगवान् अम्बिका मन्दिर में आए। सब लोग भगवान् का दर्शन करके आनन्दित हो गए। भगवान् ने मणि उसको लौटा दी कि यह लो तुम अपनी मणि ले जाओ।सत्राजित् ने अपनी कन्या सत्यभामा का भगवान् से विवाह कर दिया। इस तरह से सत्यभामा भी एक पत्नी हो गई।

उसके पश्चात् कथा आती है कि जब पाण्डव लोग लाक्षागृह में जल गए ऐसी खबर पहुँची तो भगवान् कृष्ण और बलदेव हस्तिनापुर गए। उसी बीच में अक्रूर और कृतवर्मा शतधन्वा नाम के यादव के पास गये और बोले कि यह सत्राजित् बड़ा दुष्ट है। पहले अपनी सत्यभामा को तुमसे व्याहना चाहता था। अब तुमको न देकर कृष्ण के साथ व्याह दिया। यह मौका है। कृष्ण बलदेव अभी द्वारका में नहीं है। तुम बदला ले लो। मूर्ख आदमी बिना सोचे विचारे कुछ भी कर बैठता है। मूर्खों की बातों में कभी नहीं आना चाहिए। अपने समान जिसका बल हो उसका विरोध करे। उसने उसी बीच में सत्यभामा के पिता को मार डाला और मणि लेकर घर चला गया। सत्यभामा ने देखा कि हमारे पिता मारे गये तो वह डोली में बैठकर हस्तिनापुर गई और रो रोकर अपने पिता की मृत्यु का समाचार दिया। भगवान् वहाँ से लौटकर आए। पता लगा कि शतधन्वा नगर में नहीं है तो उसका भगवान् ने पीछा किया। वह भागा और जब भगवान् को पता लगा तो वे

शतधन्वा की खोज में चले । वह अक्रूर के पास गया । कृतवर्मा के पास गया कि भैया! हमको बचाओ । उन्होंने कहा कि कृष्ण के साथ कौन झगड़ा मोल लेगा ? सोच समझकर काम करना चाहिए । हम कुछ नहीं कर सकते । अक्रूर के पास मणि देखकर वह शतधन्वा भागा । कृष्ण बलदेव ने रथ में बैठकर उसका पीछा किया । वह फिर मार्ग छोड़कर घोड़े में बैठकर जा रहा था। भगवान् ने उसको पकड़ा शतधन्वा को मारा लेकिन मणि नहीं मिली । लौटकर आए भगवान् ने बलदेव जी से कहा कि भैया ! शतधन्वा मारा गया लेकिन मणि नहीं मिली ।

देखिये सम्पत्ति ऐसी चीज है कि बलदेव जी के मन में भी यह बात आई कि शायद अपने बेटे पोतों को देने के लिए हमसे छिपा लिया । पैसा ऐसी चीज होती है । वहाँ से उदास होकर विदेह नगर में पहुँच गए और वहीं उन्होंने दुर्योधन को गदा युद्ध की शिक्षा दी । इधर भगवान् लौटकर आए फिर जब भगवान् को यह पता लगा कि पाण्डव लोग अब निकल आए लाक्षागृह से और जीवित हैं तो उनको देखने के लिए भगवान् पुनः लौटकर आए इन्द्रप्रस्थ में और वहाँ कुछ दिन पाण्डवों के साथ रहे । पाण्डवों ने उनका बड़ा स्वागत किया ।

उसी बीच में भगवान् ने खाण्डव वन पाण्डवों को दिलाकर इन्द्र को प्रसन्न किया जिससे कि उनको गाण्डीव धनुष् की प्राप्ति हुई । अग्नि को आहार दिया इसलिए उसको गाण्डीव धनुष और अक्षय तूणीर की प्राप्ति हुई । उसी बीच में भगवान् एक बार अर्जुन के साथ आखेट खेलने के लिए गंगा किनारे गये। भगवान् को प्यास लगी। उन्होंने अर्जुन से कहा कि यमुना से जल लाओ । यमुना जल लाने के लिए जब वे गए तो उन्हें वहाँ एक सुन्दरी कन्या बैठी मिली । अर्जुन ने पूछा कि आप कौन हैं ? बोली कि मैं सूर्य की कन्या कालिन्दी हूँ । मैं कृष्ण को अपना पति बनाने के लिए, अपना स्वामी बनाने के लिए तपस्या कर रही हूँ। भगवान् से आकर अर्जुन ने कहा कि महाराज! कन्या आपको प्राप्त करने के लिए तपस्या कर रही है । उसका नाम था कालिन्दी । उसको लेकर भगवान् आये। उसके अनन्तर एक कौशल देश के राजा थे नाग्नजित् । उनकी कन्या का नाम था नाग्नजिती । उसी को सत्या भी कहते हैं । राजा ने एक प्रतिज्ञा कर रखी थी कि सात साँड़ों को जो एक रस्सी से नाथ देगा उसी से हम अपनी कन्या का विवाह करेंगे । कन्या बड़ी सुन्दरी थी । दूर-दूर के राजकुमार आए और नाथने का प्रयत्न किया लेकिन साँड़ों ने सींगों से घायल कर दिया । कुछ लोग मर भी गए। अब भगवान् वहाँ गए अर्जुन के साथ तो राजा ने बड़ा स्वागत किया । भगवान् ने कहा-

**नरेन्द्र याञ्चा कविभिर्विगर्हिता राजन्यबन्धोर्निजधर्मवर्तिनः ।
तथापि याचे तव सौहृदेच्छया कन्यां त्वदीयां न हि शुल्कदा वयम् ।।**

हे राजन् ! विद्वानों के द्वारा जो अपने धर्म पर चलने वाले क्षत्रिय हैं उनको याचना करना निन्दित माना गया है । पर हम आपको अपना सम्बन्धी बनाना चाहते हैं । इसीलिए आपकी कन्या हम आपसे माँग रहे हैं । राजा बोला कि महाराज ! आपसे अच्छा और कौन वर मिलेगा ? लेकिन मैंने यह प्रतिज्ञा कर ली है जो सात साँड़ों को एक ही रस्सी में नाथ लेगा उसको ही कन्या देंगे । भगवान् ने कहा कि कौन बड़ी बात है ? गौओं का पालन हम पहले ही कर चुके हैं । अब साँड़ों का । सात रूप बनाया और सातों के सींग पकड़े । जकड़ कर रस्सी लिया और खींच दिया । सबकी नाक नाथ दी भगवान् ने एक साथ । अब उसके बाद बहुत बड़ा दहेज भगवान् को मिला । उसको लेकर आए थे । बहुत से राजाओं ने बीच में ही आक्रमण किया सब मारे गए । इस तरह से सत्या से विवाह हुआ ।

फिर उसके बाद अनुविन्द की बहन मित्रवृन्दा थी उसके साथ विवाह हुआ । मद्र देश की कन्या लक्ष्मणा को स्वयंवर से अपहरण किया । इस प्रकार भगवान् की आठ पटरानियाँ होती हैं ।

इसके पश्चात् कथा और है । भौमासुर नाम का एक दैत्य था । उसने यह प्रतिज्ञा कर रखी थी कि हम बीस हजार राजकन्याओं से विवाह करेंगे । उसके पास सोलह हजार इकट्ठी हो गईं थीं । नारद जी ने जाकर पूछा कि क्या कर रहे हो ? बोला कि हम बीस हजार विवाह करेंगे । पूछा कि थोक में करोगे कि फुटकर में । बोला कि थोक में करेंगे । कन्याओं को इकट्ठी करके कैद करता गया । सोलह हजार राजकन्याएँ इकट्ठी हो पाईं । इतने में भगवान् उसके नगर में पहुँच गए और शंख बजाया । जो शंख बजाया तो मुर नाम के दैत्य ने आकर जो उसका सेनापति था उसने भगवान् का सामना किया। देखते ही देखते भगवान् ने उसको मारा इसलिए भगवान् का एक नाम मुरारी पड़ा ।

सब नाम के पीछे एक एक कथा है । गोविन्द नाम का हमने बता ही दिया है । मुरारी यह हो गया । जब भीष्म को मारने के लिए भगवान् ने रथ का चक्र उठाया तो उनका नाम चक्रपाणि हो गया । गुण कर्म के अनुसार उनके अनेक नाम हैं । मुर दैत्य मारा गया। उसके बाद वह भौमासुर आया लड़ने के लिए । यह भूमि का पुत्र था । भूमि माने पृथ्वी । पृथ्वी ने बहुत लम्बी तपस्या करके भगवान् से यह वरदान माँगा था कि मेरा बेटा अमर हो जाए । किसी के मारे न मरे । यहाँ तक कि आपके मारे भी न मरे। भगवान् बोले कि

ठीक है । तुमको हम यह वरदान देते हैं कि हमारे मारने पर भी नहीं मरेगा लेकिन जब तुम कह दोगी तब हम इसको मारेंगे तभी ये मरेगा । बोली कि मैं क्यों बोलूँगी । वह अपने आपको अजर-अमर समझकर पाप कर रहा था । लडने आया । युद्ध होने लगा । होते-होते भौमासुर भगवान् को गरुड़ के सहित खाने दौड़ा । जो उसने मुँह बढ़ाया तो सत्यभामा जी ने डर के कहा कि इसको मारिये । सुदर्शन चक्र से भगवान् ने भगवान् ने भौमासुर को मारा । अन्त में क्या हुआ कि उसकी माता भूमि लौटकर आई । उसने कहा कि महाराज ! आपने तो वरदान दिया था कि आपके भी मारने से नहीं मरेगा । मेरे कहने से मरेगा । हमने भी कहा था कि जब तक तू न कहेगी तब तक नहीं मारूँगा। बोली कि मैंने कब कहा ? भगवान् बोले कि सत्यभामा तेरा ही तो अवतार है । इसी ने कहा इसलिए मारा । भौमासुर ने इन्द्र का छत्र और अदिति के कुण्डल स्वर्ग से छीन लिए थे । भगवान् उन कन्याओं को मुक्त कर ले आए और बोले कि आप अपने-अपने घर जा सकती हैं । आप सब स्वतन्त्र हैं । उन्होंने कहा कि हम आपके चरणों को छोड़कर कहीं नहीं जाएँगी । अब तो हम आपके ही चरणों में ही समर्पित हो चुकी हैं । भगवान् ने उनको द्वारका विदा किया । कुछ लोगों से कहा कि जाओ ले जाओ द्वारका । स्वयं गरुड़ पर चढ़कर इन्द्रलोक पहुँचे । इन्द्र का छत्र लौटाया इन्द्र की माता अदिति के कुण्डल लौटाए और लौटते समय भगवान् वन में गए और पारिजात का वृक्ष उखाड़ कर गरुड़ में रखकर जाने लगे । इन्द्र को जाकर बताया लोगों ने कि कृष्ण पारिजात उखाड़ कर जा रहे हैं तो वह ऐरावत में बैठकर लड़ने के लिए तैयार हो गया । स्वार्थी लोग को देखे । तुममें यदि सामर्थ्य था तो अपना छत्र क्यों नहीं छुड़ा लिया । अपनी माता के कुण्डल क्यों न छुड़ा लिए। तुम कृष्ण से लड़ने जा रहे हो । शर्म नहीं आती । तो डर के मारे लौट गया । सत्यभामा के महल के आगे वह पारिजात का वृक्ष रोपित कर दिया।

भगवान् की इतनी सारी पत्नियाँ हुईं लेकिन भगवान् किसी में आसक्त नहीं हुए । कमल पत्र के समान रहे। यहाँ तक बताया गया है कि भगवान् की जो दिनचर्या थी गृहस्थाश्रम में बड़ी अद्भुत थी ।

ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय वार्युपस्पृश्य माधवः ।
दध्यौ प्रसन्नकरण आत्मानं तमसः परम् ।।

ब्राह्म मुहूर्त । लगभग चार बजे से लेकर छः बजे तक का समय ब्राह्म मुहूर्त माना जात है । इसमें उठकर जो भगवान् का भजन करता है उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ब्राह्म मुहूर्त में उठकर आचमन करते थे। मुँह धोते थे । प्रसन्नेन्द्रिय होकर

अपनी एक आत्मा, अखण्ड ज्योति, नित्य शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-स्वभाव ब्रह्म स्वरूप का ध्यान करते थे। रोज उनका यह नियम था। उसके बाद स्नान करके सन्ध्या करते थे। सन्ध्या करके मन्त्र जप करते थे फिर ब्राह्मणों को दान करते थे। गौदान करते थे। उसके बाद फिर भोजन करके सभा में जाते थे। ऐसे भगवान् का नियम था।

आपने भगवान् के विवाह की लीला सुनी। यह सब जो भगवान् की पत्नियाँ हैं ये सब भगवान् की अन्तरंग सखियाँ हैं, उनकी शक्तियाँ हैं और उनका जन्म-जन्म का साथ है। रुक्मिणी तो अगर भगवान् श्रीकृष्ण विष्णु हैं तो रुक्मिणी साक्षात् लक्ष्मी हैं। सब लीला आपने सुनी। बस यहीं पर प्रवचन का विराम करते हैं। थोड़ा सा भगवान् का नाम लीजिए।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[48]

।। राम राम अड़तालीस ।।

दैवी सम्पत् छुडाने और आसुरी बांधने वाली है

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो ।

आज काशी में माँ गंगा की गोद में बैठे हमलोग सत्संग के लिए समुपस्थित हुए हैं। काशी भगवान् शंकर की नगरी है । यह माना जाता है कि भगवान् शंकर ने त्रिशूल में इसको बसाया है । कल्पान्त में भी इसका नाश नहीं होता । जो काशी में निवास करते हैं स्वर्ग के देवता उनको मनुष्य के रूप में नहीं देखते । देवताओं को दिखता है कि यह काशी के निवासी कौन हैं ? अरे ! इनको तो पाँच सिर हैं । सबमें तीन नेत्र हैं । अभी आपने साँड कवि से सुना कि पाकेट कट गया काशी का नाम लिया तो इक्कीस रुपया मिल गया । यह काशी का महत्त्व है । जहाँ भी कोई जाता है वह चाहे यहाँ पर घूम घामकर ही गया हो । कहते हैं कि काशी से आए हैं । काशी का पण्डित है । यहाँ साक्षी विनायक हैं । कहते हैं कि वे देख लेते हैं कि यह व्यक्ति काशी में आया था ।

एक बार भी जीवन में यदि कोई काशी में आ जाए तो निश्चय उसकी सद्‌गति होती है । जब उसके ऊपर यमराज आपत्ति करते हैं तो साक्षी विनायक आकर बोलते हैं कि यह काशी में आया था । ऐसी काशी नगरी में जबकि विश्व में अशान्ति छायी हुई है हमारे भारत में भी दुर्घनाओं पर दुर्घटनाएँ हो रही हैं । लोग प्राण दे रहे हैं। रेल की दुर्घटना हो रही है । आपस में लोग लड़ रहे हैं । तो ऐसे मौके पर काशी से लोग एक ऐसे सन्देश की अपेक्षा रखते हैं जिसके द्वारा इसको रोका जा सके । एक सिद्धान्त है-

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूज्यपूजा व्यतिक्रमः ।
त्रीणि तत्र प्रवर्तन्ते दुर्भिक्षं मरणं भयम् ।।

यह लिखा है कि जहाँ अपूज्यों की पूजा होती है और पूज्यों की पूजा का व्यतिक्रम होता है वहाँ तीन बातें होती हैं । दुर्भिक्ष होता है, मरण होता है और भय होता है । आज हमारे भारत में यह हो रहा है । आपने सुना कि अरबों रुपयों की फसल खराब हुई अकारण वर्षा के कारण । ओले के कारण बर्बाद हो गई । यह दुर्भिक्ष है । और रेल की दुर्घटनाएँ हो रही हैं । मनुष्य एक दूसरे के प्राण का ग्राहक हो रहा है । लोग विष खाकर मर रहे हैं । किसान आत्महत्या कर रहा है । यह दुर्भिक्ष है । मरण है । भय का हाल

यह है कि भारत के पड़ोस में कोई भी ऐसा देश नहीं है जो हमारा मित्र हो। सब इसके ऊपर क्रूर दृष्टि लगाए हुए हैं। आपने अभी सुना कि आतंकवादी भारत के भीतर और बाहर उपद्रव कर रहे हैं। वैष्णो माता के यात्रियों को निशाना बनाया जा रहा है। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि जो कारण हैं उसका निराकरण किया जाए। अपूज्यों की पूजा हो रही है।

जहाँ श्रीकृष्ण की पूजा हो रही थी वहां साईं की पूजा हो रही है। अब देखिए शिरडी के सांई। जहाँ भगवान् के भक्तों की पूजा होनी चाहिए वहाँ पाखण्डियों की पूजा हो रही है। अपूज्यों की पूजा ही पूज्यों का व्यतिक्रम है।ब्रह्मलीन स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती जी बताते थे कि एक जगह हम बैठे थे तो बहुत से पाखण्डी लोग हमारे अगल-बगल में बैठ गए थे। एक राजा आया वहीं से सिर झुकाते हुए सबके चरणों में सिर रखते रखते हमारे पास आया। सबसे अन्त में हम बैठे थे। हमने कहा कि भईया ! अब रहने दे। तेरा माथा फुटबाल है। कईयों के चरण तेरे सिर पर लग चुके हैं। अब यहाँ मत लगा।

कहने का मतलब यह है कि अपूज्यों की पूजा यही पूज्यों का तिरस्कार है। यह अब हो रहा है। भगवती राजराजेश्वरी का हमलोग यहाँ अर्चन कर रहे हैं। माता जगदम्बा ने भण्डासुर के साथ युद्ध किया। भण्डासुर कौन था ? आसुरी सम्पत् एकत्र होकर भण्डासुर के रूप में खड़ी हो गई।

दम्भ, दर्प माने अपने को ऊँचा समझकर और सबको नीचा समझना। अभिमान भी इसी का एक रूप है। चित्त का ज्वलनात्मक परिणाम क्रोध है। अग्नि को अगर अपने हाथ से किसी के ऊपर फेकें तो उसको लगे या न लगे पर आपका हाथ तो जल ही जाएगा। जो क्रोधी है उसकी क्या हालत होती है ? आँखें लाल-लाल हो जाती हैं और दिल धड़कने लगता है। कुछ बोलना चाहता है और कुछ बोल देता है। क्रोध में आकर अगर किसी से लड़े तो पहले पटकनी इसी की होती है। क्रोधी ही पिट जाता है। इसलिए यह आसुरी सम्पत् है। कठोर वचन बोलना। कहते हैं कि शस्त्र का घाव भर सकता है लेकिन कटु वचन, कठोर वचन से जो घाव मनुष्य के हृदय में पैदा होता है वह कभी दूर नहीं होता। यह आसुरी सम्पत् है। यह सब आसुरी हो गई और दूसरी है दैवी सम्पत्।

अभयं सत्वसंशुद्धिः ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ।।

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ।।

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ।।

यह जो अभय, अन्तःकरण की शुद्धि, ज्ञानयोग में व्यवस्थिति, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, ऋजुता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति और अपैशुन आदि यह सब दैवी सम्पत् है । इसके विरुद्ध आसुरी सम्पत् है। यह दोनों सम्पत् एक दूसरे के विपरीत हैं । कुछ लोग आसुरी सम्पत् से प्रभावित होते हैं और कुछ दैवी सम्पत् से । दोनों का संघर्ष चिर काल से चला आ रहा है ।

एक समय इसने भयानक रूप ले लिया था भण्डासुर के रूप में । तब भगवती ने अवतार लिया । भण्डासुर ने भगवती के ऊपर पाखण्डास्त्र चलाया । पाखण्डास्त्र क्या है? पाप का घर । पाप का चिह्न है । अपने पाप को छिपाने के लिए जो धर्म का स्वांग रचते हैं वो पाखण्डी कहलाते हैं । जिनका आचरण वेद-विरुद्ध होता है ऐसे लोग हमारे धर्म को नष्ट करने का उपाय करते हैं । यह पाखण्डास्त्र जब चला भगवती के ऊपर तब उन्होंने गायत्री मन्त्रास्त्र चला दिया । मन्त्रों की लड़ाई में गायत्री जीत गई । अब गायत्री ही बिगाड़ दी गई है ।

आदि शंकराचार्य ने पूरे भारत को जो बौद्ध बन गया था उसको बौद्ध धर्म से हटाकर सनातन धर्म में स्थापित कर दिया । बहत्तर मतो का नाश किया है । उस समय बहत्तर मत थे । एक विदुषी ने लिखा है कमला पाण्डेय जी ने कि बहत्तर मत कौन-कौन से हैं जिनका खण्डन किया है । उन सबका नाश करके आगे कोई पाखण्डी शिर न उठाये इसके लिए उन्होंने चार मठ बना दिए । चार मठ हमारे रहेंगे जो पाखण्डियों को खत्म करेंगे । लेकिन क्या हो गया ? चार मठ में चार शंकराचार्य बैठे हैं । अब साठ बन गए हैं । सब कहते हें कि हम शंकराचार्य हैं । अब वे शंकराचार्य बनकर कह रहे हैं कि हमारे सनातन धर्म में कुछ नहीं है । सब कुछ कुरान में ही लिखा है । कोई कह रहा है कि सांई ब्राह्मण था । इसकी पूजा करो । यह सब बातें खड़ी कर रहे हैं । ऐसी सब बातें जब शंकराचार्य बनकर बोलेगे तब पाखण्ड कैसे हटाओगे । पाखण्ड तब दूर होगा जब आप सत्य सनातन धर्म , वेद शास्त्रों के द्वारा प्रतिपादित धर्म का समर्थन करेंगे ।

अब यह डंका आपके केदारघाट से बजेगा । **शिवोहं का डंका बजाना पड़ेगा । ये पर्दा दुई का हटाना पड़ेगा**। हमारे सनातन धर्म के लोगों ने बोलना शुरु कर दिया है। आज नारियों का उत्पीडन क्यों हो रहा है ? क्योंकि नशीली चीजों का सेवन बढ़ गया है । लोग नशा नहीं छोड़ रहे हैं । तरह तरह की नशीली चीजें भारत के बाहर से आ रही

हैं। यहाँ शराब भयंकर रूप से लोग पी रहे हैं। उनका दाम्पत्य जीवन बिगड़ गया है। पत्नी सोचती है कि पति काम करके आया है। रात को लौटेगा। दो बातें प्यार की करेगा। जीवन सुखमय हो जाएगा। लेकिन वह पति बारह बजे के बाद आता है और हूँ हूँ करता हुआ, मुँह से दुर्गन्ध फैलाता हुआ, पत्नी को गाली देता हुआ आता है। इसमें दाम्पत्य जीवन खत्म हो रहा है। यह हालत हो गई है आज देश की। स्त्री-पुरुष का आपस में मिलना बेकार हो गया है। इसी तरह से नशा करके लोग कुछ भी कर बैठते हैं।

एक व्यक्ति था। शराब के नशे में उसने अपनी बेटी का हाथ पकड़ लिया। लोगों ने किसी तरह छुड़ाया। बाद में जब उसको पता लगा कि मैंने यह किया तो उसको ग्लानि हुई और उसने आत्महत्या कर लिया। हम कहा कहते हैं कि एक राजा चला जा रहा था। हाथी में बैठा हुआ था और शराबी सड़क पर लटकते हुए बैठे थे। बोले कि ओ! हाथी वाले ! हाथी बेचेगा ? क्या दाम लेगा ? राजा ने सोचा कि अरे ! यह शराबी मेरा हाथी ही खरीद रहा है ? पुलिस से कहकर उनको हवालात में बन्द करवा दिया। रात भर हवालात में रहे। मच्छरों ने काटा। जाड़ा लगा। सबेरे उसने अपने दरबार में बुलाया। सब थरथर काँपते हुए पहुँचे। राजा ने पूछा कि क्यों भाई ! हाथी खरीदोगे ? शराबी ने कहा कि महाराज ! खरीदने वाला तो उतर गया।

यह काशी की महिमा है। इसमें आज सत्संग का लाभ लीजिए। सत्पुरुषों के वचनों को सुनिए। कल से भागवत की कथा होगी। ऐसा है कि धर्मचर्चा किसी ग्रन्थ के आधार पर होती है। अगर आपको विचार करना है अथातो ब्रह्म जिज्ञासा। ब्रह्म की जिज्ञासा कैसे होगी ? ब्रह्म में जो प्रमाण वेद उपनिषद् हैं उन पर विचार कीजिए कि वे क्या कहते हैं। हमारे यहाँ जो व्याख्यान होता है वह शास्त्रों के आधार पर होता है। किसी ग्रन्थ को निमित्त बनाकर उसकी व्याख्या करते हैं। हमारे यहाँ कलियुग में सबसे अधिक भागवत का माहात्म्य है। दो ग्रन्थ हैं जिसने आज भारत को बचाकर रखा है। एक तो भागवत और दूसरी है रामायण। भागवत और रामायण का जो श्रवण करते हैं उनके हृदय में भक्ति का उदय होता है। भगवत् तत्त्व विज्ञान होता है। इससे सबका कल्याण होता है। आज अधिक विस्तार में न जाकर हम अपनी बात यहीं समाप्त करते हैं। आप लोग आइए और यहाँ पर विद्वानों के प्रवचन सुनिए। अपने जीवन को धन्य बनाइए और यहाँ जो भी बताया जाएगा सनातन धर्म और वेद शास्त्र के अनुकूल जो मार्ग है वही बताया जाएगा। जो उल्टे पुल्टे मार्ग हैं उनका भाण्डाफोड़ भी किया जाएगा।

अभी हमने यह दृष्टान्त दिया है कि हरिद्वार में। जरा ध्यान से सुनिएगा। हरिद्वार में एक महात्मा गंगा जी की बालू में बैठकर सत्संग किया करते थे। उस सत्संग की जगह में बालू बड़ी स्वच्छ थी। एक किसी धूर्त ने आकर वहाँ टट्टी कर दी। दूसरे ने क्या किया? उसकी टट्टी के ऊपर बालू डाल दिया। बालू डाल देने से बेचारा सत्संगी आया ठीक उसी के ऊपर बैठ गया। उसके कपड़े खराब हो गए। लोगों ने कहा कि भाई ! यह क्या हो गया ? महात्मा जी ने कहा कि जिसने बालू डाली वह अपराधी है। अगर खुला रहता तो उस पर कोई न बैठता। ढॉक दिया। इसी तरह से जो साई की पूजा है वह उल्टा पुल्टा है। सन्तोषी की पूजा। यह धारावाहिक निकाल कर पूजा करवा रहे हैं इनको ढाँकना अपराध है। इसको खुला छोड़ना चाहिए कि यह शास्त्र विरुद्ध है। जब समझ में आएगा तब लोग छोड़ेंगे। जब आप इसको छिपायेंगे तो यह आपको अपवित्र करेगा। बहु से लोग कहते हैं कि मत बोलो। मत बोलो। पर चुप कैसे रहा जाये। यह तो बताना पड़ेगा लोगों को। समझाना तो पड़ेगा कि आप जहाँ जा रहे हैं वह रास्ता अच्छा नहीं है। वहाँ जाने से आपका अनिष्ट होगा। यह सब बातें आपको यहाँ बताई जाएँगी। (स्वर्णाभिनन्दनम् में प्रथम दिवस पर प्रवचन काशी केदारघाट)

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[49]

।। राम राम उन्चास ।।

अपना उद्धार स्वयं करें

समुपस्थित विद्वद्वृन्द, देवियो, सज्जनो ।

गीता में भगवान् ने एक श्लोक में कहा है कि - **उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्**।

इसका अर्थ है कि **आत्मना आत्मानं उद्धरेत्** । स्वयं ही अपना उद्धार करें । कैसे करें? अपने अन्तःकरण को, इन्द्रियों को वश में करके, अपने कर्मों के स्वरूप को शास्त्रविहित करके आप अपने वास्तविक स्वरूप का बोध प्राप्त करें । अर्थात् शरीर में, इन्द्रियों में, प्राण में, मन में, बुद्धि में जो हमारी आत्मबुद्धि हो गई है और जिसके कारण हम स्वयं को जन्म-मरण वाला समझने लगते हैं । सुखी-दुःखी मान बैठे हैं और विविध कर्मों के कर्ता समझकर कर्म करते हैं । इसके फलस्वरूप जन्म मरण के चक्र में हम पड़ जाते हैं।

मैं कर्म करता हूँ । जब इस प्रकार का अभिमान मनुष्य कर लेता है तो उसका फल भोगने के लिए भी उसको बाध्य होना पड़ता है । जब अपने में कर्तृत्त्व आएगा तो भोक्तृत्त्व भी आएगा ही । ऐसी स्थिति में कर्तृत्व भोक्तृत्त्व आत्मा में शरीर, प्राण, इन्द्रिय, मन, बुद्धि के तादात्म्य के कारण आरोपित हो गए हैं । उस आरोप का निवारण ज्ञान से हो सकता है । इसीलिए कहा गया कि **ज्ञानादेव तु कैवल्यम्** । ज्ञान से ही कैवल्य होगा । पर उस ज्ञान के लिए जैसे अन्तःकरण की आवश्यकता है जिसमें तीव्र जिज्ञासा हो । मुमुक्षा हो। शमदमादिसम्पत्ति का सम्पादन किया गया हो । इसके लिए स्वयं को उस योग्य बनाने के लिए पहले अपने शरीर को स्वस्थ बनाया जाए । स्वस्थ शरीर के पश्चात् इन्द्रियों को शुद्ध बनाया जाए । जो हमारी इन्द्रियाँ अशुभ विषयों की ओर जाती हैं उनसे उनको निवृत्त किया जाए । इसके पश्चात् प्राणायाम के द्वारा अपने प्राण को स्वाधीन बनाया जाए । संकल्प विकल्प का त्याग करके मन को स्वस्थ बनाया जाए । विचार को श्रुति के अनुकूल ब्रह्म के समीप पहुँचने के लिए अनुसन्धान किया जाए। ये आत्मा के द्वारा आत्मा का उद्धार है ।

वस्तुतः आत्मा को उद्धृत ही है । उसमें कोई बन्धन नहीं है । लेकिन यह जो अनादि काल से भ्रम हो गया है उस भ्रम को दूर करने के लिए मनुष्य जीवन में साधना करनी

चाहिए । दूसरों के उद्धार के लिए हम प्रयत्न करने के पहले अपना उद्धार कर लें । यदि हम अपना उद्धार नहीं करेंगे तो दूसरों के लिए कुछ करने के कारण हमारे हृदय में एक अभिमान आएगा कि हमने किसी का भला किया । जब यह अभिमान आ जाएगा तो साथ में कुछ अपेक्षाएँ उत्पन्न होंगी । संसार के बन्धन में बँध जायेंगे । इसीलिए स्वयं को पहले निर्लिप्त बनाना होगा । निर्लिप्त करके ही दूसरों के काम में लगें । और यदि हम दूसरों के कल्याण के लिए कुछ कार्य करते हैं साधना अवस्था में तो वह दूसरों के कल्याण के लिए न होकर अपनी आध्यात्मिक साधना का अंग बन जाएगा ।

हम जब दूसरों के लिए कुछ करेंगे तो उससे हमारा विचार बदल जाएगा । आप अगर किसी भूखे को भोजन देते हैं, प्यासे को पानी देते हैं, अगर कोई रोग से पीड़ित है कराह रहा हो रोग से उसका उपचार कर देते हैं, गिरे हुए व्यक्ति को उठा देते हैं, जो व्यक्ति शोक मोह से पीड़ित हो रहा है उसको यदि कुछ अच्छी बात बता देते हैं, अच्छे काम में लगा देते हैं तो वह उसका उपकार नहीं कर रहे हैं, आप अपनी साधना का अंग बना रहे हैं । ऐसा करके हम अपने हृदय को शुद्ध कर रहे हैं । वह हमारे लिए है । उसके लिए नहीं है । इसीलिए यह बात आती है कि जो परोपकार किया जाता है और जो अपने लिए किया जाता है पुरुषार्थ तो दोनों ही हैं लेकिन सच्चा पुरुषार्थ वह है जो दूसरों का उपकार करके अपना उपकार किया जाता है । यह आध्यात्मिक उत्थान मण्डल की स्थापना की कल्पना है कि हम अपने आप अपना उद्धार करने का प्रयत्न करें और तरण तारण बनें ।

चार प्रकार के मनुष्य होते हैं - एक होते हैं तरण जो घर-द्वार छोड़कर जंगल में जाकर मौन होकर तपस्या करके अपने को तार लेते हैं । दूसरे तारण, वे हैं जो अपने मोक्ष की चिन्ता बिना किए दूसरों को ही उपदेश देते रहते हैं । उसका सुनने वाले स्वयं तो सही रास्ते पर हो जाते हैं लेकिन वे खुद नहीं होते । एक व्यक्ति ने भागवत की कथा सुनी । कथा सुनने से उसे वैराग्य हो गया । विरक्त होकर वह जंगल चला गया । सन्त-महात्माओं का सत्संग किया । ज्ञान प्राप्त कर लिया । कृतकृत्य हो गया । फिर वह वहाँ लौटकर आया । वहीं उसी तरह से लोग कथा कह रहे थे और उसी तरह से लोग कथा सुन रहे थे । वह सड़क पर बैठ गया । धूल इकट्ठी की और एक बाँस की नली लेकर इधर से धूल डाला और उधर से निकाला । ऐसे ही डालता और निकालता गया । लोगों ने उसको पहचाना कि अरे ! तुम तो चले गए थे । यहाँ क्या कर रहे हो ? कहा कि तुम लोगों को देखने आया था। क्या देखा ? एक कान से सुन रहे हो दूसरे कान से निकाल रहे हो । उसको अपने जीवन में नहीं लाया । यह हो गया तारण । दूसरों को तार रहे

हैं अपने तरने की कोई चिन्ता नहीं है ।

लेकिन तीसरा जो होता है वह तरण-तारण है । अपने भी अच्छे मार्ग पर चले और अपने इष्ट मित्रों को बन्धु बान्धवों को उसी मार्ग में ले जाए । उनको भी अपने सिद्धान्त के अनुकूल बनाने का प्रयत्न करें । स्वामी करपात्री जी महाराज कहते थे कि कुत्ता भी जहाँ बैठता है अपनी पूँछ से उस जगह को साफ कर लेता है । अपनी पूँछ से आस पास की धूल हटाता है । अज्ञान, अशिक्षा और भ्रम छाया हुआ है उसको दूर करना है । अभी हम केरल से आ रहे हैं । केरल में भगवान् आदि शंकराचार्य जी का जो जन्मस्थान है कालडी । वहाँ के लोगों ने बताया कि कालडी कस्बे में सब क्रिश्चियन हैं । केवल तीन प्रतिशत लोग वहाँ पर हिन्दू हैं । सब ईसाई हो गए हैं । अब वहाँ कोई व्यक्ति हिन्दू धर्म की बात करने से डरता है ।

इधर झारखण्ड में कुछ ऐसे क्षेत्र हैं यदि आप सत्यनारायण व्रत कथा कराएँ और शंख बजाएँ तो वे दौड़ पड़ते हैं । शंख नहीं बजा सकते वहाँ । यह हालत है । आवश्यकता इस बात की है कि जो आस-पास के लोग हैं उनको अपने धर्म से परिचित कराया जाए । उनको अपने अनुकूल बनाया जाए । उसके लिए हिंसा का आश्रय न लें । हमारी बात मानो नहीं तो हम तो मार डालेंगे ऐसा हम लोगों का रास्ता नहीं है । हमको इस बात पर विश्वास करना है कि प्रत्येक व्यक्ति का आध्यात्मिक उत्थान हो सकता है। किले से गिरा व्यक्ति भी उठ सकता है । ऐसी स्थिति में हमारा यह कर्तव्य है कि उनको अपने साथ जोड़ें । सत्संग करें । साथ में बैठें और प्रोत्साहित करें ।

आज आप देखिए हमारे भारत में जो हिन्दू हैं वे आत्मग्लानि से ग्रस्त हो रहा है। उसके सिर पर चोटी नहीं है । केरल में वे ब्राह्मण आए जो नम्बूदरी वंश के हैं । जिनके कुल में शंकराचार्य जी का अवतार हुआ था। वे जनेऊ तो पहने हैं लेकिन उनकी चोटी नहीं है क्योंकि लोग हँसते हैं । स्कूल में जब वे लोग जाते हैं तो दूसरे लोग उसकी चोटी पकड़कर खींचते हैं । ग्लानि के कारण वे अपनी चोटी नाई से जाकर कटवा लेता है । जबकि सिख अपने बाल नहीं मुडवाता । उसको शर्म नहीं आती । क्योंकि उनका एक समुदाय है । वे एक दूसरे को प्रोत्साहित करते हैं । इसी तरह से वे भी हमारे अंग हैं । आज हमारे सनातन धर्मियों को एकजुट होना चाहिए। आत्मग्लानि से मुक्त होना चाहिए।

अब आप देखिए एक प्रयास आपलोगों ने किया । हमको निमित्त बनाया । आप सुनते थे कि शिरडी के साई बाबा को मुकुट चढ़ रहा है । यह हो रहा, वह हो रहा । आपलोगों ने भी करके दिखा दिया कि हम भी कर सकते हैं । लेकन हम आपको बताना

चाहेंगे कि इससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है । यह सोना कहाँ जाएगा ? आप लोग जानो। आपने चढ़ा दिया । लेकिन हमलोग चाहते हैं कि यह अच्छे काम में लगे । धर्म के कार्य में इसका उपयोग हो । व्यक्तिगत रूप से हमको केवल एक भिक्षा की आवश्यकता है। पहनने के लिए थोड़ा सा कपड़ा और भगवान् की ऐसी कृपा है कि जहाँ हम जाना चाहते हैं लोग किराया दे ही देते हैं । रेलवे का गाड़ी का हमको किराया नहीं देना पड़ता । तो हमें अपने लिए कुछ आवश्यकता नहीं है । हमारा कोई परिवार नहीं है । हमारे परिवार के लोग अगर हमारे पास आकर अपना परिवार बताते हैं तो हम कहते हैं कि चले जाओ । यहाँ परिवार का कोई काम नहीं है । हमारे गुरुजी महाराज ब्रह्मानन्द जी सरस्वती थे, वे बतलाते थे कि हमारे मामाजी एक बार आए । उन्होंने खबर दी कि हम आपके मामा हैं, मिलना चाहते हैं । उन्होंने कहा कि अरे ! चले जाओ यहाँ भांजा नहीं है । और उन्होंने एक बड़ी विचित्र बात कह दी कि बने के सब साले बनने को तैयार रहते हैं बिगड़े का कोई बहनाई भी बनने को तैयार नहीं होता । आज हम शंकराचार्य हो गए तो तुम मामा बनकर आ गए । अगर हम बिगड़े होते तो कहाँ आते ? बहनोई को अगर पूछा जाए कि अगर आपकी हैसियत अच्छी है तो बहनोई कहेगा कि हाँ यह हमारा साला है । यदि गड़गड़ है तो कहेगा कि हमारी पत्नी का दूर का रिश्तेदार होगा । कहने का मतलब यह है कि हमलोगों का कोई परिवार नहीं है । परिवार यदि हैं तो आप सब हैं जो सनातन धर्म को मानने वाले हैं और उनका हमलोग सदा अभ्युदय निःश्रेयस चाहते हैं । भगवान् ने भारत भूमि में इस शरीर को जन्म दिया। सनातन धर्मियों के बीच में दिया । सद्गुरु मिले । सद्ग्रन्थों में श्रद्धा हुई और स्वाभाविक है कि इसके पोषण में इसके संवर्धन में हमारी रुचि होनी चाहिए । और वह होती है । हम यही चाहेंगे कि आप यही सन्देश लेकर जाएँ और तरण तारण बनें। अच्छे रास्ते पर चलें। धर्म के रास्ते पर लोगों को चलने की प्रेरणा दें और आपने जो यह श्रद्धा व्यक्त की है इसके लिए आपको नारायण-स्मरणपूर्वक शुभाशीर्वाद देते हुए हम अपनी बात पूर्ण करते हैं ।

स्वर्णाक्षर ग्रन्थ एक अच्छी कल्पना है कि कुछ लोगों को इससे प्रेरणा मिलेगी अच्छे काम करने की कि हम कुछ ऐसा करके दिखाएँ कि हमारा नाम स्वर्णाक्षर में लिखा जाए। देश की भक्ति के लिए धर्म की भक्ति के लिए, परोपकार मे, विद्या में, बुद्धि में और ऐसे कार्यों में जो सामान्य व्यक्तियों के लिए दुर्लभ है जिन्होंने उल्लेखनीय योगदान किया है उसकी परख कैसे हो ? बहुत से लोग तो यह करते हैं कि उपाधि दान करते हैं । जिसने रुपया दे दिया उसको उपाधि दे देते हैं । एक तरह से वह व्यवसाय बन

जाता है । हम चाहेंगे कि यहाँ यदि कोई नाम आए तो वह छनकर आए । जनता की ओर से जो हमारे सिद्धान्त को जानने वाले हैं, देशभक्त हैं, धर्म के प्रेमी हैं, उनकी ओर से छनकर सामने आए । और जो सर्वोत्तम नाम प्रतीत हो उसको उल्लिखित कर दिया जाए कि यह स्वर्ण अक्षर में लिखने योग्य है तो उनकी पीढ़ी दर पीढ़ी इस बात को जानती रहेगी और प्रेरणा लेती रहेगी कि हमारे पूर्वजों ने ऐसे कार्य किए थे कि जिससे उनका नाम स्वर्णाक्षर में लिखा गया तो उनको भी प्रेरणा मिलेगी कि हम भी ऐसा कुछ कार्य करके दिखाएँ । एक प्रकार से उत्साह लोगों को बढ़ेगा । सदाचार पर चलने का तो यह योजना एक अच्छी योजना है । और अभी तक केवल यह कहा जाता था कि स्वर्णाक्षर में लिखने योग्य है। अब हम स्वर्णाक्षर में लिखने योग्य हैं कि नहीं है हम तो कैसे निर्णय करेंगे इसका । आप लोगों ने निर्णय किया इसके लिए आपको धन्यवाद । हमने तो अपने नाम को देखकर हस्ताक्षर इसलिए किया है कि आपकी योजना चलती रहे । लोग इससे उत्साहित होकर अच्छे काम में लगें ।

किसको प्रणाम करना चाहिए और किसको नहीं यह भी हमारे यहाँ बताया गया है । श्रावणी पर्व के दिन प्रायश्चित्त में आता है । वन्द्य की वन्दना न करना पाप और अवन्द्य की वन्दना करना भी पाप है । यह दोनों ही दोष है । इन सब बातों का ध्यान रखते हुए आप सब लोगों ने यह सहयोग देकर बहुत अच्छे ढंग से इस कार्य को सम्पन्न बनाया है। इसका पुण्य और पवित्र स्मृति लेकर आप सब यहाँ से लौटें और इसी प्रकार हम लोगों से समय पर सब उत्सव हुआ करें जिससे कि सनातन धर्मा में लोगों की रुचि बढ़ें ।

सनातनधर्मी जैसा कि अभी बताया किसी ने कि चारों ओर से संकट में हैं । सनातनधर्मी यह नहीं कहता है कि सब लोग हमारे धर्म में आ जाओ । हमारे धर्म में आ जाओ । लेकिन मुसलमान चाहते हैं कि कोई हिन्दू न रहे । ईसाई चाहते हैं कि सब ईसाई हो जाए। आप देखए कि जब पोप पाल आया था कि इक्कीसवीं शताब्दी के अन्त में हम एशिया को ईसाई बना देंगे । यही सब चल रहा है । अब हम अगर अपना अस्तित्त्व बचाना चाहते हैं तो हमें अपने धर्म का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए । जब तक हम ज्ञान नहीं प्राप्त करेंगे तब तक हमें धर्मान्तरित करते रहेंगे । और किसी का धर्मान्तरण हो सकता है हिन्दू का धर्मान्तरण नहीं हो सकता । हिन्दू को धर्मान्तरित होने के लिए अपने धर्म का ज्ञान होना चाहिए । जिस समय वह अपने धर्म का ज्ञान प्राप्त करेगा वह अपने ही धर्म से ऊपर उठ जाएगा । सर्व धर्मान् परित्यज्य इस में आ जाएगा । जो अपने ही धर्म से ऊपर उठ गया तो वह दूसरे धर्म में क्यों जाएगा ? उनका जितने भी अपने सनातन धर्म को छोड़कर दूसरे मत मतान्तर हैं उनके जीवन का, इस लोक का, परलोक का, दोनों

का लक्ष्य संसार के भोग माने गए हैं । संसार के भोगों के लिए ही परलोक आप प्राप्त करेंगे इसलिए आप धर्म का आचरण करो और हमारे सनातन धर्म में यह बतलाया गया है कि धर्म का आचरण परलोक के सुख के लिए एक प्रकार से धर्म में लगाने के लिए बताया गया है । यद्यपि स्वर्ग-नर्क को हम लोग मानते हैं । लेकिन फिर भी हमारे वे लक्ष्य नहीं है । इस नाते हम अधर्म से बचकर धर्म का पालन करके अपने चित्त को निर्मल बनावें और आध्यात्मिक करके अपना कल्याण करें यही अपना सनातन धर्म है । बस इतना ही कहकर बात पूर्ण करते हैं ।(स्वर्णाक्षर ग्रन्थ के विमोचन के अवसर पर काशी में)

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[50]

।। राम राम पचास ।।

अन्तकाल में जैसी मति वैसी ही गति

समुपस्थित देवियो, सज्जनो !

भक्तों की इच्छा को पूर्ण करना भगवान् का स्वभाव है । गोपियों के हृदय में भगवान् श्रीकृष्ण से मिलकर उनके साथ रासोत्सव की इच्छा है । जिसके लिए उन्होंने बहुत बड़ी तपस्या की है । उनकी भावना को देखकर ही भगवान् ने रासलीला की ।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ।।

भगवान् का यह कथन है कि जो जिस भाव से मेरी शरण में आता है मैं उसे उसी भाव से स्वीकार करता हूँ । **तांस्तथैव भजाम्यहम् ।** भगवान् होने के नाते उनमें ज्ञान, वैराग्य नित्य है । फिर भी **ताः वीक्ष्य** गोपियों को देखा और ब्रह्मा की रात्रियों को देखा। जो भी रासलीला के लिए उपयुक्त सामग्रियाँ थीं उसको भगवान् ने देखा। उसको इसलिए देखा कि देखकर ही उनका निर्माण कर दिया । **योगेश्वरेश्वरात्** और फिर **अघटितघटनापटीयसी** जो योगमाया है वो उनके साथ चलती है । **योगमायामुपाश्रितः** योगमाया उनकी इच्छा के अनुसार सब रचना रच देती है । योगमाया का अर्थ श्रीराधारानी वृषभानुनन्दिनी है और योगमाया संसार के लोगों के कल्याण के लिए भगवान् में माया माने जगत् के जीव भगवान् की लीला सुनकर सहज में ही भव-बन्धन से मुक्त हो जाते हैं ।

कल आपने सुना था कि जो भगवान् की नवनीत चोरी की कथा सुनाते हैं, गोपीजनों के साथ रासविहारी की कथा सुनाते हैं, भगवान् उनको सालोक्य मुक्ति दे देते हैं। घूस दे दिया उनको इसलिए कि मानव जब हमारा ही रूप बन जाएगा तो हमारी बात नहीं सुना सकेगा ।

अपने शास्त्रों में मुक्ति के अनेकों प्रकार बताए गए हैं- सालोक्य, सामीप्य, सायुज्य, सारूप्य, सार्ष्टि । भगवान् के लोग भगवान् के लोक में जाते हैं । सालोक्य मुक्ति यही है। अपने शास्त्रों में बतलाया गया है कि शरीर के नाश से आत्मा का नाश नहीं होता । शरीर

के जन्म के पहले भी आत्मा रहता है और शरीर के नष्ट हो जाने पर भी आत्मा रहता है। आत्मा अजर-अमर है। न उसका जन्म होता है और न ही उसकी मृत्यु होती है। शरीर की जन्म-मृत्यु होती है। मरने के बाद क्या होता है ? जब प्राणी संसार छोड़कर जाने लगता है तो कहते हैं कि **यथा कर्म यथार्जितम्** जैसे जिसके कर्म होते हैं, जैसे जिसकी उपासना होती है मरने के बाद उसकी वैसी ही गति होती है। अपने उपनिषदों में, वेदों में यह बतलाया गया है कि **कर्मणा पृथ्वीलोकः विद्यया देवलोकः** कर्म से पृथ्वीलोक की प्राप्ति होती है और विद्या से देवलोक की प्राप्ति होती है। जो भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बताई वह श्रीमद्भागवद्गीता उपनिषदों का सार है। जो अभी हमने आपको **कर्मणा पृथ्वीलोकः विद्यया देवलोकः** बताया यह उपनिषदों की बात है। उसी को भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि दो गतियाँ हैं-

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः।।

शुक्लगति और कृष्णगति जगत् में शाश्वत है। एक से मनुष्य संसार में लौटकर आता है और एक से लौटकर नहीं आता। इसी को दक्षिणायन और उत्तरायण कहते हैं। कर्मी लोग दक्षिणायन से जाते हैं और जो विरक्त हैं वे उत्तरायण से जाते हैं।

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते।।

धूम, रात्रि, कृष्णपक्ष तथा दक्षिणायन के छः मास। इनमें जो कर्मी जाते हैं वो चान्द्रमस लोक में जाकर अपने पुण्यों का भोग करने के अनन्तर लौटकर आ जाते हैं। बड़ी विचित्र यात्रा होती है। मनुष्य सत्कर्म करता है, सकाम कर्म करता है तो उसको कर्म के फलस्वरूप स्वर्ग की प्राप्ति होती है। वह स्वर्ग में जाता है और स्वर्ग में जाकर स्वर्ग के सुख भोगता है। वहाँ अप्सराएँ हैं। नृत्य, गीत-वाद्य होता रहता है। भूख-प्यास नहीं लगती है। अमृत पीने को मिलता है। यह स्वर्ग का सुख है और प्रायः सभी मत-मतान्तरों में यही सुख बतलाया गया है कि तुम धर्म पर चलोगे तो तुमको सब मिल जाएगा। लेकिन उस स्वर्ग का सुख कब तक ? जब तक कर्म है तभी तक।

जैसे किसी सेठ के यहाँ आपने रुपया जमा कर दिया है कि लो भाई एक लाख रुपया है जो सामान हम मँगाएँ देते रहो। तो वह तब तक देता रहेगा, जब तक आपका रुपया उसके पास जमा है। तब तक नहीं बोलेगा और जब उससे अधिक हो जाएगा तो बोलेगा कि भाई ! अब सामान नहीं मिलेगा। पहले पिछला चुकता करो। अब तुम्हारा

रुपया खर्च हो गया है। इसी तरह से जितने पुण्य लेकर प्राणी आता है उतने समय तक स्वर्ग में रहता है। खूब आनन्द करता है।

एक बार हम हरियाणा के सिरसा नगर में गए थे। वहाँ हमारे परिचित के एक सज्जन रहते थे। उनका एक बहुत बड़ा फार्म था खेती का। खेती का जो रुपया मिलता था उसको लेकर वे होटल चले जाते थे। जब तक पैसा पास में रहता था वे होटल में ही रहते थे और जैसे ही रुपया खत्म हुआ वैसे ही फसली बाबा हो जाते थे। फसली बाबा की अलग कहानी है। एक साधु था। उसका नाम लोगों ने फसली बाबा रखा था। घर से उसको मोह नहीं था। खेती थी। फसल के समय में आ जाता था। रुपया लेकर चला जाता था। जब रुपया खत्म हो जाता था तो फिर आता था। इसी तरह से प्राणी जितने पुण्य करके जाता है उतने समय तक स्वर्ग में आनन्द करता है। अब पुण्य धीरे-धीरे समाप्त होने लगे तो जैसे ही पुण्य समाप्त होता है स्वर्ग का अधिकारी आकर बोलता है **'पत'** तुम्हारा पुण्य अब समाप्त हो गया है। उस समय बहुत दुःख होता है। कोई व्यक्ति चुनाव में हार जाए तो कैसी हालत खराब होती है। और यदि जीत गया, किसी पद पर चले गए। तब इस्तीफा माँग लिया प्रधानमन्त्री ने तो कितना दुःख होता है। कईयों को हार्ट अटैक आ जाता है। वहाँ स्वर्ग में जब उसको सुनने को मिलता है कि तुम्हारा पुण्य क्षीण हो गया तो पानी-पानी हो जाता है। गल जाता है और गलकर वह जीव इस लोक में गिरता है। एक तरह से एक आहुति बन गई। हवन हो गया। उस पानी के साथ इसका जीवात्मा भी रहता है। जीवलोकरूपी अग्नि में इसकी आहुति पड़ गई। एक अग्नि।

उसके बाद जीवलोक से पर्जन्य में आता है। बादल आते हैं और बादल में आत्मा अपने पानी के साथ गिरता है तो पर्जन्यरूपी अग्नि में दूसरी आहुति पड़ गई। पर्जन्य माने बादल होता है। बादल घूम-वर्षा करते हैं। वर्षा हुई तो धरती अग्नि हो गई और पानी की आहुति पड़ गई। अब वहाँ पर पहुँचा। धरती में आया। अब धरती में खोदने के बाद ऊसर में पड़ गया तो बेकार हो गया। कंकड़ीली जमीन में पड़ गया तो बेकार हो गया। उसके बाद फिर सूर्य ने खींचा। फिर बादल बना। फिर गिरा। गिरते-गिरते किसी उर्वर भूमि में गिरा तो उससे फिर अनाज पैदा हुआ। अनाज को अगर विधवा स्त्री ने खा लिया, किसी संन्यासी ने खा लिया या बच्चे ने खा लिया तो मल-मूत्र बनकर फिर निकल गया। फिर सूर्य की किरणें सोखेंगी, फिर बादल में जाएगा, फिर बरसेगा फिर अन्न बन गिरा। अन्न बनने के बाद फिर किसी सद्गृहस्थ के मुँह में गिरा। उसके पेट में गया तो यह चौथी आहुति पड़ गई और फिर उसके शरीर में वह रस-रक्त क्रम से वीर्य बना। इससे योनि

में गिरा तो पाँचवी आहुति पड़ गई । पाँचवी आहुति के बाद यह मनुष्य बन गया। ऐसे पाँच जगह से आने के बाद मनुष्य बनता है । बहुत कठिन है मानव जन्म । स्वर्ग से मनुष्य गिरता है और पाँच बार इसकी आहुति अग्नि में पड़ती है । तब मानव शरीर मिलता है और फिर यहाँ आए फिर वही कर्म किया । फिर वहीं गए । इसलिए भगवान् श्रीराम ने अयोध्यावासियों से कहा- **देखिअ स्वर्ग अन्त दुःखदायी ।** स्वर्ग का सुख भी थोड़ा है और अन्त में दुःख देने वाला है । इनकी तो यह दशा हो गई । दूसरे जो विरक्त हैं वे उत्तरायण से जायेंगे ।

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम् ।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ।।

अग्नि, ज्योति, दिन, शुक्लपक्ष के छः मास इनमें जो जाते हैं वे ब्रह्मलोक में चले जाते हैं । ये उत्तरायण गति है । इसको शुक्ल गति कहते हैं । जब तक ब्रह्मा जी की आयु रहेगी तब तक वे भी रहेंगे। जब ब्रह्मा जी की आयु समाप्त हो जाएगी तो यह भी ब्रह्मा जी के साथ मरेंगे । फिर से इनको जन्म लेना पड़ेगा । इनका जो अमृतत्त्व है वह सापेक्ष है ।

इसके अतिरिक्त एक तीसरा रास्ता है जन्म लो और मरो । ऐसे लोगों के लिए जिन्होंने न अच्छे कर्म किए न बुरे कर्म । शास्त्र के अनुसार सत्कर्म नहीं किए । पाप और पुण्य बराबर हुए तो उनको लेने के लिए यमदूत आते हैं । एक प्राणी को लेने के लिए दो यमदूत आते हैं । यमदूत बड़े भयंकर होते हैं । खड़े-खड़े बाल, लाल-लाल आँखे और पैने-पैने दाँत । हाथ में पाश और मुद्गर लेकर आते हैं और जिनका मरने का समय होता है वहाँ आ जाते हैं ओर पहले से चक्कर लगाने लगते हैं । जैसे किसी की गिरफ्तारी का वारण्ट आ जाए तो बड़ी बेचैनी रहती है । कब आएगा ? कहाँ रहेगा ? कब पकड़ा जाएगा? इसलिए आप देखिये कि जब किसी के मरने का समय आता है तो कुत्ते रोते हैं । कौए रात को काँव-काँव करते हैं, सियार रोता है । इसका मतलब यह है कि उनको वे दिखते हैं । वे रोएँ तो समझ लो कि कोई न कोई मुहल्ले में मरने वाला है और फिर वह मर जाता है । कुत्तों में भी बड़ी शक्ति होती है । उन्हें दिखती है।

बीच में एक बात याद आ गई । एक मस्तराम बाबा थे । वृन्दावन में । वे बताया करते थे कि किसी सम्मेलन में एक बार उनको बुलाया गया । उस सम्मेलन में वे गए । लोगों ने उन्हें एक वकील के यहाँ ठहरा दिया। वह वकील नास्तिक विचार का था । अपनी गाड़ी में रोज उन्हें सम्मेलन में ले जाता था और फिर प्रवचन के बाद ले आता था । शाम

को गाड़ी जा रही थी । शिवालय में भगवान् शङ्कर की आरती हो रही थी और शङ्ख बज रहे थे । मन्दिर के बाहर कुत्ते रो रहे थे तो वकील बोला- देखा स्वामी जी ! हिन्दू जाति कितनी मूर्ख है ? पुजारी साफ-साफ उजाले में दिखा रहा है कि ये पत्थर है तब भी हिन्दू जाति के लोग इसको भगवान् मानते हैं और पूजा करते हैं । पहले पानी डालकर दिखा देता है कि देखिए यह भगवान् नहीं, पत्थर है । फिर भी जब आँख नहीं खुलती है तो उजाला करके दिखा देता है । हिन्दू लोग तो ऐसे ही मूर्ख होते हैं । इसपर कुत्ते भी रो रहे हैं । उसकी बात सुनकर मस्तराम जी बोले- नहीं, यह पहले जन्म का वकील था और इसने कभी शङ्कर जी की पूजा नहीं की थी । कुत्ते की योनि में गया है और आरती देखकर इसलिए रोता है कि हाय ! अगर मैंने भी मानव जन्म में इसकी पूजा की होती तो आज हमारी यह दशा नहीं होती । वह वकील निरुत्तर हो गया ।

जिनके पाप-पुण्य बराबर होते हैं उनको यमदूत ले जाते हैं । जब यमदूत ले चलता है तो अँगूठे के बराबर का शरीर बन जाता है और यह उसी प्रकार का बना होता है जैसे हमारा अपना शरीर है । यमदूत इसके गले में फाँस लगाते हैं । कहते हैं चल ! मरते समय उसकी आँखों में भी आँसू भरते हैं । कहते हैं कि –

लट्टो लगे चाहे नोनो जू गोनो तो एक दिन होनो जू ।

आए लेवैया लौटत नाहीं चाहे भर दो सोनो जू ।

भीतर गोरी माँग सजाए बाहर हो रहो रोनो जू ।

चार जना मिल खाट उठाए ले चल ले चल गोनो जू ।

जब यमदूत ले जायेंगे तब उसको लगेगी प्यास । कहेगा- 'पानी पिलाओ ।' तो वे बोलेंगे- 'तुमने कभी किसी प्यासे को पानी पिलाया था ?' तो कहेगा- 'अरे ये तो नहीं किया ।' तो कहेंगे- 'चलो प्यासे।' भूख लगती है तो जो भूखा होता है प्राणी तो कहता है- 'हमको भोजन दो ।' तो बोलते हैं- 'तुमने कभी भूखे को भोजन दिया था? कभी संन्यासी को खिलाया था ? कभी अन्नदान किया था ?' तो कहेगा- नहीं जी ! हमने तो दूसरे की थाली भी खींच ली थी ।' तो कहेगा कि चलो तुमको भोजन भी नहीं मिलेगा। चलता है और फिर चलते-चलते उसको सराय दिखाई देती है । जहाँ यात्री ठहरते हैं । वो कहता है कि- 'भाई ! थोड़ा विश्राम कर लेने दो । कहेंगे-'तुमने कोई मन्दिर बनवाया था ? कोई भवन दान किया था ? धर्मशाला बनवाई थी ?' तो कहेगा- 'नहीं । तो विश्राम से भी मना कर देते हैं फिर आगे बढ़ता है तो छायादार पेड़ दिखते हैं ।' तो कहता है कि-

'छायादार पेड़ में थोड़ा खड़े हो जाने दो ।' पूछते हैं कि- 'तुमने वृक्ष लगाए थे ? कहा- 'नहीं, हमने तो हरे-हरे कटवाए थे ।' तो कहा- 'चलो छाया भी नहीं मिलेगी ।' आगे बढ़ते-बढ़ते अँधेरा आ जाता है तो कहता है- 'प्रकाश दिखाओ ।' यमदूत कहते हैं- 'तुमने तुलसी के कोटर में दीपक जलाया था ? भगवान् की आरती उतारी थी और कार्तिक मास में दीप जलाया था ?' कहा- 'नहीं ।' तब कहते हैं अँधेरे में चलो ।

ऐसे चलते-चलते वैतरणी नदी आती है । वैतरणी नदी पापियों को दिखती है पीप और रक्त की धारा जैसी। पुण्यात्माओं को दिखती है दूध की धारा जैसी । अब यमदूत कहते हैं चलो इसमें, तुम पार करो और तुम्हारे कन्धे पर बैठकर हम भी पार करेंगे । अब वह डरता है कि कैसे करें? तो जिसने गौ-दान किया है उसकी गौ वहाँ आ जाएगी। पूँछ पकड़कर गाय को पार देगी । तुम भी पार हो जाओगे। गाय में यह विशेषता होती है कि उसको तैरना नहीं सिखाना पड़ता है । जैसे ही जन्मता है उसी समय तैरना जानता है । भैंस में यह बात नहीं, वह तो डूब जाएगी । गाय कभी डूबेगी नहीं । अब इतने के बाद यमपुरी में पहुँचे और यमराज के सामने खड़े हुए । तब वहाँ चित्रगुप्त आते हैं और बताते हैं कि इसने इतने पुण्य किए, इतने पाप किए। चित्रगुप्त की बात सुनकर आजकल के लोग कहते हैं कि कहाँ इतने बहीखाते कोई रखता है ? कितने जीव हैं और कब तक लिखेंगे ? परन्तु चित्रगुप्त का मतलब गुप्त चित्र होता है । तुम्हारे अन्तःकरण में चित्र लग जाता है । यहाँ भी ऐसा होता है न ? हम जो बोल रहे हैं यह सब रिकार्ड हो रहा है । इसी तरह से भगवान् ने एक ऐसा रिकार्डर बना रखा है कि और किसी को याद हो चाहे न हो तुम्हें तो है कि तुमने क्या किया है । उसी को यमराज पकड़ लेते हैं । यह गुप्त चित्र ही चित्रगुप्त है । फिर इसी के अनुसार अगर उसने पाप किए हैं तो वहीं रह जाएगा और यदि कुछ पुण्य किए हैं तो वह थोड़ी देर के लिए स्वर्ग चला जाएगा और बराबर के हों तो फिर मनुष्य योनि में आएगा। फिर माता के पेट में नौ महीने वास करता रहेगा ।

जन्ममृत्युजराव्याधि दुःखदोषानुदर्शनम् ।

यह तो और लोगों की गति हो गई । लेकिन जो भगवान् आराधक हैं भगवान् उसको मुक्ति की बात कर देते हैं । हम मुक्ति की बात कर रहे थे । कुछ लोग तो भगवान् के भक्त हैं । जो भगवान् कृष्ण के भक्त हैं वे गोलोक जायेंगे । शिव के भक्त कैलाश जायेंगे और वे सब विमान में बैठकर जाएंगे । कहते हैं-

आया है सो जाएगा राजा रंग फकीर । और यह बताया आगे कि-
एक सिंहासन चढ़ि चले एक बँधे जंजीर ।।

कुछ तो उत्तम आसन में, विमान में बैठकर जायेंगे और कुछ जंजीर से बाँधे जायेंगे। जिसने जैसा कर्म किया है । जो भगवती के भक्त हैं वे मणिद्वीप चले जायेंगे । वहाँ पर उनको सालोक्य मुक्ति मिलेगी ।

भगवान् के लोक में वह निवास करेगा । सालोक्य मुक्ति के साथ-साथ और जो अच्छा भक्त हुआ तो उसको सार्ष्टि मुक्ति मिलती है । जैसा देवी का ऐश्वर्य है छत्र, चँवर, नृत्य, भृत्य, भृत्य वो सब उनको मिलता है । कुछ भक्तों को सारूप्य मुक्ति मिलती है । जैसे भगवान् का स्वरूप है वैसा ही रूप उनका भी हो जाता है । उसके भी शंख, चक्र, गदा, पद्म और चार भुजाएँ होती हैं, कानों में कुण्डल, मस्तक पर मुकुट होता है । वे भी भगवान् के समान होते हैं । ये सारूप्य मुक्ति है और कुछ को सायुज्य मुक्ति, सामीप्य मुक्ति मिलती है । ये पाँच प्रकार की मुक्ति है । भगवान् अपने भक्तों को ये मुक्ति देते हैं पर भक्त कहता है कि महाराज ! हमको मुक्ति नहीं चाहिए। हमें तो आपकी भक्ति दे दो। ये मुक्ति भी नहीं चाहता ।

सालोक्य सार्ष्टि सारूप्य सामीप्यैकत्त्वमप्युत ।
दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ।।

भगवान् कहते हैं कि जो मेरे भक्त हैं वो मेरी सेवा छोड़कर मोक्ष भी नहीं चाहते । हम तो बस, आपकी सेवा करते रहें । और एक मुक्ति होती है कैवल्यमुक्ति । जो ज्ञानियों को प्राप्त होती है-

अति दुर्लभ कैवल्य परम पद । सन्त पुराण निगम आगम वद ।।

ये मुक्ति ज्ञानियों को प्राप्त होती है । जो सगुण उपासक हैं उन्हें सालोक्य, सायुज्य, सामीप्य, सार्ष्टि और सारूप्य ये सब मिलती है । उसको पाकर वह सदा-सदा के लिए आनन्दित हो जाता है । उसका पुनरावर्तन नहीं होता । उसका पतन भी नहीं होता । हाँ, कोई विशेष कारण आ जाए तो बात अलग है । जैसे जय-विजय का तो पतन हो गया था।

जय-विजय भगवान् के द्वारपाल थे । वैकुण्ठ में थे लेकिन उन्होंने गड़बड़ी क्या की ? सनत्कुमारों को भगवान् के दर्शन से रोक दिया । उन्होंने कहा- जाओ । आसुरी यानि में चले जाओ । शाप से उनको आसुरी योनि मिल गई । जब पतित होंगे तभी आसुरी योनि मिलेगी । वहाँ से गिराए गए । वैकुण्ठ से भी गिरते हैं । कहते हैं कि एक रमण वैकुण्ठ है अलग। ऊपर जो वैकुण्ठ है उनका नहीं, जो रमण वैकुण्ठ है वह । उस वैकुण्ठ

के जो जय-विजय है उनका पतन हुआ। उनकी दूसरी गड़बड़ी यह थी कि उन्होंने लक्ष्मी जी को भी एक दिन रोक दिया था भगवान् के यहाँ जाने से। तो भगवान् ने कहा- अच्छा! आप लोग बहुत बढ़ गए हैं। उन्होंने सोचा कि यदि लक्ष्मी जी के लिए कहेंगे तो कहेंगे कि ये पत्नी के इतने वश में हो गए हैं कि हमको भी निकाल रहे हैं। उनकी ऐसी लीला हुई कि वे सन्तों का अपमान कर बैठे, पर भगवान् ने कहा कि अगर इनको अधोलोक की प्राप्ति होगी तो हम भी जाएंगे। जय-विजय हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु बने तो भगवान् ने उनका उद्धार करने के लिए शूकर अवतार लिया और नरसिंह अवतार लिया और वही फिर अगले जन्म में रावण-कुम्भकर्ण बने तो राम का अवतार लेकर भगवान् ने उनका उद्धार कर दिया। तीसरे जन्म में वही शिशुपाल, दन्तवक्त्र बने तो उनके उद्धार के लिए भगवान् ने श्रीकृष्ण का अवतार लिया। अगर भक्त का पतन होता है तो भगवान् कहते हैं हम भी जायेंगे। भक्तों को फिर वहीं पहुँचा दिया जहाँ से वे निकाले गए थे।

तो यह है प्राणी के मरने के बाद की गति है, भगवद्भक्त है उनकी दुर्गति नहीं होती। मरने के बाद भगवान् के ही लोक में जाते हैं। यह बताया गया है-

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

जिन-जिन भावों का स्मरण करता हुआ प्राणी अपने शरीर का परित्याग करता है उस भाव से भावित होकर प्राणी उसी योनि को प्राप्त हो जाता है-

अन्तकाले या मतिः सा गतिर्भवेत्।

अन्तकाल में प्राणी की जैसी मति होती है वैसी ही गति हो जाती है। जो जिसका ध्यान करते हुए मरेगा वो वही हो जाएगा। इसलिए अन्तिम समय में बहुत सावधान रहना चाहिए। लोग बीमार पड़ते हैं, मरने की बात आती है तो कहते हैं- उसको तार दे दो, उसको बुला लो। सबको इकट्ठा करके बिठा लेते हैं और कहते हैं हमें पहचानते हो? अरे! तुम्हें क्या पहचाने? तुम्हे तो जिन्दगी भर पहचानते रहे। अब तो भगवान् को पहचानने का समय आ गया है। उनका स्मरण करना चाहिए। इनका स्मरण क्या करोगे? कितने जन्म ले लिए और किसका-किसका स्मरण करेंगे?

एक व्यक्ति हमको राजकोट में मिला था, गुजरात में। उसने कहा कि महाराज हमको पूर्वजन्म का स्मरण हो रहा है। हम पहले जन्म में द्वारका में जन्मे थे। वहाँ हमारे माता-पिता जिन्दा हैं और अब हम राजकोट में जन्में हैं। उनकी भी याद आती है और

इनकी भी आती है। यह तो भगवान् की कृपा है कि पहले जन्म पर उन्होंने पर्दा डाल दिया और यदि हमको सब जन्मों की याद आए तो कितनी औरतें खड़ी हो जाएंगी। कितने लड़के खड़े हो जाएंगे, कितने बाप और कितने माँ। कहाँ-कहाँ प्रेम करोगे ? तो ये भगवान् की कृपा है कि थोड़ा सा विस्मरण करा दिया। अब आपको अपने ऊपर कृपा करनी है कि सब भूल जाइए। केवल उनका स्मरण कीजिए। उनका स्मरण करते हुए शरीर का त्याग करेंगे तो उन्हीं के लोक में पहुँच जाएंगे। मौत तो नोटिस देकर आती नहीं। आजकल हार्ट अटैक से लोग मरते हैं। अब हम किस समय किसका स्मरण कर रहे हैं और हार्ट अटैक आ जाए कोई ठिकाना है। अब ये बिजली ही है। हम देख रहे हैं। कोई नोटिस देकर थोड़े ही गोल हो जाती है। इसी तरह शरीर की जो बिजली है वो गोल हो गई अचानक तो ?

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ।।

अतः सब कार्यों को करते समय मेरा स्मरण कर और अपने कर्त्तव्य कर्म को करता जा। अस्तु।

भगवान् ने अपने योग के लिए संसार के प्राणियों को अपनी ओर खींचने के लिए दया की। **योगमायामुपाश्रितः** अपने योग के लिए माया रची। मुझे यह प्राणी कैसे मिले इसलिए भगवान् ने यह रासलीला करने का मन किया। अभी-अभी एक व्यक्ति ने हमसे पूछा था कि महाराज ! भगवान् ने यह दुनिया क्यों बनाई ? प्रलयकाल में सोए थे। सोए ही रहते। यह क्या उपद्रव कर लिया ? नाना प्रकार का संसार बनाकर रख दिया। यह झगड़े की जड़ न बनाते तो अच्छा था। भगवान् ने तो बना दिया। हमने कहा- माँ भोजन दो। और उसके पास देने को कुछ था नहीं। वह बेचारी कुछ भी देने में असमर्थ थी और लड़का रोते-रोते सो गया। उसका मुँह कुम्हलाया हुआ था। इतने में उस माँ के पास गुलाब जामुन आ गया। अब उसका मन खाने का नहीं हो रहा है। उसने सोचा-इसको जगाऊँ पहले इसको खिलाऊँ। वह उसको जगाती है कि बेटा उठो। वो फिर फटकारता है। हम नहीं उठेंगे। हमको क्यों जगाती हो ? लेकिन माँ उसे जगाकर उसके मुँह में गुलाब जामुन डाल देती है और उसकी मिठास जब उसके मुँह में लगती है तब उसकी आँखे हर्ष से चमकती है। माता को तब संतोष होता है। इसी तरह से भगवान् हमारी माँ हैं। हम सोए थे। भगवान् ने हमारे कल्याण के लिए यह सारा संसार बनाया। रचना करके चौरासी लाख योनियों में श्रेष्ठ मानव शरीर बनाया। हाथ, पैर, आँख, कान दिए। अच्छे

कुल में जन्म दे दिया। क्या बुरा किया उन्होंने ? यह सब इसलिए दिया कि तुम आँख से सन्तों का दर्शन करो, कान से भगवान् की कथा सुनो, जीभ से उनका प्रसाद ग्रहण करो, हाथ से माता-पिता की सेवा करो, पैरों से उनके तीर्थ में जाओ, कथा सुनने के लिए सत्संग में जाओ । इसके लिए उन्होंने मानव शरीर दिया है । तुम इस तरह से भगवान् का साक्षात्कार करो और जन्म-मरण के चक्र से छूटकर मोक्ष का रसगुल्ला खाओ । इसके लिए भगवान् ने संसार की रचना की है । संसार में भटकने के लिए थोड़े ही की है । अब आप अपनी मर्जी से भटकें तो भगवान् का क्या कसूर है ?

इस प्रकार से जीवों के कल्याण के लिए और मुख्य रूप से श्रीराधारानी वृषभानुनन्दिनी के लिए उन्होंने लीला की। जब भगवान् की रासलीला होगी तो उस रासलीला को लोग सुनेंगे, उसका वर्णन करेंगे । भगवान् के चरणों में उनका चित्त लगेगा तो वे संसार से मुक्त हो जाएंगे । उनकी इच्छा को पूर्ण करने के लिए **योगमायामुपाश्रितः** भगवान् ने योगमाया का आश्रय लिया जो कि राधा हैं । वही लक्ष्मी हैं । बिना राधा के कृष्ण की उपासना नहीं होती । लिखा है-

गौरतेजःसमुत्सृज्य श्यामतेजःसमर्चयेत् ।
जपेद् वा ध्यायते वापि स भवेत् पातकी नरः ।।

भगवान् शंकर कहते हैं कि गौर तेज को छोड़कर जो श्याम तेज की पूजा या ध्यान करता है वह पातकी हो जाता है । गौरतेज राधा है । श्यामतेज भगवान् श्रीकृष्ण हैं । अदल-बदलकर नाना रूप धारण करते हैं भक्तों के लिए । भगवान् एक, रूप अनेक हैं- **एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति ।**

सत् एक है । ब्राह्मण उसे बहुत बताते हैं । कहीं-कहीं तो यह भी लिखा है-

कदाचिल्ललिता देवी पुंरूपा कृष्णविग्रहा ।

कभी-कभी ललिता महात्रिपुरसुन्दरी ही पुं रूप धारण करके कृष्ण बन जाती हैं और वंशी बजाकर जगत् को मोहित कर लेती हैं । कहीं-कहीं काली ही कृष्ण बन जाती हैं और शङ्कर जी राधा बन जाते हैं। राधा-कृष्ण का मिलाप हो जाता है । यह भगवान् की लीला है । ये पृथक्-पृथक् थोड़े ही है ।

जिनकी जैसी भावना होती है उसके अनुरूप वैसा ही रूप बनाकर आ जाते हैं । लेकिन शक्ति सर्वत्र है । नारायण के साथ लक्ष्मी है । ब्रह्मा के साथ ब्रह्माणी हैं । शङ्कर के साथ गौरी हैं । राम के साथ सीता हैं । कृष्ण के साथ राधा हैं और राजराजेश्वरी माता

के साथ श्रीराजराजेश्वर भगवान् परमशिव हैं। सब जगह शक्तियुक्त भगवान् की पूजा होती है। रास भी एक अनुष्ठान है। भगवान् ने इस अनुष्ठान के लिए मनुष्य के मन में उत्साह को बढ़ाने वाली उद्भावक सामग्री अपनी दृष्टि से, अपने ईक्षण से वहाँ प्रकट कर दिया।

दृष्ट्वा कुमुद्वन्तमखण्डमण्डलम् रमाननाभं नवकुंकुमारुणम् ।
वनं च तत्कोमलगोभिरंजितं जगौ कलं वामदृशां मनोहरम् ।।

जिस समय भगवान् ने मन किया **वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे** क्री क्रीणे धातु में आत्मनि पद में चक्रे बनता है। मन बनाया। मन पहले नहीं था तो अपने सुख के लिए मन निर्मित किया। चक्रे। मन बनाया और दूसरे अपने द्वारा दूसरों को सुख देने के लिए मन बनाया। बिना मन के तो फिर लीला होगी नहीं तो भगवान् ने जैसे ही मन बनाया तो भगवान् के जो पूर्वज थे चन्द्रमा वे भी उस समय आ गए। उस समय पुरुराज चन्द्रमा पूर्व दिशा से प्रकट हुए। प्राची दिशा उस समय अरुणवर्णा हो गई। मानो कोई नारी जिसका पति बहुत समय से परदेश गया हो और लौटकर आए और नवीन केसर अपने हाथ में लगाकर अपनी प्रियतमा के मुख को रंग दे। उसी तरह से मनो चन्द्रमा की किरणों ने प्राची दिशा को नव अरुण रंग से रंग दिया तो प्राची दिशा में अरुणोदय हुआ और पूर्ण चन्द्रमा का उस समय प्राकट्य हुआ।

यह भी एक चमत्कार की बात है। कमल के समान कुमुद और कमल के समान जो चन्द्रमा है **अखण्डमण्डलं** जिसका मण्डल अखण्ड है वह चन्द्रमा रमा के मुख के समान अरुण वर्ण का था। रमा लक्ष्मी के समान अरुण वर्ण प्राची दिशा पूर्व दिशा हो गई। अरुण वर्ण इतना व्याप्त हो गया। वन में, कि सारी मरुभूमि अरुण वर्ण की हो गई। उनकी कोमल किरणों से सारी वनभूमि रंजित हो गई। अरुण वर्ण हो गई। अब ऐसी स्थिति में भगवान् ने बाँसुरी बजाई। **जगौ कलं वामदृशां मनोहरम् ।**

किसी ने एक भजन सुनाया था कि-

बाँसुरी काहे को बजाई मैं तो आ रही थी ।

कृष्ण के पास आने के लिए उत्सुक थी। कहते हैं भगवान् ने वंशी इसलिए बजाई कि-

बिना शङ्कर की साधना के करोड़ों योग, जप साद्य लो इच्छित फल की प्राप्ति नहीं होती। भगवान् कृष्ण के इष्टदेवता शङ्कर जी हैं। पहले इष्टदेवता का स्मरण करो।

भगवान् ने सोचा कि कहाँ शङ्कर को ढूढ़ने जाएँ जंगल में ? तो वंशी को ही उलट दो तो शिवं हो जाता है । उसी वंशी में शङ्कर जी का आराधन कर लिया । वंशीरूपी शिव को अपने अधरपल्लव का आसन दिया और मयूरपिच्छ के मुकुट का मानो छत्र लगा दिया और कानों में रत्नजटित कुण्डल झूल रहे थे उन्हीं से आरती उतार दी । अधरामृत का नैवेद्य लगा दिया अपने कोमल अंगुलियों से वंशी छिद्रों को पीड़ित करने लगे तो मानों उन्होंने चरणों की सेवा कर दी ।

श्याम सुन्दर तेज से भरी जो गोपियाँ थीं उनके मन को हरण करने वाला कलगान कृष्ण ने बजाया ।कल शब्द में भी रहस्य है । पर आज देर हो गई । प्रवचन यहीं पूरा करते हैं ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[51]

।। राम राम इक्यावन ।।

भगवान् से प्रेम तपस्या का परिणाम है

समुपस्थित देवियो, सज्जनो !

जिसका जिस पर प्रेम होता है उसको उसके बिना कोई और नहीं दीखता। भरत जी जब राम जी को मनाने चित्रकूट जा रहे थे तब एक रात भरद्वाज मुनि के आश्रम, प्रयागराज में रुके थे । भरद्वाज मुनि ने भरत जी के लिये बहुत सुन्दर व्यवस्था की थी। पर भरत जी का मन तो रामजी में लगा था अतः उनको आश्रम का ऐश्वर्य अपनी ओर आकर्षित न कर सका । राम राम राम राम कहते हुए सारा समय, सारी रात्रि बिता दी।

संपति चकई भरतु चक्र मुनि आयस खेलवार ।
तेहि निसि आश्रम पिंजराँ राखे भा भिनुसार ।।

सम्पत्ति चकवी है और भरत चकवा । कहते हैं कुछ लोगों ने चकवी और चकवे के विरह को देखकर उनकी दशा पर व्यग्र होकर दोनों को एक ही पिंजड़े में पकड़कर रख लिया । यह विचार करके पिंजड़े को बन्द कर दिया कि अब तो अलग नहीं होंगे परन्तु जैसे ही सूर्यास्त हुआ चकवी का मुँह पूरब और चकवे का पश्चिम दिशा में हो गया । एक ही पिंजड़े में रहकर भी दोनों एक-दूसरे के लिए तड़पने लगे । कहते हैं कि मिलने पर भी मिले बिना ही रह गए ।

इसी तरह से भरद्वाज मुनि का आश्रम हुआ पिंजड़ा, भरत हुए चकवा और सम्पत्ति हुई चकवी । दोनों का मेल ही नहीं हुआ । दोनों एक-दूसरे से बिछुड़े से रहते हैं । एक बार सारस की पत्नी लक्ष्मणा ने चकवी से कहा कि 'तुम दोनों पति-पत्नी हो । दोनों दिन में तो साथ रहते हो, लेकिन भादों की अमावस्या की काली रात्रि को जब मेघ गरज रहे हों, चन्द्रमा का दर्शन न होता हो, जुगनू चमकते हों, बादल कड़कता हो तो उस अवस्था में तेरा हृदय विदीर्ण नहीं हो जाता अपने स्वामी के बिना ? तू जीवित कैसे रहती है? मेरा स्वामी यदि एक क्षण के लिए भी मुझसे अलग हो जाए तो मैं मर जाऊँगी ।' चक्रवाकी ने कहा- 'बहन लक्ष्मणा ! तू अत्यन्त सौभाग्यशाली है। तेरा प्रेम प्रशंसनीय है परन्तु रात भर विरह में तड़पने के पश्चात् सबेरे उनके दर्शन का जो सुख मुझे मिलता है वो तुमको सुलभ नहीं है । जब तक वियोग न हो तब तक संयोग का सुख न मिले । श्रीराधा जी

में दोनों चीजें हैं। विरह भी है और संयोग भी । श्यामसुन्दर से बिना मिले व्याकुल हो उठती हैं और श्यामसुन्दर का सम्मिलन भी उनको सदा मिलता रहता है । कभी दोनों अलग नहीं होते ।

भगवान् श्रीकृष्ण अनादि काल तक विहार कर रहे हैं । राधा का ध्यान करते-करते श्याम राधा हो जाते हैं और श्याम का ध्यान करते-करते राधा श्याम हो जाती हैं । दोनों में कौन श्याम है और कौन राधा है इसकी पहचान ही नहीं है । दोनों की पहचान होती ही नहीं है । दोनों विहार करते रहते हैं । जैसे जल में शीतलता, मधुरता और पवित्रता है उसी तरह यहाँ हमको लेना है प्यास ।

राजा पृथु भगवान् के परम भक्त थे । उनके यज्ञ में भगवान् ने स्वयं आकर दर्शन दिया और कहा- 'राजन्! वरदान माँगो । तो राजा पृथु ने कहा- भगवन् ! मेरे दस हजार कान बना दो । दो कानों से आपकी कथा सुनकर मुझको तृप्ति नहीं होती । आप दस हजार कान बना दें तो सुनते ही रहेंगे ।

जिनके श्रवण समुद्र समाना, कथा तुम्हारी सुभग सरि नाना ।
भरहिं निरन्तर होहि न पूरे, तिनके हृदय सदन तव रूरे ।।

वाल्मीकि जी कहते हैं भगवान् श्रीराम जी से कि महाराज ! आप मुझसे पूछ रहे हैं कि मैं कहाँ रहूँ ?

तो मैं आपको बताता हूँ । जिनका हृदय समुद्र के समान है और जो आपकी कथा है वो नदियाँ हैं । कथा श्रवण में जो डूब जाते हैं उनका हृदय कभी तृप्त नहीं होता । भगवान् की कथा सुनकर उनके मन में यह विचार नहीं आता कि हम तो पहले सुन चुके हैं, अब क्या सुनें ? 'हम तो कथा जानते हैं' ऐसा समझने वाला अभी कथा के रस को नहीं जानता ।

रामचरित जे सुनत अघाहीं। रस विसेष जाना तिन्ह नाहीं ।

जो भगवान् की कथा सुनकर अघा जाते हैं अभी उसका रस उन्होंने नहीं जाना । जहाँ प्यार होता है वहाँ अपने प्यारे की बात बार-बार सुनकर भी यह नहीं लगता कि हम तो सुन चुके हैं । चाहे बीसों बार सुन चुका हो पर फिर भी वह कहता है कि फिर से कहो, फिर से कहो । यहाँ श्रीराधिका जी को संतोष नहीं हुआ तो उन्होंने कायव्यूह की रचना की । अनेकों राधा बन गईं । सहस्र रूप धारण कर लिया और उनकी नखमणिचन्द्रिका से अनेकों गोपियाँ प्रकट हो गईं । वे सामने खड़ी हो गईं और फिर इतना ही नहीं, ब्रह्मा

जी की रात्रियों ने अनेकों वर्षों तक तपस्या की। श्रीमद्भगवद्गीता में बताया गया है कि-

सहस्रयुगपर्यन्तं अहर्यद् ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः।।

एक हजार युगों की एक रात्रि होती है ब्रह्मा की। कहते हैं एक हजार युग का मतलब एक हजार चतुर्युगी। सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग ऐसे हजारों बार जब ये युग घूम जाते हैं तब ब्रह्माजी की एक रात्रि होती है और इसी तरह से हजार बार चारों युग घूम जाते हैं तब उनका दिन पूरा होता है और ऐसे ब्रह्माजी के चौबीस घण्टे का एक दिन हुआ और तीस दिन का एक महीना हुआ। बारह महीने का एक वर्ष हुआ। अपने वर्ष के अनुसार ब्रह्माजी सौ वर्ष के होते हैं। उसके बाद वो मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। सृष्टि का प्रलय हो जाता है। फिर ब्रह्मा जी की उत्पत्ति होती है। अभी जो वर्तमान ब्रह्मा है **ब्रह्मणो द्वितीय परार्धे** इक्यावन वर्ष के ब्रह्माजी हो गए हैं। अभी उन्चास वर्ष बाकी है। यही सृष्टि का क्रम है। दूसरे लोग इसे क्या समझेंगे ?

कोई कहते हैं ईसा मसीह से चार-पाँच हजार वर्ष पहले सृष्टि हुई है। सृष्टि बनी, लेकिन यह तो करोड़ों वर्ष की बात है। रामसेतु आज का थोड़े ही बना है। नासा कहती है १७ लाख वर्ष पुराना है। कोई कहता है प्रकृति ने बनाया है, तरंगों से बना है। प्रकृति ने यदि बनाया है तब भी तो ये बड़ी चीज है। क्या प्रमाण है तेरे पास ? तू था उस समय ? देखा है कि प्रकृति ने बनाया है या किसी व्यक्ति ने बनाया है ? कहने का मतलब यह है कि सृष्टि बहुत पुरानी है। आदि शङ्कराचार्य भगवान् के गुरु गोविन्दपादाचार्य की गुफा नर्मदा के किनारे सांकल घाट में हैं। वहाँ जो गुफा बनी है उसको देखकर विद्वान् लोग कहते हैं कि यह कम से कम दस लाख वर्ष पुरानी है। सृष्टि यदि आज की होती तो ये दस लाख वर्ष पुरानी कैसे होती ? उस समय गोविन्दभगवत्पादाचार्य जी शङ्कराचार्य को ढूँढ़ रहे थे और शङ्कराचार्य जी वहाँ पहुँच गए। बड़ी लम्बी कथा है, इसे बाद में कहेंगे।

कहने का तात्पर्य यह है कि श्रीराधिका जी को जब दो नेत्रों से संतोष नहीं हुआ तो उन्होंने अनेकानेक देह धारण कर लिए। इसी को कहते हैं कायव्यूह। योगियों को ये सिद्धि होती है कि वे अपनी इच्छा से अनेकों रूप धारण कर लेते हैं। बहुत से योगी शेर या मृग बनकर घूमते रहते हैं। कोई उनको पहचान नहीं पाता। लोग देखकर कहते हैं जानवर चला जा रहा है। योगी अपनी इच्छा से कोई भी शरीर बना लेते हैं। इसी तरह से कभी-कभी एक ही शरीर के करोड़ों शरीर बना लेते हैं और करोड़ों जन्मों के पुण्य-पाप का फल भोगकर एक ही जन्म में उनको क्षय करके मुक्त हो जाते हैं। जैसे

योगी कायव्यूह बना लेते हैं उसी तरह से राधा जी ने कायव्यूह बनाया और बता रहे थे कि ब्रह्माजी की जो रात्रियाँ हैं वे एक रात्रि नहीं अनेकों रात्रियों ने मिलकर तपस्या की और भगवान् से वरदान माँगा कि हमारे भीतर आप रासलीला करें । क्षपाः माने यहाँ बहुवचन है । एक रात्रि की बात नहीं है । अनेकों रात्रि ब्रह्मा की बीत गई । ये लीला उनकी निरन्तर चल रही थी । उस सुख से तृप्ति नहीं हुई। किसी की तो सब के सब सामने खड़ी हो गई । महाराज ! अब लीला का समय आ गया है । अब पधारो ।

कुंजन में पधारो श्याम छाए बदरा ।

आपने सुना होगा कि बादल छा गए । अब चलो कुंजन में । इसी तरह से ब्रह्माजी की रात्रियाँ आकर खड़ी हो गईं कि आप आइए और हमारे भीतर रासलीला करके इसका सौभाग्य हमको प्रदान कीजिए । **ता रात्रीः** ता माने सुख । तृष्णात्मक सुख को धारण करने वाली । यहाँ भगवान् ने कहा- **ता** से कई अर्थ लिए गए हैं । जो अज्ञानी जन हैं उनको देखकर भगवान् ने सोचा कि हम लीला करेंगे तो हमारी लीला के श्रवण-वर्णन से उनका उद्धार हो जाए इसीलिए लीला आवश्यक है । भगवान् विविध प्रकार की लीलाएँ क्यों करते हैं ? अब आपके सामने भगवान् का एक ही चित्र आता रहे तो आप ऊब जाएंगे । परन्तु यदि नित्य नई लीलाएँ हो रही हैं तो आपका मन भी लगेगा । नित्य नवीन लीला में उनका रास भी है । उस रासलीला का दर्शन करके अज्ञानी प्रजा को सुख मिले। इसीलिए भगवान् ने लीला करने का मन किया और दूसरी बात **शरदोत्फुल्लमल्लिकाः** शर माने बाण । बाण जैसे बेध देता है उसी तरह से जिन लोगों को संसार के भोग बाण के समान चुभने वाले प्रतीत हो रहे हैं, संसार से विमुख प्राणी जो भगवद्भक्ति का ही सुख प्राप्त करना चाहते हैं उनको सुख कैसे मिले ? इन्द्रियाँ नहीं होगी तो सुख कैसे मिलेगा ? बाणों के समान जिनको संसार के सुख लगते हैं या फिर एक बात और है कि जिनको संसार के सुख नहीं सुहाते । **मल्लिका** माने सुन्दर पुष्प । उनको सुख देने के लिए भगवान् लीला करते हैं और लीला के लिए बहुत सी सामग्रियाँ अपेक्षित हैं । रात्रि चाहिए, समय चाहिए, गोपियाँ चाहिए, पूर्ण चन्द्रमा हो, शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा हो, सुन्दर वन भूमि हो और इस बीच में कोई विघ्न बाधा न उत्पन्न हो । ये सब तभी सम्भव है जब भगवान् उन सबको सुलभ कर सकें ।

भगवान् ने उस समय लीला करने के लिए वीक्षण किया । वीक्षा माने विशेष रूप से इच्छा करना या देखना। भगवान् संसार की रचना करते हैं कैसे करते हैं ? जिस प्रकार कुम्हार हाथ से घड़ा बनाता है वैसे नहीं करते । वे तो बस देखते हैं और देखने मात्र से

संसार की रचना कर देते हैं। **तदैक्षत** उस परमात्मा ने देखा **एकोऽहं बहुस्याम प्रजायेय** मैं एक हूँ अनेक हो जाऊँ। तो बहुभवन का संकल्प उनके वीक्षण से होता है। इसलिए वाचस्पति मिश्र ने भगवान् के सम्बन्ध में बताया है कि परमात्मा कैसे हैं ? कैसा उनका अपार वैभव है ? भगवान् योगनिद्रा में सोए-सोए श्वाँस छोड़ते हैं। श्वाँस कहते हैं लेने को और निःश्वास कहते हैं श्वाँस छोड़ने को। भगवान् के निःश्वास से सांगोपांग वेद का प्रादुर्भाव हुआ। चारों वेद जिनके निःश्वास हैं। अनायास निःश्वास से वेद निकले। किसी ग्रन्थ की रचना करना होता है तो सोचना पड़ता है। यहाँ तो सोचने का काम ही नहीं। श्वाँस से वेदों का प्राकट्य कर दिया। **यस्य निःश्वसितं वेदाः** और भगवान् योगनिद्रा से पहले तो आँख मूँदे थे, अब आँख खोलकर देखते हैं तो आकाश, जल, वायु, अग्नि और पृथ्वी पाँच तत्त्व बन जाते हैं। इन पाँच तत्त्वों के सात्विक अंश से मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार उत्पन्न हो जाता है और आँख, नाक, कान, जीभ त्वक् व्यष्टि सात्विक अंश से बन जाते हैं। त्वक् आदि इन्द्रियाँ और समष्टि राजसिक अंश से प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान बनते हैं। व्यष्टि से वाणी, हाथ, पैर, उपस्थ, गुद आदि इन्द्रियाँ बन जाती हैं और जो तामसिक अंश हैं पंचमहाभूतों का उनका पञ्चीकरण हो जाता है। पञ्चीकृत पञ्चमहाभूतों से अनन्त ब्रह्माण्ड केवल भगवान् के मुस्कुराने से बन जाते हैं। देखने से भूतों की उत्पत्ति और मुस्कुराने से अनन्त ब्रह्माण्ड ओर वे इतने सुकुमार हैं कि आँख खोलने और मुस्कुराने में ही थक जाते हैं और थककर जैसे ही आँखे मूँदते हैं **यस्य च सुषुप्तिर्महाप्रलयः** तो प्रलय हो जाता है। इस संसार की रचना करने का सामर्थ्य परमेश्वर में है। ये कौन है जो रासलीला कर रहा है ? भगवान् है।

उत्पत्ति च विनाशं च भूतानां अगतिं गतिम्।
वेत्ति विद्यामविद्यां च स वाच्यो भगवानिति ।।

उत्पत्ति, विनाश, प्राणियों का आना-जाना, विद्या, अविद्या सबको करने वाला वो भगवान् है।

जो मल्लिका नाम की लता है उसमें वसन्त ऋतु में फूल खिलते हैं। यहाँ शरद ऋतु है तो **शरदोत्फुल्लमल्लिका।** भगवान् ने अपनी इच्छा से शरद में ही मल्लिकाओं को पुष्पित कर दिया। **भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फल्लमल्लिकाः।**

यहाँ तीन रात्रियां हो गईं। भगवान् ने तीनों को देखा। एक तो ब्रह्माजी की रात्रियों को देखा, दूसरे गोपियों को देखा और तीसरे शरद ऋतु में मल्लिका को पुष्पित देखा। **भगवानपि ता रात्रीः वीक्ष्य** उन रात्रियों को भगवान् ने देखा। **रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाश्रितः**

तो भगवान् ने इन सबको देखा और **मनश्चक्रे** मन किया। यहाँ पर विद्वानों ने कहा है कि भगवान् बिना मन के हैं ।

भगवान् के न प्राण हैं, न मन है । शुभ्र है पर जो अक्षर हैं उनसे भी परे हैं । अक्षर माने माया उससे भी परे हैं । मन था ही नहीं इनके पास । तो इन्होंने लीला करने के लिए मन बनाया । **योगमायामुपाश्रितः** इसके भी कई अर्थ हैं । यहाँ योगमाया से राधारानी को लिया जाएगा । राधारानी योगमाया हैं तो कृष्ण का योग कराने वाली श्रीकृष्ण से मिलाने वाली जो शक्ति है वो योगमाया है । वे कौन हैं ? राधारानी वृषभानु-नन्दिनी का आश्रय लिया । उनकी इच्छा थी कि मैं कृष्ण के साथ रास करूँ और मेरे साथ मेरी जो सखीजन हैं वे मेरी स्वरूपभूता हैं उनको भी आनन्द प्राप्त हो और यही नहीं । आगे चलकर भी जो मेरी नित्यलीला का श्रवण वर्णन करेंगे उनको भी कृष्ण की प्राप्ति होगी। भगवान् की लीला का श्रवण-वर्णन भगवान् की प्राप्ति का हेतु माना गया है ।

किसी कवि ने कहा है कि हे कृष्ण ! जो तुम्हारी नवनीत चोरी की कथा कहता है कि तुम कैसे माखन चुराते हो और व्रज युवतियों के साथ तुम कैसे रास रचाते हो इसकी कथा जो करता है वो मुक्त हो जाता है । आप सोचते हैं कि ये तो मेरा भाण्डा फोड़ी कर रहा है । भगवान् का एक नाम भक्तों ने चोरजारशिखामणि भी रखा है । कृष्ण भगवान् चोर हैं ।

व्रजे वसन्तं नवनीतचौरं गोपांगनानां च दुकूलचौरं ।
अनेकजन्मार्जितपाप चौरं चौराग्रगण्यं पुरुषं नमामि ।।

जो ब्रज में रहकर माखन चुराते हैं, गोपांगनाओं का दुकूल माने वस्त्रों को चुराते हैं और इतना ही नहीं अनेक जन्मों में जिन लोगों ने पाप किए हैं उन पापों को चुरा लेते हैं ऐसे चौराग्रगण्य हैं उनको प्रणाम है । **जरयति परलोकं सा जारा ।** जो लोक को जरा दे । जो लोक को अपकीर्ति बना दे । परलोक को बिगाड़ दे उसका नाम जार है लेकिन कृष्ण कैसे जार हैं ? यदि कृष्ण का प्रेमी हो जाए तो-

जरयति अविद्या ग्रन्थिं प्रायति पंचकोशकण्टकम् ।

जो अविद्या की गाँठ है उसको जला दे उसको जीर्ण-शीर्ण कर दे । ये साधारण जार नहीं है । जिसका श्रीकृष्ण से प्रेम हो जाए ऐसे चोर का कल्याण है । भगवान् की जितनी लीलाएँ हैं सब दिव्य हैं । भगवान् ने श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है- **जन्म कर्म च मे दिव्यं एवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।**

हे अर्जुन ! जो मेरे दिव्य जन्म-कर्मों को तत्त्वतः जानता है वह देह का त्याग करने के पश्चात् पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता, मुझको ही प्राप्त हो जाता है। बात क्या है ? चोरी तो बहुत बुरी चीज है। चोरी की कथा से कहीं मोक्ष होता है ? चोर लोग चोरी की कथा किया करते हैं। लेकिन व्यास गद्दी पर बैठकर चोरी की कथा थोड़े ही की जाती है। यहाँ देखना है कि किसकी चोरी है ? एक चोरी जो कृष्ण की है। कोई चीज अपने आश्रय से बुरी होते हुए भी अच्छी हो जाती है। चुराने वाला कौन है ? कृष्ण है। बस चोरी प्रसिद्ध हो गई। ये साधारण चोरी नहीं है। माता यशोदा के द्वारा कृष्ण का लालन-पालन और दही-माखन का खिलाया जाना देखकर गोपियाँ मन में भावना करती है और भगवान् के सामने अपना आँचल पसारकर ये वरदान माँगती है कि हे सूर्यनारायण! हमारे घर भी आयें और खाएँ। तब कृष्ण पहुँचते हैं चोरी करने। साधारण बात थोड़े ही है। जब वहाँ पहुँचते हैं तो वे कहती हैं कि तुम यहाँ क्यों आए ? कभी-कभी प्रेम में भी ऐसा हो जाता है। ये बात तो रस की दृष्टि से हैं। नवनीत की चोरी यदि कृष्ण की है तो चोरी की कथा कहने वाला और कथा सुनने वाला दोनों ही मुक्त हो जाते हैं। आज इतना ही।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[52]

।। राम राम बावन ।।

कर्म की गति बड़ी गहन है

गीता श्रीमन्नारायण के अवतार भगवान् श्रीकृष्ण के मुखकमल से निःसृत है। गीता का यदि किसी को ज्ञान हो जाए तो उसका जीवन सार्थक हो जाता है। थोड़ा सा भी यदि कोई गीता का अध्ययन या श्रवण कर ले तो उसका पापक्षय होता है। यदि किसी के मन में गीताशास्त्र के प्रति श्रद्धा मात्र हो, दूरदृष्टि न हो तो भी केवल यदि वह गीता का श्रवण करता है तो वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है। भगवान् ने स्वयं कहा है- 'हे अर्जुन! तुम्हारे और मेरे संवाद का जो अध्ययन करता है वह मानो ज्ञान यज्ञ से मेरा अर्चन करता है।' इसलिए यह गीता ज्ञान यज्ञ कहलाती है।

अर्जुन को पाप का भय हो गया था। जब उसने देखा कि मेरे सामने जो युद्ध का कर्त्तव्य है, जो युद्ध मुझ पर थोप दिया गया है, मुझे इसमें अपने स्वजनों को ही मारना पड़ेगा। भीष्म पितामह एवं द्रोणाचार्य पर बाण चलाना पड़ेगा तो वह संन्यास लेने के लिए तैयार हो गया। अर्जुन स्वजनों को बिना मारे संन्यास लेकर जीवन यापन करना चाहता है लेकिन शस्त्र उठाना नहीं चाहता। अर्जुन के मोहग्रस्त होने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने उसे कर्म की गति को समझाया और कहा- 'कर्म के तत्त्व को जानना चाहिए। विकर्म के तत्त्वों को जानना चाहिए और अकर्म के तत्त्वों को भी जानना चाहिए क्योंकि कर्म की गति बड़ी गहन होती है।'

चार पण्डित चले जा रहे थे। उन्हें जंगल में एक कुँआ दिखाई दिया। संध्या का समय था। पण्डितों ने स्नान किया और संध्या करने लगे। इतने में एक पनिहारिन आई उसने अपना घड़ा भरा और माथे पर रखकर जाने लगी। उसके मुख से एक श्लोक निकला।

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः ।।

पण्डितगण महिला के पीछे गये और पूछा कि इस श्लोक का अर्थ बताओ। शब्दार्थ तो हम समझ गये हैं भावार्थ बताओ। उसने कहा- आप मेरे पीछे-पीछे आइये, थोड़ी देर में मैं सिंह की दहाड़ से मर जाऊँगी, मेरे पेट का बच्चा बाहर हो जाएगा। यही कर्म की

गति है। तुम लोगों को यदि श्लोक का अर्थ समझना हो तो छः साल बाद एक वन में जाना तुमको हिरण का जोड़ा मिलेगा वही इसका अर्थ बताएगा। पनिहारिन आगे बढ़ी। देखते-देखते सिंह ने दहाड़ मारी। पनिहारिन के हाथ से पानी का घड़ा धरती में गिर गया और उसके पेट का बच्चा खिसक गया। माँ भी मर गई और बच्चा भी मर गया। पण्डितों को बड़ा आश्चर्य हुआ। घूमते-घूमते वे पण्डित वन में गये। वन में उन्हें हिरण का जोड़ा मिला, पण्डितों ने उससे पूछा-श्लोक का अर्थ बतलाइए। हिरण ने कहा- आज से सोलह वर्ष बाद अमुक राजा का राजकुमार तुम्हे इसका अर्थ बतलाएगा। पण्डित लोग घूमते-घूमते उस राजा के राज्य में गये। वहाँ के राजकुमार का विवाह होने वाला था। पण्डितों ने पूछा-

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः ।।

राजकुमार बोला- महाराज ! वह जो पनिहारिन थी, वह हमारी माता थी, वह हिरण के जन्म में हमारी स्त्री बनी और अब फिर हमारी स्त्री बनने जा रही है। **गहना कर्मणो गतिः**। यह कर्म की गति है। कर्म के अनुसार मनुष्य का कब कहाँ जन्म हो जाए कोई नहीं जान सकता।

जीव चौरासी लाख योनियों में कर्म के कारण भ्रमण कर रहा है। चौरासी लाख योनियों में घूम-घूम कर अपने कर्म का फल भोगता है। अन्त में इसको मानव शरीर मिलता है। अकारणकरुण करुणावरुणालय सर्वशक्तिमान भगवान् श्रीकृष्ण जीव पर दया करके मानव शरीर देते हैं।

एक सज्जन ने हमसे पूछा की महाराज ! एक तरफ तो आप कहते हैं कि कर्म के अनुसार मनुष्य का जन्म होता है और दूसरी तरफ आप कहते हैं कि भगवान् की कृपा से मनुष्य को शरीर मिलता है। दोनों ही बातें विचित्र हैं, विपरीत हैं। या तो कर्म मानिए या तो कृपा मानिए। हमने कई विद्वानों से इसका उत्तर पूछा- परन्तु इसका सम्यक् उत्तर नहीं मिल सका। हमने कहा- इसे एक दृष्टान्त से समझो।

एक बार कहीं परीक्षा हो रही थी। परीक्षा के पेपर विद्यार्थियों को बाँटे जा रहे थे। पेपर में दो सवाल थे और उसमें लिखा था दोनों में से एक का उत्तर लिखो। एक विद्यार्थी स्वयं को बहुत होशियार समझता था। उसने दोनों के उत्तर लिखे और नीचे नोट लिख दिया कि दोनों में से एक जाँच लो, संयोग से उसका एक उत्तर सही था और एक गलत। परीक्षक यदि चाहता तो गलत उत्तर जाँचकर विद्यार्थी को फेल कर सकता था, परन्तु

उसने सही उत्तर जाँचा और उसे पास कर दिया । अब बताओ कि यह कृपा हुई कि नहीं? जीव के जन्मजन्मान्तर के अनेकों कर्म थे, जिनमें से पुण्य कर्मों को चुनकर भगवान् ने आपको पास कर दिया अर्थात् मानव देह दिया। यही हुई भगवद्कृपा ।

कर्मों का फल तो ईश्वर देता है । कर्म जड़ है । सबसे पहली बात तो यह है कि मनुष्य को मरना पड़ता है और कोई भी मरना नहीं चाहता । मरने से सब डरते हैं । एक बुढ़िया थी, वह रोज जंगल से लकड़ी इकट्ठा कर सिर पर बोझ रखकर बाजार में बेचती थी । उसी से अपना उदर पोषण करती थी । एक दिन वह जंगल गई, लकड़ी इकट्ठा किया, बोझ बनाया पर बोझ उससे सँभला नहीं । बोझ भी गिरा और बुढ़िया भी गिरी। दुःख के साथ बुढ़िया बोली, क्या करूँ मौत भी नहीं आती, इतने में मौत सामने आकर खड़ी हो गई । बुढ़िया ने पूछा- तुम कौन हो ? उसने कहा- मैं मृत्यु हूँ । बताओ ! क्यों बुलाया है ? बुढ़िया काँपते हुए बोली- ये बोझ मेरे सिर पर रख दे, इसीलिए बुलाया है। सभी को न चाहकर भी मरना पड़ता है । राजा-रंक, यती-सती सबको मरना पड़ता है। कोई विमान में बैठकर जाते हैं तो कोई यमदूतों द्वारा रस्सी से खींचकर ले जाए जाते हैं। लेकिन जाना सबको पड़ता है । मौत बड़ी भयंकर होती है । उससे सभी आतंकित रहते हैं । आज विज्ञान इतना अधिक बढ़ गया है, परन्तु मौत से कोई किसी को नहीं बचा पाया। मौत के पहले बुढ़ापा आता है । बुढ़ापा कितना दुःखद है । जरा देखिए-

अंग गलित हो जाते हैं, बाल सफेद हो जाते हैं, मुँह में एक भी दाँत नहीं होते, बुढ़ापे में दो पैर की जगह तीन पैर (दो पैर और एक लाठी) हो जाते हैं । प्राणी जब तक धन कमाकर लाता है तभी तक घर में उसकी इज्जत होती है, नहीं तो कोई ध्यान नहीं देता। बूढ़ा व्यक्ति यदि पानी माँगे तो लोग कहते हैं हाथ-पैर टूट गए हैं क्या? बहुत कम लोग हैं जो अपने घर में आने वाले लोगों का स्वागत करते हैं। यदि करते भी हैं तो कहते हैं आइये जी, लीजिये टी, पकड़िये रोड । बन गया जी.टी. रोड । कोई घर में किसी को टिकाना नहीं चाहता ।

एक दम्पति थे । उनके घर एक मेहमान आया । उन्होंने उस मेहमान की खूब खातिरदारी की । उनके घर में मेहमान को सुख मिला तो वह जाने का नाम ही न ले । दोनों ने सोचा कि कैसे भगायें ? एक दिन पति-पत्नी लड़ पड़े । पति ने कहा-क्या भोजन पकाती हो ? कभी नमक ज्यादा, कभी कम, यदि पकाना नहीं आता तो मायके चली जाओ । पत्नी बोली- तुम्हें तो होटल का खाना ही पसन्द है, वहीं चले जाओ। दोनों चल दिये । कुछ देर बाद लौट आये और आपस में बात करने लगे । देखो, कैसा अच्छा उपाय

निकाला कि मेहमान चला गया। पत्नी बोली- हम मायके थोड़े ही गये थे, पति बोला- हम भी होटल नहीं गये थे। इतने में मेहमान आ गया और बोला- हम भी थोड़े ही गये हैं। जिस प्रकार मेहमान पीछा नहीं छोड़ते वैसे ही बुढ़ापा पीछा नहीं छोड़ता। कहते हैं कि जवानी जाकर नहीं आती और बुढ़ापा आकर नहीं जाता। प्रियजनों का वियोग, शरीर का रोग एवं चिन्तायें मनुष्य के साथ जुड़े रहते हैं। बुद्धिमान लोग चाहते हैं कि जन्म ही न हो। लेकिन जब तक कर्म रहेगा, उसका फल भोगने के लिए जन्म लेना ही पड़ेगा।

कर्म से कैसे छुटकारा पाया जाये ? एक प्रश्न है कि यदि कर्म न हो तो क्या हम कर्मबन्धन से छूट जायेंगे? कर्म नहीं करेंगे तो विकर्म हो जायेगा। विकर्म माने शास्त्र विरोधी कर्म। आपके घर कोई आये तो आपका कर्त्तव्य है कि आप उसका स्वागत करें। उसे आसन दें, और पानी पूछें। कोई आता है और आप उससे यदि बात भी नहीं करते तो यह विकर्म हो गया। संध्या करनी चाहिये, न करें तो हो गया विकर्म। कर्म का त्याग नहीं हो सकता। भगवान् श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं कि- 'कोई भी प्राणी बिना कर्म के क्षण मात्र भी नहीं रह सकता। आँख खोलना यदि कर्म है तो आँख मूँद लेना भी कर्म है। चलना यदि कर्म है तो बैठना भी कर्म है। कर्म का त्याग नहीं हो सकता।' तो कर्म से छुटकारा कैसे पायेंगे ? तो बताया कि पहले कर्म और विकर्म को समझो। आज धर्म की लड़ाई हो रही है। हमें अपने-अपने कर्त्तव्य को जानना चाहिये। ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य, स्त्री, पुरुष, पिता, पुत्र सभी के अपने-अपने कर्त्तव्य हैं। उन कर्त्तव्यों का पालन ही कर्म है। इसी को धर्म कहते हैं। इसी को समझने का साधन शास्त्र है। शास्त्र जिसको करने का आदेश देता है वही धर्म है और जिसको करने से रोकता है वह अधर्म है। भगवान् ने कहा- अधर्म मत करो। आप देखिये, मनुष्य जिनके बीच बैठता है, जिनकी बातें करता है, उसकी बुद्धि वैसी ही हो जाती है। आप लोग यहाँ गीता का प्रवचन सुन रहें हैं, सत्संग कर रहे हैं। जितनी देर आप सत्संग में हैं उतनी देर आप दुस्संग से बचे रहेंगे। इसी तरह से यदि शास्त्रोक्त कर्म करेंगे तो शास्त्र विरोधी कर्मों से बच सकते हैं। ईशावास्योपनिषद् में लिखा है कि जो अपने को नर मानता है। सौ वर्षों तक जीने की इच्छा रखता है। वह कर्म करते हुए ही जिये। यदि तू कर्म करते हुए जियेगा तो अशुभ कर्म से मुक्ति पायेगा। अपने कर्म के पालन से हम अशुभ कर्म से छूट जायेंगे। अशुभ कर्म से छूटेंगे तो नरक से बच जायेंगे। मरने से तो नहीं बचेंगे परन्तु उत्तम लोक में, स्वर्ग में जायेंगे। परन्तु जब हमारे पुण्य क्षीण हो जायेंगे तो हमें पुनः जन्म लेना पड़ेगा।

जिस प्रकार कोई व्यक्ति पैसे लेकर विदेश जाए, बढ़िया होटल में ठहरे तो कब तक

ठहर सकता है ? जब तक उसके पास पैसे हों, तभी तक रह सकता है । जब तक हमारे पुण्य प्रबल रहेंगे, तभी तक कल्पवृक्ष हमारी इच्छाओं को पूरी करेगा । पुण्य क्षीण हो जाने पर आप वहाँ से भी ढकेल दिये जाओगे। इस प्रकार पुण्य कर्मों से भी हमारी मुक्ति नहीं हो सकती ।

दो प्रकार के कर्म गीता में बतलाये गये हैं । काम्य कर्म और निष्काम कर्म । जब मनुष्य जन्म लेता है तो उसपर जन्म लेते ही तीन ऋण हो जाते हैं- देवऋण, ऋषिऋण और पितृऋण । यज्ञ करने से देवऋण, वेद पढ़ने से ऋषिऋण और संतान उत्पन्न करने से पितृऋण से मुक्त हुआ जा सकता है । इन तीनों को पूरा करने के लिये जो धारा हमें आगे बढ़ाती है वह काम्यकर्म है । निष्कार्म कर्म उसे कहते हैं जिसमें कर्म करो और उसका फल भगवान् के चरणों में अर्पित कर दो । जो व्यक्ति परमात्मा में अपने कर्मों का फल अर्पण करके आसक्ति छोड़कर कर्म करता है वह पापों से मुक्त हो जाता है । फल की इच्छा रखने वालों को कृपण कहते हैं ।

एक दृष्टान्त देखिये- एक किसान था । वह खेत में हल चला रहा था । अचानक उसे एक चमकीला पत्थर मिला । उसने समझा कि वह हीरा है । वह लम्बी-लम्बी डग भरता हुआ घर की ओर जाने लगा । रास्ते में उसे एक परिचित महात्मा जी दिखाई दिये। उसने सोचा कि महात्मा जी ने यदि देख लिया तो हीरा उन्हें देना पड़ेगा। उसने अपना रास्ता बदल दिया । महात्मा जी फिर उसी रास्ते में मिल गये, किसान ने कहा- महात्मा जी ! आज मुझे बहुत काम है, जल्दी जाना है, किसी और दिन सत्संग करुँगा । महात्मा जी ने कहा- कहीं नहीं जाना, चलो मेरे पीछे । महात्मा जी किसान को एक दिव्य देश में ले गये, जहाँ सोने की दीवारें थी । मणियों की सीढ़ियाँ थीं। हीरे जवाहरात के झूमर लटक रहे थे । किसान यह सब देखकर आश्चर्यचकित रह गया । महात्मा जी ने उससे कहा-मेरे पास यह दिव्य देश है । पर मैं इसे उसी व्यक्ति को दूँगा जिसकी मुट्ठी खाली रहेगी ।

किसान की तरह ही जीव जन्मरूपी हीरे को लेकर कर्म कर रहा है । संत-महात्मा कहते हैं-सत्संग करो। परमात्मा का साक्षात्कार कर लेने पर आनन्द मिलता है । वह आनन्द तुमको तभी मिलेगा परन्तु यह कामना समाप्त ही नहीं होती ।

कर्म करो लेकिन उसका फल भगवान् को अर्पित कर दो । लोग कहते हैं कि यदि हम फल भगवान् को अर्पित कर देंगे तो हमारे पास क्या रहेगा ? एकादशी का व्रत हमने किया, भूखों हम मरें और फल भगवान् को अर्पित कर दें ? यह कैसा न्याय ? लेकिन

समझिए कि जब आपके पास रुपया आता है तो आप उसे बैंक में जमा कर देते हैं तो उसका ब्याज आपको धीरे-धीरे मिलता रहता है। भगवान् को फल अर्पित कर देते हैं तो हम कभी भी घाटे में नहीं रहते।

एक दृष्टान्त और देखिये। हस्तिनापुर में युधिष्ठिर थे। महाभारत का युद्ध समाप्त हो चुका था। युधिष्ठिर ने सोचा कि स्वजनों को मारकर हमने जो पाप किया है उसका प्रायश्चित यदि कर लें तो पाप मिट जाएगा। अपने किए गए पाप का प्रायश्चित यदि मनुष्य यहीं कर ले तो उसका पाप यहीं मिट जाता है, नहीं तो जब प्राणी यमराज के पास जाएगा तो उसे उस पाप का बहुत ही भयंकर फल भुगतना पड़ता है। युधिष्ठिर ने भी सोचा कि प्रायश्चित कर लें। आजकल के लोग जो अश्वमेध यज्ञ करते हैं, वो सब नकली होता है। पुराने समय में एक घोड़ा छोड़ा जाता था ये कहते हुए कि या तो अधीनता स्वीकार करो या फिर युद्ध करो। युधिष्ठिर ने भीम को भगवान् श्रीकृष्ण के पास भेजा। भगवान् उस समय भोजन कर रहे थे। वृन्दावन से माता यशोदा भी आ गई थीं। सुन्दर-सुन्दर पकवान उन्होंने बनवाए थे। प्यार से खिलाया। उसी समय भीम गया। भगवान् को सूचना दी गई कि भीम आए हैं। उसे कहा गया कि भगवान् अभी भोजन कर रहे हैं। भोजन का नाम सुनते ही भीम को भी भूख लगने लगी। भोजन हुआ, विश्राम हुआ।

भगवान ने पूछा कि क्यों आए हो ? उसने कहा कि अश्वमेध यज्ञ से हम आपका अर्चन करना चाहते हैं। आप हमारी सहायता करें इसीलिए युधिष्ठिर ने आपको बुलाने भेजा हैं। भगवान् ने पूछा कि यज्ञ क्यों करना चाहते हैं ? भीम ने बताया कि प्रायश्चित के लिए। भगवान् हँसकर बोले- तुम मूर्ख हो। भीम ने पूछा- भगवान् ! कैसे? तो भगवान् बोले-एक तो यह कि तुम खाते बहुत हो और दूसरे तुम कुयोनिगामी हो। तुमने राक्षसी से विवाह किया है। भीमसेन ने कहा- भगवान् ! हमारी तो हिडिम्बा राक्षसी है जो कभी-कभी मानवी बन जाती है। आप भी तो बहुत खाते हो। और खाने की बात तो आपने स्वयं गीता में कहा है कि-

हे अर्जुन ! पत्र, पुष्प, फल, फूल जो भी मुझको प्रेम से देता है उसे मैं प्यार से खाता हूँ। आप तो पत्ता भी खा जाते हैं।

यदि व्यक्ति अपने कर्म हमें अर्पित कर देता है तो वह कर्म बन्धन से छूट जाता है। पुण्य अर्पित करने से वही पुण्य अनन्तगुना होकर हमें मिलता है। तुम लोगों ने भी जो कर्म किए हैं वह मुझे अर्पित कर दो। अश्वमेध यज्ञ की क्या आवश्यकता ? भीम ने कहा- मैं समझता हूँ भगवन् ! जो मनुष्य आपको जो कुछ भी अर्पण करता है वह उसे अनन्तगुना

होकर मिलता है । पाप अर्पित करोगे तो पाप मिलेगा ।

भगवान् को सब कुछ अर्पण करने की भावना यदि हममें आ जाए तो मांसाहार, अभक्ष्य आदि जो कुछ भी खा रहे हैं वह सब समाप्त हो जाएगा । जो भगवान् को अर्पित करने योग्य हो वही खाओ और जो अर्पित करने योग्य न हो वो मत खाओ । यदि कोई ऐसा नियत ले ले कि जो भी हम करेंगे वो भगवान् को अर्पित कर देंगे तो जो न करने योग्य कार्य होंगे वे स्वतः ही समाप्त हो जाएँगे ।

आज इतना ही ।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो । गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति । हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो । अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो । विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो । गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[53]

।। राम राम तिरपन ।।

ब्रह्म में कोई भेद नहीं है

श्रीमदभागवत की कथा का प्रारम्भ नारदजी और व्यासजी के संवाद से होता है। नारदजी व्यासजी को चतुःश्लोकी श्रीमद्भागवत सुनाते हैं। चतुःश्लोकी श्रीमद्भागवत को श्रीमन्नारायण ने ब्रह्मा को सुनाया और ब्रह्माजी ने नारद को सुनाया था। यह उन्हीं चार श्लोकों का विस्तार है। भगवान् कहते हैं-

अहमेवासमेवाऽग्रे नान्यद्यत् सदसत्परम् ।
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम् ।।

इसमें कहा गया है कि **'अग्रे सृष्टेः प्राक्'** सृष्टि के पहले **'अहमेवासं'** मैं ही था। श्रुतियों में कहा गया है- 'हे सौम्य ! अग्रे माने सृष्टि के पहले एक अद्वितीय मैं ही था **'एकमेवाद्वितीयम्' । 'एकम् एव अद्वितीयम्'-** एक ही अद्वितीय। इस प्रकार अर्थ यह हुआ कि सजातीय, विजातीय एवं स्वगत भेद शून्य ब्रह्म।

भेद तीन प्रकार के होते हैं- सजातीय भेद, विजातीय भेद और स्वगत भेद। वृक्ष से वृक्ष का भेद सजातीय भेद कहलाता है। वृक्ष से पाषाण (पत्थर) का भेद विजातीय भेद और वृक्ष का वृक्ष की शाखाओं से जो परस्पर भेद है वह स्वगत भेद हैं।

ब्रह्म का कोई सजातीय नहीं है। ब्रह्म के समान और कोई ब्रह्म से पृथक् चेतना होता तो उसमें सजातीय भेद की कल्पना की जा सकती है। जितने भी जीव हैं, वे ब्रह्म से अलग दिखते हैं। वे ब्रह्म से भिन्न हैं। इसलिए उनको लेकर ब्रह्म में सजातीय भेद नहीं बन सकता। ब्रह्म चैतन्य है। जड़ के साथ इसका भेद नहीं हो सकता था। सत् का सत् भेद होता है। सद् का सद्विलक्षण से भेद नहीं हो सकता। जो जड़ है वह सद्विलक्षण है। इसलिए वह भेद का प्रायोजक नहीं बनेगा। रस्सी में कल्पित जो सर्प है, उसके साथ रस्सी का भेद नहीं बन सकता। क्योंकि रस्सी से पृथक् होकर जब सर्प अपनी सत्ता बना ले तब वह रस्सी से भिन्न हो सकता है। जड़ की अपनी कोई सत्ता नहीं है। इसलिए विजातीय भेद नहीं है।

ब्रह्म में यदि अवयव होते । उसके हाथ, पैर, नाक, आँख आदि होते तो उनका परस्पर भेद होता। निरयव होने के कारण स्वगत भेद भी नहीं है । **'एक एव'** एक ही अद्वितीय सजातीय, विजातीय, स्वगत भेद रहित ब्रह्म सृष्टि के प्रारम्भ में था ।

वेदान्त में पञ्चीकरण प्रक्रिया है । वहाँ कहते हैं- **'सद् शब्दवाच्यम् अविद्या सबलं ब्रह्म'** ब्रह्म शब्द का वाच्य अविद्या है । सबल का मतलब अविद्योपाधिक ब्रह्म है । उससे अव्यक्त उत्पन्न होता है । अव्यक्त माने तीनों गुणों की व्यवस्था रूप प्रकृति । उस प्रकृति से जब गुणों में वैषम्य होता है तो **महत्** तत्त्व की उत्पत्ति होती है । **महत्** तत्त्व से अहं तत्त्व की उत्पत्ति होती है। अहं तत्त्व को ही अहंकार कहते हैं । उससे आकाश की उत्पत्ति होती है । आकाश से वायु की, वायु से अग्नि की, अग्नि से जल की और जल से पृथ्वी की । इसी क्रम से उत्पत्ति होती है ।

हमारे वेदान्त शास्त्रों में उत्पत्ति का क्रम परिणाम के आधार पर नहीं है वरन् प्रतीति के आधार पर है । आप यदि इसको समझना चाहें तो यह समझ सकते हैं कि आप गहरी नींद में सो रहे हैं । आप सोकर जैसे ही उठते हैं, इसका आप अनुभव करते हैं । आप कभी खूब थक गये हों और किसी नए स्थान में ठहरे हों तो थोड़ी देर जागने पर भी पता नहीं लगता कि आप कहाँ हैं । नींद तो चली गयी पर आपको अपना और पराया बोध नहीं है । यह महत् तत्त्व की अवस्था है । उसके बाद अहं का बोध होता है । 'मैं' आ गया। यह अहं तत्त्व है । उसके बाद 'इदं' तत्त्व का बोध होता है । पहले अहं का ज्ञान होगा, उसके बाद 'इदं' का ज्ञान होगा । यह 'इदं' आकाश होगा, रिक्त स्थान 'अवकाश'। बीच में अगर कोई चीज हो तो हमारे दोनों हाथ नहीं मिलेंगे । जब कुछ भी नहीं होगा तब दोनों हाथ आपस में मिल जाएँगे । यह दोनों हाथों का मिलन हो गया वायु । देखिए तर्क ! दोनों हाथों को थोड़ा रगड़ दीजिए तो जलन होने लगेगी वह अग्नि हो गया। उसके बाद आप हाथ छोड़ दीजिए तो हाथ में पसीना आ जाएगा । यह अग्नि से जल हो गया । पसीना छोड़ दीजिए वह थोड़ी देर बाद मैल बन जाएगा । माने वह जल से पृथ्वी बन गई ।

संसार के उत्पत्ति का यही क्रम है । सत् परमात्मा से अव्यक्त हुआ । अव्यक्त से महत् तत्त्व हुआ। इससे अहं तत्त्व हुआ । अहं तत्त्व से आकश हुआ । आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी और पृथ्वी से संसार की उत्पत्ति हुई । अब इसकी थोड़ी सी प्रक्रिया और है ।

यह पृथ्वी त्रिगुणात्मक है । इसीलिए इसके कार्यों में भी तीन गुण हैं । जो

पंचमहाभूत हुए-आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी, इनमें भी सत्त्वगुण हैं। अपञ्चीकृतमहाभूतों के समष्टि सात्त्विक अंश से अन्तःकरण की उत्पत्ति होती है। उसके चार भेद हो जाते हैं-मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। इन्हीं के व्यष्टि सात्त्विक अंश से पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हो जाती हैं। इन्हीं पञ्चमहाभूतों के समष्टि अंश से पञ्चप्राण उत्पन्न होते हैं। व्यष्टि के राजसी अंश से पाँच कर्मेन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं। इस तरह से पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और अन्तःकरण बन गए। जो तमोगुणी अंश रहा उसका पंचमहाभूतों का पञ्चीकरण होता है। प्रत्येक विभूति अर्थात् आकाश के, वायु के, अग्नि के और पृथ्वी के दो हिस्से कर दीजिए। एक हिस्सा तो उसका अपने पास रहेगा और जो दूसरा हिस्सा है, उसके चार हिस्से करके वह अपने से भिन्न में बाँट देगा। जैसे आकाश के दो भाग बने। उसके दूसरे भाग के चार भाग बने। एक भाग वायु को, दूसरा भाग अग्नि को, तीसरा भाग जल को, चौथा भाग पृथ्वी को दे दिया। उसी तरह अग्नि के दो भाग बने तो अग्नि का आधा भाग अग्नि के पास रहा। फिर दूसरे के चार भाग हुए। एक भाग आकाश को, दूसरा भाग वायु को, तीसरा भाग जल को और चौथा भाग पृथ्वी को दे दिया। फिर पृथ्वी के दो भाग हुए। उसके आधे भाग के चार भाग हुए। एक भाग आकाश को, दूसरा भाग अग्नि को, तीसरा भाग जल को और चौथा भाग वायु को दे दिया। ये पञ्चीकृत हो गए।

पञ्चीकृत हो जाने पर वे स्थूल हो जाते हैं और आपको जो पाँच तत्त्व दिखाई पड़ते हैं, ये शुद्ध नहीं हैं। जल में पृथ्वी है। जल में आकाश है। जल में भी वायु है। जल में अग्नि है। इसी तरह से अग्नि में पाँचों हैं। पृथ्वी में पाँचों हैं, आकाश में पाँचों हैं और वायु में भी पाँचों हैं।

इन पञ्चीकृत पञ्च महाभूतों से अनंत कोटि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति होती है। सबका मूल अव्यक्त है और अव्यक्त का मूल है 'अहम्'। उस सत् परमात्मा से सारा संसार उत्पन्न हुआ।

भगवान् श्रीमन्नारायण कहते हैं- 'सत् ही मैं हूँ', **'अहमेवासमेवाऽग्रे'** इस संसार की उत्पत्ति के पहले केवल मैं था। कोई दूसरी वस्तु नहीं थी। अब जब इस संसार का अंत हो जाएगा तो आप समझ लीजिए कि जिस क्रम से इस संसार की उत्पत्ति हुई है, उसी क्रम से उसका विलय भी होगा। प्रकृति परिणत होते-होते जब अन्तिम परिणाम को प्राप्त हो जाएगी तब सृष्टि और प्रलय का क्रम जो अनादि काल से चला आ रहा है, सम्पन्न होगा।

संसार होता है उसके बाद नष्ट हो जाता है । संसार का उत्पन्न होना सृष्टि और विलीन हो जाना प्रलय। श्रीमद्भगद्गीता में आपने सुना होगा -

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद् ब्रह्मणो विदुः ।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः ।।

चार युगों की एक चौकड़ी होती है । उसे चतुर्युगी भी कहते हैं । एक हजार बार जब चार युग बीत जाते हैं तो ब्रह्मा का एक दिन होता है । उतने की ही ब्रह्मा की एक रात्रि होती है। अपने दिन और रात के परिमाण से ब्रह्मा का मास बनता है और बारह मास का एक वर्ष बनता है । अपने वर्ष से ब्रह्मा सौ वर्ष जीता है ।

ब्रह्मा का जब दिन होता है तब सृष्टि उत्पन्न होती है और उनकी रात्रि के होने पर विलीन हो जाती है । जब ब्रह्मा रहते हैं तब सामान्य प्रलय होता है । जब सौ वर्षों के बाद ब्रह्मा का भी शरीरान्त हो जाता है तब महाप्रलय हो जाता है । तब पृथ्वी, जल में विलीन हो जाती है । जल अग्नि में, अग्नि वायु में, वायु आकाश में, आकाश अहंतत्त्व में, अहंतत्त्व महत् तत्त्व में, महत् तत्त्व अव्यक्त तत्त्व में और अव्यक्त सत् परमात्मा में विलीन हो जाता है । फिर पहले जो सत् था उसके बाद भी सत् ही रहेगा ।

सदसत्, परम सत्, असत् और उसके परे सत् माने कार्य और असत् माने कारण। कार्य और कारण का जो मूल है । **'ज्ञानमव्यक्तम्'** मेरे अतिरिक्त वह कुछ भी नहीं था। तब जब महाप्रलय हो जाएगा तब भी फिर वही रहेगा जो पहले था । फिर प्रश्न यह आया कि आगे भी वही था और अंत में भी वही रहेगा तो बीच में कौन था ? इसका उत्तर यह होगा कि बीच में भी वही है ।

खाँड़ (चीनी) के खिलौने बनते हैं । शक्कर को पिघलाकर उसकी चासनी बनाकर उसे साँचे में ढालकर खिलौने बना दिए जाते हैं । हाथी बन गया, घोड़ा बन गया, ऊँट बन गया, गाय बन गई, मनुष्य बन गया । उसकी आप जो आकृति बना लें । वह अनेक आकृतियों वाली बन गई । लड़के लड़ते भी हैं। हमारे पास हाथी है, तेरे पास ऊँट है । हमारे पास सिपाही है, तेरे पास बादशाह है । खिलौने तो बन गए। लेकिन वे शक्कर के सिवा कुछ भी नहीं है । उसके नाम रूप का जो भेद है । वह भेद किसका है । उसी परमात्मा का तो है । एक सिद्धान्त है- **'तदनन्यत्वमारम्भणं शब्दादिभ्यः'** वेदान्त का यह सूत्र है । संसार की उत्पत्ति परमात्मा से हुई है । इसीलिए वह परमात्मा से अनन्य है ।

उससे भिन्न नहीं है । कार्य कारण से अनन्य होता है । सोना कारण है और आभूषण कार्य है । वह आभूषण सोना से अलग नहीं है। इसी प्रकार पृथ्वी कार्य है । जल कारण है । पृथ्वी जल से अनन्य है । जल कार्य है अग्नि कारण है । पृथ्वी जल से अनन्य है । जल कार्य है अग्नि कारण है । पृथ्वी जल से अनन्य है । जल कार्य है अग्नि कारण है । वह जल अग्नि से भिन्न नहीं है । अग्नि कार्य है वायु कारण है । वायु अग्नि से भिन्न नहीं है । वायु कार्य है आकाश कारण है । इसलिए वायु आकाश से भिन्न नहीं है । फिर इसे सीधे लिखा-

'तस्माद् आत्मनः आकाशः सम्भूतः, आकाशाद् वायुः, वायोरग्नि, अग्नेरापः, आपः पृथ्वी' ।

उस परमात्मा से आकाश उत्पन्न हुआ । आकाश किससे उत्पन्न हुआ ? परमात्मा से, ब्रह्म से उत्पन्न हुआ। सो वह व्रह्म से अलंकृत है । हमें जो पृथ्वी दिखलाई पड़ रही है, वह ब्रह्म ही तो है । दूसरा क्या है ? इसीलिए **'पश्चादहं यदेतच्च'** जो दिखलाई पड़ रहा है, यह भी ब्रह्म है। हम जब इसका निषेध करते हैं, वह कार्य का कारण से अतिरिक्त नहीं है ऐसा कहकर हम निषेध करते चले जाते हैं । निषेध करते-करते निषेध करने वाला ही रह जाता है । वही शेष है । **'योऽवशिष्येत सोस्म्यहम्'** वही मैं हूँ । अब आपके मन में अर्थ बैठ गया होगा-

अहमेवासमेवाऽग्रे नान्यद्यत् सदसत्परम् ।
पश्चादहं यदेतच्च, योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम् ।।

सब कुछ ब्रह्म है । यह इसका अर्थ निकल गया । उसके पश्चात्-

ऋतेऽर्थं यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि ।
तद्विद्यादात्मनो मायां यथाऽऽभासो यथा तमः ।।

माया क्या है ? माया किसे कहते हैं ? तो इसके उत्तर में कहा है **'ऋतेऽर्थ यत् प्रतीयेत'** बिना हुए जो प्रतीति हो रही है वही माया है । वह वस्तु नहीं है परन्तु दिखाई पड़ती है । जल नहीं है परन्तु मृग को जल दिखाई पड़ता है । गन्धर्व नगर नहीं है पर दिखलाई पड़ता है । स्वप्न नहीं है लेकिन दिखलाई पड़ता है । रस्सी में साँप नहीं है पर दिखलाई पड़ता है । वस्तु के अर्थ के बिना ही उसकी प्रतीति होती है । **'न प्रतीयेत चात्मनि। आत्मनि विदिते सति न प्रतीयेत'** जब आत्मा का बोध हो जाता है तब प्रतीति

नहीं होती है । जब तक आत्मा का बोध नहीं होता तब तक बना हुआ भी संसार प्रतीत होता है । आत्मा कौन है ? वही तो राम है । भगवान् शङ्कर क्या कह रहे हैं ?

झूठेउ सत्य जाहि बिनु जाने । जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने ।।

जेहि जाने जग जाइ हेराई । जागे जथा सपन भ्रम जाई ।।

जिस परमात्मा को जाने बिना यह झूठा जगत् भी प्रतीत होता है । जैसे रस्सी को जाने बिना झूठा सर्प भी सच्चा प्रतीत होता है । जिसको जान लेने पर जगत खो जाता है । उसे खोजो, उसका कहीं कोई पता नहीं मिलेगा।

जब तक हमें अपना ज्ञान नहीं है, तब तक स्वप्न दिखाई पड़ता है । आप बिस्तर पर पड़े हुए हैं। पड़े-पड़े झपकी आ गई और स्वप्न देखने लगे । कहाँ से कहाँ पहुँच गए। स्वप्न में देख रहे हो बम्बई पहुँच गये । अपने मित्रों और रिश्तेदारों से मिल रहे हैं । अनेक प्रकार की बाते हो रही हैं । आप यह सब कुछ देख रहे हैं । यह सब कब तक दिखाई पड़ेगा ? जब तक हमें अपना ज्ञान नहीं हो जाएगा । जैसे ही ज्ञान हुआ कि हम तो बिस्तर पर पड़े हैं । हम कहाँ है और बम्बई कहाँ है । अब आप सोचिए । स्वप्न में आप अहमदाबाद स्टेशन पर बैठे हैं और फिर रेल में बैठकर चल देते हैं । रेल कहाँ है ? संसार में है । और रेल की पटरी और संसार सब हमारे भीतर है । लेकिन हमारे भीतर होता तो हमारा शरीर फट न जाता ? वह हमारे भीतर भी नहीं है लेकिन प्रतीत हो रहा है ।

मिथ्या का लक्षण क्या है ? मिथ्या किसे कहते हैं ? **'स्वानुचितदेशकालावस्थायित्वं मिथ्यात्वं'** अपने लिए जो उचित देश काल है उसके बिना ही जिस वस्तु की प्रतीति हो वह वस्तु मिथ्या कहलाती है। हमारे भीतर स्वप्नवत् दिखलाई पड़ती है ।

वेदान्त शास्त्रों में कहा गया है कि पुरीतत् नाम की नाड़ी है । उसके भीतर जाकर जीव स्वप्न देखता है। वह नाड़ी इतनी सूक्ष्म है कि बिना दूरबीन के उसे देखा नहीं जा सकता । उसी नाडी में इतना बड़ा संसार दिखता है । रेल की पटरी, इसका स्थान और लम्बा काल आदि । लगता है वर्ष बीत गए तो वह काल और स्थान दिखना चाहिए । स्वानुचित देशकाल है । इसलिए हम जागने पर कहते हैं कि वह सच्चा नही, झूठा था। परन्तु प्रतीत तो हो ही रहा था ।

जब तक उसकी प्रतीति होती है तब तक दिखाई देता है । गोस्वामी तुलसीदासजी विनय पत्रिका में एक पद की रचना की है । वे कहते हैं कि-

केशव ! कहि न जाइ का कहिए ।
देखत तव रचना विचित्र अति समुझि मनहि मन रहिए ।।

हे केशव ! कुछ कहा नहीं जा सकता । केवल मन में तरसते रह जाते हैं, कुछ कह नहीं सकते । अतिविचित्र ! एक होता है चित्र दूसरा होता है विचित्र और तीसरा होता है अति विचित्र ।

एक चित्रकार था । एक बार वह किसी राजा के पास गया । राजा से उसने कहा- 'महाराज ! हम चित्रकार हैं । चित्र बनाना जानते हैं । हम अद्‌भुत चित्र बनाते हैं । राजा ने कहा- 'बनाओ ।' उसने कहा- 'हमको कोई सभागार दे दीजिए और उसकी दीवाल बतलाइए उसपर हम चित्र बना देंगे । ऐसा चित्र बनाएंगे कि आप आश्चर्य चकित हो जाएंगे। राजा ने पूछा- 'कितना रुपया लगेगा ।?' उस चित्रकार ने रुपया बताया। राजा ने कहा- 'ठीक है । देखो यह सभागार है । इस दीवाल पर चित्र बनाओ । हम तुम्हारे पैसे का प्रबन्ध कर देते हैं ।' वह चित्रकार चित्र बनाने लगा ।

दूसरे दिन एक दूसरा व्यक्ति आया । उसने राजा से कहा- 'महाराज ! हम विचित्रकार हैं ।' राजा ने कहा- 'अच्छा ! तुम्हारी क्या विशेषता है ? उसने कहा- महाराज! चित्रकार जैसा चित्र बनाएगा उसे हम बिना देंखे ठीक वैसा ही बना देंगे । हमारे और उसके बीच में एक परदा डाल दीजिए । वह अपना चित्र बनाएगा हम विचित्र बनायेंगे।' राजा ने उसे भी कहा- बनाओ ।

चित्रकार चित्र बनाने लगा और विचित्रकार विचित्रकारी करने लगा । विचित्रकार दीवाल साफ करने लगा। साफ करते-करते उसने उस दीवाल को दर्पण जैसा बना दिया। मसाले से दीवाल को ऐसा साफ कर दिया कि उससे चित्रकार का चित्र साफ झलकने लगा।

जब चित्र बन गया तब राजा चित्र देखने आया । चित्र को देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और बोला- 'वाह ! कितना सुन्दर चित्र है । आज तक हमने ऐसा चित्र नहीं देखा था।' चित्र देखने के बाद राजा ने विचित्रकार से कहा- 'तुम अपना विचित्र दिखाओ ।' उसने कहा- 'महाराज ! परदा हटाइए ।' राजा ने परदा हटाया तो चित्रकार का जैसा चित्र था वैसा ही चित्र राजा को दिखने लगा । राजा ने कहा- 'बहुत विचित्र है । चित्र और विचित्र इनसे भी अलग एक अतिविचित्र होता है । वह अति विचित्र क्या है ? स्वप्न है।

आप देखिए, स्वप्न में जो कुछ हमें दिखाई पड़ता है वह किसका प्रतिबिम्ब है। कुछ का कुछ दिखता है। कोई-कोई तो जो लोग मर गए हैं उनको स्वप्न में देखते हैं। हम कैसे कह सकते हैं कि ये दर्पण में दिखलाई पड़ रहे हैं। यह अति विचित्र है। यह संसार, न चित्र, न विचित्र है। यह तो अतिविचित्र हैं।

'देखत तव रचना विचित्र अति समुझि मनहि मन रहिये।
शून्य भित्ति पर चित्र रंग नहि, तनु बिन लिखा न तेरे।।

शून्य की दीवाल पर बिना रंग के चितेरे ने चित्रकारी कर दी। **'धोए मिटे ना'** धोने से यह मिटता नहीं है और मारे न मरता है। पर **'मिति दुःख पाइए यह तन हरे'** इसकी ओर देखने पर भय लगता है। इसके देखने से दुःख होता है। वह है नहीं लेकिन दुःख तो होता है।

हम अपने बिस्तर पर पड़े हुए हैं। अब स्वप्न में देख रहे हैं कि वर्षा आ गई। घोर वर्षा हो रही है। नदी में बाढ़ आ गई। धीरे-धीरे जलप्लावन होने लगा। बाढ़ धीरे-धीरे हमारे मकान में आ गई। मकान के नीचे की मंजिल डूबने लगी। हम ऊपर चढ़ते गए। अब पानी ऊपर भी आ गया। अब देख रहे हैं कि गायें बह रही हैं, भैंसे बह रही है। आदमी बह रहे हैं। अब हमारे भी डूबने की स्थिति आ रही है। हम अपने आप को बचाने के लिए चिल्ला रहे हैं- 'नाव लाओ ! नाव लाओ !' लेकिन दूर तक नजर दौड़ाते हैं तो कहीं कोई नाव का पता नहीं है। हाय, अब तो मरे। इतने में किसी की आवाज आती है। हम जग जाते हैं। कहाँ की बाढ़ और कहाँ की नाव! वह सब समाप्त हो गया। लेकिन जब तक हम जग नहीं जाएंगे तब तक तो बाढ़ दुःख देगी ही।

इसी तरह हम सब जब तक संसाररूपी स्वप्न से जग नहीं जाते हैं। तब तक दुःखी रहते हैं। संसार को देखिए। आप मान बैठे हैं कि ये माता है, ये पिता है, ये पुत्र है, ये बहन है, ये पड़ोसी है, हम स्त्री हैं, हम पुरुष हैं, बाल हैं, युवा हैं, वृद्ध हैं। परन्तु ये है कहाँ ? ये सब के सब आत्मा में हैं। जबआप अपने वास्तविक स्वरूप को देख लेंगे, तब आप स्वयं समझ जाएंगे कि यह कुछ भी नहीं है। लेकिन अपने आपको मानकर ही हम दुःखी है। आप अपने में परेशान हैं। जैसा कि हमने कल बतलाया था। प्रत्येक व्यक्ति परेशान है। यह तो विचित्र बात है। इसी का नाम माया है।

देवी भागवत में एक दृष्टान्त आता है-नारदजी ने भगवान् श्रीकृष्ण से कहा कि-

भगवन्! आप अपनी माया को दिखाइए । भगवान् ने कहा- 'माया का स्वरूप जानना बड़ा कठिन है । चलिए कभी, एकांत में आपको दिखलाएँगे । श्रीकृष्ण ने नारदजी को रथ में बैठाया और उन्हें गहन वन में ले गए । उस वन में रथ को खड़ा करके भगवान् ने नारदजी से कहा- 'नारदजी ! हमें प्यास लगी है ।' नारदजी ने अपना तुम्बा उठाया और पानी के लिए वन में चल दिए । वहाँ निर्मल जल वाला एक बड़ा सा सरोवर था । नारद जी झुककर उसमें से तुम्बे में पानी भरने लगे। उनका शरीर सँभल नहीं पाया और वे सरोवर में गिर पड़े। वह सरोवर ऐसा था कि उसमें डुबकी लगाने से नर नारी हो जाता था । नारद जी नारी हो गये । वे भूल गए कि हम कौन हैं । वे सरोवर से बाहर निकलकर किनारे बैठ गए । इतने में एक राजा शिकार खेलने के लिए वहाँ आया। राजा ने देखा- बड़ी सुन्दर स्त्री बैठी है। वह रथ में बैठाकर ले गया और उसे अपनी पटरानी बना दिया । राजमहल की जितनी भी चाभियाँ थी, राजा ने उन सभी चाभियों को नारदजी को दे दिया । कमर में चाभी का गुच्छा लटकाये, मुँह में पान दबाये और दास-दासियों से घिरे रहकर कभी यहाँ जाएँ, कभी वहाँ जाएँ । धीरे-धीरे बाल बच्चे भी होने लगे। वे बच्चे बड़े होने लगे। लड़के-लड़कियों की शादी हो गयी । उनके बच्चे भी होने लगे। परिवार बढ़ने लगा । वे उन्हीं में मस्त रहने लगे । 'यह मेरा बेटा है, यह मेरी बेटी है, ये मेरे पोती-पोता हैं । इस तरह वे उनमें बिलकुल मग्न हो गये । उन्हें भगवान् श्रीकृष्ण का ध्यान ही नहीं रहा कि हम उनके लिए पानी लेने के लिए आए हुए थे ।

इसी बीच एक घटना घटी । किसी एक दूसरे राजा ने उस राज्य पर आक्रमण कर दिया । दोनों राजाओं में भयंकर युद्ध हुआ । युद्ध में इस राजा के परिवार के सभी लोग मारे गये, राजा भी मारा गया। यह समाचार सुनकर नारद जी को बहुत दुःख हुआ । वे दुःखी मन से वन में गये और सोचा कि डूबकर मर जाएँ । संयोग से जिस सरोवर में स्नान करके वे पुरुष से स्त्री हो गये थे, उसी सरोवर के बगल में एक ऐसा सरोवर था कि जो स्त्री स्नान करेंगी वह पुरुष हो जाएगी । नारदजी ने छलाँग लगा दी और जब सरोवर से बाहर निकले तब नारद जी होकर निकले । उन्हें याद आया कि हम तो भगवान् के लिए जल लेने आए थे । उन्होंने इधर-उधर देखा । तुम्बी एक जगह पड़ी हुई दिखाई दी । उन्होंने उसको उठाया और सरपट पानी भरकर लम्बी डग भरते हुए भगवान् के पास जा पहुँचे । मन में विचार करते जा रहे थे कि बहुत विलम्ब हो गया है ।

जब नारद जी वहाँ पहुँचे तब नारद जी की तरफ देखकर भगवान् मुस्कुराये और

बोले नारद ! तुम तो बड़ी जल्दी आ गये ।' नारदजी ने कहा 'हमारे बाल-बच्चे पैदा हो गये थे और आप कह रहे हैं जल्दी आ गए ।' भगवान् ने कहा- 'नारद ! इसी का नाम माया है । बिना हुए जो प्रतीति करा दे, वही माया है।

शून्य भित्ति पर चित्र रंग नहिं तन बिनु लिखा चितेरे ।
धोए मिटे न मरे भीत दुःख पाइए यहि तन हेरे ।।

रविकर तीर बसत अति दारुन मकर रूप तेहि माहीं ।
बदन हीन सो ग्रसे चराचर पान करन जे जाही ।।

बताया गया कि सूर्य की किरणों में बहुत बड़ा दारुण समुद्र है । उसमें मगर है किन्तु उन मगरों के मुँह नहीं हैं । फिर भी उस समुद्र में जो भी जल पीने जाता है, उसको वह निगल जाता है ।

कोई कहे सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल करि माने ।
तुलसीदास परिहरिय तीन भ्रम, तब आपुन पहिचाने ।।

कोई उसको झूठ कहता है, कोई सत्य कहता है । कोई कहता है- भाई ! झूठ भी है, सत्य भी है । तुलसी दास जी कहते हैं- 'जब ये तीन भ्रम छोड़ दोगे तब तुम अपने आपको पहचान पाओगे ।

यह संसार बड़ा विचित्र है । आप सिनेमा देखने जाते हैं । सिनेमा में क्या है । सिनेमा में तीन चीजें हैं। सामने पर्दा है । उसपर चलती-बोलती फिल्म है और फिल्म के पीछे लाइट (प्रकाश) है । बस ये तीन ही तो हैं। फिल्म चलती है, चलती बोलती फिल्म पर लाइट पड़ती है और वह उसको पार करके परदे पर पहुँचती है । जो फिल्म की छोटी-छोटी आकृतियाँ हैं उसपर प्रकाश के पहुँचने पर बड़ी-बड़ी दिखाई पड़ती है और वह फिल्म इतनी शीघ्रता से चलती है कि चित्र के अनेक होने पर भी हम उनका भेद नहीं पकड़ पाते हैं । इसलिए हम कहते हैं कि यह एक ही गति से चल रहा है । एक ही व्यक्ति नाच रहा है तो अलग-अलग लेकिन शीघ्रता से दिखाने के कारण एक सा लग रहा है ।

इसी तरह मनरूपी रील की लाइट आत्मा है । शून्य का परदा है और यह जगत् दिख रहा है । यह बिना हुए दिखाई पड़ रहा है । **'यत्र प्रतीयते'** सनेही संसार तो प्रमाणित है । यह कैसे-कैसे रूठा है तो अगर हम इसे प्रमाणित माने तो किस आधार

पर प्रमाणित माने । 'प्रमाण' कई प्रकार के होते हैं- प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम, उपमान, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि ।

प्रत्यक्ष अर्थात् जिसको हम अपनी इन्द्रियों द्वारा देखते हैं- **इन्द्रियजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षं** जो ज्ञान इन्द्रियों से हो वह प्रत्यक्ष प्रमाण होता है । आँख, कान, नाक, जीभ से जो हमें दिखलाई पड़ता है वही प्रत्यक्ष प्रमाण है।

अनुमान क्या है । जिस वस्तु का हम साहचर्य देखते हैं अर्थात् एक साथ दो वस्तुएँ दिखाई देती हैं । जिस वस्तु के साहचर्य को हमने ग्रहण कर रखा है, उनमें से अगर हमें एक वस्तु दिखती है तो हम उसी से दूसरी का अनुमान कर लेते हैं । जैसे धूम और अग्नि का साहचर्य । जहाँ धूम होगा वहाँ अग्नि होगी । पर्वत के ऊपर हमें अग्नि दिखलाई नहीं पड़ रही है, धूम दिखलाई पड़ रहा है तो हम धूम के आधार पर अग्नि का अनुमान कर लेंगे। **'पर्वतो वह्निमान् धूमवत्त्वात्'** ये पर्वत वह्निमान है । **'यत्र यत्र धूमस्तत्र तत्र वह्निः'** जहाँ-जहाँ धूम है, वहाँ-वहाँ अग्नि है । यथा- **'महानसम्'** अर्थात् रसोई घर । रसोई घर में हम देखते हैं- धूम से युक्त अग्नि होती है । यह अनुमान प्रमाण है ।

'आगम' माने वह शब्द जो आप्तवाक्य है, उसे आगम प्रमाण कहते हैं । परमात्मा का वचन हो या किसी महापुरुष का वचन हो वह शब्दप्रमाण होता है । शब्द को भी प्रमाण मानना पड़ता है । बहुत से लोग कहते हैं- 'हम प्रत्यक्ष को प्रमाण मानते हैं अनुमान को नहीं। चार्वाक लोग कहते हैं प्रत्यक्ष ही प्रमाण है अनुमान प्रमाण नहीं है । यदि हम पूछें कि प्रत्यक्ष ही प्रमाण है यह बात किससे कह रहे हो ? जो इस बात को जानता है उससे कह रहे हो या जो नहीं जानता है उससे कह रहे हो । जो इस बात को जानता ही है कि प्रत्यक्ष प्रमाण है उसको क्यों बता रहे हो ? कहना होगा कि जिसको हम बतला रहे हैं, उसको इस बात का ज्ञान नहीं है कि यह प्रत्यक्ष प्रमाण है । तुमको उस अज्ञान का ज्ञान कैसे हो गया । कहा- 'प्रत्यक्ष से' । प्रत्यक्ष से क्या तुमने उस अज्ञान को देखा। कहा नहीं, हमने अनुमान कर लिया, अनुमान को मान लिया आपने । बहुत से लोग कहा करते हैं हम प्रत्यक्ष और अनमान दोनों ही मानते हैं । शब्द नहीं मानते ।

उनसे पूछो तुम्हारे पिता का क्या नाम है ? तुम्हारा पिता कौन है ? तो आप नाम बताएंगे । आपके पिता का क्या प्रमाण है ? यही तुम्हारा पिता है इसका क्या प्रमाण है ? कहते हैं- 'माता का शब्द प्रमाण है ।' माता जिसे कह देगी वही तुम्हारे पिता हैं । बस

हो गया, वहाँ न प्रत्यक्ष चलेगा, न अनुमान। यहाँ शब्द ही चलेगा। यह बात होगी अथवा कॉरपोरेशन (नगर पालिका) के जन्म-मरण का रजिस्टर प्रमाण होगा। आप कहेंगे- 'भाई, नगर पालिका के रजिस्टर में देख लो, उसमें हमारा जन्म और माता-पिता का नाम लिखा है। पैदा हुए हैं तो इस शब्द को भी मान ही लिया। उपमान भी प्रमाण होता है। उपमान प्रमाण यह है कि **'गो सदृशो गवयः'** गवय नाम का एक प्राणी जंगल में होता है। हम उसको जानते नहीं हैं। किसी से हमने सुना है कि गवय गौ के समान होता है। हमने जंगल में उस तरह का प्राणी देखा है। उसके सादृश्य को जानकर यह समझ लिया कि यह गवय है या पहले हमने जंगल में देख लिया है, परन्तु हम यह नहीं जानते थे कि यह कौन सा प्राणी है। जब हमने सुना कि गवय गो के सदृश होता है तो सादृश्य के आधार पर हम गवय को जान लेते हैं। यह उपमान प्रमाण है।

अर्थापत्ति प्रमाण क्या है ? **पीनो देवदत्तो दिवा न भुक्ते।** मोटा हट्टा-कट्टा देवदत्त दिन में नही खाता। यदि वह दिन में नहीं खाता तो मोटा कैसे हो गया ? मतलब वह रात को खाता है तो उसके मोटे तगड़े होने के कारण हम अर्थापत्ति लगा लेते हैं कि वह दिन में नहीं खाता तो रात को खाता होगा। श्रीमान् जी, रात में खाते हैं दिन नहीं। बहुत से लोग ऐसे होते हैं कि हम तो भाई अनशन कर रहे हैं। ऐसा कहकर दिखावा करते हैं और रात में खा लिया करते हैं। इसलिए उनका वजन नहीं घट रहा है। इसका नाम है अर्थापत्ति प्रमाण।

'यदि स्यादुपलभ्येत' जैसे यदि कोई व्यक्ति होता तो उपलब्ध होता। उपलब्ध नहीं हो रहा है इसलिए नहीं है। किसी ने कहा- यदि होता तो दिखलाई पड़ता। उसकी उपलब्धि न होने के कारण उसके अभाव का ज्ञान होता है। यह अनुपलब्धि प्रमाण है। अब आप देखिये कि जगत् में कौन सा प्रमाण है। आप कहेंगे-प्रत्यक्ष प्रमाण है। लोग कहते हैं बड़े वेदान्ती बने हो। दीवाल पर सिर पटको और तुम्हारी खोपड़ी न फूटे तो जाने। यह सामने पेड़ दिख रहा है और तुम कहते हो, नहीं है। तब वेदान्ती यह कहेगा- 'जैसे जिह्वा झूठी है, वैसे यह खोपड़ी भी झूठी है और फूटना भी झूठा है। जैसे यह पेड़ झूठा है। इस पेड़ को देखने वाली आँख भी झूठी है। आँख भी तो जगत् के भीतर है। जब हम पूरे जगत् का विचार कर रहे हैं तो आँख को छोड़कर कैसे विचार कर सकते हैं ? **'इन्द्रियजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम्'** (तर्क संग्रह) इन्द्रियों का ही विचार कर रहे हैं 'यह सच है, यह झूठ है।'

स्वप्न में भी हमारे नाक, कान और आँख होते हैं । स्वप्न को दृश्य को हम आँख से देखते हैं और कान से सुनते हैं । लेकिन उस समय के आँख और कान भी स्वप्न के होते हैं । इसलिए प्रत्यक्ष को जगत् के अस्तित्व में प्रमाण नहीं माना जा सकता । जब प्रत्यक्ष ही नहीं मानोगे तब अनुमान कैसे मानोगे ? क्योंकि दो में से एक का प्रत्यक्ष चाहिए। जब दोनों ही सत्य नहीं है तब अनुमान नहीं चलेगा । शब्द और उपमान भी नहीं चलेगा । अर्थापत्ति आदि कुछ भी नहीं चलेगा । जगत् के अस्तित्व में कोई प्रमाण जैसे सत्य या वेद को आप प्रमाण माने तो बताएँ वेद स्वयं कहता है- **'नेह नानास्ति किंचन'** इसलिए जगत् के अस्तित्व में, सत्ता में कोई प्रमाण नहीं है। फिर 'असत्य' है ऐसा ही कह दो । सोचिए यदि असत्य होता तो दिखाई क्यों पड़ रहा है । दिखाई तो पड़ रहा है, इसे हम अस्वीकार तो नहीं कर सकते हैं । असत्य की प्रतीति नहीं होती ।

खरगोश का सींग कभी दिखाई नहीं पड़ता । बन्ध्या का पुत्र कभी दिखाई नहीं पड़ता। उसी प्रकार यदि जगत् बिल्कुल न होता तो उसकी प्रतीति भी नहीं होती । इसलिए असत्य भी नहीं, सत्य भी नहीं । यदि इसे सत्य और असत्य दोनों ही मान लिया जाय। ऐसा कैसे हो सकता है ? प्रकाश और अन्धकार दोनों एक साथ कैसे रह सकते हैं । **'सत्वासत्वाभ्याम् अविचारितरमणीया माया'** अविचाररमणीया माया है जिसे न सत्य कह सकते हैं और न असत्य । यह अनिर्वचनीय माया है ।

माया का जगत् है कार्य, माया का कारण है । प्रतिबिम्ब को आभास कहते हैं । प्रतीति को मिथ्या भी कहते हैं । हैं नहीं लेकिन प्रतीत हो रहा है। स्फटिकमणि के पास यदि आप लाल जवा फूल रख दें तो वह स्वच्छ स्फटिक लाल दिखाई पड़ने लगता है । उसमें जो रक्तता की आभा है, वह वस्तुतः सच्ची नहीं है । अपाधि के कारण वह लाल दिखाई पड़ रही है। यदि लाल जवा फूल उस स्फटिक के पास नहीं होता तो उस स्फटिक में रक्तिमा (लालिमा) का दर्शन भी नहीं होता ।

हम चन्द्रमा की ओर देखते हैं । कभी-कभी नेत्र दोष के कारण एक ही चन्द्रमा या कोई एक वस्तु दो दिखाई पड़ने लगते हैं । एक चित्र दो दिखाई देंगे या कोई एक व्यक्ति दो दिखाई देगा । अब उनमें सत्य क्या है । जब दो दिखाई पड़ रहा है वह या एक उन दोनों को सच नहीं कह सकते । क्योंकि आभास नहीं है लेकिन प्रतीत हो रहा है । गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी उदाहरण दिया है-

चितव जो लोचन अंगुलि लाये । प्रकट जुगल शशि तेहि के भाये ।।

आँख के सामने अंगुलि रखकर चन्द्रमा को देखेंगे तो चन्द्रमा दो दिखाई पड़ेगा। लेकिन वह दो है नहीं। न होने पर भी, आभास न होते हुए भी अनर्थ का कारण बन जाता है।

एक वनवासी नौकर था। साहब से छुट्टी लेकर जब वह घर को चला तब वह साहब का दर्पण चुराकर अपने बक्से में बन्द करके घर लेता गया। वह वहाँ कुछ दिन तक रहा। एक दिन उसकी स्त्री ने उसकी अनुपस्थिति में उसके बक्से को खोला उसने बक्से में दर्पण देखा जिसमें उसका मुख दिखाई पड़ा। उसने कभी दर्पण देखा नहीं था। उसने सोचा कि अहो, 'मेरे पति मुझसे रुठे-रूठे से क्यों रहते हैं। इसका कारण आज समझ में आ गया कि उनका किसी दूसरे स्त्री से प्रेम है। उसी स्त्री का यह चित्र लेकर बक्से में रखा है।

वह रूठ गई और पति को छोड़कर पीहर चली गयी। वह वहीं रहने लगी। ससुराल जाने का नाम ही न ले। उसके पिता-माता और भाई ने उसे बहुत समझाया- 'तुम अपने घर चली जाओ। देखो तुम्हारे पति के कितने पत्र आ रहे हैं, संदेश आ रहे हैं। तुम ऐसा अनदेखी न करो। जाओ, चली जाओ।' उसने कहा- 'मैं नहीं जाऊँगी।'

उसके माता-पिता और भाई ने कारण पूछा। उसने सारी बात सच-सच बता दी। पंचायत हुई। पंचायत में उस स्त्री के बयान लिए गये। अपने बयान में उस स्त्री ने कहा कि इसका किसी दूसरी स्त्री से प्रेम है। इसलिए मैं उसके यहाँ नहीं जाऊँगी। पंचायत के लोगों ने पूछा- 'क्या प्रमाण है ?' उसने दर्पण लाकर दिखा दिया। पंचायत के लोगों ने दर्पण देखकर कहा- 'इसे जो भी देखता है, उसे ही अपना मुख दिखाई पड़ता है। इसमें किसी का चित्र तो है नहीं। तब कहीं जाकर उस स्त्री का भ्रम मिटा।

न होते हुए भी दुःख देने वाली माया प्रतिध्वनित होती है। ऋषिकेश में स्थित माया कुण्ड के पास जाकर आप जो कहोगे वही ध्वनि उल्टे आपको सुनाई देगी। आप कहोगे लड्डू लोगे या पेड़ा, उधर से वही ध्वनि सुनाई देगी- लड्डू लोगे या पेड़ा। लोग गाली देते हैं तो उधर से भी गाली सुनाई देती है। लोग कहें कि कौन गाली दे रहा है उसे भी गाली दो। कोई दिखाई ही नहीं देगा। आप किसे गाली दोगे। कोई दिखाई देगा तब न।

दर्पण में हमलोग अपना मुख देते हैं। यदि दर्पण गड़बड़, टेड़ा-मेढ़ा है, तो देखने वाले का मुख भी वैसा ही दिखेगा। ऐसे भी दर्पण होते हैं। जिनमें छोटा मुख बड़ा दिखाई देता है। हम उदास हो जाते हैं तो दर्पण में हमारा चेहरा भी उदास दिखाई देता है। यह

सब माया है। आभास और वस्तु के रहने पर भी उसकी प्रतीति न हो, क्या उसका भी कोई उदाहरण है ? क्हा कि हाँ है- **'यथा तमः'** तम का अर्थ है राहु। राहु आकाश में रहता है। आजकल के वैज्ञानिक कहते हैं- 'राहु तो धरती की छाया है।' वास्तव में राहु नामका कोई दैत्य नहीं है। कुछ लोग राहु को राक्षस मानते हैं। लेकिन हमलोग मानते हैं कि छाया में भी छाया पुरुष होता है। छाया का भी कोई अधिष्ठाता होता है। छाया पुरुष एक वस्तु होती है। लोग छाया में ही त्राटक करके उसको सिद्ध कर लेते हैं। छाया का अधिष्ठाता देव 'राहु' है। पहले भी हमने जिस छाया को बताया था, वह निष्क्रिय हो जाता था। राहु भी एक दैत्य है, जो चन्द्र ग्रहण के समय दिखलाई पड़ता है। आकाश में रहते हुए भी जब तक पूर्णिमा का चन्द्रग्रहण न आए तब तक राहु का दर्शन नहीं हो सकता। इसी प्रकार परमात्मा के रहते हुए भी जब तक अन्तःकरण निर्मल और निश्चल नहीं हो जाता तब तक ब्रह्म का दर्शन नहीं होता है। **'यथा भासो यथा तमः'** परमात्मा को जानने के लिए मन का निश्चल और निस्तरंग होना आवश्यक है। क्योंकि परमात्मा को जानना कठिन है। परमात्मा हमारे अत्यधिक निकट है। दूर की वस्तु को देखना सरल होता है। आप अहमदाबाद की वेधशाला में चले जाइए। वहाँ आपको दूरबीन लगे हुए दिखाई देंगे। उस दूरबीन में आप देखेंगे तो आपको दिन में चन्द्रमा दिखाई पड़ेगा। इतनी दूर की चीज अपनी आँख से आप देख सकते हैं। किसी ऊँचे मकान पर चढ़कर आप देखें तो आपको पूरा अहमदाबाद दिखाई देगा। आपकी आँखों में इतनी ताकत है। लेकिन उन्हीं आँखों से अपनी आँखों में लगा हुआ काजल दिखाई नहीं देगा। क्योंकि काजल आँख के बहुत निकट है। जब काजल को नहीं देख सकते हो तो आँखों को कैसे देख सकोगे ?

आँखों से आँखों को देखना बहुत कठिन है। आँखों से आँखों को जब नहीं देख सकते हो तो मन को कैसे देखोगे, जबकि वह तो और भी निकट है। जब मन को नहीं देख सकते हो तो उसके भीतर की बुद्धि को देख पाना और कठिन है। जब बुद्धि को नहीं देख सकते हो तो बुद्धि के भीतर के आत्मा को कैसे देख सकते हो ? जो पास में है परन्तु उन्हें देख पाना कठिन होता है। उसको पकड़ना कठिन होता है।

आत्मा से आत्मा को कैसे देखेंगे ? यदि ऐसा हुआ तो कर्त्ता-कर्म का विरोध हो जाएगा। कर्त्ता अलग होता है। कर्म अलग होता है। हम संस्कृत में बोलते हैं **'देवदत्तः ग्रामं गच्छति'** देवदत्त गाँव को जाता है। 'देवदत्त' कर्त्ता है और 'ग्राम' कर्म है। हिन्दी

में कहेंगे- 'देवदत्त गाँव को जाता है ।' यहाँ देवदत्त अलग है और गाँव अलग है । यह कभी नहीं कहेंगे । 'देवदत्त अपने को जाता है ।' अपने में क्या जाएगा ?

नहि पटुरपि नटवटुः स्वस्कन्धमारोढुमीष्टे ।

अत्यन्त पटु भी नट का वटु अपने कंधे पर नहीं चढ़ सकता। लोग सर्कस देखने जाते हैं । आप वहाँ बोलिए- 'जो अपने कंधे पर चढ़कर दिखाएगा उसे एक लाख रुपया देंगे।' अपने आप को कैसे देखोगे ? कर्त्ता-कर्म का विरोध हो जाएगा । अब आप समझिए उसकी उक्ति क्या है ? आँख से आँख के काजल को देखना हो तो सामने दिख जाएगा । ऐसा ही कोई शीशा मिल जाए तो आप आत्मा को देख लोगे । वह शीशा कौन सा है ? यह काँच का शीशा नहीं चलेगा। शुद्ध अन्तःकरण का शीशा चलेगा ।

मुकुर मलिन अरु नयन विहीना । रामरूप देखहिं किमि दीना ।।

जिनका मनरूपी मुकुर मलिन है, विवेकरूपी नेत्र जिनके खुले नहीं हैं, वे दीन राम के रूप को कैसे देख सकते हैं ? मुकुर और दर्पण में यही अन्तर होता है । पहले जमाने में मुकुर होता था । मुकुर लोहे का या स्टील का होता था । उसको साफ करते-करते इतना साफ किया जाता था कि उसमें मुख दिखलाई देने लगता था । अगर उसमें जंग लग गई तो वह धुँधला हो जाता था । हमारे मन पर यदि विषय की काई लगी हो- **'काई विषय मुकुर मन लागी ।** तो सब कुछ विषयाकार दिखाई पड़ेगा । यदि वह काई मिटा दी जाए तो मन निर्मल हो जाएगा। पूर्णिमा की रात्रि में आप सरोवर के किनारे बैठ जाइए। हवा चल रही है तो उसी के साथ-साथ सरोवर में लहरें भी उठ रही है । उन्हीं में हिलता-डुलता चन्द्रमा भी दिखाई पड़ेगा। यदि उस सरोवर का जल मलिन है तो उन लहरों में भी मलिनता दिखाई पड़ेगी । लहरों में दिखाई पड़ने वाला चन्द्रमा भी मलिन ही दिखाई पड़ेगा।

हमारा अन्तःकरण सरोवर है । उस अन्तःकरण रूपी सरोवर में जब किसी प्रकार की तरंग न हो, किसी प्रकार की कोई वृत्ति न हो, उसमें रजोगुण, तमोगुण न हो, शुद्ध सत्त्व हो तो उसमें आत्मा का दर्शन होता है । जैसे पूर्णिमा का चन्द्रमा सरोवर में दिखलाई पड़ता है, उसी प्रकार शुद्ध अन्तःकरण में आत्मा का दर्शन होता है। अन्तःकरण की निर्विकल्पकता ही पूर्णिमा है ।

'यथा भासो यथा तमः' जैसे आभास और तम । आभास बिना होते हुए भी प्रतीत

होता है । इसलिए वह माया है । तम होते हुए भी प्रतीत नहीं होता । वह परमार्थ है । **यस्तु सम्यक् प्रतीयेत चात्मनि,** ब्रह्म के रहने पर भी वह प्रतीत नहीं हो रहा है ।

यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु ।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम् ।।

जैसे पञ्चमहाभूत अपने-अपने कार्यों में प्रविष्ट है । मिट्टी के घड़े में प्रविष्ट है, सोना आभूषण में प्रविष्ट है, परन्तु हम ऐसा नहीं कह सकते । इसलिए कि यदि कार्य कारण में प्रविष्ट हो गया । आभूषण यदि सोने से अलग होता तो हम कह सकते थे कि आभूषण में सोना प्रविष्ट हो गया है । सोने से अतिरिक्त वह है ही नहीं । कौन किसमें प्रविष्ट होगा?

एक पण्डित जी थे । वे गणेशजी के उपासक थे । उन्होंने सोने का गणेश जी और सोने का ही उनका वाहन मूषक बनवाया । पण्डित जी बराबर उनका पूजन करते रहे । कुछ समय बाद उनका देहान्त हो गया । उनके लड़के नालायक निकल गए । उन्होंने सब कुछ बेच खाया। वे एक दिन सोने के मूषक सहित गणेश जी को बेचने गये। सोनार ने दोनों को तौला । जितना वजन गणेश जी का था उतना ही वजन मूषक का भी था । सोनार ने दोनों का दाम बताया । पण्डितजी के लड़के नाराज हो गये और बोले- वाह! जितना गणेशजी का दाम लगा रहे हो उतना ही चूहे का भी लगा रहे हो ? गणेश जी का दाम चूहे के दाम से अधिक होना चाहिए ।' सोनार ने कहा- 'महाराज ! हम चूहा नहीं खरीद रहे हैं । चूहा तो हमारे घर में ही बहुत है । और गणेश जी को हम खरीद नहीं सकते । हम तो सोना खरीद रहे हैं । तत्त्वदर्शी तत्त्व को देखता है रूप को नहीं देखता है । उसकी दृष्टि तत्त्व पर जाती है । अभी आपने सुना कि आत्मा से आकाश हुआ, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई । इसलिए हम कह सकते हैं कि आत्मा प्रकाश में प्रविष्ट है, आकाश वायु में प्रविष्ट है, वायु अग्नि में प्रविष्ट है, अग्नि जल में प्रविष्ट है और जल पृथ्वी में प्रविष्ट है ।

परन्तु सच पूछा जाय तो आत्मा के ही रूप में आकाश में वायु प्रविष्ट है । इसी तरह वायु आत्मा के रूप में जल में प्रविष्ट है, आत्मा के रूप में पृथ्वी में प्रविष्ट है । आत्मा ही पृथ्वी में प्रविष्ट है । आत्मा से यदि ये अलग होते तब तो प्रवेश की बात कर सकते है । जब सोने में दिखाई पड़ने वाले आभूषण के समान संसार के पदार्थ नाम और रूप की कोई सत्ता ही नहीं है तो भला कौन किसमें प्रविष्ट है ।

उसी प्रकार 'मैं' जो जगत् का कारण, जगत् का अधिष्ठान ब्रह्म है, वह सारे विश्व प्रपंच में, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड में प्रविष्ट है। जगत् मुझसे पृथक् ब्रह्माण्ड की कोई सत्ता न होने के कारण मैं प्रविष्ट भी नहीं हूँ। मैं ही तो मैं हूँ। कौन किसमें प्रविष्ट है।

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्वजिज्ञासुनात्मनः।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत्स्यात्सर्वत्र सर्वदा ।।

आत्मा के तत्त्व को जानने वाले को इतना ही जानना चाहिए कि 'यह ब्रह्म है' इस अन्वय एवं यह ब्रह्म नहीं इस निषेध पद्धति से सर्वातीत एवं सर्वस्वरूप परमात्मा का ज्ञान संभव करे। हमने आपको बतलाया था- अस्ति, भाति, प्रिय, नाम और रूप। इन पाँच रूपों में हमें जगत् प्रतीत होता है। नाम रूप का व्यतिरेक है। एक नाम रूप एक जगह है दूसरी जगह नहीं है। मिट्टी से अनेक पदार्थ हैं- घट, सराव, उदंचन आदि। हिन्दी में आप कहेंगे- घड़ा बनता है, सकोरा बनता है, परैया बनती है। इस प्रकार कई चीजें मिट्टी से बनती हैं। परन्तु परस्पर उनका व्यतिरेक है। सकोरा घड़ा नहीं है, घड़ा सकोरा नहीं है और सकोरा परैया नहीं है, परैया सकोरा नहीं। मिट्टी एक ही है उसके द्वारा निर्मित पात्र के नाम रूप अलग-अलग हैं।

इस प्रकार आत्मा का सबसे अन्वय है। सबका सबमें व्यतिरेक है। जिसका अन्वय है सत्य है जिसका व्यतिरेक है वह झूठा है। सीधी एक बात यह कि मिट्टी सबमें है। इसीलिए मिट्टी का सबमें अन्वय है। चाहे कितने कपड़े बने हों, चाहे उसे कुर्त्ता कहें, चाहे पैंट कहें या चाहे कोट कहें। कुछ भी कह लें लेकिन है तो वह सूत ही। सूत से अतिरिक्त वह और क्या है ? उसका सबमें अन्वय है। नाम रूप आदि सबमें इनका व्यतिरेक है।

अब आप सर्वदा का दृष्टान्त देखें। आप इस समय जाग रहे हैं **'इन्द्रियैः अर्थोपलब्धिर्जागरणम्'** इन्द्रिय के द्वारा जो अर्थ की उपलब्धि है, उसका नाम जागरण है। इस जागरण में आप प्रवचन सुन रहे हैं। यदि आप सो जाएँ यह नहीं रह जाएगा। न जाने सोकर आप क्या देखेंगे। स्वप्न में आप कुछ और देखने लग गए और जब गाढ़ी नींद आ गयी तो आप वह स्वप्न भी नहीं देखेंगे। जब आप सोकर उठेंगे तो आप कहेंगे आज मैं ऐसा सुख से सोया कि मुझे कुछ पता ही नहीं रहा। **'सुखमहमस्वाप्सम् न किंचिदवेदिषम्' ?** मैं आज इतना सुख से सोया कुछ भी पता नहीं लगा। मुझे कुछ पता न लगा इसका पता तो लगा।

एक दरोगा ने एक सिपाही की किसी गली में ड्यूटी लगाई और कहा- 'रात को पहरा देना। यदि तुमको वहाँ कोई दिखलाई पड़े तो सबेरे आकर हमको बतला देना।' सिपाही रातभर उस गली में पहरा देता रहा। वह सुबह जब दरोगा के पास आया तो दरोगा ने उससे पूछा, 'क्यों भाई, तुमने पहरा दिया। उसने कहा- हाँ हुजूर ! हमने वहाँ रात भर पहरा दिया। दरोगा ने फिर पूछा- 'वहाँ कोई तुम्हें दिखायी दिया ?' सिपाही ने कहा- 'कोई नहीं दिखाई दिया।' दरोगा ने कहा- 'तू वहाँ था कि नहीं ?' सिपाही ने कहा- 'यदि मैं वहाँ नहीं होता तो यह कैसे जानता कि वहाँ कोई नहीं था।

व्यक्ति सुषुप्ति में रहता है। वह सुषुप्ति का स्मरण करता है कि मैं आज सुख से सोया। वही सुषुप्ति में रहता है, स्वप्न में रहता है और वही जाग्रत में रहता है। जाग्रत में आकर कहता है- 'हमने स्वप्न में यह देखा' स्वप्न देखने वाले तुम थे। स्वप्न नहीं था। तुम गहरी निद्रा में थे और अब भी तुम हो वह आत्मा जिसको हम मैं कहते हैं उसका तो जाग्रत-स्वप्न और सुषुप्ति इन तीनों में अन्वय है। जाग्रत का स्वप्न में व्यतिरेक है। स्वप्न का जग्रत में व्यतिरेक है। सुषुप्ति का जग्रत में व्यतिरेक है।

राजा जनक जी एक दिन अपने महल में सो रहे थे। सोये में उन्होंने स्वप्न देखा कि किसी दूसरे राजा ने मिथिला पर आक्रमण कर दिया है। भयंकर युद्ध हो रहा है। उस युद्ध में मिथिला की सेना पराजित हो गयी। दूसरे राजा के सैनिक राज्य में प्रविष्ट होने लगे। राजा को उन्होंने सूचना दी कि 'महाराज ! सैनिक आ रहे हैं आपको पकड़ लिया जाएगा। आप भागिए। राजा जनक जी गुप्त द्वार से भागकर कहीं दूर दूसरे देश में चले गये। वहाँ कुछ भी नहीं था। महारानी सहित राजा जनक जी भिक्षाटन करते हुए वहाँ रहने लगे। एक दिन कहीं से खिचड़ी का सामान मिला। मिट्टी का बर्तन हंडिया आदि लेकर वे जंगल में किसी नदी के किनारे पहुँचे। उन्होंने वहाँ पत्थर का चूल्हा बनाया। लकड़ी जलायी और खिचड़ी पकने के लिए उसपर रख दिया। खिचड़ी पक ही रही थी कि इतने में एक मतवाला हाथी आया। वह दौड़ता हुआ इनकी ओर आने लगा। महावत ने कहा- 'भागो! भागो ! राजा जनक ने किसी तरह भागकर अपने प्राण बचाये। राजा जनक डर गये थे। जब नींद खुली तो उन्होंने देखा- मैं तो आराम से सो रहा हूँ। सिपाही पहरा दे रहे हैं। कहीं कोई आपत्ति की बात है ही नहीं।

उनके मन में तब संशय हुआ कि यह सत्य है या वह सत्य है। प्रतीति दोनों की हो रही थी। वहाँ उनके दरबार में बड़े-बड़े महात्मा थे। बड़े-बड़े ऋषि मुनि थे। उन्होंने

उन सबसे पूछा, किन्तु किसी ने उत्तर नहीं दिया। एक कहोल ऋषि थे । उनकी स्त्री के पेट में एक बच्चा आया। वे वेद मन्त्र पढ़ रहे थे कि कुछ अशुद्धि निकल गई। वह बच्चा ज्ञानी था । उसने कहा- **'अशुद्धं न वक्तव्यम्'** उन्होंने इधर-उधर देखा । कोई दिखायी नहीं दिया। वे पुनः वेद मन्त्र पढ़ने लगे । फिर उस बच्चे ने कहा- **पुनः पुनः अशुद्धं किं वदसि ?**' ऋषि ने कहा- 'अरे, तू है कौन? उसने कहा- 'मैं गर्भस्थ बालक हूँ । तब ऋषि कहोल और उस बच्चे में शास्त्रार्थ होने लगा । ऋषि कहोल पराजित हो गये । तब उन्होंने गर्भस्थ बालक को श्राप दिया कि 'जा, तू आठ जगह से टेढ़ा होगा ।' वे भी अष्टावक्र मुनि हुए । राजा जनक के उसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए उनकी सभा में ऋषि कहोल पहुँचे । वे उत्तर नहीं दे पाए इसलिए राजा जनक ने उनको कैद कर लिया और कहा- आप जब तक मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं देंगे तब तक कैद रहेंगे।

अष्टावक्र मुनि को जब यह पता चला तो वे अपने पिता को छुड़ाने के लिए लाठी टेकते-टेकते राजा जनक के द्वार पहुँचे । वहाँ पहरेदारों से कहा, 'जाओ राजा जनक से कह दो महर्षि अष्टावक्र आए हैं ।' राजा जनक ने सोचा कोई आए होंगे । उनका सिपाही आया और उनको राजा जनक के पास ले गया । आठ जगह टेढ़ा यह बालक लाठी टेकते-टेकते राजा जनक के सामने पहुँचा । राजा जनक ने कहा- 'महाराज सिंहासन पर बैठिए । वे सिंहासन पर बैठने के लिए बढ़े तो उनकी कुबड़ी सरक गई और वे गिर पड़े। उन्हें गिरते देखकर सारी सभा हँसने लगी । जब सभी हँस चुके तब अष्टावक्र जी ने जोर से हँसना शुरु किया । जनक जी ने पूछा- 'आप क्यों हँस रहे हैं ? उन्होंने कहा, 'इसलिए मैं हँस रहा हूँ कि तेरी सभा में सभी चर्मकार हैं इनको चमड़े की परख है, आत्मा की नहीं है । मेरा यह चमड़ा आठ जगह से टेढ़ा है इसको देखकर ये हँस रहे हैं । मुझे इन्होंने नहीं देखा।

जनक जी इनकी विद्वता को समझ गये । फिर उन्होंने उनका समुचित स्वागत किया और फिर उन्हें सम्मान के साथ आसन दिया । राजा जनक ने उनसे प्रश्न किया- 'महाराज! यह सत्य है कि वह सत्य है ? अष्टावक्र जी बोले- 'न यह सत्य है न वह सत्य है । इसकी अपेक्षा से वह असत्य है और उसकी अपेक्षा से यह असत्य है ।' राजा जनक ने पूछा, 'महाराज ! सत्य क्या है ?' अष्टावक्र जी बोले- 'भाई, आपके एक प्रश्न का उत्तर तो हमने दे दिया । अब दूसरे प्रश्न का उत्तर हम तब देंगे जब हमें दक्षिणा दोगे।' राजा जनक ने कहा- 'महाराज! हम दक्षिणा में आपको अपना राज्य दे देते हैं ।' अष्टावक्र जी

ने कहा- 'नहीं सब कुछ देना पड़ेगा ।' राजा जनक ने कहा- 'चलिए सब कुछ दे दिया । अब मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिए ?

इतने में अष्टावक्र जी ने माया रची- 'एक ब्राह्मण आया और बोला- 'महाराज ! हमारी कन्या का विवाह है । कुछ हमको दे दीजिए तो हमारी कन्या का विवाह हो जाए।' अष्टावक्र जी कुछ बोले नहीं । वह जोर-जोर से बोलने लगा । अष्टावक्र जी चुपचाप सुन रहे थे। ब्राह्मण ने कहा- 'हम आपको श्राप दे देंगे ।' तब राजा जनक जी बोले, 'महाराज हमें श्राप मत दीजिए । हमने तो सब कुछ दक्षिणा में इनको दे दिया है ।' ब्राह्मण ने कहा- 'अच्छा तो तुमने इनको दे दिया है । तुम्हें इस बात का अभिमान तो है । देने का ढोंग समाप्त करो । सर्वस्व में तो तुम्हारा मन भी आता है ।' राजा जनक ने कहा- 'ठीक है। हम अपना मन भी इनको दे देते हैं । इसके बाद अष्टावक्र जी ने पूछा- 'तुम कौन हो ?' राजा जनक ने कहा- 'महाराज मैं जनक हूँ । कौन कह रहा है ? मैं ही तो कह रहा हूँ। अष्टावक्र जी ने कहा- 'जब तुमने अपना मन हमको दे दिया है तो मैं जनक हूँ यह किससे कह रहे हो ?'

अब तो जनक जी का मन बिल्कुल निर्विकल्प हो गया और वे निर्विकल्प होकर शान्त हो गए । अष्टावक्र जी ने कहा यह सत्य है । इस तरह सत्य का दर्शन अष्टावक्र जी ने राजा जनक जी को कराया। यह आत्मा अन्वय और व्यतिरेक से सर्वदा सर्वत्र प्रतीत होता है ।

एतावदेव जिज्ञास्यं तत्वजिज्ञासुनात्मनः ।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत्स्यात्सर्वत्र सर्वदा ।।

इस मत से तुम परम समाधि को धारण कर लो तो तुम्हें सङ्कल्प-विकल्प से मोह नहीं होगा। सोचिए ! आपका अपना कोई लड़का या लड़की मर जाए तो आप कितने दुःखी होंगे । दिन-रात रोते रहेंगे । यह समस्त संसार ब्रह्माजी का बेटा है । प्रलयकाल में जब ये मरेंगे तो क्या ब्रह्माजी को दुःख नहीं होगा ।

जिसकी प्राप्ति में जितनी खुशी होती है उसके वियोग में उतना ही दुःख मिलता है। ब्रह्माजी के सामने न जाने कितने जन्म लेते हैं और कितने मरते हैं । मरने वालों के वियोग में रोते-रोते ब्रह्माजी का समस्त जीवन ही बीत जाता है । इसलिए भगवान् नारायण ने उन्हें ज्ञान दिया और कहा- 'परमसमाधि के द्वारा चित्त को एकाग्र करके तुम उनमें निष्ठा

रखो। तुम्हें विकल्प में भी कभी मोह नहीं होगा। इसी बात को हम भी धारण कर लें तो हम आप भी मोह रहित हो जाएंगे। यही चतुःश्लोकी भागवत है। आज के दिन की कथा को यहीं विराम देते हैं।

श्रीराम जय राम जय जय राम

प्यारे जरा तो मन में विचारो क्या साथ लाए अरु ले चलोगे ?
जाता सदा साथ यही पुकारो। गोविन्द! दामोदर! माधवेति
गोविन्द! दामोदर! माधवेति। हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखेति
श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे! मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!

धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो
प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो
गोमाता की जय हो। गोहत्या बन्द हो
हर हर महादेव !

—*—

[54]

।। राम राम चौवन ।।

ज्ञानाग्नि सब कर्म भस्मसात् कर देती है

समुपस्थित सज्जनो, देवियों !

ज्ञान की अग्नि से सब कर्म भस्म हो जाते है-

यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव ।
येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ।।

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यति ।।

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्व कर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ।।

जिस प्रकार अग्नि ईधन के बड़े से बड़े ढ़ेर को भस्म कर देता है । उसी प्रकार ज्ञान की अग्नि मनुष्य के जन्म जन्मान्तर, युग-युगान्तर कल्प कल्पान्तर के संचित कर्मों का विनाश कर देती है । समस्या हम लोगों के सामने यही थी कि जब तक कर्म है तब तक कर्मानुसार जन्म लेना पड़ेगा और जब जन्म होगा तो मरना पड़ेगा जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु होती है और जन्म से पहले ९ महीने माता के पेट में रहना पडेगा । कहते है। अभी कोई बता रहा था किसी बालक ने माता के पेट से जन्म लिया और रोया नहीं तो डॉक्टरों ने अनुमान लगा लिया कि उसको आक्सीजन की कमी हो गई है ।

आप सोचिये ऐसे किसी कमरे में आपको बंद कर दिया जाये जिसमें आक्सीजन कम हो कितनी घुटन होगी और कमरे से तो निकल भी सकते हो लेकिन ऐसा पेट ऐसा कमरा जिससे निकलने का कोई रास्ता ही नही हाथ पैर भी जहाँ हिला न सकता हो प्राणी वहाँ आक्सीजन की कमी हो जाये तो व्यक्ति वहीं मर जाये तो जन्म के पहले गर्भपात का दुःख मनुष्य को भोगना ही पड़ता है । ९ महीने माता के पेट में सिर नीचे पैर ऊपर । और मरने के पहले कोई न कोई रोग होता है । ऐसे तो आदमी मर नहीं जाता आजकल तो हार्टअटैक ही है। लोग चलते-फिरते उठते-बैठते मर जाते है । अब इसका मतलब ये

नही है । अकस्मात् मर गये । पहले से रोग रहता है भले ही आप जाने न जाने । रोग पकड़ में आये न आये । लेकिन वो धीरे-धीरे शरीर की शक्ति को क्षीण करके एक दिन हार्ट खराब या लीबर फेल हो गया हार्टफेल हो गया और कई लोगों को लकवा लग जाता है । कइयों को मूर्छा आ जाती है । बेहोश हो जाते है । मरने से पहले पराधीन हो जाते है । शौच और लघुशंका बिस्तर में ही करनी पड़ती है । उठ नहीं सकते तो मरने से पहले के ये दुःख बीच में कई तरह के रोग हो जाते है । और कई तरह के रोग हो जाते है । जिनके बिना लोग सुबह चाय नहीं पी पाते उनकी मृत्यु का समाचार सुनना पड़ता है। कि चले गये पति के सामने पत्नी, पत्नी के सामने पति, भाई के सामने भाई, बेटा के सामने बाप, बाप के सामने बेटा, माँ के सामने बेटी, बेटी के सामने माँ संसार से जाते हैं । कौन ऐसा है जिसको इन बातों से दुःख न होता हो । भले ही दुःख होने के कुछ समय बाद थोड़ी विस्मृति हो जाय । कहो मनुष्य हँस ले मगर हाहाकार तो मन में होता ही है । तो जन्म होता है तो दुःख होता है । ये पक्का है । और कोई ठिकाना नहीं है । कहाँ जन्म हो जाये ये नहीं कि मनुष्य मर कर मनुष्य ही होता है । ये कोई नियम नहीं है ।

श्रीमद्भागवद् में आपने सुना ही होगा कि राजा भरत मृग का ध्यान करते करते मरे तो मृग योनि में गये, स्त्री का ध्यान करते करते मरे तो दूसरे जन्म में स्त्री हो गये तो ये भी होता है । और यह भी होता है कोई पुरुष मृग बनता है स्त्री पुरुष बनती है। पुरुष स्त्री बनता है । क्या क्या हो जाता है । कब किस योनि में जाना पड़े यहाँ तक कि ये जो सड़क में कुत्ते घूम रहे है । सुअर लोट रहे है, हो सकता है ये भी कभी ब्राह्मण क्षत्रिय रहे हो शर्मा, वर्मा, गुप्ता रहे हो लेकिन इन्होंने धर्म के अनुसार अपना जीवन नहीं बिताया इसलिये इनको श्व-शूकर योनि में जाना पड़ा । तो ये कर्म की गति थोड़ी गहन है ।

कर्म से छुटकारा कर्मों को छोड़कर भी नहीं मिलता ये हम बता चुके है । कुछ कर्म नित्य होते हैं कुछ नैमित्तिक होते है । नित्य अनित्य कर्मों को करने से तो कोई फल नहीं होता लेकिन न करने से नरक होता है। और ऐसी हालत में आप कर्म छोड़कर बैठ जायें तो अकर्म का प्रत्यवाय है । वो तो लग ही जायेगा कर्म छूटने से भी छुटकारा नहीं हैं और करने से भी छुटकारा नहीं तो फिर उपाय क्या है ? कहा- उपाय ये है कि ज्ञान प्राप्त करो। अज्ञान की निवृत्ति ज्ञान से ही हो सकती है । कर्म से नहीं हो सकती । कर्म से अन्तःकरण की शुद्धि हो सकती है और अन्तःकरण की शुद्धि होने पर परमात्मा को प्राप्त करने की

तीव्र इच्छा का उदय हो सकता है । किन्तु सीधे-सीधे मनुष्य के मोक्ष नहीं दे सकते और न ही अज्ञान को दूर कर सकते हैं। कर्म तो किया ही अज्ञानपूर्वक जाता है । आप कोई भी कर्म करेगे पण्डित कहेगा लो हाथ में अक्षत जल बोलो अपने अपने गोत्र का नाम अपने अपने वर्ण का नाम अमुकगोत्रोत्पन्नाः अमुकशर्माहं अमुकवर्माहं अहंमुक्तोहं अमुकं कर्म करिष्ये । तुमने अपना गोत्र वर्ण बोल कर कर्म का प्रारम्भ किया और आत्मा न कोई कुल है न कोई गोत्र है आत्मा तो शरीर से अलग है तो यही से अविद्या का विनिवित्त शुरु हो गई ।

एक गाँव में सब भोले लोग रहते थे तो वहाँ जब अंधेरा आता था तो गाँव के लोग सब इकट्ठे होकर घर-घर से चंगेरा लेते थे (बाँस का टोकरा) और कहते थे भाई चलो बहुत भयानक गहरा अन्धकार है । अन्धेरे को ढो-ढोकर कुयें में डाल देते हैं । कुए में डाले । रात भर लोग यही काम करते थे जब सबेरा होता था अरुणोदय होता था तो कहा आ हा हा बड़ी कठिनाई से गया अगर न ढ़ोते तो ये अन्धकार फैलता समाप्त नहीं होता । ये हालत थी । तो उस गाँव में एक पढ़ी लिखी लड़की ब्याह कर आ गई । उसको भी चंगेरी लेकर ढ़ोना पड़ा अंधेरा। उसने कहा ये तो बड़ी आफत है जिन्दगी भर की । तो वो रात में अंधेरा ढ़ोती थी । दिन में अपने घर के पीछे लकडी इकट्ठा करती थी । धीरे-धीरे लकड़ी का ढ़ेर हो गया । अब आई अमावस की अंधेरी रात । सब लोग अपनी-अपनी चंगेरी लेकर चले अंधेरा ढ़ोने और उसने लगा दी आग । जैसे ही आग लगाई, जोरो से आग लगी तो अंधकार अपने आप भाग गया ़। ढोने की जरूरत ही नहीं । अंधकार का अन्त प्रकाश से ही हो सकता है । कर्म से ढ़ोने से नहीं हो सकता इसीलिए ज्ञान की आवश्यकता है ।

ज्ञान जो है गुरु से मिल सकता है । ज्ञानी से ज्ञान मिलेगा दरिद्र के यहाँ जाओगे तो वो तुम्हारी गरीबी थोड़े दूर कर सकता है । वो तो खुद गरीब है । धनवान से धन मिलेगा । गुणवान् से गुण मिलेगा और इसी तरह से ज्ञानवान् से ज्ञान मिलेगा । इसीलिए बताया **आचार्यवान् पुरुषों वेद** परमात्मा को वो जान सकता है जो आचार्यवान् है । लोग धनवान् बलवान् शक्तिवान् बनना चाहते है । आचार्यवान् नहीं बनना चाहते है । उससे हम ही ज्ञानी है । हम किसलिये किसी को गुरु बनाये ? तुम्हें लुहारी सीखना है तो लोहार के यहाँ जाते हो । बढ़ईगिरी सीखना है तो बढ़ई के यहाँ जाते हो । पर परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए ज्ञानी की आवश्यकता नहीं होती? वहाँ तुम्हारी बुद्धि से काम चल

जायेगा ? ये नहीं हो सकता । इसीलिये **आचार्यवान् पुरुषो वेद** आचार्य भी सामान्य नहीं है । सामान्य मनुष्य के द्वारा परमात्मा कहा भी जाये तो उससे ज्ञेय नहीं होता । कोई विलक्षण आचार्य जब कहेगा तो उसकी बात में शक्ति होती है । उसके शब्दों में करेण्ट होती है । वो मस्तिष्क तक पहुँच जाती है । जिसको अनुभव नहीं है । जिसमें वो वजन नहीं होता है और ऐसा व्यक्ति कही न कही फँस जाता है तो जब विद्वानों के बीच पहुँचता है तो फँस जाता है ।

एक दृष्टान्त है नई रेल का । किसी गाँव में एक चलता पुरजा व्यक्ति रहता था । वह बहुत चालाक था तो वो कहीं बाहर चला गया । बहुत दिनों में लौटा तो गाँव के लोगों ने उससे पूछा कि भाई कहाँ गये थे ? उस समय रेल नई-नई निकली थी तो उसने अपनी विलक्षणता बताने के लिये कहा कि मैं जरा रेल में सफर करने चला गया था । लोगों ने कहा- अच्छा ! तुमने रेल में सफर कर लिया ? हमने तो सुना ही है । कहा- रेल कैसी होती है । उसने कहा कि उसमें डब्बे होते है । इंजन होता है । कहा सड़क का लोहे की पटरी में चलती है । दो पटरी में चके लगते है । और वो चके चलते जाते है । कहा उसमें कितने बैल लगते है कितने भैसा लगते है । कहा नहीं वो तो कोयले से चलती है । कोयला डालते जाओ गाड़ी चलती जायेगी । कहा उसमें सभी लोग जा सकते है । कहा नहीं उसमें तीन क्लास हाता है । तो कहा सब लोग बैठ सकते है कहा नहीं टिकट लेना पड़ता है । गाड़ी का स्टेशन होता है गाड़ी खड़ी होती है टिकिट लेकर गाड़ी में बैठना पड़ता है । बोला गरीब अमीर सब एक साथ बैठते है । बोले नहीं जो जिस तरह का है वो उस क्लास की टिकट लेकर बैठ जाता है । फर्स्ट क्लास में क्या विशेषता है बोले उसमें छःगुना किराया लगता है । लोगों ने पूछा उसमें छःगुना किराया क्यों लगता है । बोला वो छः घण्टा पहले पहुँचा देता है । तो वो वहीं पकड़ गया जब इंजन एवं डब्बे एक साथ लगे है तो छः घंटा पहले कैसे पहुँचायेगा तो कहने का मतलब तो लोगों ने समझ लिया कि यह केवल कह रहा है गया नहीं है । अगर बैठा होता तो ये बतला देता कि उसमें बैठने की सुविधा मिल जायेगी । गाड़ी एक साथ ही पहुँचेगी ।

इसीलिए ब्रह्मनिष्ठ गुरु की जरुरत है । जो वहाँ तक पहुँच चुका है । जो अनुभव कर चुका है परमात्मा का वही आपको अनुभव करा सकता है । अधकचरा व्यक्ति तो केवल आपको भरमा सकता है आपको सही रास्ता नहीं दिखलाता ऐसे गुरु से आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है । जहाँ ज्ञान हुआ **रवि सम्मुख तम कवहु कि जाही?** सूर्य के सामने

अंधकार कभी नहीं रह सकता तो परमात्मा के ज्ञान का बोध होता है वहां अज्ञान अंधकार चाहे कितना ही पुराना हो नहीं रह सकता । लोग कहते अज्ञान अनादि है । इसका अंत कैसे होगा तब हम लोग कहते है भाई किसी पर्वत की गुफा में अंधकार चाहे करोड़ो वर्षों का हो अगर वहाँ पर दीपक लेकर जाओगे तो उस अंधकार को भागना ही पड़ेगा । उसी प्रकार अज्ञान भी जहाँ ज्ञान का उदय होगा वहॉ से चला ही जायेगा । ज्ञान होने पर मोह मिट ही जाता है । न मिटै ये असम्भव है ।

अब आप देखिये कौशल्या अम्बा के सामने भरत जी गये तो माता कौशल्या के मन की शंका मिटाने के लिए भरत जी सौगन्ध खाते है । कि माँ मैंने राम को वनवास नहीं कराया । माता कौशल्या भरत को अपने हृदय से लगाकर कहतीं है बेटा भरत तुम राम के प्रतिकूल हो ही नहीं सकते चाहे चन्द्रमा विष वमन करने लग जाय, चाहे बर्फ अग्नि को प्रवाहित करने लग जाये और चाहे मछली जल से विरक्त हो जाये। भले ही ज्ञान होने पर मोह न मिटे पर तुम राम के प्रतिकूल नहीं हो सकते ।

तुम रामहिं प्रतिकूल न होहू । भये ज्ञान बरु मिटै न मोहू ।।

ये दृष्टान्त है । इसका अर्थ यह है कि ज्ञान होने पर मोह अर्थात् अज्ञान मिट ही जाता है । यह रामचरित मानस से सिद्ध होता है ।

कहा कौन सी अग्नि प्रकट हो जाती है ? ज्ञानाग्नि का स्वरूप क्या है ? आगे आया हाँ तो वह कौन सी अग्नि है और उसका स्वरूप क्या है । तो बात क्या है कि ज्ञानरूपी अग्नि का अर्थ यह हुआ कि हमने अपने वास्तविक स्वरूप को जान लिया है । नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त अनन्त अखंड सब प्रकार ब्रह्ममय है। ये कर्ता भोक्ता सुखी दुःखी, अनेकानर्थ भवँर में भटकने वाला संसारी जीव नहीं है । ये ज्ञान हो जाता है । तो ज्ञान होते ही सब अज्ञान का मोह मिट जाता है । अपने स्वरूप का ज्ञान होते ही मनुष्य के मन में अपने स्वरूप के अज्ञान के कारण जो भ्रान्तियाँ आ जाती है। तो सब की सब नष्ट हो जाती है।

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ।
सर्वज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि ।।

भले ही तू पापी हो और पाप करने वालों मे सबसे अग्रणी हो लेकिन ज्ञान की जहाज में अगर तू बैठ जाये तो तेरा सारा संकट दूर हो जायेगा क्योंकि तेरे पापों को, पाप ही नहीं पुण्यों को भी । जो करता है । वही भोगता है । करे कोई भोगे कोई यह तो नहीं

हो सकता । कर्म करने वाला ही कर्म का परिभोक्ता होता है ।

जब तक मनुष्य जानता है कि मैं कर्म करता हूँ । तब तक उसका फल भोगने के लिये बाध्य हो जाता है । परन्तु जब हृदय में विचार से कर्तृत्व की भ्रान्ति नष्ट हो जाती है कि मैंने किया तो सब कर्म नष्ट हो जाते है और सब कर्मों का नाश हो जाना ही मोक्ष है । अगर सर्व कर्म में हम प्रारब्ध को भी सम्मिलित कर दें तो ज्ञानी का तो उसी समय शरीर शान्त हो जाना चाहिए । ज्ञानी को ज्ञान हुआ सब कर्म समाप्त हो गये । प्रारब्ध कर्म भी समाप्त हो गया । फिर तो उसको मर जाना चाहिए लेकिन ऐसा तो नही है ।

सब कर्म चाहते है कि हमको फलोन्मुख किया जाय । समस्त कर्मों का फल एक साथ एक योनि में नहीं भोगा जा सकता । इसीलिए उन कर्मों में से चुनकर भगवान् इन कर्मों के अनुसार यह प्राणी इस शरीर में जाकर इतने दिन तक इन सुख दुःखों का अनुभव करे तो ये जो सङ्कल्प इन कर्मों के साथ होता है । इन्हीं कर्मों का नाम प्रारब्ध कर्म है । तो वो जब तक प्रारब्ध रहेगा तब तक ज्ञानी का शरीर रहेगा प्रारब्ध का अन्त होने पर सब कुछ भस्म हो ही गया था ।

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।
तत्स्वयं योगसंसिद्धिम् कालेनात्मनि विन्दति ।।

ज्ञान के समान कोई और पवित्र वस्तु नहीं है । जब ब्रह्म को अपनी आत्मा से अभिन्न प्राणी मान लेता है तो इसका अज्ञान दूर हो जाता है । अज्ञान दूर हो गया तो कौन सा अज्ञान दूर हुआ ? ब्रह्म को न जानना यह अज्ञान का स्वरूप है । अहम् ब्रह्म न जानामि में अज्ञान था तो जब ये उसे ज्ञात हो गया महावाक्य से, गुरु मुख से, तत्वं पदार्थ को ध्यान पूर्वक महावाक्य का अर्थ उसने जब सुना तो उसको आत्मभाव हो गया है कि यह ब्रह्म जिसको मैं जानना चाहता था वो मैं ही हूँ बस आत्मज्ञान हो गया ।

इस प्रकार ज्ञान की प्राप्ति हो जाने पर मनुष्य के दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति हो जाती है।

श्रीराम जय राम जय जय राम
हर हर महादेव !

—*—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः। गुरुःसाक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

(पूज्यपाद अनन्तश्रीविभूषित उत्तराम्नाय ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं पश्चिमाम्नाय द्वारका शारदापीठाधीश्वर)

जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज

के

98वें पावन प्राकट्योत्सव पर

श्री आई.पी. मिश्र जी

चेयरमैन

श्री गंगाजली एजुकेशन सोसाइटी, श्री शंकराचार्य ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स

एवं कुलाधिपति

श्री शंकराचार्य विश्वविद्यालय, भिलाई (छत्तीसगढ)

की ओर से अनन्त कोटि प्रणाम...

सम्बद्ध संस्थाएँ

● **1. Shri Shankaracharya Professional University,** Bhilai ● **2. Shri Shankaracharya Institute of Medical Sciences,** Junwani, Bhilai ● **3. Shri Shankaracharya Group of Institution,** Junwani, Bhilai ● **4. Shri Shankaracharya Engineering College,** Junwani, Bhilai ● **5. Faculty of Pharmaceutical Science,** Junwani, Bhilai ● **6. Faculty of Management Studies,** Junwani, Bhilai ● **7. Shri Shankaracharya College of Pharmaceutical Sciences,** Junwani, Bhilai ● **8. Shri Shankaracharya Institute of Pharmaceutical Sciences & Research,** Junwani, Bhilai ● **9. Shri Shankaracharya Institute of Fine Arts & Communication,** Junwani, Bhilai ● **10. Shri Shankaracharya Mahavidayalaya,** Junwani, Bhilai ● **11. Shankaracharya Swami Swaroopanand College of Nursing,** Junwani, Bhilai ● **12. Shri Shankaracharya Vidyalaya,** Hudco, Bhilai ● **13. Shri Shankaracharya College of Nursing,** Hudco, Bhilai ● **14. Swami Swaroopanand Saraswati Mahavidayalaya,** Hudco, Bhilai ● **15. Jagatguru Shankaracharya College of Education Hudco,** Bhilai ● **16. Shri Shankaracharya Institute of Professional Management & Technology,** Raipur ● **17. Jagadguru Shankaracharya College of Nursing,** Raipur ● **18. Shri Shankaracharya Institute of Professional Studies,** Raipur